Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

16.4

महाकवि-बाणभट्टविरचिता—

कादम्बरी

‘चर्चनं’ आख्या हिन्दीटीकयोपेता

(पूर्वभागः उत्तरभागश्च)

टीकाकार

पण्डित रामतेज शास्त्री

पंडित-पुस्तकालय, काशी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

अनेकानेकेषु विश्वविद्यालयेषु पाठ्यपुस्तकत्वेन निर्धारिता

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाकवि-बाणभट्टविरचिता—

कादम्बरी

'अर्चना'ऽऽह्वया हिन्दीटीकयोपेता।

(पूर्वभागः उत्तरभागश्च)

टीकाकार

पाण्डेय रामतेज शास्त्री

प्रकाशक

पंडित-पुस्तकालय, काशी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाणिनि-कन्या-महाविद्यालय ... १६३

अपनी बात

यह बात आजसे लगभग ४० वर्ष पहलेकी है। उन दिनों मैं स्वर्गीय कविचक्रवर्ती महामहोपाध्याय पं० देवीप्रसादजी शुक्लके पास कादम्बरीका अध्ययन करता था। एक दिन हम २५ सहाध्यायी पूर्ण तन्मयताके साथ पढ़ रहे थे। प्रसंग चल रहा था महाश्वेताके विलापका। गुरुजी एकके बाद एक वाक्योंका विश्लेषण करते हुए एकाग्र चित्तसे पढ़ा रहे थे। कारुणिक प्रसंग होनेके कारण हमारे नेत्रोंमें आँसू उमड़े हुए थे और यही हाल गुरुजीका भी था। आँसुओंके आवेगसे पढ़ाते-पढ़ाते उनका गला भर आता था। जिससे वाणी अवरुद्ध हो जाती थी। फिर भी पाठका क्रम चालू रहा। लगभग डेढ़ घंटेके बाद पाठ समाप्त हुआ। जब हम सबने और गुरुजीने गर्दन ऊपर उठायी तो न जाने कबके आकर खड़े दो भारतविख्यात साहित्य-महारथियोंको देखकर हम सब दंग रह गये। वे थे पं० पद्मसिंह शर्मा और पं० ज्वालादत्त शर्मा। उन्हें देखकर गुरुजी उठ खड़े हुए और दोनोंसे गले लगकर मिले। गुरुजीने कहा—'आप कब आये? और आये, तब बोले क्यों नहीं?' उन दोनों महानुभावोंने कहा—'बोलते कैसे? आपने इस बीच ऐसी भावधारा बहा रक्खी थी कि यहाँ आते ही उसमें हम भी गोते खाने लगे और पूरे पैंतीस मिनटका समय एक क्षणके समान बीत गया।' अब वे दोनों महानुभाव गुरुजीकी बगलमें गद्दीपर बैठकर विविध वर्तालाप करने लगे और हम सहाध्यायियोंमेंसे अनेक उनके आतिथ्यार्थ पान-शर्बत आदि उपकरण जुटानेमें लग गये। उसके बाद हम बड़ी देरतक कादम्बरीकी सराहनामयी वार्तालापरूपिणी उछलती हुई साहित्यलहरियोंका आनन्द लेते रहे।

कुछ समय बाद मेरा विद्यार्थीजीवन समाप्त हुआ। संसारके कर्मक्षेत्रमें उतरा। गृहस्थीकी गुत्थियाँ सुलझानेके लिए न जाने कितने ऊहापोह करने पड़े। किन्तु छात्रजीवनमें हृदयपर जो सांस्कृतिक छाप पड़ चुकी थी, वह अमिट बनी रही। अब भी उस समयकी कितनी बातें ध्यानमें आती हैं तो जैसे अपने आपमें खो जाता हूँ। एक रातको ब्राह्म मुहूर्तमें सहसा मुझे स्वप्नमें उपर्युक्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कविचक्रवर्तीजीके दर्शन मिले। पहले ही के समान उनकी भव्य आकृतिपर मनमोहिनी मुसकान खेल रही थी। मेरे चरणस्पर्शके उपरान्त उपालम्भ जैसे देते हुए उन्होंने कहा—'वत्स! मेरा अधूरा 'वाग्वल्लभ' तो तुमने मेरे दिवङ्गत हो जानेपर भी पूरा कर दिया। किन्तु 'कादम्बरी'को एकदम भूल गये?' बात यह थी कि अध्ययन समाप्त होजानेके बाद भी मैं काशी ही में रहकर संस्कृतग्रन्थोंके संशोधन-सम्पादनका काम करता हुआ जीविकार्जन करने लगा था। उसी प्रसंगमें मुझे विद्यार्थीजीवनके बाद भी गोस्वामी श्री दामोदरलालजी तथा कविचक्रवर्ती श्रीदेवीप्रसादजी शुक्लके सम्पर्कमें रहनेका सुयोग प्राप्त हो सका था। उसी समय कविजीने मुझे 'कादम्बरी'पर हिन्दी टीका करनेकी सलाह दी थी। वह बात वास्तवमें मेरे स्मृतिपटसे ओझल हो चुकी थी। अब यह स्वप्न देखकर मेरे हृदयमें कचोट जैसी उठने लगी और मन ही मन गुरुदेवसे क्षमा माँगकर दूसरे ही दिनसे इस महाग्रंथकी टीकाके काममें लग गया। यथासमय टीका पूर्ण होनेपर बाजारमें कागजकी खोज करने निकला। किन्तु वहाँ पूर्ण निराशाका वातावरण दृष्टिगोचर हुआ। फिर भी मैं हिम्मत नहीं हारा और गुरुजीके आशीर्वाद, मेरी सत्यनिष्ठा अथवा भगवत्कृपा चाहे जो कह लीजिए, ऐसा बानक बना कि जिससे सब दुविधायें दूर हो गयीं और आज मैं इस अनुपम ग्रन्थको तैयार करके आप जैसे सहृदय महानुभावोंके समक्ष उपस्थित करनेमें समर्थ हो गया। चीज कैसी तैयार हुई है, इसकी परख तो आप ही कर सकेंगे। हाँ, मैं इतना अवश्य कहूँगा कि मैंने श्रम, व्यय, प्रबंध और चौकसीमें अपनी ओरसे तनिक भी कोताही नहीं की है। फिर भी यदि इसमें कोई दूषण दीख जाय तो आप उसका सारा दोष मेरे माथे मढ़कर समयकी गति-विधि देखते हुए अपनी सहज दयालुतावश क्षमा कर दें। कदाचित् कोई गुण दीखे तो उसका श्रेय रत्तीभर भी मुझे न देकर परम पिता परमात्माका आभार मानें। किमधिकं विज्ञेषु।

काशीधाम
(आग्रहायणी पूर्णिमा)
सं० २०२०

पाण्डेय रामतेज शास्त्री

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कादम्बरीका एक समीक्षात्मक अध्ययन

संस्कृत-साहित्यमें महाकवि बाणभट्टका नाम कवियोंको श्रेणीमें मूर्धन्य स्थान प्राप्त किये हुए है। संस्कृतकी गद्यरचनामें तो ये बेजोड़ माने गये हैं। यह बात जगजाहिर है—'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' अर्थात् गद्यकाव्य कवियोंकी प्रतिभाको परखनेवाली कसौटी है। इस कसौटीपर खरा उतरनेवाला कवि श्रेष्ठ कवि माना जाता है और उसकी रचना ही आदरणीय होती है। बाणभट्ट इस कसौटीपर पूर्णरीतिसे खरे उतरे और उनकी रचना कादम्बरी संस्कृत-साहित्यमें गद्यकाव्यका आदर्श बन गयी। बादके कवियोंने उसीका अनुसरण करके अनेक गद्यकाव्य लिखे। जिनमें दण्डीका 'दशकुमारचरित' सोड्ढलकी 'उदयसुन्दरीकथा' एवं धनपालकी 'तिलकमंजरी' इसीको आदर्श मानकर लिखी गयी है। महाराष्ट्रमें तो इसे आदर्श कथा मानकर लोग कथा-साहित्यमात्रको 'कादम्बरी' कहने लगे। अब उन कविप्रवर बाणभट्टकी कुछ चर्चा कर लेना समीचीन होगा। क्योंकि ऐसा न करनेसे इस सरस ग्रन्थका कलेवर ही अधूरा रह जायगा!

बाणभट्टकी जीवनी

यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि बाणभट्टने स्वयं अपने जीवनके सम्बन्धमें कुछ लिखकर साहित्य-संसारपर अपार कृपा की है। यदि अन्यान्य कवियोंकी भाँति इस विषयमें वे भी मौन रह जाते तो जैसे और-और संस्कृतकवियोंकी जीवनीके सम्बन्धमें सही जानकारी प्राप्त करना दुरूह हो रहा है। उसी तरह इनके बारेमें भी कठिनाई होती। कादम्बरीके आरम्भमें ही उन्होंने संक्षिप्तरीतिसे अपने वंशका वर्णन किया है।

बाणभट्टके पूर्वज सोनभद्र नदीके तटपर बसे 'प्रीतिकूट' नगरमे रहते थे। जो सम्भवतः दक्षिणी विहारके शाहाबाद जिलेमें था। पुरातनकालसे ही बाणभट्टका वंश धर्माचरण तथा विद्यार्जनमें विख्यात था। इसी वात्स्यायनगोत्रीय वंशमें बाणभट्टका जन्म हुआ था। उनके एक प्राचीन पूर्वजका नाम कुबेर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

था। कुबेर कर्मकाण्डमें पूर्ण निष्णात विद्वान् थे। उनके यहाँ वेदाध्ययनके निमित्त आये हुए विद्यार्थियोंका ठट्ट लगा रहता था। इस विषयमें बाणने यहाँ तक लिख डाला है कि 'उनके यहाँ ब्रह्मचारीगण सदा सशंकभावसे यजुर्वेद और सामवेदका गान करते थे। क्योंकि पींजरेमें बैठी सब वेदोंकी विज्ञ मैनायें तथा तोते पद-पदपर टोका करते थे।' कुबेरके चार पुत्रोंमें 'पाशुपत' सबसे छोटे थे। पाशुपतके पुत्र 'अर्थपति' और अर्थपतिके पुत्र 'चित्रभानु' हुए। वे भी अपने पूर्वजोंके समान ही धुरन्धर विद्वान् थे। उन्होंने अनेक यज्ञोंके धुएँसे जायमान अपना यश दसों दिशाओंमें फैला दिया था। उन्हीं चित्रभानुके घर बाणभट्टका जन्म हुआ। किन्तु बाण जब बहुत छोटे बालक थे, तभी उनके पिता-माताका देहान्त हो गया। अतएव वे बाल्यकालमें ही पिताकी प्रचुर सम्पत्तिके अधिपति बन गये। किसी अच्छे अभिभावकके न होनेसे अब वे आवारा हो गये। बुरी संगतमें पड़ जानेके कारण वे शिकार आदि दुर्व्यसनोंमें लिप्त रहने लगे। बादमें देशाटनकी धुन सवार हुई तो कुछ साथियोंको साथ लेकर वे देशभ्रमणको निकल पड़े। वर्षों देशाटनके बाद वे विकसित बुद्धि, अनोखे सांसारिक अनुभव एवं उदार विचारको साथ लेकर घर लौटे। यहाँ आनेपर लोग उनका उपहास करने लगे। अचानक एक दिन महाराज हर्षके चचेरे भाई कृष्णके एक दूतने आकर बाणको एक पत्र दिया। पत्रमें लिखा था कि 'बहुतेरे लोगोंने हर्षसे तुम्हारी चुगली की है। इससे वे तुमपर रुष्ट हो गये हैं। अतएव तुरन्त यहाँ चले आओ।' तदनुसार बाण राजा हर्षके पास गये। राजाने पहले तो उनकी अवज्ञा की, किन्तु बादमें उनकी प्रतिभा एवं विद्वत्तापर मुग्ध होकर उन्हें अपने यहाँ आश्रय दिया। जिससे बहुत समयतक बाणने राजा हर्षकी सभाको सुशोभित किया। तदनन्तर वे अपने घर लौटे आये। यहाँ लोगोंने जब हर्षके विषयमें पूछा, तब उन्होंने 'हर्ष-चरित' की रचना की।

किम्वदन्ती

पण्डितसमाजमें यह किम्वदन्ती सुनी जाती है कि बाणका विवाह मयूर महाकविकी कन्यासे हुआ था। एक समयकी बात है कि चन्द्रदेव अस्त हो गये थे और प्रभातकी लाली पूर्व दिशामें छा चली थी। शीतल और मन्द-मन्द बयार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बह रही थी। उस रोज किसी कारणवश उनकी मानिनी स्त्री मान किये बैठी थी। महाकवि बाण उसे मनानेमें दत्तचित्त थे। किन्तु वह किसी तरह मान ही नहीं रही थी। अन्तमें उन्होंने प्रातःकाल होने और अपनी प्रियतमाके मान न छोड़नेके प्रसंगको ही लेकर एक पद्यकी रचना की, जिसका भाव था—'हे कृशाङ्गि! रात्रि प्रायः बीत गयी, चन्द्रमा क्षीण हो चला और दीपक रातभर जागनेके कारण निद्राके वशीभूत होकर ऊँघ रहा है। मेरे प्रणाम करते ही तुम्हारा मान भंग हो जाना चाहिए, किन्तु तो भी तुम क्रोध नहीं त्यागतीं।'........ ....और स्त्रीको प्रसन्न करनेके लिए सुनाने लगे—

गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव
प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव।
प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रुधमहो
....

अभी वे तीन ही चरण कह पाये थे कि उनके ससुर मयूर कवि भी उनसे मिलनेके लिए आ पहुँचे। मयूरके कानोंमें श्लोकके तीन चरण पहुँचे ही थे। बस, अन्तिम चरणकी उन्होंने इस प्रकार पूर्ति कर दी—

कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम्॥

अर्थात् 'हे कोपने! कुचोंके समीपवर्ती होनेके कारण तुम्हारा हृदय भी कठोर हो गया है।' अपने ससुरके मुखसे इस प्रकार अपने श्लोककी चरण-पूर्ति सुनकर बाण मारे क्रोधके तमतमा उठे। उसी आवेशमें उन्होंने मयूरको कोढ़ी हो जानेका शाप दे दिया। एक महाकविका शाप भला कैसे विफल होता? कुष्ठी होकर मयूरने सौ श्लोकोंमें सूर्यशतककी रचना की और उसीसे सूर्यकी स्तुति करके उस महारोगसे छुटकारा पाया। बादमें कुपित होकर मयूरने भी बाणको शाप दे दिया और बाणने 'चण्डीशतक' रचा और उससे देवीकी स्तुति करके शापसे मुक्ति पायी।

बहुतेरे विद्वानोंको इस किम्वदन्तीपर आस्था नहीं है। उनका तर्क यह है कि यदि बाणका मयूरकविसे सम्बन्ध होता तो वे हर्षचरित या कादम्बरीकी अपनी आत्मजीवनीमें अवश्य इसका उल्लेख करते। किन्तु महाराज हर्षकी छत्र-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

छायामें रहनेके कारण इन दोनोंका घनिष्ठ सम्बन्ध रहना निश्चितप्राय है। तब यदि इनमें यह सम्बन्ध होगया हो तो क्या कोई असम्भव बात है? और फिर जैनग्रन्थोंमें भी इस किम्वदन्तोकी चर्चा आयी है। अतएव इसमें कुछ न कुछ तथ्यांश अवश्य है।

बाणके समकालीन कवि और विद्वान्

महाकवि बाणके कार्यकालमें बहुतेरे कवियों और विद्वानोंका अच्छा जमा-वड़ा था। 'सूर्यशतक' के रचयिता मयूरकवि और जैनियोंमें ख्यातिप्राप्त 'भक्ताम-रस्तोत्र' के प्रणेता भक्त जैनाचार्य 'मानतुङ्ग' उसी समय हुए थे। ये दोनों कवि राजा हर्षवर्धनके ही आश्रयमें रहे। राजा हर्षकी राजधानी थानेश्वरसे कुछ दूर गुजरातकी राजधानी वलभीमें राजा श्रीधरसेनके राज्यकालमें भट्टिकाव्यके रचयिता 'भट्टि स्वामी' भी उसी समय हुए थे। कुछ विद्वानोंके कथनानुसार गौतम-न्यायसूत्रपर वार्तिक लिखनेवाले परम प्रसिद्ध विद्वान् 'उद्योतकर' का भी जन्म उसी शताब्दीमें हुआ था। बाणभट्टके कुछ दिनों बाद दण्डीने भी 'दशकुमार-चरित' एवं 'काव्यदर्शन' का निर्माण किया था। इन कारणोंसे बाणका समय संस्कृत-साहित्यके लिए बड़ा ही महत्त्वपूर्ण और आदरणीय है।

बाणभट्टका समय

बहुतेरे मनीषियोंके सर्वमान्य विवेचनके अनुसार थानेश्वराधीश राजा हर्ष-वर्धनके सभापण्डित होनेके नाते बाणभट्टका समय ईसाकी सातवीं शताब्दीमें सिद्ध होता है। संस्कृतके अन्यान्य कवियोंका ऐतिहासिक क्रम निर्धारण करनेके लिए बाणका आविर्भावकाल बड़ा ही उपादेय है। क्योंकि यही एक ऐसा निश्चित समय है, जिससे परवर्ती तथा उत्तरवर्ती कवियोंका सही समय निर्धारित किया जा सकता है। यदि बाणको हर्षका समसामायिक न भी माना जाय तो भी परवर्ती कवियोंके विविध उद्धरणोंसे उनका सातवीं शताब्दीमें होना निश्चित हो जाता है। सर्वप्रथम वामन (सन् ७७९ से ८१३ तक) ने अपने 'काव्यालंकारसूत्र' में काद-म्बरीके एक बहुत बड़े समासवाले वाक्यका उद्धरण दिया है। जिससे साफ़ तौरपर बाणभट्टकी सातवीं सदी सिद्ध हो जाती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बाणभट्टके रचित ग्रन्थ

यद्यपि अपने समयमें बाणभट्टने बहुतसे ग्रन्थोंकी रचना की थी, किन्तु उनके गिने-चुने ग्रन्थ ही साहित्य-समाजके सम्मुख आ पाये हैं। लोगोंकी ऐसी धारणा है कि इनकी बहुतेरी बहुमूल्य रचनायें नष्ट हो गयी हैं। उपलब्ध होनेवाले सूक्तिसंग्रहों एवं अलंकारग्रन्थोंमें बाणके अगणित पद्य दिखायी देते हैं। बृहत्कथामञ्जरीके रचयिता क्षेमेन्द्रने 'औचित्य-विचारचर्चा' में बाणके एक सुललित पद्यका उद्धरण दिया है, जिसमें कादम्बरीकी विरहावस्था वर्णन है। इससे स्वभावतः अनुमान होता है कि बाणने कादम्बरीकी पद्यबद्ध रचना भी की होगी। किन्तु आजतक यह ग्रन्थ प्राप्त नहीं हो सका है। इसी प्रकार अन्यान्य सूक्तिसंग्रहोंमें भी बाणके नामसे उद्धृत बहुतेरे पद्य मिलते हैं, किन्तु इनके विख्यात ग्रन्थोंमें वे नहीं दीखते। जिससे इनके अन्य ग्रन्थोंके अस्तित्वके विषयमें केवल अनुमान भर किया जा सकता है। बाणकी रचनाओंका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

(१) चण्डीशतक—इस ग्रन्थमें निहित सौ श्लोकों द्वारा बाणने भगवतीकी स्तुति की है। इसके सभी श्लोक स्रग्धरा छन्दमें रचे गये हैं। इसकी कविता बड़ी ही सुन्दर, ओजगुणसे परिपूर्ण और परम रमणीक है। भगवती चण्डिकाकी स्तुतिके अनुरूप ही इसमें अद्भुत पदविन्यास किया गया है। लोगोंका कहना है कि मयूरकविके शापसे छुटकारा पानेके लिए ही उन्होंने यह ग्रन्थ रचकर भगवती जगदम्बाका स्तुति की थी और वे अपनी अभीष्ट-प्राप्तिमें सफल हुए थे।

(२) हर्षचरित—संस्कृतके गद्यसाहित्यमें उपलब्ध होनेवाली यह सबसे प्राचीन और मनोरम आख्यायिका है। इसमें कुल मिलाकर आठ उच्छ्वास हैं। इसके प्रथम और द्वितीय उच्छ्वासमें बाणभट्टने अपने जीवनपर प्रकाश डाला है। बाकी छ उच्छ्वासोंमें उन्होंने महाराज हर्षवर्धनका चरित्र वर्णन किया है। उस समय 'ओजःसमासभूयस्त्वमेतद्गद्यस्य लक्षणम्'के अनुसार गद्यकाव्यकी जीवनी शक्ति ओज (प्रवाह) और समासबहुलता मानी जाती थी। इसी नियमके अनुसार उन्होंने इस गद्यकाव्यका निर्माण किया था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बाणभट्टका यह प्रथम ग्रन्थ था। इसी कारण इसमें कादम्बरी जैसी साफ-सुथरी और निखरी हुई काव्यधारा नहीं दृष्टिगोचर होती।

(३) कादम्बरी—यह बाणभट्टको अमर कर देनेवाली उनकी सर्वोत्तम रचना है। इसके पूर्व और उत्तर दो भाग हैं। पूर्वभाग समस्त ग्रन्थका दो तिहाई भाग है और यह बाणकी अपनी रचना है। उत्तरभाग सम्पूर्ण ग्रन्थका एक तृतीयांश है। अधूरा ग्रन्थ लिखकर पिताके स्वर्गवासी हो जानेपर उनके सुयोग्य पुत्र पुलिनभट्टने उत्तरभाग लिखकर कादम्बरीको पूर्ण किया था। संस्कृतके गद्यसाहित्यमें कादम्बरी हीरेकी तरह जगमगानेवाला एक महान् रत्न है। इसमें भाषा, भाव, शब्द और अर्थकी अनोखी छटा देखनेको मिलती है। वर्णनसौन्दर्यका तो कहना ही क्या है। कहीं परम प्रतापी राजा शूद्रकका विलासमय जीवन दृष्टिगोचर होता है तो कहीं विन्ध्याचलके विकट वन और परम साहसिक शबरसेनाका रोंगटे खड़े कर देनेवाला वर्णन मिलता है। कहीं धर्मके मूर्तरूप, दयाके अवतार और आध्यात्मिकताके जाज्वल्यमान निदर्शन महर्षि जाबालि और उनके पुनीत आश्रमकी मनभावनी शोभा पाठकोंका मन मोह लेती है। कहीं बाल्यावस्थामें गन्धर्वोंकी गोदमें खेलनेवाली मंजुभाषिणी महाश्वेताकी विरहविधुर मूर्ति दिखायी देती है तो कहीं लोकोत्तर सुख-सुविधाओंका आनन्द लूटनेवाली गन्धर्वराज चित्ररथकी तनया कादम्बरीकी प्रेमरससे ओतप्रोत कहानी पाठकको उलझा लेती है। इस ग्रन्थमें सर्वत्र काव्यालंकारका मीठा झंकार और अनुप्रासोंकी चमत्कारी छटा देखनेको मिलती है। यह ग्रन्थ ऐसा है कि इसमें अलंकार तथा रसका मधुर मिलन, भाषा तथा भावका निकटतम सम्पर्क, कल्पना और वर्णनाका अनुरूप संघटन बेजोड़ है। कादम्बरी सरस हृदयवाले रसिकोंको मतवाला बना देनेवाली सच्ची कादम्बरी (मीठी मदिरा) है। तभी तो बाणतनय पुलिनभट्टने कहा है—'कादम्बरी-रसभरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयते जनोऽयम्।' अर्थात् कादम्बरीकी मधुर मदिरा पीकर सारा कविसमुदाय मस्त हो गया। उसे अपने तन-बदनका तनिक भी होश नहीं रहा।

(४) पार्वतीपरिणय—बाणविरचित यह एक बहुत ही बढ़िया नाटक है। शंकर-पार्वतीके विवाहका पुनीत कथानक इसके वर्णनका आधार है। इसपर महाकवि कालिदासके कुमारसम्भवकी छाया स्पष्ट दृष्टिगोचर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

होती है। अतएव बहुतेरे मनीषी इसे कादम्बरीकार बाणभट्टकी रचना न मानकर सत्रहवीं शताब्दीके दाक्षिणात्य कवि बाणभट्टकी रचना घोषित करते हैं।

(५) मुकुटताडितक—जैनी विद्वान् चन्द्रपाल तथा गुणविजय गणिने नलचम्पूकी टीकामें इस नाटकको बाणकी रचना लिखा है। किन्तु इस उल्लेखके सिवाय अन्यत्र कहीं इस नाटकका नाम तक नहीं सुना गया और अबतक किसीने इसे पाया भी नहीं है।

महाकवि बाणभट्ट भगवती भारतीके वरद पुत्र थे। इनकी गद्यरचना कादम्बरी अपने विषयमें बेजोड़ मानी जाती है। आजसे सदियों पहले ही इनके इस मधुर काव्यपर समालोचकोंकी दृष्टि पड़ चुकी थी। इसी कारण गोवर्धनाचार्य जैसे धुरन्धर विद्वान् इन्हें साक्षात् वाणीका अवतार मानते हुए कहते हैं कि महाभारतकालमें अत्यधिक प्रगल्भताके नाते जैसे शिखण्डिनी शिखण्डी बनी थी, उसी प्रकार पुरुषरूपमें अधिक चमत्कारोपलब्धिके निमित्त वाणी अर्थात् सरस्वती बाण बन गयी थी।

'जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथाऽवगच्छामि।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति॥'

दूसरा विद्वान् कहता है कि 'बाणभट्ट गम्भीर-धीर कवितारूपिणी विन्ध्याटवी-में विचरणशील कविकुञ्जरोंका गण्डस्थल विदीर्ण करनेवाले सिंह हैं।'

आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी-
संचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पंचाननः॥'

इस प्रकार बाणभट्ट अपने समयमें परम प्रतिभाशाली कवि थे। उनकी कल्पना विश्वव्यापिनी थी। उनकी रचनाशैली इतनी सुन्दर और शब्दसम्पदा इतनी विशाल थी कि जिसका वर्णन होना दुरूह है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कादम्बरीकी कथाका सारांश

महाराज शूद्रककी सभामें एक रोज सहसा एक चाण्डालकन्या एक तोतेको लाकर उपस्थित हुई। उसने राजाको बताया कि 'यह तोता बड़ा विद्वान् और गुणी होनेके कारण रत्नसदृश है और रत्नकी शोभा राजाके ही पास हो सकती है। यही सोचकर मैं यहाँ आयी हूँ।' यों कहकर उसने तोतेको राजाके समक्ष रख दिया। तत्काल तोतेने अपना दाहिना पैर उठा तथा एक श्लोक पढ़कर राजाकी प्रशंसा की। जिसे सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपना जीवनवृत्तान्त बतानेको कहा। तदनुसार तोता अपनी आपबीती बताता हुआ कहने लगा—

विन्ध्याचलके एक महावनमें मेरे पिता एक सेमरके वृक्षमें घोंसला बनाकर रहते थे। मेरा जन्म होते ही मेरी माता गुजर गयी। जिससे पिता ही मेरा पालन-पोषण करने लगे। एक दिन एक भील उस वृक्षपर चढ़ा और अन्यान्य तोतोंके साथ मेरे वृद्ध पिताको भी मारकर जमीनपर फेंक दिया। उस समय डरके मारे मैं अपने पिताके पंखमें छिपा हुआ था। इसीसे भीलने मुझे नहीं देखा। मृत पिताके साथ गिरते समय छटककर मैं पत्तोंके एक ढेरपर जा गिरा। वहाँसे धीरे-धीरे सरककर एक तमालवृक्षकी जड़में जाकर छिप गया। जब भील उन मरे हुए तोतोंको बटोरकर चला गया, तब मैं उस वृक्षकी जड़से निकलकर धीरे-धीरे आगे बढ़ा। किन्तु अभी मेरे पंख नहीं निकले थे और शरीरमें शक्ति भी नहीं थी। अतएव थोड़ा ही चलनेमें साँस फूलने लगी। प्यासके मारे बुरा हाल था। दैवयोगसे उसी समय समीपके आश्रमनिवासी महर्षि जाबालिके पुत्र हारीत उसी राह आ निकले। उन्होंने मुझे देखा तो उन्हें दया आ गयी और मुझे उठा ले जाकर एक सरोवरके तटपर पहुँचाया। वहाँ उन्होंने अपनी उँगलियोंसे जल लेकर मुझे पिलाया और स्नान-सन्ध्या करके अपने आश्रमपर ले गये। आश्रमके मुनियोंने मुझे देखकर पूछा—'इसे कहाँसे लाये ?' तब हारीतने उन्हें मेरा हाल कह सुनाया। हारीतकी बात सुनकर ज्योंही महर्षि जाबालिने मुझे देखा, त्योंही कहा कि 'यह पक्षी अपने कुकर्मोंका फल भोग रहा है।' यह सुना तो अनेक मुनि एक साथ बोल उठे—'महात्मन् ! इस बेचारेने कौनसा ऐसा कर्म किया था कि जिसका फल भोग रहा है।' महा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुनि जाबालि बोले—'इसकी कहानी बड़ी लम्बी है। अब सन्ध्याका समय आ पहुँचा है। उससे निवृत्त होनेके बाद रातमें मैं आप लोगोंको इसका वृत्तान्त बताऊँगा। तदनुसार सायंकालीन कृत्यसे निवृत्त होकर जब सब मुनि जुटे, तब महर्षि जाबालि मेरी कहानी सुनाते हुए बोले—

उज्जयिनी नगरीमें तारापीड नामका एक राजा रहता था। उसकी रानीका नाम विलासवती था। उसका मन्त्री था शुकनास और शुकनासकी पत्नी थी मनोरमा। सब सुख-सुविधाओंसे सम्पन्न होते हुए भी उस राजाके कोई सन्तति नहीं थी। इस कारण वह बहुत दुखी रहता था। रानीका भी वही हाल था। एक दिन राजा तारापीडने रानीको सन्तानके लिए बहुत व्याकुल देखकर उसे समझाते हुए देवताओं और ब्राह्मणोंकी पूजा करनेको सलाह दी। इस प्रकार विधिवत् देवाराधन करते-करते कुछ समय बाद एक रातको राजाने यह स्वप्न देखा कि रानी विलासवतीके मुखमें चन्द्रमा प्रविष्ट हो रहा है। तभी रानी गर्भवती हुई और उसे पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। उसी दिन मन्त्री शुकनासकी पत्नी मनोरमाने भी एक पुत्र उत्पन्न किया। राजा तारापीडने अपने पुत्रका नाम रक्खा—'चन्द्रापीड'। मन्त्री शुकनासने अपने पुत्रका 'वैशम्पायन' नामकरण किया। बाल्यकालसे ही चन्द्रापीड और वैशम्पायनमें असाधारण स्नेह हो गया। अतएव उन दोनोंका साथ ही एक विशेष प्रकारके विद्यालयमें विद्याध्ययन हुआ। योग्य हो जानेपर राजा तारापीडने चन्द्रापीडका युवराजपदपर अभिषेक किया।

अभिषिक्त हो जानेपर चन्द्रापीड एक विशाल सेना लेकर दिग्विजयके लिए निकला। वैशम्पायन भी उसके साथ था। उज्जयिनीसे चलकर युवराज देशपर देश जीतता और राजाओंसे कर वसूलता हुआ वर्षों घूमता रहा। जाते-जाते चन्द्रापीडने कैलासपर्वतकी तलहटीमें विद्यमान किरातोंके सुवर्णपुर नगरपर अधिकार करके कुछ समय सेनाको आराम देनेके लिए वहीं ही डेरा डाल दिया। एक दिन कुछ सैनिकोंको साथ लेकर वह शिकारके लिए निकला तो वनमें उसे किन्नरोंका एक जोड़ा दिखायी पड़ा। उसे पकड़नेके विचारसे युवराज उनका पीछा करने लगा। एकाकी बहुत दूर निकल जानेपर उसके सब साथी पीछे छूट गये और वह बराबर किन्नरदम्पतीके पीछे घोड़ा दौड़ाता रहा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एक स्थानपर पहुँचकर वह किन्नरोंका जोड़ा पर्वतके शिखरपर चढ़कर अलक्षित हो गया।

इस प्रकार कठोर श्रम करनेपर भी निराश युवराज अपनी करनीपर पछताने लगा। भूख-प्यासके मारे बुरा हाल था। पड़ावका रास्ता भी भूल चुका था। अन्तमें वह पानीकी खोजमें भटकता हुआ अच्छोद सरोवरपर जा पहुँचा। उसमें नहाकर उसने जल पिया। घोड़ेको भी पानी पिलाया और उसे एक वृक्षकी डालमें बाँधकर एक शिलातलपर लेटकर आराम करने लगा। तभी उसे एक ओरसे संगीतकी ध्वनि सुनायी दी। अब वह उठा और घोड़ेपर सवार होकर उसी तरफ चल पड़ा। थोड़ी देर चलकर वह एक फुलवारीके मध्य विद्यमान शिव-मन्दिरपर जा पहुँचा। वहाँ उसने एक अत्यन्त रूपवती कन्याको वीणा बजाते और गाकर स्तुति करते देखा। स्तुतिसंकीर्तनके बाद उस कन्याने चन्द्रापीडका स्वागत किया और अपने आश्रमपर ले गयी। वहाँ उसने उसे फलाहार कराया और दोनों सुस्थ होकर बैठे। तब उस कन्याने चन्द्रापीडसे वहाँ आनेका कारण पूछा। इसपर युवराजने आद्योपान्त सब वृत्तान्त कह सुनाया। अवसर पाकर चन्द्रापीडने भी इस भरी जवानीमें उसके संन्यासिनी बननेका कारण पूछा। तब कन्या बोली—

देवताओंके लोकमें अप्सरायें रहा करती हैं। उन्हींमें दक्ष प्रजापतिकी एक कन्या मुनि और दूसरी अरिष्टाका गन्धर्वोंसे सम्बन्ध हुआ। जिनसे गन्धर्वोंके दो कुल हो गये। कालान्तरमें मुनिकी कोखसे चित्ररथ तथा अरिष्टासे हंस जनमे। वे दोनों ही हेमकूटपर निवास करते हैं। सो मैं हंसकी पुत्री महाश्वेता हूँ।

एक दिन मैं अपनी माताके साथ इसी अच्छोद सरोवरमें स्नान करने आयी। सहसा मुझे एक अत्यद्भुत सुगन्धिका अनुभव हुआ। अब उसी सौरभका अनुसरण करती हुई तनिक आगे बढ़ी तो मैंने दो मुनिकुमारोंको उधर ही आते देखा। उनमेंसे एकके कानमें एक अनुपम पुष्पमंजरी खुँसी हुई थी। अब मुझे यह समझनेमें देर नहीं लगी कि वह सुगन्धि उसी मञ्जरीकी थी। तत्काल मैंने उन्हें प्रणाम किया और उस कुसुममञ्जरीका विवरण पूछा। उनमेंसे एक बोला—'ये महामुनि श्वेतकेतुके पुत्र हैं और इनका नाम पुण्डरीक है। यह मञ्जरी पारि-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जातकी है।' मेरा विशेष आकर्षण देखकर पुण्डरीकने वह मञ्जरी मेरे कानमें पहना दी। ऐसा करते समय अनजानमें उसकी रुद्राक्षमाला गिर पड़ी और उसे उठाकार मैंने अपने गलेमें पहन लिया। देर होते देखकर मेरी दासी मुझे माँके पास बुला ले गयी। चलते समय मुनिकुमारने अपनी माला माँगी और मैंने उसके बदले अपना हार दे दिया। तत्पश्चात् स्नान करके मैं अपने घर चली गयी।

वहाँ बड़ी देर बाद मेरी दासी तरलिकाने बताया कि 'वह मुनिकुमार आपका परिचय पूछ रहा था और उसने मुझे यह पत्रिका दी है।' पत्र पढ़कर मैं बेचैन हो उठी।

सायंकालके समय मेरी छत्रग्राहिणीने कहा—'उन दोनों मुनिकुमारोंमेंसे एक यहाँ आकर द्वारपर खड़ा है और अपनी माला माँग रहा है।' सो सुनकर मैंने उसे तत्काल बुलवाया। उसे देखा तो वह कपिञ्जल था। कपिञ्जलने कहा—'मेरे साथी पुण्डरीकने जबसे आपको देखा है, तबसे उसका बुरा हाल है। यह जानकर आप जो उचित समझें सो करें।' इसी समय प्रतिहारी द्वारा मेरी माताकी अगवानीका हाल सुनकर वह चल पड़ा।

माताजी आयीं और कुछ देर मेरे पास ठहरकर जब चली गयीं। तब मैं तरलिकासे परामर्श करके रातके समय पुण्डरीकसे मिलने चली। किन्तु सरोवरके समीप पहुँचते ही मैंने दूरसे कपिञ्जलका विलाप सुना। जब पास पहुँची तो देखा कि पुण्डरीक एक शिलातलपर पड़ा है और कपिंजल उसे सम्हाले हुए है। यह दृश्य देखकर मुझे मूर्छा आ गयी। जिससे यह नहीं जान सकी कि उसके बाद क्या हुआ।' चन्द्रापीडसे यह आत्मकथा कहते-कहते महाश्वेता मूर्छित हो गयी। तत्काल युवराजने आगे बढ़कर उसे सम्हाला, अपनी चादरसे पङ्खा किया और समीपके झरनेसे जल लाकर उसका मुँह धोया। सचेत हो जानेपर महाश्वेता फिर कहने लगी—'पुण्डरीकको मृत जानकर मैंने तरलिकासे चिता तैयार करनेको कहा। उसी समय एक दिव्य पुरुष गगनमण्डलसे उतरा। उसने कहा—'पुत्री महाश्वेता! तुम अपने प्राण मत त्यागना। क्योंकि भविष्यमें फिर तुम्हारी पुण्डरीकसे भेंट होगी।' यह कहकर उसने पुण्डरीकके शवको दोनों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हाथोंसे उठा लिया और आकाशमें उड़ चला। उसे जाते देख कपिञ्जल भी 'मेरे मित्रको कहाँ लिये जा रहा है?' यह कहता हुआ उसके पीछे-पीछे आसमानमें उड़ गया। उसके बाद प्रातःकाल मैंने इसी सरोवरमें स्नान किया और तभीसे तपस्याका व्रत लेकर इन शंकर भगवानकी आराधना करती हुई यहाँ ही रह रही हूँ। यहाँ तरलिकाके सिघाय और कोई भी मेरे साथ नहीं रहता।' ऐसा कहकर वह फिर फूट-फूटकर रोने लगी। तब चन्द्रापीडने बहुतेरी बातें कहकर उसे ढाढ़स बँधाया। तनिक देर बाद युवराजने महाश्वेतासे पूछा कि 'वह आपकी साथिन तरलिका कहाँ है?' महाश्वेता बोली—'अमृतसे जायमान अप्सराओंके कुलमें मदिरा नामकी एक कन्या जनमी थी। जिसका चित्ररथ गन्धर्वके साथ विवाह हुआ था। उन महाराज चित्ररथकी कन्या कादम्बरी मेरी सखी है। उसने जब मेरा हाल सुना तो यह प्रतिज्ञा कर ली कि 'जबतक मेरी सखी ऐसा महान् दुःख भोगेगी, तबतक मैं भी विवाह न करूँगी। इस हठपर उसके माता-पिता बहुत दुखी हुए और उन्होंने कादम्बरीको समझानेके लिए मुझे बुलवाया। तदनुसार मैंने अपना सन्देश देकर तरलिकाको वहाँ भेजा है।'

रात बीती। सवेरा हुआ। जब महाश्वेता स्नान-ध्यान करके जप कर रही थी और चन्द्रापीड भी प्रभातकालीन कृत्य सम्पन्न कर रहा था। उसी समय केयूरकके साथ तरलिका आ पहुँची। उसके साथ आये हुए केयूरकने कादम्बरीका सन्देश सुनाया। तब महाश्वेताने यह कहकर उसे लौटा दिया कि 'तुम चलो, मैं स्वयं आकर उसे समझाऊँगी।' तदनन्तर महाश्वेता चन्द्रापीडको साथ लेकर कादम्बरीके यहाँ गयी। कादम्बरी चन्द्रापीडको देखते ही उसपर आसक्त हो गयी। इसी समय कादम्बरीके माता-पिताने महाश्वेताको बुलवा भेजा। तब क्रीडापर्वतपर चन्द्रापीडके रहनेका प्रबन्ध करके वह चली गयी। रातको कादम्बरी चन्द्रापीडसे मिली। उसके बाद शेषनामका एक हार उसे उपहारमें दिया। सबेरे चन्द्रापीड फिर जाकर महलमें कादम्बरीसे मिला और महाश्वेतासे अनुमति माँगकर अपने शिविरको लौट आया। दूसरे दिन केयूरक चन्द्रापीडके पास शिविरमें आया और उसने कादम्बरीकी विकलताका हाल कहा। तब वह पत्रलेखाको साथ लेकर फिर हेमकूट गया और कादम्बरीसे मिला। वहाँसे अपने शिविरमें लौटा, तैसे ही उसे पिताका पत्र मिला। जिसमें तुरन्त उज्जयिनी चले आनेका आदेश लिखा था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तदनुसार युवराजने सेनापति मेघनादको सहेजा कि 'तुम मेरे जानेका समाचार कादम्बरीके पास भेज देना और पत्रलेखा लौटे तो उसे साथ लेकर उज्जयिनी चले आना।' इसके बाद वैशम्पायनको बुलाकर कहा—'पिताजीके आदेशानुसार मैं जा रहा हूँ। तुम सेनाको साथ लेकर आरामसे बादमें आना।' ऐसा कहकर वह चल पड़ा और राहमें कई पड़ाव करके उज्जयिनी पहुँच गया।

कई दिन बाद वहाँ भी केयूरक आया और उसने कादम्बरीकी जैसी दीन दशाका वर्णन किया, उसे सुनकर चंद्रापीड बेचैन हो उठा। तदनन्तर पत्रलेखाको साथ करके हेमकूट भेजते हुए उसने कहा—'केयूरक! तुम इसके साथ चलो, मैं वैशम्पायनसे मिलकर तुरंत आता हूँ।' उसके चले जानेपर दशपुर आयी हुई अपनी सेनाके साथ आये हुए वैशम्पायनसे मिलनेकी अनुमति पितासे लेकर वह दशपुर गया तो वहाँ पता चला कि वैशम्पायन अच्छोद सरोवरपर ही रह गया है। इससे उसे बहुत क्लेश हुआ। अब वहाँसे उज्जयिनी आया और माता-पिता तथा मंत्री शुकनाससे आज्ञा लेकर वह अच्छोद सरोवर गया। वहाँ बहुत खोजनेपर भी वैशम्पायन नहीं मिला तो उसीके विषयमें पूछताछ करनेके लिए चंद्रापीड महाश्वेताके आश्रमपर पहुँचा। वहाँ जाकर उसने देखा कि अनमनी महाश्वेता एक शिलाखण्डपर बैठी फूट-फूटकर रो रही है। रुदनका कारण पूछनेपर वह बोली—'युवराज! एक दिन मैं यहाँ ही बैठी हुई थी। उसी समय एक विप्रपुत्र मेरे समक्ष आया और मेरे सौन्दर्यकी सराहना करके प्रेमकी बेतुकी बातें करने लगा। मैंने उसे ऐसा करनेसे रोका। किन्तु उसने नहीं माना। तब कुपित होकर मैंने उसे पंछी हो जानेका शाप दे दिया। मेरे शाप देते ही वह मरकर धरतीपर गिर गया। उसकी यह दशा देखकर उसके साथी घिघियाकर रोने लगे। बादमें उन्हींसे ज्ञात हुआ कि वह ब्राह्मणकुमार आपका मित्र था।' ऐसा कह और लज्जासे मस्तक नीचा करके महाश्वेता फिर रोने लगी। इसपर चंद्रापीडने कहा—'भगवति! अब दूसरे जन्ममें कादम्बरीसे मेरा सम्बन्ध कराइएगा।' वह यों कह ही रहा था, उसी समय उसका हृदय विदीर्ण हो गया और कटे रूखकी भाँति वह धरतीपर गिर पड़ा। यह देखकर सबलोग एक साथ चीत्कार करने लगे।

दूसरी ओर कादम्बरी पत्रलेखासे चंद्रापीडके आगमनकी खबर सुनकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाश्वेताके आश्रमपर दौड़ी आयी। यहाँ उसका यह हाल देखा तो वह मूर्छित होकर गिर पड़ी। सचेत होनेपर उसने महाश्वेतासे कहा--'सखी! अब दूसरे जन्ममें फिर भेंट होगी।' उसी समय चंद्रापीडके शरीरसे एक ज्योति निकली और उसने कहा--'पुत्री महाश्वेता! धीरज न छोड़ना, तुम्हारे प्रियतमसे तुम्हारा मिलन अवश्य होगा। बेटी कादम्बरी! तुम भी चंद्रापीडके शरीरको न जलाना और न गाड़ना। इसे सम्हालोगी तो यह तुमको पुनः प्राप्त होगा।' यह आकाशवाणी सुनकर सब लोगोंको बहुत विस्मय हुआ। उसी समय पत्रलेखाने इन्द्रायुद्ध घोड़ेको साईसके हाथसे छीन लिया और उसे लिये हुए अच्छोद सरोवरमें कूद गयी। तनिक देर बाद उस सरोवरसे कपिंजल निकलकर महाश्वेताके समक्ष आ उपस्थित हुआ। उसने कहा--'उस समय मैं उस पुरुषका पीछा करता हुआ चन्द्रलोक जा पहुँचा। वहाँ उसने बताया कि मैं चन्द्रमा हूँ। मेरे शापसे इसे दो बार धरतीपर जन्म लेना होगा। जबतक शाप नहीं निवृत्त होगा, तबतक इसका यह शरीर यहीं रहेगा। अब तुम जाकर इसके पिता श्वेतकेतुको सब वृत्तान्त बता दो।' चन्द्रदेवकी यह आज्ञा पाकर मैं तुरन्त चल पड़ा। वहाँसे आ रहा था, तभी अनजानमें मैंने आकाशमें एक वैमानिकका रास्ता काट दिया। जिससे कुपित होकर उसने मुझे घोड़ा हो जानेका शाप दे दिया। अभी अच्छोद सरोवरमें स्नान करके मैंने उस शापसे छुटकारा पाया है। आपने अभी हालमें जिसको पंछी हो जानेका शाप दिया है, वह मेरा मित्र पुण्डरीक ही था। शापके ही कारण उसने वह दूसरा जन्म पाया था।' यह कहकर कपिंजल आकाशमार्गसे महामुनि श्वेतकेतुके पास चला गया।

तदनन्तर महाश्वेताने कादम्बरीको सान्त्वना देकर चन्द्रापीडका शरीर सम्हालनेका परामर्श दिया। सबेरे कादम्बरीने मदलेखाको अपने माता-पिताके पास भेजकर सब समाचार कहला दिया। मदलेखा हेमकूट गयी और सब हाल कहकर लौट आयी। इसके कुछ दिनों बाद जब वर्षा ऋतु बीत गयी, तब मेघनादने आकर कादम्बरीसे कहा कि 'उज्जयिनीसे महाराज तारापीडने चन्द्रापीडका समाचार जाननेके लिए कुछ दूत भेजे हैं। उनसे क्या कह दिया जाय?' यह सुनकर कादम्बरीने उन दूतोंके साथ चन्द्रापीडके बालसखा त्वरितकको भेज दिया। उसने उज्जयिनी जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया। सो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुनकर सपरिवार राजा तारापीड भी अच्छोद सरोवरपर आ पहुँचे और चन्द्रापीडका कलेवर देखकर उन्होंने शान्ति प्राप्त की।

इतनी कथा कहकर महर्षि जाबालि बोले—'तपस्विनी महाश्वेताने जिसे पंछी होजानेका शाप दिया था। यह वही तोता है।' उनकी यह बात सुनते ही मुझे अपने पूर्व जन्मकी सब बातें स्मरण हो आयीं। तब मैंने बड़े ही विनीत-भावसे कहा—'भगवन्! कृपया आप मुझे मेरे मित्र चन्द्रापीडका जन्मस्थान बता दीजिए।' उन्होंने तनिक गुस्सेसे आँख तरेरकर कहा—'पहले तू उड़ने-की शक्ति तो पा ले, उसके बाद यह भी बता दूँगा।' इस प्रकार मेरी राम-कहानी कहते-कहते सारी रात बीत गयी और सबेरा हो गया। तब सभी मुनि अपने-अपने नित्यकर्म करने लगे। उससे निवृत्त होकर हारीत मेरे पास आया और कहने लगा—'तुम्हारा मित्र कपिंजल तुम्हें खोजता हुआ यहाँ आया है।' तभी कपिंजल मेरे समक्ष आ उपस्थित हुआ। उसने बतलाया कि पिताजी सकुशल हैं। वे तुम्हारे कल्याणार्थ एक अनुष्ठान कर रहे हैं। वह जबतक न पूर्ण हो जाय, तबतक तुम यहीं रहो। ऐसा पिताजीका आदेश है।' यह कहकर वह गगनमण्डलमें उड़ गया।

उसके बाद पूर्ण तन्मयतापूर्वक हारीत मेरा पालन-पोषण करने लगा। इससे कुछ ही समयमें मेरे पंख निकल आये और उड़नेकी शक्ति भी मुझमें आगयी। तब एक दिन सवेरे घूमने-फिरनेके बहाने मैं महाश्वेताके आश्रमको जानेके विचारसे उड़ा। किन्तु अभ्यास न होनेके कारण कुछ ही दूर जाकर थक गया और एक स्थानपर कुछ खा-पीकर वृक्षोंकी झुरमुटमें सो रहा। कुछ देर बाद जागा तो अपनेको एक मजबूत जालमें फँसा पाया। मेरे समक्ष एक भयानक व्याध खड़ा था। उससे छोड़ देनेके लिए मैंने बहुत अनुनय-विनय किया। किन्तु उसने मेरी एक न सुनी और मुझे चाण्डालोंकी बस्तीमें लेजाकर एक चाण्डाल-कन्याके हाथों सौंप दिया। उस कन्याने मुझे काठके एक गन्दे पींजरेमें बन्द कर दिया। उसके बहुत दिनों बाद एक दिन जब सवेरे मैं सोकर जागा तो अपनेको इस सुनहले पींजरेमें उपस्थित देखा। उसके बाद यह मुझे श्रीमान्-के पास ले आयी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शुक वैशम्पायनके मुखसे इतनी कथा सुनकर महाराज शूद्रकने उस चाण्डालकन्याको बुलवाया। तदनुसार वह राजाके सामने गयी और कहने लगी—'हे चन्द्रदेव ! आपने अपना और इस तोतेका सारा वृत्तान्त सुन लिया। मैं इसकी माता लक्ष्मी हूँ। अबतक जैसे बना, वैसे मैंने इसे कुपथ-पर जानेसे रोका। अब आप दोनों ही दिव्य पुरुष अपना-अपना यह कलेवर त्यागकर अभिलषित सुखोंका उपभोग करें।' ऐसा कहकर वह आकाशमें उड़ गयी। उस चाण्डालकन्यारूपिणी लक्ष्मीकी बात सुनते ही राजा शूद्रकको अपने पूर्वजन्मकी सब बातें स्मरण हो आयीं।

उधर महाश्वेताके आश्रममें वसन्तकाल आ उपस्थित हुआ। एक दिन कादम्बरीने बड़े प्रेमपूर्वक चन्द्रापीडके शरीरको सँवारा-सजाया और आलिगन किया। उसके ऐसा करते ही सहसा चन्द्रापीड जीवित हो गया। वह प्रेमपूर्वक आलिंगन करके कादम्बरीको अपना हाल बता ही रहा था कि इतनेमें पुंडरीक भी चन्द्रलोकसे धरतीपर उतर आया। इस अवसरपर महाराज तारा-पीड, रानी विलासवती, महाश्वेता, शुकनास और मनोरमा सबलोग हर्षविभोर हो उठे। यह समाचार पाकर गन्धर्वराज चित्ररथ और हंस भी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने कादम्बरीका चन्द्रापीडके साथ तथा महाश्वेताका वैशम्पायननामधारी पुंडरीकके साथ विधिवत् विवाह कर दिया और वे दोनों विविध प्रकारका आनन्द लेते हुए विहार करने लगे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषयानुक्रमणिका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषय	पृष्ठ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषय	पृष्ठ

इति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पात्र-परिचय

(पुरुषपात्र)

चन्द्रापीड—कथानकका मुख्य नायक

तारापीड—चन्द्रापीडका पिता और उज्जयिनीनरेश

वैशम्पायन—चन्द्रापीडका परम मित्र और शुकनाशका पुत्र

शुकनास—राजा तारापीडका मुख्य मंत्री और वैशम्पायनका पिता

पुण्डरीक—श्वेतकेतुतनय तथा महाश्वेताका प्रणयी

कपिंजल—पुण्डरीकका मित्र और एक मुनिपुत्र

श्वेतकेतु—पुण्डरीकके पिता और एक विख्यात महर्षि

बलाहक—महाराज तारापीडका सेनापति

मेघनाद—चन्द्रापीडका सेनापति और बलाहकका पुत्र

कैलास—महाराज तारापीडके अन्तःपुरका मुख्य कंचुकी

शूद्रक—विदिशा (भेलसा) का शासक तथा चन्द्रापीडका दूसरा अवतार

कुमारपालित—राजा शूद्रकका मुख्य मंत्री

जाबालि—'कादम्बरी'की कथा कहनेवाले महर्षि

हारीत—महर्षि जाबालिके सुपुत्र

हंस—महाश्वेताके पिता और गन्धर्वाधिपति

चित्ररथ—कादम्बरीके पिता और हेमकूटके शासक

केयूरक—कादम्बरीका वीणावाहक और एक गन्धर्वबालक

त्वरितक—चन्द्रापीडका बालसखा

मातंगक—शबरसेनाका सेनापति

क्षीरोद—राजा चित्ररथका एक कंचुकी

इन्द्रायुध—चन्द्रापीडका घोड़ा और पुण्डरीकके साथी कपिंजलका दूसरा अवतार

गन्धमादन— चन्द्रापीडका मुख्य हाथी

परिहास—कालिन्दी सारिकाका पति और कादम्बरीका पालतू तोता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(स्त्रीपात्र)

कादम्बरी—कथानककी मुख्य नायिका और गन्धर्वराज चित्ररथका कन्या
मदिरा—कादम्बरीकी माँ और राजा चित्ररथकी भार्या
महाश्वेता—गन्धर्वनरेश हंसकी पुत्री और पुंडरीककी पत्नी
गौरी—महाश्वेताकी माता और हंसकी पत्नी
मदलेखा—कादम्बरीकी मुख्य सहेली
पत्रलेखा—चन्द्रापीडकी ताम्बूलवाहिनी तथा कुलूतनरेशकी पुत्री
तरलिका—महाश्वेताकी सहायिका
तमालिका—कादम्बरीकी एक अन्य सहेली
विलासवती—चन्द्रापीडकी माँ और राजा तारापीडकी भार्या
मनोरमा—महामंत्री शुकनासकी भार्या तथा वैशम्पायनकी माता
चाण्डालकन्या—पुण्डरीककी माता और लक्ष्मीका अवतार
कुलवर्धना—रानी विलासवतीकी मुख्य दासी
मकरिका—रानी विलासवतीकी ताम्बूलवाहिनी
कालिन्दी—कादम्बरीकी मैना और परिहासकी पत्नी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कविप्रशस्तिः

श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-
ऽलंकारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने ।
आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी-
संचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

महाकवि–बाणभट्टप्रणीता–

कादम्बरी

'अर्चना'ऽऽह्वया हिन्दीटीकयोपेता ।

पूर्वभागः ।

रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे ।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः ॥ १ ॥
जयन्ति बाणासुरमौलिलालिता दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः ।
सुरासुराधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदस्त्र्यम्बकपादपांसवः ॥ २ ॥
जयत्युपेन्द्रः स चकार दूरतो बिभित्सया यः क्षणलब्धलक्ष्यया ।
दृशैव कोपारुणया रिपोरुरः स्वयं भयाद्भिन्नमिवास्रपाटलम् ॥ ३ ॥

विश्वसृष्टिके जन्मकालमें रजोगुणसम्पन्न, स्थितिकालमें सतोगुणयुक्त एवं संहारकालमें तमोगुणयुक्त इस प्रकार उत्पत्ति, पालन तथा संहारके मूल-कारण, त्रिगुणात्मक, ब्रह्मा-विष्णु-शिवात्मक, त्रयीमय और अजन्मा परमात्माको मेरा नमस्कार है ॥ १ ॥ बाणासुरके सिरपर विराजित, रावणके चूडामणिका चुम्बन करनेवाली, देवताओं तथा दैत्योंके शिखान्तपर सोनेवाली और भव-बन्धनको काट डालनेवाली भगवान शङ्करकी चरणरेणुओंकी जय हो ॥ २ ॥ उन उपेन्द्रकी जय हो, जिन्होंने चीर डालनेकी इच्छासे क्षण ही भरमें अपने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नमामि भत्सोश्चरणाम्बुजद्वयं सशेखरैर्मौखरिभिः कृतार्चनम् ।
समस्तसामन्तकिरीटवेदिकाविटङ्कपीठोल्लुठितारुणांगुलि ॥ ४ ॥
अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात्कस्य भयं न जायते ।
विषं महाहेरिव यस्य दुर्वचः सुदुःसहं संनिहितं सदा मुखे ॥ ५ ॥
कटु क्वणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृंखला इव ।
मनस्तु साधुध्वनिभिः पदे पदे हरन्ति सन्तो मणिनूपुरा इव ॥ ६ ॥
सुभाषितं हारि विशत्यधो गलान्न दुर्जनस्यार्करिपोरिवामृतम् ।
तदेव धत्ते हृदयेन सज्जनो हरिर्महारत्नमिवातिनिर्मलम् ॥ ७ ॥
स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ॥ ८ ॥

लक्ष्यपर पहुँचकर क्रोधसे रक्तवर्ण दृष्टि द्वारा दूरसे ही अपने शत्रु हिरण्यकशिपु-की छाती इस तरह रुधिर जैसी लाल कर दी थी, जैसे वह मारे डरके स्वतः विदीर्ण हो गयी हो ॥३॥ मैं भत्सुनामक अपने गुरुदेवके उन चरणोंकी वन्दना करता हूँ, जिनका भारतके प्राचीन राजवंशी मुकुटधारी मौखरियोंने पूजन किया था और समस्त सामन्तोंके किरीटोंकी वेदीके ऊपरी छोरका स्पर्श करके जिन चरणोंकी उँगलियाँ लाल हो जाया करती थीं ॥ ४ ॥ अकारण वैर खड़ा कर देनेसे भयानक दीखनेवाले दुर्जनसे किसे डर नहीं लगता ? क्योंकि महान् सर्पके मुँहमें स्थित दुःसह विषसदृश दुर्जनोंके मुखमें सदा दुखदायी दुर्वचन भरे रहते हैं ॥ ५ ॥ कर्णकटु खनखनाहटका शब्द करती हुई तथा कालिमा उत्पन्न करनेवाली बाँधनेकी जंजीरोंकी तरह कर्कश वचन बोलने तथा झूठा कलंक लगानेवाले दुर्जन बहुत दुःख देते हैं । किन्तु सत्पुरुष अपने मनोहर वचनोंसे वैसे ही लोगोंका मन हर लेते हैं, जैसे मणिजटित नूपुर मीठी बोलीसे चित्तको अपनी ओर आकृष्ट करते हैं ॥६॥ सर्वथा मनोहारिणी काव्यादिकी सूक्तियाँ भी दुष्टोंके गलेसे नीचे नहीं उतरतीं । जैसे समुद्रमन्थनसे उत्पन्न अमृत राहुके गलेसे नीचे नहीं उतरा था । इसके विपरीत सज्जन पुरुष उन सूक्तियोंको उसी तरह अपने हृदयमें धारण करता है । जैसे समुद्रजनित कौस्तुभ मणिको भगवान् विष्णुने धारण किया था ॥ ७ ॥ शृङ्गारादि रसोंसे ओत-प्रोत, अभिनव-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिताः कथाः ।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव ॥ ९ ॥
बभूव वात्स्यायनवंशसंभवो द्विजो जगद्गीतगुणोऽग्रणीः सताम् ।
अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः कुबेरनामांश इव स्वयंभुवः ॥ १० ॥
उवास यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे सदा पुरोडाशपवित्रिताधरे ।
सरस्वती सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे ॥ ११ ॥
जगुर्गृहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पञ्जरवर्तिभिः शुकैः ।
निगृह्यमाणा वटवः पदे पदे यजूंषि सामानि च यस्य शंकिताः ॥ १२ ॥

गद्य-पद्यरचनामयी, मधुर कथोपकथन युक्त एवं विलासपूर्ण कथा रसिकोंके हृदयमें इस प्रकार अत्यधिक कौतुक उत्पन्न करती है। जैसे नवसङ्गमके समय नवोढा नारी मीठे वार्तालाप और सरस हाव-भावसे रस बरसाती हुई स्वतः सेजपर जाकर पतिके हृदयमें उत्कण्ठा और अनुराग जाग्रत करती है ॥ ८ ॥ देदीप्यमान दीपककी भाँति जगमगाती चम्पाकी अधखिली कलियों तथा निरन्तर सुन्दर जूहीके फूलोंसे गुँथी हुई मालायें जैसे मन हर लेती हैं। वैसे ही शृंगाररस एवं दीपक-उपमा आदि अलङ्कारोंसे सम्पन्न, नवीन पदार्थोंसे विरचित और शुभ जाति तथा श्लेष आदि अलङ्कारसे परिपूर्ण कथा किस सहृदयका हृदय अपने वशमें नहीं कर लेती ? ॥ ९ ॥ वत्सगोत्रीय, वात्स्यायन वंशमें जायमान, विश्व-विख्यात गुणोंवाले, सज्जनोंमें अग्रणी, अनेक गुप्तवंशीय राजाओं द्वारा पूजितचरण एवं साक्षात् ब्रह्माके अंशसदृश तेजस्वी कुबेर नामके एक ब्राह्मण हुए ॥ १० ॥ निरन्तर वेदाध्ययनसे जिनका पाप नष्ट हो चुका था, पुरोडाश (यज्ञावशिष्ट हवि) से जिनका अधर सर्वदा पुनीत रहा करता था, यज्ञमें सोमपान करनेसे जिनका अन्तःकरण काषायित हो गया था, समस्त शस्त्रों और स्मृतियोंका निवास होनेके कारण उनके सुन्दर मुखमें सदा भगवती सरस्वती विराजती थीं ॥ ११ ॥ विप्रवर कुबेरके घर उनके शिष्य ब्रह्मचारी यजुर्वेद और सामवेदका गायन सशंकभावसे करते थे। क्योंकि पींजरोंमें बैठे सभी वेदोंके अभ्यस्त तोते और मैनायें उन्हें पद-पदपर टोका करती थीं ॥ १२ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिरण्यगर्भो भुवनाण्डकादिव क्षपाकरः क्षीरमहार्णवादिव।
अभूत्सुपर्णो विनतोदरादिव द्विजन्मनामर्थपतिः पतिस्ततः ॥ १३ ॥
विवृण्वतो यस्य विसारि वाङ्मयं दिने दिने शिष्यगणा नवा नवाः।
उषःसु लग्नाः श्रवणेऽधिकां श्रियं प्रचक्रिरे चन्दनपल्लवा इव ॥ १४ ॥
विधानसंपादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्तिभिः।
मखैरसंख्यैरजयत्सुरालयं सुखेन यो यूपकरैर्गजैरिव ॥ १५ ॥
स चित्रभानुं तनयं महात्मनां सुतोत्तमानां श्रुतिशास्त्रशालिनाम्।
अवाप मध्ये स्फटिकोपलोपमं क्रमेण कैलासमिव क्षमाभृताम् ॥ १६ ॥
महात्मनो यस्य सुदूरनिर्गताः कलंकमुक्तेन्दुकलामलत्विषः।
द्विषन्मनः प्राविविशुः कृतान्तरा गुणा नृसिंहस्य नखांकुशा इव ॥१७॥
दिशामलीकालकभङ्गतां गतस्त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः।
चकार यस्याध्वरधूमसञ्चयो मलीमसः शुक्लतरं निजं यशः ॥ १८ ॥

जैसे भुवनाण्डसे ब्रह्माजी, क्षीरसागरसे चन्द्रमा और विनताकी कोखके गरुड उत्पन्न हुए थे। उसी प्रकार उन कुवेरसे ब्राह्मणश्रेष्ठ अर्थपति जायमान हुए ॥१३॥ जैसे नित्य प्रातःकाल चन्दनका पल्लव रखनेसे कानोंकी शोभा बढ़ जाती है, उसी प्रकार नये-नये शिष्य शास्त्रोंकी विस्तृत व्याख्या करते हुए उन अर्थपतिकी शोभा बढ़ा रहे थे ॥ १४ ॥ महात्मा अर्थपतिने वैदिकविधिके अनुसार दान (पक्षान्तरमें—मदजल) से अलंकृत, धधकती हुई होमाग्नि (पक्षान्तरमें—बड़े-बड़े योधाओंकी पीठपर बैठाये) एवं पशु बाँधनेके लिये नियत खम्भेके समान मोटी सूँड़वाले हाथियों सदृश अगणित यज्ञोंसे बिना प्रयत्नके ही देवलोकपर विजय प्राप्त कर ली थी ॥ १५ ॥ कालान्तरमें अनेक पुत्र होनेके बाद उन अर्थपतिने महात्मा, समस्त पर्वतोंमें स्फटिकमणि सदृश विमल कैलासपर्वतके समान शुभ्र तथा वेद-शास्त्रके ज्ञाता चित्रभानु नामके पुत्रको प्राप्त किया ॥ १६ ॥ कुछ समय बाद अर्थपतितनय महात्मा चित्रभानुके दिगन्तव्यापी तथा निष्कलङ्क चन्द्रकला जैसे निर्मल एवं दीप्तिसम्पन्न गुणगण राह बनाकर शत्रुओंके मनमें भी उसी प्रकार प्रविष्ट हो गये, जैसे भगवान् नृसिंहके नखरूपी अंकुश हिरण्यकशिपुकी छातीमें घुस गये थे ॥ १७ ॥ पूर्व-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सरस्वतीपाणिसरोजसंपुटप्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भसः ।
यशोंऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्ततः सुतो बाण इति व्यजायत ॥ १९ ॥
द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठ्यया महामनोमोहमलीमसान्धया ।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा ॥ २० ॥

आसीदशेषनरपतिशिरःसमभ्यर्चितशासनः पाकशासन इवापरः, चतुरुदधिमालामेखलाया भुवो भर्ता, प्रतापानुरागावनतसमस्तसामन्तचक्रः, चक्रवर्तिलक्षणोपेतः, चक्रधर इव करकमलोपलक्ष्यमाणशंखचक्रलाञ्छनः, हर इव जितमन्मथः, गुह इवाप्रतिहतशक्तिः, कमलयोनिरिव

पश्चिमादि दसों दिशाओंके ललाटपट्टपर अलकावलीकी तरह और ऋग्यजुःसामस्वरूपा त्रयीवधूके कानोंमें तमालपत्रकी तरह मलिन होनेपर भी उनके द्वारा किये गये यज्ञोंकी धूमराशिने चित्रभानुकी कीर्तिको अतिशय उज्ज्वल कर दिया था ॥ १८ ॥ जिनके हवनश्रमजनित पसीनेकी बूँदोंको स्वयं भगवती सरस्वती अपने करकमलोंसे पोंछती थीं और जिन्होंने अपनी कीर्तिरूपिणी किरणोंसे सातों भुवनोंको उज्ज्वल कर दिया था, उन महामना चित्रभानुसे 'बाण' नामका पुत्र जनमा ॥१९॥ जिसके कण्ठकी कुण्ठा (जड़ता) नष्ट नहीं हो पायी थी, अतएव अपना अभिप्राय प्रकट करनेमें असमर्थ तथा मनके महामोहान्धकारसे अन्धी (भला-बुरा सोचनेकी सामर्थ्यसे हीन) एवं विद्वत्ताके कौशलसे वंचित रहनेके कारण मोहमें पड़ी हुई बुद्धिसे ही ब्राह्मण बाणभट्टने यह अद्वितीय कथा रची है (कहनेका तात्पर्य यह कि यदि मेरी रचनामें कोई दोष दीखे तो विद्वज्जन उसे सुधार लें) ॥ २० ॥

दूसरे इंद्रके समान प्रभावशाली 'शूद्रक' नामका एक राजा था । उसके समकालीन सभी राजे माथा झुकाकर राजा शूद्रककी आज्ञा मानते थे। वह चतुःसमुद्ररूपिणी मेखला धारण करनेवाली पृथिवीका अधिपति था। उसके प्रतापपर प्रेम होनेके कारण सभी सामन्त राजे उसके वशवर्ती हो गये थे। राजा शूद्रकमें सामुद्रिक-शास्त्रोक्त चक्रवर्ती (सार्वभौम) के सब लक्षण विद्यमान थे । उसकी हथेलीमें विष्णुके सदृश शंख-चक्रके चिह्न अंकित थे । भगवान् शङ्करके समान उसने काम (मन्मथ अथवा कामजनित विकार) को जीत लिया था। कार्ति-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विमानीकृतराजहंसमण्डलः, जलधिरिव लक्ष्मीप्रसूतिः, गङ्गाप्रवाह इव भगीरथपथप्रवृत्तः, रविरिव प्रतिदिवसोपजायमानोदयः, मेरुरिव सकलोपजीव्यमानपादच्छायः, दिग्गज इवानवरतप्रवृत्तदानार्द्रीकृतकरः,

---

केयकी तरह उसकी शक्ति (अस्त्रविशेष अथवा सामर्थ्य) अबाध थी। जैसे ब्रह्माने राजहंसको विमानस्वरूप सवारी बनायी थी, उसी प्रकार शूद्रकने बड़े-बड़े राजाओंको विमान अर्थात् गर्वविहीन किया था। वह समुद्रके समान लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) का उद्गम था। पूर्वकालमें जैसे गङ्गाकी धारा राजा भगीरथके पीछे-पीछे चली थी, उसी प्रकार शूद्रक भगीरथप्रदर्शित उद्योग-उत्साह और साहसके मार्गपर चलता था। (कथान्तर—सूर्यवंशी महाराज सगरने अनेक अश्वमेध यज्ञ किये। जिन्हें देखकर देवराज इन्द्रको अपना सिंहासन छिन जानेका भय हुआ। तब उनके यज्ञमें विघ्न डालनेके लिए इन्द्रने यज्ञका घोड़ा चुरा लिया और उसे ले जाकर महर्षि कपिलके आश्रमपर बाँध दिया। घोड़ोंको खोजते-खोजते राजा सगरके साठ हजार पुत्र कपिलाश्रमपर पहुँचे। वहाँ घोड़ा देखकर उन्होंने कपिल मुनिको चोर समझा और उन्हें बहुत अपमानित किया। जिससे कुपित कपिलमुनिने तत्काल सगरपुत्रोंको शाप देकर भस्म कर डाला। कालान्तरमें राजा सगरको ज्ञात हुआ कि कपिलमुनिकी कोपाग्निमें दग्ध मेरे पुत्रोंको केवल गङ्गाजलसे सद्गति मिल सकती है। उन दिनों गङ्गा स्वर्गमें थीं और वहाँसे उन्हें धरतीपर लाना सरल काम नहीं था। यह कार्य सम्पन्न करनेके लिए रघुवंशकी चार पीढ़ियाँ खप गयीं। अन्तमें सगरकी पाँचवीं पीढ़ीके महात्मा भगीरथने तप करके अपने उद्योग, साहस और उत्साहसे देवताओंको प्रसन्न करके गङ्गाको धरतीपर उतारा और उनके पावन जलसे अपने पूर्वजोंका उद्धार किया) सूर्यके समान राजा शूद्रकका प्रतिदिन उदय (उत्थान) होता था। जैसे सुमेरुपर्वतकी छायामें सब देवता निवास करते हैं, वैसे ही संसारके सब लोग अपनी रक्षाके निमित्त राजा शूद्रककी चरणछायाका सहारा लेते थे। जैसे दिग्गजोंकी सूँड़ सदा दान (मदजल) से गीली रहती है, उसी प्रकार उस राजाका हाथ विविध द्रव्योंका दान करते रहनेके कारण सदा संकल्पके जलसे आर्द्र (गीला) रहता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्ता महाश्चर्याणाम्, आहर्ता क्रतूनाम्, आदर्शः सर्वशास्त्राणाम्, उत्पत्तिः कलानाम्, कुलभवनं गुणानाम्, आगमः काव्यामृतरसानाम्, उदयशैलो मित्रमण्डलस्य, उत्पातकेतुरहितजनस्य, प्रवर्तयिता गोष्ठीबन्धानाम्, आश्रयो रसिकानाम्, प्रत्यादेशो धनुष्मताम्, धौरेयः साहसिकानाम्, अग्रणीर्विदग्धानाम्, वैनतेय इव विनतानन्दजननः, वैन्य इव चापकोटिसमुत्सारितारातिकुलाचलो राजा शूद्रको नाम।

नाम्नैव यो निर्भिन्नारातिहृदयो विरचितनारसिंहरूपाडम्बरम्, एकविक्रमाक्रान्तसकलभुवनतलो विक्रमत्रयायासितं भुवनत्रयं च हसति

वह बड़े आश्चर्यजनक काम करता था। उसके द्वारा बड़े-बड़े यज्ञ सम्पन्न होते थे। वह समस्त शास्त्रोंका विज्ञ तथा शिल्पादि बहत्तर कलाओंका जन्मदाता था। वह गाम्भीर्यादि सभी गुणोंका आश्रयस्थल तथा काव्यामृतका उद्गमस्थान था। जैसे उदयाचलपर मित्रमण्डल (सूर्य) का उदय होता है, उसी प्रकार उस राजाके मित्रोंका उत्कर्ष होता था। अपने शत्रुओंके लिए वह धूमकेतुके समान भयंकर था। मधुर आलाप-आलोचनाके लिए समय-समयपर वह विद्वानोंका सम्मेलन किया करता था। वह रसिकजनोंका सहारा था। वह बड़े-बड़े धनुर्धरोंका गर्व खर्व कर देता था। साहसी वीरोंका अग्रणी था। वह विद्वानोंका मुखिया था। जैसे गरुड़ अपनी माता विनताको आनन्दित करते हैं, उसी प्रकार शूद्रक विनत (विनम्र) पुरुषोंको आनन्दित करता था। जैसे महाराज पृथुने अपने शत्रुस्वरूप कुलपर्वतोंको धनुषके अग्रभागसे हटा दिया था, उसी प्रकार राजा शूद्रकने अपने धनुषके अग्रभागसे पर्वत सदृश भीषण शत्रुसमुदायको ध्वस्त कर दिया था। (पुराणोंमें कहा गया है कि पहले समस्त पृथिवी पर्वतोंसे घिरी हुई थी, जिससे भली भाँति खेती नहीं हो पाती थी। महाराज पृथुने पर्वतोंको हटाकर धरतीको समतल कर दिया)। ऐसा था वह राजा शूद्रक।

उस राजाने अपने नामसे ही शत्रुओंकी छाती विदीर्ण कर दी थी। वह अपने एक विक्रम (पराक्रम) से ही समस्त भुवनमण्डलमें व्याप्त होकर नृसिंह रूपका आडम्बर करने तथा वामनरूप धरके तीन विक्रम (पग) से भुवनोंमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्मेव वासुदेवम्। अतिचिरकाललग्नमतिक्रान्तकुनृपतिसहस्रसंपर्ककलङ्कमिव क्षालयन्ती यस्य कृपाणधाराजले चिरमुवास लक्ष्मीः। यश्च मनसि धर्मेण, कोपे यमेन, प्रसादे धनदेन, प्रतापे वह्निना, भुजे भुवा, दृशि श्रिया, वाचि सरस्वत्या, मुखे शशिना, बले मरुता, प्रज्ञायां सुरगुरुणा, रूपे मनसिजेन, तेजसि सवित्रा च वसता सर्वदेवमयस्य प्रकटितविश्वरूपाकृतेरनुकरोति भगवतो नारायणस्य। यस्य च मदकलकरिकुम्भपीठपाटनं विदधतो लग्नस्थूलमुक्ताफलेन दृढमुष्टिनिपीडनान्नि-

---

व्याप्त होनेवाले विष्णुभगवानका जैसे उपहास करता था। अति चिरकालसे हजारों अधम राजाओंके सम्पर्कसे प्राप्त कलङ्कको धोती हुई लक्ष्मी मानो आत्मशुद्धिके लिए राजा शूद्रककी तलवारके धाररूपी जलमें बहुत समयसे आ बसी थी। उसके मनमें धर्मका निवास था। अतः वह सब समय धर्मचिन्तन करता था। उसके क्रोधमें सदा यमका निवास रहता था। अतएव वह अपराधीको तुरन्त दण्ड देता था। उसकी प्रसन्नतामें कुबेरका निवास रहता था। इसलिए वह जिसपर खुश होता, उसे भरपूर धन देता था। उसके प्रतापमें अग्नि बसती थी। अतएव वह अपने सभी शत्रुओंको भस्म कर देता था। उसकी भुजाओंमें पृथिवीका निवास था। इसलिए वह समस्त भूमण्डलका भार वहन करता था। उसकी आँखोंमें लक्ष्मी बसती थीं। अतएव वह सबको प्रेमकी दृष्टिसे देखता था। उसकी वाणीमें सरस्वतीका निवास था। अतएव वह बातें करनेमें बड़ा निपुण था। उसके मुखमें चन्द्रमाका निवास था। अतएव उसे देखकर सब लोग आनन्दित होते थे। उसके पराक्रममें वायुका निवास रहता था। इसलिए वह असाधारण बलवान् था। उसकी बुद्धिमें सुरगुरु बृहस्पति बसते थे। अतएव उसकी प्रतिभा बड़ी प्रखर थी। उस राजा शूद्रकके सौन्दर्यमें कामदेव निवास करते थे। अतएव उसे देखते ही मानिनियोंका मान दूर भाग जाता था। उसके तेजमें सूर्य बसते थे। इस कारण शत्रु उसकी ओर नहीं निहार पाते थे। अपने इन अनुपम गुणोंसे वह विश्वरूप एवं सर्वदेवमय भगवान् विष्णुका अनुकरण करता था। राजा शूद्रक रणभूमिमें बड़े बड़े मदमत्त हाथियोंके मस्तक विदीर्ण कर देता था। जिससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च्च्युतधाराजलविन्दुदन्तुरेणेव कृपाणेनाकृष्यमाणा, सुभटोरःकपाटविघ-टितकवचसहस्रान्धकारमध्यवर्तिनी करिकरटगलितमदजलासारदुर्दिना-स्वभिसारिकेव समरनिशासु समीपं सकृदगाद्राजलक्ष्मीः। यस्य च हृदि-स्थितानपि भर्तृन्दिधक्षुरिव प्रतापानलो वियोगिनीनामपि रिपुसुन्दरीणा-मन्तर्जनितदाघो दिवानिशं जज्वाल।

यस्मिंश्च राजनि जितजगति पालयति महीं चित्रकर्मसु वर्णसंकराः, रतेषु केशग्रहाः, काव्येषु दृढबन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ता, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु

उसकी तलवारमें बड़े-बड़े मोतियों (गजमुक्ताओं) के दाने चिपक जाते थे। बड़ी मजबूतीसे मुट्ठीमें पकड़नेके कारण निकले हुए पसीनेकी बूँदोंसे उसकी तलवार मानों और अधिक तीक्ष्ण हो गयी थी। ऐसी तलवारकी ओर आकृष्ट होकर बड़े-बड़े योधाओंके विशाल वक्षोंपर धारित एवं सहस्रों कवचोंमें रहनेवाली राजलक्ष्मी युद्धगजोंके गण्डस्थलसे मदजलकी वर्षा होनेके कारण पंकिल रणभूमिमें इस प्रकार पुनः पुनः राजा शूद्रकके पास आती थी, जिस तरह वर्षा ऋतुकी घनघोर अँधेरी रात्रिमें अभिसारिका अपने प्रियतमसे मिलने जाती है। उस राजाके प्रतापकी अग्नि जैसे उसके शत्रुओंकी विरहिणी नारियोंके हृदयमें विराजमान पतियोंको भी जलानेके लिए ही अहर्निशि धधकती रहती थी।

समस्त जगतीतलका विजयी राजा शूद्रक जब पृथिवीपर शासन करता था, उस समय केवल चित्रनिर्माणमें ही वर्णसंकर (रंगमिश्रण) होता था। प्रजाजनोंमें कोई वर्णसंकर नहीं रहता था। सम्भोगके समय ही नारियोंके केश खींचे जाते थे, न कि कलहमें। काव्योंमें ही समासादिके द्वारा दृढ बन्ध बनाये जाते थे, अपराधियोंके अभाववश किसीको कारागारके दृढ़-बन्धनमें डालनेकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। लोगोंको शास्त्रकी ही चिन्ता रहती थी। क्योंकि उनको और सभी वस्तुयें सुलभ थीं। स्वप्नमें ही वियोग होता था। क्योंकि सभी पुरुष पूर्णायु होते थे। छत्रोंमें ही कनकदंड लगते थे। सही रास्तेपर चलते रहनेके कारण किसीको अर्थदण्ड देनेकी आव-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मदविकाराः, चापेषु गुणच्छेदाः, गवाक्षेषु जालमार्गाः, शशिकृपाणकवचेषु कलङ्काः, रतिकलहेषु दूतप्रेषणानि, सार्यक्षेषु शून्यगृहा न प्रजानामासान्। यस्य च परलोकाद्भयम्, अन्तःपुरिकाकुन्तलेषु भङ्गः, नूपुरेषु मुखरता, विवाहेषु करग्रहणम्, अनवरतमखाग्निधूमेनाश्रुपातः, तुरंगेषु कशाभिघातः, मकरध्वजे चापध्वनिरभूत्।

श्यकता ही नहीं पड़ती थी। केवल पताकाओंमें ही कम्पन होता था। भयसे कभी कोई नहीं काँपता था। गीतोंमें ही वसन्त आदि रागोंका व्यवहार होता था। जनसाधारणमें राग-द्वेषादिका सर्वथा अभाव था। हाथियोंमें ही मदका विकार दीखता था। अन्यत्र मद (अहंकार) नहीं दृष्टिगोचर होता था। धनुषोंमें ही गुणच्छेद (डोरी टूटना) होता था। प्रजामें शौर्यादि गुणोंका लोप कभी नहीं होता था। वातायनोंमें ही शुद्ध वायुके आवागमनके लिए जालियाँ लगायी जाती थीं। अन्यत्र जालरन्ध्र (छल-कपट) की बातें नहीं होती थीं। चन्द्रमा, तलवार और कवचोंमें ही कलंक (चिह्न) रहता था। किसी व्यक्तिको चरित्र कलंकित नहीं होता था। स्त्री-पुरुषके परस्पर प्रणय-कलहमें ही दूतकी आवश्यकता पड़ती थी—युद्धके कलहमें नहीं। शतरंज आदि खेलोंके बिसातमें ही स्थान शून्य दीखता था—किसी प्रजाजनका घर अर्थ-शून्य नहीं रहता था। उस राजाके राज्यमें लोगोंको परलोक बिगड़नेका ही भय रहता था, न कि शत्रुओंका। अन्तःपुरमें रहनेवाली सुन्दरियोंके केशोंमें ही टेढ़ापन रहता था, अन्यत्र कहीं कुटिलता नहीं रहती थी। स्त्रियोंके पायलमें ही रुनझुनकी मुखरता रहती थी, प्रजावर्गमें कोई बकवासी नहीं था। विवाहमें ही करग्रह (पाणिग्रहण-संस्कार) होता था, राज्यकरका सर्वथा अभाव था। निरन्तर होनेवाले यज्ञोंका धुआँ लगनेसे ही लोगोंको अश्रुपात होता था, किसी दुःखसे किसीके आँसू नहीं गिरते थे। घोड़ा हाँकते समय ही कशा (चाबुक) की जरूरत पड़ती थी, किसी अपराधीको कोड़ेकी सजा नहीं दी जाती थी। केवल कामदेव ही अपने पुष्पधनुषकी टंकोर करता था, अन्यत्र भयाभाववश उसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्य च राज्ञः कलिकालभयपुञ्जीभूतकृतयुगानुकारिणी, त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा, मज्जन्मालवविलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरितोर्मिमालया जलावगाहनागतजयकुञ्जरकुम्भसिन्दूरसंध्यायमानसलिलयोन्मदकलहंसकुलकोलाहलमुखरीकृतकूलया वेत्रवत्या परिगता विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत् ।

स तस्यामवजिताशेषभुवनमण्डलतया विगतराज्यचिन्ताभारनिर्वृतः, द्वीपान्तरागतानेकभूमिपालमौलिमालालालितचरणयुगलो वलयमिव लीलया भुजेन भुवनभारमुद्वहन्, अमरगुरुमपि प्रज्ञयोपहसद्भिरनेककुलक्रमागतैरसकृदालोचितनीतिशास्त्रनिर्मलमनोभिरलुब्धैः स्निग्धैः प्रबुद्धैश्चामात्यैः परिवृतः समानवयोविद्यालंकारैरनेकमूर्धाभिषिक्तपार्थिवकुलो-

---

उस राजा शूद्रककी विदिशा नगरी राजधानी थी । वह नगरी इतनी लम्बी-चौड़ी थी कि तीनों लोक उसीसे जायमान मालूम पड़ते थे । उस राज्यकी प्रजाके धर्मात्मा होनेके कारण ऐसा लगता था कि जैसे कलिकालसे डरकर सत्ययुगने वहाँ ही डेरा डाल दिया है । विदिशा नगरीके चारों ओर वेत्रवती नदी बहती थी । स्नानके लिए उतरे जयकुंजरोंके मस्तकपर लगे सिन्दूरके धुलनेसे वेत्रवती नदीका जल सन्ध्याकालके सदृश लाल दीखता था। जब मालव देशकी नारियाँ उसमें स्नान करती थीं तो उनके कठोर स्तनोंके आघातसे उसकी तरंगें छितरा जाती थीं । उसके तटपर रहनेवाले मदमत्त कलहंस नित्य कोलाहल करते रहते थे ।

राजा शूद्रकने समस्त भुवनमण्डल अपने अधीन कर लिया था । इसलिए उसे राज्यके भारकी कुछ भी चिन्ता नहीं रह गयी थी । देश-विदेशसे आये हुए अनेक राजे अपने मुकुटोंसे उसके उभय चरणोंकी वन्दना किया करते थे। वह एक कंकणकी तरह समस्त भुवनमण्डलका भार अनायास अपनी भुजापर धारण किये हुए था । अपनी प्रखर बुद्धिसे सुरगुरु बृहस्पतिकी भी मखौल उड़ानेवाले वंशपरम्परागत विद्वान् मंत्रिगण सदा उसकी सेवामें लगे रहते थे । वे निर्लोभी तथा राज्यके शुभचिन्तक थे । अनवरत नीतिशास्त्रका पर्यालोचन करते रहनेके कारण उनकी अन्तरात्मा निर्मल हो चुकी थी । उन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दूगतैरखिलकलाकलापालोचनकठोरमतिभिरतिप्रागल्भैः कालविद्भिः प्रभावानुरक्तहृदयैरग्राम्योपहासकुशलैरिङ्गिताकारवेदिभिः काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकालेख्यव्याख्यानादिक्रियानिपुणैरतिकठिनपीवरस्कन्धोरुबाहुभिरसकृदवदलितसमदरिपुगजघटापीठबन्धैः केसरिकिशोरकैरिव विक्रमैकरसैरपि विनयव्यवहारिभिरात्मनः प्रतिबिम्बैरिव राजपुत्रैः सह रममाणः प्रथमे वयसि सुखमतिचिरमुवास ।

तस्य चातिविजिगीषुतया महासत्त्वतया च तृणमिव लघुवृत्ति स्त्रैणमाकलयतः प्रथमे वयसि वर्तमानस्यापि रूपवतोऽपि संतानार्थिभिरमात्यैरपेक्षितस्यापि सुरतसुखस्योपरि द्वेष इवासीत्सत्यपि रूपविलासोपहसितरतिविभ्रमे लावण्यवति विनयवत्यन्वयवति हृदयहारिणि चाव-

---

स्नेही तथा ज्ञानी मंत्रियों एवं अपने ही समान अवस्था, विद्या तथा अलंकारधारी अनेक क्षत्रिय राजाओंके कुलमें उत्पन्न राजकुमारोंके साथ खेलते-खाते हुए उसने यौवनकालका बहुतेरा समय बड़े आनन्दपूर्वक बिताया। समस्त कलाओंके मनन-मन्थनसे उन सब राजपुत्रोंकी बुद्धि बहुत ही तीव्र हो गयी थी । वे सब प्रतिभासम्पन्न तथा अवसरके ज्ञाता राजपुत्र राजा शूद्रकके प्रभावका आदर करते थे। सभ्य हास्य-परिहासमें निपुण, मनोभाव तथा आकृतिके विज्ञ, कविता-नाटक-कहानी-कथा-चित्रकला-व्याख्यानादि कलाओंमें कुशल, अति कठोर तथा परिपुष्ट कन्धों, जंघाओं तथा भुजाओंवाले वे राजपुत्रगण जैसे राजा शूद्रकके साक्षात् प्रतिबिम्ब थे । सिंहशावकके समान वीर उन राजकुमारोंने बहुत बार शत्रुपक्षके मदमत्त हाथियोंके मस्तक फाड़ डाले थे । पराक्रमप्रदर्शनके रसिक होते हुए भी वे व्यवहारमें सदा विनम्रभाव रखते थे ।

यह सब होते हुए भी विजयप्राप्तिकी प्रबल आकांक्षा और असाधारण पराक्रमी होनेके कारण राजा शूद्रक स्त्रियोंको तृणकी तरह तुच्छ मानता था । यद्यपि वह नौजवान तथा बहुत ही सुन्दर था और उसके मंत्रियोंकी ऐसी इच्छा थी कि इससे सन्तानोंकी उत्पत्ति हो। फिर भी स्त्रीसहवासके प्रति जैसे उसे द्वेष था । यद्यपि राजा शूद्रकके अन्तःपुरमें रूप तथा विलासमें कामपत्नी रतिका भी उपहास करनेवाली, लावण्यमयी, विनयशीला, कुलीन और मनोहारिणी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोधजने। स कदाचिदनवरतदोलायमानरत्नवलयो घर्घरिकास्फालन-प्रकम्पझणझणायमानमणिकर्णपूरः स्वयमारब्धमृदङ्गवाद्यः संगीतक-प्रसंगेन, कदाचिदविरलविमुक्तशरासारशून्यीकृतकाननो मृगयाव्यापा-रेण, कदाचिदाबद्धविदग्धमण्डलः काव्यप्रबन्धरचनेन, कदाचिच्छास्त्रा-लापेन, कदाचिदाख्यानकाख्यायिकेतिहासपुराणाकर्णनेन, कदाचिदा-लेख्यविनोदेन, कदाचिद्वीणया, कदाचिद्दर्शनागतमुनिजनचरणशुश्रूषया, कदाचिदक्षरच्युतकमात्राच्युतकबिन्दुमतीगूढचतुर्थपादप्रहेलिकाप्रदाना-दिभिर्वनितासंभोगसुखपराङ्मुखः सुहृत्परिवृतो दिवसमनैषीत्। यथैव च दिवसमेवमारब्धविविधक्रीडापरिहासचतुरैः सुहृद्भिरुपेतो निशाम-नैषीत्।

सुन्दरियाँ थीं। किन्तु उनके होते हुए भी वह कभी संगीतका आयोजन करके स्वयं मृदंग बजाने लगता था, जिससे उसके रत्नजटित कंकण हिलने लगते थे। कभी घुँघुरू बजाता हुआ झूमने लगता, जिससे उसके मणिमय कर्णभूषण झनझना उठते थे। कभी मृगयाको निकल पड़ता तो अगणित बाणोंकी वर्षासे बनैले पशुओंको मार-मारकर सारा जंगल खाली कर देता था। कभी विद्वानोंकी सभा बुलाकर काव्य-प्रबन्धकी रचना करने लगता था। वह कभी शास्त्रीय वार्ता करता था। कभी कथा-कहानी-इतिहास तथा पुराणोंको सुनता था। वह कभी चित्रकारी करता, कभी वीणा बजाता और कभी दर्शनार्थ आये हुए मुनियोंकी चरणसेवामें लग जाता था। कभी अक्षरच्युतक (जिस पद्यका एक अक्षर निकाल देनेसे अर्थ बदल जाय), कभी मात्राच्युतक (जिस छन्दमें एक मात्रा निकाल देनेसे अर्थ बदल जाय), कभी-कभी बिंदुमती (जिस छन्दमें अक्षरोंके स्थानमें केवल बिन्दु रख दिये जायँ), कभी गूढचतुर्थपाद (जिस छन्दके चतुर्थ चरणके अक्षर पहलेवाले तीनों चरणोंमें छिपे हुए हों) और पहेलियोंके बूझने-बुझानेमें लगा रहता था। वह स्त्रीसंभोगजनित सुखमें तनिक भी अपना मन नहीं लगाता हुआ दिन काटता था। इस प्रकार मित्रोंके साथ जैसे दिन गुजारता था, उसी प्रकार वह विविध क्रीडाओं तथा परि-हासमें निपुण मित्रोंके साथ रात भी बिताता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदलसंपुटभिदि किंचिन्मुक्तपाटलिम्नि भगवति सहस्रमरीचिमालिनि राजानमास्थानमण्डपगतमङ्गनाजनविरुद्धेन वामपार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण संनिहितविषधरेव चन्दनलता भीषणरमणीयाकृतिः, अविरलमलयजानुलेपनधवलितस्तनतटोन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डलेव मन्दाकिनी, चूडामणिप्रतिबिम्बच्छलेन राजाज्ञेव मूर्तिमती राजभिः शिरोभिरुह्यमाना, शरदिव कलहंसधवलाम्बरा, जामदग्न्यपरशुधारेव वशीकृतसकलराजमण्डला, विन्ध्यवनभूमिरिव वेत्रलतावती, राज्याधिदेवतेव विग्रहिणी समुपसृत्य क्षितितलनिहितजानुकरकमला प्रतीहारी सविनयमब्रवीत्—

एक दिन जब कमलोंकी नूतन कलियोंको खिलानेवाले भगवान् सूर्य उदित हुए और थोड़ी ही देर बाद जब उनकी लाली कुछ कम हुई तो जैसे साक्षात् राजकुलदेवीका शरीर धारण करके प्रतीहारी सभाभवनमें महाराज शूद्रकके पास आ उपस्थित हुई। स्त्रीजातिके अयोग्य तलवार बायीं ओर लटकाये रहनेके कारण उसका स्वरूप सर्पयुक्त चन्दनलताके सदृश भीषण और सुन्दर दीखता था। चन्दनके गहरे लेपके कारण उसके स्तन श्वेत हो गये थे। अतएव वह ऐसी लग रही थी कि जैसे तैरकर आये हुए ऐरावत हाथीके मस्तक सहित स्वयं मन्दाकिनी आ उपस्थित हुई हो। परशुरामके परशुकी धारके समान समस्त राजाओंको अपने अधीन कर लेनेवाली (भगवान् परशुरामने अपने क्रूर परशुसे सब राजाओंको अपने वशमें कर लिया था, यहाँ प्रतीहारीने अपने सौन्दर्यसे सब राजाओंको मुग्ध करके अपने अधीन कर लिया था), मूर्तिमती शरद् ऋतुके समान कलहंससदृश श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली (शरद् ऋतुमें कलहंसोंकी उड़ानसे आकाश श्वेत हो जाता है, इधर प्रतीहारीके वस्त्र कलहंस जैसे-शुभ्र थे) और वह विन्ध्यभूमि जैसी वेत्रलताओंसे युक्त थी (विन्ध्यभूमिमें बेंतकी लतायें उगती हैं, इधर प्रतीहारीके हाथमें बेंतकी छड़ी विद्यमान थी)। उस सभामें उपस्थित राजाओंके मुकुटमणियोंपर जब प्रतीहारीका प्रतिबिम्ब पड़ा तो ऐसा लगा कि मानो उन राजाओंने राजा शूद्रककी मूर्तिमती आज्ञाको शिरोधार्य कर लिया है। इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देव, द्वारस्थिता सुरलोकमारोहतस्त्रिशङ्कोरिव कुपितशतमखहुंकारनिपातिता राजलक्ष्मीर्दक्षिणापथादागता चाण्डालकन्यका पञ्जरस्थं शुकमादाय देवं विज्ञापयति—'सकलभुवनतलरत्नानामुदधिरिवैकभाजनं देवः। विहंगमश्चायमाश्चर्यभूतो निखिलभुवनतलरत्नमिति कृत्वा देवपादमूलमादायागताहमिच्छामि देवदर्शनसुखमनुभवितुम्' इति। एतदाकर्ण्य 'देवः प्रमाणम्' इत्युक्त्वा विरराम। उपजातकुतूहलस्तु राजा समीपवर्तिनां राज्ञामालोक्य मुखानि 'को दोषः प्रवेश्यताम्' इत्यादिदेश।

अथ प्रतीहारी नरपतिकथनानन्तरमुत्थाय तां मातङ्गकुमारीं प्रावेशयत्। प्रविश्य च सा नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनमशनिभयपुञ्जितकुलशैल-

---

प्रकार आयी हुई प्रतीहारी अपना घुटना हाथ और माथा धरतीपर टेककर विनयपूर्वक बोली—

स्वामिन्! दक्षिणप्रदेशसे आयी हुई एक चाण्डालकन्या पींजरेमें बन्द तोता लिये राजद्वारपर आकर खड़ी है। वह कुपित देवराज इन्द्रके हुंकारसे गिरी हुई स्वर्गारोहण करते हुए राजा त्रिशंकुकी राजलक्ष्मीके समान दीख रही है। वह चाण्डालकन्या कहती है कि 'महाराज समुद्रकी भाँति अखिलभुवनमण्डलके रत्नोंको पानेके एकमात्र अधिकारी हैं। सो आश्चर्यका मूर्त स्वरूप यह तोता भी समस्त भुवनमण्डलका एक रत्न है। ऐसा सोच तथा इस तोतेको साथ लेकर मैं यहाँ आयी हूँ और महाराजके दर्शनोंका आनन्द लेना चाहती हूँ।' 'इसके बाद महाराजकी जो आज्ञा हो' यों कहकर प्रतीहारी चुप हो गयी। प्रतीहारीके वचन सुनकर महाराजके भी हृदयमें तोतेको देखनेकी उत्सुकता जागृत हो गयी। अतएव समीपवर्ती राजाओंके मुख देखकर कहा—'क्या हर्ज है, उसे ले आओ।'

शूद्रक नरेशके ऐसा कहते ही प्रतीहारी उठकर द्वारपर गयी और चाण्डालकन्याको साथ लेकर लौट आयी। सभाभवनमें पहुँचकर उस कन्याने हजारों राजाओंके बीच बैठे हुए महाराज शूद्रकको देखा। उस समय राजाकी ऐसी शोभा हो रही थी, जैसे वज्रके प्रहारसे भयभीत समस्त कुलपर्वतों (महेन्द्र,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदलसंपुटभिदि किंचिन्मुक्तपाटलिम्नि भगवति सहस्रमरीचिमालिनि राजानमास्थानमण्डपगतमङ्गनाजनविरुद्धेन वामपार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण संनिहितविषधरेव चन्दनलता भीषणरमणीयाकृतिः, अविरलमलयजानुलेपनधवलितस्तनतटोन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डलेव मन्दाकिनी, चूडामणिप्रतिबिम्बच्छलेन राजाज्ञेव मूर्तिमती राजभिः शिरोभिरुह्यमाना, शरदिव कलहंसधवलाम्बरा, जामदग्न्यपरशुधारेव वशीकृतसकलराजमण्डला, विन्ध्यवनभूमिरिव वेत्रलतावती, राज्याधिदेवतेव विग्रहिणी समुपसृत्य क्षितितलनिहितजानुकरकमला प्रतीहारी सविनयमब्रवीत्—

एक दिन जब कमलोंकी नूतन कलियोंको खिलानेवाले भगवान् सूर्य उदित हुए और थोड़ी ही देर बाद जब उनकी लाली कुछ कम हुई तो जैसे साक्षात् राजकुलदेवीका शरीर धारण करके प्रतीहारी सभाभवनमें महाराज शूद्रकके पास आ उपस्थित हुई। स्त्रीजातिके अयोग्य तलवार बायीं ओर लटकाये रहनेके कारण उसका स्वरूप सर्पयुक्त चन्दनलताके सदृश भीषण और सुन्दर दीखता था। चन्दनके गहरे लेपके कारण उसके स्तन श्वेत हो गये थे। अतएव वह ऐसी लग रही थी कि जैसे तैरकर आये हुए ऐरावत हाथीके मस्तक सहित स्वयं मन्दाकिनी आ उपस्थित हुई हो। परशुरामके परशुकी धारके समान समस्त राजाओंको अपने अधीन कर लेनेवाली (भगवान् परशुरामने अपने क्रूर परशुसे सब राजाओंको अपने वशमें कर लिया था, यहाँ प्रतीहारीने अपने सौन्दर्यसे सब राजाओंको मुग्ध करके अपने अधीन कर लिया था), मूर्तिमती शरद् ऋतुके समान कलहंससदृश श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली (शरद् ऋतुमें कलहंसोंकी उड़ानसे आकाश श्वेत हो जाता है, इधर प्रतीहारीके वस्त्र कलहंस जैसे-शुभ्र थे) और वह विन्ध्यभूमि जैसी वेत्रलताओंसे युक्त थी (विन्ध्यभूमिमें बेंतकी लतायें उगती हैं, इधर प्रतीहारीके हाथमें बेंतकी छड़ी विद्यमान थी)। उस सभामें उपस्थित राजाओंके मुकुटमणियोंपर जब प्रतीहारीका प्रतिबिम्ब पड़ा तो ऐसा लगा कि मानो उन राजाओंने राजा शूद्रककी मूर्तिमती आज्ञाको शिरोधार्य कर लिया है। इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देव, द्वारस्थिता सुरलोकमारोहतस्त्रिशङ्कोरिव कुपितशतमखहुंकारनिपातिता राजलक्ष्मीर्दक्षिणापथादागता चाण्डालकन्यका पञ्जरस्थं शुकमादाय देवं विज्ञापयति—'सकलभुवनतलरत्नानामुदधिरिवैकभाजनं देवः। विहंगमश्चायमाश्चर्यभूतो निखिलभुवनतलरत्नमिति कृत्वा देवपादमूलमादायागताहमिच्छामि देवदर्शनसुखमनुभवितुम्' इति। एतदाकर्ण्य 'देवः प्रमाणम्' इत्युक्त्वा विरराम। उपजातकुतूहलस्तु राजा समीपवर्तिनां राज्ञामालोक्य मुखानि 'को दोषः प्रवेश्यताम्' इत्यादिदेश।

अथ प्रतीहारी नरपतिकथनानन्तरमुत्थाय तां मातङ्गकुमारीं प्रावेशयत्। प्रविश्य च सा नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनमशनिभयपुञ्जितकुलशैल-

---

प्रकार आयी हुई प्रतीहारी अपना घुटना हाथ और माथा धरतीपर टेककर विनयपूर्वक बोली—

स्वामिन्! दक्षिणप्रदेशसे आयी हुई एक चाण्डालकन्या पींजरेमें बन्द तोता लिये राजद्वारपर आकर खड़ी है। वह कुपित देवराज इन्द्रके हुंकारसे गिरी हुई स्वर्गारोहण करते हुए राजा त्रिशंकुकी राजलक्ष्मीके समान दीख रही है। वह चाण्डालकन्या कहती है कि 'महाराज समुद्रकी भाँति अखिलभुवनमण्डलके रत्नोंको पानेके एकमात्र अधिकारी हैं। सो आश्चर्यका मूर्त स्वरूप यह तोता भी समस्त भुवनमण्डलका एक रत्न है। ऐसा सोच तथा इस तोतेको साथ लेकर मैं यहाँ आयी हूँ और महाराजके दर्शनोंका आनन्द लेना चाहती हूँ।' 'इसके बाद महाराजकी जो आज्ञा हो' यों कहकर प्रतीहारी चुप हो गयी। प्रतीहारीके वचन सुनकर महाराजके भी हृदयमें तोतेको देखनेकी उत्सुकता जागृत हो गयी। अतएव समीपवर्ती राजाओंके मुख देखकर कहा—'क्या हर्ज है, उसे ले आओ।'

शूद्रक नरेशके ऐसा कहते ही प्रतीहारी उठकर द्वारपर गयी और चाण्डालकन्याको साथ लेकर लौट आयी। सभाभवनमें पहुँचकर उस कन्याने हजारों राजाओंके बीच बैठे हुए महाराज शूद्रकको देखा। उस समय राजाकी ऐसी शोभा हो रही थी, जैसे वज्रके प्रहारसे भयभीत समस्त कुलपर्वतों (महेन्द्र,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मध्यगतमिव कनकशिखरिणम्, अनेकरत्नाभरणकिरणजालकान्तरितावयवमिन्द्रायुधसहस्रसंछादिताष्टदिग्भागमिव जलधरदिवसम्, अवलम्बितस्थूलमुक्ताकलापस्य कनकशृङ्खलानियमितमणिदण्डिकाचतुष्टयस्य गगनसिन्धुफेनपटलपाण्डुरस्य नातिमहतो दुकूलवितानस्याधस्तादिन्दुकान्तपर्यङ्किकानिषण्णम्, उद्धूयमानसुवर्णदण्डचामरकलापम्, उन्मयूखमुखकान्तिविजयपराभवप्रणते शशिनोव स्फटिकपादपीठे विन्यस्तवामपादम्, इन्द्रनीलमणिकुट्टिमप्रभासंपर्कश्यामायमानैः प्रणतरिपुनिःश्वासमलिनीकृतैरिव चरणनखमयूखजालैरुपशोभमानम्, आसनोल्लसितपद्मरागकिरणपाटलीकृतेनाचिरमृदितमधुकैटभरुधिरारुणेन हरिमिवोरुयुगलेन विराजमानम्, अमृतफेनधवले गोरोचनालिखितहंसमिथुनस-

---

मलय, सह्य, शुक्ति, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र) के मध्य सुमेरुपर्वत विराजमान हो । विविध रत्नजटित आभूषणोंके किरणसमूहसे अङ्गोंके ढँके रहनेके कारण ऐसा लगता था कि जैसे हजारों इन्द्रधनुषोंसे आलोकित आठ दिशाओंवाला वर्षाऋतुका मेघाच्छन्न दिवस मूर्तरूपमें विद्यमान हो । राजा शूद्रक उस समय चन्द्रकान्तमणिके पलंगपर बैठा था । बड़े-बड़े मोतियोंके दानोंकी झालरें उसमें लटक रही थीं । उसके चारों मणिजटित दण्ड स्वर्णमयी शृंखलाओंसे बँधे हुए थे । उस पर्यङ्कके ऊपर मन्दाकिनीके फेन सदृश शुभ्र और महीन वस्त्रका चँदवा टँगा था । उस समय राजा शूद्रकपर स्वर्णदण्डमय चमर चल रहे थे । स्फटिकमणिनिर्मित पीढ़ेपर राजा अपना बायाँ पैर रक्खे हुए था । वह स्फटिकपीठ ऐसा लग रहा था कि जैसे उसके चहुँ ओर फैली किरणोंयुक्त मुखोंकी प्रभासे परास्त होकर स्वयं विनम्र चन्द्रमा विद्यमान हो । राजा शूद्रकके चरणनखोंकी दीप्ति नीलकान्तमणिजटित फर्शकी दीप्तिके सम्पर्कसे श्यामवर्णकी दीख रही थी । उस समय उसकी ऐसी शोभा हो रही थी, जैसे उस राजाके वशवर्ती शत्रु राजाओंके उष्ण निःश्वाससे वह मलिन हो गयी हो । राजसिंहासनमें जटित पद्मरागमणिकी फैलती हुई किरणोंसे राजा शूद्रककी दोनों जाँघें लाल हो रही थीं । जिनसे वह कुछ ही समय पहले मारे गये मधु-कैटभके रक्तसे लाल जाँघोंवाले भगवान् विष्णुके समान दीख रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाथपर्यन्ते चारुचामरवायुप्रनर्तितान्तर्देशे दुकूले वसानम्, अतिसुरभिचन्दनालेपनधवलितोरःस्थलम्, उपरिविन्यस्तकुङ्कुमस्थासकमन्तरान्तरानिपतितबालातपच्छेदमिव कैलासशिखरिणम्, अपरशशिशङ्कया नक्षत्रमालेव हारलतया कृतमुखपरिवेषम्, अतिचपलराज्यलक्ष्मीबन्धनिगडकटकशंकामुपजनयतेन्द्रमणिकेयूरयुग्मेन मलयजरसगन्धलुब्धेन भुजङ्गद्वयेनेव वेष्टितबाहुयुगलम्, ईषदालम्बिकर्णोत्पलम्, उन्नतघोणम्, उत्फुल्लपुण्डरीकनेत्रम्, अमलकलधौतपट्टायतमष्टमीचन्द्रशकलाकारमशेषभुवनराज्याभिषेकपूतमूर्णासनाथं ललाटदेशमुद्वहन्तम्, आमोदिमालतीकुसुमशेखरमुषसि शिखरपर्यन्ततारकापुञ्जमिव पश्चिमाचलम्,

---

था । उस समय वह अमृतफेनके सदृश उज्ज्वल दो वस्त्र पहने हुए था । उन दोनों वस्त्रोंके किनारोंपर गोरोचनसे हंसोंके जोड़े बनाये गये थे । उनके छोर चमरकी वायुसे उड़ रहे थे। अतिशय सुगन्धित चन्दनपंकके लेपसे उसकी छाती गौरवर्ण हो गयी थी । उसके ऊपर कहीं-कहीं केसरपंक छिड़क दिया गया था, जिससे मानो प्रातःकालकी लाल धूप जिसपर कहीं-कहीं पड़ गयी हो, ऐसे कैलासपर्वतके सदृश वह राजा शूद्रक शोभित हो रहा था । गलेमें पड़ी हुई मोतियोंकी मालाने उसके मुखपर प्रकाशका एक मण्डल जैसा बना दिया था, जिसके कारण ऐसा मालूम पड़ रहा था कि जैसे उसके मुखको दूसरा चन्द्रमा समझकर गगनमण्डलसे नक्षत्रराशि उतर आयी हो । उसकी भुजाओंमें इन्द्रनीलमणिजटित दो बाजूबन्द बँधे थे । वे दोनों चन्दनपंकके लोभवश वहाँ आये हुए दो सर्पों सदृश दीख रहे थे । उनको देखकर ऐसी शंका हो रही थी कि अत्यन्त चञ्चला राजलक्ष्मीको बाँधनेके लिए दो जंजीरें तो नहीं आ गयी हैं । राजा शूद्रकके कर्णकमल कुछ लटके हुए थे। उसकी नासिका ऊँची थी। विकसित श्वेत कमल जैसे नेत्र थे । अष्टमीके अर्धोदित चन्द्रमासरीखा उसका ललाटपट्ट था । वह ललाट निर्मल स्वर्णपीठ सदृश विशाल था और अखिल भुवनोंके राज्याभिषेकके जलसे पुनीत हो चुका था । उसके सिरपर काले-काले केश थे । उसके मस्तकपर सुगन्धित चमेलीके फूलोंका मुकुट सुशोभित था । इस कारण राजा शूद्रक उषाकालमें शिखरपर एकत्रित नक्षत्रों सहित अस्ताचल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आभरणप्रभापिशङ्गिताङ्गतया लग्नहरहुताशमिव मकरध्वजम्, आसन्नवर्तिनीभिः सर्वतः सेवार्थमागताभिरिव दिग्वधूभिर्वारविलासिनीभिः परिवृतम्, अमलमणिकुट्टिमसंक्रान्तसकलदेहप्रतिबिम्बतया पतिप्रेम्णा वसुन्धरया हृदयेनेवोह्यमानम्, अशेषजनभोग्यतामुपनीतयाऽप्यसाधारणया राजलक्ष्म्या समालिङ्गितदेहम्, अपरिमितपरिवारजनमप्यद्वितीयम्, अनन्तगजतुरगसाधनमपि खड्गमात्रसहायम्, एकदेशस्थितमपि व्याप्तभुवनमण्डलम्, आसने स्थितिमपि धनुषि निषण्णम्, उत्सादितद्विषदिन्धनमपि ज्वलत्प्रतापानलम्, आयतलोचनमपि सूक्ष्मदर्शनम्, महादोषमपि सकलगुणाधिष्ठानम्, कुपतिमपि कलत्रवल्लभम्,

---

सरीखा दीख रहा था। आभूषणोंकी दीप्तिसे उसके सभी अंग पीले हो गये थे। अतएव वह भगवान् शंकरके तृतीय नेत्रसे निकली अग्निकी लपटोंसे जलते हुए कामदेवके सदृश दिखायी दे रहा था। साक्षात् दिग्वधुओंके समान सुन्दरी बहुतेरी वारवनितायें उसके पास सेवाके लिए उपस्थित थीं। निर्मलमणिजटित फर्शपर राजाका प्रतिबिम्ब पड़नेसे ऐसा भान हो रहा था कि मानो पतिप्रेम दिखाती हुई पृथिवीने अपने पतिको छातीसे लिपटा लिया है। अनेक जनों द्वारा भोगी हुई भी असाधारण राजलक्ष्मीने उस परम तेजस्वी राजाके शरीरका आलिंगन कर रक्खा था। असंख्य परिवारके होते हुए भी वह अद्वितीय (विना परिवारके अथवा अनुपम) था। रणभूमिमें अपरिमित हाथी-घोड़ों आदिके साधन होनेपर भी वह एकमात्र तलवारको ही अपना सहायक समझता था। एक ही स्थानपर बैठे रहनेपर भी वह अपने प्रतापसे समस्त भुवनमण्डलमें व्याप्त रहता था। सिंहासनपर आसीन रहते हुए भी वह अपने धनुषमें विराजमान रहता था। तात्पर्य यह कि धनुष ही उसका एकमात्र आधार था। यद्यपि उसने समस्त शत्रुरूपी इन्धनको जला डाला था, फिर भी उसकी प्रतापाग्नि नित्य प्रज्वलित रहती थी। यद्यपि उसके नेत्र बड़े-बड़े थे, फिर भी दृष्टि सूक्ष्म थी। महादोष (बड़े अवगुण अथवा बड़ी भुजाओं युक्त) होता हुआ भी वह सभी गुणोंका भण्डार था। कुपति (दुष्टपति अथवा पृथिवीपति) होनेपर भी वह राजा शूद्रक अपनी पत्नियोंको प्रिय था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अविरतवृत्तदानमप्यमदम्, अत्यन्तशुद्धस्वभावमपि कृष्णचरितम्, अकरमपि हस्तस्थितभुवनतलं राजानमद्राक्षीत्।

आलोक्य च सा दूरस्थितैव प्रचलितरत्नवलयेन रक्तकुवलयदलकोमलेन पाणिना जर्जरितमुखभागां वेणुलतामादाय नरपतिप्रतिबोधनार्थं सकृत्सभाकुट्टिममाजघान, येन सकलमेव तद्राजकमेकपदे वनकरियूथमिव तालशब्देन युगपदावलितवदनमवनिपालमुखादाकृष्य चक्षुस्तदभिमुखमासीत्।

अवनिपतिस्तु 'दूरादालोकय' इत्यभिधाय प्रतीहार्या निर्दिश्यमानां तां वयःपरिणामशुभ्रशिरसा रक्तराजीवनेत्रापाङ्गेनानवरतकृतव्यायामतया यौवनापगमेऽप्यशिथिलशरीरसंधिना सत्यपि मातङ्गत्वे नाति-

---

निरन्तर दान (मदजल अथवा त्याग) युक्त होकर भी वह मदहीन था। अतिशय शुद्ध स्वभावका होता हुआ भी वह कृष्णचरित (काली करतूत अथवा भगवान् कृष्णसदृश सच्चरित्र) था। कर (हाथ अथवा राज्यकर) के अभावमें भी समस्त पृथिवी उसके हाथमें थी।

दूरसे ही राजाको देखा तो उस चाण्डालकन्याने लाल कमलकी पंखुड़ियों जैसी कोमल हथेलियोंमें फटे अग्रभागवाले बाँसकी लठिया लेकर राजाका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करनेके लिए जमीनपर एक बार पटका। ऐसा करनेसे उसके हाथका रत्नजटित कंकण हिल उठा। जैसे ताली (थपोड़ी) का शब्द सुनकर सभी वनैले हाथी उसी ओर निहारने लगते हैं, उसी प्रकार छड़ीका शब्द सुनते ही सभाके सभी राजे एकाएक राजापरसे दृष्टि मोड़कर उसीकी तरफ ताकने लगे।

उसी समय प्रतीहारीने 'दूरसे ही देखो' ऐसा कहकर उसे राजाको दिखलाया। राजा शूद्रकने भी उस नवयौवना एवं सुन्दर आकारवाली कन्याको निर्निमेष नयनोंसे बड़े ध्यानपूर्वक देखा। उसके साथ श्वेत वस्त्र धारण किये सभ्यवेषमें एक वृद्ध पुरुष था। बुढ़ापेके कारण उसके सिरके केश श्वेत हो गये थे। नेत्रोंके कोने रक्तकमलके समान लाल थे। सदाका कसरती शरीर होनेके कारण जवानी न रहनेपर भी उसके शरीरकी जोड़ें ढीली नहीं पड़ी थीं और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नृशंसाकृतिनाऽनुगृहीतार्यवेषेण शुभ्रवाससा पुरुषेणाधिष्ठितपुरोभागाम्, आकुलाकुलकाकपक्षधारिणा कनकशलाकानिर्मितमप्यन्तर्गतशुकप्रभाश्यामायमानं मरकतमयमिव पञ्जरमुद्वहता चाण्डालदारकेणानुगम्यमानाम्, असुरगृहीतामृतापहरणकृतकपटपटुविलासिनीवेषस्य श्यामतया भगवतो हरेरिवानुकुर्वतीम्, संचारिणीमिवेन्द्रनीलमणिपुत्रिकाम्, गुल्फावलम्बिनीलकञ्चुकेनावच्छन्नशरीराम्, उपरिरक्तांशुकरचितावगुण्ठनाम्, नीलोत्पलस्थलीमिव निपतितसंध्यातपाम्, एककर्णावसक्तदन्तपत्रप्रभाधवलितकपोलमण्डलाम्, उद्यदिन्दुकिरणच्छुरितमुखीमिव विभावरीम्, आकपिलगोरोचनारचिततिलकतृतीयलोचनामीशानरचितानुरचितकिरातवेषामिव भवानीम्, उरःस्थलनिवाससंक्रान्तनारा-

---

चाण्डाल जातिका होनेपर भी उसकी आकृतिमें क्रूरता नहीं थी। उससे पीछे चाण्डालजातिका ही एक बालक भी था। जिसके बाल रूखे होनेके कारण अस्त-व्यस्त हो रहे थे। बालकके हाथमें सोनेकी सींकोंका बना एक पींजरा था, किन्तु उसमें बैठे हुए तोतेकी हरी झलक पड़नेके कारण वह पींजरा पन्नेका बना प्रतीत होता था। अपनी श्यामताके कारण वह कन्या चलती-फिरती नीलमकी पुतली जैसी दीख रही थी। उसका रंग साँवला था। अतएव दैत्यों द्वारा अपहृत अमृतकलशको पुनः प्राप्त करनेके लिए मायासे मोहनीरूप धारण करनेवाले भगवान् विष्णुका अनुकरण करती हुई जान पड़ती थी। पैरकी गाँठतक पहुँचे हुए नीले लबादेसे उसका शरीर ढँका था। उसके ऊपरसे उसने लाल ओढ़नी ओढ़ ली थी। इससे वह ऐसी लग रही थी कि मानो नील कमल बिछी हुई जमीनपर सायंकालकी लाल-लाल धूप पड़ रही हो। एक कानमें हस्तिदन्तनिर्मित आभूषण पड़ा था। जिसकी प्रभा पड़नेके कारण उसके गाल गोरे लग रहे थे। अतएव वह उदयकालीन चन्द्रमाकी किरणोंसे व्याप्त मुखवाली रात्रि जैसी लगती थी। कुछ पीले रंगके गोरोचनसे उसने अपने मस्तकपर तिलकरूपी तृतीय नेत्र बना लिया था, जिससे वह शिववेषके समान भीलनीका वेष धारण करनेवाली पार्वती जैसी दीख रही थी। भगवान् विष्णुके हृदयमें निवास करनेके कारण उनकी श्यामल प्रभा पड़नेसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यणदेहप्रभाश्यामलितामिव श्रियम्, कुपितहरहुताशनदह्यमानमदनधूमलिनीकृतामिव रतिम्, उन्मदहलिहलाकर्षणभयपलायितामिव कालिन्दीम्, अतिबहलपिण्डालक्तकरसरागपल्लवितपादपंकजामचिरमृदितमहिषासुररुधिररक्तचरणामिव कात्यायनीम्, आलोहितांगुलिप्रभापाटलितनखमयूखाम्, अतिकठिनमणिकुट्टिमस्पर्शमसहमानाम्, क्षितितले पल्लवभङ्गानिव निधाय संचरन्तीम्, आपिञ्जरेणोत्सर्पिणा नूपुरमणीनां प्रभाजालेन रञ्जितशरीरतया पावकेनेव भगवता रूप एव पक्षपातिना प्रजापतिमप्रमाणीकुर्वता जातिसंशोधनार्थमालिंगितदेहाम्, अनंगवारणशिरोनक्षत्रमालायमानेन रोमराजिलतालवालकेन रसना-

---

श्यामताको प्राप्त साक्षात् लक्ष्मी सरीखी दीखती थी। वह प्रकुपित शंकरकी तृतीय नेत्राग्नि द्वारा जलते हुए कामदेवके धुएँसे मलीन रति जैसी लग रही थी। मतवाले बलदेवके हलसे खिंच जानेके भयसे भागी हुई यमुना जैसी वह लगती थी। (कथान्तर—कहा जाता है कि एक बार मदिरा पीकर मतवाले बलरामने जलक्रीडाके लिए यमुनाको बुलाया। किन्तु उनका निरादर करती हुई वह उनके पास नहीं आयी। इससे कुपित होकर उन्होंने उसे हलसे अपनी ओर खींच लिया था।) उस कन्याके चरणोंमें बहुत गाढ़े लाल रंगके महावरसे फूल-पत्तियाँ चित्रित थीं। इससे वह शीघ्र ही मारे गये महिषासुरके रक्तसे रंजित चरणोंवाली भगवती दुर्गाके समान दीखती थी। अतिशय लाल उँगलियोंकी दीप्तिसे उसके नखोंकी प्रभा गुलाबी हो गयी थी। उसके पाँवोंमें जो फूल-पत्तियाँ चित्रित थीं, उनकी परछाहीं फर्शपर पड़ रही थी। इससे ऐसा भान होता था कि जैसे वह उस मणिजटित फर्शकी कठिन भूमिको असह्य समझकर उसपर फूल-पत्तियें बिछाती हुई उनपर चल रही हो। पायलोंमें जटित मणियोंसे निःसृत कुछ पीले रंगके प्रकाशसे उसका शरीर रँग गया था। जिससे ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो उसके रूपपर मुग्ध होकर विधाताके विधानको लुप्त करते हुए अग्निदेव उस जातिको पवित्र करनेके लिए उसका आलिंगन कर रहे हों। उस कन्याकी कमरमें करधनीकी लड़ियें शोभित थीं। वे कामदेवरूपी हाथीके मस्तकपर मोतियोंकी मालाओं अथवा रोमावलीरूपिणी लताओंकी क्यारियों जैसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दाम्ना परिगतजघनाम्, अतिस्थूलमुक्ताफलघटितेन शुचिना हारेण गंगास्रोतसेव कालिन्दीशंकया कृतकण्ठग्रहाम्, शरदमिव विकसितपुण्डरीकालोचनाम्, प्रावृषमिव घनकेशजालाम्, मलयमेखलामिव चन्दनपल्लवावतंसाम्, नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणाभरणभूषिताम्, श्रियमिव हस्तस्थितकमलशोभाम्, मूर्च्छामिव मनोहारिणीम्, अरण्यभूमिमिव रूपसंपन्नाम्, दिव्ययोषितमिवाकुलीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणीम्, अरण्यकमलिनीमिव मातंगकुलदूषिताम, अमूर्तामिव स्पर्शवर्जिताम्, आलेख्यगतामिव दर्शनमात्रफलाम्, मधुमासकुसुमसमृद्धिमिवाजातिम्,

---

दीखती थीं। मोतीके बड़े-बड़े दानोंकी बनी शुभ्र माला उसने पहन रक्खी थी। जिससे ऐसा लगता था कि मानो उसे यमुना समझती हुई स्वयं गंगाजी आकर गलेसे लिपट गयी हैं। जैसे शरद् ऋतुमें कमल खिल जाते हैं उसी प्रकार उस बालिकाके कमलसरीखे नेत्र खिले हुए थे। जैसे वर्षाऋतुमें उमड़े हुए मेघ केशराशिसदृश काले दीखते हैं, वैसे ही उसके भी केश काले थे। मलयाचलके कटिबन्धकी भाँति वह कन्या चन्दनकी काली पत्तियोंका गहना पहने थी। जैसे नक्षत्रोंमें चित्रा, श्रवण तथा भरणी नक्षत्र शोभित होते हैं, उसी प्रकार वह कन्या भी चित्र-विचित्र श्रवणाभरणोंसे अलंकृत थी। जैसे लक्ष्मीजी हस्तस्थित कमलसे शोभित होती हैं, उसी प्रकार उस कन्याके हाथोंमें भी कमलकी शोभा विद्यमान थी। जैसे मूर्छा चेतनाशक्ति हर लेती है, उसी तरह वह बालिका भी दर्शकका मन हर लेती थी। जैसे वनभूमि शोभित होती है, उसी तरह वह कन्या भी निर्दोष सौन्दर्यसे अलंकृत थी। जैसे देवाङ्गना अकुलीन अर्थात् स्वर्गीय होती है, उसी तरह यह कन्या भी अकुलीन अर्थात् नीच कुलकी थी। जैसे निद्रा नेत्रोंको बन्द कर लेती है, उसी तरह वह कन्या लोगोंके नेत्रोंको अपनी ओर आकृष्ट कर लेती थी। जैसे हाथियोंका झुण्ड वनकमलिनीको रौंदकर दूषितकर डालता है, वैसे ही वह कन्या भी दूषित थी। जैसे निराकारका संस्पर्श नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार अस्पृश्य होनेके कारण उस बालिकाका भी स्पर्श नहीं किया जा सकता। चौखटेमें मढ़े चित्रके समान केवल उसका दर्शन हो सकता था—स्पर्श नहीं। जैसे चैत्रमासमें जाती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
अनङ्गकुसुमचापलेखामिव मुष्टिग्राह्यमध्याम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालको-द्भासिनीम्, अचिरोपारूढयौवनाम्, अतिशयरूपाकृतिमनिमिष-लोचनो ददर्श।

जातविस्मयस्याभून्मनसि महीपतेः—'अहो! विधातुरस्थाने सौंदर्य-निष्पादनप्रयत्नः। तथा हि। यदि नामेयमात्मरूपोपहसिताशेषरूपसंप-दुत्पादिता, किमर्थमपगतस्पर्शसंभोगसुखे कृतं कुले जन्म। मन्ये च मातंगजातिस्पर्शदोषभयादस्पृश्यतेयमुत्पादिता प्रजापतिना, अन्यथा कथमियमक्लिष्टता लावण्यस्य। नहि करतलस्पर्शक्लेशितानामवयवाना-मीदृशी भवति कान्तिः। सर्वथा धिग्धिग्विधातारमसदृशसंयोगकारिणम्,

———————

अर्थात् चमेली नहीं फूलती। अतएव चैत्रमासकी पुष्पसम्पदा जाती (चमेली) हीन होती है, उसी तरह वह बालिका भी हीन जातिकी थी। अनङ्ग (कामदेव) के कुसुमसायककी डोरीके समान उस कन्याकी कमर इतनी पतली थी कि आसानीसे मुट्ठीमें आ सकती थी। जैसे कुवेरकी स्त्रीसे उनकी अलकापुरी शोभित होती है। वैसे ही वह कन्या अलकों (लटों) से सुशोभित हो रही थी। उसके चेहरेपर नवयौवन लहरा रहा था और आकृति अत्यन्त लावण्यमयी थी।

उस सुन्दरी चाण्डालकन्याका अनुपम रूप देखकर राजा शूद्रकको बहुत आश्चर्य हुआ और वह मनमें सोचने लगा—'अहो! अयोग्य स्थानमें रूपनिर्माण करनेवाले विधाताका प्रयत्न विचित्र है। यदि ब्रह्माने इसे अपने असाधारण सौन्दर्यसे सभी मनोहर वस्तुओंका उपहास करने योग्य बनाया था, तब जिसके संस्पर्श तथा सम्भोगका सुख न प्राप्त किया जा सके, ऐसे कुलमें इसे क्यों जन्म दिया? मेरा जहाँतक ख्याल है कि चाण्डालजातिके स्पर्शदोषसे बचनेके लिए विधाताने इसे बिना छुए ही बनाया है। यदि ऐसा न होता तो इसमें इतनी कोमल कमनीयता कैसे आती। हाथके संस्पर्शसे दूषित कुचादि अङ्गोंमें ऐसा सौकुमार्य और ऐसी स्वच्छ कान्ति कदापि नहीं आ सकती। इस अघटित घट-नाको घटित करनेवाले विधाताको सर्वथा धिक्कार है। क्योंकि उसने ऐसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मनोहराकृतिरपि क्रूरजातितया येनेयमसुरश्रीरिव सततनिन्दितसुरता रमणीयाऽप्युद्वेजयति' इति।

एवमादि चिन्तयन्तमेव राजानमीषदवगलितकर्णपल्लवावतंसा प्रगल्भवनितेव कन्यका प्रणनाम। कृतप्रणामायां च तस्यां मणिकुट्टिमोपविष्टायां स पुरुषस्तं विहङ्गमं शुकमादाय पञ्जरगतमेव किंचिदुपसृत्य राज्ञे न्यवेदयत्। अब्रवीच्च-'देव, विदितसकलशास्त्रार्थः, राजनीतिप्रयोगकुशलः, पुराणेतिहासकथालापनिपुणः, वेदिता गीतश्रुतीनां, काव्यनाटकाख्यायिकाख्यानकप्रभृतीनामपरिमितानां सुभाषितानामध्येता स्वयं च कर्ता, परिहासालापपेशलः, वीणावेणुमुरजादीनामसमः श्रोता, नृत्तप्रयोगदर्शननिपुणः, चित्रकर्मणि प्रवीणः, द्यूतव्यापारे प्रगल्भः,

---

मनोहारिणी मूर्ति भी क्रूर कुलमें उत्पन्न की है। अतएव अतिशय सुन्दरी होती हुई भी यह असुरश्रीके समान त्याज्य है। क्योंकि इस जातिके साथ किया हुआ सम्भोग निन्दित माना जाता है। सो असुरश्रीके समान रमणीय होती हुई भी यह मेरे मनमें उद्वेग उत्पन्न कर रही है।

वह राजा इस प्रकार तरह-तरहकी कल्पनायें कर ही रहा था, तभी एक ढीठ स्त्रीके समान उस चाण्डालकन्याने प्रणाम किया। ऐसा करनेसे उसके कानका पल्लवाभूषण कुछ खिसक गया। प्रणाम करके जब वह फर्शपर बैठी, तब उसके साथवाला वृद्ध पुरुष तोतेका पींजरा लिये हुए तनिक आगे बढ़ा और उसे राजाको दिखाकर बोला—'राजन्! यह सुग्गा सभी शास्त्रोंका मर्म जानता है। कामन्दक-प्रतिपादित नीतिशास्त्रके प्रयोगमें कुशल है। पुराण और इतिहासकी कथा कहनेमें भी यह बड़ा चतुर है। संगीतविद्याकी श्रुतियोंको भी यह भली भाँति समझता है। काव्य-नाटक, प्राचीन-अर्वाचीन कथा-शृंगार-नीति-वैराग्यात्मक बहुतेरे सुभाषितोंका इसने अध्ययन किया है और स्वयं उनकी रचना भी करता है। हँसीकी बातें करनेमें भी यह बहुत चतुर है। वीणा, बाँसुरी, मृदंग आदिको बड़े प्रेमसे सुनता है। यह नृत्य देखनेमें परम निपुण है। चित्रकलामें भी प्रवीण है। जुएमें तो इसकी प्रतिभा देखने ही लायक होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रणयकलहकुपितकामिनीप्रसादनोपायचतुरः, गजतुरगपुरुषस्त्रीलक्षणाभिज्ञः, सकलभूतलरत्नभूतोऽयं वैशंपायनो नाम शुकः सर्वरत्नानामुदधिरिव देवो भाजनमितिकृत्वैनमादायास्मत्स्वामिदुहिता देवपादमूलमायाता। तदयमात्मीयः क्रियताम्। इत्युक्त्वा नरपतेः पुरो निधाय पञ्जरमसावपससार। अपसृते च तस्मिन्स विहङ्गराजो राजाभिमुखो भूत्वोन्नमय्य दक्षिणं चरणमतिस्पष्टवर्णस्वरसंस्कारया गिरा कृतजयशब्दो राजानमुद्दिश्यार्यामिमां पपाठ—

'स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्॥ २१॥

राजा तु तामार्यां श्रुत्वा संजातविस्मयः सहर्षमासन्नवर्तिनम्, अतिमहर्घहेमासनोपविष्टम्, अमरगुरुमिवाशेषनीतिशास्त्रपारगम्,

---

यह प्रणयकलहसे कुपित नारियोंको प्रसन्न करनेके बहुतेरे उपाय जानता है। हाथियों-घोड़ों तथा पुरुषों-स्त्रियोंके भले-बुरे लक्षणोंसे यह भली भाँति परिचित है। इन कारणोंसे यह तोता जगतीतलका एक रत्न है। इसका नाम वैशम्पायन है। समुद्रके सदृश आप समस्त रत्नोंके पात्र हैं। यह समझकर ही मेरे स्वामीकी कन्या इस तोतेको लेकर श्रीमान्‌के श्रीचरणोंमें उपस्थित हुई है। सो आप इसे स्वीकार करें।' ऐसा कह और उस पींजरेको राजाके सम्मुख रखकर वह वृद्ध दूर हट गया। उसके हटनेपर तोतेने राजा शूद्रककी ओर निहारा और अपना दाहिना पैर उठा तथा अतिशय स्पष्ट स्वर-वर्णमयी वाणीमें जय शब्दका उच्चारण करके महाराजके ही विषयमें इस आर्या छन्दके श्लोकका पाठ किया—

अपनी इच्छापूर्तिके निमित्त मनुष्य जब कोई व्रत लेता है तो वह स्नान करके हवन करनेके लिए अग्निके पास बैठता है और आहार त्याग देता है। ठीक इसी तरह आपके शत्रुओंकी स्त्रियोंके दोनों स्तनोंने जैसे व्रत ले लिया है। क्योंकि वे पुनः पुनः आँसुओंमें नहाते हैं, हृदयमें धधकती शोकाग्निके समीप बैठे रहते हैं और उन्होंने हारको त्याग दिया है॥ २१॥

इस आर्याको सुनकर राजा शूद्रक चकरा गया और पास ही एक अति बहुमूल्य स्वर्णासनपर बैठे हुए बृहस्पतिके सदृश समस्त नीतिशास्त्रके ज्ञाता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अतिवयसम्, अग्रजन्मानम्, अखिले मन्त्रिमण्डले प्रधानममात्यं कुमारपालितनामानमब्रवीत्—'श्रुता भवद्भिरस्य विहङ्गमस्य स्पष्टता वर्णोच्चारणे, स्वरे च मधुरता। प्रथमं तावदिदमेव महदाश्चर्यम्, यदयमसंकीर्णवर्णप्रविभागामभिव्यक्तमात्रानुस्वारसंस्कारयोगां विशेषसंयुक्तां गिरमुदीरयति। तत्र पुनरपरमभिमतविषये तिरश्चोऽपि मनुजस्येव संस्कारवतो बुद्धिपूर्वा प्रवृत्तिः। तथा हि। अनेन समुत्क्षिप्तदक्षिणचरणेनोच्चार्य जयशब्दमियमार्या मामुद्दिश्य परिस्फुटाक्षरं गीता। प्रायेण हि पक्षिणः पशवश्च भयाहारमैथुननिद्रासंज्ञामात्रवेदिनो भवन्ति। इदं तु महच्चित्रम्' इत्युक्तवति भूभुजि कुमारपालितः किंचित्स्मितवदनोऽवादीत्—'किमत्र चित्रम्। एते हि शुकसारिकाप्रभृतयो विहङ्गविशेषा यथाश्रुतां वाचमुच्चारयन्तीत्यधिगतमेव देवेन। तत्राप्यन्यजन्मोपात्तसंस्कारानुबन्धेन वा पुरुषप्रयत्नेन वा संस्कारातिशय उपजायत इति नातिचित्रम्। अन्यदेतेषामपि पुरा पुरुषाणामिवातिपरिस्फुटाभिधाना वागा-

---

वृद्ध ब्राह्मण एवं मंत्रियोंमें प्रधान मंत्री कुमारपालितसे सहर्ष बोला—'मंत्रिन्! आपने इस पक्षीके वर्णोच्चारणकी स्पष्टता तथा स्वरकी मधुरता सुनी? पहले तो यही बड़े आश्चर्यकी बात है कि यह तोता इस प्रकार अलग-अलग वर्णोंका विभाजन करके मात्रा-अनुस्वार और शब्दशुद्धिपूर्वक अलंकारमयी स्पष्ट वाणी बोलता है। और फिर यह अभिमत विषयमें सुशिक्षित मनुष्योंके समान संस्कारसम्पन्न एवं प्रतिभामयी बुद्धिका प्रदर्शन कर रहा है। क्योंकि इसने अपना दाहिना पैर उठाकर जयजयकार करते हुए मेरे ही सम्बन्धमें इस आर्या छन्दको बड़े ही स्पष्ट अक्षरोंमें गाया है। प्रायः सभी पक्षी और पशु केवल भय, आहार, मैथुन, निद्रा तथा संकेतोंका ही ज्ञान रखते हैं। किन्तु यह पक्षी तो अद्भुत है।' राजा शूद्रकके वचन सुनकर मंत्री कुमारपालित तनिक मुसकाकर बोला—'राजन्! इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? महाराज यह तो जानते ही हैं कि तोता-मैना आदि पक्षी सुनी हुई बातको ज्योंका त्यों बोल लेते हैं। तब पूर्वजन्मके संस्कार अथवा मनुष्यके विशेष प्रयत्नसे उनमें अधिक कौशल आजाय तो विस्मयकी क्या बात है। पूर्वकालमें पशु-पक्षी भी मनुष्यके समान ही स्पष्ट वाणी बोलते थे। किन्तु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सीत्। अग्निशापात्त्वस्फुटालापता शुकानामुपजाता, करिणां च जिह्वापरिवृत्तिः' इति। एवमुच्चारयत्येव तस्मिन्नशिशिरकिरणमम्बरतलस्य मध्यमध्यारूढमावेदयन्नाडिकाच्छेदप्रहतपटुपटहनादानुसारी मध्याह्नशङ्खध्वनिरुदतिष्ठत्। तमाकर्ण्य च समासन्नस्नानसमयो विसर्जितराजलोकः क्षितिपतिरास्थानमण्डपादुत्तस्थौ।

अथ चलति महीपतावन्योन्यमतिरभससंचलनचालिताङ्गदपत्रभङ्गमकरकोटिपाटितांशुकपटानाम्, आक्षेपदोलायमानकण्ठदाम्नाम्, अंसस्थलोल्लासितकुङ्कुमपटवासधूलिपटलपिञ्जरीकृतदिशाम्, आलोलमालतीपुष्पशेखरोत्पतदलिकदम्बकानाम्, अर्धावलम्बिभिः कर्णोत्पलैश्चुम्ब्यमानगण्डस्थलानाम्, गमनप्रणामलालसानामहमहमिकया वक्षःस्थलप्रेङ्खोलितहारलतानाम्, उत्तिष्ठतामासीत्संभ्रमो महीपतीनाम्। इतश्चेतश्च निष्पतन्तीनां स्कन्धावसक्तचामराणां चामरग्राहिणीनां कमल-

---

आगे चलकर अग्निके शापसे सुग्गोंके बचनकी स्पष्टता जाती रही और हाथियोंकी जबान उलट गयी।' मंत्री कुमारपालित ऐसा कह ही रहा था कि इतनेमें सूर्यके मध्य आकाशमें आने अर्थात् दोपहरके समयको सूचित करनेका शंख बजा और पहरके अन्तकी सूचक नौबत भी बजने लगी। सो सुना तो स्नानका समय उपस्थित जानकर राजा शूद्रकने उपस्थित राजाओंको विदा कर दिया और सभामण्डपसे उठ गया।

महाराजके उठते ही अन्यान्य राजे भी उठ खड़े हुए और उनके चलनेपर एक प्रकारका कोलाहल जैसा मच गया। जल्दबाजीके कारण हिलते हुए बाजूबन्दोंमें बनी मछलियोंकी नोक लगनेके कारण कितनोंके कपड़े फट गये। परस्परकी धक्का-धुक्कीसे उनके गलेमें पड़े हुए हार झूलने लगे। उनके कंधोंसे उड़ती हुई केसर तथा वस्त्रोंकी सुगन्धित बुक्कनीके कारण दसों दिशायें पीली पड़ गयीं। मस्तकपर धारण किये हुए मालतीके पुष्पों द्वारा निर्मित मुकुटोंसे भौंरे उड़ने लगे। आधे लटके हुए कर्णस्थित कमल उनके कपोल चूमने लगे। वहाँसे जाते समय प्रणाम करनेकी हड़बड़ीमें उनकी छातीपर झूमते हुए हार तितर-बितर हो गये। उस अवसरपर सभाभवनमें जैसे हड़कम्प मच

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मधुपानमत्तजरत्कलहंसनादजर्जरितेन पदे पदे रणितमणीनां मणिनूपुराणां निनादेन, वारविलासिनीजनस्य संचरतो जघनस्थलास्फालनरसितरत्नमालिकानां मणिमेखलानां मनोहारिणा झङ्कारेण, नूपुररवाकृष्टानां च धवलितास्थानमण्डपसोपानफलकानां भवनदीर्घिकाकलहंसकानां कोलाहलेन, रसनारसितोत्सुकितानां च तारतरविराविणामुल्लिख्यमानकांस्यक्रेङ्कारदीर्घेण गृहसारसानां कूजितेन, सरभसप्रचलितसामन्तशतचरणतलाभिहतस्य चास्थानमण्डपस्य निर्घोषगम्भीरेण कम्पयतेव वसुमतीम् , प्रतीहारिणां च पुरः ससंभ्रमसमुत्सारितजनानां दण्डिनां समारब्धहेलमुच्चैरुच्चरतामालोकयन्त्विति तारतरदीर्घेण, भवनप्रासादकुञ्जेषूच्चरितप्रतिच्छन्दतया दीर्घतामुपगतेनालोकशब्देन, राज्ञां च ससंभ्रमावर्जितमौलिलोलचूडामणीनां प्रणमताममलमणिशलाकादन्तुराभिः,

---

गया। अपने-अपने कन्धोंपर चमर रखकर इधर-उधर घूमती हुई चमर झलनेवाली स्त्रियोंके मणिमय नूपुर पग-पगपर रुनझुन करते हुए बोल रहे थे। उधर उनको नूपुरध्वनि सुन तथा मधु पीकर मस्त कलहंसोंकी ध्वनि सुनायी देने लगी। इधर-उधर चलती हुई वेश्याओंकी जंघाओंपर टकरानेसे बजती हुई करधनियोंकी मनोहारिणी ध्वनि सुनायी पड़ रही थी। पायलोंकी झंकार सुनकर राजमहलके सरोवरमें पले हुए कलहंस दौड़ आये और सभामण्डपकी सीढ़ियोंपर बैठकर जोर-जोरसे बोलने लगे। उनके बैठनेसे सरोवरकी सभी सीढ़ियाँ उजली हो गयीं। करधनीकी ध्वनि सुनकर उत्सुक गृहसारस बहुत ऊँचे स्वरमें बोल रहे थे, जो शब्द फूटे हुए कांस्यकी ध्वनि जैसा था। हड़बड़ीमें चलते हुए सैकड़ों सामन्तोंके चरणोंसे ताड़ित सभाभवनकी भूमिको कम्पित कर देनेवाला हल्ला मच रहा था। वज्रघोषके समान भीषण वह कोलाहल सुनायी देता था। पैंतरे बदलकर 'देखो-देखो' कहते हुए प्रतीहारियोंका कर्कश घोष अलग हो रहा था। हाथमें छड़ी लिये हुए छड़ीदार रास्तेसे लोगोंको हटा रहे थे। इन शब्दोंके साथ ही राजमहलोंकी कुंजोंसे निकलती हुई प्रतिध्वनिके साथ बढ़ा हुआ 'देखो-देखो'का घनघोर शब्द हो रहा था। प्रणाम करनेकी हड़बड़ीमें मस्तक झुकानेसे कुछ राजाओंके चूड़ामणि हिल उठे, जिससे उनके मुकुट विमल मणियोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किरीटकोटिभिरुल्लिख्यमानस्य मणिकुट्टिमस्य निःस्वनेन, प्रणामपर्यस्तानासतिकठिनमणिकुट्टिमनिपतितरणरणायितानां च मणिकर्णपूराणां निनादेन, मङ्गलपाठकानां पुरोयायिनां च जयजीवेति मधुरवचनानुयातेन पठतां दिगन्तव्यापिना कलकलेन, प्रचलितजनचरणशतसंक्षोभाद्विहाय कुसुमप्रकरमुत्पततां च मधुलिहां हुंकृतेन, संक्षोभादतित्वरितपदप्रवृत्तैरवनिपतिभिः केयूरकोटिताडितानां क्वणितमुखररत्नदाम्नां च मणिस्तम्भानां रणितेन सर्वतः क्षुभितमिव तदास्थानभवनमभवत् ।

अथ विसर्जितराजलोको 'विश्रम्यताम्' इति स्वयमेवाभिधाय तां चाण्डालकन्यकां, 'वैशम्पायनः प्रवेश्यतामभ्यन्तरम्' इति ताम्बूलकरङ्कवाहिनीमादिश्य, कतिपयाप्तराजपुत्रपरिवृतो नरपतिरभ्यन्तरं प्राविशत् । अपनीताभरणश्च दिवसकर इव विगलितकिरणजालः चन्द्रतार-

---

शलाकासे बिखर गये । उनके किरीटोंकी नोकसे घिसी वहाँकी मणिजटित भूमिका भी निनाद हो रहा था । प्रणाम करते समय हड़बड़ीमें उनके कर्णपूर वहाँकी अति कठोर भूमिमें गिरकर खनखना रहे थे । आगे-आगे चलते हुए मङ्गलपाठ करनेवाले भाँट मधुर वाणीमें 'महाराजकी जय हो, महाराज चिरंजीवी हों' यह कह रहे थे । उनका कलकल निनाद दसों दिशाओंमें फैल रहा था । चलते हुए सैकड़ों मनुष्योंके पैरोंतले कुचल जानेके भयसे पुष्पराशिपर बैठे भौंरे गुंजारते हुए उड़-उड़कर भाग रहे थे । वे राजे उतावले होकर बहुत जल्दी-जल्दी पैर रखते थे । उनके बाजूबन्दोंकी नोक लगनेके कारण रत्नोंकी मालाओंसे अलंकृत वहाँके मणिस्तम्भ भी मुखरित हो रहे थे । इस प्रकार उस समय जैसे सारा सभाभवन क्षुब्ध हो उठा ।

उन सब राजाओंको विदा करके राजा शूद्रकने चाण्डालकन्यासे विश्राम करनेको कहा और साथमें पानदान लेकर चलनेवाली दासीको आज्ञा दी कि वैशम्पायन (तोते) को भीतर ले जाय । इसके बाद वह कतिपय विश्वस्त एवं अतिशय प्रिय राजपुत्रोंके साथ घरके भीतर गया । वहाँपर उसने अपने सभी आभूषण उतार दिये और सीधे व्यायामशालामें जा पहुँचा । उस स्थानपर व्यायामके लिए आवश्यक सभी उपकरण प्रस्तुत थे । गहनोंको उतार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कासमूहशून्य इव गगनाभोगः समुपाहृतसमुचितव्यायामोपकरणां व्यायामभूमिमयासीत्। स तस्यां च समानवयोभिः सह राजपुत्रैः कृतमधुरव्यायामः, श्रमवशादुन्मिषन्तीभिः कपोलयोरीषद्दलित-सिन्दुवारकुसुममञ्जरीविभ्रमाभिरुरसि निर्दयश्रमच्छिन्नहार-विगलितमुक्ताफलप्रकरानुकारिणीभिर्ललाटपट्टकेऽष्टमीचन्द्रशकलतलोल्ल-सदमृतबिन्दुविडम्बिनीभिः स्वेदजलकणिकासंततिभिरलंक्रियमा-णमूर्तिः, इतस्ततः स्नानोपकरणसंपादनसत्वरेण पुरः प्रधावता परिजनेन तत्कालं विरलजनेऽपि राजकुले समुत्सारणाधिकारसुचितं समाचरद्भिर्दण्डिभिरुपदिश्यमानमार्गः, विततसितवितानाम्, अनेक-चारणगणनिबध्यमानमण्डलाम्, गन्धोदकपूर्णकनकमयजलद्रोणीसनाथ-मध्याम्, उपस्थापितस्फाटिकस्नानपीठाम्, एकान्तनिहितैः अतिसुरभि-

---

देनेके कारण राजा शूद्रक किरणहीन सूर्य-चन्द्रमा और नक्षत्रोंसे विहीन आकाश सरीखा दीखने लगा। वहाँ उसने अपने समान उम्रवाले राजपुत्रोंके साथ कुछ देरतक हल्की-सी कसरत की। कसरतके परिश्रमसे उसकी देह पसीनेसे भींग गयी। उसके गालोंपर छहरी हुई पसीनेकी बूँदें कुछ मसली हुई मौलसिरी-के पुष्पगुच्छ जैसी दीख रही थीं। वे बूँदें जब धरतीपर गिरती थीं, तब ऐसा लगता था कि जैसे हारमेंसे मोतियोंकी लड़ियाँ टूट-टूटकर गिर रही हों। वे अपनी अनुपम छटासे अष्टमीके अर्धोदित चन्द्रमाकी अमृतबिंदुओंको भी नीचा दिखा रही थीं। तदनन्तर स्नानके उपकरण प्रस्तुत करनेके निमित्त दौड़ते-भागते हुए अनुचरोंके साथ वह स्नानागारकी ओर चला। यद्यपि उस समय राजमहलमें विशेष भीड़-भाड़ नहीं थी, फिर भी छड़ीदार लोग बड़ी चौकसीसे भीड़ हटानेका काम कर रहे थे। वे आगे-आगे चलते हुए राजाको राह बता रहे थे। स्नानागारमें श्वेत वितान (चँदवा) तना था। बहुतेरे चारण (भाँट) मण्डलाकार बैठे हुए थे। उसके बीचोबीच सुगन्धित जलसे भरी नौकाकार नाँद रक्खी थी। उसकी बगलमें बैठकर स्नान करनेके लिए एक स्फटिकमणि-की बनी चौकी थी। दूसरी तरफ अतिशय सुगंधित जलसे भरे स्नान-कलश रक्खे थे। जलकी सुगन्धिसे आकृष्ट भौंरोंके कारण उन कलशोंका मुख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गन्धसलिलपूर्णैः, परिमलावकृष्टमधुकरकुलान्धकारितमुखैः, आतपभयान्नीलकर्पटावगुण्ठितमुखैरिव स्नानभूमिमगच्छत् ।

अवतीर्णस्य जलद्रोणीं वारविलासिनीकरमृदितसुगन्धामलककलिप्तशिरसो राज्ञः परितः समुपतस्थुरंशुकनिविडनिबद्धस्तनपरिकराः, दूरसमुत्सारितवलयबाहुलताः, समुत्क्षिप्तकर्णाभरणाः, कर्णोत्सङ्गोत्सारितालकाः, गृहीतजलकलशाः, स्नानार्थमभिषेकदेवता इव वारयोषितः । ताभिश्च समुन्नतकुचकुम्भमण्डलाभिर्वारिमध्यप्रविष्टः करिणीभिरिव वनकरी परिवृतस्तत्क्षणं रराज राजा । द्रोणीसलिलादुत्थाय च स्नानपीठममलस्फटिकधवलं वरुण इव राजहंसमारुरोह । ततस्ताः काश्चिन्मरकतकलशप्रभाश्यामायमाना नलिन्य इव मूर्तिमत्यः पत्रपुटैः, काश्चि-

---

काला हो गया था । उन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानों पानीको गर्मीसे बचानेके लिए उन घड़ोंके मुखपर काले वस्त्र बाँध दिये गये हों ।

जब वह राजा उस नाँदमें जा बैठा, तब सुन्दरी वेश्याओंने अपने हाथसे पीसकर तैयार किये हुए सुगन्धित आमलेका लेप लेकर उसके मस्तकपर मला । उसके बाद अपने स्तन और कमरको मजबूतीसे बाँधे हुए बहुतेरी वारवनितायें आकर उसके चारों ओर खड़ी हो गयीं। उन्होंने अपने हाथोंके कंकण बहुत ऊँचे चढ़ा लिये थे । कानोंके गहने उतार डाले थे । इधर-उधर बिखरे हुए बालोंको कानकी तरफ मोड़ लिया था और उनके हाथोंमें जलकलश विद्यमान थे । उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि वे वेश्यायें नहीं हैं, बल्कि राजाको नहलानेके लिए साक्षात् अभिषेकदेवियाँ वहाँ आ उपस्थित हुई हैं । उन उन्नत कुचकुम्भवाली वारवनिताओंके मध्य पानीकी नाँदमें बैठा हुआ राजा शूद्रक हथिनियोंके झुण्डमें विराजमान वन्य गजराज जैसा लग रहा था । कुछ क्षणों बाद वह नाँदमेंसे निकलकर उस स्वच्छ स्फटिकवाली चौकीपर जा बैठा । उस समय उसकी ऐसी शोभा हुई कि जैसे श्वेत राजहंसपर साक्षात् वरुणदेव बैठे हों । तदनन्तर उसके ऊपर जलधारा डालती हुई कितनी ही सुमुखियाँ मरकतमणिजटित कलशोंकी प्रभाके कारण साँवली-सी हो गयी थीं। उन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानो प्रत्यक्ष उपस्थित होकर कमलिनियोंका समुदाय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्रजतकलशहस्ता रजन्य इव पूर्णचन्द्रमण्डलविनिर्गतेन ज्योत्स्नाप्रवाहेण, काश्चित्कलशोत्क्षेपश्रमस्वेदार्द्रशरीरा जलदेवता इव स्फटिकैः कलशैस्तीर्थजलेन, काश्चिन्मलयसरित इव चन्दनरसमिश्रेण सलिलेन, काश्चिदुत्क्षिप्तकलशपार्श्वविन्यस्तहस्तपल्लवाः प्रकीर्यमाणनखमयूखजालकाः प्रत्यंगुलिविवरावनिर्गतजलधाराः सलिलयन्त्रदेवता इव, काश्चिज्जाड्यमपनेतुमाक्षिप्तबालातपेनेव दिवसश्रिय इव कनककलशहस्ताः कुङ्कुमजलेन वाराङ्गना यथायथं राजानमभिषिषिचुः। अनन्तरमुदपादि च स्फोटयन्निव श्रुतिपथमनेकप्रहतपटुपटहझल्लरीमृदङ्गवेणुवीणागीतनिनादानुगम्यमानो बन्दिवृन्दकोलाहलाकुलो भुवनविवरव्यापी स्नानशङ्खानामापूर्यमाणानामतिमुखरो ध्वनिः।

अपने पत्तोंसे उसे नहला रहा है। कुछ सुन्दरियाँ चाँदीके कलशसे नहला रही थीं। वे ऐसी लगती थीं कि जैसे रात्रियाँ पूर्ण चन्द्रमण्डलमेंसे निकलते हुए शुभ्र प्रकाश द्वारा उसे नहला रही हों। कितनी सुन्दरियाँ कलश उठानेके श्रमसे पसीने-पसीने हो गयी थीं। अतएव वे मूर्त जलदेवियोंके समान दीख रही थीं। उन्होंने स्फटिक मणिके कलश लेकर तीर्थजलसे नहलाया। कितनी ही मलयाचलकी नदियों सरीखी सुन्दरियोंने चन्दनरसमिश्रित जलसे नहलाया। कितनी ही सुन्दरियोंने कलश उठाकर अपने दोनों हाथोंमें ले लिया था। उनके हाथोंके नखोंसे किरणें निकलकर फैल रही थीं। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानों साक्षात् जलयन्त्रदेवियाँ प्रत्येक उँगलीके छिद्रसे जलधारा प्रवाहित कर रही हों। बहुतेरी सुन्दरियाँ हाथमें सुवर्णकलश लेकर केसरमिश्रित जलसे नहला रही थीं। उन्हें देखकर ऐसा लगता कि मानो साक्षात् दिवसश्री ठंढक मिटानेके लिए प्रातःकालीन सूर्यकी लाल-लाल धूप लेकर उसीसे नहला रही है। इस प्रकार क्रमशः उन वारवनिताओंने यथोचित रीतिसे राजाको नहलाया। तदनन्तर जैसे कानके परदे फाड़ देनेवाली बहुतेरे स्नानशंखोंकी ध्वनि अखिल भुवनमण्डलमें व्याप्त हो गयी। उसके साथ ही नगाड़े, झाँझ, मृदङ्ग, बाँसुरी तथा वीणाका शब्द और वन्दीजनोंके स्तुतिपाठका कोलाहल मुखरित हो उठा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं च क्रमेण निर्वर्तिताभिषेको विषधरनिर्मोकपरिलघुनी धवले परिधाय धौतवाससी शरदम्बरैकदेश इव जलक्षालननिर्मलतनुः, अतिधवलजलधरच्छेदशुचिना दुकूलपटपल्लवेन तुहिनगिरिरिव गगनसरित्स्रोतसा कृतशिरोवेष्टनः, संपादितपितृजलक्रियो मन्त्रपूतेन तोयाञ्जलिना दिवसकरमभिप्रणम्य देवगृहमगमत्। उपरचितपशुपतिपूजश्च निष्क्रम्य देवगृहान्निर्वर्तिताग्निकार्यो विलेपनभूमौ झङ्कारिभिरलिकदम्बकैरनुबध्यमानपरिमलेन मृगमदकर्पूरकुंकुमवाससुरभिणा चन्दनेनानुलिप्तसर्वाङ्गो विरचितामोदमालतीकुसुमशेखरः कृतवस्त्रपरिवर्तो रत्नकर्णपूरमात्राभरणः समुचितभोजनैः सह भूपतिभिराहारमभिमतरसास्वादजातप्रीतिरवनिपो निर्वर्तयामास।

परिपीतधूमवर्तिरुपस्पृश्य च गृहीतताम्बूलस्तस्मात्प्रमृष्टमणिकुट्टिम-

---

इस तरह स्नानके जलसे धुल जानेपर राजा शूद्रककी देह स्वच्छ हो गयी। ऐसा होनेसे वह शरद् ऋतुके आकाशके एक भागकी भाँति निर्मल दीखने लगा। अब उसने साँपकी केंचुलोके समान बारीक तथा धुले वस्त्रका जोड़ा पहना और अतिशय उज्ज्वल शरत्कालीन बादलके टुकड़ेके समान शुभ्र रेशमी पगड़ी सिरपर बाँधी। ऐसा करनेसे वह मन्दाकिनीकी धारासे सुशोभित हिमालय सरीखा दीखने लगा। तदनन्तर पितृतर्पण किया और सूर्यनारायणको मंत्रोच्चारणसे पुनीत जलकी जलाञ्जलि दे तथा प्रणाम करके देवालयमें गया। वहाँ शिवपूजन तथा होम आदि नित्यकृत्य सम्पन्न करके विलेपनभवनमें गया। वहाँ पहुँचकर उसने सारे शरीरमें चन्दन लगाया। वह चन्दन कस्तूरी, कपूर और केसरसे सुवासित था और सुगन्धिके लोभी भौंरे झंकार करते हुए उसके चारों ओर मँडरा रहे थे। उसके पश्चात् उसने कपड़े बदले, सुगन्धित चमेलीके फूलोंका बना मुकुट पहना और गहनोंमेंसे केवल रत्नजटित कर्णपूर कानोंमें धारण किया। इसके बाद उसने जो राजे इस योग्य थे, उन्हें अपने साथ बैठाकर रुचिके अनुकूल वस्तुओंका स्वाद लेते हुए आनन्दपूर्वक भोजन किया।

इस प्रकार भोजन करनेके बाद उसने हाथ-मुँह धोया, सुगन्धित धूमवर्ति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रदेशादुत्थाय नातिदूरवर्तिन्या ससंभ्रमप्रधावितया प्रतिहार्या प्रसारितबाहुमवलम्ब्य वेत्रलताग्रहणप्रसङ्गादतिजरठकिसलयानुकारिकरतलकरेणाभ्यन्तरसञ्चारसमुचितेन परिजनेनानुगम्यमानो, धवलांशुकपरिगतपर्यन्ततया स्फटिकमणिमयभित्तिनिबद्धमिवोपलक्ष्यमाणम्, अतिसुरभिणा मृगनाभिपरिगतेनामोदिना चन्दनवारिणा सिक्तशिशिरमणिभूमिम्, अविरलविप्रकीर्णेन विमलमणिकुट्टिमगगनतलतारागणेनेव कुसुमोपहारेण निरन्तरनिचितम्, उत्कीर्णशालभञ्जिकानिवहेन संनिहितगृहदेवतेनेव गन्धसलिलक्षालितेन कलधौतमयेन स्तम्भसञ्चयेन विराजमानम्, अतिबहलागुरुधूपपरिमलम्, अखिलविगलितजलनिवहधवलजलधरशकलानुकारिणा कुसुमामोदवासितप्रच्छदपटेन पट्टोपधानाध्यासितशिरोधाम्ना मणिमयप्रतिपादुकाप्रतिष्ठितपादेन पार्श्वस्थरत्नपादपी-

---

(सिगार) पी और पान खाया। फिर चमचमाते हुए मणियोंसे अलंकृत फर्शसे उठकर वह सभाभवनको चला। उसके उठते ही तनिक दूर खड़ी प्रतीहारी दौड़कर पास आयी और उसने सहारा देनेके लिए अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। महाराजने भी सहारा ले लिया। अब सभाभवनमें प्रवेश पाने योग्य अनुचर उनके पीछे-पीछे चलने लगे। सदा छड़ीकी मूठ पकड़े रहनेके कारण उनकी हथेली पुराने पत्तेके समान कर्कश हो गयी थी। सभामंडपमें सब तरफ श्वेत वस्त्रके परदे लगे हुए थे। इससे उसकी दीवारें स्फटिक मणिकी बनी मालूम पड़ती थीं। चन्द्रकान्तमणि-निर्मित उसकी फर्शपर अतिशय सुगन्धित और कस्तूरीरसमिश्रित जलका छिड़काव किया गया था। वहाँपर पुष्पराशि बिखरी थी। जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो नभमंडलमें नक्षत्रगण छितराये हुए हों। उस सभाभवनके स्वर्णिम स्तम्भ सुगन्धित जलसे धुले हुए थे और उनमें निर्मित पुतलियाँ साक्षात् गृहदेवियों जैसी लग रही थीं। ढेरकी ढेर जलती हुई अगरबत्तियोंका सुगन्धित धुआँ भरा था। एक ऊँची वेदीपर हिमशिलासदृश शुभ्र पलंग बिछा हुआ था। वह समस्त जल बरसाकर छूँछे श्वेत मेघके टुकड़े जैसा लगता था। उसके ऊपर फूलोंमें बासकर सुगन्धित किया हुआ एक चदरा बिछा था। रेशमी कपड़ेका बना तकिया उसके सिरहाने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ठेन तुहिनशिलातलसदृशशयनेन सनाथीकृतवेदिकं भुक्त्वास्थानमण्डप-मयासीत्।

तत्र च शयने निषण्णः क्षितितलोपविष्टया शनैः शनैरुत्सङ्गनिहितासिलतया खड्गवाहिन्या नवनलिनदलकोमलेन करसंपुटेन संवाह्यमानचरणस्तत्कालोचितदर्शनैरवनिपतिभिरमात्यैर्मित्रैश्च सह तास्ताः कथाः कुर्वन्मुहूर्तमिवासांचक्रे। ततो नातिदूरवर्तिनीम् 'अन्तःपुराद् वैशम्पायनमादायागच्छ' इति समुपजाततद्वृत्तान्तप्रश्नकुतूहलो राजा प्रतीहारीमादिदेश। सा क्षितितलनिहितजानुकरतला 'यथाज्ञापयति देवः' इति शिरसि कृत्वाज्ञां यथादिष्टमकरोत्।

अथ मुहूर्तादिव वैशम्पायनः प्रतीहार्या गृहीतपञ्जरः कनकवेत्रलतावलम्बिना किंचिदवनतपूर्वकायेन सितकंचुकावच्छन्नवपुषा जराधवलिमौलिना गद्गदस्वरेण मंदमंदसञ्चारिणा विहङ्गजातिप्रीत्या जरत्कल-

---

रक्खा हुआ था। उसके दोनों बगल पैर रखनेके लिए मणिजटित चौकी और एक पादुका (खड़ाऊँ रक्खी थी।

उस मण्डपमें जाकर राजा पलङ्गपर बैठा। उसकी खड्गवाहिनी दासी खड्गको गोदमें रखकर जमीनपर बैठ गयी और ताजे कमलपुष्पकी पंखुड़ियोंके समान कोमल हथेलीसे धीरे-धीरे उसका पैर दबाने लगी। उस समय मिलने योग्य राजाओं, मंत्रियों तथा मित्रोंके साथ बातें करता हुआ वह वहाँ कुछ देर रहा। तदनन्तर उस वैशम्पायन (शुक) का हाल जाननेकी उत्सुकतावश पास ही खड़ी प्रतिहारीको आदेश दिया कि 'जाकर भीतरसे वैशम्पायन तोतेको यहाँ ले आ।' प्रतीहारीने जमीनमें हाथ और घुटने टेक तथा 'महाराजकी जो आज्ञा' कहकर आज्ञा शिरोधार्य की और आज्ञापालनके काममें लग गयी।

क्षण ही भरमें प्रतिहारी वैशम्पायनके पींजरेको लेकर महाराजके पास लौट आयी। प्रतिहारीके पीछे-पीछे एक कंचुकी भी आया। उसके हाथमें सोनेकी छड़ी विद्यमान थी। उसके शरीरका पूर्वभाग तनिक नीचेकी ओर झुका हुआ था। श्वेत वस्त्रसे उसका शरीर ढँका था। बुढ़ौतीसे उसके सिरके बाल सफेद हो गये थे। उसका स्वर गद्गद हो गया था। वह बहुत धीरे-धीरे चल रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हंसेनेव कंचुकिनाऽनुगम्यमानो राजांतिकमाजगाम। क्षितितलनिहित-करतलस्तु कंचुकी राजनं व्यज्ञापयत्—'देव, देव्यो विज्ञापयन्ति, देवादेशादेष वैशम्पायनः स्नातः कृताहारश्च देवपादमूलं प्रतीहार्यानीतः।' इत्यभिधाय गते च तस्मिन्राजा वैशम्पायनमपृच्छत्—'कच्चिदभिमतमास्वादितमभ्यन्तरे भवता किंचिदशनजातम्' इति। स प्रत्युवाच—'देव, किंवा नास्वादितम्। आमत्तकोकिललोचनच्छविर्नीलपाटलः कषाय-मधुरः प्रकाममापीतो जम्बूफलरसः, हरिनखरभिन्नमत्तमातङ्गकुम्भमुक्ता-द्रमुक्तरक्तफलत्विषि खण्डितानि दाडिमबीजानि, नलिनीदलहरिन्ति द्राक्षाफलस्वादूनि च चूर्णितानि स्वेच्छया प्राचीनामलकीफलानि। किं वा प्रलपितेन बहुना। सर्वमेव देवीभिः स्वयं करतलोपनीयमानममृतायते' इति।

एवंवादिनो वचनमाक्षिप्य नरपतिरब्रवीत्—'आस्तां तावत्सर्वम्।

था। उसे देखकर ऐसा लगता था कि मानो पक्षीजातिपर प्रेमके कारण कोई बूढा कलहंस वहाँ चला आया हो। उसने हाथको जमीनपर टेककर कहा—'महाराज! महारानियोंने कहलाया है कि आपकी आज्ञानुसार वैशम्पायनको स्नान-भोजन करा दिया गया है और अब प्रतीहारीके हाथों वह आपके पास भेजा जा रहा है।' यह कहकर कंचुकी चला गया। तदनन्तर राजा शूद्रकने वैशम्पायनसे कहा—'आपने अन्तःपुरमें अपनी मनपसन्दका कुछ भोजन पाया?' तोता बोला—'स्वामिन्! मैंने वहाँ क्या नहीं खाया? मस्त कोकिलकी आँखों सरीखी नीली तथा गुलाबी जामुनोंका कसैला और मीठा रस खूब जी भरके पिया। सिंहके मजबूत नखोंसे फाड़े हुए मस्त गजराजके मस्तकसे निकले तथा रुधिरमें सनी गजमुक्ताओंके दानोंकी भाँति चमचमाते अनारके दाने चक्खे। पुरइनके पत्तों सरीखे हरे और अंगूर जैसे स्वादिष्ट पुराने आँवलेके फल कुतरे। बहुत बोलनेसे क्या लाभ? अन्तःपुरकी रानियोंने अपने हाथों मुझे जो भी खिलाया, वह सब अमृतके समान मीठा लगा।'

ऐसा कहते हुए वैशम्पायनकी बात काटकर शूद्रक बोला—'अस्तु, यह सब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपनयतु नः कुतूहलम् । आवेदयतु भवानादितः प्रभृतिः कात्स्न्र्येनात्मनो जन्म, कस्मिन्देशे भवान्कथं जातः, केन वा नाम कृतम्, का ते माता, कस्ते पिता, कथं वेदानामागमः, कथं शास्त्राणां परिचयः, कुतः कला आसादिताः, किंहेतुकं जन्मान्तरानुस्मरणम्, उत वरप्रदानम्, अथवा विहङ्गवेषधारी कश्चिच्छन्नं निवससि, क्व वा पूर्वमुषितम्, कियद्वा वयः, कथं पञ्जरबन्धनं, कथं चाण्डालहस्तगमनम्, इह वा कथमागमनम्' इति । वैशम्पायनस्तु स्वयमुपजातकुतूहलेन सबहुमानमवनिपतिना पृष्टो मुहूर्तमिव ध्यात्वा सादरमब्रवीत्—'देव, महतीयं कथा । यदि कौतुकमाकर्ण्यताम्—

अस्ति पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना, मध्यदेशालङ्कारभूता मेखलेव भुवः, वनकरिकुलमदजलसेकसंवर्धितैरतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युच्चतया तारकागणमिव शिखरप्रदेशसंलग्नमुद्वहद्भिः पादपैरुपशोभिता,

---

रहने दो । अब हमारी उत्सुकता दूर करनेके लिए आदिसे विस्तारपूर्वक यह बताओ कि किस प्रदेशमें और किस प्रकार तुम्हारा जन्म हुआ ? किसने नाम रक्खा ? तुम्हारी माता और पिता कौन हैं ? तुम्हें वेदाभ्यास कैसे हुआ ? शास्त्रोंका ज्ञान कैसे प्राप्त किया ? समस्त कलायें तुमने कहाँ सीखीं ? तुम्हें अपने पूर्वजन्मकी बातें याद हैं या कि किसीके वरदानसे यह चातुरी प्राप्त हुई है ? पक्षीके वेषमें छिपे हुए तुम कोई विशिष्ट प्राणी तो नहीं हो ? पहले तुम कहाँ रहते थे ? इस समय तुम्हारी उम्र कितनी है ? चाण्डालके हाथों पड़कर तुम पींजरेमें कैसे बन्द हो गये ? यहाँ तुम किस कामसे आये हो ?' इस प्रकार जब स्वयं महाराजने उत्सुक होकर बड़े सम्मानके साथ पूछा, तब तनिक देर सोचकर वैशम्पायनने कहा—'महाराज ! यह कहानी तो बड़ी लम्बी है । फिर भी यदि ऐसी इच्छा ही है तो सुनिए—

विन्ध्याचलकी वन्यभूमि पूर्वसमुद्रसे लेकर पश्चिम समुद्रतक फैली हुई है । वह भूमि मध्यप्रदेशका अलंकार तथा पृथिवीकी मानो मेखला (करधनी) है । वनैले हाथियोंके मदजलसे सिंचित होकर उस वनके वृक्ष बढ़े हैं । उन वृक्षोंकी चोटियोंपर अतिशय प्रफुल्लित श्वेत पुष्पोंके गुच्छे लगे रहते हैं, जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मदकलकुररकुलदश्यमानमरिचपल्लवा, करिकलभकरमृदिततमालकिसलयामोदिनी, मधुमदोपरक्तकेरलीकपोलच्छविना सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तकरसरञ्जितेनेव पल्लवचयेन संछादिता, शुककुलदलितदाडिमीफलद्रवार्द्रीकृततलैरतिचपलकपिकम्पितकक्कोलच्युतपल्लवफलशबलैरनवरतनिपतितकुसुमरेणुपांसुलैः पथिकजनरचितलवङ्गपल्लवसंस्तरैरतिकठोरनालिकेरकेतकीकरीरबकुलपरिगतप्रान्तैस्ताम्बूलीलतावनद्धपूगखण्डमण्डितैर्वनलक्ष्मीवासभुवनैरिव विराजिता लतामण्डपैः, उन्मदमातङ्गकपोलस्थलगलितसलिलसिक्तेनेवानवरतमेलालतावनेन मदगन्धिनान्धकारिता, नखमुखलग्नेभकुम्भमुक्ताफललुब्धैः शबरसेनापतिभिरभिहन्यमान-

---

अत्यधिक ऊँचाईपर होनेके कारण नक्षत्रों जैसे दीखते हैं। वहाँपर मतवाले कुरर पक्षियोंके झुंड काली मिर्चकी पत्तियाँ कुतरते हैं। हाथीके बच्चोंकी सूँड़ोंसे मसले हुए तमालपत्रोंकी सुगन्धि फैलती रहती है। मदिराके मदसे लाल केरल प्रदेशकी स्त्रियोंके कपोलों जैसे कोमल एवं कान्तिसम्पन्न पत्रोंसे वहाँकी भूमि सदा आच्छादित रहती है। उन पत्तोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वहाँ भ्रमण करती हुई वनदेवियोंके पैरोंकी महावर लगनेसे वे रँग गये हैं। सुग्गोंके द्वारा काटे गये अनारोंके रससे वह भूमि सदा गीली बनी रहती है। अति चञ्चल बंदरों द्वारा हिलाये हुए कोशफलके वृक्षोंसे गिरे पत्तों और फलोंसे वहाँकी धरती रंगीन दीखती है। सदा उड़ती हुई पुष्परजसे वहाँके लताकुञ्ज मलिन रहा करते हैं। वे लतामण्डप वनलक्ष्मीके निवासयोग्य महलों जैसे लगते हैं। उनमें सुपारीके वृक्षोंपर पानकी लतायें लसी रहती हैं और उनके भीतर पथिकोंके हाथों लौंगकी पत्तियोंके बिछौने बिछे रहते हैं। उनके आस-पास बहुत पुराने नारियल, केतकी, करीर तथा बकुलके वृक्ष लगे हुए हैं। वहाँ इलायचीकी लताओंके कारण सदा अन्धकार छाया रहता है और गजमदकी भाँति सुगन्धि निकलती रहती है। जिससे ऐसा लगता है कि जैसे मतवाले हाथियोंके गंडस्थलसे बहनेवाले मदजलसे छिड़काव होता रहता हो। वहाँ सिंहोंके नखाग्रभागमें हाथियोंके मस्तकसे निकले मोती चिपके रहते हैं। उन्हीं मोतियोंके लोभसे भीलसेनापति सैकड़ों सिंहोंका शिकार किया करते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केसरिशता, प्रेताधिपनगरीव सदासंनिहितमृत्युभीषणा महिषाधिष्ठिता च, समरोद्यतपताकिनीव बाणसमारोपितशिलीमुखा विमुक्तसिंहनादा च, कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालंकृता च, कर्णीसुतकथेव संनिहितविपुलाचला शशोपगता च, कल्पान्तप्रदोषसंध्येव प्रनृत्तनील-कण्ठा पल्लवारुणा च, अमृतमथनवेलेव श्रीद्रुमापशोभिता वारुणपरिगता च, प्रावृडिव घनश्यामलानेकशतह्रदालङ्कृता च, चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्ष-सार्थानुगता हरिणाध्यासिता च, राज्यस्थितिरिव चमरमृगवालव्यजनो-पशोभिता समदगजघटापरिपालिता च, गिरितनयेव स्थाणुसंगता मृग-

---

हैं । यमराज और उनके वाहन महिषके कारण यमपुरी सदा भयदायिनी बनी रहती है। उसी प्रकार वह विन्ध्याटवी सर्पों, सिंहों और महिषोंके कारण भीषण लगती है । जैसे रणभूमिमें धनुषोंपर बाण चढ़े रहते हैं और वीरोंका निनाद सुनायी देता रहता है, उसी प्रकार उस वनमें बाणों तथा असनके वृक्षोंपर भौंरे बैठे रहते हैं और सिंहोंका गर्जन सुनायी देता रहता है । जैसे दुर्गादेवी खड्गके कारण भयानक दीखती हैं और उनके मस्तकमें लाल चंदन लगा रहता है, उसी प्रकार उस वनमें सदा खड्ग (गैंड़े) घूमते रहते हैं और अगणित लाल चन्दनके वृक्ष लगे हुए हैं । जैसे राजा कर्णीसुतके विपुल और अचल मित्र थे और शश प्रधान मत्री था, वैसे ही उस वनमें विशालकाय पर्वत हैं और खर-गोश घूमा करते हैं । जैसे महाप्रलयकी सन्ध्याके समय शंकर भगवान नाचते हैं और वह सन्ध्या नवपल्लवोंके समान लाल होती है, उसी प्रकार उस वनमें मोर नाचते हैं और नवीन पल्लवोंके कारण वह लाल बना रहता है । जैसे अमृतमन्थनकी वेला लक्ष्मी, पारिजात और वारुणी मदिरासे युक्त थी, उसी प्रकार वह वन नारियल तथा वारुण वृक्षोंसे भरा हुआ है । वर्षा ऋतु जैसे काले मेघोंसे श्याम रहती है और शतह्रदा (बिजली) चमका करती है, उसी प्रकार वृक्षाधिक्यके कारण वह वन सदा श्याम बना रहता है और उसमें सैकड़ों तड़ाग हैं। जैसे चंद्रमाकी मूर्तिके साथ बहुतेरे नक्षत्र रहते हैं और उसमें लांछन रहता है; उसी प्रकार उस वनमें बहुतेरे भालू और मृग निवास करते हैं। जैसे राज्यमें चमरमृगोंके बालोंसे बने चमर रहते हैं, उसी प्रकार उस वनमें असंख्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पतिसेविता च, जानकीव प्रसूतकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च, कामिनीव चन्दनमृगमदपरिमलवाहिनी रुचिरागुरुतिलकभूषिता च, सोत्कण्ठेव विविधपल्लवानिलवीजिता समदना च, बालग्रीवेव व्याघ्र-नखपंक्तिमण्डिता गण्डकाभरणा च, पानभूमिरिव प्रकटितमधुकोशकशता प्रकीर्णविविधकुसुमा च, क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणि-मण्डला, क्वचिद्दशसुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुंगशालाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव हरितकुशसमित्कुसुमशमीपलाशशो-

---

चमरमृगोंका चमर विद्यमान रहता है और मदमत्त गजसमुदाय सदा उसकी रक्षा किया करता है। जैसे भगवती पार्वतीके साथ स्थाणु (शंकर) और उनका वाहन सिंह रहता है, उसी प्रकार उस वनमें भी स्थाणु (वृक्षोंके ठूँठ) और बहुतेरे सिंह रहा करते हैं। जैसे सीताजीके लव-कुश नामके दो पुत्र थे और उन्हें निशाचर रावण हर ले गया था, उसी प्रकार उस वनमें भी कुशके बहुतेरे पौधे हैं और निशाचर (उल्लू) भरे पड़े हैं। जैसे कोई कामुकी स्त्री चन्दन, अगर तथा कस्तूरीका तिलक लगाती है, उसी तरह उस वनमें असंख्य अगुरु तथा तिलकके वृक्ष लगे हुए हैं। जैसे कामिनी प्रियमिलनके लिए उत्सुक और कामातुर रहती है, उसी तरह उस वनमें बहुतेरे मदनवृक्ष विद्य-मान हैं। जैसे बालकके गलेमें बघनखा और गंडा पहनाया जाता है, उसी तरह उस वनमें बहुतेरे व्याघ्रनख पड़े रहते हैं और गंडक (गैंड़े) घूमा करते हैं। जैसे मदिरालयमें सैकड़ों मधुकोश (शराब पीनेके प्याले) विद्यमान रहते हैं, उसी प्रकार उस वनमें अगणित मधुकोश (शहदके छत्ते) लगे रहते हैं और विविध भाँतिकी कुसुमराशि बिखरी रहती है। जैसे प्रलयकालमें वराहा-वतारी भगवान् विष्णुकी दंष्ट्रा द्वारा पृथिवी उठायी गयी थी, उसी तरह उस वनमें जगह-जगह बड़े-बड़े वनशूकरोंने दाँतोंसे वहाँकी जमीन खोद डाली है। जिस तरह चञ्चल वानरोंने रावणकी लंकानगरीके बड़े ऊँचे-ऊँचे भवनोंको ढहा दिया था, उसी तरह उस वनमें वानरोंने ऊँचे-ऊँचे शालवृक्षोंको तोड़ डाला है। कहीं-कहीं वहाँकी भूमि हरे कुश, समिधा, फूल, शमी और पलाशसे शोभित होकर ऐसी लगती थी कि मानो अभी-अभी वहाँ किसीका विवाह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिता, क्वचिदुद्वृत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता, क्वचिन्मत्तेव कोकिलकुलप्रलापिनी, क्वचिदुन्मत्तेव वायुवेगकृततालशब्दा, क्वचिद्विधवेवोन्मुक्ततालपत्रा, क्वचित्समरभूमिरिव शरशतनिचिता, क्वचिदमरपतितनुरिव नेत्रसहस्रसंकुला, क्वचिन्नारायणमूर्तिरिव तमालनीला, क्वचित्पार्थरथपताकेव कप्याक्रान्ता, क्वचिद्वनिपतिद्वारभूमिरिव वेत्रलताशतदुःप्रवेशा, क्वचिद्विराटनगरीव कीचकशताकुला, क्वचिदम्बरश्रीरिव व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा, क्वचिद्गृहीतव्रतेव दर्भचीरजटावल्क-

---

हुआ है। जैसे उच्छृङ्खल सिंहका गर्जन सुनकर मनुष्य रोमांचित हो जाता है, उसी प्रकार वह वन काँटोंकी झाड़ियोंसे नित्य कंटकित रहता है। जैसे कहीं कोई उन्मत्त स्त्री कोकिलकी तरह प्रलाप करती है, उसी तरह उस वनमें सदा कोकिल कूका करते थे। जैसे वायुके विकारसे उन्मत्त कोई स्त्री बार-बार ताली बजाती है, उसी प्रकार वायुके झोकोंसे उस वनमें तालवृक्षके पत्ते लड़कर खड़खड़ाते रहते थे। जैसे विधवा स्त्री तालपत्र (कर्णभूषण) विहीन होती है, उसी प्रकार वह विन्ध्याटवी भी कहीं-कहीं पत्रविहीन तालवृक्षोंसे भरी हुई थी। जैसे समरभूमि सैकड़ों बाणोंसे भर जाती है, उसी प्रकार कहीं-कहीं वह वनभूमि सरपतकी घाससे भरी थी। जैसे इन्द्रके शरीरमें हजार नेत्र हैं, उसी प्रकार उस वनमें कहीं-कहीं हजारों जटावाले वृक्ष थे। जैसे नारायणकी मूर्ति तमालके समान श्याम होती है, वैसे ही कहीं-कहीं वह विन्ध्याटवी तमालवृक्षोंसे श्याम हो रही थी। जैसे अर्जुनके रथकी ध्वजामें वानर हनुमान्‌जीकी आकृति बनी रहती है, उसी प्रकार कहीं-कहीं वह विंध्याटवी भी वानरोंसे भरी हुई थी। जैसे राजाकी ड्योढ़ीपर द्वारपाल हाथोंमें बेंतकी छड़ी लिये खड़े रहते हैं, इस कारण महलके भीतर जाना कठिन होता है। उसी प्रकार उस वनमें बेंतोंकी बहुतेरी झाड़ियाँ थीं, जिससे उसमें प्रविष्ट होना दूभर था। जैसे राजा विराटकी नगरीमें कीचक था, उसी प्रकार उस वनमें अगणित कीचक (पोले बाँस) थे। जैसे शंकरभगवान् बहेलियेका रूप धारण करके आकाशमें तरल ताराओंसे युक्त मृगशिरा नक्षत्रके पीछे-पीछे भागे थे, उसी प्रकार उस वनमें चञ्चल नयनोंवाले मृगोंके पीछे बहेलिये दौड़ा करते हैं। जैसे व्रतधारिणी स्त्री कुश,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लधारिणी, अपरिमितबहलपत्रसञ्चयापि सप्तपर्णोपशोभिता, क्रूरसत्त्वापि मुनिजनसेविता, पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम।

तस्यां च दण्डकारण्यान्तःपाति, सकलभुवनविख्यातम् , उत्पत्तिक्षेत्रमिव भगवतो धर्मस्य, सुरपतिप्रार्थनापीतसकलसागरजलस्य, मेरुमत्सराद्गगनतलप्रसारितविकटशिरःसहस्रेण दिवसकररथगमनपथमपनेतुमभ्युद्यतेनावगणितसकलसुरवचसा विन्ध्यागिरिणाऽप्यनुल्लङ्घिताज्ञस्य जठरानलजीर्णवातापिदानवस्य, सुरासुरमुकुटमकरपत्रकोटिचुम्बितचरण-

---

चीर, वल्कलवसन और जटा धारण करती है, उसी प्रकार विन्ध्याटवी भी कहीं-कहीं कुश, घास, वटवृक्षकी जटा और वल्कल धारण किये हुए है। यद्यपि उस वनमें पत्रराशि जमा थी, फिर भी सप्तपर्ण (सात पत्ते अथवा सप्तपर्ण नामके वृक्षविशेष) से शोभित है। सिंह आदि क्रूर जीवों (अथवा क्रूर स्वभाव) से भरी हुई होनेपर भी वह मुनियोंसे सेवित है। पुष्पवती (फूलोंसे भरी अथवा रजस्वला) होती हुई भी वह पवित्र है। ऐसी है वह विन्ध्याटवी।

उसी विन्ध्याटवीके अन्तर्गत दंडकारण्यमें मुनिराज अगस्त्यका भुवनविख्यात आश्रम था। भगवान् धर्मके उत्पत्तिस्थान सदृश वह सुन्दर लगता था। सुमेरु पर्वतसे ईर्ष्या करते हुए जिस विन्ध्याचलने अपने हजारों भीषण शिखर अखिल गगनमण्डलमें फैला दिये थे, सूर्यनारायणके रथका मार्ग अवरुद्ध कर देनेको उद्यत हो गया था और हैकड़ी दिखाते हुये देवताओं तककी अवहेलना कर दी थी। वह विन्ध्य भी महर्षि अगस्त्यकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं कर सका था। उन्होंने ही इन्द्रके प्रार्थना करनेपर समुद्रका जल पी लिया था। (कथान्तर—जब देवराज इन्द्रने अपने वज्रसे वृत्रासुरको मार डाला, तब उसके साथी कालकेय नामके असुर इन्द्रसे बचनेके लिए समुद्रमें जा छिपे। वे दिन भर छिपे रहते और रातको निकलकर ऋषियोंका वध करते थे। ऐसी परिस्थितिमें इन्द्रकी प्रार्थनासे अगस्त्यने समुद्रका जल पी लिया। जिससे देवताओंने उन असुरोंको मार डाला) महामुनि अगस्त्यने ही अपनी जठराग्निमें वातापी दैत्यको पचा लिया था (इल्वल और वातापी ये दो राक्षस थे। वातापी मेढ़ा बनता और इल्वल ब्राह्मण। सो इल्वल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रजसो दक्षिणामुखविशेषकस्य, सुरलोकादेकहुंकारनिपातितनहुषप्रकट-प्रभावस्य भगवतो महामुनेरगस्त्यस्य भार्यया लोपामुद्रया स्वयमुपर-चितालवालकैः करपुटसलिलसेकसंवर्धितैः सुतनिर्विशेषैरुपशोभितं पादपैः, तत्पुत्रेण च गृहीतव्रतेनाषाढिना पवित्रभस्मविरचितत्रिपुण्ड्रका-भरणेन कुशचीवरवाससा मौञ्जमेखलाकलितमध्येन गृहीतहरितपर्ण-पुटेन प्रत्युटजमटता भिक्षां दृढदस्युनाम्ना पवित्रीकृतम् , अतिप्रभूतेध्मा-हरणाच्च यस्येध्मवाह इति पिता द्वितीयं नाम चकार, दिशि दिशि शुकहरितैश्च कदलीवनैः श्यामलीकृतपरिसरं सरिता च कलशयोनि-

---

वातापीरूपी मेढ़ेको मारकर ब्राह्मणोंको भोजन कराया करता था। भोजनो-परान्त वह 'वातापी! बाहर आओ' यह कहता, तैसे ही वह ब्राह्मणोंका पेट फाड़कर बाहर निकल आता था। ऐसा करके उन दोनोंने हजारों ब्राह्मण मार डाले। इसी सिलसिलेमें एक दिन अगस्त्य भी भोजन करने गये और उन्होंने वातापीको सदाके लिए अपनी जठराग्निमें पचा लिया)। सभी सुरों और असुरोंके मुकुटमणि भगवान् अगस्त्यके चरणोंकी रजका चुम्बन किया करते थे। वे दक्षिणदिशारूपिणी सुन्दरीके भालतिलक थे। उन्होंने एक हुंकारमात्रसे राजा नहुषको देवलोकसे पृथिवीपर गिराकर अपना प्रभाव प्रद-र्शित किया था। उन महामुनि अगस्त्यकी धर्मपत्नी लोपामुद्राने अपने हाथों थाले बनाकर बहुतेरे वृक्ष लगाये थे और पानी दे देकर उन्हें बढ़ाया था। उनको वे अपने पुत्र सदृश मानतीं थीं। उन्हीं वृक्षोंसे वह आश्रम सुशोभित था। अगस्त्यतनय महर्षि दृढ़दस्युने उस आश्रमको पवित्र किया था। क्योंकि वहाँ ही उन्होंने पालाशदंड धारण करके ब्रह्मचर्यव्रत लिया था और कमरमें मूँजकी करधनी बाँधी थी। वे हरे पत्तोंका बना दोना हाथमें लेकर कुटी-कुटीपर जाकर भिक्षा माँगते थे। आश्रमके लिए अत्यधिक ईंधन जुटानेके कारण पिता अगस्त्यने उनका दूसरा नाम 'इध्मवाह' रख दिया था। उस आश्रमके चारों ओर सुग्गे जैसे हरे-हरे केलेके वृक्ष लगे हुए थे। इससे उस आश्रमका प्रदेश कुछ-कुछ काला पड़ गया था। उस आश्रमके पास ही गोदावरी नदी बहती थी। उसके प्रखर वेगको देखकर ऐसा लगता था कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिपीतसागरमार्गानुगतयेव बद्धवेणिकया गोदावर्या परिगतमाश्रमपदमासीत्।

यत्र च दशरथवचनमनुपालयन्नुत्सृष्टराज्यो दशवदनलक्ष्मीविभ्रमविरामो रामो महामुनिमगस्त्यमनुचरन्सह सीतया लक्ष्मणोपरचितरुचिरपर्णशालः पञ्चवट्यां कञ्चित्कालं सुखमुवास। चिरशून्येऽद्यापि यत्र शाखानिलीननिभृतपांडुकपोतपङ्क्तयोऽमललग्नतापसाग्निहोत्रधूमराजय इव लक्ष्यन्ते तरवः। वलिकर्मकुसुमान्युद्धरन्त्याः सीतायाः करतलादिव संक्रान्तो यत्र रागः स्फुरति लताकिसलयेषु। यत्र च पीतोद्गीर्णजलनिधिजलमिव मुनिना निखिलमाश्रमोपान्तवर्तिषु महाह्रदेषु। यत्र च दशरथसुतनिकरनिशितशरनिपातनिहतरजनीचरबलबहलरुधिरसिक्तमूलमद्यापि तद्रागाविद्धनिर्गतपलाशमिवाभाति नवकिसलयमरण्यम्। अधु-

---

मानो समुद्रके अगस्त्य द्वारा पी लिये जानेपर वह माथेपर विधवासदृश एक वेणी धारण करके अपने पतिका अनुसरण कर रही थी।

वहाँ ही महाराज दशरथकी आज्ञाका पालन करनेके लिए राज्य त्यागकर रावणकी राज्यलक्ष्मीके विलासका अन्त करनेवाले भगवान् राम महामुनि अगस्त्यकी सेवा करते हुए लक्ष्मणके हाथों निर्मित पर्णकुटीमें सीताके साथ कुछ समय सानन्द रहे थे। चिरकालसे सूने पड़े उस आश्रममें आज भी वृक्षोंकी शाखाओंपर चुपचाप बैठे हुए कबूतरोंसे वे वृक्ष इस प्रकार दीखते हैं, जैसे तपस्वियोंके अग्निहोत्रसे उठे धुएँकी घटा छायी हो। पूजाके निमित्त फूल चुनती हुई सीताके करकमलोंसे छूटकर लगा हुआ लाल रंग आज भी मानों वहाँ लताओं और पत्तियोंपर चमकता दीखता है। उस आश्रमके आस-पास बहुतेरे बहुत बड़े-बड़े सरोवर विद्यमान हैं, जिन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानो पहले समुद्रको पीकर अगस्त्यमुनिने उसे फिर उन सरोवरोंमें उगल दिया है। उस वनको देखकर ऐसा मालूम पड़ता है कि जैसे भगवान् रामचन्द्रके तीक्ष्ण बाणोंसे मरे हुए राक्षसोंके गाढ़े लाल रंगके रुधिरसे जड़ोंकी सिंचाई होनेके कारण अब भी उन वृक्षोंमें लाल रंगके ही पत्ते निकलते हैं। महारानी सीताके हाथों पले बूढ़े मृगोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाऽपि यत्र जलधरसमये गम्भीरमभिनवजलधरनिवहनिनादमाकर्ण्य भगवतो रामस्य त्रिभुवनविवरव्यापिनश्चापघोषस्य स्मरन्तो न गृह्णन्ति शष्पकवलमजस्रमश्रुजललुलितदृष्टयो वीक्ष्य शून्या दश दिशो जराजर्जरितविषाणकोटयो जानकीसंवर्धिता जीर्णमृगाः। यस्मिन्ननवरतमृगयानिहतशेषवनहरिणप्रोत्साहित इव कृतसीताविप्रलम्भः कनकमृगो राघवमतिदूरं जहार। यत्र च मैथिलीवियोगदुःखदुःखितौ रावणविनाशसूचकौ चन्द्रसूर्याविव कबन्धग्रस्तौ समं रामलक्ष्मणौ त्रिभुवनभयं सहचक्रतुः। अत्यायतश्च यस्मिन्दशरथसुतबाणनिपातितो योजनबाहोर्बाहुरगस्त्यप्रसादेनागतनाहुषाजगरकायशङ्कां चकार ऋषिगणस्य। जनकतनया च भर्त्रा विरहविनोदनार्थमुटजाभ्यन्तरलिखिता यत्र रामनिवासदर्शनोत्सुका पुनरिव धरणातलादुल्लसन्ती वनचरैरद्याप्यालोक्यते।

सींगें जर्जर हो गयी हैं। वर्षाऋतुमें नवीन मेघोंका गर्जन सुनकर उन्हें आज भी श्रीरामचन्द्रके त्रिभुवनव्यापी धनुषटंकोरका स्मरण हो जाता है, किन्तु चपल नेत्रोंसे सदा अश्रुधारा बहती रहनेके कारण वे दसों दिशाओंको शून्य देखकर एक ग्रास भी घास नहीं खाते। उस वनमें निरन्तर शिकार खेलकर रामचन्द्रने प्रायः समस्त मृगोंको मार डाला था, जैसे उसीसे उत्तेजित होकर सीताको खोधा देते हुए सुवर्णमृग रामको बहुत दूर भगा ले गया था। वहाँ ही सीताके बिछोहसे दुःखी तथा रावणके विनाशको सूचित करते हुए सूर्य-चन्द्रके समान तेजस्वी राम-लक्ष्मणने कबन्धरूपी राहुसे घिरकर तीनों भुवनोंको भयभीत कर दिया था। उन्हीं दिनों रामचन्द्रके बाणसे कटकर गिरे योजन-बाहु (कबन्ध) की अति विशाल भुजा देखकर वहाँके ऋषियोंको ऐसा भान हुआ था कि मानो कुपित अगस्त्यको प्रसन्न करनेके लिए स्वयं अजगर-रूपसे नहुष पुनः धरतीपर उतर आया हो। वहाँ ही वियोगव्यथाको दूर करनेके लिए रामचन्द्रने पर्णकुटीमें सीताका चित्र बनाया था। उस चित्रको वहाँके भील अब भी इस प्रकार उत्सुक होकर देखते हैं कि मानों वह आश्रम देखनेके लिए सीता फिर धरतीसे बाहर निकल आयी हों।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्य च संप्रत्यपि प्रकटोपलक्ष्यमाणपूर्ववृत्तान्तस्यागस्त्याश्रमस्य नातिदूरे जलनिधिपानप्रकुपितवरुणप्रोत्साहितेनागस्त्यमत्सरात्तदाश्रमसमीपवर्त्यपर इव वेधसा जलनिधिरुत्पादितः प्रलयकालविघट्टिताष्टदिग्विभागसंधिबन्धं गगनतलमिव भुवि निपतितम्, आदिवराहसमुद्धृतधरामण्डलस्थानमिव जलपूरितम्, अनवरतमज्जदुन्मदशबरकामिनीकुचकलशलुलितजलम्, उत्फुल्लकुमुदकुवलयकह्लारम्, उन्निद्रारविन्दमधुद्रवबद्धचन्द्रकम्, अलिकुलपटलान्धकारितसौगन्धिकम्, सारसितसमदसारसम्, अम्बुरुहमधुपानमत्तकलहंसकामिनीकृतकोलाहलम्, अनेकजलचरपतंगशतसंचलनचलितवाचालवीचिमालम्, अनिलोल्लासितकल्लोलशिखरसीकरारब्धदुर्दिनम्, अशङ्किताववतीर्णाभिरम्भःक्रीडा-

---

जहाँपर पुराना इतिहास अब भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, उस अगस्त्याश्रमके पास ही अगाध, अनन्त, अद्वितीय और जलसे भरपूर पम्पा-नामका एक पद्मसरोवर है। उसे देखकर ऐसा लगता था कि मानों समग्र समुद्र पी लेनेके कारण कुपित वरुणदेव द्वारा उकसाये हुए ब्रह्माने अगस्त्य-मुनिसे द्वेष करते हुए वहाँ एक अन्य महासमुद्र उत्पन्न कर दिया है। प्रलयके समय पूर्व-पश्चिमादि आठों दिशाओंके सन्धिबन्धन टूट जानेसे धरतीपर पड़े हुए आकाशके समान वह सरोवर दीख रहा था। उसे देखकर ऐसा लगता था कि मानों प्रलयकालमें महावराहके द्वारा उठाया गया जलपूर्ण धरित्री-मण्डलका वह मूलस्थान हो। सदा स्नान करती हुई मस्त भीलनियोंके कुचोंसे आहत होकर उसका जल चञ्चल होता रहता है। उसमें कुमुद (श्वेत कमल) कुवलय (नील कमल) और कह्लार (लाल कमल) सदा खिले रहते हैं। उन विकसित कमलोंसे टपकती हुई मधुबिन्दुओंसे जलमें चन्द्रमण्डल जैसा बन जाता है। भ्रमरसमूहोंके बैठनेसे उन कमलोंपर जैसे अन्धकार छाया रहता है। मदमत्त सारस उस सरोवरमें मधुर गायन गाते हैं। कमलोंका मधु पीकर मतवाली कलहंसिनियाँ सदा शोर मचाया करती हैं। अगणित जलचर पक्षियोंके चलने-फिरनेसे क्षुब्ध तरङ्गोंका शब्द होता रहता है। वायुके झोंकेसे नाचती हुई तरङ्गोंकी महीन-महीन फुहारें उड़-उड़कर उस प्रदेशको सदा मेघाच्छन्न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रागिणीभिः स्नानसमये वनदेवताभिः केशपाशकुसुमैः सुरभीकृतम्, एकदेशावतीर्णमुनिजनापूर्यमाणकमंडलुकलजलध्वनिमनोहरम्, उन्मिषदुत्पलवनमध्यचारिभिः सवर्णतया रसितानुमेयैः कादम्बैरासेवितम्, अभिषेकावतीर्णपुलिन्दराजशबरीकुचचन्दनधूलिधवलिततरम्, उपान्तकेतकीरजःपटलबद्धकूलपुलिनम्, आसन्नाश्रमागततापसक्षालितार्द्रवल्कलकषायपाटलतटजलम्, उपतटवृक्षपल्लवानिलवीजितम्, अविरलतमालवीथ्यन्धकारिताभिर्वालिनिर्वासितेन सञ्चरता प्रतिदिनमृष्यमूकवासिना सुग्रीवेणावलुप्तफललघुलताभिरुदवासितापसानां देवतार्चनोपयुक्तकुसुमाभिरुत्पतज्जलचरपक्षपुटविगलितजलविन्दुसेकसुकुमारकिसलया-

---

किये रहती हैं। जलक्रीडाकी अनुरागिनी वनदेवियाँ जब स्नानके लिए उस सरोवरमें उतरती हैं तो उनके जूड़ेके फूल जलमें गिर जाते हैं, जिससे वह सुगन्धित हो जाता है। उसके घाटपर मुनियोंके कमण्डल भरनेको ध्वनिसे वह और भी मनोहर लगने लगता है। प्रफुल्लित कमलवनमें भ्रमण करनेवाले तथा समानवर्ण होनेके कारण केवल स्वरसे पहचाने जानेवाले कलहंसोंसे वह सरोवर सदा भरा रहता है। स्नानके लिए जलमें उतरी हुई भीलसरदारकी सुन्दरियोंके स्तनोंमें लगे चन्दनके रजसे उसकी तरंगें सफेद हो जाती हैं। उस सरोवरके पास ही उगे हुए केवड़ोंके रजसे उसका तटीय प्रदेश रेतीला हो गया है। समीपवर्ती आश्रमोंसे आये हुए मुनियोंके वल्कल वसन धुलनेके कारण उसके तटका जल गँदला और गुलाबी हो जाता है। तटपर उगे वृक्षोंकी पत्तियोंसे छनकर आयी हुई हवाके झोकोंसे उसका जल कभी स्थिर नहीं हो पाता। उस सरोवरके तटपर तमालवृक्षोंकी लम्बी कतारोंके कारण बहुतेरे अन्धकारपूर्ण कुञ्ज बन गये हैं। वालि द्वारा राज्यसे निर्वासित होकर मारे-मारे फिरनेवाले सुग्रीवके नित्य फल तोड़ते रहनेके कारण उन वृक्षोंकी शाखायें बहुत हल्की हो गयी हैं। जलमें खड़े होकर तप करनेवाले तपस्वी उनके पुष्पोंको देवार्चनके उपयोगमें लाते हैं। बहुतेरे जलचर पक्षियोंके पंखोंसे गिरी हुई जलबिन्दुओंके पड़नेसे उनकी नन्हीं-नन्हीं टहनियाँ मुलायम पड़ गयी हैं। लताकुञ्जोंके भीतर जब मोर नाचते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिर्लतामण्डपतलशिखण्डिमण्डलारब्धताण्डवाभिरनेककुसुमपरिमलग्राहिणीभिर्वनदेवताभिः स्वश्वासवासिताभिरिव वनराजिभिरुपरुद्धतीरम्, अपरसागराशङ्किभिः सलिलमादातुमवतीर्णजलधरैरिव वहलपङ्कमलिनैर्वनकरिभिरनवरतमापीयमानसलिलम्, अगाधमनन्तमप्रतिममपां निधानं पम्पाभिधानं पद्मसरः। यत्र च विकचकुवलयप्रभाश्यामायमानपक्षपुटान्यद्यापि मूर्तिमद्रामशापग्रस्तानीव मध्यचारिणालोक्यन्ते चक्रवाकनाम्नां मिथुनानि।

तस्यैवंविधस्य सरसः पश्चिमे तीरे राघवशरप्रहारजर्जरितबालतरुखण्डस्य च समीपे दिग्गजकरदण्डानुकारिणा जरदजगरेण सततमावेष्टितमूलतया बद्धमहालवाल इव तुंगस्कन्धावलम्बिभिरनिलवेल्लितैरहि-

---

हैं तो सहसा बहुतेरे फूलोंकी सुगन्धि एक साथ गमक उठती है, जिससे ऐसा मालूम पड़ता है कि मानो वनदेवियोंके श्वासकी सुगन्धि फैल गयी है। अपने तनमें अत्यधित कीचड़ लगा लेनेके कारण मलीन वनैले हाथियोंका झुण्ड नित्य उसका जल पीने आता है। उन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानो उस सरोवरको दूसरा समुद्र समझकर मेघगण जल लेनेको उतर पड़े हों। वहाँ चकवी-चकवा बराबर घूमते रहते हैं। सरोवरमें खिले नील कमलोंकी दीप्तिसे उनके पंख काले पड़ जाते हैं। उन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानो वे साक्षात् रामके शापसे ग्रस्त प्राणी हों। (पूर्वकालमें जब राम सीताके वियोगसे व्यथित होकर विषाद कर रहे थे। तब चकवे उनपर हँसे थे। इससे क्रुद्ध होकर रामने उन्हें शाप दे दिया कि मेरी ही तरह तुम्हें भी अपनी प्रियतमाका बिछोह सहना पड़ेगा। तभीसे नित्य रातके समय चकवा-चकवीका जोड़ा बिछुड़ जाया करता है।)

उसी सरोवरके पश्चिमी तटपर रामके बाणोंसे जर्जरित प्राचीन तालवृक्षोंके कुञ्जके निकट एक बहुत पुराना सेमरका वृक्ष है। उस वृक्षकी जड़पर दिग्गजकी सूँड़के समान भीषण एक बूढ़ा अजगर सदा लिपटा रहता है। जिसे देखकर ऐसा जान पड़ता है कि मानो वह उस शाल्मलीवृक्षका थाला हो। उसकी ऊँची शाखाओंपर पवनके झोंकेसे हिलती हुई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निर्मोकैर्धृतोत्तरीय इव, दिक्चक्रवालपरिमाणमिव गृह्णता भुवनान्तरालविप्रकीर्णेन शाखासंचयेन प्रलयकालताण्डवप्रसारितभुजसहस्रमुडुपतिशेखरमिव विडम्बयितुमुद्यतः, पुराणतया पतनभयादिव वायुस्कन्धलग्नः, निखिलशरीरव्यापिनीभिरतिदूरोन्नताभिर्जीर्णतया शिराभिरिव परिगतो व्रततिभिः, जरातिलकबिन्दुभिरिव कण्टकैराचिततनुः, इतस्ततः परिपीतसागरसलिलैर्गगनागतैः पत्ररथैरिव शाखान्तरेषु निलीयमानैः क्षणमम्बुभारालसैरार्द्रीकृतपल्लवैर्जलधरपटलैरप्यदृष्टशिखरः, तुङ्गतया नन्दनवनश्रियमिवावलोकयितुमभ्युद्यतः, स्वसमीपवर्तिनामुपरि संचरतां गगनतलगमनखेदायासितानां रविरथतुरङ्गमाणां सृक्कपरिस्रुतैः फेनपटलैः संदेहिततूलराशिभिर्धवलीकृतशिखरशाखः, वनगजकपालकण्डूय-

---

साँपकी केंचुलें लटकती रहती हैं, जिनसे ऐसा लगता है कि मानो उस वृक्षने केंचुलोंका दुपट्टा ओढ़ लिया हो। जैसे दसों दिशाओंका ओर-छोर नापती हुई उसकी विशाल शाखायें अन्तरिक्षमें फैली हुई हैं। इससे ऐसा लगता है कि जैसे प्रलयकालमें ताण्डवनृत्यके समय सहस्र भुजायें फैलाये हुए शिवजीका वह वृक्ष उन्हीं शाखाओंसे तिरस्कार कर रहा हो। बहुत पुराना होनेके कारण जैसे उसने अपनी शाखारूपी भुजायें फैलाकर वायुका सहारा ले रक्खा है। उस सेमर-वृक्षके समस्त शरीरमें लम्बी-लम्बी लतायें लिपटी थीं। उन्हें देखनेसे ऐसा प्रतीत होता था कि मानों बुढ़ापेके कारण उसकी सारी नसें बाहर निकली दीख रही हों। उसका सारा तना काँटोंसे भरा है। वे काँटे उसके शरीरमें बुढ़ौतीके काले दाग सरीखे दीखते हैं। पानीके बोझसे धीरे-धीरे चलते हुए मेघ सुस्तानेके लिए तनिक देर उसकी शाखाओंपर रुककर पत्तोंको भिगो देते हैं, किन्तु बहुत ऊँचा होनेके कारण वे उसके सिरेतक नहीं जा पाते। ऊन्हें देखकर यह भान होता है कि मानो समुद्रका जल पीकर पक्षी उसपर बैठे हैं। वह वृक्ष बहुत अधिक ऊँचा है। उसे देखनेसे ऐसा लगता है कि मानो वह मस्तक उठाकर नन्दन वनकी शोभा देखनेको उद्यत हो रहा है। उसकी चोटीकी शाखायें रुईके गालों जैसी श्वेत हो गयी हैं। जिन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानो आकाशमें उसकी चोटीके पास ही चलनेवाले सूर्यरथके घोड़े थक गये हैं और उनके मुखसे फेन निकलकर वृक्षपर फैल गया है। जब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नलग्नमदनिलीनमत्तमधुकरमालेन लोहशृङ्खलाबन्धननिश्चलेनेव कल्पस्थायिना मूलेन समुपेतः, कोटराभ्यन्तरनिविष्टैः स्फुरद्भिः सजीव इव मधुकरपटलैः, दुर्योधन इवोपलक्षितशकुनिपक्षपातः, नलिननाभ इव वनमालोपगूढः, नवजलधरव्यूह इव नभसि दर्शितोन्नतिः, अखिलभुवनतलावलोकनप्रासाद इव वनदेवतानाम् अधिपतिरिव दण्डकारण्यस्य, नायक इव सर्ववनस्पतीनां, सखेव विन्ध्यस्य, शाखाबाहुभिरुपगुह्येव विन्ध्याटवीं स्थितो महाञ्जीर्णः शाल्मली।

तत्र च शाखाग्रेषु कोटरोदरेषु स्कन्धसन्धिषु जीर्णवल्कलविवरेषु महावकाशतया विश्रब्धविरचितकुलायसहस्राणि दुरारोहतया विगतभयानि नानादेशसमागतानि शुकशकुनिकुलानि प्रतिवसन्ति स्म। यैः

वनैले हाथी मस्तक खुजलानेके लिए अपना मस्तक उसकी जड़पर रगड़ते हैं, तब उसमें गजमद लिपट जाता है। उसपर मतवाले भौंरोंका झुण्ड बैठा रहता है। उन्हें देखकर ऐसी शंका होती है कि मानो लोहेका सिकड़ बँधा होनेके कारण उसकी जड़ कल्पस्थायिनी हो गयी है। उसकी खोखलोंके भीतर प्रविष्ट चपल मधुकरोंके कारण वह वृक्ष सजीव जैसा दीखता है। जैसे दुर्योधन अपने मामा शकुनीका पक्षपात करता था, उसी प्रकार उस वनमें पक्षियोंके पंख गिरते हैं। जैसे भगवान् विष्णु सदा वनमाला पहने रहते हैं, उसी प्रकार वह वृक्ष वनपंक्तिसे घिरा है। जैसे नये मेघ श्रावण मासमें ऊँचे उठते हैं, उसी तरह वह वृक्ष आकाशमें अपना मस्तक ऊँचा किये हुए है। सभी भुवनोंको देखनेके लिए मानो वृक्ष वह वनदेवियोंका ऊँचा महल है। जैसे वह समस्त दण्डकारण्यका अधिपति है। वह जैसे उस वनके सभी वृक्षोंका अधिष्ठाता है। विन्ध्यपर्वतका तो वह मित्र ही है और जैसे अपनी शाखारूपिणी भुजाओंसे उसने सारे विन्ध्यवनको लपेट रक्खा है।

उस सेमर वृक्षकी शाखाओंके अग्रभागपर, कोटरोंके भीतर, पत्तोंकी झुरमुटमें, सन्धिस्कन्धोंमें और पुरानी छालोंके छिद्रोंमें प्रचुर स्थान होनेके कारण सहस्रों घोसले बनाकर देश-देशान्तरसे आये शुक आदि पक्षी उसपर निवास करते थे। विशेष ऊँचा होनेके कारण उसपर किसीका चढ़ना बहुत कठिन था। इस कारण वहाँ उनको अपने विनाशका कोई भय नहीं था। दिन-रात

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिणामविरलदलसंहतिरपि स वनस्पतिरविरलदलनिचयश्यामल इवोपलक्ष्यते दिवानिशं निलीनैः ।

ते च तस्मिन्नतिवाह्यातिवाह्य निशामात्मनीडेषु प्रतिदिनमुत्थायोत्थायाहारान्वेषणाय नभसि विरचितपंक्तयो, मदकलबलभद्रहलमुखाक्षेपविकीर्णबहुस्रोतसमम्बरतले कलिन्दकन्यामिव दर्शयन्तः, सुरगजोन्मूलितविगलदाकाशगङ्गाकमलिनीशङ्कामुत्पादयन्तः, दिवसकररथतुरगप्रभानुलिप्तमिव गगनतलं प्रदर्शयन्तः, संचारिणीमिव मरकतस्थलीं विडम्बयन्तः, शैवलपल्लवावलीमिवाम्बरसरसि प्रसारयन्तः, गगनावततैः पक्षपुटैः कदलीदलैरिव दिनकरखरकरनिकरपरिखेदितान्याशामुखानि वीजयन्तः, वियति विसारिणीं शष्पवीथीमिवारचयन्तः, सेन्द्रायुधमिवान्तरिक्षमादधाना विचरन्ति स्म । कृताहाराश्च पुनः प्रतिनिवृत्त्यात्म-

---

उन पक्षियोंके रहनेसे पुराना होनेके कारण अल्प पत्तोंवाला होता हुआ भी वह वृक्ष बहुतेरे पत्तोंवाला जैसा श्यामवर्णका दीखता था ।

वे पक्षी उस वृक्षपर बनाये हुए अपने-अपने कोटरोंमें रात्रि बिताते और नित्य प्रातःकाल उठकर चारा खोजनेके लिए गोल बाँधकर आकाशमें उड़ जाया करते थे । उनके उड़नेपर ऐसा लगता था कि मानो मतवाले बलदेव द्वारा हलके अग्रभागसे ऊपर आकाशमें फेंकी हुई यमुना अनेकानेक प्रवाहोंमें विभक्त होकर बह रही हो अथवा ऐरावतकी सूँड़से उखाड़कर गिरायी हुई मन्दाकिनी (आकाशगङ्गा) की कमलिनयाँ हों । उस समय ऐसा लगता था कि मानो वे पक्षी सूर्यरथके घोड़ोंकी दीप्तिसे समस्त गगनमण्डलको लीप रहे हैं । वे अपनी प्रभासे जैसे किसी चलती-फिरती मरकतमणिकी फर्शका अनादर कर रहे थे । उड़ते समय जैसे वे सेवारकी पत्तियोंको आकाशमें फैला रहे थे । जब केलेके पत्तों सरीखे अपने पंखोंको वे आकाशमें फैलाते थे, तब ऐसा लगता था कि मानो झुलसानेवाली सूर्यकी किरणोंसे खिन्न दिशाओंके मुखपर पंखा झल रहे हों । उड़नेके समय वे ऐसे दीखते थे कि मानो कोई दूबका खेत आकाशमें उड़ा जा रहा है और उसके कारण आकाशमें इन्द्रधनुष बनते जा रहे हैं । सद्यः मारे गये हिरनके रुधिरसे रँगे हुए सिंहके लाल नखाग्रकी भाँति उनकी चोंचें लाल थीं। दिनभर चारा चुगनेके बाद शामको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुलायावस्थितेभ्यः शावकेभ्यो विविधान्फलरसान्कलममञ्जरीविकारांश्च प्रहतहरिणरुधिरानुरक्तशार्दूलनखकोटिपाटलेन चञ्चुपुटेन दत्त्वा दत्त्वाधरीकृतसर्वस्नेहेनासाधारणेन गुरुणाऽपत्यप्रेम्णा तस्मिन्नेव क्रोडान्तर्निहिततनयाः क्षपाः क्षपयन्ति स्म।

एकस्मिंश्च जीर्णकोटरे जायया सह निवसतः पश्चिमे वयसि वर्तमानस्य कथमपि पितुरहमेको विधिवशात्सूनुरभवम्। अतिप्रबलया चाभिभूता ममैव जायमानस्य प्रसववेदनया जननी मे परलोकमगमत्। अभिमतजायाविनाशशोकदुःखितोऽपि खलु तातः सुतस्नेहादभ्यन्तरे निरुध्य पटुप्रसरमपि शोकमेकाकी मत्संवर्धनपर एवाभवत्। अतिपरिणतवयाश्च कुशचीरानुकारिणीमल्पावशिष्टजीर्णपिच्छजालजर्जरामवस्रस्तांसदेशशिथिलामपगतोत्पतनसंस्कारां पक्षसंततिमुद्वहन्, उपारूढकम्पतया संतापकारिणीमङ्गलग्नां जरामिव विधुन्वन्नकठोरशेफालिकाकुसुमनालपिञ्जरेण कमलमञ्जरीदलमसृणितक्षीणोपान्त्यलेखेन स्फुटिताग्र-

---

लौट-लौटकर अपने घोसलोंमें बैठे हुए बच्चोंके लिए अपनी चोचोंमें विविध फलोंके रस तथा धानकी बालोंकी किनकी आदि लाकर उन्हें खिलाते और सब स्नेहोंमें श्रेष्ठ सन्ततिस्नेहवश अपने पंखोंमें बच्चोंको छिपाकर रात बिताते थे।

उसी शाल्मली वृक्षके एक पुराने खोखलेमें मेरे वृद्ध पिता मेरी माताके साथ रहा करते थे। संयोगवश अपने पिताका मैं एकमात्र पुत्र था। जब मेरा जन्म होनेको था, तभी तीव्र प्रसववेदनासे मेरी माता स्वर्ग चली गयी। अपनी प्रिया भार्याके मर जानेसे मेरे पिताजीको अपार कष्ट हुआ। तब भी स्नेहवश उस महान् शोकके प्रबल वेगको उन्होंने भीतर ही दबा दिया और एकाकी होते हुए भी वे मुझे पालनेका प्रयत्न करने लगे। बुढ़ापेके कारण उनके शरीरमें कुश तथा चीथड़ेके समान बहुत थोड़े पंख शेष रह गये थे। वे भी कंधेके नीचे झुक जानेके कारण शिथिल पड़ गये थे और उनमें उड़नेकी सामर्थ्य नहीं रह गयी थी। प्रबल बुढ़ौतीके कारण उड़ते समय उनका शरीर काँपने लगता था। इससे ऐसा भान होता कि जैसे स्वयं अपने आपमें व्याप्त होकर वे अति सन्तापदायिनी वृद्धावस्थाको ही कँपा रहे हों। निर्गुण्डीके फूलके डंठल सरीखी उनकी चोंच पीली पड़ गयी थी। उस चोंचका बीचमें फटा हुआ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कोटिना चञ्चुपुटेन परनीडपतिताभ्यः शालिवल्लरीभ्यस्तण्डुलकणानादा-यादाय वृक्षमूलनिपतितानि च शुककुलायदलितानि फलशकलानि समाहृत्य परिभ्रमितुमशक्तो मह्यमदात्। प्रतिदिवसमात्मना च मदुप-भुक्तशेषमकरोदशनम्।

एकदा तु प्रभातसंध्यारागलोहिते गगनतलकमलिनीमध्वनुरक्तपक्ष-पुटे वृद्धहंस इव मन्दाकिनीपुलिनादपरजलनिधितटमवतरति चन्द्रमसि, परिणतरङ्कुरोमपाण्डुनि व्रजति विशालतामाशाचक्रवाले, गजरुधिररक्त-हरिसटालोमलोहिनीभिः प्रतप्तलाक्षिकतन्तुपाटलाभिरायामिनीभिरशि-शिरकिरणदीधितिभिः पद्मरागशलाकासंमार्जनीभिरिव समुत्सार्यमाणे गगनकुट्टिमकुसुमप्रकरे तारागणे, संध्यामुपासितुमुत्तराशावलम्बिनि मानससरस्तीरमिवावतरति सप्तर्षिमण्डले, तटगतविघट्टितशुक्तिसंपुट-

---

अग्रभाग धानकी बालें काटनेके कारण घिसकर चिकना हो गया था। अतएव वे अन्य पक्षियोंके घोंसलोंसे नीचे गिरे धानके पुआलमेंसे चावलोंकी किनकियाँ चुन तथा उस वृक्षकी जड़पर पड़े एवं तोतोंके कुतरे फलोंके टुकड़े बटोरकर मुझे खिलाते थे। क्योंकि उनके पंखोंमें विशेष उड़नेकी शक्तिका अभाव था। इस तरह वे प्रतिदिन मुझे खिलाकर मुझसे बचा आहार स्वयं खाते थे।

सहसा एक दिन मैंने उस महावनमें शिकारियोंका महान् कोलाहल सुना। उस समय प्रभातकालीन सन्ध्याके लाल रंगसे रंगा हुआ चन्द्रमा मन्दाकिनीके तटसे पश्चिमी समुद्रके किनारेपर उतर रहा था। उसे देखनेपर ऐसा लगता था कि जैसे आकाशरूपिणी कमलिनीके रससे रंगा हुआ लाल पखनोंवाला कोई बूढ़ा हंस हो। वृद्ध रंकुमृगके रोयें सदृश श्वेत दिङ्मण्डल प्रतिक्षण विशाल-तर होता जा रहा था। सूर्यनारायणकी किरणें वन्य गजके रुधिरसे रंगी सिंहकी गर्दनके बाल सरीखी लाल और पिघले लाखके तार जैसी गुलाबी दीख रही थीं। वे आकाशमण्डलसे टिमटिमाते तारोंको दूर हटा रही थीं। जिन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानो वे सूर्यकी किरणें पद्मरागमणिकी बनी सींकोंकी बढनी हैं और आकाशरूपी फर्शपर बिखरे फूलोंको बुहार रही हैं। सप्तर्षियोंके सात तारे उत्तर दिशाको जाते हुए ऐसे लग रहे थे कि मानो वे प्रातःकालीन सन्ध्यावन्दन करनेके लिए मानसरोवरके तटपर जा रहे हों। समुद्रके तटपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विप्रकीर्णमरुणकरप्रेरणाधोगलितमुडुगणमिव मुक्ताफलनिकरमुद्वहति धवलितपुलिनमुदन्वति पूर्वेतरे, तुषारबिन्दुवर्षिणि, विबुद्धशिखिकुले, विजृम्भमाणकेसरिणि, करिणीव दम्बकप्रबोध्यमानसमदकरिणि, क्षपाजलजडकेसरं कुसुमनिकरमुदयगिरिशिखरस्थितं सवितारमिवोद्दिश्य पल्लवाञ्जलिभिः समुत्सृजति कानने, रासभरोमधूसरासु वनदेवताप्रासादानां तरूणां शिखरेषु पारावतमालायमानासु धर्मपताकास्विव समुन्मिषन्तीषु तपोवनाग्निहोत्रधूमलेखासु, अवश्यायसीकरिणि लुलितकमलवने रतखिन्नशबरसीमन्तिनीस्वेदजलकणापहारिणि वनमहिषरोमन्थफेनबिन्दुवाहिनि चलितपल्लवतालास्योपदेशव्यसनिनि विघटमानकमलखण्डमधुसीकरासारवर्षिणि कुसुमामोदतर्पितालिजाले निशावसानजातजडिम्नि मन्दमन्दसंचारिणि प्रवाति प्राभातिके मातरिश्वनि, कमलवनप्रबोधमङ्गलपाठकानामिभगण्डडिण्डिमानां मधुलिहां कुमुदोदरेषु

जाकर फटी सीपियोंके संपुटसे बाहर निकलकर छितराये हुए मोतियोंसे पश्चिमी समुद्रका सारा किनारा उज्ज्वल हो गया था। उस समय वे मोती सूर्यकी लाल किरणों द्वारा धरतीपर फेंके गये नक्षत्रों जैसे दीख रहे थे। तुषार (पाले) की बूँदें टपक रही थीं, मयूर जाग गये थे, सिंह जँभाइयाँ ले रहे थे, हथिनियाँ मतवाले हाथियोंको जगा रही थीं, सारी रात ओस पड़नेके कारण जिनकी केसरें ठिठुर गयी थीं, वे फूल सूर्योदयकालमें टहनियोंसे गिर-गिरकर जैसे सूर्यनारायणको पुष्पाञ्जली अर्पित कर रहे थे। गधेके रोयें जैसी धूमिल तपोवनके अग्निहोत्रकी धूमराशि तथा वनदेवियोंके प्रासाद सदृश ऊँचे-ऊँचे वृक्षोंके शिखरोंपर विराजमान कबूतरोंकी कतार अग्निहोत्रके धुएँकी धर्मपताका जैसी लग रही थी। ओसकी बूँदोंसे शीतल प्रभातपवन धीरे-धीरे बहकर कमलवनको हिला रहा था। वह कामक्रीड़ासे थकी शबरसुन्दरियोंके पसीनेको सुखाता हुआ वन्य महिषोंकी जुगालीसे निःसृत झागोंकी महीन बूँदोंको साथ लेकर कम्पित पत्तोंवाली पतली शाखाओंको अपने झोंकोंसे नचा रहा था। वह प्रभातपवन प्रफुल्लित कमलोंका रस बरसाता हुआ फूलोंकी मस्त सुगन्धिसे भ्रमरवृन्दको तृप्त कर रहा था। रात्रिका अन्त होनेके कारण उसमें शीतलता आ गयी थी। कमलोंके जागरणके समय जैसे मंगलपाठ करनेवाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विघटमानदलपटलनिरुद्धपद्मसंहतीनामुच्चरत्सु हुंकारेषु, प्रभातशिशिरवा-व्याहतमुक्तप्रजतुरसाक्लिष्टपक्ष्ममालमिव सशेषनिद्राजिह्मतारं चक्षुरुन्मीलयत्सु शनैःशनैरूषरशय्याधूसरक्रोडरोमराजिषु वनमृगेषु, इतस्ततः संचरत्सु वनचरेषु, विजृम्भमाणे श्रोत्रहारिणि पम्पासरःकलहंसकोलाहले, समुल्लसति नर्तितशिखण्डिनि मनोहरे वनगजकर्णतालशब्दे, क्रमेण च गगनतलमवतरतो दिवसकरवारणस्यावचूलचामरकलाप इवोपलक्ष्यमाणे मञ्जिष्ठारागलोहिते किरणजाले शनैःशनैरुदिते भगवति सवितरि पम्पासरःपर्यन्ततरुशिखरसंचारिण्यध्यासितगिरिशिखरे, दिवसकरजन्मनि हृततारे पुनरिव कपीश्वरे वनमभिपतति बालातपे, स्पष्टे जाते प्रत्यूषसि नचिरादिव दिवसाष्टमभागभाजि स्पष्टभासि भास्वति

भौंरे गुंजारते हुए हाथियोंके गंडस्थलोंसे वाद्ययंत्रका काम ले रहे थे। संकुचित होती हुई कुमुदिनीकी पंखुड़ियाँ उन भ्रमरोंके पंखोंको समेटे ले रही थीं। वन-मृग धीरे-धीरे आँखें खोल रहे थे। प्रातःकालके शीतल समीरसे उनके नेत्र पीड़ित थे। नींद उचट जानेसे उन नेत्रोंकी पुतलियाँ तनिक टेढ़ी हो गयी थीं। उनकी पलकें जैसे तरल लाखके रससे चिपका दी गयी थीं। धूलभरी भूमिपर सोनेके कारण उनकी छातीके बाल मटमैले हो गये थे। वनचर भील इधर-उधर घूम रहे थे। पम्पासरके कलहंसोंका बढ़ता हुआ कोलाहल बरबस कानोंको अपनी ओर खींच रहा था। वनैले हाथियोंके कानोंकी फड़फड़ाहटकी मधुर ध्वनि हो रही थी। जिसे मेघगर्जन समझकर मस्त मयूर नाच रहे थे। मंजीठके समान लाल-लाल सूर्यकी किरणें तनिक-तनिक दिखाई देने लगी थीं। उस समय वे गगनमण्डलमें चढ़नेवाले सूर्यरूपी गजराजके गण्डस्थलपर उलटे लटकनेवाले चमर जैसी लग रही थीं। भगवान् भास्कर धीरे-धीरे उदित हो रहे थे। बालातप पम्पासरके तटवर्ती वृक्षोंकी फुनगियोंपर पहुँच रहा था। वह आकाशकी तारिकाओंको चुराकर इस तरह छिपा रहा था, जिस प्रकार सुग्रीवने बालिकी पत्नी तारका हरण कर लिया था' इससे ऐसा लगता था कि जैसे सुग्रीव फिर वहाँ आ गया हो। इस प्रकार बालातप उस महावनमें प्रविष्ट हो रहा था। कुछ ही देर बाद भली-भाँति सवेरा हो गया। जब पहर भर दिन चढ़ आया, तब सूर्यमण्डल अच्छी तरह दिखायी देने लगा। अब तोतोंके समुदाय अभिलषित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूते; प्रयातेषु च यथाभिमतानि दिगन्तराणि शुककुलेषु, कुलायनिलीननिभृतशुकशावकसनाथेऽपि निःशब्दतया शून्य इव तस्मिन्वनस्पतौ, स्वनीडावस्थित एव ताते मयि च शैशवादसंजातबलसमुद्भिद्यमानपक्षपुटे पितुः समीपवर्तिनि कोटरगते, सहसैव तस्मिन्महावने संत्रासितसकलवनचरः सरभससमुत्पतत्पतत्रिपक्षपुटशब्दसंततः भीतकरिपोतचीत्कारपीवरः प्रचलितलताकुलमत्तालिकुलक्वणितमांसलः परिभ्रमदुद्घोणवनवराहरवघर्घरो गिरिगुहासुप्तप्रबुद्धसिंहनिनादोपबृंहितः कम्पयन्निव तरून्भगीरथावतार्यमाणगङ्गाप्रवाहकलकलबहलो भीतवनदेवताकर्णितो मृगयाकोलाहलध्वनिरुदचरत्। आकर्ण्य च तमहमश्रुतपूर्वमुपजातवेपथुरर्भकतया जर्जरितकर्णविवरो भयविह्वलः समीपवर्तिनः पितुः प्रतीकारबुद्ध्या जराशिथिलपक्षपुटान्तरमविशम्।

अनन्तरं च सरभसमितो गजयूथपतिलुलितकमलिनीपरिमलः, इतः

दिशाओंको उड़ गये और कोटरोंमें निधड़क सोये बच्चोंके रहते हुए भी कोलाहलके अभावमें वह शाल्मली वृक्ष सूना-सूनासा दीखने लगा। उस समय मेरे पिता घोसलेमें ही थे और उनके साथ मैं भी था। बचपनके कारण अभी मेरे पंखोंमें उड़नेकी शक्ति नहीं आयी थी। उसी समय मैंने उस महावनमें शिकारियोंका कोलाहल सुना। जिससे वहाँके सभी वनचर भयभीत हो गये। घबराकर उड़नेवाले पक्षियोंके पंखोंकी ध्वनिसे वह कोलाहल चारों ओर फैल गया। हस्तिशावकोंके चीत्कारसे उसकी भीषणता बढ़ गयी। हिलती हुई लताओंपर बैठे भौंरे व्याकुल हो उठे और उनकी गुंजार तगड़ी हो गयी। ऊँची नाकवाले वनसुअरोंके स्वरसे वह कोलाहल कठोर हो उठा। गिरिकन्दराओंमें जागे सिंहोंके गर्जनसे वह घना होकर वृक्षोंको जैसे कँपाने लगा। राजा भगीरथके द्वारा स्वर्गसे लायी हुई गंगाकी धाराके समान उसका कलकल निनाद हो रहा था और वनदेवियाँ भी बड़े भयभीत भावसे उसे सुन रही थीं। उस कभी न सुने हुए भीषण कोलाहलको सुनकर मुझ शिशुके कान जैसे झनझना गये और मैं डरकर काँपने लगा। अत्यधिक भयसे विकल होकर आश्रय पानेके लिए मैं पास ही बैठे पिताके बुढ़ौतीसे शिथिल पंखोंमें जा घुसा।

उसके कुछ ही देर बाद मैंने मृगयासक्त शिकारियोंके एक बड़े समुदायका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्रोडकुलदश्यमानभद्रमुस्तारसामोदः, इतः करिकलभभज्यमानसल्लकीकषायगन्धः, इतो निपतितशुष्कपत्रमर्मरध्वनिः, इतो वनमहिषविषाणकोटिकुलिशभिद्यमानवल्मीकधूलिः, इतो मृगकदम्बकम्, इतो वनगजकुलम्, इतो वनवराहयूथम्, इतो वनमहिषवृन्दम्, इतः शिखण्डिमण्डलविरुतम्, इतः कपिञ्जलकुलकलकूजितम्, इतः कुररकुलक्वणितम्, इतो मृगपतिनखभिद्यमानकुम्भकुञ्जररसितम्, इयमार्द्रपङ्कमलिना वराहपद्धतिः, इयमभिनवशष्पकवलरसश्यामला हरिणरोमन्थफेनसंहतिः, इयमुन्मदगंधगजगण्डकण्डूयनपरिमलनिलीनमुखरमधुकरविरुतिः, एषा निपतितरुधिरबिन्दुसिक्तशुष्कपत्रपाटला रुरुपदवी, एतद्द्विरदचरणमृदितविटपपल्लवपटलम्, एतत्खड्गिकुलक्रीडितम्, एष नखकोटिविकटविलिखितपत्रलेखो रुधिरपाटलः करिमौक्तिकदलदन्तुरो मृगपतिमार्गः,

---

कोलाहल सुना। उन सबने अपना-अपना शरीर झाड़ियोंमें छिपा लिया था और परस्पर कह रहे थे—उधरसे हाथियोंके पैरों रौंदी हुई कमलिनियोंकी सुगन्धि आ रही है। इधरसे सुअरों द्वारा काटे हुए नागरमोथेकी गन्ध आती है। इधर हाथीके बच्चों द्वारा तोड़ी हुई सल्लकीकी गन्ध आती है। उधर सूखकर वृक्षोंसे गिरे हुए पत्तोंकी ध्वनि आ रही है। यहाँ वनैले भैंसोंकी वज्रसरीखी सींगोंसे खुदे वल्मीक (बिमौटे) की धूल बिखरी है। इधरसे मृगगण आते हैं। इधरसे वनैले हाथी, उधरसे जंगली सुअर और इधरसे वनमहिष आते हैं। इधर मोरोंका शोर सुनायी दे रहा है। इधर पपीहे कूक रहे हैं। इस तरफ कुरर पक्षी गा रहे हैं। यहाँ सिंहोंके नाखूनोंसे विदीर्णमस्तक हाथियोंका चीत्कार सुनायी दे रहा है। इधर गीले कीचड़से भरा सुअरोंके आने-जानेका मार्ग है। यहाँ ताजी घासें चरकर हिरनोंने जुगाली की है और घासके रससे उसका फेन काला पड़ गया है। यहाँपर सुगन्धित मदयुक्त मतवाले हाथियोंने अपना मस्तक खुजलाया है। ऐसा करते समय जो मद चुआ है, उसपर भौंरे जुटकर गुञ्जार कर रहे हैं। इधर टपकते हुए रुधिरकी बूँदोंसे भीगे पत्तोंके कारण गुलाबी बना हुआ रुरुमृगका मार्ग है। इधर हाथियोंके पैरोंसे कुचले पत्तोंका ढेर लगा हुआ है। यहाँपर गैंड़ोंके झुण्डने खेलवाड़ किया है। यहाँपर सिंहका मार्ग है। उनके नाखूनोंके अग्रभागसे इसमें विकट चिह्न बन गये हैं। वह मार्ग रुधिरसे लाल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एषा प्रत्यग्रप्रसूतवनमृगीगर्भरुधिरलोहिनी भूमिः, इयमटवी वेणिकानुकारिणी पद्मचरस्य यूथपतेर्मदजलमलिना संचारवीथी, चमरीपंक्तिरियमनुगम्यताम्, उच्छुष्कमृगकरीषपांसुला त्वरिततरमध्यास्यतामियं वनस्थली, तरुशिखरमारुह्यताम्, आलोक्यतां दिगियम्, आकर्ण्यतामयं शब्दः, गृह्यतां धनुः, अवहितैः स्थीयताम्, विमुच्यन्तां श्वान इत्यन्योन्यमभिवदतो मृगयासक्तस्य महतो जनसमूहस्य तरुगहनान्तरितविग्रहस्य क्षोभितकाननं कोलाहलमशृणवम्।

अथ नातिचिरादेवानुलेपनार्द्रमृदङ्गध्वनिधीरेण गिरिविवरविजृम्भितप्रतिनादगम्भीरेण शबरशरताडितानां केसरिणां निनादेन संत्रस्तयूथमुक्तानामेकाकिनां च संचरतामनवरतकरास्फोटमिश्रेण जलधररसितानुकारिणा गजयूथपतीनां कण्ठगर्जितेन, सरभससारमेयविलुप्यमानावयवानामालोलतरलतारकाणामेणकानां च करुणकूजितेन, निहतयूथ-

---

है और गजमुक्ताओंके छितराये रहनेसे कुछ ऊँचा-नीचा हो गया है। यह भूमि तत्काल ब्याई मृगीके गर्भसे निकले रुधिरसे रक्त वर्ण हो गयी है। यह है यूथसे बिछुड़े गजराजके मदसे मलीन और वनस्थलीकी चोटी सरीखी दीखनेवाली पदपंक्ति। चमरी मृगीके पैरोंसे बने इस मार्गपर चलो। मृगोंके सूखे गोबरोंकी धूलवाली इस वनस्थलीपर जल्दी बैठो। वृक्षोंकी चोटियोंपर चढ़ जाओ। इधर देखो। यह शब्द सुनो। धनुष हाथमें ले लो। सावधानीके साथ खड़े हो जाओ। कुत्तोंको छोड़ो। इस प्रकार परस्पर वार्तालाप करते हुए उन शिकारियोंके कोलाहलसे सारा जंगल मुखरित हो उठा।

तनिक देर बाद उस वनमें नाना प्रकारके शब्द होने लगे। भीलोंके बाणोंसे आहत सिंहोंका गर्जन सुनायी देने लगा। वह गर्जन किसी द्रवपदार्थका लेप करनेसे गीले मृदङ्गकी ध्वनि जैसा धीर था और पर्वतकन्दराओंसे उठी हुई प्रतिध्वनिसे गम्भीर हो उठा था। यूथसे बिछुड़े, त्रस्त एवं अकेले भटकते हुए गजराजोंकी भीषण कण्ठध्वनि हो रही थी। वह ध्वनि मेघगर्जन जैसी भयानक थी। साथ ही उनकी पटकी जाती हुई सूँड़ोंका शब्द भी सुनायी दे रहा था। मृगियोंके करुण चीत्कार सुनायी पड़ रहे थे। शिकारी कुत्तोंने उन मृगोंके अङ्ग नोच डाले थे। इस कारण उनके नेत्रोंकी पुतलियाँ चञ्चल, कातर तथा क्षुब्ध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पतीनां वियोगिनीनामनुगतकलभानां च स्थित्वा स्थित्वा समाकर्ण्य कलकलमुत्कर्णपल्लवानामितस्ततः परिभ्रमन्तीनां प्रत्यग्रपतिविनाशशोकदीर्घेण करिणीनां चीत्कृतेन, कतिपयदिवसप्रसूतानां च खड्गिधेनुकानां त्रासपरिभ्रष्टपोतकान्वेषिणीनामुन्मुक्तकंठमारसन्तीनामाक्रन्दितेन, तरुशिखरसमुत्पतितानामाकुलाकुलचारिणां च पत्ररथानां कोलाहलेन, रूपानुसारप्रधावितानां च मृगयूथानां युगपदतिरभसपादपाताभिहताया भुवः कम्पमिव जनयता चरणशब्देन, कर्णान्ताकृष्टज्यानां च मदकलकुररकामिनीकंठकूजितकलशबलितेन शरनिकरवर्षिणां धनुषां निनादेन, पवनाहतिक्वणितधाराणामसीनां च कठिनमहिषस्कन्धपीठपातिनां रणितेन, शुनां च सरभसविमुक्तघर्घरध्वनीनां वनान्तरव्यापिना ध्वानेन सर्वतः प्रचलितमिव तदरण्यमभवत्।

अचिराच्च प्रशान्ते तस्मिन्मृगयाकलकले निर्वृष्टमूकजलधरवृन्दानु-

---

हो उठी थीं। तत्काल मारे गये हाथियोंसे वियुक्त हथिनियाँ चिंघाड़ रही थीं। सद्यः पतिविनाशसे उनका शोक बराबर बढ़ता जाता था। वे हथिनियाँ इधर-उधर दौड़ रही थीं। उनके कान खड़े हो गये थे और चिंघाड़ते हुए बच्चे उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। दूसरी तरफ गद्गद कंठसे करुणापूर्वक चीखती हुई गैंड़ोंकी स्त्रियोंका विलाप सुनायी दे रहा था। वे अभी कुछ ही दिन पहले उत्पन्न और कोलाहलसे डरकर भागे हुए अपने बच्चोंको खोज रही थीं। वृक्षोंके शिखरोंपरसे उड़ते हुए व्याकुल पक्षियोंका भीषण कोलाहल हो रहा था। वनपशुओंके पीछे दौड़नेवाले बहेलियोंके पैरोंका शब्द सुनायी पड़ रहा था। वह शब्द मानो बड़े वेगसे ताड़ित भूमिको कँपाये देता था। कर्णपर्यन्त खिंची प्रत्यंचावाले धनुषोंका टंकोर सुनायी पड़ता था। शिकारियोंके धनुष निरन्तर बाण बरसा रहे थे और उनका शब्द कुरर पक्षीके शब्दसे मिलता-जुलता रहता था। वायुके थपेड़ोंसे खनकती धारवाली तथा भैंसोंके कठोर कन्धोंपर गिरती हुई तलवारोंका रणत्कार सुनायी देता था। बड़ी जोर-जोरसे गुर्राते हुए कुत्तोंका शब्द समस्त वनमें व्याप्त हो रहा था। इस प्रकारके भीषण कोलाहलसे जैसे वह सारा महावन काँप उठा।

कुछ समय बाद वह शिकारका कोलाहल मिटा और वनमें शान्ति छा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कारिणी मथनावसानोपशान्तवारिणि सागर इव स्तिमिततामुपगते कानने मन्दीभूतभयोऽहमुपजातकुतूहलः पितुरुत्सङ्गादीषदिव निष्क्रम्य कोटरस्थ एव शिरोधरां प्रसार्य संत्रासतरलतारकः शैशवात्किमिदमित्युपजातदिदृक्षुस्तामेव दिशं चक्षुः प्राहिणवम् ।

अभिमुखमापतच्च तस्माद्वनान्तरादर्जुनभुजदंडसहस्रविप्रकीर्णमिव नर्मदाप्रवाहम्, अनिलचलितमिव तमालकाननम्, एकीभूतमिव कालरात्रीणां यामसंघातम्, अञ्जनशिलास्तम्भसंभारमिव क्षितिकम्पविघूर्णितम्, अन्धकारपुञ्जमिव रविकिरणाकुलितम्, अन्तकपरिवारमिव परिभ्रमन्तम्, अवदारितरसातलोद्भूतमिव दानवलोकम, अशुभकर्मसमूहमिवैकत्र समागतम्, अनेकदंडकारण्यवासिमुनिजनशापसार्थमिव संचरन्तम्, अनवरतशरनिकरवर्षिरामनिहतखरदूषणबलनिवहमिव तदपध्यानात्पिशाचतामुपगतम्, कलिकालबन्धुवर्गमिवैकत्र संगतम्,

---

गयी । वह वैसी ही शान्ति थी, जैसे वर्षाके बाद मेघकी तथा मन्थनके बाद शान्त जलवाले समुद्रकी होती है । इससे मेरा भी भय कुछ कम हुआ और बचपनके कारण मेरे मनमें उत्सुकता जागी कि देखूँ, यह सब क्या हो रहा है । इस भावनावश आतुर होकर मैं अपने पिताकी गोदसे तनिक बाहर निकला और उस कोटरमेंसे ही गर्दन निकालकर उसी ओर निहारने लगा । उस समय डरके मारे मेरे नेत्रोंकी पुतलियाँ चञ्चल हो रही थीं ।

तभी मैंने दूसरे जंगलसे आती हुई हजारों भीलोंकी एक विशाल वाहिनी देखी । वह सहस्रबाहुकी सहस्र भुजाओंसे छिन्न-भिन्न नर्मदाके प्रवाह सदृश, शिलाओंके स्तम्भसमूह सदृश, भगवान् भास्करकी किरणोंसे आकुल अन्धकार-राशिके समान, भटकते हुए यमपरिवारकी भाँति, रसातल फोड़कर बाहर आये हुए दानवोंके समान, एक स्थानपर एकत्रित अशुभ कर्मोंकी राशिके समान, दण्डकारण्यनिवासी ऋषियोंके मूर्त रूपमें विचरनेवाले शापसमूहके समान और पुनः पुनः बाणवर्षा करके रामके द्वारा मारे गये खर-दूषणकी उस सेनाके समान कि जो सदा रामका अनिष्ट सोचती-सोचती पिशाच हो गयी थी। कलिकालके भाई-बन्दोंके समान एकत्रित, स्नानार्थ जाते हुए बनैले भैंसोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अवगाहप्रस्थितमिव वनमहिषयूथम्, अचलशिखरस्थितकेसरिकराकृष्टितपतनविशीर्णमिव कालाभ्रपटलम्, अखिलरूपविनाशाय धूमकेतुजालमिव समुद्गतम्, अन्धकारितकाननम्, अनेकसहस्रसंख्यम्, अतिभयजनकमुत्पातवेतालव्रातमिव शबरसैन्यमद्राक्षम्।

मध्ये च तस्य महतः शबरसैन्यस्य प्रथमे वयसि वर्तमानम्, अतिकर्कशत्वादायसमयमिव निर्मितम्, एकलव्यमिव जन्मान्तरगतम्, उद्भिद्यमानश्मश्रुराजितया प्रथममदलेखामण्ड्यमानगण्डभित्तिमिव गजयूथपतिकुमारकम्, असितकुवलयश्यामलेन देहप्रभाप्रवाहेण कालिन्दीजलेनेव पूरितारण्यम्, आकुटिलाग्रेण स्कन्धावलम्बिना कुन्तलभारेण केसरिणमिव गजमदमलिनीकृतेन केसरकलापेनोपेतम्, आयतललाटम्, अतितुङ्गघोरघोणम्, उपनीतस्यैककर्णाभरणतां भुजगफणमणेरापाटलैरंशुभिरालोहितीकृतेन पर्णशयनाभ्यासाल्लग्नपल्लवरागेणेव वामपार्श्वेन विराजमानम्, अचिरप्रहतगजकपोलगृहीतेन सप्तच्छदपरिमल-

---

समान, पर्वतकी चोटीपर खड़े सिंहके हाथों खिचनेसे छिन्न-भिन्न काले बादलोंकी राशिके समान, सबका रूप बिगाड़नेके लिए आये हुए धूमकेतुओंके समूहके समान और उत्पात (प्रलय) कालीन वैतालसंघके समान वह कई हजार भीलोंकी सेना समस्त महावनमें घोर अन्धकार तथा भयका सञ्चार कर रही थी।

उस महती सेनामें मैंने मातङ्ग नामके तरुण शबरसेनापतिको देखा। उसकी आकृति बड़ी डरावनी थी। अतिशय कठोरताके कारण देखनेसे ऐसा लगता था कि मानो उसका शरीर लोहेका बना हुआ हो। वह अन्य जन्म लेकर धरातलपर आये हुए एकलब्य सरीखा दीख रहा था। उसके मुखपर दाढ़ी-मूछ निकलने लगी थी, जिनसे वह पहली मदरेखासे सुशोभित गण्डस्थलवाले किसी गजराजके कुमार जैसा प्रतीत होता था। अपनी नीलकमलसदृश श्याम दैहिक दीप्तिके प्रवाहसे वह जैसे यमुनाका नीला जल सारे अरण्यमें भरे दे रहा था। मस्तकपर कुछ मुड़े और कंधोंपर बिखरे घुंघराले केशोंसे वह गजमदसे मलिन केसरी (सिंह) जैसा दीख रहा था। उसका ललाट चौड़ा था। उसकी नाक ऊँची और भयानक थी। एक कानमें पहनी नागमणिकी झिलमिलाती किरणोंसे उसका वामपार्श्व लाल हो गया था। जिससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाहिना कृष्णागरुपङ्केनेव सुरभिणा मदेन कृताङ्गरागम्; उपरि तत्परिमलान्धेन भ्रमता मायूरातपत्रानुकारिणा मधुकरकुलेन तमालपल्लवेनेव निवारितातपम्, आलोलपल्लवव्याजेन भुजबलनिर्जितया भयप्रयुक्तसेवया विन्ध्याटव्येवं करतलेनापमृज्यमानगण्डस्थलस्वेदलेखमापाटलया मृगकुलक्षयरात्रिसंध्यायमानया शोणितार्द्रयेव दृष्ट्या रञ्जयन्तमिवाशाविभागानाम, जानुलम्बेन कुञ्जरकरप्रमाणमिव गृहीत्वा निर्मितेन चण्डिकारुधिरबलिप्रदानायासकृन्निशितशस्त्रोल्लेखविषमितशिखरेण भुजयुगलेनोपशोभितम्, अन्तरालग्नाश्यानहरिणरुधिरबिन्दुना स्वेदजलकणिकाचितेन गुञ्जाफलमिश्रैः करिकुम्भमुक्ताफलैरिव रचिताभरणेन विन्ध्यशिलाविशालेन वक्षःस्थलेनोद्भासमानम्, अविरतश्रमाभ्यासादु-

---

ऐसा प्रतीत होता था कि मानो पत्तोंपर सानेका अभ्यासी होनेके कारण उन्हीं पत्तोंका रस लग जानेसे वह भाग लाल हो गया है। शीघ्र मारे गये गजराजके गंडस्थलसे निकले मदका उसने सारे शरीरमें लेप कर रक्खा था। उस मदसे सप्तपत्र (छतिवन) की परिमल निकल रही थी और वह अगरके लेप जैसा सुरभित था। उस सुगन्धिसे अन्धे होकर उसके ऊपर मँडरानेवाले भौरोंने मोरपंखकी छटा दिखाते हुए मानो उस सेनापतिके ऊपर तमालपत्रकी छाया कर दी थी। उसकी कनपटीपर बहनेवाले पसीनेकी रेखा उसके झूलते हुए कर्णपल्लवसे पुँछ जाया करती थी। जिसे देखकर ऐसा लगता था कि जैसे उसके बाहुबलसे विजित और भयवश सेवामें उपस्थित साक्षात् विन्ध्याटवी ही उसका पसीना पोंछ रही है। मृगोंके वधकी सूचना देनेवाली और मृगोंके ही रुधिरसे आर्द्र दृष्टिसे मानो सभी दिशाओं और उसके सभी भागोंको रंगे दे रहा था। घुटनेतक लम्बी तथा भगवती दुर्गाको बलि देनेके निमित्त बारम्बार उठाये गये तीक्ष्ण शस्त्रोंके चिह्नसे विषम कंधेवाली उसकी दोनों भुजायें ऐसी सुंदर लग रही थीं कि जैसे हाथीकी सूँड़की नाप लेकर गढ़ी गयी हों। उसकी छाती विन्ध्यपर्वतकी शिला जैसी विशाल थी। वह पसीनेसे तर थी और उसके बीच-बीचमें कुछ गाढ़े मृगरुधिरकी बूँदें लगी हुई थीं। जिन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानो उस सेनापतिने घुँघुची सहित गजमुक्ताओंका गहना पहन रक्खा है। निरन्तर परिश्रम करते रहनेके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ल्लिखितोदरम्, इभमदमलिनमालानस्तम्भयुगलमुपहसन्तमिवोरुदण्डद्वयेन लाक्षालोहितकौशेयपरिधानम्, अकारणेऽपि क्रूरतया बद्धत्रिपताकाभ्रुकुटिकराले ललाटफलके प्रबलभक्त्याराधितया मत्परिग्रहोऽयमिति कात्यायन्या त्रिशूलेनेवाङ्कितम्, उपजातपरिचयैरनुगच्छद्भिः श्रमवशाद्दूरविनिर्गताभिः स्वभावपाटलतया शुष्काभिरपि हरिशोणितमिव क्षरन्तीभिर्जिह्वाभिरावेद्यमानखेदैर्विवृतमुखतया स्पष्टदृष्टदन्तांशून्दंष्ट्रान्तराललग्नकेसरिसटामिव सृक्कभागानुद्वहद्भिः स्थूलवराटकमालिकापरिगतकण्ठैर्महावराहदंष्ट्राप्रहारजर्जरैरल्पकायैरपि महाशक्तित्वादनुपजातकेसरैरिव केसरिकिशोरकैर्मृगवधूवैधव्यदीक्षादानदक्षैरनेकवर्णैः श्वभिरतिप्रमाणाभिश्च केसरिणामभयप्रदानाय याचनार्थमागताभिः सिंहीभि-

---

कारण उसका उदर बहुत कृश हो गया था। अपनी मोटी और मजबूत जाँघोंसे हाथियोंको बाँधनेके लिए नियत तथा गजमदसे मलिन दो खम्भोंकी वह हँसी उड़ा रहा था। पिघले लाख जैसे लाल रङ्गका रेशमी वस्त्र पहने हुए था। अकारण क्रूर होनेके कारण उसका मस्तक उच्च और विकराल भ्रुकुटीसे युक्त था। उस मस्तकपर तीन सलवटें पड़ी थीं। जिन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो उसकी दृढ़ भक्तिसे प्रसन्न भगवती दुर्गाने अपना अनन्य भक्त समझकर उसके माथेपर अपना त्रिशूल अंकित कर दिया है। रङ्ग-विरङ्गे पालतू और हिले-मिले कुत्ते उसके पीछे-पीछे चल रहे थे। अत्यधिक परिश्रम करनेके कारण वरबस बाहर निकली जीभों द्वारा वे अपना खेद प्रकट कर रहे थे। उस समय यद्यपि उनकी जीभें सूखी हुई थीं, तथापि जन्मना लाल होनेके कारण मानो वे हिरनोंके रुधिरकी बूँदे टपका रही थीं। सदा मुँह खुला रहनेके कारण उनके दाँतोंकी दीप्ति साफ दिखायी दे रही थी। उनके होठोंके दोनों हिस्से देखकर ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो उनके दाँतोंके बीचमें सिंहकी सटा भर गयी हो। उन कुत्तोंके गलेमें बड़ी-बड़ी कौड़ियोंके कंठे पड़े हुए थे। बड़े-बड़े सुअरोंके दन्तप्रहारसे वे जर्जर हो गये थे। यद्यपि उनका शरीर बहुत छोटा था, किन्तु शक्ति अधिक होनेके कारण वे केसरविहीन सिंहशावकों सदृश दीखते थे। वे मृगोंको मारकर मृगियोंको विधवा बनानेमें बड़े निपुण थे। उनके पीछे-पीछे बड़े डील-डौलकी बहुतेरी कुतियायें भी चल रही थीं। उन्हें देखकर ऐसा लगता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिव कौलेयककुटुम्बिनीभिरनुगम्यमानम्, कैश्चिद्गृहीतचमरवालगजदन्तभारैः कैश्चिदच्छिद्रपर्णबद्धमधुपुटैः कैश्चिन्मृगपतिभिरिव गजकुम्भमुक्ताफलनिकरसनाथपाणिभिः कैश्चिद्यातुधानैरिव गृहीतपिशितभारैः कैश्चित्प्रमथैरिव केसरिकृत्तिधारिभिः कैश्चित्क्षपणकैरिव मयूरपिच्छधारिभिरिव काकपक्षधरैः कैश्चिच्छिशुभिरिव काकपक्षधरैः कैश्चित्कृष्णचरितमिव दर्शयद्भिः समुत्खातविधृतगजदन्तैः कैश्चिज्जलदागमदिवसैरिव जलधरच्छायामलिनाम्बरैरनेकवृत्तान्तैः शबरवृन्दैः परिवृतम्, अरण्यमिव सखड्गधेनुकम्, अभिनवजलधरमिव मयूरपिच्छचित्रचापधारिणम्, बकराक्षसमिव गृहीतैकचक्रम्, अरुणानुजमिवोद्धृतानेक-

---

था कि उसे सिंहोंको अभयदान देनेकी प्रार्थना करनेके लिए सिंहिनियाँ वहाँ आयी हुई हों। उस सेनापतिके अगल-बगल झुण्डके झुण्ड भील चल रहे थे। उनमेंसे कितने चमरमृगके बाल तथा हाथीदाँतकी गठरियाँ लादे थे। कितने भील निश्छिद्र पत्तोंके दोनोंमें शहद भरकर ले चल रहे थे। कुछ सिंहसरीखे वीर भील गजराजके मस्तकसे निकले मोतियोंको अपने हाथोंमें लेकर चल रहे थे। राक्षसोंके समान भयानक कितने ही भील मांसका बोझा लिये हुए थे। शिवगणोंके समान विचित्र आकृतिवाले कितने भील सिंहचर्म सम्हाले थे। बौद्धभिक्षुकों जैसे कुछ भील मोरपंख लिये हुए थे। कुछ भील बालकों जैसे काकपक्षधारी थे (बच्चोंके बाल घुँघराले होते हैं और भील कौओंके पंख लिये थे)। कुछ भील सद्यः मृत हाथियोंके दाँत लेकर कृष्णचरित्रका प्रदर्शन कर रहे थे (भगवान् कृष्णने भी कुवलयापीड हाथीको मारकर उसका दाँत उखाड़ा था)। कितने ही भील वर्षाऋतुकालीन मेघसरीसे मलिन थे (वर्षाऋतुमें मेघोंके मँडरानेके कारण गगनमण्डल मलिन हो जाता है और उन भीलोके कपड़े मैले थे)। महावनके सदृश वह भीलसेनापति खड्गसम्पन्न था (वनमें गैंडोंकी स्त्रियाँ रहती हैं और सेनापतिके पास तलवार तथा खञ्जर विद्यमान था)। वह नवीन मेघके समान तथा मोरपंख सरीखा कई रङ्गोंसे चित्रित धनुष लिये हुए था (मेघ मोरपंख जैसा कई रङ्गोंका इन्द्रधनुष धारण करता है तो भीलसेनापति मोरपंखसे सुशोभित धनुष लिये था)। बकासुरके समान उसने एक चक्र ले रक्खा था (बकासुरने एकचक्रा नगरी जीतकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महानागदशनम्, भीष्ममिव शिखण्डिशत्रुम्, निदाघदिवसमिव सततात्रिभूतमृगतृष्णम्, विद्याधरमिव मानसवेगम्, पाराशरमिव योजनगन्धानुसारिणम्, घटोत्कचमिव भीमरूपधारिणम्, अचलराजकन्यकाकेशपाशमिव नीलकण्ठचन्द्रकाभरणम्, हिरण्याक्षदानवमिव महावराहदंष्ट्राविभिन्नवक्षःस्थलम, अतिरागिणमिव कृतबहुवन्दीपरिग्रहम्, पिशीताशनमिव रक्तलुब्धकम्, गीतकला-

---

अपने अधीन कर ली थी तो सेनापतिके पास एक चक्र विद्यमान था)। अरुणके छोटे भाई गरुड़के समान उसने बहुतेरे नागोंके दाँत तोड़ दिये थे (गरुड़ने सर्पोंके दाँत तोड़े थे तो भीलसेनापतिने बहुतेरे हाथियोंके दाँत तोड़े थे)। भीष्मपितामहके समान वह शिखण्डियोंका शत्रु था (भीष्मपितामह द्रुपदसुत शिखंडीके शत्रु थे तो शबर सेनापति मयूरोंका दुश्मन था)। निदाघ (गर्मीऋतु) के समान वह सदा मृगतृष्णा प्रदर्शित करता था (गर्मीमें मरीचिका दिखाई देती है तो सेनापतिको सदा मृगोंको पानेकी तृष्णा बनी रहती थी)। वह विद्याधरोंके समान मानस वेगसम्पन्न था (विद्याधर मानसरोवरकी ओर वेगसे दौड़ते हैं तो भीलसेनापति मनका गर्वीला था)। पराशर मुनिके समान वह योजनगन्धाका पीछा करता था (पराशर मुनि प्रेमवश योजनगन्धाके पीछे भागे थे तो वह सेनापति कस्तूरी मृगोंका पीछा करता था)। घटोत्कचकी तरह उसने भीम रूप धारण कर रक्खा था (घटोत्कचने अपने पिता भीमका रूप धारण किया था और भीलसेनापतिने अपना भयानक रूप बना रखा था)। भगवती पार्वतीकी तरह वह नीलचन्द्रकाभरण था (पार्वतीजी शिवजीके चन्द्रमाको गहनेके समान अपने केशोंमें धारण करती हैं तो भीलसेनापति मोरपंखके चन्द्रकोंका बना गहना पहनता था)। हिरण्याक्ष दैत्यके समान महावराहके दाँतोंसे उसकी छाती भिन्न हुई थी (महावराहरूपधारी विष्णुके दाँतोंसे हिण्याक्षकी छाती विदीर्ण हुई थी और सेनापतिकी छातीमें बड़े-बड़े सुअरोंके दाँतोंसे घाव लग चुके थे)। कामी पुरुषके समान उसने बहुतसे बंदियोंका संग्रह कर रक्खा था (कामी पुरुष बहुतेरी स्त्रियोंका संग्रह करते हैं और सेनापतिने बहुतेरे खुशामदियोंको जुटा रक्खा था)। मांसाहारी राक्षसोंके समान वह रक्तलुब्धक था (राक्षस रक्तका लोभी होता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विन्यासमिव निषादानुगतम्, अम्बिकात्रिशूलमिव महिषरुधिरार्द्रकायम्, अभिनवयौवनमपि क्षपितबहुवयसम्, कृतसारमेयसंग्रहमपि फलमूलाशनम्, कृष्णमप्यसुदर्शनम्, स्वच्छन्दचारमपि दुर्गैकशरणम्, क्षितिभृत्पादानुवर्तिनमपि राजसेवानभिज्ञम्, अपत्यमिव विन्ध्याचलस्य, अंशकावतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलिकालस्य, भीषणमपि महासत्त्वतया गम्भीरमिवोपलक्ष्यमाणम्, अभिभवनीयाकृतिं मातंगनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्। अभिधानं तु पश्चात्तस्याहमश्रौषम्।

आसीच्च मे मनसि–'अहो, मोहप्रायमेतेषां जीवितं साधुजनगर्हितं च चरितम्। तथा हि। पुरुषपिशितोपहारे धर्मबुद्धिः, आहारः साधु-

---

है तो भीलसेनापतिपर बहेलिये प्रेम रखते थे)। संगीतकलाके विलासकी तरह उसके साथ निषाद रहते थे (संगीतमें निषाद स्वर होता है तो उस सेनापतिके साथ निषाद (केवट) थे)। भगवती दुर्गाके त्रिशूलके समान उसका शरीर महिषरुधिरसे तर रहता था (दुर्गाका त्रिशूल महिषासुरके रक्तसे तर हुआ था तो भीलसेनापतिका शरीर भैंसोंके रुधिरसे भींगा रहता था)। नौजवान होनेपर भी उसने बहुतेरा वयस् (अवस्था अथवा पक्षी) नष्ट किया था। सारमेय (सार अर्थात् धनका परिमाण सूचित करनेवाले धान्य आदिका संग्रह अथवा कुत्ता) का जमावड़ा करके भी वह फल-मूल ही खाता था। वह कृष्ण (वासुदेव अथवा काला) होता हुआ भी सुदर्शनविहीन (कुरूप) था। स्वेच्छाचारी होता हुआ भी वह दुर्गैकशरण (एकमात्र किलेमें रहनेवाला अथवा दुर्गाजीका अनन्य भक्त) था। क्षितिभृत् (पर्वत अथवा राजा) का चरणसेवक होता हुआ भी वह राजसेवासे अनभिज्ञ था। वह जैसे विन्ध्यपर्वतका सगा बेटा था। भीषणताके कारण वह मानो यमराजका अंशावतार था। कलियुगका तो जैसे वह सारांश ही था और भयानक होता हुआ भी वह बलाधिक्यके कारण गम्भीर जैसा दीख रहा था। उसका नाम मैंने बादमें सुना।

उन्हें देखकर मेरे मनमें यह विचार उठा–'अहो! इनका जीवन अज्ञानपूर्ण है और इनके कर्म साधुजनोंसे निन्दित हैं। क्योंकि ये पुरुषपशुके मांसका बलि देना अपना धर्म समझते हैं। सज्जनों द्वारा निन्दित मद्य-मांस इनका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनगर्हितो मधुमांसादि, श्रमो मृगया, शास्त्रं शिवारुतम्, समुपदेष्टार। सदसतां कौशिकाः, प्रज्ञा शकुनिज्ञानम्, परिचिताः श्वानः, राज्यं शून्यास्वटवीषु, आपानकमुत्सवः, मित्राणि क्रूरकर्मसाधनानि धनूषि, सहाया विषदिग्धमुखा भुजंगा इव सायकाः, गीतमुत्साहकारि मुग्धमृगाणाम्, कलत्राणि बन्दीगृहीताः परयोषितः, क्रूरात्मभिः शार्दूलैः सह संवासः, पशुरुधिरेण देवताचेनम्, मांसेन बलिकर्म, चौर्येण जीवनम्, भूषणानि भुजंगमणयः, वनकरिमदैरंगरागः, यस्मिन्नेव कानने निवसन्ति तदेवोत्खातमूलमशेषतः कुर्वते' इति चिन्तयत्येव मयि शबरसेनापतिरटवीभ्रमणसमुद्भवं श्रममपनिनीषुरागत्य तस्यैव शाल्मलीतरोरधश्छायायामवतारितकोदण्डस्त्वरितपरिजनोपनीतपल्लवासने समुपाविशत्। अन्यतरस्तु शबरयुवा ससंभ्रममवतीर्य तस्मात्करयुगलपरिक्षोभिताम्भसः सरसो वैडूर्यद्रवानुकारि प्रलयदिवसकरकिरणोपता-

---

आहार है। शिकारको ये कसरत समझते हैं। शृगालोंके रोदनको ये अपना शास्त्र मानते हैं और उसे ही सुनकर सवेरे जागते हैं। उल्लू इनके भले-बुरेका उपदेश देनेवाले गुरु हैं। पक्षियोंकी गुरुता-लघुताकी जानकारी ही इनके लिए ज्ञान है। कुत्ते इनके विश्वस्त साथी हैं। निर्जन वनमें इनका राज्य है। मदिरापानकी मंडली ही इनका उत्सव है। क्रूर कर्मोंके सम्पादक धनुष ही इनके मित्र हैं। विषैले सर्पोंके समान क्रूर और जहरीले बाण इनके सहायक हैं। मस्त मृगोंको उत्साहित करनेवाले इनके गायन होते हैं। हठात् पकड़कर लायी परनारियाँ ही इनकी भार्या होती हैं। दुष्टस्वभाववाले व्याघ्रोंके साथ इनका निवास होता है। पशुओंके रुधिरसे ये देवपूजन करते हैं। मांसकी बलि चढ़ाते हैं। चोरी ही इनकी जीविका है। सर्पोंकी मणियाँ आभूषण हैं। वनैले हाथियोंका मद ये अपने शरीरमें लगाते हैं। जिस वनमें ये रहते हैं, उसीको निर्मूल कर देते हैं। इस प्रकार मैं सोच ही रहा था कि इतनेमें वह भीलसेनापति श्रमणजनित थकावट मिटानेके लिए उसी शाल्मली वृक्षकी छायामें आया और सेवकों द्वारा बिछायी चटाईपर बैठ गया। अब उसने धनुष कंधेसे उतार दिया। उसी समय एक भील पासके सरोवरमें उतरा और अपने दोनों हाथोंसे उसके जलको खूब हिलोरा। वह जल द्रवीभूत वैदूर्यमणि तथा प्रलयकालीन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पादस्वरैकदेशमिव विलीनम्, इन्दुमण्डलादिव प्रस्यन्दितम्, द्रुतमिव मुक्ताफलनिकरम्, अत्यच्छतया स्पर्शानुमेयं हिमजडम्, अरविन्दकोशरजःकषायमम्भः कमलिनीपत्रपुटेन प्रत्यग्रोद्धृताश्च धौतपङ्कनिर्मला मृणालिकाः समुपाहरत। आपीतसलिलश्च सेनापतिस्ता मृणालिकाः शशिकला इव सैंहिकेयः क्रमेणादशत्। अपगतश्रमश्चोत्थाय परिपीताम्भसा सकलेन तेन शबरसैन्येनानुगम्यमानः शनैःशनैरभिमतं दिगन्तरमयासीत्।

एकतमस्तु जरच्छबरस्तस्मात्पुलिन्दवृन्दादनासादितहरिणपिशितः पिशिताशन इव विकृतदर्शनः पिशितार्थी तस्मिन्नेव तरुतले मूहूर्तमिव व्यलम्बत। अन्तरिते च शबरसेनपतौ स जीर्णशबरः[1] पिबन्निवास्माकमायूंषि रुधिरबिन्दुपाटलया कपिलभ्रूलतापरिवेषभीषणया दृष्ट्या गणयन्निव शुककुलकुलायस्थानानि श्येन इव विहगामिषस्वादलालसः सुचि-

---

सूर्यके प्रखर तापसे गलकर गिरे हुए गगनमण्डलके एक टुकड़ेके समान अथवा चन्द्रमण्डलसे चुए तथा पिघले मौक्तिक रसके सदृश इतना अधिक स्वच्छ था कि स्पर्श करनेपर ही उसके जल होनेका भान हो सकता था। वह जल पुरइनके पत्तोंमें भर तथा ताजे और मुलायम मृणालखण्ड उखाड़ तथा भलीभाँति धोकर उस सेनापतिके पास ले आया। जल पीनेके पश्चात् वह सेनापति उन मृणालखण्डोंको धीरे-धीरे इस तरह खाने लगा, जैसे राहु चन्द्रमाको खा रहा हो। जब वह सुस्ता चुका, तब उठा और चल पड़ा। उसके साथ ही उसकी वह विशाल भीलसेना भी धीरे-धीरे अभीष्ट दिशामें चली गयी।

उन चाण्डालोंके झुण्डमें एक वृद्ध भील था। अबतक उसे मृगमांस नहीं मिला था। वह भील मांसाहारी राक्षसके समान भयानक दीखता था। मांस प्राप्त करनेकी अभिलाषासे वह उसी शाल्मली वृक्षके नीचे कुछ देर रुका रहा। जब भीलसेनापति आँखोंसे ओझल हो गया, तब पक्षीका मांस भक्षण करनेको इच्छुक बाजकी तरह भयानक उस भीलने ऊपर चढ़नेका मन्सूबा बाँधते हुए बड़ी देरतक जड़से उस वृक्षको भलीभाँति देखा। पीली भौंहोंके परिवेषसे भयंकर एवं रुधिरबिन्दुओंके समान लाल उसके नेत्र बड़े डरावने लग रहे थे। उस वृद्धको देखते समय ऐसा लगता था कि मानों वह हमारी आयु पी रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रमारुरुक्षुस्तं वनस्पतिमामूलादपश्यत् । उत्क्रान्तमिव तस्मिन्क्षणे तदा-लोकनभीतानां शुककुलानामसुभिः । किमिव हि दुष्करमकरुणानाम् । यतः स तमनेकतालतुङ्गमभ्रंकषशाखाशिखरमपि सोपानैरिवायत्नेनैव पादपमारुह्य ताननुपजातोत्पतनशक्तीन्कांश्चिदल्पदिवसजातान्गर्भच्छ-विपाटलाच्छाल्मलीकुसुमशङ्कामुपजनयतः, कांश्चिदुद्भिद्यमानपक्षतया नलिनसंवर्तिकानुकारिणः, कांश्चिदर्कफलसदृशान्, कांश्चिल्लोहितायमा-नचञ्चुकोटीनीषद्विघटितदलपुटपाटलमुखानां कमलमुकुलानां श्रियमुद्व-हतः, कांश्चिदनवरतशिरःकम्पव्याजेन निवारयत इव प्रतीकारासमर्था-नेकैकतया फलानीव तस्य वनस्पतेः शाखान्तरेभ्यश्च शुकशावकान-ग्रहीत् । अपगतासूंश्च कृत्वा क्षितावपातयत् ।

तातस्तु तं महान्तमकाण्ड एव प्राणहरमप्रतीकारमुपप्लवमुपनतमा-लोक्य द्विगुणतरोपजातवेपथुर्मरणभयादुद्भ्रान्ततरलतारको विषादशून्या-

---

हो और हम तोतोंके घोसले गिन रहा हो । उसके भीषण नेत्रोंको ही देखकर तोतोंके जैसे प्राण निकल गये थे । निर्दयी मनुष्योंके लिए कुछ भी दुष्कर नहीं होता । यद्यपि वह वृक्ष कई ताड़ वृक्षों जितना ऊँचा था और उसके शिखरकी शाखायें आकाशसे टकरा रही थीं । फिर भी वह उसपर सहज ही में ऐसे चढ़ चला मानों सीढ़ीपर चढ़ रहा हो । ऊपर जाकर वह एक-एक करके तोतोंके बच्चोंको इस तरह घोसलोंसे निकाल-निकाल और उनके प्राण ले-लेकर जमीनपर पटकने लगा, जैसे उस वृक्षपरसे फल तोड़-तोड़कर नीचे फेंक रहा हो । उनमेंसे बहुतेरे शुकशावकोंके तनमें उड़नेकी सामर्थ्य नहीं थी । क्योंकि अभी वें थोड़े ही दिनों पहले जनमे थे । गर्भके समान उनके लाल रंग थे । देखनेमें वे सेमरके फूल जैसे लगते थे । कुछ बच्चोंके पर निकल आये थे, जिससे वे कमल-के मुलायम पत्तों सरीखे लग रहे थे । कितने मदारके फूल सदृश दीखते थे । लाल चोंच होनेके कारण कितने ही बच्चे खिली हुई पंखुड़ियोंसे लाल मुखवाली कमलकी कलियों जैसे लगते थे । कितने ही बच्चे बार-बार स्वतः होनेवाले शिरःकम्पके व्याजसे अपने बचावका कोई उपाय करनेमें असमर्थ होकर मानों नहीं-नहीं कह रहे थे ।

सहसा उपस्थित उस प्राणहारी और प्रतीकारके अयोग्य महान् उपद्रवको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मश्रुजलप्लुतां दृशमितस्ततो दिक्षु विक्षिपन्, उच्छुष्कतालुरात्मप्रतीकाराक्षमस्त्रासस्रस्तसंधिशिथिलेन पक्षसंपुटेनाच्छाद्य मां तत्कालोचितं प्रतीकारं मन्यमानः स्नेहपरवशो मद्रक्षणाकुलः किंकर्तव्यताविमूढः क्रोडविभागेन मामवष्टभ्य तस्थौ।

असावपि पापः शाखान्तरैः संचरणमाणः ममकोटरद्वारमागत्य जीर्णासितभुजंगभोगभीषणं प्रसार्य विविधवनवराहवसाविस्रगन्धिकरतलं कोदण्डगुणाकर्षणव्रणाङ्कितप्रकोष्ठमन्तकदण्डानुकारिणं वामबाहुमतिनृशंसो मुहुर्मुहुर्दत्तचञ्चुप्रहारमुत्कूजन्तमाकृष्य तातं गतासुमकरोत्। मां तु स्वल्पत्वाद्भयसंपिण्डिताङ्गत्वात्सावशेषत्वाच्चायुषः कथमपि पक्षसंपुटान्तरगतं नालक्षत। उपरतं च तमवनितले शिथिलशिरोधरमधोमुखममुञ्चत। अहमपि तच्चरणान्तरे निवेशितशिरोधरो निभृतमङ्कनिली-

---

देखकर मेरे पिताका शरीर दूना काँपने लगा। मृत्युके भयसे उभड़ी और चंचल पुतलियोंवाले, निस्तेज तथा आँसू भरे नयनोंसे उन्होंने सभी दिशाओं को निहारा। उनका तालू सूख गया। भयवश सन्धियाँ शिथिल पड़ गयीं और पंख ढीले हो गये। उनमें आत्मरक्षाकी सामर्थ्य नहीं रही और कोई उपाय भी नहीं सूझा। तथापि स्नेहातिरेकवश मेरी रक्षा करनेके लिए उन्होंने मुझे अपने पंखोंमें छुपा लिया। एकमात्र उसी उपायको उचित समझकर वे मुझको अपनी गोदमें समेटकर बैठ गये।

इतनेमें वह अतिशय निर्दयी और महापापी बहेलिया क्रमशः डालियोंपर चलता हुआ मेरे घोंसलेके द्वारपर आया। वहाँ आकर उस अधमने यमदण्डके समान भीषण अपना बाँया हाथ बढ़ाया। वह हाथ वृद्ध कृष्णसर्प जैसा भयानक था। उसकी गन्दी हथेलीसे सुअरकी चर्बी और मांसको बदबू आ रही थी। उसकी कुहनीपर धनुषकी प्रत्यंचा खींचनेका चिह्न बना हुआ था। उसी हाथने पुनः पुनः चंचुप्रहार करते और बार-बार चीखते हुए मेरे पिताको घोंसलेसे बाहर खींचकर उनके प्राण हर लिये। किन्तु मेरा शरीर बहुत नन्हासा था, भयके कारण सब अंग सिकुड़ गये थे और जीवन अवशिष्ट था। अतएव बहेलियेने पिताजीके पंखोंमें छिपे हुए मुझको नहीं देखा। उसने मेरे मृत पिताको औंधा मुँह करके जमीनपर पटक दिया। मैं चुपचाप अपनी गर्दन उनके पैरों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नस्तेनैव सहापतम्। अवशिष्टपुण्यतया तु पवनवश्येन पुञ्जितस्य महतः शुष्कपत्रराशेरुपरि पतितमात्मानमपश्यम्। अङ्गानि येन मे नाशीर्यन्त। यावच्चासौ तस्मात्तरुशिखरान्नावतरति तावदहमवशीर्णपत्रसवर्णत्वादस्फुटोपलक्ष्यमाणमूर्तिः पितरमुपरतमुत्सृज्य नृशंस इव प्राणपरित्यागयोग्येऽपि काले बालतया कालान्तरभुवः स्नेहरसस्यानभिज्ञो जन्मसहभुवा भयेनैव केवलमभिभूयमानः किंचिदुपजाताभ्यां पक्षाभ्यामीषत्कृतावष्टम्भो लुठन्नितस्ततः कृतान्तमुखकुहरादिव विनिर्गतमात्मानं मन्यमाना नातिदूरवर्तिनः शबरसुन्दरीकर्णपूररचनोपयुक्तपल्लवस्य संकर्षणपटनीलच्छाययोपहसत इव गदाधरदेहच्छविम्, अच्छैः कालिन्दीजलच्छेदैरिव विरचितच्छदस्य, वनकरिमदोपसिक्तकिसलयस्य, विन्ध्याटवीकेशपाशश्रियमुद्वहतः, दिवाप्यन्धकारितशाखान्तरस्य, अप्रविष्टसूर्य-

---

के बीचमें रखकर गोदमें घुसा हुआ था। इस कारण मैं भी उनके साथ ही धरतीपर जा गिरा। कुछ पुण्य शेष था। अतएव मैं वायुके झोंकोंसे एकत्रित सूखे पत्तोंके बड़े ढेरपर जाकर गिरा। जिससे मुझे तनिक भी चोट नहीं लगी। उन सूखे पत्तोंके ही समान रंग होनेके कारण मेरा शरीर साफ-साफ दीखना असंभव था। तदनन्तर वह बहेलिया वृक्षसे नीचे नहीं उतरा था, तभी क्रूर मनुष्यके समान मरणके समय ही मैंने अपने मृत पिताको त्याग दिया। क्योंकि उस समय मुझे भविष्यमें होनेवाले स्नेहका तनिक भी ज्ञान नहीं था। जन्मजात (स्वाभाविक) भयसे अभिभूत होनेके कारण तनमें निकले छोटे-छोटे परोंके के सहारे इधर-उधर लुढ़कता हुआ अपनेको मौतके मुखसे निकला समझकर समीपवर्ती एक तमालवृक्षकी जड़में मैं इस तरह घुस गया, जैसे मुझे किसी दूसरे पिताकी गोद मिल गयी हो। वह जड़ इतनी सघन थी कि उसमें सूर्यकी किरणें नहीं घुस सकती थीं। उस तमाल वृक्षके पल्लव भीलनियोंके कर्णपूर बनने योग्य थे। श्रीबलरामके नील वस्त्रकी नाईं अपनी श्यामल कान्तिसे मानो वह भगवान् कृष्णके तनकी हँसी उड़ा रहा था। यमुनाजीके निर्मल जलसे मानो उसके साँवले पत्ते बने थे। उसपर जंगली गजराजोंके मदका छिड़काव हुआ था। उस वृक्षने जैसे विन्ध्याटवीरूपिणी सुन्दरीके केशपाशकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किरणमतिगहनमपरस्येव पितुरुत्सङ्गमतिमहतस्तमालविटपिनो मूलदेशमविशम् ।

अवतीर्य च स तेन समयेन क्षितितलविप्रकीर्णान्संहृत्य शुकशिशूनेकलतापाशसंयतानाबध्य पर्णपुटेऽतित्वरितगमनः सेनापतिगतेनैव वर्त्मना दिशमगच्छत् । मां तु लब्धजीविताशं प्रत्यग्रपितृमरणशोकशुष्कहृदयमतिदूरपातादायासितशरीरं संत्रासजाता सर्वाङ्गोपतापिनी बलवती पिपासा परवशमकरोत् । अनया च कालकलया सुदूरमतिक्रान्तः स पापकृदिति परिकलय्य किंचिदुन्नमितकन्धरो भयचकितया दृशा दिशोऽवलोक्य तृणेऽपि चलति पुनः प्रतिनिवृत्त इति तमेव पदे पदे पापकारिणमुत्प्रेक्षमाणो निष्क्रम्य तस्मात्तमालतरुतलमूलात्सलिलसमीपं सतुं प्रयत्नमकरवम् ।

अजातपक्षतया नातिस्थिरतरचरणसंचारस्य मुहुर्मुखेन पततो मुहुस्तिर्यङ्निपतन्तमात्मानमेकया पक्षपाल्या संधारयतः क्षितितलसंसर्प-

---

शोभा धारणकर रक्खी थी और दिनके समय भी उसकी डालियोंकी झुरमुटमें अन्धकार छाया रहता था ।

कुछ देर बाद वह भील वृक्षसे नीचे उतरा और भूमिपर मरे पड़े तोतोंके बच्चोंको जल्दी-जल्दी पत्तोंमें बटोरकर लताओंसे बने जालमें बाँधा । फिर जिस राहसे सेनापति गया था, उसी तरफ वह भी चला गया । अब मुझे जीवनकी आशा तो हो गयी थी, किंतु पितृमरणके नवीन शोकसे मेरा हृदय सूख गया था। बहुत ऊँचाईसे गिरनेके कारण शरीरमें पीड़ा होने लगी । तब भी भयसे मेरा सारा शरीर काँप रहा था और अंग-अंगमें ताप उपजानेवाली प्यास अलग सता रही थी । जब मैंने समझा कि वह चाण्डाल बहुत दूर चला गया है, तब गर्दन तनिक ऊँची करके भयचकित नयनोंसे मैंने चारों ओर निहारा। कहीं तिनकेका भी शब्द सुनकर मैं फिर उसीके आगमनका सन्देह करता और पद-पदपर उसी पापीको देखता हुआ उस तमालतरुकी जड़मेंसे निकलकर सरोवरके किनारे जानेका उद्योग करने लगा ।

भलीभाँति पंख न निकलनेके कारण और अनभ्यासवश चलते समय मेरे पैर लड़खड़ा जाते थे । मैं बार-बार मुँहके बल गिरने लग जाता था । जब मैं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णश्रमातुरस्यानभ्यासवशादेकमपि दत्त्वा पदमनवरतमुन्मुखस्य स्थूलस्थूलं श्वसतो धूलिधूसरस्य संसर्पतो मम समभून्मनसि—'अतिकष्टास्ववस्थास्वपि जीवितनिरपेक्षा न भवन्ति खलु जगति प्राणिनां प्रवृत्तयः। नास्ति जीवितादन्यदभिमततरमिह जगति सर्वजन्तूनामेव, उपरतेऽपि सुगृहीतनाम्नि ताते यदहमविकलेन्द्रियः पुनरेव प्राणिमि। धिङ्मामकरुणमतिनिष्ठुरमकृतज्ञम्। अहो सोढपितृमरणशोकदारुणं येन मया जीव्यते, उपकृतमपि नापेक्ष्यते, खलं हि खलु मे हृदयम्। मया हि लोकान्तरगतायामम्बायां नियम्य शोकवेगमाप्रसवदिवसात्परिणतवयसापि सता तैस्तैरुपायैः संवर्धनक्लेशमतिमहान्तमपि स्नेहवशादगणयता यत्तातेन परिपालितस्तत्सर्वमेकपदे विस्मृतम्। अतिकृपणाः खल्वमी प्राणाः, यदुपकारिणमपि तातं क्वापि गच्छन्तमद्यापि नानुगच्छन्ति। सर्वथा न कंचिन्न खलीकरोति जीविततृष्णा, यदीदृगवस्थमपि मामय-

---

तिरछा होकर एक करवट गिरने लगता तो दूसरे करवटके पंखसे किसी तरह सम्हल जाता था। एक-एक पग आगे रखकर पुनः मैं बार-बार ऊपर निहारने लगता था। साँस फूँलने लगी थी। मेरा सारा शरीर धूलसे भरकर मटमैला हो गया था। इस प्रकार चलते-चलते मैं सोचने लगा कि अत्यन्त कठिन स्थितिमें पहुँचकर बहुतेरा कष्ट पानेपर भी प्राणी जीवनकी आशा नहीं त्यागते। संसारके सभी प्राणियोंको जीवनसे बढ़कर और कोई वस्तु प्रिय नहीं होती। क्योंकि जिसका नाम सर्वदा स्मरणीय है, उस पिताके मर जानेपर भी मैं भलीभाँति जी रहा हूँ। मुझ निर्दयी, अति निष्ठुर एवं अकृतज्ञको अनेकशः धिक्कार है। अपने पिताकी मृत्युके शोकको सहकर भी मैं जीवित हूँ। उनका उपकार नहीं मानता। वास्तवमें मेरा हृदय बड़ा पापी है। माताके मर जानेपर मेरा मुख देखकर वे उस असह्य शोकके वेगको पी गये। वृद्ध होते हुए भी जबसे मैं जनमा, तबसे लेकर जबतक जिये तबतक उन्होंने असाधारण स्नेहके साथ मुझे पाला। मेहनतकी तो उन्होंने तनिक भी चिन्ता नहीं की। अनेकानेक उपाय करके उन्होंने मेरा संवर्धन किया। उनके इन उपकारोंको मैं एकदम भूल गया। ये प्राण बड़े ही कृपण हैं। तभी तो ऐसे उपकारी पिताके चले जानेपर भी ये उनका साथ नहीं देते। जीवित रहनेकी तृष्णा सभी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मायासयति जलाभिलाषः। मन्ये चागणितपितृमरणशोकस्य निर्घृणतैव केवलमियं मम सलिलपानबुद्धिः। अद्यापि दूर एव सरस्तीरम्। तथा हि जलदेवतानूपुररवानुकारि दूरेऽद्यापि कलहंसविरुतमेतत्। अस्फुटानि श्रूयन्ते सारसरसितानि। विप्रकर्षाद्दशामुखविसर्पणविरलः संचरति नलिनीखण्डपरिमलः। दिवसस्येयं कष्टा दशा वर्तते। तथा हि। रविरम्बरतलमध्यवर्ती स्फुरन्तमातपमनवरतमनलधूलिनिकरमिव विकिरति करैः अधिकामुपजनयति तृषाम्। संतप्तपांसुपटलदुर्गमा भूः। अतिप्रबलपिपासावसन्नानि गन्तुमल्पमपि मे नालमङ्गकानि। अप्रभुरस्म्यात्मनः। सीदति मे हृदयम्। अन्धकारतामुपयाति चक्षुरपि नाम खलो विधिरनिच्छतोऽपि मे मरणमथोपपादयेत्।

एवं चिन्तयत्येव मयि तस्मात्सरसोऽदूरवर्तिनि तपोवने जाबालिर्नाम महातपा मुनिः प्रतिवसति स्म। तत्तनयश्च हारीतनामा मुनिकु-

---

प्राणियोंको सर्वथा क्रूर बना देती है। क्योंकि ऐसी शोकावस्थामें भी मुझे प्यास सता रही है। पिताके मरनेका शोक जैसे अब कोई चीज नहीं रहा और जल पीनेकी इच्छा ही मानो सर्वोपरि है। इसे निर्दयताके सिवाय और क्या कहा जाय? अब भी सरोवरका किनारा दूर है। क्योंकि जलदेवीके पायलोंकी झनकार जैसी कलहंसोंकी ध्वनि बहुत दूर सुनायी दे रही है। सारसोंका शब्द साफ नहीं सुन पड़ता। दूरीके कारण चारों ओर फैल जानेपर कमलकी सुगन्धि कम आ रही है। दिनमें यह दोपहरका समय बड़ा दुखदायी है। क्योंकि आकाशके मध्यमें आया हुआ सूर्यमण्डल अग्निकी चिनगारियों जैसी धधकती धूपको सब तरफ बिछाये दे रहा है। रास्तेकी धूल धूपसे गरम हो गयी है। इससे पैर आगे नहीं बढ़ते और प्यास बढ़ती जा रही है। अत्यधिक प्याससे मेरे अङ्ग खिन्न हो गये हैं। वे अब तनिक भी आगे बढ़ने योग्य नहीं हैं। आत्मा काबूमें नहीं है और दिल बैठा जाता है। नेत्रोंके समक्ष अन्धकार छा रहा है। अतएव अच्छा हो कि मेरी इच्छा न रहते हुए भी विधाता अब भी मुझे मार डाले।

मैं ऐसा सोच ही रहा था कि इतनेमें उस सरोवरके समीप ही विद्यमान महान् तपस्वी याज्ञवल्क्यका पुत्र हारीत स्नान करनेके लिए जाता हुआ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मारकः सनत्कुमार इव सर्वविद्यावदातचेताः, सवयोभिरपरैस्तपोधनकुमारकैरनुगम्यमानस्तेनैव पथा द्वितीय इव भगवान्विभावसुरतितेजस्वितया दुर्निरीक्ष्यमूर्तिः, उद्यतो दिवसकरमण्डलादिवोत्कीर्णः, तडिद्भिरिव रचितावयवः, तप्तकनकद्रवेणेव बहिरुपलिप्तमूर्तिः, पिशङ्गावदातया देहप्रभया स्फुरन्त्या सबालातपमिव दिवसं सदावानलमिव वनमुपदर्शयन्, उत्तप्तलोहलोहिनीनामनेकतीर्थाभिषेकपूतानामंसस्थलावलम्बिनीनां जटानां निकरेणोपेतः, स्तम्भितशिखाकलापः, खाण्डववनदिधक्षया कृतकपटपटुवेश इव भगवान्पावकः, तपोवनदेवतानूपुरानुकारिणा धर्मशासनकटकेनेव स्फाटिकेनाक्षवलयेन दक्षिणश्रवणविलम्बिना विराजमानः, सकलविषयोपभोगनिवृत्त्यर्थमुपपादितेन ललाटपट्टके त्रिसत्येनेव भस्मत्रिपुण्ड्रकेणालंकृतः, गगनगमनोन्मुखबलाकानुकारिणा स्वर्ग-

---

उधर ही से आ निकला । उसके हमजोली अन्यान्य मुनिकुमार भी उसके साथ चल रहे थे । सब विद्याओंका अध्ययन करनेके कारण हारीतका हृदय सनत्कुमारके हृदयकी तरह सर्वथा शुद्ध हो गया था । वह दूसरे सूर्यके समान तेजस्वी था । इसलिए उसकी ओर निहारनेपर आँखें नहीं ठहरती थीं । देखनेसे ऐसा लगता था कि मानो वह दूसरा अग्नि हो । जैसे उदित होते हुए सूर्यमण्डलसे निकाला गया हो । मानो बिजलीसे उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग रचे गये थे । उसके शरीरपर जैसे सोनेका पानी फेरा गया हो । उसकी दैहिक दीप्ति तनिक पीली और निर्मल होनेके कारण चमचमा रही थी । उसको देखनेसे ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो नयी धूपसे दिन तथा दावानलसे वन देदीप्यमान हो । तपाये गये लोहेके समान लाल और अनेकानेक तीर्थोंमें स्नान करनेके कारण पुनीत जटायें उसके कन्धेपर फैली हुई थीं । उसने शिखा बाँध रक्खी थी । खाण्डव वनको जलानेके लिए कपटपूर्वक ब्राह्मणका वेष धारण करनेवाले अग्निके समान वह तेजस्वी दीख रहा था । तपोवनकी देवीके पायलों अथवा पुंजीभूत धर्मोपदेशोंके समान स्फटिक मणि तथा रुद्राक्षकी माला उसके दाहिने कानपर विद्यमान थी । उसके ललाटमें भस्मका त्रिपुंड्र शोभित था । जिसे देखनेसे ऐसा लगता था कि मानो सांसारिक भोगोंसे छुटकारा पानेके लिए उसने कायिक, वाचिक तथा मानसिक इन तीनों सत्योंका चिह्न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मार्गमिव दर्शयता सततमुद्ग्रीवेण स्फटिकमणिकमण्डलुनाध्यासितवामकरतलः, स्कन्धदेशावलम्बिना कृष्णाजिनेन नीलपाण्डुभासा तपस्तृष्णानिपीतेनान्तर्निपतता धूमपटलेनेव परीतमूर्तिः, अभिनवबिससूत्रनिर्मितेनेव परिलघुतया पवनलोलेन निर्मांसविरलपार्श्वकपञ्जरमिव गणयता वामांसावलम्बिना यज्ञोपवीतेनोद्भासमानः, देवतार्चनार्थमागृहीतवनलताकुसुमपरिपूर्णपर्णपुटसनाथशिखरेणाषाढदण्डेन व्यापृतसव्येतरपाणिः, विषाणोत्खातामुद्वहता स्नानमृदमुपजातपरिचयेन नीवारमुष्टिसंवर्धितेन कुशकुसुमलतायास्यमानलोलदृष्टिना तपोवनमृगेणानुयातः, विटप इव कोमलवल्कलावृतशरीर, गिरिरिव समेखलः, राहुरिवास-

---

अपने माथेपर अंकित कर लिया है। आकाशमें उड़नेकी इच्छासे ऊपर देखनेवाले बगुलेके समान उसकी गर्दन ऊपर उठी हुई थी। जिससे ऐसा लगता था कि मानों वह ऊपर स्वर्गका मार्ग देख रहा हो। उसके बायें हाथमें स्फटिक मणिका कमण्डल विराजमान था। उसके कन्धेपर कृष्णमृगचर्म देखकर ऐसा भासमान होता था कि मानो तपस्याकालमें पिये हुए धुयेंने अब बाहर आकर उसके शरीरको चारों ओरसे घेर लिया है। उसके बायें कन्धेपर पड़ा यज्ञोपवीत वायुके झोंकेसे हिल रहा था और वह मानो मांसहीन पसलीकी हड्डियोंको गिन रहा था। वह जनेऊ इतना महीन था कि जैसे नवीन मृणालसूत्रका बना हुआ हो। पूजाके निमित्त एकत्रित वनलताओंके पुष्पोंसे भरे पत्तोंके दोनोंको उसने पालाशदंडके सिरेपर बाँधकर उसे अपने दाहिने हाथमें ले रक्खा था। चपल नयनोंवाला और तपोवनमें पला हुआ मृग कुशाओं, लताओं और पुष्पोंको निहारता हुआ उसके पीछे-पीछे चल रहा था। उस मृगकी सींगपर खुदी हुई स्नानमृत्तिका लगी थी। मुट्ठी-मुट्ठी नीवार (तिन्नी) खिलाकर उसे आश्रममें पाला गया था। वृक्षकी भाँति उस मुनिकुमारका शरीर कोमल वल्कलसे ढँका था (वृक्ष छालसे ढँका रहता है और हारीतके पास छालके बने कपड़े थे)। वह पर्वतके समान मेखलासम्पन्न था (पर्वतके मध्यमें अद्रिनितम्ब था और हारीतकी कमरमें मूँजकी करधनी थी)। राहुकी तरह वह बार-बार सोमरसका स्वाद ले चुका था (राहु चन्द्रमाको ग्रसनेका स्वाद लेता है और हारीत सोमवल्लीका रस पान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्षुदास्वादितसोमः, पद्मनिकर इव दिवसकरमरीचिपः, नदीतटतरुरिव सततजलक्षालनविमलजटः, करिकलभ इव विकचकुमुददलशकलसित-दशनः, द्रौणिरिव कृपानुगतः, नक्षत्रराशिरिव चित्रमृगकृत्तिकाश्लेषोप-शोभितः, घर्मकालदिवस इव क्षपितबहुदोषः, जलधरसमय इव प्रशमित-रजःप्रसरः, वरुण इव कृतोदवासः, हरिरिवापनीतनरकभयः, प्रदोषारम्भ इव संध्यापिङ्गलतारकः, प्रभातकाल इव बालातपकपिलः, रविरथ इव दृढनियमिताक्षचक्रः, सुराजेव निगूढमन्त्रसाधनक्षपितविग्रहः, जल-

---

करता था)। कमलोंकी तरह वह सूर्यकी किरणें पीता था (कमल सूर्यको किरणोंको ग्रहण करते हैं और हारीत पंचाग्नि तापते समय सूर्यकी किरणोंको पीता था)। नदियोंके तटवर्ती वृक्षोंके समान उसकी जटा सदा धुलती रहनेके कारण निर्मल हो गयी थी (वृक्षोंकी जड़ें धुलती थीं और हारीतके बालोंकी लटें धुलती थीं)। अश्वत्थामाके समान वह कृपानुगत था (अश्वत्थामाके साथ कृपाचार्य रहते थे और हारीत कृपालु स्वभावका था)। नक्षत्रसमूहके समान वह चित्रमृगकृत्तिकाऽश्लेषासे अलंकृत था (नक्षत्रोंमें चित्रा, मृगशीर्ष और आश्लेषा नक्षत्र हैं और हारीत चित्र अर्थात् चितकबरे मृगकी खाल पहने हुए था)। ग्रीष्मकालके दिनोंकी भाँति वह क्षयितबहुदोष था (ग्रीष्ममें रात छोटी होती है और हारीतने अपने बहुतेरे दोष दूर कर दिये थे)। वर्षा ऋतुके समान उसमें रजःप्रसर नहीं था (वर्षा ऋतुमें धूल नहीं उड़ती और हारीतने अपने तपोबलसे रजोगुणको निर्मूल कर दिया था)। वह वरुणदेवके समान उदवास करता था (जलमें वरुणदेवका निवास रहता है और हारीत जलमें खड़ा होकर तप करता था)। भगवान् विष्णुकी तरह उसने नरकका भय निवृत्त कर दिया था (भगवान् विष्णुने नरकासुरको मारकर विश्वका भय दूर किया था और हारीतने अपने तपोबलसे नरकपातका भय भगा दिया था)। सायंकालके सदृश उसके तारे पिंगलवर्ण थे (सायंकालमें गगनमण्डलकी तारिकायें सन्ध्यासे पिंगलवर्ण थीं और हारीतके नेत्रोंकी पुतलियाँ सन्ध्या जैसी पिंगल वर्ण थीं)। प्रभातकाल सदृश वह बालातपकपिल था (प्रभातकालका नवीन आतप (धूप) कपिलवर्ण होता है और हारीत स्वयं नवीन धूपके समान कपिल था)। भगवान् सूर्यके रथसदृश उसका अक्षचक्र नियन्त्रित था

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निधिरिव करालशङ्खमण्डलावर्तगर्तः, भगीरथ इवासकृद्दृष्टगङ्गावतारः, भ्रमर इवासकृदनुभूतपुष्करवनवासः, वनचरोऽपि कृतमहालयप्रवेशः, असंयतोऽपि मोक्षार्थी, सामप्रयोगपरोऽपि सततावलम्बितदण्डः, सुप्तोऽपि प्रबुद्धः, संनिहितनेत्रद्वयोऽपि परित्यक्तवामलोचनस्तदेव कमलसरः सिस्नासुरुपागमत्।

प्रायेणाकारणमित्राण्यतिकरुणार्द्राणि सदा खलु भवन्ति सतां चेतांसि। यतः स मां तदवस्थमालोक्य समुपजातकरुणः समीपवर्तिनमृषिकुमारकमन्यतममब्रवीत्—'अयं कथमपि शुकशिशुरसंजातपक्षपुट

(सूर्यरथके चक्के मजबूत हैं और हारीतकी समस्त इन्द्रियाँ नियन्त्रित थीं)। एक अच्छे राजाकी तरह उसने सुगूढ़ मन्त्रसाधन द्वारा विग्रहका अन्त कर दिया था (भला राजा अपनी मन्त्रणाके कौशलसे युद्धका अन्त कर देता है और हारीतने सुगुप्त मन्त्रोंकी सिद्धिके निमित्त अपना शरीर गला दिया था)। समुद्रके समान वह विकरालशंखावर्तगर्त था (समुद्र बहुतेरे चपलशंखों, जलभौंरों तथा गहरे गड्ढोंवाला है और हारीतके शंख (कनपटी तथा मस्तकके बीचका स्थान) कुछ नीचा और चारों ओरसे उभड़ा हुआ था)। राजा भगीरथके समान उसने अनेक बार गङ्गावतरण देखा था (राजा भगीरथने स्वर्गसे गङ्गाजीको उतरते देखा था और हारीतने अनेक बार गङ्गावतरण तीर्थका दर्शन किया था)। भौंरोंके समान वह कनेकशः पुष्कर वनमें निवास करता था (भौंरे मधुके लोभवश कमलके जंगलमें रहते हैं और हारीत जलसम्पन्न वनमें रहता था)। वनचर होते हुए भी वह महालय (विशाल राजभवन तथा ब्रह्मसमाधि) में प्रविष्ट हो चुका था। असंयत (संयमरहित अथवा विरक्त) होता हुआ भी वह मोक्षाभिलाषी था। साम (शान्तिका उपाय अथवा सामवेद) का उपयोग करते हुए भी वह नित्य दण्ड (डंडा अथवा उपायविशेष) धारण किये रहता था। निद्राके अधीन रहता हुआ भी वह सदा प्रबुद्ध (जाग्रत अथवा ज्ञानी) था और दोनों नेत्रोंके रहते हुए भी उसने वामनेत्र (बायी आँख अथवा स्त्री) को त्याग दिया था।

सत्पुरुषोंका हृदय प्रायः अकारण मैत्री करनेवाला और दयासे आर्द्र होता है। अतएव जब मुनिकुमार हारीतने मुझे वैसी दयनीय परिस्थितिमें देखा तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एव तरुशिखरादस्मात्परिच्युतः श्येनमुखपरिभ्रष्टेन वानेन भवितव्यम्। तथा हि। अतिदवीयस्तया प्रपातस्याल्पशेषजीवितोऽयमामीलितलोचनो मुहुर्मुहुर्मुखेनापतति, मुहुर्मुहुरत्युल्बणं श्वसिति मुहुर्मुहुश्चञ्चुपुटं विवृणोति। न शक्नोति शिरोधरां धारयितुम्। तदेहि। यावदेवायमसुभिर्न विमुच्यते, तावदेव गृहाणेमम्। अवतारय सलिलसमीपम्' इत्यभिधाय तेन मां सरस्तीरमनाययत्। उपसृत्य च जलसमीपमेकदेशनिहितदंडकमंडलुरादाय स्वयं मामामुक्तप्रयत्नमुत्तानितमुखमंगुल्या कतिचित्सलिलविन्दूनपाययत्। अम्भःक्षोदकृतसेकं चोपजातनवीनप्राणमुपतटप्ररूढस्य नवनलिनीदलस्य जलशिशिरायां छायायां निधाय स्वोचितमकरोत्स्नानविधिम्। अभिषेकावसाने चानेकप्राणायामपूतो जपन्पवित्राण्यघमर्षणानि प्रत्यग्रभग्नैरुन्मुखो रक्तारविन्दैर्नलिनीपत्रपुटेन भगवते सवित्रे दत्त्वार्घमुदतिष्ठत्। आगृहीतधौतधवलवल्कलश्च सहज्योत्स्न इव संध्यातपः

उसको दया आ गयी और एक समीपवर्ती मुनिकुमारसे कहा—इस शुकशावकके अभी पंख नहीं निकले हैं, फिर भी यह न मालूम कैसे इस वृक्षके ऊपरसे नीचे आ गिरा है। यह भी संभव है कि किसी बाजके मुखसे छूटकर गिर पड़ा हो। क्योंकि बहुत ऊँचेसे गिरनेके कारण इसके शरीरमें अत्यल्प मात्रामें प्राण शेष हैं। इसके नेत्र मुँदे जा रहे हैं। इसकी साँस फूल रही है। बारम्बार यह मुँहके बल गिरता है। यह पुनः पुनः मुँह खोलता है और सामर्थ्यके अभाववश अपनी गर्दन तक नहीं उठा पाता। सो आओ, इसके प्राण न निकलें उसके पहले ही इसे उठाकर जलके निकट पहुँचा दिया जाय।' ऐसा कहकर हारीतने उस ऋषिकुमारके द्वारा मुझे सरोवरके किनारे पहुँचवा दिया। जलके समीप पहुँचकर हारीतने अपना दण्ड-कमण्डल एक ओर रख दिया। फिर मुझे अपने हाथमें लेकर उसने मेरा मुँह खोला और उँगलियोंसे जलकी कुछ बूँदें पिलायीं। इसके बाद पानीके छींटोंसे मुझे नहलाया। ऐसा करनेपर जब मेरे प्राण लौट आये, तब कमलपत्रोंकी ठण्डी छायामें मुझे बिठाकर उसने विधिवत् स्नान किया। स्नान करनेके बाद कई बार प्राणायाम करके शुद्ध अन्तःकरणसे पुनीत अघमर्षण मंत्रका जप किया और पुरइनके पत्तेमें जल लेकर तथा तत्काल टूटे कमलपुष्पोंसे सूर्यनारायणको अर्घ्य देकर उठ खड़ा हुआ। तद-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसंधान
क्रमांक.....463
पुस्तक.....

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करतलनिर्धूननविशदसटः प्रत्यग्रस्नानार्द्रजटेन सकलेन तेन मुनिकुमारकदम्बकेनानुगम्यमानो मां गृहीत्वा तपोवनाभिमुखं शनैरगच्छत्।

अनतिदूरमिव गत्वा दिशि दिशि सदा संनिहितकुसुमफलैस्तालतिलकतमालहिन्तालबकुलबहुलैरेलालताकुलितनालिकेरीकलापैर्लोललोध्रलवलीलवङ्गपल्लवैरुल्लसितचूतरेणुपटलैरलिकुलझङ्कारमुखरसहकारैरुन्मदकोकिलकुलकलापकोलाहलिभिरुत्फुल्लकेतकीरजःपुञ्जपिञ्जरैः पूगीलतादोलाधिरूढवनदेवतैस्तारकावर्षमिवाधर्मविनाशपिशुनं कुसुमनिकरमनिलचलितमनवरतमतिधवलमुत्सृजद्भिः संसक्तपादपैः काननैरुपगूढम्, अचकितप्रचलितकृष्णसारशतशबलाभिरुत्फुल्लकमलिनीलोहिनीभिर्मारीचमायामृगावलूनरूढवीरुद्लाभिर्दाशरथिचापकोटिक्षतकन्दगर्त-

---

नन्तर धुले हुए श्वेत वल्कल वस्त्र पहनकर वह चन्द्रकिरणसमन्वित सन्ध्यातपकी तरह सुन्दर दीखने लगा। अब उसने अपने हाथसे जटा फटकारकर स्वच्छ किया और मुझे उठाकर धीरे-धीरे अपने आश्रमकी ओर चला। सद्यःस्नान करनेसे भीगी जटाओं युक्त मुनिकुमारोंका समुदाय उसके पीछे-पीछे चल रहा था।

उस सरोवरसे कुछ ही दूर आगे जाकर मैंने एक बहुत सुन्दर आश्रम देखा। वह दूसरे ब्रह्मलोक सदृश दीख रहा था। उसके चारों ओर विविध प्रकारके वृक्षोंसे पूर्ण जंगल लगा था। वे वृक्ष फल-फूलसे लदे हुए थे। उस वनमें ताल, तमाल, तिलक, हिन्ताल और बकुल (मौलसिरी) वृक्षोंकी बहुतायत थी। नारिकेलके पेड़ोंपर इलायचीकी लतायें लसी थीं। लोध्र, लवली (लताविशेष) और लवंगकी पत्तियाँ हवासे हिल रही थीं। आमके बौरकी रज उड़ रही थी। मस्त भौरोंकी गुंजारसे आम्रके वृक्ष झंकृत हो रहे थे। मतवाली कोयलोंका कोलाहल सुनायी दे रहा था। पुष्पित केतकी (केवड़ा) की रजके ढेरसे सारा वन जैसे पीला पड़ गया था। सुपारीके वृक्षपर लसी हुई लतापर बैठी वनदेवियाँ झूला झूल रही थीं। वायु द्वारा हिलाये गये वृक्षोंसे अधर्मविनाशसूचक उल्कापातके सदृश बहुतेरे सफेद फूल धरतीपर गिर रहे थे। निर्भय भावसे दौड़ते हुए सैकड़ों काले हिरनोंसे वह भूमि बड़ी विचित्र लग रही थी। विकसित कमलिनियोंके कारण वह भूभाग लाल दीखता था। पूर्वकालमें मायासे मृगरूप धारण करके मारीचने वहाँकी लताओंके पत्तोंको चर लिया था। दशरथतनय राम-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषमिततलाभिर्दण्डकारण्यस्थलीभिरुपशोभितप्रान्तम्, आगृहीतसमित्कुशकुसुममृद्भिरध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः सर्वतः प्रविशद्भिर्मुनिभिरशून्योपकंठम्, उत्कंठिशिखंडिमंडलश्रूयमाणजलकलशपूरणध्वानम्, अनवरताज्याहुतिप्रीतैश्चित्रभानुभिः सशरीरमेव मुनिजनममरलोकं निनीषुभिरुद्धूयमानधूमलेखाच्छलेनाबध्यमानस्वर्गमार्गगमनसोपानसेतुभिरिवोपलक्ष्यमाणम्, आसन्नवर्तिनोभिस्तपोधनसंपर्कादिवापगतकालुष्याभिस्तरङ्गपरंपरासंक्रान्तरविबिम्बपंक्तिभिस्तापसदर्शनागतसप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिरिव विकचकुमुदवनमृषिजनमुपासितुमवतीर्णं ग्रहगणमिव निशासूद्वहन्तीभिर्दीर्घिकाभिः परिवृतम्, अनिलावनमितशिखराभिः प्रणम्यमानमिव वनलताभिरनवरतमुक्तकुसुमैरभ्यर्च्यमानमिव पादपैः, आबद्धपल्लवाञ्जलिभिरुपास्यमानमिव विटपैः, उटजाजिरप्र-

---

लक्ष्मणने वहाँपर कन्द खोदे थे। इस कारण वहाँकी भूमि कुछ ऊँची-नीची हो गयी थी। काष्ठ, कुश तथा मिट्टी लेकर सब दिशाओंसे आते और ऊँचे स्वरसे पठित पाठका उच्चारण करते हुए छात्रोंके आगे-आगे चलनेवाले मुनि पास ही दिखलायी दे रहे थे। कलशमें जल भरते समय होनेवाली ध्वनिको मेघगर्जन समझते हुए मयूरगण गर्दन उठाकर सुन रहे थे। निरन्तर पड़ती हुई घीकी आहुतियोंसे तृप्त अग्निदेवने जैसे वहाँके सब मुनियोंको सदेह स्वर्ग ले जानेके लिए धूमसमूहके बहाने रास्तेपर सीढ़ियोंका पुल बना दिया था। ऐसी छटा वहाँ दीख रही थी। उस आश्रमके चारों ओर बहुतेरी बावलियाँ विद्यमान थीं। जैसे उन मुनियोंके सम्पर्कसे ही उन बावलियोंकी मलिनता दूर हो गयी थी। उनकी लहरियोंमें सूर्यनारायणका प्रतिबिम्ब पड़नेसे ऐसा ज्ञात होता था कि मानो उन मुनियोंके दर्शनार्थ आये हुए सप्तर्षि स्नान कर रहे हैं। उनके जलमें प्रफुल्लित कमलोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो रात्रिके समय मुनियोंकी सेवा करनेके लिए आकाशसे तारे उतर आये हैं। वायुके झोंकेसे झुकी हुई फुनगियोंसे वनवल्लरियाँ जैसे उस आश्रमको प्रणाम कर रही थीं। अनवरत पुष्पवृष्टि करके आस-पासवाले वृक्ष मानो उसका पूजन कर रहे थे। अपने पत्तोंकी अञ्जलियाँ बनाकर वृक्षोंकी डालियाँ जैसे उस आश्रमकी उपासना कर रही थीं। मुनियोंकी कुटियाओंके आँगनोंमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कीर्णशुष्यच्छ्यामाकम्, उपसंगृहीतामलकलवलीकर्कन्धूकदलीलकुचचूत-पनसतालीफलम्, अध्ययनमुखरबटुजनम्, अनवरतश्रवणगृहीतवषट्-कारवाचालशुककुलम्, अनेकसारिकोद्घुष्यमाणसुब्रह्मण्यम्, अरण्यकु-क्कुटोपभुज्यमानवैश्वदेवबलिपिण्डम्, आसन्नवापीकलहंसपोतभुज्यमा-ननीवारबलिम्, एणीजिह्वापल्लवोपलिह्यमानमुनिबालकम्, अग्निकार्या-र्थदग्धमिसमिसायमानसमित्कुशकुसुमम्, उपलभग्ननारिकेलरसस्निग्ध-शिलातलम्, अचिरक्षुण्णवल्कलरसपाटलभूतलम्, रक्तचन्दनोपलिप्तादि-त्यमण्डलकनिहितकरवीरकुसुमम्, इतस्ततो विक्षिप्तभस्मलेखाकृतमुनि-जनभोजनभूमिपरिहारम्, परिचितशाखामृगकराकृष्टिनिष्कास्यमानप्र-वेश्यमानजरदन्धतापसम्, इभकलभार्धोपभुक्तपतितैः सरस्वतीभुजल-ताविगलितैः शंखवलयैरिव मृणालशकलैः कल्माषितम्, ऋषिजनार्थमे-णकैर्विषाणशिखरोत्खन्यमानविविधकन्दमूलम्, अम्बुपूर्णपुष्करपुटैर्वन-

---

सावाँ (धान्यविशेष) सूख रहा था। आँवले, लवली, बेर, केले, बड़हर, आम, कटहल और ताड़के फल एकत्रित करके रक्खे हुए थे। छात्रोंके पाठाभ्याससे सारा आश्रम मुखरित हो रहा था। निरन्तर उच्चरित वषट्कार शब्दको सुन-सुनकर वहाँके तोते भी उन्हीं शब्दोंको बोल-बोलकर हल्ला मचा रहे थे। वहाँपर अगणित मैनायें वेदघोष कर रही थीं। वनैले मुर्गे वैश्वदेवमें अर्पित बलि खा रहे थे। समीपकी बावलीमें पले कलहंसोंके बच्चे नीवार (तिन्नीके चावल) खाते थे। वहाँकी हिरनियाँ मुनियोंके बच्चोंको चाट रही थीं। हवनकुण्डमें अधजले कुश, समिधायें और फूल चटचटा रहे थे। पत्थरों द्वारा तोड़े गये नारियलोंके जलसे वहाँके शिलातल चिकने हो गये थे। तत्काल निचोड़े हुए वल्कलोंके जलसे धरती लाल हो गयी थी। रक्तचन्दननिर्मित सूर्यमण्डलपर कनेरके पुष्प बिखरे पड़े थे। यत्र-तत्र राख बिछाकर ऋषियोंके भोजनस्थलों (चौकों) पर आड़ बनी हुई थी। आश्रममें पले हुए बन्दर वहाँके अन्धे और बूढ़े तपस्वियोंको भीतर लाते और ले जाते थे। हाथियोंके बच्चोंने मृणालके आधे टुकड़े खा-खाकर छोड़ दिये थे। वे मृणालखण्ड भगवती सरस्वतीकी भुजाओंसे निकले शंखनिर्मित कंकणसरीखे लगते थे और उनसे वह आश्रम चित्रित लग रहा था। वहाँके मृग उन ऋषियोंके लिए अपनी सींगोंसे कन्द-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करिभिरापूर्यमाणविटपालवालकम्, ऋषिकुमारकाकृष्यमाणवनवराहदंष्ट्रान्तराललग्नशालूकम्, उपजातपरिचयैः। कलापिभिः पक्षपुटपवनसंधुक्ष्यमाणमुनिहोमहुताशनम्, आरब्धामृतचरुचारुगन्धम्, अर्धपक्वपुरोडाशपरिमलामोदितम्, अविच्छिन्नाज्यधाराहुतिहुतभुग्झङ्कारमुखरितम्, उपचर्यमाणातिथिवर्गम्, पूज्यमानपितृदैवतम्, अर्च्यमानहरिहरपितामहम्, उद्दिश्यमानश्राद्धकल्पम्, व्याख्यायमानयज्ञविद्यम्, आलोच्यमानधर्मशास्त्रम्, वाच्यमानविविधपुस्तकम्, विचार्यमाणसकलशास्त्रार्थम्, आरभ्यमाणपर्णशालम्, उपलिप्यमानाजिरम्, उपमृज्यमानोटजाभ्यन्तरम्, आबध्यमानध्यानम्, साध्यमानमन्त्रम्, अभ्यस्यमानयोगम्, उपहूयमानवनदेवताबलिम्, निर्वर्त्यमानमौञ्जमेखलम्, क्षाल्यमानवल्कलम्, उपसंगृह्यमाणसमिधम्, उपसंस्क्रियमाणकृष्णाजिनम्, गृह्यमाणगवेधुकम्, शोष्यमाणपुष्करबीजम्, ग्रथ्य-

---

मूल खोद दिया करते थे। वनैले हाथी अपनी सूँड़ोंमें जल भरकर उस आश्रमके वृक्षोंके थाले भर देते थे। वनैले सुअरोंके दाँतोंमें फँसे कमलकन्दको मुनिकुमार खींचकर निकाल देते थे। पले हुए मयूर अपने पंखोंसे हवा करके मुनियोंकी होमाग्नि प्रज्वलित करते थे। अमृतसदृश चरुकी मनोहारिणी सुगन्धि गमक रही थी। अधपके पुरोडाश (हवनीय पदार्थ) की पुनीत सुगन्धिसे सारा आश्रम सुरभित हो रहा था। अग्निकुण्डमें निरन्तर घृतधाराकी आहुति पड़ रही थी और उसकी झंकार सुनायी दे रही थी। अतिथियोंका सत्कार किया जा रहा था। पितरोंकी पूजा हो रही थी। ब्रह्मा, विष्णु और महेशका पूजन हो रहा था। श्राद्धसम्बन्धी उपदेश हो रहे थे। यज्ञविद्यापर व्याख्यान हो रहा था। धर्मशास्त्रपर आलोचना हो रही थी। विविध विषयकी पोथियाँ बाँची जा रही थीं। सभी शास्त्रोंके अर्थपर विचार चल रहा था। पर्णशालायें बन रही थीं। आँगनोंकी लिपायी हो रही थी। मुनियोंके घरोंमें सफाई की जा रही थी। ईश्वरका ध्यान हो रहा था। मंत्रोंकी साधना हो रही थी। योगाभ्यासका क्रम चल रहा था। वनदेवियोंके लिए वलि अर्पित की जा रही थी। मूँजकी करधनियाँ बनायी जा रही थीं। वल्कल वसन धोये जा रहे थे। समिधायें जुटायी जा रही थीं। काले मृगचर्म स्वच्छ किये जा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मानाक्षमालम्, न्यस्यमानवेत्रदण्डम्, आपूर्यमाणकमण्डलुम्, अदृष्टपूर्वं कलिकालस्य, अपरिचितमनृतस्य, अश्रुतपूर्वमनङ्गस्य, अब्जयोनिमिव त्रिभुवनवन्दितम्, असुरारिमिव प्रकटितनरहरिवराहरूपम, सांख्य-मिव कपिलाधिष्ठितम्, मथुरोपवनमिव बलावलीढदर्पितधेनुकम्, उदयनमिवानन्दितवत्सकुलम्, किंपुरुषाधिराज्यमिव मुनिजनगृहीत-कलशाभिषिच्यमानद्रुमम्, निदाघसमयावसानमिव प्रत्यासन्नजलप्रपा-तम्, जलधरसमयमिव वनगहनमध्यसुखसुप्तहरिम्, हनूमन्तमिव

रहे थे। पशुओंके लिए घास एकत्र की जा रही थी। कमलगट्टे सूख रहे थे। रुद्राक्षकी मालायें गूँथी जा रही थीं। बेंतकी छड़ियाँ रक्खी जा रही थीं। संन्यासियोंका सत्कार किया जा रहा था। कमंडल जलसे भरे जा रहे थे। उस आश्रमपर कभी भी कलिकालकी दृष्टि नहीं पड़ी थी। उससे असत्यका परिचय नहीं हुआ था। कामवासनाका उसने नाम भी नहीं सुना था। ब्रह्माके समान वह तीनों भुवनों द्वारा वन्दित था। साक्षात् विष्णुभगवान्की तरह उस आश्रममें नृसिंह और वराहका रूप प्रकटित था (विष्णुभगवानने नृसिंह तथा वराहका अवतार लिया था और आश्रममें मनुष्य, सिंह, सुअर एवं अन्यान्य पशु रहते थे)। सांख्यके समान वह कपिलाधिष्ठित था (कपिलमुनिने सांख्यशास्त्रका निर्माण किया था और उस आश्रममें कपिला गौयें विद्यमान थीं)। मथुराके उपवनकी भाँति वह आश्रम बलावलीढदर्पित-धेनुक था (बलरामने मथुरामें दर्पित धेनुकासुरका वध किया था और उस आश्रममें बलवती तथा दर्पित हथिनियाँ विद्यमान थीं)। उदयनके समान वह आश्रम वत्सकुलको आनन्दित करता था (उदयनने वत्सकुलको आनन्दित किया था और आश्रम बछड़ोंके झुंडको आनन्दित कर रहा था)। किम्पुरुषोंके राज्यकी तरह वहाँके मुनि अपने हाथोंमें जलभरा कलश लेकर द्रुमाभिषेक करते थे (किम्पुरुषोंके राज्यमें द्रुमनामके राजाका अभिषेक हुआ था और आश्रममें ऋषिलोग वृक्ष सींचते थे)। ग्रीष्मऋतुके अन्तके समान जलप्रपात निकट था (ग्रीष्मऋतुके अन्तमें जलकी वर्षा होती है और आश्रमके निकट जलका झरना था)। वर्षाऋतुकी तरह वहाँ श्रीहरि सुखपूर्वक सोते थे। (वर्षाऋतुमें श्रीहरि क्षीरसागरमें शयन करते हैं और आश्रमके वनोंमें सिंह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिलाशकलप्रहारसंचूर्णिताक्षास्थिसंचयम्, खाण्डवविनाशोद्यतार्जुनमिव प्रारब्धाग्निकार्यम्, सुरभिविलेपनधरमपि सतताविर्भूतहव्यधूमगन्धम्, मातङ्गकुलाध्यासितमपि पवित्रम्, उल्लसितधूमकेतुशतमपि प्रशान्तोपद्रवम्, परिपूर्णद्विजपतिमंडलसनाथमपि सदासंनिहिततरुगहनान्धकारम्, अतिरमणीयमपरमिव ब्रह्मलोकमाश्रममपश्यम्।

यत्र च मलिनता हविर्धूमेषु न चरितेषु, मुखरागः शुकेषु न कोपेषु,

---

सोते थे) हनुमान्‌के समान पत्थरोंके टुकड़ोंके सिरेसे कूटकर अक्ष (बहेड़े) के अस्थि-समूहका चूर्ण बन रहा था (हनुमान्‌जीने रावणतनय अक्षयकुमारकी हड्डियाँ चूर की थीं और आश्रममें बहेड़ेकी गुठलियोंको कूटकर चूर्ण बनाया जा रहा था)। खाण्डववन जलानेको उद्यत अर्जुनके समान वहाँपर अग्निकार्य आरम्भ हो चुका था (अर्जुनने वन जलानेमें अग्निकी सहायता की थी और आश्रममें हवनकार्य प्रारम्भ हो गया था)। (कथान्तर—राजा श्वेतार्कने बारह वर्षोंतक यज्ञ किया। उसमें निरन्तर घृतकी आहुती दी गयी। जिसे खाकर अग्निदेवके उदरमें मन्दाग्निरोग हो गया। यह रोग निवृत्त करनेके लिए ब्रह्माजीने उन्हें विविध औषधियोंसे भरा खाण्डववन जलानेकी सलाह दी। किन्तु इन्द्रने वह वन नहीं जलाने दिया और लगी आग बुझानेके निमित्त बहुत जल बरसाया। तब अग्निने ब्राह्मणका रूप धारण करके श्रीकृष्ण और अर्जुनसे सहायता माँगी। तदनुसार अर्जुनने वनके ऊपर बाणोंका वितान बना दिया, जिससे वर्षाका पानी खाण्डव वनमें नहीं पहुँच सका और अग्निने उसे जला डाला)। सुरभिविलेपन (सुगन्धिलेप अथवा गोबरसे लीपना) होनेपर भी वहाँपर सदा धुएँकी गन्ध निकला करती थी। मातङ्ग (हाथी अथवा चांडालजाति) का निवास होनेपर भी वह सदा पुनीत रहता था। यद्यपि सैकड़ों धूमकेतु (अग्नि अथवा अनिष्टसूचक नक्षत्र) वहाँ दीखते थे, फिर भी कोई उपद्रव नहीं होता था। द्विजपति (चन्द्रमा अथवा श्रेष्ठ ब्राह्मण) मण्डलीके उपस्थित रहनेपर भी वृक्षोंकी झुरमुटमें सदा अन्धकार छाया रहा करता था।

उस आश्रमपर मलिनता (दोष अथवा कालिमा) एकमात्र यज्ञकुण्डसे उठते धुयेंमें दिखायी देती थी—किसीके चरित्रमें कोई दूषण नहीं था। मुखपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु, चञ्चलता कदलीदलेषु न मनःसु, चक्षूरागः कोकिलेषु न परकलत्रेषु, कण्ठग्रहः कमण्डलुषु न सुरतेषु, मेखलाबन्धो व्रतेषु नेर्ष्याकलहेषु, स्तनस्पर्शो होमधेनुषु न कामिनीषु, पक्षपातः कृकवाकुषु न विद्याविवादेषु, भ्रान्तिरनलप्रदक्षिणासु न शास्त्रेषु, वसुसंकीर्तनं दिव्यकथासु न तृष्णासु, गणना रुद्राक्षवलयेषु न शरीरेषु, मुनिबालनाशः ऋतुदीक्षया न मृत्युना, रामानुरागो रामायणेन न यौवनेन, मुखभङ्गविकारो जरया न धनाभिमानेन। यत्र च महाभारते

लालिमा केवल तोतोंके मुखपर रहती थी—क्रोधसे किसीका मुख नहीं लाल होता था। तीक्ष्णता (तेजी) केवल कुशके अग्रभागमें रहती थी—किसीके स्वभावमें तेजी नहीं रहती थी। चञ्चलता केवल केलेके पत्तोंमें दीखती थी—किसीके मनमें वह नहीं रहती थी। चक्षूराग (नेत्रोंकी लाली अथवा कटाक्ष-प्रेम) केवल कोयलोंमें रहती थी—परस्त्रियोंपर किसीकी बुरी निगाह नहीं पड़ती थी। कण्ठग्रह (गर्दन नापना अथवा मैथुनके समय कण्ठालिङ्गन) केवल माँजते समय कमण्डलमें रहता था—रतिक्रीड़ामें नहीं। मेखलाबन्ध (मौंजी-बन्धन अथवा जञ्जीरका बन्धन) केवल व्रतमें था—ईर्ष्याद्वेषजनित कलहवश कोई जञ्जीरमें नहीं बँधता था। होमकी वेलामें केवल गौओंका स्तनस्पर्श होता था—स्त्रियोंका स्तनस्पर्श नहीं होता था। केवल मुर्गोंका ही पक्षपात (पंख गिरना अथवा तरफदारी) होता था—शास्त्रीय विवादमें कोई किसीका पक्ष नहीं लेता था। भ्रान्ति (भ्रमण अथवा भ्रम) केवल अग्निकी प्रदक्षिणाके अवसरपर ही होता था—शास्त्रोंके अर्थमें भ्रम नहीं हो पाता था। महाभारतकी कथामें ही वसुसंकीर्तन (अष्टवसु अथवा द्रव्य) का नाम लिया जाता था—धनजनित तृष्णामें धनका नाम नहीं लिया जाता था। गणना (गिनती अथवा आदर) केवल भगवन्नाम जपते समय रुद्राक्षकी मालापर होती थी—किसीके शरीरका आदर नहीं होता था। मुनिबालों (मुनियोंके केश अथवा मुनियोंके बालक) का नाश केवल यज्ञकी दीक्षा लेते समय होता था—मृत्युसे किसी मुनिपुत्रका नाश नहीं होता था। रामानुराग (राममें भक्ति अथवा स्त्रियोंसे प्रेम) केवल रामायणमें दीखता था—किसी युवतीसे कोई अनुराग नहीं करता था। मुखके ऊपर भङ्गविकार (मुँहकी झुर्री अथवा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शकुनिवधः, पुराणे वायुप्रलपितम्, वयःपरिणामेन द्विजपतनम्, उपवनचन्दनेषु जाड्यम्, अग्नीनां भूतिमत्त्वम्, एणकानां गीतश्रवणव्यसनम्, शिखण्डिनां नृत्यपक्षपातः, भुजङ्गमानां भोगः, कपीनां श्रीफलाभिलाषः, मूलानामधोगतिः।

तस्य चैवंविधस्य मध्यभागमण्डलमलंकुर्वाणस्यालक्तलोहितपल्लवस्य मुनिजनालम्बितकृष्णाजिनजलकरकसनाथशाखस्य तापसकुमारिकाभिरालवालदत्तपीतपिष्टपञ्चाङ्गुलस्य हरिणशिशुभिः पीयमानालवालकसलिलस्य मुनिकुमारकाबद्धकुशचीरदाम्नो हरितगोमयोपलेपनविविक्त-

---

मुँह बिगाड़ने आदिका विकार) वृद्धावस्थामें ही होता था—धन आदिके घमंडसे कोई मुँह नहीं बिगाड़ता था। शकुनी (राजा दुर्योधनका मामा अथवा पक्षी) का वध केवल महाभारतमें सुना जाता था—कोई पक्षियोंका वध नहीं करता था। वायुप्रलपित (वायुदेवका प्रवचन अथा वातजनित-बकवास) केवल पुराणोंमें सुनायी देता था। द्विजपतन (दाँतोंका गिरना अथवा विप्रोंका अपकर्ष) केवल वृद्धावस्थामें ही होता था। जाड्य (शीत-लता अथवा मूर्खता) केवल उपवनके चन्दनमें ही रहता था। भूति (राख अथवा धन) केवल अग्निमें रहती थी। गीत सुननेका व्यसन केवल मृगोंमें ही रहता था। नृत्यपक्षपात (नाचमें पंख गिरना अथवा नृत्यमें प्रगाढ़ अनुराग) केवल मयूरोंमें ही रहता था। भोग (फन अथवा स्त्रीसंभोगजन्य सुख) केवल सर्पोंमें ही था। श्रीफल (बिल्वफल अथवा धनका फल) पर प्रेम केवल बन्दरोंमें ही रहता था। अधोगति (नीचेको जाना अथवा नरक) केवल वृक्षोंकी जड़में ही रहती थी।

पूर्वोक्त प्रकारसे वर्णित आश्रमके मध्यभागको सुशोभित करता हुआ लाल पत्तोंवाला एक अशोकवृक्ष था। उसकी शाखाओंपर मुनियोंने अपने कृष्णमृग-चर्म तथा जलभरे कमंडल लटका रक्खे थे। तापसकन्याओंने उस वृक्षकी जड़पर पाँचों उँगलियोंके थापे लगाये थे। उस अशोकके चारों ओर थाला बना हुआ था। मृगशावक उस थालेमें जल पिया करते थे। मुनियोंकी बालिकाओंने उसपर कुशनिर्मित वस्त्र तथा मालायें बाँध रक्खी थीं। उसका तलभाग गायके ताजे गोबरसे लिपा हुआ था। अभी ही वहाँ फूलोंका उपहार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तलस्य तत्क्षणकृतकुसुमोपहाररमणीयस्य नातिमहतः परिमण्डलतया विस्तीर्णावकाशस्य रक्ताशोकतरोरधश्छायायामुपविष्टम्, उग्रतपोभिर्भुवनमिव सागरैः कनकगिरिमिव कुलपर्वतैः क्रतुमिव वैतानिकवह्निभिः कल्पान्तदिवसमिव रविभिः कालमिव कल्पैः समन्तान्महर्षिभिः परिवृतम्, उग्रशापकम्पितदेहया प्रणयिन्येव विहितकेशग्रहया क्रुद्धयेव कृतभ्रूभङ्गया मत्तयेवाकुलितगमनया प्रसाधितयेव प्रकटिततिलकया जरया गृहीतव्रतयेव भस्मधवलया धवलीकृतविग्रहम्, आयामिनीभिः पलितपाण्डुराभिस्तपसा विजित्य मुनिजनमखिलं धर्मपताकाभिरिवोच्छ्रिताभिरमरलोकमारोढुं पुण्यरज्जुभिरिवोपसंगृहीताभिरतिदूरप्रवृद्धस्य पुण्यतरोः

अर्पित किया गया था। इससे उसकी सुन्दरता और भी बढ़ गयी थी। यद्यपि वह वृक्ष बहुत बड़ा नहीं था, फिर भी चारों तरफ फैलावके कारण उसका अवकाश बहुत लम्बा-चौड़ा दीख रहा था। उसी अशोक वृक्षकी छायामें मैंने महर्षि जाबालिको विराजमान देखा। जैसे समुद्रोंसे सब भुवन, कुलपर्वतोंसे सुमेरुगिरि, यज्ञाग्नियोंसे यज्ञ, सूर्योंसे प्रलयदिवस और कल्पोंसे काल घिरा रहता है, उसी प्रकार महर्षि याज्ञवल्क्य मुनियोंसे घिरे हुए थे। उग्र शापके भयसे मानो शरीर कँपाती, प्रेमिकाके समान केशोंको पकड़ती (प्रणयिनी केश पकड़ती है और बुढ़ौतीने केश श्वेत कर दिये थे), क्रुद्धा नारीके समान भ्रूभङ्ग करती (क्रुद्धा नारी भौं चढ़ाती है और बुढ़ौतीने भौंहोंपर झुर्रियाँ डाल दी थीं), उन्मत्ताके समान लड़खड़ाते पैरोंसे चलती (उन्मत्ता स्त्रीके पैर लड़खड़ाते हैं और बुढ़ौतीसे मनुष्यके पैर सीधे नहीं पड़ते), अलंकारधारिणी स्त्रीके समान तिल दिखाती (अलंकारधारिणी स्त्री मस्तकमें तिलक लगाती है और बुढ़ौतीने सारे तनमें काले-काले तिल उत्पन्न दिये थे), व्रतधारिणीके समान भस्मधवल दीखती (व्रतधारिणी शरीरमें भस्म लगाकर श्वेत होती है और बुढ़ौती सारे शरीरको भस्मकी भाँति उज्ज्वल कर देती है) हुई वृद्धावस्थाने महामुनि जाबालिका सारा शरीर श्वेत कर डाला था। उन महामुनिकी लम्बी और बुढ़ौतीके कारण उज्ज्वल जटा ऐसी लगती थी, जैसे उन्होंने अपने तपोबलसे सब ऋषियोंको जीतकर ऊँची धर्मपताका प्राप्त कर ली हो। अथवा वह स्वर्गारोहणके निमित्त जुटायी हुई पुण्यकी रस्सी हो, या कि अत्यधिक दूरी-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुसुममञ्जरीभिरिवोद्गताभिर्जटाभिरुपशोभितम्, उपरचितभस्म-त्रिपुण्ड्रकेण तिर्यक्प्रवृत्तत्रिपथगास्रोतस्त्रयेण हिमगिरिशिलातलेनेव ललाटफलकेनोपेतम्, अधोमुखचन्द्रकलाकाराभ्यामवलम्बितवलि-शिथिलाभ्यां भ्रूलताभ्यामवष्टभ्यमानदृष्टिम्, अनवरतमन्त्राक्षराभ्या-सविवृताधरपुटतया निष्पतद्भिरतिशुचिभिः सत्यप्ररोहैरिव स्वच्छेन्द्रिय-वृत्तिभिरिव करुणारसप्रवाहैरिव दशनमयूखैर्धवलितपुरोभागम्, उद्वमदमलगङ्गाप्रवाहमिव जह्नुम्, अनवरतसोमोद्गारसुगन्धिनिश्वासाव-कृष्टैर्मूर्तिमद्भिः शापाक्षरैरिव सदा मुखभागसंनिहितैः परिस्फुरद्भिर-लिभिरविरहितम्, अतिकृशतया निम्नतरगण्डगर्तमुन्नततरहनुघोणमा-करालतारकमवशीर्यमाणविरलनयनपक्ष्ममालमुद्गतदीर्घरोमरुद्धश्रवणवि-वरमानाभिलम्बकूर्चकलापमाननमादधानम्, अतिचपलानामिन्द्रियाश्वा-नामन्तःसंयमनरज्जुभिरिवाततताभिः कंठनाडीभिर्निरन्तरावनद्ध-

---

तक फैली तपस्यारूपी वृक्षके पुष्पोंकी मञ्जरी हो। भस्मके त्रिपुंड्रसे अलंकृत ललाट देखकर ऐसा भान होता था कि मानो भगवती गंगाकी तीनों धाराओंसे सुशोभित हिमवान्‌का शिलातल हो। नीचेकी ओर मुख करके रक्खी हुई चन्द्रकलाके सदृश एवं झुर्रियाँ पड़नेसे शिथिल भौंहोंसे उनकी दृष्टि अवरुद्ध हो गयी थी। सर्वदा मंत्राक्षरोंका जप करते रहनेसे उनका अधरपुट खुला रहता था। जिससे दन्तकिरणें मुँहसे बाहर निकला करती थीं। जो देखनेमें सत्यके अंकुर, इन्द्रियोंकी विमल वृत्ति तथा करुणारसके प्रवाह सरीखी लग रही थीं। उन दन्तकिरणोंसे आगेका भाग उज्ज्वल हो जानेके कारण वे ऐसे दीख रहे थे, मानो गंगाजीके विमल प्रवाहको उगलते हुए साक्षात् जह्नु मुनि विराजमान हों। अनवरत सोमरसकी ढकार द्वारा निकले सुगन्धित श्वाससे आकृष्ट तथा मूर्तिमान् शापाक्षर सरीखे सदा मुखके पास मँडरानेवाले भौंरे तनिक देरको भी उनके पाससे नहीं हटते थे। अतीव कृशतावश उनके कपोल पिचक गये थे। ठोढ़ी और नासिका ऊपरको उभड़ आयी थी। नयनों-की पुतलियाँ तनिक ऊपरकी ओर सरक गयी थीं। पलकोंमें इने-गिने बाल शेष रह गये थे। कर्णछिद्र बड़े-बड़े रोयेंसे मुँद गये थे। उनकी दाढ़ी बढ़कर नाभी तक लटक आयी थी। अतिशय चपल इन्द्रियरूपी घोड़ोंको भीतर ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कन्धरं समुन्नतविरलास्थिपञ्जरमंसावलम्बियज्ञोपवीतं वायुवशजनित-तनुतरंगभङ्गमुत्प्लवमानमृणालमिव मन्दाकिनीप्रवाहमकलुषमङ्गमुद्वह-न्तम्, अमलस्फटिकशकलघटितमक्षवलयमत्युज्ज्वलस्थूलमुक्ताफल-ग्रथितं सरस्वतीहारमिव चलदङ्गुलिविवरगतमावर्तयन्तम्, अनवरत-भ्रमिततारकाचक्रमपरमिव ध्रुवम्, उन्नमता शिराजालकेन जरत्कल्प-तरुमिव परिणतलतासंचयेन निरन्तरनिचितम्, अमलेन चन्द्रांशुभिरि-वामृतफेनैरिव गुणसंतानतन्तुभिरिव निर्मितेन मानससरोजलक्षालित-शुचिना दुकूलवल्कलेनाद्वितीयेनेव जराजालकेन संछादितम्, आसन्न-वर्तिना मन्दाकिनीसलिलपूर्णेन त्रिदण्डोपविष्टेन स्फाटिककमण्डलुना विकचपुण्डरीकराशिमिव राजहंसेनोपशोभमानम्, स्थैर्येणाचलानां गाम्भीर्येण सागराणां तेजसा सवितुः प्रशमेन तुषाररश्मेर्निर्मलतयाम्ब-

---

रोकनेवाली लगाम जैसी लम्बी-लम्बी नसोंसे उनका कन्धा भरा हुआ था। उनके विरल अस्थिपंजर उभड़ आये थे। कन्धेपर शुभ्र यज्ञोपवीत लटकता रहता था। वायुसे उत्पन्न छोटी-छोटी लहरियों तथा तैरते हुए मृणालोंसे युक्त मन्दा-किनीकी धाराके समान उनका शरीर स्वच्छ दीख रहा था। निर्मल स्फटिक-मणिके टुकड़ोंसे निर्मित, श्वेत तथा बहुत बड़े-बड़े मोतियोंसे गुँथे सरस्वतीके हार सदृश देदीप्यमान रुद्राक्षकी मालाको वे अपनी काँपती उँगलियोंके बीचमें रखकर फेर रहे थे। निरन्तर घूमते हुए तारकमंडलवाले दूसरे ध्रुवके समान उनकी शोभा हो रही थी। उभड़ी हुई नसोंके कारण वे ऐसे दीख रहे थे, जैसे अतिशय परिपक्व लताओंसे परिवेष्टित प्राचीन कल्पवृक्ष हो। मानसरोवरके जलमें धुलनेसे उज्ज्वल वल्कल वसनको उन्होंने ओढ़ लिया था। उनके शरीरपर वह वस्त्र ऐसा लगता था कि जैसे चन्द्रमाकी किरणोंका, अमृतके फेनका तथा कल्पवृक्षके तन्तुओंका बनाया हुआ हो। वह उनके ऊपर दूसरे बुढ़ापेके जाल जैसा पड़ा दीखता था। उनके समीप ही मन्दाकिनीके जलसे भरा कमंडल तिपाईपर रक्खा हुआ था। उससे उनकी ऐसी शोभा हो रही थी कि जैसे विकसित कमलराशिके मध्यमें कोई राजहंस बैठा हुआ हो। वे स्थिर-तामें पहाड़ोंकी, गाम्भीर्यमें समुद्रोंकी, तेजमें सूर्यकी, शान्तिमें चन्द्रमाकी और स्वच्छतामें आकाशमंडलकी बराबरी कर रहे थे। अपने असाधारण प्रभावसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रतलस्य संविभागमिव कुर्वाणम्, वैनतेयमिव स्वप्रभावोपात्तद्विजाधिपत्यम्, कमलासनमिवाश्रमगुरुम्, जरच्चन्दनतरुमिव भुजंगनिर्मोकधवलजटाकुलम्, प्रशस्तवारणपतिमिव प्रलम्बकर्णबालम्, बृहस्पतिमिवाजन्मसंवर्धितकचम्, दिवसमिवोद्यदर्कबिम्बभास्वरमुखम्, शरत्कालमिव क्षीणवर्षम्, शान्तनुमिव प्रियसत्यव्रतम्, अम्बिकाकरतलमिव रुद्राक्षवलयग्रहणनिपुणम्, शिशिरसमयसूर्यमिव कृतोत्तरासङ्गम्, वडवानलमिव संततपयोभक्षम्, शून्यनगरमिव दीनानाथ-

---

उन्हें गरुड़के समान सभी द्विजोंका आधिपत्य प्राप्त था (गरुड़ पक्षियोंके स्वामी थे और जाबालि ब्राह्मणोंके अधिपति थे)। साक्षात् ब्रह्माजीके समान वे आश्रमगुरु थे (ब्रह्मा ब्रह्मचर्यादि चारों आश्रमोंके गुरु थे और जाबालि अपने आश्रमवासियोंके गुरु थे)। पुरातन चन्दनतरुके समान उनकी जटा भुजंगकंचुकधवल थी (चन्दनतरुकी जड़ साँपकी केंचुलसे सफेद होती है और जाबालिकी जटा साँपकी केंचुल जैसी सफेद थी)। विशालकाय गजराजके सदृश उनके कर्णबाल लटकते थे (गजराजके कान तथा पूँछके केश लटकते रहते हैं और जाबालिके कानोंके बाल लटके रहते थे)। बृहस्पतिके समान उन्होंने जन्मसे ही कचका वर्धन किया था (बृहस्पतिने अपने पुत्र कचको बढ़ाया था और जाबालिने अपने बाल बढ़ाये थे)। दिवसके सदृश उनका मुख अर्कबिम्बभास्वर था (दिवसमुख यानी प्रभातकाल सूर्यमंडलसे दीप्तिमान् होता है और जाबालिका मुख सूर्यमंडल जैसा देदीप्यमान था)। वे शरद्ऋतुके समान क्षीणवर्ष थे (शरद्ऋतुमें वर्षा क्षीण हो जाती है और जाबालिके जीवनके बहुतेरे वर्ष बीत चुके थे) शन्तनुके समान सत्यव्रतपर उनका प्रेम था (शन्तनुका अपने पुत्र भीष्मपर प्रेम था और जाबालिका सत्य आचारपर अनुराग था)। पार्वतीके हाथकी तरह वे रुद्राक्ष ग्रहण करनेमें निपुण थे (क्रीडामें पार्वती अपने हाथोंसे शिवजीके नेत्र मूंद लेती हैं और जाबालि रुद्राक्षकी माला धारण करनेमें निपुण थे)। शिशिरकालीन सूर्यके समान उन्होंने उत्तरासंग ले रक्खा था (शिशिरऋतुमें सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं और जाबालिने उपरना ओढ़ रक्खा था)। वडवानलके समान वे सर्वदा पयोभक्षण करते थे (वडवानल सदा जल उदरस्थ करता है और जाबालि सदा दूध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विपन्नशरणम्, पशुपतिमिव भस्मपांडुरोमाश्लिष्टशरीरं भगवन्तं जाबालिमपश्यम्।

अवलोक्य चाहमचिन्तयम्—'अहो प्रभावस्तपसाम्। इयमस्य शान्तापि मूर्तिरुत्तप्तकनकावदाता परिस्फुरन्ती सौदामिनीव चक्षुषः प्रतिहन्ति तेजांसि। सततमुदासीनापि महाप्रभावतया भयमिवोपजनयति प्रथमोपगतस्य। शुष्कनलकाशकुसुमनिपतितानलचटुलवृत्ति नित्यमसहिष्णु तपस्विनां तनुतपसामपि तेजः प्रकृत्या दुःसहं भवति। किमुत सकलभुवनतलवन्दितचरणानामनवरततपःक्षपितमलानां करतलामलकवदखिलं जगदालोकयतां दिव्येन चक्षुषा भगवतामेवंविधानामघक्षयकारिणाम्। पुण्यानि हि नामग्रहणान्यपि महामुनीनाम्, किं पुनर्दर्शनानि। धन्यमिदमाश्रमपदमयमधिपतिर्यत्र। अथवा भुवनतलमेव

पिया करते थे)। शून्य नगरके समान वे दीनानाथविपन्नशरण थे (सूने नगरमें उदास, अनाथ और विपन्न घर होते हैं और जाबालि दीनों, अनाथों और विपत्तिमें पड़े प्राणियोंके रक्षक थे)। शंकरजीके समान उनका शरीर भस्मपांडुरोमाश्लिष्ट था (शिवजीका शरीर भस्मसे पांडुर और पार्वतीसे आलिंगित रहता है और जाबालिका शरीर भस्मकी तरह श्वेत और रोयेंसे भरा था)।

उन्हें देखते ही मैंने सोचा—'अहो! तपस्याका कितना प्रभाव होता है। जिससे इनकी यह शान्त और सौम्य मूर्ति भी तपाये गये सोनेके समान दमकती हुई चमकनेवाली बिजलीकी तरह मेरी आँखोंके तेजको जैसे छोपे ले रही है। सर्वदा उदासीन रहती हुई भी यह दिव्यमूर्ति अपने अनोखे प्रभावसे पहली बार सामने आये हुए व्यक्तिको भयभीत कर देती है। सूखी घास और कासके फूलपर पड़ी हुई आगके समान चंचल प्रकृतिवाले साधारण तपस्वियोंका भी तेज स्वभावतः दुःसह होता है। तब फिर इस प्रकारके पापनाशक महापुरुषके तेजका तो कहना ही क्या है कि सभी भुवन जिनके चरणोंको प्रणाम करते हैं। अनवरत की हुई तपस्यासे जिनका मनोमल धुल चुका है और जो अपनी दिव्यदृष्टिसे हाथपर रक्खे हुए आँवलेकी तरह समस्त विश्वको देख सकते हैं। ऐसे महामुनियोंका तो नाम लेनेसे ही बहुत बड़ा पुण्य होता है, तब फिर दर्शनकी बात ही क्या है। धन्य यह आश्रम है कि जिसके ये अधिपति हैं। अथवा यह समस्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धन्यमखिलमनेनाधिष्ठितमवनितलकमलयोनिना। पुण्यभाजः खल्वमी मुनयो यदहर्निशमेनमपरमिव नलिनासनमपगतान्यव्यापारा मुखावलोकननिश्चलदृष्टयः पुण्याः कथाः शृण्वन्तः समुपासते। सरस्वत्यपि धन्या यास्य तु सततमतिप्रसन्ने करुणाजलनिस्यन्दिन्यगाधगाम्भीर्ये रुचिरद्विजपरिवारा मुखकमलसंपर्कमनुभवन्ती निवसति हंसीव मानसे। चतुर्मुखकमलवासिभिश्चतुर्वेदैः सुचिरादिदमपरमुचितमासादितं स्थानम्। एनमासाद्य शरत्कालमिव कलिजलदसमयकलुषिताः प्रसादमुपगताः पुनरपि जगति सरित इव सर्वविद्याः। नियतमिह सर्वात्मना कृतावस्थितिना भगवता परिभूतकलिकालविलसितेन धर्मेण न स्मर्यते कृतयुगस्य। धरणितलमनेनाधिष्ठितमालोक्य न वहति नूनमिदानीं सप्तर्षिमण्डलनिवासाभिमानमम्बरतलम्। अहो! महासत्त्वेयं जरा यास्य प्रलयरविरश्मिनिकरदुर्निरीक्ष्ये रजनिकरकिरणपाण्डुशि-

---

भुवनमंडल ही धन्य है। क्योंकि पृथिवीतलके ये मूर्तिमान् ब्रह्मा उसपर रह रहे हैं। आश्रमके ये मुनि भी बड़े पुण्यात्मा हैं, जो अन्य सब काम छोड़कर रात दिन दूसरे ब्रह्माके समान इन मुनिराजके मुखपर दृष्टि गड़ाये इनकी पुनीत वाणी सुनते हुए सेवकाईमें लगे रहते हैं। जैसे राजहंसी कमलके संसर्ग-सुखका अनुभव करती हुई गहरे मानसरोवरमें निवास करती है, उसी प्रकार सुन्दर ब्राह्मणोंसे परिवृत होकर जो सरस्वती इनके मुख-संसर्ग-सुखका आनन्द लेती हुई अनुग्रह तथा दयाके आधार एवं अतिशय गाम्भीर्य गुणसम्पन्न इनके हृदयमें निवास करती है, वह भी धन्य है। ब्रह्माजीके चार मुखरूपी कमलोंमें रहनेवाले चारों वेदोंको बहुत समय बाद ऐसा यह दूसरा और उपयोगी स्थान प्राप्त हुआ है। जिस तरह बरसातमें नदियाँ मलीन होती हैं और शरद्ऋतु आनेपर स्वच्छ हो जाती हैं, वैसे ही संसारमें कलिके प्रभावसे मलिनताको प्राप्त विद्यायें इनका सम्पर्क पाकर फिर निर्मल हो गयी हैं। जिसने कलिकालकी सभी चेष्टाओंको ठुकरा दिया है, वे भगवान् धर्म नियतरूपसे इनके तनमें बसते हुए सत्ययुगका कभी भी स्मरण न करते होंगे। इन महर्षि जाबालिको धरतीपर विद्यमान देखकर आकाश अब अपने यहाँ सप्तर्षियोंके रहनेका अभिमान नहीं कर सकेगा। अहो! बुढ़ौती भी बड़ी बलवती होती है। जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोरुहे जटाभारे फेनपुञ्जधवला गंगेव पशुपतेः क्षीराहुतिरिव शिखाकलापे विभावसोर्निपतन्ती न भीता। बहलाज्यधूमपटलमलिनीकृताश्रमस्य भगवतः प्रभावाद्भीतमिव रविकिरणजालमपि दूरतः परिहरति तपोवनम्। एते च पवनलोलपुञ्जीकृतशिखाकलापा रचिताञ्जलय इवात्र मन्त्रपूतानि हवींषि गृह्णन्त्येतत्प्रीत्याशुशुक्षणयः। तरलितदुकूलवल्कलोऽयं चाश्रमलताकुसुमसुरभिपरिमलो मन्दमन्दचारी सशङ्क इवास्य समीपमुपसर्पति गन्धवाहः। प्रायो महाभूतानामपि दुरभिभवानि भवन्ति तेजांसि। सर्वतेजस्विनामयं चाग्रणीः। द्विसूर्यमिवाभाति जगदनेनाधिष्ठितं महात्मना। निष्कम्पेव क्षितिरेतदवष्टम्भात्। एष प्रवाहः करुणारसस्य, संतरणसेतुः संसारसिन्धोः, आधारः क्षमाम्भसाम्, परशुस्तृष्णालतागहनस्य, सागरः संतोषामृतरसस्य, उपदेष्टा सिद्धिमार्गस्य, अस्तगिरिरसद्ग्रहकस्य, मूलमुपशमतरोः, नाभिः प्रज्ञाचक्रस्य,

---

प्रलयकालीन सूर्यकी किरणों सदृश कठिनाईसे देखने योग्य तथा चन्द्रमाकी किरणोंके समान श्वेत इनके केशोंभरी जटापर गिरती हुई तनिक भी भयभीत नहीं हुई। इस प्रकार जरा अनायास आ गिरी, जैसे शिवजीकी जटामें गंगा तथा अग्निकुण्डमें दूधकी आहुति आ गिरी हो। इन महामुनिके द्वारा प्रचुरमात्रामें हवन किये गये घृतके धुएँसे सारा आश्रम मलीन हो गया है। अतएव जैसे इनके प्रतापसे डरकर सूर्यनारायणकी किरणें इस तपोवनको दूरसे ही त्याग देती हैं। यहाँपर वायुके वेगसे चपल तथा ऊपरकी ओर उठती हुई अपनी लपटोंको एकत्रित करके अग्निदेव मंत्रोच्चारणसे पुनीत हविको जैसे अंजली बाँधकर प्रेमपूर्वक स्वीकार करते हैं। वसनरूपी वल्कलोंको उड़ाती, आश्रमकी लताओंके पुष्पोंका सौरभ लाती और मन्दगतिसे चलती वायु जैसे भयसे ठिठकती हुई इनके समीप आती है। पृथिव्यादि महाभूतोंका भी तेज प्रायः दुःसह होता है। फिर ये महापुरुष तो सब तेजस्वियोंमें अग्रणी हैं। इन महात्माके रहनेसे संसार दो सूर्योंसे सम्पन्न दीखता है। इनका आधार पाकर पृथिवी जैसे निष्कम्प हो गयी है। ये महामुनि करुणारसके प्रवाह हैं। संसारसागरसे पार होनेके लिए पुल हैं। क्षमारूपी जलके आधार हैं। भोग तथा लालसारूपी लतासमूहके कुठार हैं। सन्तोषरूपी अमृतके समुद्र हैं। सिद्धिमार्गके उपदेष्टा हैं। अशुभ-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्थितिर्वंशो धर्मध्वजस्य, तीर्थं सर्वविद्यावताराणाम्, वडवानलो लोभार्णवस्य, निकषोपलः शास्त्ररत्नानाम्, दावानलो रागपल्लवस्य, मन्त्रः क्रोधभुजंगस्य, दिवसकरो मोहान्धकारस्य, अर्गलाबन्धो नरकद्वाराणाम्, कुलभुवनमाचाराणाम्, आयतनं मङ्गलानाम्, अभूमिर्मदविकाराणाम्, दर्शकः सत्पथानाम्, उत्पत्तिः साधुतायाः, नेमिरुत्साहचक्रस्य, आश्रयः सत्त्वस्य, प्रतिपक्षः कलिकालस्य, कोशस्तपसः, सखा सत्यस्य, क्षेत्र-मार्जवस्य, प्रभवः पुण्यसंचयस्य, अदत्तावकाशो मत्सरस्य, अराति-र्विपत्तेः, अस्थानं परिभूतेः, अननुकूलोऽभिमानस्य, असंमतो दैन्यस्य, अनायत्तो रोषस्य, अनभिमुखः सुखानाम्। अस्य भगवतः प्रसादा-देवोपशान्तवैरमपगतमत्सरं तपोवनम्।

अहो प्रभावो महात्मनाम्। अत्र हि शाश्वतिकमपहाय विरोध-मुपशान्तात्मानस्तिर्यञ्चोऽपि तपोवनवसतिसुखमनुभवन्ति। तथा हि।

ग्रहोंके अस्ताचल हैं। शान्तिरूपी वृक्षकी जड़ हैं। ज्ञानचक्रके मूल आधार हैं। धर्ममयी ध्वजाके ऊँचे प्रासाद और सब विद्यारूपी जलमें प्रविष्ट होनेके लिए घाट हैं। ये महामुनि लोभरूपी समुद्रके वडवानल तथा शास्त्ररूपी रत्नोंकी कसौटी हैं। ये विषयासक्तिरूपी पल्लवोंके दावानल और क्रोधरूपी सर्पके महा-मंत्र हैं। ये मोहरूपी अन्धकारके लिए सूर्य और नरकद्वारोंके कपाट हैं। ये सदाचारोंके आश्रयस्थान और सब शुभोंके घर हैं। ये सभी मदजनित विकारों-के अयोग्य स्थान और सत्पथके प्रदर्शक हैं। ये साधुताके उत्पत्तिस्थान और उत्साहचक्रकी धुरी हैं। ये धैर्यके आधार और कलिकालके शत्रु हैं। ये तपस्या-के खज़ाना और सत्यके मित्र हैं। ये कोमलताके क्षेत्र और पुण्यसंचयके उत्पत्तिस्थल हैं। इन्होंने अपने हृदयमें ईर्ष्याको स्थान नहीं दिया है। ये विपत्तिके शत्रु और पराजयके अस्थान हैं। ये अभिमानके सदा प्रतिकूल रहते हैं। दीनताके समर्थक नहीं हैं। ये कभी रोषके अधीन नहीं होते। ये कभी विषयोंको मुँह नहीं लगाते। ये सुखकी ओर नहीं निहारते। इन भगवान् जाबालिके प्रभावसे ही यह तपोवन ईर्ष्या और वैरसे विहीन हो गया है।

अहो! महात्माओंका प्रभाव कितना महान् होता है। यहाँपर पशु-पक्षी भी सहज वैरभाव भुलाकर शान्तभावसे रहते हुए तपोवनके निवासका सुख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एष विकचोत्पलवनरचनानुकारिणमुत्पतच्चारुचन्द्रकशतं हरिणलोचन-द्युतिशवलमभिनवशाद्वलमिव विशति शिखिनः कलापमातपाहतो निःशङ्कमहिः। अयमुत्सृज्य मातरमजातकेसरैः केसरिशिशुभिः सहोपजातपरिचयः क्षरत्क्षीरधारं पिबति कुरङ्गशावकः सिंहीस्तनम्। एष मृणालकलापाशङ्किभिः शशिकरधवलं सटाभारमामीलितलोचनो बहु मन्यते द्विरदकलभैराकृष्यमाणं मृगपतिः। इदमिह कपिकुलमपगत-चापलमुपनयति मुनिकुमारकेभ्यः स्नातेभ्यः फलानि। एते च न निवारयन्ति मदान्धा अपि गण्डस्थलीभाञ्जि मदजलपाननिश्चलानि मधुकर-कुलानि संजातदयाः कर्णतालैः करिणः। किं बहुना तापसाग्निहोत्रधूम-लेखाभिरुत्सर्पन्तीभिरनिशमुपपादितकृष्णाजिनोत्तरासंगशोभाः फलमूलभृतो वल्कलिनो निश्चेतनास्तरवोऽपि सनियमा इव लक्ष्यन्तेऽस्य भगवतः। किं पुनः सचेतनाः प्राणिनः' इति।

अनुभव करते हैं। क्योंकि विकसित नीलकमलकी रचनाका अनुकरण करते तथा ऊपर उठे सैकड़ों सुन्दर चन्द्राकार चिन्हसे चिन्हित और घास चरते समय मृगोंकी नेत्रकान्ति सदृश मोरोंके झुण्डमें छायाके लिए यह सर्प निर्भय-भावसे प्रविष्ट हो रहा है। उसे देखकर ऐसा लगता है कि मानो वह नवीन दूबोंके खेतमें घुस रहा हो। इस मृगके बच्चेकी केसरविहीन सिंहशावकके साथ मैत्री हो गयी है। इसी कारण यह अपनी माताको त्यागकर दूधकी धारा बहानेवाली सिंहीका स्तन पी रहा है। ये हाथीके बच्चे चन्द्रमाकी किरणों जैसे उजले सिंहके केसरसमूहको कमलिनीका मृणाल समझकर अपनी सूँड़से खींच रहे हैं और सिंह अपनी आँखें मीचकर प्रसन्नता प्रकट कर रहा है। इन बन्दरोंने अपनी जन्मजात चंचलता त्याग दी है और स्नान करके बैठे हुए ऋषि-कुमारोंको खिलानेके लिए फल ला-लाकर दे रहे हैं। ये मस्त भौंरे मदान्ध हाथियोंके गण्डस्थलपर निश्चलभावसे बैठकर मद पीते हैं और दयालु हाथी अपने कान हिलाकर उन्हें नहीं उड़ाते। और अधिक कहाँ तक कहा जाय, भगवान् जाबालिके प्रभावसे ये अचेतन वृक्ष भी व्रतधारी सरीखे दीख रहे हैं। तपस्वियोंके अग्निहोत्रका धुआँ ऊपर उठ रहा है। उसके अनवरत सम्पर्कसे ये वृक्ष ऐसे दीख रहे हैं कि मानो इन्होंने काले मृगके चमड़ेकी चादर ओढ़ ली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं चिन्तयन्तमेव मां तस्यामेवाशोकतरोरधश्छायायामेकदेशे स्थापयित्वा हारीतः पादावुपगृह्य कृताभिवादनः पितुरनतिसमीपवर्तिनि कुशासने समुपाविशत्। आलोक्य मां सर्व एव मनुयः 'कुतोऽयमासादितः शुकशिशुः?' इति तमासीनमपृच्छन्। असौ तु तानब्रवीत् 'अयं मया स्नातुमितो गतेन कमलिनीसरस्तीरतरुनीडनिपतितः शुकशिशुरातपजनितक्लान्तिरुत्तप्तपांसुपटलमध्यगतो दूरनिपतनविह्वलतनुरल्पावशेषायुरासादितस्तपस्विदुरारोहतया च तस्य वनस्पतेर्न शक्यते स्वनीडमारोपयितुमिति जातदयेनानीतः। तद्यावदयमप्ररूढपक्षतिरक्षमोऽन्तरिक्षमुत्पतितुं तावदत्रैव कस्मिंश्चिदाश्रमतरुकोटरे मुनिकुमारकैरस्माभिश्चोपनीतेन नीवारकणनिकरेण फलरसेन च संवर्ध्यमानो धारयतु जीवितम्। अनाथपरिपालनं हि धर्मोऽस्मद्विधानाम्। उद्भिन्नपक्षतिस्तु गगनतलसंचरणसमर्थो यास्यति यत्रास्मै रोचिष्यते। इहैव वोपजात-

---

हो। ये भरपूर फल-फूल लिये हुए हैं। जब कि इन जड़ प्राणियों (वृक्षों) का ये हाल है, तब सचेतन प्राणियोंके बारेसे क्या कहा जा सकता है?

मैं ऐसा सोच ही रहा था कि इतनेमें हारीतने उसी अशोक वृक्षकी छायामें मुझे एक ओर बिठा दिया और स्वयं पिताके चरणोंकी वन्दना करके पास ही बिछे कुशासनपर बैठ गया। मुझे देखते ही वहाँपर बैठे हुए सब मुनियोंने हारीतसे पूछा कि 'यह तोतेका बच्चा कहाँ पाया?'। उसने कहना आरम्भ किया—'जब स्नान करने जा रहा था तो मैंने देखा, यह उस पद्मसरोवरके समीपवर्ती किसी वृक्षके घोंसलेसे गिरकर गरम रेतीमें पड़ा हुआ है। उस समय यह गर्मीसे बुरी तरह हाँफ रहा था। बहुत ऊँचाईसे गिरनेके कारण इसका शरीर विह्वल हो रहा था और इसमें बहुत थोड़ा प्राण शेष था। इसे देखकर मुझे बड़ी दया आयी, किन्तु एक तपस्वीके लिए ऊँचे वृक्षपर चढ़ना सम्भव नहीं था। अतएव इसे मैं यहाँ उठा लाया। इस कारण जबतक इसके पंख न निकलें और उड़नेकी सामर्थ्य न आ जाय, तबतक यह इसी आश्रमके किसी तरुकोटरमें रहे और हम सब मुनिकुमारों द्वारा लाये हुए तिन्नीके चावलकी किनकी तथा फलोंके रसपर अपना जीवन निर्वाह करे। अनाथोंकी रक्षा करना ही हमारा परम धर्म है। जब इसके पंख निकल आयेंगे और उड़नेकी सामर्थ्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिचयः स्थास्यति' इत्येवमादिकमस्मत्संबद्धमालापमाकर्ण्य किंचिदुपजातकुतूहलो भगवाञ्जाबालिरीषदावलितकंधरः पुण्यजलैः प्रक्षालयन्निव मामतिप्रशान्तया दृष्ट्या दृष्ट्वा सुचिरमुपजातप्रत्यभिज्ञान इव पुनःपुनर्विलोक्य 'स्वस्यैवाविनयस्य फलमनेनानुभूयते' इत्यवोचत्। स हि भगवान्कालत्रयदर्शी तपःप्रभावाद्दिव्येन चक्षुषा सर्वमेव करतलगतमिव जगदवलोकयति। वेत्ति जन्मान्तराण्यतीतानि। कथयत्यागामिनमप्यर्थम्। ईक्षणगोचरगतानां च प्राणिनामायुषः संख्यामावेदयति। सर्वैव सा तापसपरिषच्छ्रुत्वा विदिततत्प्रभावा 'कीदृशोऽनेनाविनयः कृतः, किमर्थं वा कृतः, क्व वा कृतः, जन्मान्तरे वा कोऽयमासीत्' इति कौतूहलिन्यभवत्। उपनाथितवती च तं भगवन्तम् 'आवेदय, प्रसीद भगवान्, कीदृशस्याविनयस्य फलमनेनानुभूयते। कश्चायमासीज्जन्मा-

---

आ जायगी। तब इसकी जहाँ इच्छा होगी, वहाँ उड़ जायगा। अथवा यदि यह हम लोगोंमें घुल-मिल जायगा तो यहीं पड़ा रहेगा। मेरे सम्बन्धमें होती हुई बातें सुनकर महर्षि जाबालिके हृदयमें भी कुछ कौतूहल उत्पन्न हो गया। जिससे अपनी गर्दन तनिक घुमाकर जैसे पुनीत जलसे मेरा प्रक्षालन कर रहे हों, इस तरह अत्यन्त शान्त दृष्टिसे परिचितके समान मुझे बड़ी देर तक देखते रहे। इसके बाद वे बोले—'यह शुकशावक तो अपनी ही अनीतिका फल भोग रहा है।' महामुनि जाबालि त्रिकालदर्शी महात्मा पुरुष थे। अपने तपोबलसे वे समस्त विश्वको हाथमें विद्यमानके समान देखते थे। वे सबके पूर्वजन्मका हाल जानते थे। वे भविष्यकी बात भी बताते थे और नेत्रोंके समक्ष आये हुए प्राणीकी दशाकी सारी बातें कह देते थे। आश्रमके सभी लोग उनके इस प्रभावसे भली-भाँति परिचित थे। अतएव उनकी यह बात कि 'यह अपनी अनीतिका फल भोग रहा है' सुनकर आश्रमके सभी तपस्वी मन ही मन सोचने लगे कि इस बेचारे शुकशावकने पूर्वजन्ममें कौन-सी अनीति की होगी, किस लिए की होगी और कहाँपर की होगी ? जन्मान्तरमें यह कौन था ? इन बातोंको जानना चाहिए। इसी कुतूहलवश वे सब महर्षि जाबालिसे प्रार्थनापूर्वक बोले—'भगवन्! आप हम लोगोंपर प्रसन्न होकर यह बतायें कि यह पूर्वजन्ममें किये हुए किस पापका फल भोग रहा है ? जन्मान्तरमें यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्तरे । विहगजातौ वा कथमस्य संभवः । किमभिधानो वाऽयम् । अपनयतु नः कुतूहलम् । आश्चर्याणां हि सर्वेषां भगवान्प्रभवः' ।

इत्येवमुपयाच्यमानस्तपोधनपरिषदा स महामुनिः प्रत्यवदत्—'अतिमहदिदमाश्चर्यमाख्यातव्यम् । अल्पशेषमहः । प्रत्यासीदति च नः स्नानसमयः । भवतामप्यतिक्रामति देवार्चनविधिवेला तदुत्तिष्ठन्तु भवन्तः । सर्व एवाचरन्तु यथोचित्तं दिवसव्यापारम् । अपराह्नसमये भवतां पुनः कृतमूलफलाशनानां विस्रब्धोपविष्टानामादितः प्रभृति सर्वमावेदयिष्यामि योऽयम् , यच्चानेन कृतमपरस्मिञ्जन्मनि, इह च लोके यथास्य संभूतिः । अयं च तावदपगतक्लमः क्रियतामाहारेण । नियतमयमप्यात्मनो जन्मान्तरोदन्तं स्वप्नापलब्धमिव मयि कथयति सर्वशेषतः स्मरिष्यति' इत्यभिदधदेवोत्थाय सह मुनिभिः स्नानादिकमुचितदिवसव्यापारमकरोत् ।

अनेन च समयेन परिणतो दिवसः । स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्घ्य-

कौन था ? अब पक्षीजातमें इसका जन्म क्यों हुआ है ? इसका क्या नाम है ? यह सब बताकर कृपया आप हमारा कुतूहल निवृत्त करिए। क्योंकि आपने ही हमारे मनमें आश्चर्य उत्पन्न किया है ।'

उन तपस्वियोंकी यह प्रार्थना सुनकर महर्षि जाबालि बोले—'इस शुकशावककी आश्चर्यभरी बड़ी लम्बी कहानी है । दिन अब बहुत ही थोड़ा शेष है । मेरे स्नानका समय समीप है और आप लोगोंके भी पूजनका समय बीत रहा है । अतएव आप सब लोग अब उठकर दैनिक कृत्य सम्पन्न करें । अपराह्णमें फल-मूलका आहार करके जब आप लोग बैठेंगे, तब मैं इस पक्षीका आदिसे लेकर सब वृत्तान्त बताऊँगा कि यह कौन है, जन्मान्तरमें इसने क्या किया था और इस लोकमें इसका जन्म कैसे हुआ। अभी तो इसे चारा देकर आराम करने दीजिए । जब इसके पूर्वजन्मका हाल बताने लगूँगा, तब इसे भी अपने पिछले जन्मकी सब घटनायें इस प्रकार स्मरण हो जायँगी जैसे स्वप्न देखा हो ।' ऐसा कहकर महर्षि जाबालि उठे और मुनियोंके साथ जाकर स्नानादिक सभी कृत्य सम्पन्न किये ।

उसी समय दिन ढल गया । स्नानके पश्चात् उन मुनियोंने अर्घ्य देते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तमम्बरतलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुदवहत् । ऊर्ध्वमुखैरर्कबिम्बविनिहितदृष्टिभिरुष्मापैस्तपोधनैरिव परिपीयमानतेजःप्रसरो विरलातपस्तनिमानमभजत् । उद्यत्सप्तर्षिसार्थस्पर्शपरिजिहीर्षयेव संहृतपादः पारावतपादपाटलरागो रविरम्बरतलादवालम्बत । आलोहितांशुजालं जलशयनमध्यगतस्य मधुरिपोर्विगलन्मधुधारमिव नाभिनलिनं प्रतिमागमपरार्णवे सूर्यमण्डलमलक्ष्यत । विहायाम्बरतलमुन्मुच्य च कमलिनीवनानि शकुनय इव दिवसावसाने तरुशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वत । आलग्नलोहितातपच्छेदा मुनिभिरालम्बितलोहितवल्कला इव तरवः क्षणमदृश्यन्त । अस्तमुपगते च भगवति सहस्रदीधितावपरार्णवतटादुल्लसन्ती विद्रुमलतेव पाटला संध्या समदृश्यत । यस्यामावध्यमानध्यानम, एकदेशदुह्यमानहोमधेनुदुग्धधाराध्वनितधन्य-

---

समय जो लाल चन्दन पृथिवीपर छिड़का था, साक्षात् सूर्यनारायणने मानो वही चन्दन अपने शरीरमें लपेट लिया । जिससे वे एकदम लाल हो गये । जिसका ताप क्षीण हो चुका था, वह दिन अब इस तरह दुर्बल हो गया कि जैसे ऊपर मुँह किये और सूर्यमण्डलमें दृष्टि जमाये हुए उष्मपायी मुनियोंने उसका समस्त तेज पी लिया हो। जैसे उदित होते हुए सप्तर्षिमण्डलके संस्पर्शसे बचनेके लिए ही अपनी समस्त किरणें समेटकर कबूतरके पैर जैसा लाल सूर्यबिम्ब आकाशसे धरतीकी ओर लटकने लगा । अब पश्चिमी समुद्रमें कुछ-कुछ लाल किरणोंवाले सूर्यमण्डलका प्रतिबिम्ब इस तरह दीखने लगा, जैसे जलशय्यापर सोते हुए भगवान् विष्णुके नाभिकमलसे मधुकी धारा बह रही हो । आकाशमण्डलको त्याग तथा कमलवन छोड़कर सायंकालीन सूर्यकी किरणें पक्षियोंकी तरह तपोवनके वृक्षों तथा पर्वतशिखरोंपर जाकर विश्राम करने लगीं । उस समय आश्रमस्थ वृक्षोंके ऊपरी भाग कहीं-कहीं लाल धूप पड़नेसे ऐसे दीख रहे थे, जैसे मुनियोंने उन वृक्षोंपर लाल रंगके बल्कल वसन लटका दिये हों। सूर्यास्तके बाद पश्चिमी समुद्रतटसे उभड़ती हुई लाल सन्ध्या प्रवाललताके सदृश दीख रही थी । उस सन्ध्याके समय आश्रममें भगवद्ध्यान होने लगा । एक ओर होमधेनुयें दुही जाने लगीं । पात्रोंमें गिरती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तरातिमनोहरम्, अग्निवेदिविकीर्यमाणहरितकुशम्, ऋषिकुमारिकाभिरितस्ततो विक्षिप्यमाणदिग्देवतावलिसिक्थमाश्रमपदमभवत्। क्वापि विहृत्य दिवसावसाने लोहिततारका तपोवनधेनुरिव कपिला परिवर्तमाना संध्या तपोधनैरदृश्यत। अचिरप्रोषिते सवितरि शोकविधुरा कमलमुकुलकमण्डलुधारिणी हंससितदुकूलपरिधाना मृणालधवलयज्ञोपवीतिनी मधुकरमण्डलाक्षवलयमुद्वहन्ती कमलिनी दिनपतिसमागमव्रतमिवाचरत्। अपरसागराम्भसि पतिते दिवसकरे वेगोत्थितमम्भःसीकरनिकरमिव तारागणमम्बरमधारयत्। अचिराच्च सिद्धकन्यकाविक्षिप्तसंध्यार्चनकुसुमशवलमिव तारकितं वियदराजत। क्षणेन चोन्मुखेन मुनिजनेनोर्ध्वविप्रकीर्णैः प्रणामाञ्जलिसलिलैः क्षाल्यमान इवागलद्खिलः संध्यारागः।

हुई दुग्धधाराकी मनोहारिणी ध्वनिसे आश्रमका वातावरण बड़ा सुन्दर हो उठा। आश्रमके तपस्वी अग्निहोत्रकी वेदियोंपर हरे-हरे कुश बिछाने लगे। तपस्वियोंकी बालिकायें दिक्पालोंको पक्वान्नकी बलि देने लगीं। सूर्यास्तके बाद चरके आती हुई रक्ततारक युक्त होमधेनुके सदृश कपिल वर्णकी सन्ध्या उन मुनियोंको दिखायी देने लगी (होमधेनुकी देहमें लाल चिह्न थे और सायंकालीन सन्ध्यामें तारे चमक रहे थे)। जैसे विदेश गये हुए पतिको प्राप्त करनेके लिए व्रत लेनेवाली स्त्री कमंडल, यज्ञोपवीत, रुद्राक्षकी माला तथा उज्ज्वल धोती पहनती है। ठीक उसी प्रकार सूर्यनारायणका वियोग हो जानेसे शोकाकुल कमलिनीने कलीरूपी कमंडलु, मृणालरूपी यज्ञोपवीत, भ्रमररूपी रुद्राक्षकी माला और हंसरूपी सफेद वस्त्र धारण कर लिया। ऐसा करके कमलिनी मानो सूर्यके समागमके लिए अनुष्ठान कर रही थी। पश्चिमी समुद्रके जलमें सूर्यके गिरनेसे वेगके साथ जो जलके छींटे उड़े, वे ही मानो आकाशमें जाकर तारोंके रूपमें परिणत हो गये। अब नक्षत्रोंसे भरा हुआ आकाश ऐसा दीखने लगा, जैसे सायंकालीन पूजनके समय सिद्धकन्याओं द्वारा फेंके हुए फूलोंसे वह चितकबरा हो गया हो। क्षण भर ही बाद सन्ध्याकी सारी लाली इस प्रकार लुप्त होगयी, जैसे ऊर्ध्वमुख मुनियोंके द्वारा प्रणाम करते समय ऊपरको फेंकी गयी जलांजलिसे धुल गयी हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्षयमुपागतायां संध्यायां तद्विनाशदुःखिता कृष्णाजिनमिव विभावरी तिमिरोद्गममभिनवमवहत्। अपहाय मुनिहृदयानि सर्वमन्यदन्धकारतां तिमिरमनयत्। क्रमेण च रविरस्तं गत इत्युदन्तमुपलभ्य जातवैराग्यो धौतदुकूलवल्कलधवलाम्बरः सतारान्तःपुरपर्यन्तस्थित-तनुस्तिमिरतमालवृक्षलेखं सप्तर्षिमण्डलाध्युषितमरुंधतीसंचरणपूतमुपहिताषाढमालक्ष्यमाणमूलमेकान्तस्थितचारुतारकामृगममरलोकाश्रममिव गगनतलममृतदीधितिरध्यतिष्ठत। चन्द्राभरणभूतस्तारकाकपालशकलालंकृतादम्बरतलात्त्र्यम्बकोत्तमाङ्गादिव गङ्गा सागरानापूरयन्ती हंसधवला धरण्यामपतज्ज्योत्स्ना। हिमकरसरसि विकचपुण्डरीकसिते

इस प्रकार सन्ध्याकाल बीत जानेपर उसके विनाशसे दुःखिनी रात्रिने कृष्णमृगचर्म सदृश नवीन अन्धकार धारण किया। मुनियोंके हृदयको छोड़कर बाकी समस्त विश्वमें अन्धकार छा गया। सूक्ष्म-तिमिर-तमालवन-लेखा जिसके अन्तभागमें विद्यमान थी (उस आश्रममें सूक्ष्म अन्धकारसरीखी तमालवृक्षोंकी पंक्तियाँ थीं और आकाशमें अन्धकाररूपी तमालवृक्ष थे)। जिसमें सप्तर्षिमंडलका निवास था (आश्रममें सात ऋषि थे और आकाशमें सात तारे थे)। जो अरुन्धतीके चरणस्पर्शसे पुनीत था (आश्रममें वसिष्ठकी पत्नी थीं और आकाशमें अरुन्धती तारा था)। जिसमें आषाढ़ विद्यमान था (आश्रममें आषाढ़ अर्थात् पालाशदंड और आकाशमें पूर्वाषाढ़ नक्षत्र था)। जिसमें मूल दृष्टिगोचर हो रहा था (आश्रममें मूल अर्थात् जड़ें थीं और आकाशमें मूल नक्षत्र विद्यमान था)। उस वनके एक भागमें चारुतारक मृग रहते हैं (उस आश्रममें सुन्दर नेत्रोंवाले मृग रहते थे और आकाशमें मृगशिरा नक्षत्र है)। ऐसे देवलोक सदृश आश्रमरूपी आकाशमें सूर्यनारायणके अस्त होनेका समाचार सुनकर वैराग्य (सांसारिक विरक्ति अथवा विशेष राग अर्थात् लाली) धारणपूर्वक धौतदूकूलवल्कल श्वेतअम्बर (धुले हुए दुकूलरूपी वल्कलके सफेद वस्त्रसे सम्पन्न अथवा धुले हुए वस्त्रके सदृश स्वच्छ गगन-मण्डलसे युक्त) सतारान्तःपुर अर्थात् अश्विन्यादि नक्षत्रोंके साथ विद्यमान आकाशमें चन्द्रदेव उदित हुए। अब चन्द्रमारूपी अलंकार तथा कपालरूपी तारकोंके खंडसे अलंकृत शिवजीके मस्तक सदृश शुभ्र गगनमें समुद्रको भरने-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रिकाजलपानलोभादवतीर्णो निश्चलमूर्तिरमृतपङ्कलग्न इवादृश्यत हरिणः। तिमिरजलधरसमयापगमानन्तरमभिनवसितसिन्दुवारकुसुमपाण्डुरैरर्णवागतैरवगाह्यन्त हंसैरिव कुमुदसरांसि चन्द्रपादैः। विगलितसकलोदयरागं रजनिकरबिम्बमम्बरापगावगाहधौतसिन्दूरमैरावतकुम्भस्थलमिव तत्क्षणमलक्ष्यत। शनैःशनैश्च दूरोदिते भगवति हिमतिस्रुति सुधाधूलिपटलेनेव धवलीकृते चन्द्रातपेन जगति अवश्यायजलबिन्दुमन्दगतिषु विघटमानकुमुदवनकषायपरिमलेषु समुपोढनिद्राभरालसतारकैरन्योन्यग्रथितपक्ष्मपुटैरारब्धरोमन्थमन्थरमुखैः सुखासीनैराश्रममृगैरभिनन्दितागमनेषु प्रवहत्सु निशामुखसमीरणेष्वर्धयाममात्रावखण्डितायां विभावर्यां हारीतः कृताहारं मामादाय सर्वैस्तैर्महामुनिभिरुपसृत्य चन्द्रातपोद्भासिनि तपोननैकदेशे वेत्रासनोपविष्टमनतिदूर-

---

वाली गंगाजीके समान राजहंस जैसी श्वेत चन्द्रिका (चाँदनी) समस्त पृथिवीमंडलमें फैल गयी। उस समय चन्द्रमाके बिम्बमें रहनेवाला मृग ऐसा दीख रहा था कि जैसे किसी विकसित श्वेत कमलसम्पन्न सरोवरमें जल पीनेके लिए गया हुआ हिरन कीचड़में फँसा पड़ा हो। अन्धकाररूपी मेघके हट जानेपर सरोवरमें चन्द्रमाकी किरणें ऐसी दीख रही थीं, जैसे वर्षाऋतु बीत जानेपर निर्गुण्डीके ताजे फूलोंके समान श्वेत हंस आकाशसे नीचे उतरकर कुमुदिनीसे भरे सरोवरमें तैर रहे हों। जब चन्द्रमाके बिम्बकी सारी लालिमा लुप्त हो गयी, तब वह ऐसा दीखने लगा कि जैसे मन्दाकिनीमें स्नान करनेसे धुले मस्तकवाले इन्द्रके गजराज ऐरावतका मस्तक हो। शनैः शनैः जब चन्द्रमा भलीभाँति उदित हो गया और उसकी अमृतके रज सरीखी ज्योत्स्नासे समस्त संसार श्वेत हो गया। प्रफुल्लित कुमुदवनकी सुगन्धि लाती हुई रात्रिके प्रथम प्रहरकी सुहावनी हवा ओसकी बूँदोंके भारसे मन्द-मन्द चलने लगी। आरामके साथ बैठे हुए आश्रमके मृग धीरे-धीरे मुँह हिलाकर पागुर करने लगे। उनके नेत्र नींदसे भारी थे और पलकें बन्द थीं। वे सब उस मन्द पवनका अभिनन्दन कर रहे थे। जब रात्रिका आधा पहर बीत गया, तब भोजनसे निवृत्त होनेके बाद हारीत मुझे लेकर आश्रमवासी मुनियोंके साथ अपने पिताके पास गया। उस समय उसके पिता महर्षि जाबालि आश्रमके एक एकान्त प्रदेशमें वेत्रासनपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वर्तिना जालपादनाम्ना शिष्येण दर्भपवित्रधवित्रपाणिना मन्दमुपवीज्यमानं पितरमवोचत्—'हे तात, सकलेयमाश्चर्यश्रवणकुतूहलाकलितहृदया समुपस्थिता तापसपरिषदाबद्धमण्डला प्रतीक्षते। व्यपनीतश्रमश्च कृतोऽयं पतत्रिपोतः। तदावेद्यतां यदनेन कृतम्। अपरस्मिञ्जन्मनि कोऽयमभूद्भविष्यति च' इति। एवमुक्तस्तु स महामुनिरग्रतः स्थितं मामवलोक्य तांश्च सर्वानेकाग्राञ्छ्रवणपरान्मुनीन्बुद्ध्वा शनैःशनैरब्रवीत्—'श्रूयतां यदि कौतूहलम्—

अस्ति सकलत्रिभुवनललामभूता, प्रसवभूमिरिव कृतयुगस्यात्मनिवासोचिता भगवता महाकालाभिधानेन भुवनत्रयसर्गस्थितिसंहारकारिणा प्रमथनाथेनेवापरेव पृथिवी समुत्पादिता, द्वितीयपृथिवीशङ्कया जलनिधिरेव रसातलगभीरेण परिखावलयेन परिवृता, पशुपतिनिवास-

---

बैठे हुए थे। उनके पास ही खड़ा जालपाद नामका शिष्य धीरे-धीरे कुशनिर्मित पंखा झल रहा था। वहाँ पहुँचकर हारीतने कहा—'पिताजी! इन तपस्वियोंका हृदय इस शुकशावकका विस्मयजनक वृत्तान्त सुननेके कुतूहलसे उत्सुक है और मुनिमंडली मंडल बनाकर बैठी हुई प्रतीक्षा कर रही है। आपके आज्ञानुसार इस तोतेके बच्चेको भोजन कराके आराम करा दिया गया है। सो कृपया अब बताइए कि इसने पूर्व जन्ममें क्या किया था। पिछले जन्ममें यह कौन था और भविष्यमें क्या होगा?' हारीतके ऐसा कहनेपर महामुनि जाबालिने एक बार मेरी ओर निहारा और उन मुनियोंको वृत्तान्त सुननेके लिए तैयार देखकर धीरे-धीरे बोले—'यदि आप सबको इतना प्रबल कौतूहल है तो सुनिए—

भारतवर्षमें मध्यप्रदेशके अन्तर्गत उज्जयिनी नामकी एक नगरी है। अपनी अनुपम शोभासे उसने देवलोककी शोभाको भी परास्त कर दिया है। इसीसे वह तीनों लोकमें तिलकस्वरूप मानी जाती है। वह जैसे सत्ययुगकी जन्मभुमि है। त्रिभुवनकी उत्पत्ति, स्थिति तथा पालन करनेवाले महाकालेश्वर शिवने अपने रहनेके लिए उपयुक्त जैसे अन्य पृथिवीकी रचना की है। उस नगरीके चारों तरफ रसातलसरीखी बहुत गहरी खाईंको देखकर ऐसा लगता था कि मानो उस नगरीको दूसरी पृथिवी समझकर स्वयं समुद्र वहाँ चला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रीत्या गगनपरिसरोल्लेखिशिखरमालेन कैलासगिरिणेव सुधासितेन प्राकारमण्डलेन परिवृता प्रकटशङ्खशुक्तिमुक्ताप्रवालमरकतमणिराशिभिश्चामीकरचूर्णसिकतानिकरनिचितैरायामिभिरगस्त्यपरिपीतसलिलैः सागरैरिव महाविपणिपथैरुपशोभिता, सुरासुरसिद्धगन्धर्वविद्याधरोरगाध्यासिताभिश्चित्रशालाभिरविरतोत्सवप्रमदावलोकनकुतूहलादम्बरतलादवतीर्णाभिर्दिव्यविमानपंक्तिरिवालंकृता, मथनोद्धतदुग्धधवलितमन्दरद्युतिभिः कनकमयामलकलशशिखरैरनिलदोलायितसितध्वजैरुपरिपतदभ्रगङ्गैरिव तुषारगिरिशिखरैरमरमन्दिरैर्विराजितशृङ्गाटका, सुधावेदिकोपशोभितोदपानैरनवरतचलितजलघटीयन्त्रसिच्यमानहरितोपवनान्धकारैः केतकीधूलिधूसरैरुपशल्यकैरुपशोभिता, मदमुखरमधु-

---

आया हो। उसके चारों ओर चूनेकी पुती चहारदीवारीको देखकर ऐसा मालूम पड़ता है कि जैसे शंकरजीका उस स्थानपर विशेष प्रेम देखकर गगनचुम्बी शिखरोंवाला कैलासपर्वत चला आया हो। उस नगरीके बाजारोंकी सड़कें महर्षि अगस्त्य द्वारा पिये गये समुद्रके समान विस्तृत हैं। उनके ऊपर सुनहली बालू बिछी हुई है। उसकी पटरियोंपर बिकनेके लिए शंख, सीप, मोती, मूँगे एवं मरकतमणिके ढेर लगे रहते हैं। उस उज्जयिनीमें देव, दानव, सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर और नागोंके असंख्य चित्रोंसे समलंकृत चित्रशालायें ऐसी लगती हैं, जैसे अहर्निशि होनेवाले उत्सवोंमें सम्मिलित होनेके लिए आयी हुई देवसुन्दरियोंको देखनेके निमित्त देवताओंके विमानोंकी पाँतें आकाशसे नीचे उतर आयी हों। उसके चौराहोंपर जो देवमन्दिर बने हुए हैं। वे क्षीरसागरमन्थनके समय दूधके छलकनेसे सफेद बने हुए मन्दराचलके समान सुन्दर लगते हैं। उसके गगनचुम्बी शिखरोंपर चमकते हुए सुवर्णके कलश रक्खे हैं और उनके ऊपर लगी उज्ज्वल पताकायें हवाके झोंकेसे फहराया करती हैं। इससे वे देवमन्दिर मन्दाकिनीसे अलंकृत हिमवान् पर्वतकी चोटीके समान दिखायी देते हैं। उस उज्जयिनी नगरीकी सीमाके समीपकी भूमि केतकी (केवड़े) की रजसे धूसरित हो जाती है। वहाँ अनेक कुँए बने हुए हैं और हरित वर्णके बागोंसे वहाँ अन्धेरा छाया रहता है। उन कुओंके चौतरोंपर चूनेकी सफेदी हुई रहती है। रहटोंके द्वारा उन्हींसे पानी खींचकर उन बागों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करकुलान्धकारितनिष्कुटा, स्फुरदुपवनलताकुसुमपरिमलसुरभिसमीरणा, रणितसौभाग्यघण्टैरालोहितांशुकपताकैराबद्धरक्तचामरैर्विद्रुममयैः प्रतिगृहमुच्छ्रितैर्मकराङ्कैः सदनयष्टिकेतुभिः प्रकाशितमकरध्वजपूजा, सततप्रवृत्ताध्ययनध्वनिधौतकल्मषा, स्तिमितमुरजरवगम्भीरगर्जितेषु सलिलसीकरासारस्तबकरचितदुर्दिनेषु पर्यस्तरविकिरणरचितसुरचापचारुषु धारागृहेषु मत्तमयूरैर्मण्डलीकृतशिखण्डस्ताण्डवव्यसनिभिराबध्यमानकेकाकोलाहला, विकचकुवलयकान्तैरुत्फुल्लकुमुदधवलोदरैरनिमिषदर्शनरमणीयैराखण्डललोचनैरिव सहस्रसंख्यैरुद्भासिता सरोभिः, अविरलकदलीवनकलिताभिरमृतफेनपुञ्जपाण्डुराभिर्दिशि दिशि दन्तवलभिकाभिर्धवलीकृता, यौवनमदमत्तमालवीकुचकलशलुलितसलिलया

की सिंचाई की जाती है। नगरीके मकानोंके साथ ही साथ बने हुए बगीचोमें मतवाले भौंरे गुंजारते हुए नित्य अँधेरा किये रहते हैं। झूमती हुई उपवनकी लताओंके रजसे वहाँपर वायु सदा सुगन्धित बनी रहती है। प्रत्येक मकानमें मदनवृक्ष लगे हैं और उनके दण्डपर मत्स्यचिह्नसम्पन्न ऊँची ध्वजायें फहराती हैं। उनमें मूँगे लटका करते हैं, सौभाग्यसूचक घंटियाँ बजती रहती हैं, लाल रेशमी पताकायें फहराती हैं और उनमें लाल चमर बँधे रहते हैं। उन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानों वहाँ नित्य कामदेवकी पूजा हुआ करती है। सदा होनेवाली वेदध्वनिसे उस नगरीका सारा पातक धुल गया है। वहाँके धारागृहों (फौवारों) से मृदंग जैसी गम्भीर ध्वनि निकलती रहती है। पानीकी फुहारें उड़ा करती हैं। उन फुहारोंपर जब सूर्यकी किरणें पड़ती हैं तो इन्द्रधनुष बन जाता है। उन्हें देख मोर पंख फैलाकर नाचते हुए शोर मचाया करते हैं। उस उजयिनीमें सैकड़ों बड़े-बड़े तालाब हैं। प्रफुल्लित कमलिनियोंके कारण देखनेमें वे बड़े सुन्दर दीखते हैं। विकसित कमलोंसे उनका मध्यभाग श्वेत हो जाता है और इन्द्रके नयनों सदृश अनिमिष दर्शनसे वे बड़े सुन्दर लगते हैं (इन्द्रकी आँखें निर्निमेष होती हैं और उन तालाबोंमें निर्निमेष मछलियाँ हैं)। उन सरोवरोंकी प्रत्येक दिशामें हस्तिदन्तनिर्मित चन्द्रशालायें बनी हुई हैं। वे कदलीवनसे घिरी रहती हैं और अमृतके फेन सदृश उज्ज्वल रहती हैं। इन सबसे वह सारी नगरी उज्ज्वल दिखायी देती है। उस उजयिनीके चारों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवतो महाकालस्य शिरसि सुरसरितमालोक्योपजातेर्ष्ययेव सतत-समाबद्धतरङ्गभ्रूकुटिलेखया खमिव क्षालयन्त्या सिप्रया परिक्षिप्ता, सकलभुवनख्यातयशसा हरजटाचन्द्रेणेव कोटिसारेण मैनाकेनेवाविदि-तपक्षपातेन मंदाकिनीप्रवाहेणेव प्रकटितकनकपद्मराशिना स्मृतिशास्त्रेणेव सभावसथकूपप्रपारामसुरसदनसेतुयन्त्रप्रवर्तकेन मन्दरेणेवोद्धृतसमग्र-सागररत्नसारेण संगृहीतगारुडेनापि भुजंगभीरुणा खलोपजीविनापि प्रणयिजनोपजीव्यमानविभवेन वीरेणापि विनयवता प्रियंवदेनापि सत्यवादिनाऽभिरूपेणापि स्वदारसंतुष्टेनातिथिजनाभ्यागमार्थिनापि

और सिप्रा नदी बहती है। यौवनके मदसे मदमाती मालवी सुन्दरियोंके कुचकलशोंसे क्षुब्ध और भगवान महाकालके मस्तकपर विराजमान गङ्गाजीको देखकर जैसे उसकी ईर्ष्यासे ही सिप्रा सर्वदा तरंगरूपी भृकुटी चढ़ाकर आका-शका प्रक्षालन किया करती है। उज्जयिनीके विलासी निवासी हर-जटाचंद्रके सदृश विश्वप्रसिद्ध कीर्तिसम्पन्न और कोटिसार हैं (चन्द्रमाके गोल किनारे विख्यात हैं और उज्जयिनीके निवासी करोड़पति हैं)। जैसे इन्द्रके द्वारा किये गये पर्वतोंके पक्षच्छेदनको मैनाक पर्वत नहीं जानता था, उसी प्रकार वहाँके निवासी भी वादी तथा प्रतिवादीका पक्षपात नहीं जानते (पुराणोंकी कथा है कि इन्द्रने जब सब पर्वतोंके पंख काट डाले थे, तब मैनाक निकल भागा था और उसके पंख नहीं कटे थे)। जैसे आकाशगंगा (मन्दाकिनी) की धारामें असंख्य कमल खिले रहते हैं, उसी प्रकार वहाँके नागरिकोंके पास पद्मसंख्यक सुवर्णकी मुहरें विद्यमान रहती हैं। स्मृतिशास्त्र जिस प्रकारकी सभा, छात्रावास, कुएँ, देवमन्दिर, सेतु तथा यन्त्र बनानेका निर्देश देते हैं, उसी प्रकार वहाँके नागरिक उन सबका निर्माण करते हैं। पूर्वकालमें जिस प्रकार मन्दराचलसे क्षीरसागरका मन्थन करनेपर उसमेंसे सब रत्नोंके सारस्वरूप अमृत तथा ऐरा-वत आदि रत्न निकले थे, उसी प्रकार उज्जयिनी नगरीके निवासी भी समुद्रसे निकले हुए सभी रत्नोंको धारण किये रहते हैं। विषनिवारणार्थं गारुड़मंत्र पास रहते हुए वहाँके निवासी भुजङ्गसंग (सर्पोंके पास जानेसे अथवा शठों) से डरते हैं। खलोपजीवी होनेपर भी उनका धन सज्जनोंके काम आता है। वे वीर होते हुए भी विनीत (विनम्र) हैं। प्रियंवद होते हुए भी वे सत्यवादी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परप्रार्थनानभिज्ञेन कामार्थपरेणापि धर्मप्रधानेन महासत्त्वेनापि परलोकभीरुणा सकलविज्ञानविशेषविदा वदान्येन दक्षेण स्मितपूर्वाभिभाषिणा परिहासपेशलेनोज्ज्वलवेषेण शिक्षिताशेषदेशभाषेण वक्रोक्तिनिपुणेनाख्यायिकाख्यानपरिचयचतुरेण सर्वलिपिज्ञेन महाभारतपुराणरामायणानुरागिणा बृहत्कथाकुशलेन द्यूतादिकलाकलापपारगेण श्रुतरागिणा सुभाषितव्यसनिना प्रशान्तेन सुरभिमासमारुतेनेव सततदक्षिणेन हिमगिरिकाननेनेवान्तःसरलेन लक्ष्मणेनेव रामाराधननिपुणेन शत्रुघ्नेनेवाविष्कृतभरतपरिचयेन दिवसेनेव मित्रानुवर्तिना बौद्धेनेव

हैं। अभिरूप (सुन्दर अथवा पण्डित) होते हुए भी वे अपनी स्त्रियोंसे ही सन्तुष्ट रहा करते हैं। परप्रार्थना (अन्य लोगोंसे प्रार्थना अथवा शत्रुओंसे प्रार्थना) से अनभिज्ञ होते हुए भी वे अपने यहाँ बुलानेके लिए अतिथियोंसे प्रार्थना करते रहते हैं। कामार्थपर (रति तथा द्रव्यमें आसक्त अथवा अभिलषित अर्थमें अनुरक्त) होते हुए भी वहाँके नागरिक धर्मको मुख्य समझते हैं। असाधारण बलवान् होते हुए भी वे परलोकसे डरते हैं। वे सब प्रकारकी वैज्ञानिक युक्तियों तथा शिल्पोंके विज्ञ हैं। वे सर्वथा उदार और व्यवहारकुशल हैं। वे सदा मुसकाकर बात करते हैं। वे सदा स्वच्छ वस्त्र पहनते हैं और हास्य-परिहासमें निपुण हैं। उन्हें सब देशकी भाषाओंका ज्ञान है और वक्रोक्तिमें कुशल हैं। वे सब लिपियोंको पढ़ लेते हैं। उनका महाभारत, पुराण और रामायणमें अनुराग है। बड़ी-बड़ी कहानियाँ कहनेमें वे बहुत निपुण हैं। द्यूत (जुआ) आदि कलाओंमें वे पूर्ण पारङ्गत हैं। वेदपर उसकी आस्था है। सूक्तियाँ कहने-सुननेका उन्हें व्यसन है। उनका स्वभाव सदा शान्त रहता है। वासन्ती वायुके समान वे सदा दक्षिण रहते हैं (वसन्तमें दक्षिणी वायु बहती है और वहाँके मनुष्य उदार हैं)। हिमवान्के जङ्गलकी तरह वे अन्तःसरल हैं (हिमालयके जङ्गलमें सरल नामके वृक्ष हैं और उज्जयिनीके निवासी साफ दिलके हैं)। लक्ष्मणकी तरह वे रामाराधनमें प्रवीण हैं (लक्ष्मण रामकी आराधना करते थे और वहाँके मनुष्य रामा अर्थात् नारीजातिका सम्मान करते हैं) शत्रुघ्नकी तरह वे भरतसे परिचित हैं (शत्रुघ्नका भरतपर प्रेम था और वहाँके नागरिक नाट्यशास्त्रके रचयिता महामुनि भरतसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वास्तिवादशूरेण सांख्यागमेनेव प्रधानपुरुषोपेतेन जिनधर्मेणेव जीवानुकम्पिना विलासिजनेनाधिष्ठिता, सशैलेव प्रासादैः, सशाखानगरेव महाभवनैः, सकल्पवृक्षेव सत्पुरुषैः, दर्शितविश्वरूपेव चित्रभित्तिभिः, संध्येव पद्मरागानुरागिणी, अमराधिपमूर्तिरिव मखशतानलधूमपूता, पशुपतिलास्यक्रीडेव सुधाधवलाट्टहासा, वृद्धेव जातरूपक्षया, गरुडमूर्तिरिवाच्युतस्थितिरमणीया, प्रभातवेलेव प्रबुद्धसर्वलोका, शबरवसति-

---

परिचित हैं)। दिनके समान वे मित्रका अनुसरण करते हैं (दिन मित्र अर्थात् सूर्यके पीछे-पीछे चलता है और वहाँके नागरिक मित्रोंका अनुसरण करते हैं)। वे बौद्धोंकी तरह सर्वास्तिवादमें वीर हैं (बौद्धधर्ममें सर्वास्तिवादी होते हैं और नागरिक याचकोंसे 'हाँ है' कहनेमें बहादुर हैं)। वे सांख्यशास्त्रकी तरह प्रधान पुरुषसंयुत हैं (सांख्यशास्त्रमें प्रकृति-पुरुषमेंसे पुरुषको प्रधान माना जाता है और नागरिक महापुरुषसंयुत थे)। जैनधर्मावलम्बियोंके समान वे सब जीवोंपर दया रखते हैं। वहाँ विलासी जनोंसे भरे पर्वतोंके समान ऊँचे-ऊँचे महल हैं। उसमें कितने ही घर मुहल्लों जैसे विशाल हैं। वहाँके लोग कल्पवृक्षके समान सत्पुरुष हैं। वह उज्जयिनी अपनी चित्रित दीवारोंसे जैसे विश्वरूप प्रदर्शित करती रहती है। वह सन्ध्याकी तरह पद्मानुरागिणी है (सन्ध्या पद्मराग अर्थात् पुखराजके सदृश लाल होती है और उज्जयिनी पद्मराग अर्थात् कमलोंकी लाली जैसी लाल रहती है)। वह इन्द्रमूर्तिकी भाँति शतयज्ञोंके धुएँसे पवित्र है (इन्द्रकी मूर्ति सौ अश्वमेधयज्ञोंके धुएँसे पवित्र थी और उज्जयिनी सैकड़ों यज्ञोंके धूमसे पुनीत है)। शंकरकी नृत्यक्रीडाके सदृश वह सुधाधवल अट्टहाससे युक्त है (शंकरजीका अट्टहास अमृत सरीखा शुभ्र होता है और नगरीकी चूनेसे सफेदी की हुई अट्टालिकायें ही हास जैसी सफेद लगती हैं)। वह वृद्धा स्त्रीकी भाँति जातरूपक्षय है (वृद्धा स्त्रीका रूप नष्ट हो जाता है और उज्जयिनीमें जातरूप अर्थात् सुवर्णके क्षय अर्थात् महल हैं)। वह गरुडमूर्तिकी तरह अच्युतस्थितिसे रमणीय है (गरुडकी मूर्ति विष्णुभगवानके पास बैठनेपर सुन्दर लगती है और नगरी सदा एक-सी स्थितिमें रहनेके कारण अच्छी लगती है)। प्रभातकालके समान वहाँवाले प्रबुद्ध हैं (प्रभातकालमें लोग सोकर जागते हैं और उज्जयिनीके नागरिक चालाक हैं)। भीलोंकी बस्तीकी तरह वहाँपर चमरयुक्त नागदन्तोंसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिवावलम्बितचामरनागदन्तधवलगृहा, शेषतनुरिव सदासन्नवसुधाधरा, जलधिमथनवेलेव महाघोषपूरितदिगन्तरा, प्रस्तुताभिषेकभूमिरिव संनिहितकनकघटकसहस्रा, गौरीव महासिंहासनोचितमूर्तिः, अदितिरिव देवकुलसहस्रसेव्या, महावराहलीलेव दर्शितहिरण्याक्षपाता, कद्रूरिवानन्दितभुजंगलोका, हरिवंशकथेवानेकबालक्रीडारमणीया, प्रकटाङ्गनोपभोगाप्यखण्डितचरित्रा, रक्तवर्णापि सुधाधवला, अवलम्बितमुक्ताकलापापि विहारभूषणा, वहुप्रकृतिरपि स्थिरा, विजितामरलोक-

---

घर श्वेत बने रहते हैं (भीलोंके यहाँ चमर तथा हाथीके दाँत लटका करते हैं और उस नगरीमें नागदन्त अर्थात् खूँटीपर चमर लटके रहते हैं)। शेषनागके तनकी तरह वह सदा आसन्नवसुधाधरा है (शेषनागकी देह पृथिवीको धारण करती है और नगरीके पास वसुधाधर अर्थात् पर्वत हैं)। समुद्रमन्थन वेलाकी भाँति वहाँ बड़े-बड़े घोषोंसे सभी दिगन्तर भर जाते हैं (समुद्रमन्थनकी वेलामें बड़ा शब्द हुआ था और नगरीमें घोसियोंके बहुतेरे घर हैं)। प्रस्तुत अभिषेकभूमिके समान वहाँ हजारों स्वर्णघट विद्यमान रहते हैं। पार्वतीजीकी मूर्तिके समान वह महासिंहासनोचित मूर्ति है (पार्वतीजी सिंहपर विराजती हैं और नगरीमें बड़े-बड़े सिंहासनोंपर मूर्तियाँ विराजती हैं)। देवमाता अदितिकी तरह वह हजारों देवकुलोंसे सेव्य है (अदिति अपने पुत्र हजारों देवताओंसे सेवित थीं और वह नगरी हजारों देवमन्दिरोंसे सेवित है)। महावराहावतारकी लीलाके समान वहाँ हिरण्याक्षपात दीखता है (हिरण्याक्ष एक राक्षस था और नगरीमें खेलके समय सोनेके पाँसे फेंके जाते हैं)। सर्पमाता कद्रूकी तरह वह भुजङ्गोंको आनन्द देती है (कद्रू सर्पोंको सुख देती है और वहाँ भुजङ्गी अर्थात् वेश्यायें भुजंगों अर्थात् कामियोंको आनंद देती हैं)। हरिवंशकी कथाकी भाँति वह बालक्रीड़ाके कारण रमणीक दीखती है (हरिवंशमें बालकोंकी क्रीड़ा वर्णित है और नगरीमें बालकोंके अनेक क्रीडाङ्गण हैं)। अंगनोपभोग (स्त्रियोंका भोग अथवा आँगनोंका उपयोग) प्रकट होनेपर भी उस नगरीका चरित्र अखंडित है। रक्तवर्णा (लाल रंग अथवा अनुरक्त ब्राह्मणादि वर्णसे पूर्ण) होनेपर भी वह चूनेसे पुतायी होनेके कारण सदा उजली दीखती है)। उसके घरोंमें यद्यपि मोतियोंके हार लटका करते हैं, फिर भी वह विहारभूषणा (हारभूषणविहीन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्युतिरवन्तीषूज्जयिनी नाम नगरी ।

यस्यामुत्तुङ्गसौधोत्सङ्गसंगीतसङ्गिनीनामङ्गनानामतिमधुरेण गीतरवेणाकृष्यमाणाधोमुखरथतुरंगः पुरः पर्यस्तरथपताकापटः कृतमहाकालप्रणाम इव प्रतिदिनं लक्ष्यते गच्छन्दिवसकरः । यस्यां च संध्यारागारुणा इव सिन्दूरमणिकुट्टिमेषु प्रारब्धकमलिनीपरिमण्डला इव मरकतवेदिकासु, गगनपर्यस्ता इव वैडूर्यमणिभूमिषु, तिमिरपटलविघटनोद्यता इव कृष्णागुरुधूममण्डलेषु, अभिभूततारकापंक्तय इव मुक्ताप्रालम्बेषु, विकचकमलचुम्बिन इव नितम्बिनीमुखेषु, प्रभातचन्द्रिकामध्यपतिता इव स्फटिकभित्तिप्रभासु, गगनसिन्धुतरंगावलम्बिन इव सितपताकांशुकेषु, पल्लविता इव सूर्यकान्तोपलेषु, राहुमुखकुहरप्रविष्टा इवेन्द्रनीलवातायनविवरेषु विराजन्ते रविगभस्तयः ।

अथवा बहुतेरे विहारस्थलोंसे अलंकृत) है और बहुप्रकृति (चञ्चल स्वभाव अथवा विविध प्रकारकी प्रजासे युक्त) होती हुई भी वह सदा स्थिर बनी रहती है ।

उस उज्जयिनी नगरीके नीचे ऊँचे-ऊँचे प्रासादोंपर गाती हुई महिलाओंके अतिशय मधुर गीतस्वरसे आकृष्ट सूर्यरथके अश्व मुख नीचा करके चलते हैं और सामने उस रथकी पताका फहराते रहनेसे ऐसा लगता है कि मानो सूर्यनारायण प्रतिदिन भगवान महाकालको प्रणाम करके आगे बढ़ते हैं । जहाँ सूर्यकी किरणें सिन्दूरमणिकी भूमिपर पड़कर सन्ध्याके रंगसे रँगकर लाल हो गयी हों, मरकतमणिरचित वेदियोंपर पड़कर जैसे नीलकमलिनीका स्पर्श कर रही हों, वैडूर्यमणिकी भूमिपर जैसे समस्त गगनमंडलमें फैल गयी हों, कृष्ण अगुरुके धूममंडलमें पड़कर जैसे अन्धकारनाशके लिए बद्धपरिकर हों, मोतियोंके हारपर पड़कर मानो तारिकाओंकी पाँतोंको परास्त कर रही हों, ललनाओंके मुखपर पड़कर जैसे प्रफुल्लित कमलको चूम रही हों, स्फटिकमणिकी दीवारोंपर पड़कर जैसे प्रभातकालकी चाँदनीमें थिरक रही हों, श्वेत पताकापर पड़कर जैसे मन्दाकिनीकी लहरियोंको छू रही हो, सूर्यकान्तमणिपर पड़कर जैसे पल्लवित हो उठी हों और इन्द्रनीलमणिकी जालियोंके बीचमें पड़-कर ऐसी सुन्दर लगती हैं कि जैसे वे राहुके मुखमें जा पड़ी हों ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्यां चानुपजाततिमिरत्वादविघटितचक्रवाकमिथुना व्यर्थीकृतसुरतप्रदीपाः सञ्जातमदनानलदिग्दाहा इव यान्ति कामिनीनां भूषणप्रभाभिर्बालातपपिञ्जरा इव रजन्यः। यां च संनिहितविषमलोचनामनवरतमतिमधुरो रतिप्रलाप इव प्रसर्पन्मुखरीकरोति मकरकेतुदाहहेतुभूतो भवनकुलहंसकुलकोलाहलः। यस्यां च निशि निशि पवनविलोलैर्दुकूलपल्लवैरुल्लसद्भिर्मालवीमुखकमलकान्तिलज्जितस्येन्दोः कलङ्कमिवापनयन्तो दूरप्रसारितध्वजभुजाः प्रासादा लक्ष्यन्ते। यस्यां च सौधशिखरशायिनीनां पश्यन्मुखानि पुरसुन्दरीणां मदनपरवश इव पतितः प्रतिमाच्छलेन लुठति बहलचन्दनजलसेकशिशिरेषु मृगलांछनः।

यस्यां च निशावसानप्रबुद्धस्य तारतरमपि पठतः पञ्जरभाजः शुकसारिकासमूहस्याभिभूतगृहसारसस्वरामृतेन विस्तारिणा विलासिनी-

---

उस उज्जयिनी नगरीमें कामिनियोंके आभरणोंकी दीप्तिके कारण रातमें भी अँधेरा नहीं होता। अतएव वहाँ चकवा-चकवी रातको नहीं बिछुड़ते। वहाँपर सुरतप्रदीप व्यर्थ हो जाते हैं। उन कामिनियोंके आभूषणोंकी कान्तिके कारण रात्रियाँ ऐसी लगती हैं कि जैसे कामाग्निका दाहसंस्कार हो चुका हो और बालसूर्यका पीला-पीला प्रकाश सब ओर फैल गया हो। वहाँ कामाग्निको धधकानेवाला घरेलू कलहंसोंका होहल्ला सदा सुनायी देता है। उसे सुनकर ऐसा लगता है कि जैसे कामके दाहसे दुःखिनी रति शंकरजीके पास जाकर बिलख रही हो। उस उज्जयिनीमें बहुत दूरतक फैली उच्चध्वजारूपिणी भुजाओंसे युक्त अट्टालिकायें ऐसी दीखती हैं कि मानो रातके समय मालवीय महिलाओंके मुखकमल देखकर लज्जाका अनुभव करते हुए चन्द्रमाके कलंकको उन फहराते हुए ध्वजवस्त्रकी कोरोंसे पोंछ रही हों। उन नगरीके महलोंमें सोती हुई सुन्दरियोंका मुँह देखकर जैसे कामदेवके वशीभूत चन्द्रमा अपने प्रतिबिम्बके बहाने प्रचुर चन्दनके छिड़कावसे शीतल भूमिपर पड़कर लोट रहा हो।

उस नगरीके महलोंमें पींजरेमें बैठे तोता-मैना रातके पिछले पहर जागकर बहुत ऊँचे स्वरोंमें प्रभातकालीन मङ्गलगीत गाया करते हैं। किन्तु घरोंमें पले हुए सारसोंके निनादको भी परास्त करनेवाले चहुँओर फैले सुन्दरियों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूषणरवेणाविभाव्यमाना व्यर्थीभवन्ति प्रभातमङ्गलगीतयः। यस्यां चानिवृत्तिर्मणिप्रदीपानाम्, अन्तस्तरलता हाराणाम्, अस्थितिः संगीतमुरजध्वनीनाम्, द्वन्द्ववियोगश्चक्रनाम्नाम्, वर्णपरीक्षा कनकानाम्, अस्थिरत्वं ध्वजानाम्, मित्रद्वेषः कुमुदानाम्, कोशगुप्तिरसीनाम् । किं बहुना। यस्यां सुरासुरचूडामणिमरीचिचुम्बितचरणनखमयूखः, निशितशूलदारितान्धकमहासुरः, गौरीनुपूरकोटिघृष्टशेखरचन्द्रशकलः, त्रिपुरभस्मरजःकृताङ्गरागः, मकरध्वजध्वंसविधुरया रत्या प्रसादयन्त्या

के आभूषणोंके झनकारमें विलीन हो जानेके कारण उनके गीत सर्वथा व्यर्थ हो जाते हैं । उस नगरीकी अनिर्वृत्तिता मणिमय दीपकोंमें रहती है (अर्थात् दीपोंमें बुझनेका अभाव रहता है, वहाँकी नागरिकोंमें अनिर्वृति अर्थात् सुखका अभाव नहीं रहता) ।.अन्तस्तरलता हारोंमें रहती है (हारोंमें मणिकी चंचल चमक रहती है, किन्तु किसी नागरिकके मनमें चपलता नहीं रहती)।अस्थिति संगीत और मृदंगकी ध्वनिमें रहती है (अस्थिरता अर्थात् विचित्रता संगीतकी ध्वनियोंमें रहती हैं, वहाँके नागरिक मर्यादाहीन नहीं होते) । द्वन्द्ववियोग चकवा-चकवीमें ही दीखता है—अन्यत्र नहीं। वर्णपरीक्षा केवल सुवर्णकी होती है (ब्राह्मणादि वर्णोंकी परीक्षा नहीं होती । क्योंकि वे सर्वथा शुद्ध रहते हैं) । अस्थिरता (चपलता) ध्वजामें रहा करती है—अन्यत्र नहीं। मित्रद्वेष कुमुदोंमें रहता है (एकमात्र कुमुद ही मित्र अर्थात् सूर्यसे द्वेष करते हैं, वहाँका कोई नागरिक मित्रसे द्वेष नहीं करता)। कोषगुप्ति तलवारोंमें ही रहती है (केवल तलवारें ही कोष अर्थात् म्यानमें रखकर छिपायी जाती हैं, चोरोंके अभाववश किसीको कोष (धनराशि) छिपानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती)। और कहाँ तक कहें—स्वयं अन्धकासुरनाशक भगवान् महाकाल कैलासका प्रेम त्यागकर उस नगरीमें निवास करते हैं। देव-दानवोंकी मुकुटमणियोंकी किरणें उनके चरणनखजनित किरणोंको चूमा करती हैं। उन्हीं शंकरजीने अपने तीखी धारवाले त्रिशूलसे महान् असुर अन्धकासुरको चीर डाला था। भगवती पार्वतीके चरणके नुपूराग्रभागसे उनके मस्तकपर स्थित चन्द्रमाका टुकड़ा घिस गया है । वे भगवान् शंकर अपने शरीरपर त्रिपुरासुरकी भस्मको मले रहते हैं। पूर्वकालमें कामदेवके नाशसे व्यथित कामपत्नी रतिने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रसारितकरयुगविगलितवलयनिकरार्चितचरणः, प्रलयानलशिखाकलापकपिलजटाभारभ्रान्तसुरसिन्धुरन्धकारातिः भगवान्, उत्सृष्टकैलासवासप्रीतिर्महाकालाभिधानः स्वयं वसति।

तस्यां चैवंविधायां नगर्यां नलनहुषययातिधुन्धुमारभरतभगीरथदशरथप्रतिमः, भुजबलार्जितभूमण्डलः, फलितशक्तित्रयः, मतिमान्, उत्साहसंपन्नः, नीतिशास्त्राखिन्नबुद्धिः, अधीतधर्मशास्त्रः, तृतीय इव तेजसा कान्त्या च सूर्याचन्द्रमसोः, अनेकसप्ततन्तुपूतमूर्तिः, उपशमितसकलजगदुपप्लवः, विहाय कमलवनान्यवगणय्य नारायणवक्षःस्थलवसतिसुखमुत्फुल्लारविन्दहस्तया शूरसमागमव्यसनिन्या निर्व्याजमालिंगितो लक्ष्म्या, महामुनिजनसंसेवितस्य, मधुसूदनचरण इव सुरसरित्प्रवाहस्य प्रभवः सत्यस्य, शिशिरस्यापि रिपुजनसंतापकारिणः, स्थिर-

---

कृपा प्राप्त करनेके लिए फैले हुए दोनों हाथोंसे गिरे कंकणों द्वारा उनके चरणोंकी पूजा की थी और प्रलयकालीन अग्निज्वालाके सदृश उनकी पिंगल जटाजूटमें गंगाजी सदा विराजमान रहती हैं।

इस प्रकार अलंकृत उस उज्जयिनी नगरीमें नल, नहुष, ययाति, धुन्धुमार, भरत, भगीरथ तथा दशरथके सदृश प्रजाकी पीड़ा दूर करनेवाला तारापीड नामका राजा रहता था। अपने प्रबल बाहुबलसे उसने समस्त भूमण्डलको जीत लिया था। उसकी प्रभाव-उत्साह-मन्त्रात्मिका तीनों शक्तियाँ सफल हो चुकी थीं। वह बड़ा उत्साही और बड़ा बुद्धिमान् राजा था। नीतिशास्त्रमें उसकी बुद्धि कभी भी खिन्न नहीं होने आती थी। उसने धर्मशास्त्रका स्वाध्याय किया था। तेज और कान्तिमें सूर्य-चन्द्रमाके सिवाय अपना भी एक तृतीय स्थान बना चुका था। अनेकानेक यज्ञ करके वह पवित्र हो गया था। उसने अनेक युक्तियोंसे संसारकी सब बाधायें दूर कर दी थीं। वीर पुरुषोंका साथ देनेकी व्यसनिनी एवं हाथमें प्रफुल्लित कमल लिये रहनेवाली लक्ष्मी भी कमलवनको त्याग तथा भगवान् विष्णुके हृदयमें निवास सरीखे सुखकी तनिक भी लालसा न रखती हुई निष्कपट होकर उस राजा तारापीडसे जा लिपटी थी। जिस तरह भगवान् विष्णुका चरण महामुनियों द्वारा सेवित मन्दाकिनीकी धाराका उद्गमस्थान है, उसी प्रकार वह राजा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्यापि नित्यं भ्रमतो निर्मलस्यापि मलिनीकृतारातिवनितामुखकमलद्युतेरतिधवलस्यापि सर्वजनरागकारिणः, सुधासूतेरिव सागर उद्भवो यशसः, पाताल इवाश्रितो निजपक्षक्षितिभीतैः क्षितिभृत्कुटिलैः, ग्रहगण इव बुधानुगतः, मकरध्वज इवोत्सन्नविग्रहः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः, पशुपतिरिव महासेनानुयातः, भुजगराज इव क्षमाभरगुरुः, नर्मदाप्रवाह

सत्यका उद्गमस्थल था। जिस तरह समुद्र चन्द्रमाका उत्पत्तिस्थल है, उसी प्रकार वह यशका उद्भवस्थल था। जैसे चन्द्रमा शीतलताके कारण वियोगियोंको सन्ताप (दाह अथवा मनमें क्षोभ) देता है, उसी प्रकार उस राजाका यश ठंढा होता हुआ भी शत्रुओंको सन्तप्त करता रहता था। स्थिर (चंचलताहीन अथवा अविनाशी) रहता हुआ भी वह यश अहर्निशि घूमता रहता था। निर्मल होता हुआ भी उसका यश शत्रुकी विरहिणी स्त्रियोंके मुखकमलकी कान्तिको मलीन कर देता थ। यद्यपि उसका यश उज्ज्वल था, फिर भी वह सब लोगोंको रक्त (लाल रंग अथवा अनुरक्त) कर देता था। जैसे पर्वतोंने इन्द्र द्वारा पक्षच्छेदके भयसे भागकर पातालमें शरण ली थी, उसी प्रकार उसके समकालीन राजाओंने शत्रुओं द्वारा अपना पक्ष निर्बल कर दिये जानेके भयसे उस राजा तारापीडकी शरण ली थी। ग्रहमंडलकी तरह वह बुधों (बुध–बुधग्रह अथवा बुध–पंडित) का अनुगामी था (अर्थात् जैसे बुध ग्रह अन्य ग्रहोंका अनुगमन करता है, उसी तरह पंडित लोग उसका अनुगमन करते थे)। जिस तरह कामदेव विग्रह (शरीर) रहित था। उसी प्रकार वह राजा भी विग्रह (युद्ध) रहित था। जिस तरह महाराज दशरथ सुमित्रोपेत (सुमित्रासंयुत) थे, उसी प्रकार वह भी सुमित्रोपेत (अच्छे मित्रों सहित) था। जैसे शंकरजीका अनुसरण महासेन अर्थात् स्वामिकार्तिकेय करते थे, उसी प्रकार महासेना उसका अनुसरण करती थी। जिस प्रकार शेषनाग क्षमा अर्थात् पृथिवीका भार धारण करके गौरवान्वित होते हैं, उसी प्रकार वह राजा भी क्षमा अर्थात् क्षान्तिसे गौरव युक्त था। नर्मदाका प्रवाह जैसे महावंश अर्थात् बाँसोंकी विशाल झाड़ीसे उत्पन्न होता है, उसी प्रकार राजा तारापीड भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव महावंशप्रभवः, अवतार इव धर्मस्य, प्रतिनिधिरिव पुरुषोत्तमस्य, परिहृतप्रजापीडो राजा तारापीडोऽभूत्।

यस्तमःप्रसरमलिनवपुषा पापबहुलेन कलिकालेन चालितमामूलतो धर्मं दशाननेनेव कैलासं पशुपतिरिवावष्टभ्य पुनरपि स्थिरीचक्रे। यं च रतिप्रलापजनितदयार्द्रहृदयहरनिर्मितमपरं मकरकेतुममंस्त लोकः। यं च जलनिधितरंगधौतमेखलात्पत्रान्तर्विचारितारागणद्विगुणिततटतरुकुसुमप्रकरादुद्यदिन्दुबिम्बविगलदमृतबिन्द्वासारार्द्रचन्दनादशिशिरकररथतुरगखुरशिखरोल्लेखखण्डितोल्लसल्लवङ्गपल्लवादैरावतकरलूनसल्लकीकिसलयदलादाशैलादुदयनाम्नः, कपिबलविलुप्तविरललवलीलताफलादुद-

---

महावंश अर्थात् महान् कुलमें उत्पन्न हुआ था। वह धर्मका मूर्त अवतार, पुरुषोत्तम (विष्णु) का प्रतिनिधि और प्रजाको नहीं सतानेवाला राजा था।

जैसे रावणके द्वारा अपनी भुजाओंसे चलायमान किये गये कैलास पर्वतको श्रीशिवजीने रोककर स्थिर कर दिया था। ठीक उसी प्रकार राजा तारापीडने अज्ञानके विस्तारसे मलीन देह तथा पापसे परिपूर्ण कलिकाल द्वारा विचलित किये गये धर्मको पुनः स्थापित किया था। उसे देखकर लोगोंको ऐसा भान होता था कि जैसे रतिका करुणक्रन्दन सुनकर हृदयमें दयाका उद्रेक हो जानेके कारण शिवजीने पुनः कामदेवको उत्पन्न कर दिया है। उसके भुजबलसे पराजित, भयचकित एवं चंचल नयनोंवाले राजे बहुत दूर-दूरसे आकर उसके चरणोंकी वन्दना किया करते थे। उस समय उन राजाओंके मुकुटोंपर निर्मित पुष्प-पत्र राजा तारापीडके चरणनखोंकी किरणों द्वारा चित्रित हो जाया करते थे। समुद्रकी लहरोंसे जिसकी तलैटी धुलती रहती है। पत्तोंके बीच विचरते हुए नक्षत्रोंके कारण जिसके तटवर्ती वृक्षोंके पुष्प द्विगुणित मालूम पड़ते हैं। उदित होते हुए चन्द्रमण्डलसे टपकती हुई अमृतकी बूँदोंसे जहाँके चन्दनवृक्ष गीले बने रहते हैं। सूर्यरथमें जुते घोड़ोंके खुरोंकी रगड़से जहाँके लौंगके पत्ते खंडित हो गये हैं और जहाँ इन्द्रगज ऐरावतकी सूँड़ द्वारा सलईके वृक्ष टूटे हुए हैं, ऐसे उदयाचलसे—जहाँ नित्य वानरों द्वारा तोड़े जानेके कारण लवलीके फल बहुत थोड़े शेष रह गये

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धिविनिर्गतजलदेवतावन्द्यमानराघवपादादचलपतिदलितशङ्खकुलिशक-लतारकितशिलातलान्नलकरतलाकलितशैलसहस्रसम्भूतादासेतुबन्धात् , अच्छनिर्झरजलधौततारकासार्थादमृतमथनोद्यतवैकुण्ठकेयूरपत्रमकरको-टिकषणमसृणितग्राव्णः सुरासुरहेलावलयितवासुकिसमाकर्षणप्रारम्भच-लितचरणभरदलितनितम्बकटकादमृतसीकरसिक्तसानोरामन्दरात् , नर-नारायणचरणमुद्राङ्कितबदरिकाश्रमरमणीयात्कुवेरपुरसुन्दरीभूषणरवमुख-रशिखरात्सप्तर्षिसंध्योपासनपूतप्रस्रवणांभसो वृकोदरोद्दलितसौगन्धिकख-ण्डसुगन्धिमण्डलादागंधमादनात् , सेवाञ्जलिकमलमुकुलदन्तुरैः शिरो-भिश्चरणनखमयूखग्रथितमुकुटपत्रलताग्रन्थयो भयचकिततरलतारदृशो भुजबलविजिताः प्रणेमुरवनिपाः।

येन चानेकरत्नांशुपल्लविते व्यालम्बिमुक्ताफलजालके दिग्गजेनेव

हैं। जहाँ समुद्रसे निकली जलदेवियाँ भगवान् रामके चरणोंकी वन्दना करती हैं। जहाँके शिलातलोंपर पर्वतोंके गिरनेसे टूटे हुए शंखोंके टुकड़ों जैसे तारे बिखरे रहते हैं। जो नलके हाथों एकत्रित हजारों पहाड़ोंसे बना था, उस सेतुबन्धके निर्मल झरनोंके जलसे जहाँके नक्षत्र धुल जाते हैं। अमृत मथते समय भगवान् विष्णुके बाजूबन्दके मकरचिह्नके सिरे घिसनेके कारण जिसके शिलाखण्ड चिकने हो गये हैं। लिपटे हुए वासुकी नागको अपने स्वाभाविक बलसे खींचनेमें डगमगाते देवों-दानवोंके चरणोंके बोझसे जिसका मध्यभाग मर्दित हो चुका है और उठनेवाले अमृतबिन्दुओंसे जिसकी चोटी भींग गयी थी, ऐसे मन्दरपर्वत तथा श्रीनर-नारायणके चरणोंसे चिह्नित बदरिका-श्रमसे जो रमणीय हो गया है। कुवेरकी अलकापुरीकी ललनाओंके आभू-षणोंकी झंकारसे जिसकी चोटियाँ गुंजरित होती रहती हैं। सप्तर्षियोंने सन्ध्यो-पासन करके जिसके झरनोंका जल पवित्र किया है और महाबली भीमसेनके द्वारा तोड़े हुए सौगन्धिक पुष्पोंसे जिसका कटिभाग सुगन्धित हो चुका है, उस गन्धमादन पर्वत तकसे आये हुए बड़े-बड़े राजे सेवाञ्जलिरूपी कमलकी पंखुड़ियोंसे विषम मस्तकों द्वारा उसकी वन्दना किया करते थे।

उस राजा तारापीडके सिंहासनमें जटित विविध रत्नोंकी किरणें फैल रही थीं। उसमें मोतियोंकी झालरें बँधी हुई थीं। उसके सिंहासनपर विरा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कल्पतरावाक्रान्ते सिंहासने भरेण शिलीमुखव्यतिकरकम्पिता लता इव नेमुरायामिन्यः सर्वदिशः। यस्मै च मन्ये सुरपतिरपि स्पृहयांचकार। यस्माच्च धवलीकृतभुवनतलः सकललोकहृदयानन्दकारी क्रौञ्चादिव हंसनिवहो निर्जगाम गुणगणः। यस्य चामृतामोदसुरभिपरिमलया मन्दरोद्धतबहुलदुग्धसिन्धुफेनलेखयेव धवलीकृतसुरासुरलोकया दशसु दिक्षु मुखरितभुवनमभ्रम्यत कीर्त्या। यस्य चातिदुःसहप्रतापसंताप-खिद्यमानेव क्षणमपि न मुमोचातपत्रच्छायां राजलक्ष्मीः। तथा च यस्य दिष्टिवृद्धिमिव शुश्राव, उपदेशमिव जग्राह, मङ्गलमिव वहु मेने, मन्त्रमिव जजाप, आगममिव न विसस्मार चरितं जनः।

यस्मिंश्च राजनि गिरीणां विपक्षता, प्रत्ययानां परत्वम्, दर्पणानाम-

---

जमान होनेपर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कोई दिग्गज कल्पवृक्षपर बैठा हुआ है। उसके सिंहासनासीन हो जानेपर बोझसे दसों दिशायें इस तरह झुक जाती हैं, जैसे भ्रमरसमुदायके बैठनेपर लतायें झुक जाती हैं। मेरा तो यह ख्याल है कि उसकी असाधारण शक्तिसम्पदा देखकर देवराज इन्द्र भी ईर्ष्या करते थे। जिस तरह क्रौंचपर्वतसे हंस निकलते हैं, उसी प्रकार राजा तारा-पीडसे सभी गुणगण निकलकर चारों ओर फैल जाते थे। उन गुणोंसे सारा भुवनमण्डल शुभ्र हो उठता था और सब लोगोंकी अन्तरात्माको आनन्द प्राप्त होता था। उसकी कीर्ति समस्त देवताओं और दैत्योंके लोकोंको उज्ज्वल कर रही थी। वह कीर्ति मन्दराचल द्वारा उछाले गये क्षीरसागरकी फेनराशि-की भाँति तथा उसकी सुगन्धि अमृतकी सुगन्धि जैसी उच्च कोटिकी थी। वह अखिल भुवनमण्डलको मुखरित करती हुई दसों दिशाओंमें घूमा करती थी। उसके दुःसह प्रतापके तापसे खिन्न राजलक्ष्मी क्षणभरके लिए भी उसकी छत्रछायासे अलग नहीं होती थी। भाग्यके अभ्युदयकी तरह सब लोग उसका गुणगान सुनते थे। उपदेशके समान उन्हें हृदयंगम कर लेते थे। मांगलिक कृत्यकी तरह उसका आदर करते थे। मंत्रके सदृश उसे जपते थे और शास्त्रीय वचनके समान उसके चरित्रको वे कभी भी नहीं भूलते थे।

उस राजा तारापीडके राज्यमें विपक्षता (पक्षहीनता) केवल पर्वतोंमें रहती थी, प्रजाजनोंमें विपक्षता अर्थात् द्वेषबुद्धि नहीं रहती थी। सुप्तिङ् आदि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिमुखावस्थानम्, शूलपाणिप्रतिमानां दुर्गाश्लेषः, जलधराणां चाप-धारणम्, ध्वजानामुन्नतिः, धनुषामवनतिः, वंशानां शिलीमुखमुखक्षतिः, देवतानां यात्रा, कुसुमानां बन्धनस्थितिः, इन्द्रियाणां निग्रहः, वन-करिणां वारिप्रवेशः, तैक्ष्ण्यमसिधाराणाम्, व्रतिनामग्निधारणम्, ग्रहाणां तुलारोहणम्, अगस्त्योदये विषशुद्धिः, केशनखानामायतिभंगः,

---

वैयाकरण प्रत्ययोंमें ही परत्वभाव रहता था, प्रजामें किसीकी किसीके प्रति परत्व अर्थात् शत्रुताकी भावना नहीं थी। केवल दर्पण ही सामने रहते थे, लड़नेके लिए कोई किसीका सामना नहीं करता था। केवल शिवजीकी मूर्तियाँ ही दुर्गाजीका आलिंगन किये दीखती थीं, किसीको दुर्ग अर्थात् किलेमें जानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती थी। केवल मेघ ही चाप अर्थात् इन्द्रधनुष धारण करते थे, युद्धके निमित्त किसीको धनुष नहीं उठाना पड़ता था। केवल प्रतीहार (द्वारपाल) लोग तलवार लिये रहते थे—अन्य लोग नहीं। तीक्ष्णता केवल तलवारमें रहती थी–अन्यत्र नहीं। केवल ध्वजाओंमें उन्नति रहती थी, प्रजामें अहंकारके अभाववश औद्धत्य नहीं था। धनुषोंमें ही अवनति (डोरी खींचते समय झुकाव) रहती थी, प्रजाजनमें किसीकी अवनति नहीं होती थी। शिली-मुख अर्थात् भौरों द्वारा बाँसोंका ही विनाश होता था, शिलीमुखों अर्थात् बाणों द्वारा किसीका नाश नहीं होता था। देवताओंकी ही यात्रा (उत्सव) होती थी, किसी शत्रुपर चढ़ाईके लिए यात्रा नहीं की जाती थी। केवल पुष्पोंमें ही मालारूपमें बन्धन रहता था, दण्डरूपमें किसीको बन्धनमें नहीं पड़ना पड़ता था। एकमात्र इन्द्रियोंका ही निग्रह (रोकना) होता था, किसी प्रजाजनको निग्रह अर्थात् दण्ड नहीं दिया जाता था। वनैले हाथी ही वारी अर्थात् गजबन्धन स्थानमें जाते थे, अन्य किसी प्रजाजनको वारिप्रवेश अर्थात् जलमें प्रविष्ट होकर शपथ नहीं खानी पड़ती थी। केवल अग्निहोत्रादिव्रत-धारी लोगोंमें ही अग्निधारण अर्थात् अग्निग्रहण होता था, किसीको शपथ खानेके लिए हाथपर आग नहीं उठानी पड़ती थी। केवल रवि-चन्द्र आदि ग्रहों-को ही तुला (तुलाराशि) पर चढ़ना पड़ता था, किसीको तुलापर चढ़कर शपथ नहीं खानी पड़ती थी। अगस्त्यका उदय होनेपर ही विषशुद्धि (जल-शुद्धि) होती थी, अपराधनिवृत्तिके लिए कोई विष खाकर आत्मशुद्धि नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जलददिवसानां मलिनाम्बरत्वम्, रत्नोपलानां भेदः, मुनीनां योगसाधनम्, कुमारस्तुतिषु तारकोद्धरणम्, उष्णरश्मेर्ग्रहणशंका, शशिनो ज्येष्ठातिक्रमः, महाभारते दुःशासनापराधाकर्णनम्, वयःपरिणामे दण्डग्रहणम्, असिपरिवारेष्वकुशलयोगः, कामिनीकुचभंगेषु वक्रता, करिणां दानविच्छित्तिः, अक्षक्रीडासु शून्यगृहदर्शनं पृथिव्यामासीत।

करता था। केवल केशों और नखोंके काटनेमें ही आयतिच्छेद अर्थात् बढ़नेपर कटाव होता था, बुढ़ौतीमें किसीको सुखोपभोगका अभाव नहीं रहता था। वर्षा ऋतुमें ही अम्बर (आकाश) मलिन होता था, किसी प्रजाजनका अम्बर अर्थात् वस्त्र कभी मलिन नहीं दीखता था। रत्नोंके पत्थरोंमें ही गूँथनेके लिए भेद अर्थात् छिद्र होते थे, प्रजाजनमें भेदनीतिका उपयोग नहीं होता था। केवल मुनि ही चित्तवृत्तिके निरोधार्थ योगाभ्यास करते थे, कोई किसीको मारनेके लिए गुप्त साधनका सहारा नहीं लेता था। षडाननकी स्तुतिके समय में ही तारक (तारकासुर) का उद्धरण होता था, दण्ड देनेके लिए किसीकी आँखकी पुतली नहीं निकाली जाती थी। केवल सूर्यको ही ग्रहणकी आशंका रहती थी, किसीको राजपुरुषों द्वारा पकड़े जानेका भय नहीं रहता था। केवल महाभारतमें ही दुःशासनके अपराधका वर्णन मिलता था, कोई पुरुष दुष्ट शासनका उदाहरण नहीं उपस्थित करता था। केवल चन्द्रमा ही विक्रम अर्थात् ज्येष्ठा नक्षत्रका उल्लंघन करता था, प्रजाजनोंमें कोई ज्येष्ठ भाईकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं करता था। बुढ़ौतीमें ही लोग दण्ड ग्रहण करके डंडेके सहारे चलते थे, राज्य द्वारा प्रजाजनोंसे जुर्माना नहीं लिया जाता था। तलवारकी म्यानमें ही अकुशल योग अर्थात् कलंकका योग रहता था, किसी प्रजाजनमें कलंक नहीं दिखायी देता था। केवल कामिनीके स्तनोंपर की हुई पत्ररचनामें ही वक्रता (टेढ़ापन) दीखती थी, किसी प्राणीके मनमें वक्रता अर्थात् क्रूरता नहीं रहती थी। हाथियोंमें ही दानविच्छित्ति (मदरचना) होती थी, किसी प्राणीमें दान अर्थात् त्यागका नाश नहीं होता था। चौपड़ आदि पाँसोंसे खेले जानेवाले खेलोंमें ही कोष्ठक गोटीसे शून्य दीखते थे, पृथिवीपर किसीका घर धन-धान्यसे शून्य नहीं रहता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्य च राज्ञो निखिलशास्त्रकलावगाहगम्भीरबुद्धिः, आशैशवादुपारूढनिर्भरप्रेमरसः, नीतिशास्त्रप्रयोगकुशलः, भुवनराज्यभारनौकर्णधारः, महत्स्वपि कार्यसंकटेष्वविषण्णधीः, धाम धैर्यस्य, स्थानं स्थितेः, सेतुः सत्यस्य, गुरुर्गुणानाम्, आचार्य आचाराणाम्, धाता धर्मस्य, शेषाहिरिव महीभारधारणक्षम, सलिलनिधिरिव महासत्त्वः, जरासंध

उस राजा तारापीडका शुकनास नामसे विख्यात ब्राह्मण मंत्री था। सभी शास्त्रों और कलाओंका परिशीलन करनेके कारण उसकी बुद्धि बहुत गम्भीर हो गयी थी। बाल्यकालसे ही राजापर उसका अगाध प्रेम था। नीतिशास्त्रका उपयोग करनेमें वह पूर्ण निपुण था। वह समस्त संसारके राज्यभारको ढोनेमें समर्थ नौकाके कर्णधार सदृश विज्ञ था। बड़े-बड़े संकटके अवसरोंपर भी उसकी बुद्धि विषण्ण नहीं होती थी। वह धैर्यका धाम, मर्यादाका आधार, सत्यका सेतु, गुणोंका गुरु, शिष्टजनों द्वारा आचरित आचारका आचार्य अर्थात् उपदेशक और धर्मका धाता (प्रजापति) था। शेषनागके समान वह समस्त पृथिवीका भार वहन करनेमें समर्थ था (शेषनाग पृथिवीका भार सम्हालते हैं और शुकनास पृथिवीका शासनभार ढोनेमें समर्थ था)। जैसे समुद्र नक्रमकरादि बड़े-बड़े जलजन्तुओंका आश्रय है, उसी प्रकार शुकनास असाधारण साहसी था। जरासन्धके समान वह सन्धि (साम) और विग्रह (युद्ध)में निपुण था (जरासन्ध दो भागोंमें विभक्त होकर जुड़ा हुआ था, शुकनास मेल और युद्धके काममें कुशल था। कथान्तर पूर्वकालमें बृहद्रथ नामका एक राजा था। बहुत समय बीत जानेपर भी उसके पुत्र नहीं हुआ। इसके लिए रानीने विशेष आग्रह किया, तब राजाने महर्षि चण्डकौशिककी आराधना करके उन्हें प्रसन्न किया। उन प्रसन्न मुनिने राजाको एक आमका फल दिया। घरपर पहुँचकर राजाने उस फलके दो टुकड़े करके अपनी दो रानियोंको दे दिया। उन्हें खाकर रानियाँ गर्भवती हो गयीं और समय पूरा होनेपर उन दोनोंने एक पुत्रके आधे-आधे शरीरको उत्पन्न किया। उन अर्धशरीरोंको देखकर राजाने मारे क्रोधके श्मशानमें फेंकवा दिया। वहाँ भोजनके लिए घूमती हुई जरा नामकी राक्षसी जा पहुँची। उसने उन्हें ले जानेके लिए एक स्थानपर रख दिया। ऐसा करनेसे ज्यों ही वे दोनों भाग परस्पर मिले, त्यों ही एक बालक जीवित हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव घटितसंधिविग्रहः, त्र्यम्बक इव प्रसाधितदुर्गः, युधिष्ठिर इव धर्मप्रभवः, सकलवेदवेदांगवित्, अशेषराज्यमंगलैकसारः, बृहस्पतिरिव सुनासीरस्य, कविरिव वृषपर्वणः, वसिष्ठ इव दशरथस्य, विश्वामित्र इव रामस्य, धौम्य इवाजातशत्रोः, दमनक इव नलस्य सर्वकार्येष्वाहितमतिरमात्यो ब्राह्मणः शुकनासो नामासीत्।

यो नरकासुरशस्त्रप्रहारभीषणे भ्रमन्मन्दरनितम्बनिर्दयनिष्पेषकठिनांसपीठे नारायणवक्षःस्थलेऽपि स्थितामदुष्करलाभाममन्यत प्रज्ञाबलेन लक्ष्मीम्। यं चासाद्य दर्शितानेकराज्यकला लतेव पादपमनेकप्रतानगहना विस्तारमुपययौ प्रज्ञा। यस्य चानेकचारपुरुषसहस्रसंचार-

---

गया और वह रोने लगा। बादमें दयावश जराने वह बालक ले जाकर राजा बृहद्रथको दे दिया। इसी कारण उस बालकका जरासन्ध नाम पड़ा) जिस तरह शिवजी दुर्गाको प्रसन्न करनेके लिए आभूषण आदिका प्रबन्ध करते थे, उसी प्रकार शुकनास विभिन्न स्थलोंपर दुर्ग (किले) का निर्माण कराता था। जिस तरह महाराज युधिष्ठिर धर्मप्रसव (धर्मसे उत्पन्न हुए) थे, उसी प्रकार शुकनास भी यागादि कर्मोंका सम्पादक होनेके नाते धर्मका उत्पादक था। वह सभी वेदों और वेदांगोंका विज्ञ था। वह राज्यके समस्त मांगलिक कार्योंका संचालक प्रधान पुरुष था। जैसे इन्द्रके मंत्री बृहस्पति, वृषपर्वाके शुक्राचार्य, महाराज दशरथके वसिष्ठ, रामके विश्वामित्र, युधिष्ठिरके धौम्य और राजा नलका दमनक मंत्री था। वैसे ही शुकनास राजा तारापीडका मंत्री था।

नरकासुरके शस्त्रोंकी मारसे विष्णुभगवान्का आहत वक्षःस्थल भयानक हो गया था। उनके कंधे अमृतमंथनके समय घूमते हुए मन्दराचलके निर्दय घर्षणसे कठोर हो गये थे। नारायणके ऐसे वक्षःस्थलमें निवास करनेवाली दुर्लभा लक्ष्मीको भी शुकनास अपने बुद्धिबलसे प्राप्त करना कठिन नहीं समझता था। अनेकानेक राज्यस्वरूप फल दिखलाती हुई लतास्वरूपिणी बुद्धि शुकनासस्वरूप वृक्षका सहारा पाकर अगणित शाखा-प्रशाखाओं द्वारा फैलकर गहन होती हुई बहुत विस्तृत हो गयी थी। तात्पर्य यह कि वह बुद्धिमान् मंत्री राज्यमें ऐसे-ऐसे महान् कार्य करता था कि जिनसे प्रजा उत्तम शासनके विविध लाभोंका अनुभव करके उसपर प्रसन्न रहती थी। चारों समुद्रोंके छोर तककी सारी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निचिते चतुरुदधिवलयपरिधिप्रमाणे धरणीतले भवन इवाविदितमहरहः समुच्छ्वसितमपि राज्ञां नासीत्।

स राजा बाल एव सुरकुञ्जरकरपीवरेण राज्यलक्ष्मीलीलोपधानेन सकलजगदभयदानयज्ञदीक्षायूपेन स्फुरदसिलतामरीचिजालजटिलेन निखिलारातिकुलप्रलयधूमकेतुदण्डेन बाहुना विजित्य सप्तद्वीपवलयां वसुन्धरां तस्मिञ्छुकनासनाम्नि मन्त्रिणि सुहृदिव राज्यभारमारोप्य सुस्थिताः प्रजाः कृत्वा कर्तव्यशेषमपरमपश्यत्। प्रशमिताशेषविपक्षतया विगताशङ्कः शिथिलीकृतवसुन्धराव्यापारः प्रायो यौवनसुखान्यनुबभूव। तथा हि। कदाचिदुल्लसत्कठोरकपोलपुलकजर्जरितकर्णपल्लवानां प्रणयिनीनां चन्दनजलछटाभिरिव स्मितसुधाछविभिरभिषिच्यमानः, कर्णोत्पलैरिव लोचनांशुभिस्ताड्यमानः, कुङ्कुमधूलिभिरिवाभरणप्रभाभि-

---

पृथिवीपर उसके बहुतेरे गुप्तचर घूमा करते थे। अतएव वहाँके राजाओंके श्वास लेने तकका समाचार उसके लिए उसी प्रकार अज्ञात नहीं रह पाता था, जैसे समस्त भूतल उसका अपना निजी घर हो।

इन्द्रगज ऐरावतकी सूँड़सदृश मोटा उस राजाका भुजदण्ड राज्यलक्ष्मी-विलासके लिए उपधान (तकिया) सदृश था। वह सारे संसारको अभयदानरूपिणी यज्ञदीक्षा प्रदान करनेमें यज्ञयूप (स्तम्भ) के समान और चमकती हुई तल-वारकी किरणोंके समूहसे आच्छादित तथा समग्र शत्रुसंघके विनाशकी सूचना देती हुई धूमकेतु ताराकी पूँछ जैसा लगता था। उसी भुजदण्डके बलसे राजा तारापीडने सप्तद्वीपरूपी कंकणधारिणी सारी पृथिवीको बाल्यकालमें ही जीत लिया। इसके बाद उसने अपने मित्रके सदृश प्रिय मंत्री शुकनासपर समस्त राज्यभार डालकर प्रजाको सुस्थिर कर दिया। तब अवशिष्ट कार्योंपर उसने दृष्टि दौड़ायी। इस प्रकार शत्रुओंके नष्ट हो जानेसे उसकी चिन्ता दूर हो गयी और कोई काम उसे बाकी नहीं दिखायी पड़ा। अतएव वह पृथिवीके अर्जन-सम्बन्धी काम शिथिल करके प्रायः यौवनके सुखोंका अनुभव करने लगा। अब कभी-कभी वह कामातुर होकर सुरतक्रीडामें मग्न हो जाता था। उस समय गालों-पर रोमांच हो जानेसे जर्जरित कर्णपल्लवोंवाली प्रणयिनी युवतियाँ चन्दनजलकी धारा सरीखी अपनी हास्य एवं अमृतमयी कान्तिसे उस राजा तारापीडका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राकुलीक्रियमाणलोचनः, धवलांशुकैरिव करनखमयूखजालकैराहन्यमानः, चम्पककुसुमदलमालिकाभिरिव भुजलताभिराबध्यमानः, दष्टाधराधूतकरतलचलन्मणिवलयकलकलरमणीयम्, अतिरभसदलितदन्तपत्रदलदन्तुरशयनम्, उत्क्षिप्तचरणतलगलदलक्तकरक्तशेखरम्, सरभसकचग्रहचूर्णितमणिकर्णपूरम्, उल्लसितकुचकृष्णागुरुपङ्कपत्रलताङ्कितप्रच्छदपटम्, अच्छश्रमजलकणिकालुलितगोरोचनतिलकपत्रभङ्गम्, अनङ्गपरवशः सुरतमाततान। कदाचिन्मकरकेतुकनकनाराचपरंपराभिरिव कामिनीकरपुटविनिर्गताभिः कुङ्कुमजलधाराभिः पिञ्जरीक्रियमाणकायो लाक्षाजलच्छटाप्रहारपाटलीकृतदुकूलो मृगमदजलबिन्दुशबलचन्दनस्थासकः कनकशृङ्गकोशैश्चिरं चिक्रीड।

अभिषेक किया करती थीं। वे अपने कानोंमें धारण किये कमलों जैसे नयनोंके कटाक्षोंसे उसपर वार करती थीं। कुंकुम (केसर) की रजसरीखी आभूषणोंकी दीप्तिसे वे उसकी आँखोंको व्याकुल कर देती थीं। उज्ज्वल वस्त्र जैसे हाथके नखकिरणसमूहसे आघात पहुँचाती थीं और चम्पकपुष्पों तथा पल्लवोंकी बनी हुई माला जैसी अपनी कोमल भुजलताओंमें बाँध लेती थीं। उस समय उन सुन्दरियोंका अधरदंश होनेसे काँपते हाथोंमें हिलते हुए मणिजटित कंगनोंके कलकल रवसे वे बड़ी रमणीक लगती थीं। वेगके कारण टूटे हुए कर्णभूषणके टुकड़ोंसे उनकी सेज ऊँची-नीची हो जाया करती थी। ऊँचे उठाये हुए पाँवोंमें लगे महावरके रंगसे उनका सिर लाल हो जाता था। वेगके साथ केश पकड़नेसे उनका मणिजटित कर्णपूर चूर्ण हो जाता था। उभरे हुए स्तनोंपर कृष्णागुरुके लेपसे रचित पत्रलता द्वारा उनके कपड़ोंपर दाग पड़ जाते थे। विमल पसीनेकी नन्हीं-नन्हीं बूँदोंसे गोरोचनके तिलक तथा उसीसे बनी फूल-पत्तियाँ बिगड़ जाया करती थीं। कभी-कभी वह सोनेकी पिचकारियोंसे बड़ी देर तक रंग खेला करता था। उस समय उन कामिनियोंके हाथरूपी संपुटसे निकलती कामदेवके स्वर्णबाणोंकी पाँत जैसी केसरमिश्रित जलकी धाराओंसे उस राजाका सारा शरीर पीले रंगसे रँग जाता था। लाक्षाजलकी धारा पड़नेपर उसके सब रेशमी कपड़े लाल हो जाते थे। कस्तूरीमिश्रित जलकी बूँदें पड़नेपर उसका चन्दनलेप चितकबरा हो जाता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कदाचित्कुचचन्दनचूर्णधवलितोर्मिमालम्, चटुलतुलाकोटिवाचालचरणालक्तकसिक्तहंसमिथुनम्, अलकनिपतितकुसुमसारम्, प्लवमानकर्णपूरकुवलयदलम्, उन्नतनितम्बक्षोभजर्जरिततरंगम्, उद्दलितनालपर्यस्तनलिननिपतितधूलिपटलम्, अनवरतकरास्फालनस्फुरत्फेनबिन्दुचन्द्रकितं सावरोधजनो जलक्रीडया गृहदीर्घिकाणामम्भश्चकार।

कदाचित्संकेतवञ्चिताभिः प्रणयिनीभिराबद्धभंगुरभ्रूकुटिभिरारणितपारिहार्यमुखरभुजलताभिर्बकुलकुसुमावलीभिः संयतचरणो नखकिरणविमिश्रैः कुसुमदामभिः कृतापराधो दिवसमताड्यत। कदाचिद्बकुलतरुरिव कामिनीगण्डूषसीधुधारास्वादमुदितो विकाशभमजत। कदाचिदशोकपादप इव युवतिचरणतलप्रहारसंक्रान्तालक्तको राग-

---

कभी-कभी वह राजमहलकी स्त्रियोंके साथ जलक्रीडा करता था। उस समय महलके सरोवरोंके जलमें उन कामिनियोंके कुचोंका चन्दन धुल जानेसे उसकी लहरें उज्ज्वल हो जाती थीं। पायल हिलनेपर झंकार करते हुए उनके पाँवोंमें लगा महावरका रंग छलककर वहाँ उपस्थित हंसके जोड़ोंपर जा गिरता था। उनकी अलकोंके फूल निकलकर जब जलमें गिरते थे तो उस जलका विचित्र रूप हो जाता था। उनके कर्णपूरमें लगे कमलपत्र निकलकर जलपर तैरने लगते थे। उनके ऊँचे-ऊँचे नितम्बोंकी थपेड़से तरंगें छितरा जाती थीं। नालसे तोड़कर फेंके गये कमलोंकी रज चारों ओर फैल जाती थी और निरन्तर उस जलको हिलोरनेसे उड़ती हुई फेनकी बूँदोंसे उसमें यत्र-तत्र चन्द्राकार मंडल जैसे बन जाया करते थे।

वह कभी-कभी संकेतित स्थानपर कामिनियोंको बुलाकर वहाँ नहीं जाता था। उसके द्वारा इस प्रकार प्रतारित सुन्दरियाँ दूसरे दिन भृकुटी टेढ़ी करके झनकारते हुए मणिमय कंकणोंसे शब्दायमान भुजारूपिणी लताओं द्वारा मौलसिरीके पुष्पोंकी बनी मालासे बाँध देतीं और नखकिरणोंसे मिश्रित अन्य पुष्पमालासे उसे मारती थीं। कभी-कभी वह उन कामिनियोंके मुखमें भरी मदिराकी घूँटके आस्वादनसे आनन्दित होकर वकुलवृक्ष (मौलसिरी) के समान विकास प्राप्त करता था (स्त्रियोंके मुखगंडूषसे मौलसिरीका वृक्ष खिलता है और वह राजा मुसकाने लगता था)। कभी-कभी उन कामिनियोंके चरण-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुवाह । कदाचिन्मुसलायुध इव चन्दनधवलः कण्ठावसक्तोल्लसल्लोल-कुसुममालः पानमसेवत । कदाचिद्गन्धगज इव मदरक्तकपोलदोलाय-मानकर्णपल्लवो मदकलः काननं विकचवनलताकुसुमसुरभिपरिमलं जगाहे । कदाचित्क्वणितमणिनूपुरनिनादानन्दितमानसो हंस इव कमलवनेषु रेमे । कदाचिन्मृगपतिरिव स्कन्धावलम्बिकेसरमालः क्रीडापर्वतेषु विचचार । कदाचिन्मधुकर इव विजृम्भमाणकुसुम-मुकुलदन्तुरेषु लतागृहेषु बभ्राम । कदाचिन्नीलपटविरचितावगुण्ठनो बहुलपक्षप्रदोषदत्तसंकेताः सुन्दरीरभिससार । कदाचिच्च विघटित-कनककपाटं प्रकटवातायनेष्वनवरतदह्यमानकृष्णागुरुधूमरक्तैरिव

तलके प्रहारसे लगे हुए महावरके रंगसे रँगकर अशोकवृक्षके सदृश लाल हो जाता था (स्त्रीके चरणप्रहारसे अशोकके वृक्ष फूलते हैं, राजाके हृदयमें उससे अनुराग उत्पन्न होता था) । वह कभी-कभी बलरामकी तरह चंदनसे श्वेत कंठमें चंचल कुसुममाला पहनकर उन ललनाओंके साथ मद्यपान करता था (बलरामजीका कंठ चन्दन लगानेसे श्वेत था, किन्तु राजाका कंठ चन्दनके समान श्वेत था) । कभी-कभी मदसे लाल कपोलोंपर हिलते कर्णपल्लवधारी वह मस्त राजा मदवाही मतवाले गजराजके समान वनलताके पुष्पोंकी उत्तम सुगन्धियुक्त वनोंमें जाकर विहार किया करता था (मदवाही गजराजके मदसे लाल कपोलोंपर उसके लम्बे-चौड़े कान झूलते हैं और राजा तारापीडके कपोलों-पर कानमें पड़ा हुआ पल्लव झूलता था) । कभी-कभी कामिनियोंके नूपुरोंकी झनकारसे आनन्दित होकर वह हंसके समान कमलवनमें विहार करता था (हंस कामिनियोंके नूपुरकी झनकार जैसे शब्दसे प्रसन्न होता है और राजा नूपुरके शब्दपर मस्त हो जाता था) कभी-कभी वह अपने कंधेपर मौलसिरीकी केस-रिया माला डालकर केसरी सिंहके सदृश क्रीडाके लिए नियत पर्वतोंपर जाकर क्रीडा करता था । कभी-कभी वह भौंरोंके समान खिली हुई फूलोंकी कलियोंसे भरे लतामण्डपोंमें जाकर विचरता था । कभी-कभी नीले कपड़ोंसे तन ढाँककर कृष्णपक्षकी अँधेरी रातोंमें संकेतित स्थानपर जाकर सुन्दरियोंके साथ अभिसार-क्रीडा किया करता था । कभी-कभी वह अपने महलके सुवर्णनिर्मित कपाट तथा खिड़कियाँ खोल देता था । वहाँपर निरन्तर सुलगते हुए कालागुरुके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पारावतैरधिष्ठितविटङ्केषु प्रासादकुक्षिषु कतिपयाप्तसुहृत्परिवृतो वीणा-वेणुमुरजमनोहरमवरोधसंगीतकं ददर्श। किं बहुना यद्यदतिरमणीयमवि-रुद्धमायत्यां तदात्वे च तत्तदनाक्षिप्तचेताः परिसमाप्तत्वादन्येषां पृथिवी-व्यापाराणां सिषेवे, न त्वतिव्यसनितया। प्रमुदितप्रजस्य परिसमाप्त-सकलमहीप्रयोजनस्य नरपतेर्विषयोपभोगलीला भूषणम्। इतरस्य तु विडम्बना। प्रजानुरागहेतोरन्तरान्तरा दर्शनं ददौ। सिंहासनं च निमित्तेष्वारुरोह।

शुकनासोऽपि महान्तं राज्यभारमनायासेनैव प्रज्ञाबलेन बभार। यथैव कार्याण्यकार्षीत्तद्वदसावपि द्विगुणीकृतप्रजानुरागो राजकार्याणि चक्रे। तमपि चलितचूडामणिमरीचिमञ्जरीजालिभिर्मौलिभिरावर्जित-कुसुमशेखरच्युतमधुसीकरसिक्तनृपसभं दूरावनतिप्रेङ्खोलितमणिकुण्डल-

---

थे ऐसे रंगे हुए कबूतर अपने-अपने दरबोंमें बैठे रहते थे। वहाँ वह अपने कितने ही मुँहलगे मित्रोंके साथ बैठकर वीणा, बाँसरी और मृदंगके बोलोंसे मधुर अन्तःपुरका संगीत सुनता था। और कहाँतक कहें, संसारमें जो वस्तुयें अत्यन्त रमणीक, मनोरंजक, मनपसन्द तथा तत्काल एवं भविष्यकालके लिए अनुकूल थीं, उन सबका राजा तारापीडने खुलकर उपभोग किया। किन्तु तो भी वह किसी वस्तुविशेषमें आसक्त होकर व्यसनी नहीं बना। उन सुखोंको उसने इसी लिए भोगा कि उसके पास राज्यसम्बधी कोई कार्य बाकी नहीं बचा था। क्योंकि जिसकी प्रजा प्रसन्न हो और राज्यके पृथिवीसम्बन्धी सब काम पूरे हो गये हों, ऐसे राजाके लिए विषयभोग भूषण बन जाते हैं। किन्तु अन्य राजा-ओंके लिए तो वह विडम्बनामात्र रहता है। प्रजाजनोंको प्रसन्न करनेके लिए वह बीच-बीचमें उसने मिलता रहता था और कार्यविशेष आ जानेपर सिंहा-सनपर भी बैठता था।

उसका मंत्री शुकनास भी अपने प्रौढ़ बुद्धिबलसे अनायास राज्यका भार वहन करता था। राजा तारापीड जिस प्रकार शासन करता था, उसी तरह वह भी प्रजाके साथ उससे दूना सद्व्यवहार करता हुआ सब काम करता था। सामन्त राजे मस्तक नवाकर जब मंत्रीको प्रणाम करते थे, तब हिलते हुए चूडामणिकी किरणोंसे भरे मुकुटोंमें लगे फूलोंसे चूते हुए मधुके द्वारा पूरी राज-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कोटिसंघट्टिताङ्गदं राजकमाननाम। तस्मिन्नपि चलिते चलितचटुलतुरगबलमुखरखुररवबधिरीकृतभुवनान्तरालाः, बलभरप्रचलवसुधातलदोलायमानगिरयः, गलन्मदान्धगन्धगजदानधारान्धकाराः, संसर्पदतिबहुलधूलिपटलधूसरितसिन्धवः, प्रचलत्पदातिबलकलकलरवस्फोटितकर्णविवराः, सरभसोद्घुष्यमाणजयशब्दनिर्भराः, प्रोद्धूयमानधवलचामरसहस्रसंछादिताः, पुञ्जितनरेन्द्रवृन्दकनकदण्डातपत्रसंघट्टनष्टदिवसा दश दिशो बभूवुः।

एवं तस्य राज्ञो मन्त्रिविनिवेशितराज्यभारस्य यौवनसुखमनुभवतः कालो जगाम। भूयसा च कालेनान्येषामपि जीवलोकसुखानां प्रायः सर्वेषामन्तं ययौ। एकं तु सुतमुखदर्शनसुखं न लेभे। तथोपभुज्यमानमपि निष्फलपुष्पदर्शनं शरवणमिवान्तःपुरमभूत्। यथा यथा

सभा सिंचकर गीली हो जाती थी और अत्यधिक झुकनेके कारण लटकते हुए मणिजटित कुण्डलोंकी नोकोंसे उनके बाजूबन्द रगड़ खाने लगते थे। जब वह कहीं जाता था तो सरपट भागते हुए चंचल घोड़ोंकी टापकी ध्वनिसे दसों दिशाओं तथा सभी भुवनोंके अन्तराल बहरे हो जाते थे। उसकी सेनाके भारसे विचलित पृथिवीतलके पर्वत डगमगाने लगते थे। सतत मदप्रवाहसे अंधे मदवाही गजराजोंकी मदधारासे अन्धकार छा जाता और उनके पदाघातके कारण उड़ती धूलिराशिसे समुद्रोंका रंग मटमैला हो जाता था। वेगसे चलते हुए पैदल सैनिकों द्वारा उच्चरित जयजयकारके कलकल निनाद चहुँधा व्याप्त होकर असह्य हो उठते थे। चलते हुए सहस्रों श्वेत चमर भूतलको ढाँक लेते थे और एकत्रित राजाओंके सुवर्णदण्डवाले छत्रोंके परस्पर सट जानेपर दिन गायब हो जाता था और दसों दिशायें अन्धकाराच्छन्न हो जाती थीं।

इस तरह वह राजा तारापीड मंत्री शुकनासपर सारा राज्यभार डालकर जवानीके सुखोंका अनुभव कर रहा था। इस प्रकार चिरकाल तक विषयसुख भोगते-भोगते वह सांसारिक सुखोंके अन्ततक पहुँच गया, किन्तु बहुत दिनों बाद भी उसे पुत्रका मुख नहीं देखनेको मिला। जिससे विविध भोगसाधनोंके सुलभ होनेपर भी अब अन्तःपुर निष्फल-पुष्प-दर्शनयुक्त मूँजकी घास जैसा दीखने लगा (मूँजमें फूल तो लगते हैं, किन्तु फल नहीं लगते। इसी प्रकार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च यौवनमतिचक्राम तथा तथा विफलमनोरथस्यानपत्यताजन्माऽवर्धतास्य संतापः। विषयोपभोगसुखेच्छाभिश्च मनो विजह्ने। नरपतिसहस्रपरिवृतमप्यसहायमिव, चक्षुष्मन्तमप्यन्धमिव, भुवनालम्बनमपि निरालम्बमिवात्मानममन्यत।

अथ तस्य चन्द्रलेखेव हरजटाकलापस्य, कौस्तुभप्रभेव कैटभारातिवक्षःस्थलस्य, वनमालेव मुसलायुधस्य, वेलेव सागरस्य, मदलेखेव दिग्गजस्य, लतेव पादपस्य, पुष्पोद्गतिरिव सुरभिमासस्य, चन्द्रिकेव चन्द्रमसः, कमलिनीव सरसः, तारापंक्तिरिव नभसः, हंसमालेव मानसस्य, चन्दनवनराजिरिव मलयस्य, फणामणिशिखेव शेषस्य, भूषणमभूत्त्रिभुवनविस्मयजननी जननीव वनिताविभ्रमाणां सकलान्तःपुरप्रधानभूता महिषी विलासवती नाम।

एकदा च स तदावासगतस्तां चिन्तास्तिमितदृष्टिना शोकमूकेन परिजनेन परिवृताम्, आरादवस्थितैश्च ध्यानानिमिषलोचनैः कञ्चु-

---

रनिवासकी रानियोंको रजोदर्शन तो होता था, किन्तु सन्तति नहीं होती थी)। जैसे-जैसे उसका यौवनकाल बीत रहा था, वैसे ही वैसे कामना न पूर्ण होनेसे उसे अपने निपूतेपनका सन्ताप सताने लगा। अब धीरे-धीरे विषयसम्भोग-जनित सुखकी इच्छासे उसका मन हट चला। अब वह नेत्र रहते भी अपनेको अन्धा और समस्त भुवनके सहायक होनेपर भी स्वयंको बेसहारा समझने लगा।

जैसे शिवजीके जटाकलापको चन्द्रमाकी कला, भगवान् विष्णुके वक्षःस्थलको कौस्तुभमणिकी दीप्ति, बलरामको वनमाला, समुद्रको तट, दिग्गजको मदकी धारा, वृक्षको लतायें, वसन्तऋतुको पुष्पविकास, चन्द्रमाको चन्द्रिका, सरोवरको कमलिनी, आकाशको नक्षत्रराशि, मानसरोवरको हंसोंका झुण्ड, मलय पर्वतको चन्दनका वन और शेषनागको उनके फणकी मणि प्रकाश देती है, उसी प्रकार उसके अन्तःपुरमें विलासवती उसकी प्रधान पटरानी थी। अपने अनुपम सौन्दर्यसे वह सारी त्रिलोकीमें विस्मय उत्पन्न कर रही थी और स्त्रियोंके विलासकी तो मानो जननी ही थी।

एक दिन राजा तारापीड महलमें विलासवतीके पास गया तो देखा कि वह एक नन्हेसे सफेद पलंगपर बैठी रो रही है। उसकी समीपवर्तिनी दासियोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किभिरुपास्यमानाम्, अनतिदूरवर्तिनीभिश्चान्तःपुरवृद्धाभिराश्वास्यमानाम्, अविरलाश्रुपातार्द्रीकृतदुकूलाम्, अनलंकृताम्, वामकरतलविनिहितमुखकमलाम्, असंयताकुलालकाम्, सुनिविडपर्यङ्किकोपविष्टां रुदतीं ददर्श। कृताभ्युत्थानां च तां तस्यामेव पर्यङ्किकायामुपवेश्य स्वयं चोपविश्याविज्ञातबाष्पकारणो भीतभीत इव करतलेन विगतबाष्पाम्भःकणौ कुर्वन्कपोलौ भूपालस्तामवादीत्—'देवि, किमर्थमन्तर्गतगुरुशोकभारमन्थरशब्दं रुद्यते। ग्रथ्नन्ति हि मुक्ताफलजालकमिव बाष्पबिन्दुनिकरमेतास्तव पक्ष्मपंक्तयः। किमर्थं च कृशोदरि, नालंकृताऽसि। बालातप इव रक्तारविन्दकोशयोः किमिति न पातितश्चरणयोरयमलक्तकरसः। कुसुमशरसरःकलहंसकौ कस्मात्पादपङ्कजस्पर्शेन नानुगृहीतौ मणिनूपुरौ। किंनिमित्तमयमपगतमेखलाकलाप-

---

दीप्त दृष्टि जड़ हो गयी थी और शोकाकुल होनेके कारण वे सब चुप थीं। कंचुकीगण दुश्चिन्ताके कारण अनिमिष दृष्टिसे निहारते हुए समीप खड़े होकर उसकी सेवा कर रहे थे। उसके पास ही खड़ी अन्तःपुरकी वृद्धायें आश्वासन दे रही थीं। सतत अश्रुप्रवाहसे उसके वस्त्र भींग गये थे। उसने अपने सब गहने उतार डाले थे। वह अपनी बायीं हथेलीपर कपोल रक्खे हुए थी। उसके बालोंकी खुली लटें छितरायी हुई थीं। राजाको देखते ही वह उठ खड़ी हुई और उसका सत्कार किया। किन्तु राजाने तुरन्त उसे पलङ्गपर बैठा दिया और स्वयं भी उसके साथ उसीपर बैठ गया। लेकिन उसके रुदनका कारण न जाननेसे वह भयभीत हो उठा और हथेलियोंसे उसके कपोलोंपर बहते आँसुओंको पोंछता हुआ बोला—'देवि! अपने हृदयमें प्रबल शोकको दबाकर तुम चुपचाप क्यों रो रही हो? ऐसा करनेसे तुम्हारे नेत्रोंकी पलकें मुक्ताहारके सदृश मानों अश्रुबिन्दुओंका हार गूँथ रही हैं। हे कृशोदरि! तुमने आज आभूषण क्यों नहीं पहने? लाल कमलकी पंखुड़ियोंके सदृश चरणोंमें प्रभातकालीन सूर्यसरीखी रक्तवर्णकी महावर क्यों नहीं लगायी? मदनसरोवर-तटवर्ती कलहंसोंके समान मीठी ध्वनि करनेवाले नूपुरोंको आज अपने चरणकमलका स्पर्श करानेकी अनुकम्पा क्यों नहीं की? प्रिये! करधनी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मूको मध्यभागः। किमिति च हरिण इव हरिणलांछने न लिखितः कृष्णागुरुपत्रभङ्गः पयोधरभारे। केन कारणेन तन्वीयं हरमुकुटचन्द्रलेखेव गङ्गास्रोतसा न विभूषिता हारेण वरोरु, शिरोधरा। किं वृथा वहसि विलासिनि स्रवदश्रुजललवधौतपत्रलतं कपोलयुगम्। इदं च कोमलांगुलिदलनिकरं रक्तोत्पलमिव करतलं किमिति कर्णपूरतामारोपितम्। इमां च केन हेतुना मानिनि, धारयस्यनुपरचितगोरोचनाबिन्दुतिलकामसंयमितालकिनीं ललाटरेखाम्। अयं च ते बहुलपक्षप्रदोष इव चन्द्रलेखाविरहितः करोति मे दृष्टिखेदमतिबहुलतिमिरपटलान्धकारः, कुसुमरहितः केशपाशः। प्रसीद। निवेदय देवि, दुःखनिमित्तम्। एते हि पल्लवमिव सरागं मे हृदयमाकम्पयन्ति तरलीकृतस्तनांशुकास्तवायताः श्वासमरुतः। कच्चिन्मयापराद्धमन्येन वा केनचिदस्मदनुजीविना परिजनेन। अतिनिपुणमपि चिन्तयन्न पश्यामि खलु स्खलितमप्यात्मनस्त्वयद्विषये। त्वदायत्तं हि मे जीवितं राज्यं च।

उतारकर तुमने आज अपनी कमरको चुप क्यों कर रक्खा है? हे पयोधरभारधारिणि! आज तुमने चन्द्रमामें अंकित मृगकी भाँति अपने उभड़े हुए स्तनोंपर काले अगरसे चित्रकारी क्यों नहीं की? हे वरारोहे! शिवजीके मुकुटकी चन्द्रकलाके समान द्युतिमान् अपने कंठका गंगाकी धाराके सदृश हारसे शृङ्गार क्यों नहीं किया? हे विलासिनि! आँसू ढाल-ढालकर आज तुमने अपने कपोलोंपर रचित कुंकुमपत्रलता क्यों धो दी है? हे प्रिये! आज तुमने लाल कमलदल सरीखी उँगलियोंवाली हथेलियोंको कर्णपूर क्यों बना डाला है? हे मानिनि! आज तुमने माथेमें गोरोचनका तिलक क्यों नहीं लगाया? तुमने इन लटोंकी चोटी क्यों नहीं गूँथी? हे देवि! चन्द्रलेखासे हीन कृष्णपक्षकी रात्रिके समान तुम्हारी बहुत ही काली चोटीको पुष्पहीन देखकर मेरे नेत्रोंका दुःख हो रहा है। अतएव हे सुन्दरी! अब प्रसन्न होओ और अपने दुःखका कारण बतलाओ। तुम्हारी लम्बी-लम्बी साँसोंकी वायु तुम्हारे स्तनपर पड़े वस्त्रोंको हिलाती हुई मेरे रक्तवर्णके पल्लव सरीखे हृदयको कँपा रही है। क्या मेरे द्वारा कोई अपराध हो गया है? अथवा मेरे परिजनोंमेंसे किसीने कोई क़सूर किया है? भली भाँति विचार करनेपर भी नहीं सोच पाता कि मैंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कथ्यतां सुन्दरि, शुचः कारणम्' इत्येवमभिधीयमाना विलासवती यदा न किंचित्प्रतिवचः प्रतिपेदे तदा विवृद्धबाष्पहेतुमस्याः परिजनमपृच्छत्।

अथ तस्यास्तांबूलकरङ्कवाहिनी संततप्रत्यासन्ना मकरिका नाम राजानमुवाच—'देव, कुतो देवादल्पमपि परिस्खलितम्। अभिमुखे च देवे का शक्तिः परिजनस्यान्यस्य वा कस्यचिदपराद्धुम्। किंतु महाग्रह-ग्रस्तेव विफलराजसमागमाऽस्मीत्ययमस्या देव्याः संतापः। महांश्च कालः संतप्यमानायाः। प्रथममपि स्वामिनी दानवश्रीरिव सततनिन्दितसु-रता शयनस्नानभोजनभूषणपरिग्रहादिषु समुचितेष्वपि दिवसव्यापारेषु कथं कथमपि परिजनप्रयत्नात्प्रवर्त्यमाना सशोकेवासीत्। देवहृदयपी-डापरिजिहीर्षया च न दर्शितवती विकारम्। अद्य तु चतुर्दशीति भग-वन्तं महाकालमर्चितुमितो गतया तत्र महाभारते वाच्यमाने श्रुतम्—

तुम्हारे बारेमें कोई अपराध किया है। मेरा जीवन और सारा राज्य तुम्हारे अधीन हैं। हे सुन्दरि! तुम मुझे अपने शोकका कारण बताओ।' राजा तारापीडके इस प्रकार पूछनेपर भी जब विलासवतीने कोई उत्तर नहीं दिया, तब उसके शोकका कारण परिजनोंसे पूछा।

राजाका प्रश्न सुनकर रानी विलासवतीकी ताम्बूलकरंक (पानका डब्बा) ले चलनेवाली दासी मकरिकाने कहा—'स्वामिन्! आपसे भला कोई अपराध हो सकता है? और फिर जब आप स्वयं महारानीके अनुकूल हैं, तब कोई परिजन किसी प्रकारका अपराध कैसे कर सकता है। 'किन्तु किसी महाग्रहसे गृहीतकी भाँति मेरे साथ राजाका समागम व्यर्थ है।' यह विचार ही महारानीके सन्तापका मुख्य कारण है। बहुत दिनोंसे महारानी इस प्रकार सन्ताप भोग रही हैं। निन्दितसुरता असुरश्रीके सदृश पहले भी शयन, स्नान, भोजन और आभूषण आदि उचित दैनिक व्यवहार करनेके लिए हम परिजनोंके अनेकशः प्रयत्न करनेपर किसी-किसी तरह तैयार होती थीं और शोकसे तो ये सदा विकल रहती थीं। किन्तु आपका जी न दुखे, यह सोचकर ये तनिक भी विकार प्रकट नहीं होने देती थीं। आज चतुर्दशी थी, इसी कारण ये भगवान् महाकालेश्वरका पूजन करने मन्दिर गयी थीं। वहाँपर होती हुई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'अपुत्राणां किल न सन्ति लोकाः शुभाः। पुंनाम्नो नरकात्त्रायत इति पुत्रः' इत्येतच्छ्रुत्वा भवनमागत्य परिजनेन सशिरःप्रणाममभ्यर्थ्यमानापि नाहारमभिनन्दति, न भूषणपरिग्रहमाचरति, नोत्तरं प्रतिपद्यते। केवलमविरलबाष्पदुर्दिनान्धकारितमुखी रोदिति। एतदाकर्ण्य देवः प्रमाणम्' इत्येतदभिधाय विरराम।

विरतवचनायां तस्यां भूमिपालस्तूष्णीं मुहूर्तमिव स्थित्वा दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य निजगाद--'देवि, किमत्र क्रियतां दैवायत्ते वस्तुनि। अलमतिमात्रं रुदितेन। न वयमनुग्राह्याः प्रायो देवतानाम्। आत्मजपरिष्वङ्गामृतास्वादसुखस्य नूनमभाजनमस्माकं हृदयम्। अन्यस्मिञ्जन्मनि न कृतमवदातं कर्म। जन्मान्तरकृतं हि कर्म फलमुपनयति पुरुषस्येह जन्मनि। न हि शक्यं दैवमन्यथा कर्तुमभियुक्तेनापि। यावन्मानुष्यके शक्यमुपपादयितुं तावत्सर्वमुपपाद्यताम्। अधिकां कुरु देवि, गुरुषु भक्तिम्। द्विगुणामुपपादय देवतासु पूजाम्। ऋषिजनसपर्यासु

महाभारतकी कथामें इन्होंने सुना कि 'पुत्रहीन प्राणीको स्वर्ग नहीं प्राप्त होता। पुंनामके नरकसे जो उबारता है, वही पुत्र कहलाता है।' यह कथा सुनकर ये घर लौटीं। तभीसे दासियोंके बार-बार विनम्र प्रार्थना करनेपर भी ये न भोजन करती हैं। न आभूषण पहनती हैं और न हमारी किसी बातका जवाब ही देती हैं, अविरल अश्रुधारा बहाती हुई अपने मुखपर मेघ सरीखा अन्धकार करके बराबर रोया करती हैं। यह सुनकर आप जो उचित समझें, सो करें।' इतना कहकर मकरिका चुप हो गयी।

उसके चुप हो जानेपर महाराजने तनिक देर बाद लम्बा और गरम श्वास छोड़कर कहा--'देवि! इस दैवाधीन वस्तुपर किया ही क्या जा सकता है। बहुत रोना बेकार है। हम इस योग्य नहीं हैं कि हमपर देवता कृपा करें। वास्तवमें हमारा हृदय पुत्रके आलिंगनरूपी अमृतमय स्वादके सुखका पात्र नहीं है। पूर्व जन्ममें हमने पुण्य जैसे उज्ज्वल कर्म नहीं किये थे। पूर्व जन्ममें प्राणी जो कर्म करते हैं, इस जन्ममें उनका फल उन्हें मिलता है। अनेक उपाय करनेपर भी विधिका विधान बदला नहीं जा सकता। तथापि मनुष्यसे जो हो सके, वह सब तो करना ही चाहिए। हे देवि! अबसे तुम गुरुजनोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दर्शितादरा भव। परं हि दैवतमृषयो यत्नेनाराधिता यथासमीहितफलानां दुर्लभानामपि वराणां दातारो भवन्ति। श्रूयते हि पुरा चण्डकौशिकप्रभावान्मगधेषु बृहद्रथो नाम राजा जनार्दनस्य जेतारमतुलभुजबलमप्रतिरथं जरासन्धं नाम तनयं लेभे। दशरथश्च राजा परिणतवया विभाण्डकमहामुनिसुतस्यर्ष्यशृङ्गस्य प्रसादान्नारायणभुजानिवाप्रतिहतानुदधीनिवाक्षोभ्यानवाप चतुरः पुत्रान्। अन्ये च राजर्षयस्तपोधनानाराध्य पुत्रदर्शनामृतस्वादसुखभाजो बभूवुः। अमोघफला हि महामुनिसेवा भवन्ति। अहमपि खलु देवि, कदा समुपारूढगर्भभरालसामापांडुमुखीमासन्नपूर्णचन्द्रोदयामिव पौर्णमासीनिशां देवीं द्रक्ष्यामि। कदा मे तनयजन्ममहोत्सवानन्दनिर्भरो हरिष्यति पूर्णपात्रं परिजनः। कदा हारिद्रवसनधारिणी सुतसनाथोत्सङ्गा द्यौरिवोदितरविमंडला सबालातपा मामानन्दयिष्यति देवी। कदा सर्वौषधिपिञ्जर-

---

अधिकसे अधिक भक्ति करो। देवताओंकी द्विगुणित पूजा करो। ऋषियोंके सत्कारमें विशेष आदरभाव प्रदर्शित करो। ऋषि बड़े भारी देवता होते हैं। यदि यत्नसे उनकी आराधना की जाय तो ये अतिशय दुर्लभ भी अभीष्ट प्राप्तिका वरदान देते हैं। सुना जाता है कि मगधके राजा बृहद्रथने चण्डकौशिक ऋषिकी कृपासे जरासन्ध नामका ऐसा पुत्र पाया था, जो वीरतामें अद्वितीय था और उसकी भुजाओंमें अतुलित बल था। अपने पराक्रमसे उसने विष्णुभगवान् तकको परास्त कर दिया था। वृद्ध हो जानेपर महाराज दशरथ महामुनि विभाण्डकके पुत्र ऋष्यशृंगकी कृपासे नारायणकी भुजाके समान अजेय तथा समुद्र सदृश अक्षोभ्य चार पुत्र पानेमें सफल हुए थे। उन्हींके, समान बहुतेरे राजर्षि तपस्वियोंका आराधन करके पुत्रमुखदर्शनरूपी अमृतमय स्वादका सुख भोगनेमें समर्थ हो चुके हैं। क्योंकि महामुनियोंकी आराधना कभी भी व्यर्थ नहीं जाती। हे देवि! वह दिन कब आयेगा कि जब मैं परिपक्व गर्भके भारसे मन्द एवं म्लानमुख और जिसमें पूर्ण चन्द्र उदित होनेवाला हो, ऐसी पूर्णिमाकी रात्रिके समान तुम्हें देखूँगा। पुत्रजन्ममहोत्सवके उपलक्ष्यमें आनन्दविभोर मेरे परिजन कब मुझसे पूर्णपात्र (हठात् लिये जानेवाले नेग) ले जायँगे। नवोदित सूर्यसे युक्त तथा बालातपसे जगमगाते आकाशकी भाँति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जटिलकेशो निहितरक्षाघृतबिन्दुनि तालुनि विन्यस्तगौरसर्षपोन्मिश्र-भूतिलेशो गोरोचनाचित्रकण्ठसूत्रग्रन्थिरुत्तानशयो दशनशून्यस्थिताननः पुत्रको जनयिष्यति मे हृदयाह्लादम् । कदा गोरोचनाकपिलद्युतिरन्तः-पुरिकाकरतलपरंपरासंचार्यमाणमूर्तिरशेषजनवन्दितो मङ्गलप्रदीप इव मे शोकान्धकारमुन्मूलयिष्यति चक्षुषोः । कदा च क्षितिरेणुधूसरो मण्ड-यिष्यति मम हृदयेन दृष्टया च सह परिभ्रमम्भवनाङ्गणम् । कदा केस-रिकिशोरक इव संजातजानुचंक्रमणावस्थः संचरिष्यतीतस्ततः स्फटिक-मणिभित्त्यन्तरितान्भवनमृगशावकाञ्जिघृक्षुः । कदान्तःपुरनूपुरनिनाद-सङ्गतान्गृहकलहंसकाननुसरन्कक्षान्तरप्रधावितः कनकमेखलाघण्टिका-रयानुसारिणीमायासयिष्यति धात्रीम् । कदा कृष्णागुरुपङ्कलिखितमद-लेखालंकृतगण्डस्थलकः मुखडिण्डिमध्वनिजनितप्रीतिरूर्ध्वकरविप्रकीर्ण-

---

हल्दीसे रंगे पीले वस्त्र पहन तथा पुत्रको गोदमें लेकर आती महारानीको देख-कर मैं कब आनन्दित हूँगा। सभी औषधियाँ लगानेसे पीले तथा उलझे बालों-वाले, जिसकी तालुपर अभिमंत्रित घृतकी कतिपय बूँदें और सरसों मिली तनिक सी भस्म डाल दी गयी हो, जिसके गलेमें पड़े कण्ठसूत्र (गंडे) की गाँठें गोरो-चनसे रँगी हुई हों, जो उतान (चित्त) लेटा हो और अपने दन्तविहीन मुखसे मन्द-मन्द मुसका रहा हो, ऐसा पुत्र कब मेरे हृदयमें आनन्दका उल्लास उत्पन्न करेगा। गोरोचन सदृश पीतवर्णकी दीप्तिसे सम्पन्न रनिवासकी महि-लाओंके एक हाथसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे हाथमें बार-बार घूमता तथा सब लोगोंसे वन्दित एवं मंगलदीप सदृश सुन्दर पुत्र कब मेरी आँखोंका अन्धकार दूर करेगा। कब वह धूलसे धूसरित होकर उधर-उधर घूमता और मेरे हृदय तथा नेत्रोंको तृप्त करता हुआ घरके आँगनको सुशोभित करेगा। कब वह घुटनोंके बल चलने लायक होकर स्फटिकमणिकी दीवारोंसे बाहर दीखनेवाले मृगशावकोंको पकड़नेके लिए सिंहके बच्चेकी भाँति दौड़ता फिरेगा ? कब मेरा पुत्र रनिवासकी स्त्रियोंके पायलोंकी झनकारका अनुसरण करते हुए पालतू कलहंसोंके पीछे एक प्रकोष्ठसे दूसरेमें दौड़कर सोनेकी करधनीमें लगे घुंघुरुओंके शब्दके पीछे दौड़ती हुई अपनी धात्रीको कष्ट देगा ? कालागुरुकी रेखाओंसे चित्रित कपोलों युक्त, धात्रीके कोमल मुखसे निकली डमरूकी-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्दनचूर्णधूलिधूसरः कुञ्चितांगुलिशिखराङ्कुशाकर्षणविधूतशिराः करिष्यति मत्तगजराजलीलाक्रीडाः। कदा मातुश्चरणयुगलरागोपयुक्तशेषेण पिण्डालक्तकरसेन वृद्धकञ्चुकिनां विडम्बयिष्यति मुखानि। कदा कुतूहलचञ्चललोचनो मणिकुट्टिमेष्वधोदत्तदृष्टिरनुसरिष्यति स्खलद्गतिरात्मनः प्रतिबिम्बानि। कदा नरेन्द्रसहस्रप्रसारितभुजयुगलाभिनन्द्यमानागमनो भूषणमणिमयूखाकुलीक्रियमाणलोलदृष्टिरास्थानस्थितस्य मे पुरः सर्पिष्यति सभान्तरेषु। इत्येतानि मनोरथशतानि चिन्तयतोऽन्तःसंतप्यमानस्य प्रयान्ति रजन्यः। मामपि दहत्येवायमहर्निशमनल इवानपत्यतासमुद्भवः शोकः। शून्यमिव मे प्रतिभाति जगत्। अफलमिव पश्यामि राज्यम्। अप्रतिविधेये तु विधातरि किं करोमि। तन्मुच्यतामयं देवि, शोकानुबन्धः। आधीयतां धैर्ये धर्मे च धीः। धर्मपरायणानां हि समीपसंचारिण्यः कल्याणसंपदो भवन्ति' इत्येवमभिधाय सलिल-

---

सी ध्वनिपर लुभाता, ऊपर उठे हाथमें चन्दनकी धूल लगनेके कारण धूसरित एवं धात्री द्वारा उँगली पकड़कर आगे-पीछे चलनेका अभ्यास करता हुआ माथा हिला-हिलाकर कब वह अपने अनोखे खेल दिखायेगा। माताके चरण रंगनेसे बचे हुए महावरको उठाकर कब वह कंचुकियोंके मुखपर पोतता फिरेगा? चंचल नयनोंवाला मेरा पुत्र अन्तःपुरकी मणिमयी भूमिको देखकर ठोकरें खाता और गिरता-पड़ता हुआ कुतूहलसे अपनी परछाईंकी ओर कब दौड़ेगा? हजारों राजे दोनों हाथ बढ़ा-बढ़ाकर जिसके आगमनका अभिनन्दन कर रहे होंगे और उनके आभूषणोंमें जड़ी मणियोंकी प्रभासे जिसकी आँखें चंचल हो गयी होंगी, ऐसा मेरा पुत्र कब सभाभवनमें मेरे समक्ष इधर-उधर घूमता दिखायी देगा? ऐसी-ऐसी सैकड़ों अभिलाषाओंके चिन्तनसे मन ही मन खिन्न होकर मैं बड़ी कठिनाईसे रातें गुजारता हूँ। मुझे भी यह निपूतेपनका सन्ताप आगकी तरह रात-दिन जलाता रहता है। मुझे सारा संसार सूना-सूना दिखायी देता है और राज्यतक निष्फल प्रतीत होता है। किन्तु अप्रतीकार्य विधाताके विधानपर मैं कर ही क्या सकता हूँ। अतएव देवि! शोक त्याग दो। धैर्य और धर्ममें अपनी बुद्धि लगाओ। क्योंकि धर्मपरायण लोगोंके पास सदा कल्याणमयी सम्पदा रहती है।" ऐसा कह और जल लेकर राजा तारापीडने अपने कमल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मादाय स्वयं करतलेनाभिनवपल्लवेनेव विकचकमलोपमानमाननमस्याः साश्रुलेखं ममार्ज । पुनःपुनश्च प्रियशतमधुराभिः शोकापनोदनिपुणाभिर्धर्मोपदेशगर्भाभिर्वाग्भिराश्वास्य सुचिरं स्थित्वा नरेन्द्रो निर्जगाम ।

निर्गते च तस्मिन्मन्दीभूतशोका विलासवती यथाक्रियमाणाभरणपरिग्रहादिकमुचितं दिवसव्यापारमन्वतिष्ठत् । ततःप्रभृति सुतरां देवताराधनेषु ब्राह्मणपूजासु गुरुजनसपर्यासु चादरवती बभूव । यच्च किंचित्कुतश्चिच्छुश्राव गर्भतृष्णया तत्तत्सर्वं चकार । न महान्तमपि क्लेशमजीगणत् । अनवरतदह्यमानगुग्गुलबहुलधूमान्धकारितेषु चण्डिकागृहेषु धवलाम्बरेण शुचिमूर्तिरुपोषिता हरितकुशोपच्छदेषु मुसलशयनेषु सुष्वाप । पुण्यसलिलपूर्णैर्विविधकुसुमफलोपेतैः क्षीरतरुपल्लवलाञ्छनैः सर्वरत्नगर्भैः शातकुम्भकुम्भैर्गोकुलेषु वृद्धगोपवनिताकृतमङ्गलानां लक्षणसंपन्नानां गवामधः सस्नौ । प्रतिदिवसमुत्थायोत्थाय सर्वरत्नोपेतानि हैमानि तिलपात्राणि ब्राह्मणेभ्यो ददौ । महानरेन्द्रलिखितमण्डल-

---

सरीखे हाथोंसे खिले हुए कमल सदृश एवं आँसुओंसे भरा हुआ रानी विलासवतीका मुँह धोया। इसके बाद सैकड़ों मधुर, शोक दूर करनेमें समर्थ एवं उपदेशभरी बातोंसे रानीको आश्वस्त करता हुआ वह राजा बड़ी देरतक उसके पास रहकर वहाँसे बाहर निकला ।

राजाके चले जानेपर शोक कम हो जानेके कारण रानी विलासवती यथोचित आभूषण आदि पहनकर दैनिक कार्योंमें लग गयी। अबसे वह देवाराधन, विप्रपूजा और गुरुजनोंकी सपर्यामें आदर प्रदर्शित करने लगी । उसने जो भी और जहाँ भी जो व्रत सुना, पुत्रप्राप्तिके निमित्त उसने वह सब किया । ऐसा करनेमें होनेवाले बड़े-बड़े कष्टोंको भी उसने कुछ नहीं समझा। निरन्तर जलते हुए गूगुलके धुएँसे जहाँ नित्य अँधेरा छाया रहता था, ऐसे दुर्गाजीके मन्दिरमें वह सफेद कपड़े पहन और शरीरसे सर्वथा शुद्ध होकर निराहार रहती हुई कुशा बिछी मूसलोंकी सेजपर सोती थी। पवित्र जलसे पूर्ण, विविध फूलफलसंयुत, बरगदके पत्तोंसे ढँके और सभी रत्नोंसे युक्त स्वर्णकलशों द्वारा बड़ी-बूढ़ी गोपियोंके हाथों किये गये कुंकुमादिके चिह्नसे युक्त सुलक्षणी गौओंके नीचे बैठकर स्नान करती थी। प्रतिदिन सबेरे उठती और स्वर्णपात्रमें तिल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मध्यवर्तिनी विविधबलिदानानन्दितदिग्देवतानि बहुलचतुर्दशीनिशासु चतुष्पथे स्नपनमङ्गलानि सिद्धायतनानि भेजे। कृतविचित्रदेवतोपयाचितकानि सिषेवे। दर्शितप्रत्ययानि संनिधानमातृकाभवनानि जगाम। प्रसिद्धेषु नागकुलह्रदेषु ममज्ज। अश्वत्थप्रभृतीनुपपादितपूजान्महावनस्पतीन्कृतप्रदक्षिणा ववन्दे। दोलायमानवलयेन पाणियुगलेन स्नाता स्वयमखण्डसिक्थसंपादितं रजतपात्रपरिगृहीतं वायसेभ्यो दध्योदनवलिमदात्। अपरिमितकुसुमधूपविलेपापूपपललपायसबलिलाजकलितामहरहरम्बादेवीसपर्यामाततान। स्वयमुपहृतपिण्डपात्रान्भक्तिप्रवणेन मनसा सिद्धादेशान्नग्नक्षपणकान्पप्रच्छ। विप्रश्निकादेशवचनानि बहु मेने। निमित्तज्ञानुपचचार। शकुनज्ञानविदामादरमदर्शयत। अनेकवृद्धपरंपरागमागतानि रहस्यान्यङ्गीचकार। दर्शनागतद्विजजनमात्मजदर्शनोत्सुका वेदश्रुतीरकारयत्। अनवरतवाच्यमानाः पुण्यकथाः शुश्राव।

तथा सब रत्न डालकर ब्राह्मणोंको दान देती थी। कृष्णपक्षकी चतुर्दशी तिथिकी रात्रिमें चौराहेपर जाती और वहाँ बड़े-बड़े ओझाओं द्वारा निर्मित उन घेरोंके मध्यमें बैठकर विविध भाँतिके बलिदानोंसे दिक्पालोंको प्रसन्न करके मंगल-स्नान करती थी। जहाँ कार्य सिद्ध हो जानेपर देवताओंको विभिन्न वस्तुयें अर्पित की जाती थीं और अपने भक्तोंकी कामना पूर्ण करके जिन देवियोंने लोगोंके मनमें विश्वास जमा दिया था, ऐसे पास-पड़ोसके देवीमन्दिरोंमें जाया करती थी। प्रसिद्ध नागकुलके सरोवरोंमें जाकर स्नान करती थी। पीपल आदि वृक्षोंकी पूजा-प्रदक्षिणा और वन्दना करती थी। नित्य सबेरे स्नान करके हिलते हुए मणिजटित कंकणोंयुक्त दोनों हाथोंसे चाँदीके पात्रमें बिना टूटे चावलोंकी बनी दही-भातकी बलि कौओंको खिलाती थी। प्रचुरमात्रामें पुष्प, धूप, चन्दन, पुए, मांस, खीर और धानका लावा अर्पित करके अम्बा देवीका पूजन करती थी। सत्यवचन बौद्ध भिक्षुकोंको भोजनसे भरा पात्र अर्पण करके श्रद्धाके साथ उनसे प्रश्न करती थी। ज्योतिषियोंकी बातपर बहुत आस्था रखती थी। शकुनज्ञोंका आदर करती थी। अनेकानेक वृद्धोंके परम्परागत एवं सदासे प्रचलित मंत्रशास्त्रके रहस्योंको मानती थी। पुत्रका मुख दर्शन करनेके लिए उत्सुक विलासवती अपना दर्शन करनेके लिए आनेवाले विप्रों द्वारा वेदपाठ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गोरोचनालिखितभूर्जपत्रगर्भान्मन्त्रकरण्डकानुवाह। रक्षाप्रतिसरोपेतान्योषधीसूत्राणि बबन्ध।परिजनोऽपि चास्याः सततमुपश्रुत्यै निर्जगाम। तन्निमित्तानि च जग्राह। शिवाभ्यो मांसबलिपिण्डमनुदिनं निश्युत्ससर्ज। स्वप्नदर्शनाश्चर्याण्याचार्याणामाचचक्षे। चत्वरेषु शिवबलिमुपजहार।

एवं च गच्छति काले कदाचिद्राजा क्षीणभूयिष्ठायां रजन्यामल्पावशेषपाण्डुतारके जरत्पारावतपक्षधूम्रे नभसि स्वप्ने सितप्रासादशिखरस्थिताया विलासवत्याः करिण्या इव बिसवलयमानने सकलकलापूर्णमण्डलं शशिनं प्रविशन्तमद्राक्षीत्। प्रबुद्धश्चोत्थाय हर्षविकासस्फीततरेण चक्षुषा धवलीकृतवासभवनस्तस्मिन्नेव क्षणे शुकनासं समाहूय स्वप्नमकथयत्। स तं समपजातहर्षः प्रत्युवाच—'देव, संपन्नाः सुचिरादस्माकं प्रजानां च मनोरथाः। कतिपयैरेवाहोभिरसंदेहमनुभवति

कराती थी। सर्वदा जो पौराणिक कथायें बाँची जाती थीं, उन कथाओंको सुनती थी। भोजपत्रपर गोरोचनसे लिखित मंत्रोंका ताबीज बाँधती थी। विलासवतीके परिजन भी देवताओंका अभिप्राय जाननेके लिए नगरसे बाहर जाकर शकुन खोजा करते थे। प्रतिदिन रात्रिके समय सियारिनोंको मांसबलि खिलाते थे। यदि कोई विस्मयजनक स्वप्न देखते तो आचार्योंको बताते थे। वे चौराहोंपर सियारोंको बलि अर्पण करते थे।

इस प्रकार कुछ समय बीतनेके बाद एक दिन जब कि रात लगभग बीतनेको थी। कहीं-कहीं मन्द-मन्द प्रकाश करते हुए नक्षत्र चमक रहे थे। गगनमण्डल वृद्ध कबूतरके पंखसदृश धूम्रवर्ण हो गया था। उसी समय राजा तारापीडने स्वप्नमें देखा कि हथिनीके मुखमें मृणालकी भाँति सभी कलाओंसे परिपूर्ण चन्द्रमा महलके छतपर सोयी हुई विलासवतीके मुखमें प्रविष्ट हो गया है। यह स्वप्न देखकर वह तुरन्त जाग गया। उसके नेत्र हर्षसे विकसित होकर समस्त शयनागारको धवलवर्ण करने लगे। तत्काल उसने आदरके साथ अपने मंत्री शुकनासको बुलवाकर उसे स्वप्नका सारा हाल कह सुनाया। सो सुना तो अतिशय प्रसन्न होकर मंत्रीने कहा—'महाराज! बहुत समय बाद आज हमारा और आपका मनोरथ सफल हुआ। अब आप कुछ दिनोंमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वामी सुतमुखकमलावलोकनसुखम्। अद्य खलु मयापि निशि स्वप्ने धौतसकलवाससा शान्तमूर्तिना दिव्याकृतिना द्विजेन विकचचन्द्रकलावदातदलशतमालोलकेसरसहस्रजटालमकरन्दबिन्दुसीकरवर्षि पुण्डरीकमुत्सङ्गे देव्या मनोरमाया निहितं दृष्टम्। आवेदयन्ति हि प्रत्यासन्नमानन्दमग्रेपातीनि शुभानि निमित्तानि। किं चान्यदानन्दकारणमतो भविष्यति। अवितथफला हि प्रायो निशावसानसमयदृष्टा भवन्ति स्वप्नाः। सर्वथा नचिरेण मान्धातारमिव धौरेयं सर्वराजर्षीणां भुवनानन्दहेतुमात्मजं जनयिष्यति देवी। शरत्कालकमलिनीवाभिनवकमलोद्गमेन गन्धगजमाह्लादयिष्यति देवम्। येनेयं दिग्गजमदलेखेवाविच्छिन्नसंताना क्षितिभारधारणोचिता भविष्यति कुलसंततिः स्वामिनः' इत्येवमभिदधानमेव तं करेण गृहीत्वा नरेन्द्रः प्रविश्याभ्यन्तरमुभाभ्यामपि ताभ्यां स्वप्नाभ्यां विलासवतीमानन्दयांचकार।

ही पुत्रका मुख देखेंगे और आनन्दका अनुभव करेंगे। इसमें तनिक भी संशय नहीं है। आज ही रातको मैंने भी स्वप्नमें देखा है कि एक शान्तमूर्ति ब्राह्मणने महारानी विलासवतीकी गोदमें विकसित कमलपुष्प रक्खा है। उस विप्रका आकार दिव्य था और धुले हुए स्वच्छ वस्त्र धारण किये हुए था। उस कमलमें चन्द्रमाकी कलासदृश शुभ्र सौ पंखुड़ियाँ थीं। उस पुष्पसे रसकी बूँदें टपक रही थीं और उसमें हजारों केसर हिल रहे थे। स्वप्नमें दिखायी देनेवाले ये लक्षण भविष्यमें आनेवाले आनन्दकी सूचना दे रहे हैं। इससे बढ़कर आनन्दका विषय और क्या हो सकता है। रात्रिके अन्तमें दीखनेवाले स्वप्न प्रायः सत्य ही होते हैं। अतएव बहुत शीघ्र महारानी विलासवती मान्धाताके सदृश सब राजाओंमें अग्रणी तथा लोकानन्ददायी पुत्रको जन्म देंगी। जैसे शरत्कालकी कमलिनी कमलके जन्मसे मदवाही गजराजको आनन्दित करती है, वैसे ही रानी विलासवती राजकुमारको जन्म देकर आपको आनन्दित करेंगी। दिग्गजकी मदजलरेखा जिस प्रकार प्रवाहित होती है। उसी प्रकार उस कुमारकी सन्तति भी पृथिवीका भार वहन करनेमें समर्थ होगी और उससे आपका वंश चलेगा।' ऐसा कहते हुए शुकनासका हाथ थाम्हकर राजा रनिवासमें गया और दोनों स्वप्नोंका हाल बताकर रानी विलासवतीको सुखी किया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कतिपयदिवसापगमे च देवताप्रसादात्सरसीमिव प्रतिमाशशी विवेश गर्भो विलासवतीम् । येन नन्दनराजिरिव पारिजातेन मधुसूदन-वक्षःस्थलीव कौस्तुभमणिना सुतरामराजत सा । दर्पणश्रीरिव गर्भच्छलेन संक्रान्तमवनिपालप्रतिबिम्बमुवाह । सा शनैः शनैश्च प्रतिदिनमुपचीयमानगर्भा निर्भरपरिपीतसागरसलिलभरमन्थरेव मेघमाला मन्दं मन्दं सञ्चचार । मुहुरनुबद्धजृम्भिकमाजिह्मितलोचना सालसं निशश्वास । तथावस्थां तामहरहः स्वयमनेकरसवाञ्छितपानभोजना प्रावृषमिव श्यामायमानपयोधरमुखीं केतकीमिव गर्भच्छविपाण्डुरामालोक्येङ्गितकुशलः परिजनो विज्ञातवान् ।

अथ तस्याः सर्वसेवकवर्गप्रधानभूता, सदा राजकुलसंवासचतुरा, सदा च राजसंनिकर्षप्रगल्भा, सर्वमङ्गलकुशला कुलवर्धना नाम महत्तरिका प्रशस्ते दिवसे प्रदोषवेलायामभ्यन्तरास्थानमण्डपगतम्, गन्ध-

---

कुछ ही दिनों बाद देवताओंकी कृपासे रानी विलासवतीमें गर्भ उसी प्रकार प्रविष्ट हुआ, जैसे चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब सरोवरमें प्रविष्ट होता है । जैसे पारिजातसे नन्दनवन और कौस्तुभमणिसे नारायणका वक्षःस्थल शोभित होता है । उसी प्रकार उस गर्भसे वह रानी सुशोभित हुई । क्योंकि उस रानीने दर्पणश्रीके सदृश गर्भके आकारमें राजा तारापीडका बिम्ब धारण कर रक्खा था । अतः जैसे-जैसे गर्भ बढ़ने लगा, वैसे-वैसे ही समुद्रका प्रचुर जल भर लेनेपर मन्दगतिसे चलनेवाली मेघमालाके समान वह बहुत धीरे-धीरे चलती हुई बार-बार जँभाइयाँ लेने और आँखें मीच-मीचकर मन्द-मन्द श्वास लेने लगी । वर्षाकालीन मेघके समान उसके स्तनोंका अग्रभाग काला पड़ गया । गर्भके कारण रानीका रंग केवड़ेकी पत्तीके सदृश पीला हो गया और उसे विविध प्रकारके रसोंवाले भोज्य-पानकी इच्छा होने लगी । हाव-भाव जाननेमें कुशल परिजन उसकी उस अवस्थाको जान गये ।

अन्तःपुरकी सब दासियोंमें श्रेष्ठ कुलवर्धना नामकी एक अतिवृद्धा दासी थी । सदा राजकुलमें रहनेके कारण वह बड़ी चतुर थी । निरन्तर राजाके सम्पर्कमें रहनेसे वह ढीठ हो गयी थी । सभी माङ्गलिक कार्योंका उसे भलीभाँति ज्ञान था । एक शुभ दिनको जब रात्रिके समय राजा तारापीड सभामंडपमें बैठा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तैलावसेकज्वलितदीपिकासहस्रपरिवारम्, उडुनिकरमध्यवर्तिनमिव पौर्णमासीशशिनम्, उरगराजफणामणिसहस्रान्तरालस्थितमिव नारायणम्, मूर्धावसिक्तैः प्रधाननरेन्द्रैः परिमितैः परिवृतम्, अनतिदूरावस्थितपरिजनम्, अनन्तरमुत्तुङ्गवेत्रासनोपविष्टेन धौतधवलाम्बरपरिधानेनानुल्बणवेषेण जलनिधिनेवागाधगाम्भीर्येण समुपारूढविश्रम्भनिर्भरास्तास्ताः कथाः शुकनासेन कुर्वाणं भूमिपालमुपसृत्य रहः कर्णमूले विदितं विलासवतीगर्भवृत्तान्तमकार्षीत्।

तेन तु तस्या वचनेनाश्रुतपूर्वेणासंभाव्येनामृतरसेनेव सिक्तसर्वाङ्गस्य सद्यःप्ररूढरोमाञ्चनिकरकण्टकिततरोरानन्दरसेन विह्वलीक्रियमाणस्य स्मितविकसितकपोलस्थलस्य परिपूरितहृदयातिरिक्तहर्षमिव दशनांशुवितानच्छलेन विकिरतो राज्ञः शुकनासमुखे लोलतारकमानन्दजलबिन्दुक्लिन्नपक्ष्ममालं तत्क्षणं पपात चक्षुः। अनालोकितपूर्वं तु हर्षप्रकर्षमभिसमीक्ष्य भूपतेः कुलवर्धनां च स्मितविकसितमुखीमागतां दृष्ट्वा तस्य

हुआ था। उस समय शेषनागके फनकी हजार मणियोंके मध्यमें बैठे हुए विष्णुभगवान्‌के समान उसकी शोभा हो रही थी। गिने-चुने प्रधान-प्रधान राजे उसे चारों ओरसे घेरकर बैठे हुए थे। उसके सेवक कुछ दूर खड़े थे। राजाके समीप एक ऊँचे वेत्रासनपर बिल्कुल सादे वेषमें धुले वस्त्र पहने समुद्रसदृश गाम्भीर्यगुणसम्पन्न मंत्री शुकनास बैठा हुआ था। पूर्ण विश्वस्त भावसे राजा उसके साथ वार्तालाप कर रहा था। उसी समय कुलवर्धनाने राजाके समीप जाकर कानमें बहुत धीरेसे रानीके गर्भ धारण करनेका शुभ समाचार कहा।

उस अश्रुतपूर्व तथा असम्भव समाचारको सुनते ही महाराजके सभी अङ्ग जैसे अमृतरससे सिंच गये। सहसा उसके सारे शरीरमें रोमाञ्च हो गया और आनन्दातिरेकसे वह गद्गद हो उठा। मन्द मुसकानसे उसके कपोल खिल गये। हृदयमें भरपूर भर जानेपर बाकी बचा आनन्द जैसे दन्तद्युतिके ब्याजसे बाहर निकल आया। नेत्रोंकी पुतलियाँ नाच उठीं और आनन्दाश्रुओंसे आँखोंकी पलकें भींग गयीं। तभी एकाएक उसकी दृष्टि मंत्री शुकनासके मुखपर पड़ी। राजा तारापीडका ऐसा अद्भुत हर्ष तथा मुसकाती हुई दासी कुलवर्धनाको उपस्थित देख और वही बात सदा मनमें रहनेके कारण उस वृत्तान्तसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चार्थस्य सततं मनसि विपरिवर्तमानत्वादविदितवृत्तान्तोऽपि तत्कालोचितमपरमतिमहतो हर्षस्य कारणमपश्यञ्छुकनासः स्वयमुत्प्रेक्ष्य समुत्सर्पितासनः समीपतरमुपसृत्य नातिप्रकटमाबभाषे—'देव, अस्ति किंचित्तस्मिन्स्वप्नदर्शने सत्यम्? अत्यंतमुत्फुल्ललोचना हि कुलवर्धना दृश्यते। देवस्यापीदं प्रियवचनश्रवणकुतूहलादिव श्रवणमूलमुपसर्पदुपरचयदिव नीलकुवलयकर्णपूरशोभामानंदजलपरिप्लुतं तरलतारकं विकसदावेदयति महत्प्रकर्षकारणमीक्षणयुगलम्। उपारूढमहोत्सवश्रवणकुतूहलमुत्सुकोत्सुकं क्राम्यति मे मनः। तदावेदयतु देवः किमिदम्?' इत्युक्तवति तस्मिन् राजा विहस्याब्रवीत्—'यदि सत्यमनया यथा कथितं तथा सर्वमवितथं स्वप्नदर्शनम्। अहं तु श्रद्दधे। कुतोऽस्माकमियती भाग्यसंपत्। अभाजनं हि वयमीदृशानां प्रियवचनश्रवणानाम्। अवितथवादिनीमप्यहं कुलवर्धनामेवंविधानां कल्याणानामसंभावितमात्मानं मन्यमानो विपरीतामिवाद्य पश्यामि। तदुत्तिष्ठ। स्वयमेव गत्वा किमत्र

अनभिज्ञ होते हुए भी उस समय इतने बड़े हर्षका कोई कारण न देखकर शुकनासने सब समझ लिया। उसने तुरन्त अपनी कुर्सी राजाकी ओर खींचकर धीरेसे पूछा—'राजन्! क्या वह स्वप्नकी बात सच हो गयी? क्योंकि कुलवर्धनाकी आँखें हर्षसे हँस रही हैं। आपके भी दोनों नेत्र जैसे कोई प्रिय समाचार सुननेके कौतूहलवश कानोंके समीप खिसक गये हैं। वहाँ पहुँचकर वे दोनों इस समय नीलकमलके कर्णपूरकी शोभा दे रहे हैं। आनन्दके आँसुओंसे भरे, चञ्चल पुतलियों युक्त एवं प्रफुल्लित ये दोनों नेत्र किसी बहुत बड़े हर्षकी सूचना दे रहे हैं। अपने समक्ष उपस्थित इस महोत्सवको सुननेके कुतूहलवश अत्यधिक उत्सुक मेरा मन अधीर हो रहा है। अतएव बताइए कि क्या बात है?' मंत्री शुकनासके ऐसा पूछनेपर राजाने हँसकर कहा—'यदि कुलवर्धनाने सच्ची बात बतायी है तो स्वप्न सत्य हो गया। किन्तु मुझे अब भी विश्वास नहीं होता। मेरा ऐसा भाग्य कैसे हो सकता है? ऐसे प्रिय समाचार सुननेके पात्र हम नहीं हैं। यह दासी सत्यवादिनी हो तो भी अपनेको ऐसे असंभव मङ्गलोंका अधिकारी न समझकर आज मैं इसे असत्यभाषिणी मान रहा हूँ। अतएव उठिए, स्वयं महारानीसे पूछकर निश्चय कर लिया जाय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्यमिति देवीं पृष्ट्वा ज्ञास्यामि' इत्यभिधाय विसृज्य शकलनरेन्द्रलोक-मुन्मुच्य स्वाङ्गेभ्यो भूषणानि कुलवर्धनायै दत्त्वा तया च दत्तप्रसादा-नंतरमवनितलाश्लिष्टललाटरेखया शिरःप्रणामेनाभ्यर्चितः सह शुक-नासेनोत्थाय हर्षविशेषनिर्भरेण त्वर्यमाणो मनसा पवनचलितनीलकुव-लयदललीलाविडम्बकेन दक्षिणेनाक्ष्णा परिस्फुरताभिनंद्यमानस्तत्काल-सेवासमुचितेन विरलविरलेन परिजनेनानुगम्यमानः पुरःसंसर्पिणीना-मनिललोलस्थूलशिखानां प्रदीपिकानामालोकेन समुत्सार्यमाणकक्षान्तर-तिमिरसंहतिरंतःपुरमयासीत् ।

तत्र च सुकृतरक्षासंविधाने, नवसुधानुलेपनधवलिते, प्रज्वलितमङ्ग-लप्रदीपे, पूर्णकलशाधिष्ठितपक्षके, प्रत्यग्रलिखितमङ्गल्यालेख्योज्ज्वलित-भित्तिभागमनोहारिणि, उपरचितसितविताने वितानपर्यन्तावबद्धमुक्ता-

---

कि यह बात कहाँतक सच है।' ऐसा कहकर उसने सब राजाओंको विदा करके अपने सब आभूषण उतारकर कुलवर्धनाको इनाममें दे दिया। इस प्रकार इनाम पाकर कुलवर्धनाने पृथिवीपर माथा टेक तथा मस्तक झुकाकर प्रणाम किया। तदनन्तर राजा तारापीड शुकनासके साथ शीघ्र उठ खड़ा हुआ। हर्षातिरेकसे उसका दिल भर आया। उसी समय पवनसे हिलते नीलकमलकी पंखुड़ियोंका तिरस्कार करता हुआ दाहिना नेत्र फड़ककर राजाका अभिनन्दन करने लगा। इस प्रकार वह तत्कालीन सेवाके योग्य एवं पीछे-पीछे चलनेवाले सेवकोंके साथ अन्तःपुरमें जा पहुँचा। उस समय बायुसे हिलती शिखाओं एवं प्रखर ज्योतिवाले प्रदीप उसके आगे-आगे चल रहे थे। उनके प्रकाशसे कक्षके बहुतेरे भागका अन्धकार दूर होता जा रहा था।

उस अन्तःपुरमें उसने हिमवान्‌के शिलातलसदृश विशाल एवं गर्भवती नारीके लिए सुविधाजनक एक पलङ्गपर सोती हुई महारानीको देखा। उस समय उसने बहुत उज्ज्वल दो नवीन वस्त्र पहन रक्खे थे। जिनके दोनों पल्ले गोरोचनसे चित्रित किये हुए थे। शयनागारमें रक्षाका उत्तम प्रबन्ध किया गया था। नये चूनेसे पुतायी की गयी थी। मंगलदीप जल रहे थे। द्वारके दोनों ओर पूर्ण कलश रक्खे हुए थे। उसकी दीवारोंपर अभी-अभी मांगलिक एवं मनोहारी चित्र चित्रित किये गये थे। उसमें उज्ज्वल चँदवा टाँगकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुणे, मणिप्रदीपप्रहततिमिरे वासभवने भूतिलिखितपत्रलताकृतरक्षापरिक्षेपम्, शयनशिरोभागविन्यस्तधवलनिद्रामङ्गलकलशम्, आबद्धविविधौषधिमूलयन्त्रपवित्रम्, अवस्थापितरक्षाशक्तिवलयम्, इतस्ततो विप्रकीर्णगौरसर्षपम्, अवलम्बितबालयोक्त्रग्रथितलोलपिप्पलपत्रम्, आसक्तहरितारिष्टपल्लवम्, उत्तुङ्गपादपीठप्रतिष्ठितम्, इन्दुदीधितिधवलप्रच्छदपटम्, अचलराजशिलातलविशालम्, गर्भोचितं शयनतलमधिशयानां कनकपात्रपरिगृहीतैरविच्छिन्नविरलावस्थितदधिलवैर्जलतरंगतरलश्वेतशालिसिक्थनिकरैरग्रथितकुसुमसनाथैः पूर्णभाजनैरखण्डिताननमत्स्यपटलैश्च प्रत्यग्रपिशितपिण्डमिश्रैरविच्छिन्नसलिलधारानुगम्यमानमार्गैः पटलकप्रज्वलितैश्च शीतलप्रदीपैर्गोरोचनामिश्रगौरसर्षपैश्च सलिलाञ्जलिभिश्चाचारकुशलेनान्तःपुरजरतीजनेन क्रियमाणावतरणक-

---

उसके किनारे-किनारे मोतियोंकी बनी झालरें लटका दी गयी थीं। मणिमय दीपकोंके प्रकाशसे वहाँका अन्धकार दूर भाग गया था। गर्भरक्षाके निमित्त राखसे फूलों-पत्तियोंको चित्रित करके आड़ बना दी गयी थी। पलंगके सिरहानेकी ओर भली-भाँति नींद लानेके लिये श्वेत मंगलकलश रक्खे गये थे। विविध औषधियोंकी जड़ें और गोरोचनसे लिखित चक्रव्यूह आदि पवित्र यंत्र पलंगपर बँधे हुए थे। कात्यायनी प्रभृति शक्तियोंसे रक्षा करनेके लिए उसमें मोरपंख खोंस दिये गये थे। चारों ओर सफेद सरसों छींट दी गयी थी। केशोंकी गाँठें देकर चंचल पीपलके पत्ते बाँध दिये गये थे। नीमकी हरी-हरी पत्तियाँ बँधी थीं। पैर रखनेके लिए पलंगकी बगलमें एक ऊँची चौकी रक्खी हुई थी। चन्द्रमाकी किरणों जैसी सफेद चादर उसपर बिछी थी। कुलाचारसे अभिज्ञ वृद्धाओंने स्वर्णपात्रोंमें सफेद तथा पके चावलोंके दाने और उनपर थोड़े-थोड़े जमे दहीके टुकड़े रख दिये थे। अतएव उन पात्रोंसे जलकी तरंगों जैसा भाप उठ रहा था और उनपर बिना गुथे अंजली-अंजली भर फूल रक्खे हुए थे। जिन्हें ले जाते समय धारा नहीं टूटती थी इस प्रकारके पात्रोंसे, ताजे मांससे मिश्रित अखंडित मुखवाली मछलियोंसे, लाल कपड़ेके घेरेमें प्रज्वलित कपूरके दीपकोंसे, गोरोचनमिश्रित श्वेत सर्षपसे और जलांजलियोंसे आचार-निपुण वृद्धायें उतारेका मांगलिक कृत्य सम्पन्न करती थीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मङ्गलाम्, धवलाम्बरविविक्तवेषेण प्रमुदितेन प्रस्तुतमङ्गलप्रायालापेन परिजनेनोपास्यमानाम्, उपारूढगर्भतयान्तर्गतकुलशैलामिव क्षितिम्, सलिलनिमग्नैरावतामिव मन्दाकिनीम्, गुहागतसिंहामिव गिरिराजमेखलाम्, जलधरपटलान्तरितदिनकरामिव दिवसश्रियम्, उदयगिरितिरोहितशशिमण्डलामिव विभावरीम्, अभ्यर्णब्रह्मकमलविनिर्गमामिव नारायणनाभिम्, आसन्नागत्स्योदयामिव दक्षिणाशाम्, फेनावृतामृतकलशामिव क्षीरोदवेलाम्, गोरोचनाचित्रितदशमनुपहतमतिधवलं दुकूलयुगलं वसानां विलासवतीं ददर्श।

ससंभ्रमपरिजनप्रसारितकरतलालम्बनावष्टम्भेन वामजानुविन्यस्तहस्तपल्लवां प्रचलितभूषणमणिरवमुखरमुत्तिष्ठन्तीं विलासवतीम् 'अलमलमत्यादरेण। देवि, नोत्थातव्यम्' इत्यभिधाय सह तया तस्मिन्नेव शयनीये पार्थिवः समुपाविशत्। प्रमृष्टचामीकरचारुपादे धवलोपच्छदे

श्वेत वस्त्र और पवित्र वेषधारी एवं सुभाषितनिपुण परिजन सानन्द उसकी सेवा कर रहे थे। गर्भके विकसित हो जानेसे रानी विलासवती ऐसी सुन्दर लग रही थी, जैसे कुलपर्वतोंको गर्भमें समेटकर पृथिवी विराजमान हो। अथवा अपने जलमें ऐरावतको छिपाये मन्दाकिनी हो। या कि अपनी गुफामें सिंहको छिपाये हिमालयकी मेखला हो। अथवा मेघसे ढके सूर्यवाली साक्षात् दिवसश्री विद्यमान हो। अथवा उदयाचलसे आवृत चन्द्रमायुक्त रात्रि हो। अथवा वह विलासवती मानो ब्रह्मकमलके उत्पत्तिसमयवाली विष्णुभगवान्की नाभि हो। अथवा अगत्स्योदयके समयकी दक्षिण दिशा हो। अथवा फेनसे ढँके अमृतकलशवाली क्षीरसागरकी वेला हो।

महाराज तारापीडको अपने समक्ष उपस्थित देखकर रानीने हाथ बढ़ाया। तुरन्त दासियोंने भी बाहु फैलाकर सहारा दिया। उसके सहारे बायें घुटनेपर हाथ रखकर हिलते हुए आभूषणोंकी मणियोंके झनकारके साथ उठती हुई विलासवतीसे—"बस-बस, बहुत सम्मान हो गया। देवि! मत उठो।" ऐसा कहकर राजा उसी पलंगपर बैठ गया। उसके पास ही एक दूसरा पलंग भी बिछा हुआ था। उसके पाये स्वच्छ सुवर्णके बने हुए थे और उसपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चासन्ने शयनान्तरे शुकनासोऽपि न्यषीदत्। अथ तामुपारूढगर्भामालोक्य हर्षभरमन्थरेण मनसा प्रस्तुतपरिहासो राजा 'देवि, शुकनासः पृच्छति यदाह कुलवर्धना किमपि तत्किं तथैव' इत्युवाच। अथाव्यक्तस्मितच्छुरितकपोलाधरलोचना लज्जया दशनांशुजालकव्याजेनांशुकेनेव मुखमाच्छादयन्ती विलासवती तत्क्षणमधोमुखी तस्थौ। पुनःपुनश्चानुबध्यमाना 'किं मामतिमात्रं त्रपापरवशां करोषि। नाहं किंचिदपि वेद्मि' इत्यभिदधाना तिर्यग्वलिततारकेण चक्षुषाऽवनतमुखी राजानं साभ्यसूयमिवापश्यत्। अपरिस्फुटहासज्योत्स्नाविशदेन मुखशशिना भूभुजां पतिरेनां भूयो बभाषे–'सुतनु, यदि मदीयेन वचसा तव त्रपा वितन्यते तदयमहं स्थितो निभृतम्। अस्य तु किं प्रतिविधास्यसि विघटमानदलकोशविशदचम्पकद्युतेः सवर्णतया परिमलानुमीयमानस्य कुङ्कुमाङ्गरागस्य पाण्डुरतामापद्यमानस्य, अनयोश्च गर्भसंभवामृतावसेकनिर्वा-

---

उजली चादर बिछी थी। मंत्री शुकनास उसी पलंगपर बैठ गया। महारानी विलासवतीको गर्भवती देखकर हर्षके भारसे मन्दमनस्क होकर परिहास करते हुए राजाने कहा—'देवि! मंत्री शुकनास पूछते हैं कि कुलवर्धनाने जो कुछ कहा है, वह क्या सच है?" यह प्रश्न सुनकर विलासवतीके कपोल, होंठ और नयनोंपर मन्द-मन्द मुसकाहट चमक गयी। वे दन्तकिरणोंके ब्याजसे कहीं बाहर न निकल जायँ, मानो इसीलिए वस्त्रसे मुँह ढाँककर लज्जावश उसने उसे नीचेकी ओर झुका लिया। किन्तु इसपर भी जब राजाने बार-बार आग्रह करके पूछा, तब उसने कहा—"क्यों आप मुझे बहुत लज्जित कर रहे हैं? जाइए, मैं कुछ नहीं जानती।" ऐसा कह और नेत्रोंको पुतलियाँ तनिक टेढ़ी करके नीचा मुख किये ही उसने जैसे राजाको कुछ क्रोधके साथ देखा। तदनन्तर अस्फुट हँसीसे देदीप्यमान मुखवाले राजाने कहा—'हे सुन्दरि! यदि मेरी बातसे तुम्हारी लज्जा बढ़ती है तो अब मैं और कुछ न कहूँगा। किन्तु तुम विकसित दलवाली और स्वच्छ चम्पक पुष्पसदृश कान्तियुक्त अपने पीले-पीले शरीरको कैसे छिपाओगी। क्योंकि इसपर किया गया कुमकुमका लेप एक जैसा है। अतएव केवल सुगन्धिसे उसकी पहचान की जा सकती है। इसपर भरपूर पीतिमा व्याप्त हो चुकी है। तब तुम उसका प्रतीकार कैसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यमानशोकानलप्रभवं धूममिव वमतोर्गृहीतनीलोत्पलयोरिव चक्रवाकयोस्तमालपल्लवलाञ्छितमुखयोरिव कनककलशयोः सकृदिवालिखितकृष्णागुरुपङ्कपत्रलतयोः श्यामायमानचूचुकयोः पयोधरयोः, अस्य च प्रतिदिनमतिगाढतरतामापद्यमानेन काञ्चीकलापेन दूयमानस्य नश्यत्त्रिवलिरेखावलयस्य कृशिमानमुज्झतो मध्यभागस्य।' इत्येवं ब्रुवाणमवनिपालमन्तर्मुखहासः शुकनासः 'देव, किमायासयसि देवीम्। इयमनया कथयापि लज्जते। त्यज कुलवर्धनाकथितवार्तासंबद्धमालापकम्' इत्यब्रवीत्। एवंविधाभिश्च नर्मप्रायाभिः कथाभिः सुचिरं स्थित्वा शुकनासः स्वभवनमयासीत्। नरेन्द्रोऽपि तस्मिन्नेव वासगृहे तया सह तां निशामत्यवाहयत्।

करोगी। और फिर इस शरीरके दोनों स्तनोंके अग्रभाग श्याम हो गये हैं। इन्हें देखकर ऐसा लगता है कि जैसे गर्भोत्पत्तिरूपी अमृतसे सिंचनेके कारण हृदयकी शोकरूपी अग्नि बुझकर शान्त हो गयी है। फिर भी यह मानो उस शोकाग्निके धुएँको अब भी उगल रहा है। नीलकमलधारी चकवा-चकवी सदृश अथवा तमालपत्रसे ढँके मुखवाले सुवर्णकलश जैसे तुम्हारे स्तन दीख रहे हैं। इनपर मानो केवल एक बार काले अगुरुसे सदाके लिए स्थायी फूल-पत्तियाँ बना दी गयी हैं। इन्हें भला तुम कैसे छिपा सकोगी? तुम्हारा उदर उत्तरोत्तर कृशता त्यागता हुआ स्थूल होता जा रहा है। जिससे उदरकी त्रिवलियाँ (तीन सलवटें) गायब होती जा रही है। इस मोटापेके कारण कमरकी करधनी तंग होकर कस गयी है और बेचारा मध्यभाग व्यर्थ कष्ट पा रहा है। इसे छिपानेका तुम क्या उपाय करोगी? ऐसा कहते हुए राजा तारापीडसे अपनी हँसीको भीतर ही छिपाकर मंत्री शुकनासने कहा—'महाराज! आप महारानीको व्यर्थ क्यों कष्ट दे रहे हैं? ऐसी बातोंसे उन्हें लाज लगती है। अतएव कुलवर्धनाकी कही हुई बातसे सम्बद्ध वार्ता समाप्त कर दीजिए।' इस प्रकार बड़ी देरतक परिहास भरी बातें करके शुकनास अपने घर चला गया और राजाने उसी शयनगृहमें रानीके साथ वह रात व्यतीत की।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ततः क्रमेण समीहितगर्भदोहदसंपादनप्रमुदिता पूर्णे प्रसवसमये पुण्येऽहन्यनवरतगलन्नाडिकाकलितकलकलैर्बहिरागृहीतच्छायैर्गणकैर्गृहीते लग्ने प्रशस्तायां वेलायामिरंमदमिव मेघमाला सकललोकहृदयानन्दकारिणं विलासवती सुतमसूत। तस्मिञ्जाते सरभसमितस्ततः प्रधावितस्य परिजनस्य चरणशतसंक्षोभचलितक्षितितलो भूपालाभिमुखप्रसृतस्खलद्गतिशून्यकञ्चुकिसहस्रो जनसंमर्दनिष्पिष्यमाणपतितकुब्जवामनकिरातगणो विस्फार्यमाणान्तः पुरजनाभरणझङ्कारमनोहरः पूर्णपात्राहरणविलुप्यमानवसनभूषणः संक्षोभितनगरो राजकुले दिष्टिवृद्धिसंभ्रमोऽतिमहानभूत्। अनन्तरं च मन्दरमथ्यमानजलधिघोषगम्भीरदुन्दुभिध्वानपुरःसरेण प्रहतमृदुमृदङ्गशङ्खकाहलानकनिवहनिर्भरेण

तदनन्तर क्रमशः गर्भकालीन अभिलाषाओंकी पूर्तिसे प्रसन्न महारानी विलासवतीने प्रसवकाल आनेपर एक पवित्र दिन तथा शुभ समयपर सब लोगोंका हृदय आनन्दित करनेवाले पुत्ररत्नको वैसे ही जन्म दिया, जैसे मेघमाला मेघकी अग्नि बिजलीको जन्म देती है। उस समय ज्योतिषी लोग वहाँ आकर घटीयंत्रसे टपकनेवाले जलबिन्दुओंसे समयकी कलाका विवेचन कर रहे थे। कुछ ज्योतिर्विद् आँगनमें अपनी छाया नापकर सही लग्नका निरूपण करनेमें व्यस्त थे। उस बालकके जन्म लेते ही परिजनोंकी भाग-दौड़ और बधाइयोंसे सारे राजमहलमें एक प्रकारका हंगामा-सा मच गया। इधर-उधर दौड़ते हुए सेवकोंके सैकड़ों पैरोंके एकसाथ पड़नेसे क्षुब्ध धरातल हिलने लगा। राजा तारापीडको जल्दी यह समाचार देनेके लिए हर्षसे आकुल हजारों कंचुकी भागते-भागते विकल होकर राहमें ही गिर गये। मनुष्योंकी उस अपार भीड़से बहुतेरे कुबड़े-बौने किरात और छोटे डील-डौलवाले लोग धरतीपर गिर पड़े। रनवासकी ललनाओंके आभूषण उतावलेपनके कारण झनकार करते हुए मुखरित हो उठे। पूर्णपात्र (हर्षातिरेकवश जबर्दस्ती वस्त्राभूषण छीनकर लिये जानेवाले नेग) लेनेमें कितने ही लोगोंके वसनाभरण लुट गये। तदनन्तर मन्दराचल द्वारा मथित क्षीरसागरके गंभीर निनाद सदृश, दुन्दुभीके घनघोर घोषसे युक्त मनोहारी मृदु स्वरके मृदंग, शंख, ढोल, नगाड़े

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मङ्गलपटहपटुरवसंवर्धितेनानेकजनसहस्रकलकलबहुलेन त्रिभुवनमापूरयतोत्सवकोलाहलेन ससामन्ताः सान्तःपुराः सप्रकृतयः सराजलोकाः सवेश्यायुवतयः सबालवृद्धा ननृतुरागोपालमुन्मत्ता इव हर्षनिर्भराः प्रजाः प्रतिदिनमवर्धत चन्द्रोदयेनेव जलधिः कलकलमुखरो राजसूनोर्जन्ममहोत्सवः।

पार्थिवस्तु तनयाननदर्शनमहोत्सवहृतहृदयोऽपि दिवसवशेन मौहूर्तिकगणोपदिष्टे प्रशस्ते मुहूर्ते निवारितनिखिलपरिजनः शुकनासद्वितीयो मणिमयमङ्गलकलशयुगलाशून्येनासक्तबहुपुत्रिकालंकृतेन त्रिविधनवपल्लवनिवहनिरन्तरनिचितेन संनिहितकनकमयहलमुसलयुगेन विरलग्रथितसितकुसुममिश्रदूर्वाप्रवालमालालंकृतेनावलम्बिताविकलव्याघ्रचर्मणा वन्दनमालिकान्तरालघटितघण्टागणेन द्वारेण विराजमानम्, उभयतश्च द्वारपक्षकयोर्मर्यादानिपुणेन गोमयमयीभिरुत्तानविनिहितवराटकदन्तु-

---

आदि वाद्योंकी मधुर ध्वनि एवं हजारों मनुष्योंके कलकल निनादसे परिपूर्ण वह महान् कोलाहल उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ तीनो लोकोंमें व्याप्त हो गया। सभी सामन्त राजे, अन्तःपुरकी महिलायें, मित्रदेशके राजे, युवती वेश्यायें एवं राज्यके बालवृद्धोंसे लेकर ग्वालों तककी सारी प्रजा हर्षातिरेकसे उन्मत्त होकर नाचने लगी। जैसे चन्द्रोदयको देखकर समुद्र बढ़ता है उसी प्रकार राजपुत्रके जन्मका वह महान् उत्सव प्रतिक्षण बढ़ता ही रहा।

यद्यपि पुत्रका मुख देखनेके लिए राजा तारापीडका हृदय आतुर हो रहा था। फिर भी शुभ दिन आनेपर ज्योतिषियोंके बताये शुभ मुहूर्तमें ही वह सब परिजनोंको हटाकर मंत्री शुकनासके साथ सूतिकागृहको देख सका। सूतिकागृहके द्वारपर बहुतेरी पुतलियोंके साथ मणिमय मंगलकलश रक्खे हुए थे। ढेरके ढेर पल्लवोंके बने बंदनवार बँधे थे। स्वर्णनिर्मित हल-मुसल रक्खे थे। दूर्वादलके साथ-साथ यत्र-तत्र सफेद फूलसे गूँथी हुई मालायें लटक रही थीं। साबित व्याघ्रचर्म लटके हुए थे। वहाँ लटकती बंदनवारोंके बीच-बीचमें घंटियाँ बँधी थीं। द्वारकी दोनों पखवाहियोंपर मर्यादामें निपुण वृद्धा और सोहागिन महिलायें बैठी थीं। उस समय वे गोबरसे बहुतेरी चौकें बना-बनाकर उनके ऊपर बीच-बीचमें चित्ती कौड़ियाँ चिपकाती हुई गेरू आदिके चूर्णसे रंग भरती चलती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राभिरन्तरान्तराबद्धविविधवर्णरागरुचिरकूर्पासकुसुमलेशलाञ्छिताभिः कुसुम्भकेसरलवाश्लेषलोहिताभिर्लेखाभिरालिखितस्वस्तिकभक्तिजालमुपरचयता हारिद्रद्रावविच्छुरणपिञ्जरिताम्बरधारिणीं भगवतीं षष्ठीं देवीं कुर्वता विकचपत्त्रपुटविकटशिखण्डिपृष्ठमण्डलाधिरूढमालोललोहितपटघटितपताकमुल्लसितशक्तिदण्डप्रचण्डं कार्तिकेयं संघटयता विन्यस्तालक्तकपटलपाटलमध्यभागौ सूर्याचन्द्रमसावावध्नता कुङ्कुमपङ्कपिञ्जरीकृतामूर्ध्वप्रोतकनकमयवनिकरकण्टकितामविरललग्नगौरसिद्धार्थकप्रकरतया काञ्चनरसखचितामिव मृन्मयगुटिकाकदम्बमालां विन्यस्यता चन्दनजलधवलितेषु भित्तिशिखरभागेषु पञ्चरागविचित्रचेलचीरकलापचिह्नमापीतपिष्टपङ्काङ्कितां वर्धमानपरंपरामन्यानि च सूतिकागृहमण्डनमङ्गलानि संपादयता पुरंध्रिवर्गेण समधिष्ठितम्, उपद्वारसंयतविविधगन्धकुसुममालालंकृतजरच्छागम् , अखिलव्रीहिमध्यावस्थापितार्यवृद्धाध्यासितशयनीयशिरोभागम् , अनवरतदह्यमानाज्यमिश्रभुजगनिर्मोकमे-

---

थीं। वे उनपर कपासके फूल चिपकाकर टेसूके फूलोंकी केसरसे लाल रंग भरती जाती थीं। वे भगवती षष्ठी देवीकी रचना करके उन्हें हल्दीके पीले रंगसे रंगे वस्त्र पहना रही थीं। वे पंख फैलाये मोरकी चौड़ी पीठपर बैठ तथा शक्ति एवं दण्ड घुमाते रहनेके कारण भयानक दीखनेवाले षडानन (कार्तिकेय) के चित्र बना रही थीं। वे लाल कपड़ोंसे फहराती हुई ध्वजाओंकी भी रचना करती थीं। उन चौकोंके बिचले भागमें भूमिको लाखसे लाल करके सूर्यचंद्रकी मूर्ति बनाती थीं। केसरका गाढ़ा रस मिलाकर पीली की हुई मिट्टीसे बनी गोलियोंकी माला बना रही थीं। उन गोलियोंपर स्वर्णरचित जौ चिपके रहनेके कारण वे मालायें कण्टकित जैसी लगती थीं। उनके ऊपर सफेद सरसों भी चिपकी रहती थी, जिससे मालायें सुवर्णरससे भरी हुई दीख रही थीं। वे वृद्धायें चंदनजलसे धोयी गयी सूतिकागृहकी दीवारोंपर ऊपरकी ओर पँचरंगे चित्र बनाकर उनपर रंगीन कपड़े चिपकाती जा रही थीं। इस प्रकार वे उस सूतिकागृहकी शोभा बढ़ानेके लिए बहुतेरे मांगलिक चिह्न अंकित कर रही थीं। उस गृहके द्वारपर विविध प्रकारके सुगंधित पुष्पोंका हार पहनाकर एक वृद्ध बकरा बँधा था। महारानीकी शय्याके सिरहाने विविध पात्रोंमें भरकरसब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पविषाणक्षोदम्, अनलपुष्यमाणारिष्टतरुपल्लवोल्लसितरक्षाधूमगन्धम्, अध्ययनमुखरद्विजगणविप्रकीर्यमाणशान्त्युदकलवम्, अभिनवलिखितमातृपदपूजाव्यग्रधात्रीजनम्, अनेकवृद्धाङ्गनारब्धसूतिकामंगलगीतिकामनोहरम्, उपपाद्यमानस्वस्त्ययनम्, क्रियमाणशिशुरक्षाबलिविधानम्, आबध्यमानधवलकुसुमदामशतम्, अविच्छिन्नपठ्यमाननारायणनामसहस्रम्, अमलहाटकयष्टिप्रतिष्ठापितैरन्तःशुभशतानीव निश्चलशिखैर्ध्यायद्भिर्मङ्गलप्रदीपैरुद्भासितम्, उत्खातासिलतासनाथपाणिभिः सर्वतो रक्षापुरुषैः परिवृतं सूतिकागृहमपश्यत्।

अम्भः पावकं च स्पृष्ट्वा विवेश। प्रविश्य च प्रसवपरिक्षामपाण्डुमूर्तेरुत्संगगतं विलासवत्याः, स्वप्रभासमुदयोपहतगर्भगृहप्रदीपप्रभम्, अपरित्यक्तगर्भरागत्वादुदयपरिपाटलमण्डलमिव सवितारम्, अपर-

---

प्रकारके अन्न रक्खे थे और बहुतेरी वृद्धा स्त्रियाँ बैठी थीं। वहाँपर साँपकी केंचुलके साथ मेढ़ेकी सींगका बुरादा घीमें मिलाकर अहर्निशि जलाया जा रहा था। आगमें जलती हुई नीमकी पत्तियोंके रक्षाधूमकी गंध फैल रही थी। वेदपाठपरायण ब्राह्मण शांतिजल छिड़क रहे थे। धात्रियाँ (धायें) वस्त्रखण्डोंपर तत्काल बनायी गयी मातृकाओंका पूजन करनेमें व्यस्त थीं। अनेक वृद्धायें प्रसवकालके लिए उपयोगी गीत गा रही थीं। ब्राह्मणगण स्वस्तिवाचन कर रहे थे। शिशुरक्षाके निमित्त बलिदान किये जा रहे थे और सैकड़ों सफेद फूलोंके हार बँधे हुए थे। अनवरत विष्णुसहस्रनामका पाठ चल रहा था। निर्मल सुवर्णनिर्मित दीवटोंपर रक्खे हुए मन ही मन मानो शतशः मंगलकामनायें करते हुए शान्त ज्योतिवाले मंगलदीप जल रहे थे। हाथोंमें नगी तलवारें लिये संतरी उस घरके सब ओर घूम-घूमकर पहरा दे रहे थे।

बालकदर्शनके दोषनिवारणार्थ राजा तारापीड जल और अग्निका स्पर्श करके उस घरके भीतर गया। वहाँ जानेपर उसने प्रसवसे दुर्बल और पीतवर्ण रानी विलासवतीकी गोदमें सोये हुए उस हर्षदायक पुत्रको देखा। उस शिशुकी कान्तिसे सूतिकाघरके दीपकोंकी दीप्ति मन्द पड़ गयी थी। उस शिशुमें लाली अत्यधिक थी। अतएव वह उदयकालीन लाल मण्डलवाले सूर्य,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संध्यालोहितबिम्बमिव चन्द्रमसम्, अनुपजातकाठिन्यमिव कल्पतरु-पल्लवम्, उत्फुल्लमिव रक्तारविन्दराशिम्, अवनिदर्शनावतीर्णमिव लोहिताङ्गम्, विद्रुमकिसलयदलैरिव बालातपच्छेदैरिव पद्मरागरश्मि-भिरिव रचितावयवम्, अनभिव्यक्तमुखपङ्कजमिव महासेनम्, सुर-वनिताकरपरिभ्रष्टमिवामरपतिकुमारकम्, उत्तप्तकल्याणकार्तस्वरभा-स्वरया स्वदेहप्रभया पूरयन्तमिव वासभवनम्, उद्भासमानैः सहज-भूषणैरिव महापुरुषलक्षणैरुपेतम्, आगामिकालपालनप्रहृष्टयेव श्रिया समालिङ्गितम्, आह्लादहेतुमात्मजं ददर्श। विगतनिमेषनिश्चलपक्ष्मणा च मुहुर्मुहुः प्रमृष्टसंघटितानन्दबाष्पपटलप्लुततारकेण दूरविस्फारितेन स्निग्धेन चक्षुषा पिबन्निवालपन्निव स्पृशन्निव मनोरथसहस्रप्राप्तदर्शनं सस्पृहं निरीक्षमाणस्तनयाननं मुमुदे। कृतकृत्यं चात्मानं मेने। समृद्ध-

---

संध्याके समय लाल बिम्बवाले चंद्रमा, कल्पतरुके कोमल पत्तों, विकसित रक्त-कमलसमूह तथा पृथिवीका दर्शन करनेके लिए नीचे आये हुए मङ्गलग्रहके समान दीख रहा था। उसके अङ्गोंको देखकर ऐसा लगता था कि वे मानों मूँगेके पल्लवों, नवीन धूपके टुकड़ों और पुखराजमणिकी किरणोंसे बनाये गये हों। वह शिशु अपने पाँच मुख छिपाये कार्तिकेय एवं देवताओंकी स्त्रियोंके हाथसे गिरे इन्द्रपुत्र जयन्तके सदृश लग रहा था। वह संतप्त तथा निर्मल सुवर्ण जैसी देदीप्यमान अपनी शारीरिक कान्तिसे जैसे सारे शयनागारको भरे दे रहा था। चमचमाते सहज भूषणोंके समान उस शिशुमें महापुरुषोंके सभी लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे थे। यह बालक भविष्यमें मेरी रक्षा करेगा, यह सोचकर प्रसन्न लक्ष्मीने जैसे उसका आलिंगन किया था। राजा तारापीडके पूर्ण खुले तथा निर्निमेष नयनोंकी पलकें निश्चल हो गयी थीं। उन नेत्रोंकी पुतलियाँ बराबर पोंछनेपर भी अनवरत बहते हुए आनन्दाश्रुओंमें डूब गयी थीं। उस समय ऐसा लग रहा था कि जैसे वह शिशुको अपने प्रीतिभरे नयनोंसे पी रहा हो, मौन भाषामें उससे कुछ बात कर रहा हो अथवा उसका स्पर्श कर रहा हो। इस तरह उस राजकुमारके मुखको स्पृहाके साथ पुनः पुनः देखकर वह राजा बहुत ही आनंदित हुआ। शिशुका मुख देखकर उसने अपनेको कृतकृत्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मनोरथः शुकनासस्तु शनैः शनैरङ्गप्रत्यङ्गान्यस्य निरूपयन्प्रीतिविस्तारितलोचनं भूमिपालमवादीत्—'देव, पश्य पश्य। अस्य कुमारस्य गर्भसंपीडनवशादस्फुटावयवशोभस्यापि माहात्म्यमाविर्भावयन्ति चक्रवर्तिचिह्नानि। तथा हि। अस्य संध्यांशुकरक्तबालशशिकलाकारे ललाटपट्टे नलिननालभंगतन्तुतन्वीयमूर्णा परिस्फुरति। एतद्विकचपुण्डरीकधवलं कर्णान्तायतं मुहुर्मुहुरुन्मिषितैर्धवलयतीव वासभवनमरालपक्ष्म लोचनयुगलम्। विजृम्भमाणकमलकोशपरिमलमनोहरमियमस्य सहजमाननामोदमाजिघ्रतीव दूरायता कनकलेखेव नासिका। रक्तोत्पलकलिकाकारमुद्वहतीव चास्याधररुचकम्। रक्तोत्पलकलिकालोहिततलौ भगवतो विष्टरश्रवस इव शङ्खचक्रचिह्नौ प्रशस्तलेखालाञ्छितौ करौ। अभिनवकल्पतरुपल्लवकोमलं लेखामयैर्ध्वजरथतुरगातपत्रकमलैरलंकृतमनेकनरेन्द्रसहस्रचूडामणिचक्रचुम्बनोचितं चरणयुगलम्।

माना। क्योंकि हजारों मनौतियोंके बाद आज उसे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उसके मंत्री शुकनासकी भी कामना पूर्ण हो चुकी थी। वह भी प्रीतिसे आँखें फैलाकर बच्चेके हर एक अंगको देखता हुआ राजासे धीरे-धीरे बोला—'महाराज! देखिए-देखिए, बहुत समय तक गर्भमें सिकुड़े रहनेके कारण यद्यपि इस बच्चेके सब अङ्ग भलीभाँति परिस्फुटित नहीं हुए हैं। तथापि इसमें चक्रवर्ती राजाके सभी लक्षण दिखायी दे रहे हैं। जिससे इसका माहात्म्य स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है। उधर देखिए, सन्ध्याकालीन लाल किरणोंवाले बालचंद्रमाकी कला सदृश माथेमें मृणालतन्तुके समान महीन रोयें सुशोभित हो रहे हैं। विकसित श्वेत कमल सरीखे कानोंकी छोरतक विस्तृत तथा मुड़ी हुई पलकोंवाले नेत्र पुनः पुनः खुलकर जैसे सारे शयनागारको उज्ज्वल किये दे रहा है। स्वर्णरेखा सरीखी लम्बी नाक जैसे इसके मुखकी विसित कमलकोशकी नाईं मनोहर एवं सहज सुगंधिको सूँघ रही है। इसका निचला होंठ कमलकी पंखुड़ियोंके आकारका है। हथेलियाँ लाल कमलकी कली जैसी लाल हैं। इसके दोनों हाथ भगवान् विष्णुके समान शंख-चक्रके चिह्न तथा शुभ रेखाओंसे अङ्कित हैं। इसके दोनों पावँ कल्पतरुके नवपल्लव सदृश कोमल तथा ध्वज, रथ, अश्व, छत्र तथा कमलकी रेखाओंसे अलंकृत हैं। ये चरण सहस्रों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एष च दुन्दुभेरिवातिगम्भीरः स्वरयोगोऽस्य रुदतः श्रूयते।' इत्येवं कथयत्येव तस्मिन्ससंभ्रमापसृतेन राजलोकेन द्वारिस्थितेन दत्तमार्गस्त्वरितगतिरागत्य प्रहर्षोद्गमपुलकिततनुः स्फारीभवल्लोचनो मंगलकनामा प्रहृष्टवदनः पुरुषः पादयोः प्रणम्य राजानं व्यजिज्ञपत्—'देव, दिष्ट्या वर्धसे। प्रतिहतास्ते शत्रवः। चिरं जीव। जय पृथिवीम्। त्वत्प्रसादादत्रभवतः शुकनासस्यापि ज्येष्ठायां ब्राह्मण्यां मनोरमाभिधानायां राम इव रेणुकायां तनयो जातः श्रुत्वा देवः प्रमाणम्' इति।

अथ नृपतिरमृतवृष्टिप्रतिममाकर्ण्य तद्वचनं प्रीतविस्फारिताक्षः प्रत्यवदत्—'अहो कल्याणपरंपरा। सत्योऽयं लोकप्रवादो यद्विपद्विपदं संपत्संपदमनुबध्नातीति। सर्वथा समानसुखदुःखतां दर्शयता विधिनापि भवतेव वयमनुवर्तिताः' इत्यभिधाय प्रीतिविकसितमुखः सरभसमालिंग्य विहसन्स्वयमेव शुकनासस्योत्तरीयं पूर्णपात्रं जहार।

राजाओंकी चूडामणियों द्वारा चुम्बित होनेके योग्य हैं। इसके रोनेपर दुन्दुभीके समान गंभीर ध्वनि सुनायी देती है।' जब कि मंत्री शुकनास राजा तारापीडसे इस प्रकार बातें कर रहा था, तभी मंगल नामका एक पुरुष वहाँ दौड़ा-दौड़ा आया। उस समय द्वारपर खड़े राजाओंने तुरन्त हटकर उसे मार्ग दे दिया। हर्षके आधिक्यसे मंगलके शरीरपर रोमाञ्च हो आये थे और नेत्र फैले-फैले थे। हँसते हुए उसने राजाको प्रणाम करके कहा—'महाराज! आपकी वृद्धि हो, आपके रिपुओंका नाश हो, आप चिरञ्जीवी हों और पृथिवी विजय करें। आपकी कृपासे महामंत्री शुकनासकी बड़ी भार्या मनोरमाके गर्भसे रेणुकाकी कोखसे वीर परशुरामके सदृश एक पुत्र जायमान हुआ है। यह शुभ समाचार सुनकर आप जो उचित समझें सो करें।

अमृतवर्षाके सदृश मङ्गलके वचन सुनकर राजा तारापीडके नेत्र हर्षसे खिल गये और वहबोला—'अहो! वाह री कल्याणपरम्परा! यह किंवदन्ती सत्य है कि विपत्तिपर विपत्ति और सम्पत्तिके बाद सम्पत्ति आती है। सुख और दुःखमें समानता दिखाकर विधाताने भी तुम्हारी ही तरह मेरे साथ भी व्यवहार किया है।' ऐसा कहकर राजाने मंत्री शुकनासको गले लगाया और मारे प्रेमके हँसते-हँसते पूर्णपात्रस्वरूप उसका दुपट्टा छीन लिया। इसके बाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्मै च प्रीतमनाः प्रियवचनानुरूपं पुरुषायापरिमितं पारितोषिकमादिदेश। उत्थाय च तथैव तेन चरणविघट्टनक्कणितनूपुरसहस्रमुखरितदिगन्तरेण सरभसोत्क्षेपचालितमणिवलयावलीवाचालितभुजलतेनोर्ध्वीकृतैरुत्तानतलैः करपुटैरनिललुलितामाकाशकमलिनीमिव दर्शयता पर्यस्तमृदितकर्णपल्लवेन परस्परांगदकोटिसंघट्टदष्टपाटितोत्तरीयांशुकेन श्रमजलधौतांगरागरञ्जितनवीनवाससा किंचिदवशिष्टतमालपत्रेण विलसद्वारविलासिनीहसितैरुन्निद्रकैरववनानुकारं प्रथयता सरभसवल्गनस्खलल्लोलहारलतास्फालितकुचस्थलेन सिन्दूरतिलकलुलितालकलेखेन विप्रकीर्णपिष्टातकपांसुपुञ्जपिञ्जरितकेशपाशेन प्रनृत्तकलमूककुब्जकिरातवामनवधिरजडजनपुरःसरेणोत्तरीयांशुकग्रीवाबद्धावकृष्टविडम्बितजरत्कञ्चुकिकदम्बकेन वीणावेणुमुरजकांस्यताललयानुगतेन

परम प्रसन्न मनसे राजाने संवादवाहक मङ्गलको भी बहुमूल्य पुरस्कार दिया। इसके बाद वहाँसे उठकर वह मंत्री शुकनासके घरकी ओर चला। उसके पीछे-पीछे अन्तःपुरकी स्त्रियाँ भी चलने लगीं। चलते समय जोर-जोरसे पाँवोंकी पटकनेके कारण एक साथ झनकते हुए हजारों पायलोंके निनादसे सभी दिशायें गूँज उठीं। जोर-जोरसे हाथ उछालनेके कारण हिलते मणिजटित कंकणोंके निनादसे जैसे उनकी भुजायें शब्दायमान हो गयीं। वे अपनी हथेलियाँ ऊपर उठाकर करसम्पुटों द्वारा जैसे वायुके झोंकेसे हिलती आकाशकमलिनियाँ दिखलाने लगीं। ऐसा करनेसे उनके कर्णपल्लव कानोंसे निकलकर धरतीमें कुचल गये। बाजूबन्दोंकी नोकोंकी परस्पर रगड़से उनके उत्तरीय (ओढ़नियाँ) फट गये। पसीनेसे धुले अङ्गरागके लगनेसे उनके वस्त्र रँग गये। केवल थोड़ेसे तमालपत्र उनके तनपर अवशिष्ट रह गये। अठखेलियाँ कर-करके उच्चस्वरसे हँसती हुई वेश्यायें अपने सुन्दर मुखोंसे कुमुदिनीके वनकी रचना करने लगीं। वेगसे मुड़नेके कारण उनके हार हिलकर स्तनोंसे टकराने लगे। सिन्दूरकी बिन्दीमें उनके केशोंकी लटें सँट गयीं। उड़ते हुए पटवासके चूर्णसे उनके केश पीले-पीले हो गये। गूँगे, कुबड़े, किरात (नाटे), बौने, बहरे और मूर्ख उनके आगे-आगे बड़े सुन्दर ढङ्गसे नाचते चल रहे थे। कभी-कभी किसी स्त्रीकी ओढ़नी किसी बूढ़े कंचुकी-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलमधुरमुद्गायता हर्षनिर्भरतया मत्तेनेवोन्मत्तेनेव ग्रहगृहीतेनेवाप-गतवाच्यावाच्यविवेकेन नृत्तक्रीडासक्तेनान्तःपुरिकाजनेन प्रचलमणि-कुण्डलाहतकपोलभित्तिना च विघूर्णमानकर्णोत्पलेनाधोविगलितविलोल-शेखरेण दोलायमानवैकक्षकुसुममालेन निर्दयप्रहतभेरीमृदंगमर्दल-पटहनिनादानुगतकाहलाशङ्खरवजनितरभसेन चरणसंनिपातैर्दारयतेव वसुधां राजपरिजनेन प्रवृत्तनृत्येन च चारणगणेन विविधमुखवाद्यकृत-कोलाहलेन पठता गायता चानुगम्यमानः शुकनासभवनं गत्वा द्विगुणतरमुत्सवमकारयत् ।

अतिक्रान्ते च षष्ठीजागरे प्राप्ते दशमेऽहनि पुण्ये मुहूर्ते गाः सुवर्णं

की गर्दनमें फँस जाती थी और वह स्त्री उसे खींचती हुई आगे बढ़ जाती थी। इससे कंचुकियोंकी मंडलीमें उसकी बड़ी हँसी होती थी। वेश्यायें वीणा, बाँसुरी, मृदङ्ग तथा कांस्यके लयका अनुसरण करती हुई बड़े ही मधुर स्वरमें गायन गा रही थीं। हर्षातिरेकके कारण वे मदमत्त (मदिरा पीके मस्त) उन्मत्त (पागल) ग्रहग्रस्त (वायुके बिगड़नेसे बड़बड़ानेवाले) के समान बावली हो जानेसे उन्हें योग्य अथवा अयोग्य भाषणका ज्ञान बिल्कुल नहीं रह गया था। उनके पीछे-पीछे अन्तःपुरके परिजन और चारणगण चल रहे थे। उस समय उनके कुण्डल हिल-हिलकर कपोलोंपर टकराते थे। उनके कर्णो-त्पल कानोंसे निकलकर गिरने-गिरनेको हो जाते थे। उनके शेखर (बेंदो) नीचे लटक-लटककर झूलने लगे थे। यज्ञोपवीतकी तरह पहनी हुई फूलोंकी मालायें हिल रही थीं। खूब जोर-जोरसे बजते हुए भेरी, मृदङ्ग, नगाड़े और ताशेके शब्दके साथ बड़ी-बड़ी ढोल तथा शंखोंके स्वरोंने जैसे हंगामा मचा दिया था। वे परिजन और चारण नृत्यके वेगसे चरण पटक-पटककर जैसे धरतीको फाड़े डाल रहे थे। विशेष करके चारणोंमेंसे कुछ चारण मुखसे बजनेवाले वाद्य बजा-बजाकर कोलाहल करते और नाचते जाते थे। उनमेंसे कुछ चारण विरुदावली बखानते और गायन गाते चल रहे थे। इस प्रकार धूमधामसे शुकनासके भवनमें जाकर राजा तारापीडने अपनी अपेक्षा दूना उत्सव सम्पन्न कराया।

छठीं रात्रिके जागरणका कृत्य हो जानेके बाद जब उठावन भी हो गया,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च कोटिशो ब्राह्मणसात्कृत्वा 'मातुरस्य मया परिपूर्णमण्डलश्चन्द्रः स्वप्ने मुखकमलमाविशन्दृष्टः' इति स्वप्नानुरूपमेव राजा स्वसूनोश्चन्द्रापीड इति नाम चकार। अपरेद्युः शुकनासोऽपि कृत्वा ब्राह्मणोचिता सकलाः क्रिया राजानुमतमात्मजस्य विप्रजनोचितं वैशम्पायन इति नाम चक्रे।

क्रमेण कृतचूडाकरणादिक्रियाकलापस्य शैशवमतिचक्राम चन्द्रापीडस्य। तारापीडो व्यासंगविघातार्थं बहिर्नगरादनुसिप्रमर्धक्रोशमात्रायामम्, अतिमहता तुहिनगिरिशिखरमालानुकारिणा सुधाधवलितेन प्राकारमण्डलेन परिवृतम्, अनुप्राकारमाहितेन महता परिखावलयेन परिवेष्टितम्, अतिदृढकपाटसंपुटम्, उद्घाटितैकद्वारप्रवेशम्, एकान्तोपरचिततुरंगवाह्यालीविभागम्, अधःकल्पितव्यायामशालम्, अमरा-

---

तब शुभ मुहूर्तमें राजाने करोड़ों गायें तथा सुवर्ण ब्राह्मणोंको दान दिया। तदनन्तर यह सोचा कि 'उस समय स्वप्नमें मैंने इसकी माताके मुखारविंदमें पूर्णचन्द्रमण्डलको प्रविष्ट होते देखा था, स्वप्नकी इसी बातको ध्यानमें रखकर राजाने उस पुत्रका 'चन्द्रापीड' नाम रक्खा। दूसरे दिन मत्री शुकनासने भी सब ब्राह्मणोचित कृत्य सम्पन्न करके राजाकी सलाहसे अपने पुत्रका ब्राह्मणोंके योग्य 'वैशम्पायन' यह नाम रक्खा।

आगे चलकर चन्द्रापीडका मुंडन आदि संस्कार सम्पन्न हुआ और क्रमशः शैशवावस्था व्यतीत हो गयी। कुछ समय बाद राजा तारापीडने अपने पुत्रका मन कुसंगमें पड़नेसे रोकनेके निमित्त शहरसे बाहर सिप्रानदीके तटपर आध कोस लम्बा-चौड़ा एक देवमंदिर-तुल्य विद्यालय बनवाया। उसके अंतर्गत एक बहुत बड़ा हाता बनाया गया था और उसके चारों ओर सफेद चूनेसे पुती हुई चहारदीवारी खिंची थी। वह विद्यालय हिमवान्‌के शिखरोंकी मालाके सदृश दीख रहा था। उसके चारों ओर एक बहुत चौड़ी और गोल परिखा (खाईं) खोदी गयी थी। उस विद्यालयमें बहुत बड़े और दृढ़ कपाट (फाटक) लगाये गये थे। उसके भीतर जानेके लिए केवल एक मार्ग बनाया गया था। उसमें एक तरफ बहुत बड़ी अश्वशाला बनी हुई थी। हातेके भीतर ही व्यायामशाला बनी थी। उसमें पढ़ानेके लिए सभी विद्याओंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गाराकारं विद्यामन्दिरमकारयत्। सर्वविद्याचार्याणां च संग्रहे यत्नमतिमहान्तमन्वतिष्ठत्। तत्रस्थं च तं केसरिकिशोरकमिव पञ्जरगतं कृत्वा प्रतिषिद्धनिर्गमम्, आचार्यकुलपुत्रप्रायपरिजनपरिवारम्, अपनीताशेषशिशुजनक्रोडव्यासङ्गम्, अनन्यमनसम्, अखिलविद्योपादानार्थमार्येभ्यश्चन्द्रापीडं शोभने दिवसे वैशम्पायनद्वितीयमर्पयांबभूव। प्रतिदिनं चोत्थायोत्थाय सह विलासवत्या विरलपरिजनस्तत्रैव गत्वैनमालोकयामास राजा।

चन्द्रापीडोऽप्यनन्यहृदयतया तथा यन्त्रितो राज्ञाऽचिरेणैव यथास्वमात्मकौशलं प्रकटयद्भिः पात्रवशादुपजातोत्साहैराचार्यैरुपदिश्यमानः सर्वा विद्या जग्राह। मणिदर्पण इवातिनिर्मले तस्मिन्संचक्राम सकलः कलाकलापः। तथा हि। पदे, वाक्ये, प्रमाणे, धर्मशास्त्रे, राजनीतिषु, व्यायामविद्यासु, चापचक्रचर्मकृपाणशक्तितोमरपरशुगदाप्रभृतिषु सर्वे-

---

आचार्य बड़े यत्नसे जुटाये गये। उसी विद्यालयमें राजाने राजकुमार चन्द्रापीडको वैसे ही रक्खा कि जैसे सिंहके बच्चेको पींजरेमें बन्द करके रक्खा जाता है। चन्द्रापीडके लिए विद्यालयसे बाहर आनेकी मनाही कर दी गयी। परिजनोंमें केवल आचार्योंके पुत्र रक्खे गये और बच्चोंका मन अपनी ओर आकृष्ट करनेवाली सब वस्तुयें वहाँसे हटा दी गयीं। इस प्रकार उसने ऐसी युक्ति की कि जिससे बालकका मन अन्य किसी वस्तुमें न फँसे। तदनन्तर सभी विद्यायें प्राप्त करनेके लिए एक शुभ दिन और शुभ मुहूर्तमें राजा तारापीडने वैशम्पायनके साथ चन्द्रापीडको आचार्योंके हवाले कर दिया। तबसे वह नित्य कुछ परिजनोंको लेकर विलासवतीके साथ राजकुमारको देखने जाता था।

इस प्रकार राजाके नियंत्रणमें रहनेके कारण राजकुमार चन्द्रापीडका मन और किसी विषयमें नहीं जा सका। अतएव अपना-अपना नैपुण्य प्रदर्शित करनेवाले तथा सुयोग्य शिष्य पाकर सोत्साह शिक्षा देते हुए आचार्योंसे बहुत थोड़े समयमें राजकुमार चन्द्रापीडने समस्त विद्यायें प्राप्त कर लीं। निर्मल मणिदर्पणके तुल्य स्वच्छहृदय चन्द्रापीडमें सभी शास्त्र तथा कलायें प्रविष्ट हो गयीं। जैसे—व्याकरण, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, राजनीति तथा मल्लविद्यामें और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ष्वायुधविशेषेषु, रथचर्यासु, गजपृष्ठेषु, तुरंगमेषु, वीणावेणुमुरजकांस्यतालदर्दुरपुटप्रभृतिषु वाद्येषु, भरतादिप्रणीतेषु नृत्यशास्त्रेषु, नारदीयप्रभृतिषु गान्धर्ववेदविशेषेषु, हस्तिशिक्षायाम्, तुरङ्गवयोज्ञाने, पुरुषलक्षणे, चित्रकर्मणि, पत्रच्छेद्ये, पुस्तकव्यापारे, लेख्यकर्मणि, सर्वासु द्यूतकलासु, शकुनिरुतज्ञाने, ग्रहगणिते, रत्नपरीक्षासु, दारुकर्मणि, दन्तव्यापारे, वास्तुविद्यासु, आयुर्वेदे, यन्त्रप्रयोगे, विषापहरणे, सुरङ्गोपभेदे, तरणे, लंघने, प्लुतिषु, इन्द्रजाले, कथासु, नाटकेषु, आख्यायिकासु, काव्येषु, महाभारतपुराणेतिहासरामायणेषु, सर्वलिपिषु, सर्वदेशभाषासु, सर्वसंज्ञासु, सर्वशिल्पेषु, छन्दःसु, अन्येष्वपि लोकविशेषेषु परं कौशलमवाप। सहजा चाजस्रमभ्यस्यतो वृकोदरस्येव शैशव एवाविर्बभूव लोकविस्मयजननी महाप्राणता। यदृच्छया क्रीडताप्यनेन करतलावलम्बितकर्णपल्लवावनताङ्गाः सिंहकिशोरकक्रमाक्रान्ता इव गज-

---

धनुष, चक्र, ढाल, तलवार, शक्ति, भाला, परशु, गदाप्रभृति विविध प्रकारके आयुधोंमें, रथ हाँकनेमें, हाथीकी सवारीमें, अश्वविद्यामें, वीणा, वेणु, मृदंग, कांस्यपात्र, मजीरा, दर्दुर आदि नाना प्रकारके वाद्योंमें, भरत आदिके बनाये नृत्यशास्त्रमें, नारदादि आचार्यों द्वारा प्रणीत संगीतशास्त्रमें, हस्तिशिक्षामें, घोड़ोंकी उम्र जाननेमें, पुरुषोंके लक्षणज्ञानमें, चित्रकर्ममें, वस्त्र तथा दीवारोंपर चित्रनिर्माणकलामें, ग्रंथरचनामें, मूर्तियोंकी खोदाईमें, समस्त द्यूतकलाओंमें, गान्धर्वशास्त्रमें, पक्षियोंकी बोली समझनेमें, ज्योतिषशास्त्रमें, रत्नपरीक्षामें, बढ़ईगिरीमें, हाथीदाँतके काममें, वास्तुविद्यामें, आयुर्वेदमें, यंत्रोंके उपयोगमें, विष उतारनेमें, सुरंग फोड़नेमें, तैरनेमें, लाँघनेमें, तैरनेमें, कूदनेमें, ऊँचाईपर चढ़नेमें, रतिशास्त्रमें, इन्द्रजाल (जादू) विद्यामें, कथाओंमें, नाटकोंमें, कहानियोंमें, काव्योंमें, महाभारतमें, पुराणोंमें, इतिहासमें, रामायणमें, सभी लीपियोंका परिचय प्राप्त करनेमें, सभी देशोंकी भाषा जाननेमें, सभी संकेतोंके ज्ञानमें, सब शिल्पोंमें, छंदशास्त्रमें तथा ऐसी-ऐसी कितनी ही कलाओंमें चन्द्रापीडने निपुणता प्राप्त कर ली। नित्य व्यायाम करते रहनेके कारण बाल्यावस्थामें ही उसमें भीम सरीखी स्वाभाविक वीरता आ गयी थी। खेल-खेलमें जब वह हाथीके बच्चेका कान पकड़कर बैठा देता था, तब वे उसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलकभकाश्चलितुमपि न शेकुः। एकैकेन कृपाणप्रहारेण तालतरून्मृणालदण्डानिव लुलाव। सकलराजन्यवंशवनदावानलस्य परशुरामस्येवास्य नाराचाः शिखरिशिलातलभिदो बभूवुः। दशपुरुषसंवाहनयोग्येन चायोदण्डेन श्रममकरोत्। ऋते च महाप्राणतायाः सर्वाभिरन्याभिः कलाभिरनुचकार तं वैशम्पायनः। चन्द्रापीडस्य तु सकलकलाकलापपरिचयबहुमानेन शुकनासगौरवेण सहपांसुक्रीडनतया सहसंवृद्धतया च सर्वविश्रम्भस्थानं द्वितीयमिव हृदयं वैशम्पायनः परं मित्रमासीत्। निमेषमपि तेन विना स्थातुमेकाकी न शशाक। वैशम्पायनोऽपि तमुष्णकरमिव वासरोऽनुगच्छन्न क्षणमपि विरहयांचकार।

एवं तस्य सर्वविद्यापरिचयमाचरतश्चन्द्रापीडस्य त्रिभुवनविलोभनीयोऽमृतरस इव सागरस्य, सकललोकहृदयानन्दजननश्चन्द्रोदय इव

तरह नहीं हिल पाते थे, मानों उन्हें सिंहके बच्चेने घर दबोचा हो। वह तलवारके एक ही प्रहारसे मृणालदण्डके समान बड़े-बड़े ताड़के वृक्षोंको काट डालता था। समस्त क्षत्रियजातिके लिए दवानलस्वरूप परशुरामके समान वीर चंद्रापीडके बाण पहाड़ोंकी बड़ी-बड़ी शिलाओंको छेद डालते थे। वह दस मनुष्यों द्वारा उठाये जाने योग्य भारी लौहमुद्गरोंको भाँजकर व्यायाम करता था। अत्यन्त वीरताके सिवाय अन्य गुणोंमें वैशम्पायन भी चंद्रापीडके ही समान था। वैशम्पायन चन्द्रापीडका ऐसा पूर्ण विश्वासपात्र और परम मित्र बन गया था, जैसे उसका दूसरा हृदय ही हो। इसका कारण यह था कि बाल्यकालमें वे दोनों साथ-साथ धूलमें खेले थे। उन दोनोंका लालन-पालन साथ-साथ हुआ था। इसके अतिरिक्त समस्त कलाओंमें निपुण होनेके कारण चन्द्रापीड वैशम्पायनका बहुत सम्मान करता था। महामंत्री शुकनासके लिए भी उसके हृदयमें बड़ा आदरभाव था। क्षणभरके लिए भी वह वैशम्पायनको छोड़कर अकेला नहीं रह पाता था। वैशम्पायन भी उसी प्रकार सदा चन्द्रापीडका अनुसरण करता था, जैसे दिन सूर्यका अनुसरण करता है।

इस प्रकार जब चन्द्रापीड विद्याभ्यासमें संलग्न था, तभी उसमें यौवनकी उपस्थितिके लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। वह चन्द्रापीड समुद्रसे निकले अमृतके समान सारी त्रिलोकीको प्रिय था। सायंकालीन चन्द्रोदयके समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रदोषस्य, बहुविधरागविकारभंगुरः सुरधनुःकलाप इव जलधरसमयस्य, मकरध्वजायुधभूतः कुसुमप्रसव इव कल्पपादपस्य, अभिनवाभिव्यज्यमानरागरमणीयः सूर्योदय इव कमलवनस्य, विविधलास्यविलासयोग्यः कलाप इव शिखण्डिनो यौवनारम्भः प्रादुर्भवन्रमणीयस्यापि द्विगुणां रमणीयतां पुपोष। लब्धावसरः सेवक इव निकटीबभूवास्य मन्मथः। लक्ष्म्या सह वितस्तार वक्षःस्थलम्। बन्धुजनमनोरथैः सहापूर्यतोरुदण्डद्वयम्। अरिजनेन सह तनिमानमभजत मध्यभागः। त्यागेन सह प्रथिमानमाततान नितम्बभागः। प्रतापेन सहारुरोह रोमराजिः। अहितकलत्रालकलताभिः सह प्रलम्बतामुपययौ भुजयुगलम्। चरितेन सह धवलतामभजत लोचनयुगलम्। आज्ञया सह गुरुर्बभूव

वह लोगोंके हृदयको आनन्द देता था। वह वर्षाकालमें उदित होनेवाले इन्द्रधनुषके समान बहुविधरागविकारभंगुर था (विविध रंगोंके विकारसे इन्द्रधनुष क्षणभंगुर होता है और जवानीका आरम्भ विविध भावोंके विकारसे अस्थिर होता है)। कल्पतरुके पुष्पप्रसवके समान चन्द्रापीड मानो कामदेवका शस्त्र था। सूर्योदयकालीन विकसित कमलवनके समान वह अभिनव रागसे रमणीय था (उदयकालीन सूर्य अपनी नवीन लालीसे रमणीय होता है और चन्द्रापीड यौवनारम्भसे रमणीय लगता था)। मोरपंखोंके समान वह विविध लास्यविलासके योग्य था (मोरके पंख नृत्यक्रीडाके योग्य होते हैं और चन्द्रापीडके यौवनका आरम्भ नृत्य एवं अन्य शृङ्गाररससम्बन्धी क्रीडाके लिए उपयोगी था)। इन गुणोंके विकाससे चन्द्रापीडका सौन्दर्य दूना हो गया। अवसर पाकर कामदेव सेवकके समान उसके समीप आ उपस्थित हुआ। शोभाके साथ-साथ उसकी छाती विशाल होने लगी। बन्धुओंकी अभिलाषाओंके साथ-साथ उसकी जाँघें भरने लग गयीं। शत्रुओंके साथ-साथ उसकी देहका मध्यभाग (कटिप्रदेश) पतला पड़ने लगा। त्याग अर्थात् दानवृत्तिके साथ-साथ उसका नितम्बभाग मोटा होने लगा। प्रभावके साथ-साथ उसकी देहके रोयें बढ़ने लगे। शत्रुओंकी स्त्रियोंकी लटोंके साथ ही उसकी दोनों भुजायें बढ़ने लगीं। सच्चरित्रताके साथ-साथ उसके नेत्रोंकी शुभ्रता बढ़ती गयी। आज्ञा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भुजशिखरदेशः। स्वरेण सह गम्भीरतामाजगाम हृदयम्।

एवं च क्रमेण समारूढयौवनारम्भं परिसमाप्तसमग्रकलाविज्ञानमधीताशेषविद्यं चावगम्यानुमोदितमाचार्यैश्चन्द्रापीडमानेतुं राजा बलाधिकृतं बलाहकनामानमाहूय बहुतुरगबलपदातिपरिवृतमतिप्रशस्तेऽहनि प्राहिणोत्। स गत्वा विद्यागृहं द्वाःस्थैः समावेदितः प्रविश्य क्षितितलावलम्बितचूडामणिना शिरसा प्रणम्य स्वभूमिसमुचिते राजसमीप इव सविनयमासने राजपुत्रानुमतो न्यषीदत्। स्थित्वा च मुहूर्तमात्रं बलाहकश्चन्द्रापीडमुपसृत्य दर्शितविनयो व्यजिज्ञपत्—'कुमार, महाराजः समाज्ञापयति—'पूर्णा नो मनोरथाः। अधीतानि शास्त्राणि। शिक्षिताः सकलाः कलाः। गतः सर्वास्वायुधविद्यासु परां प्रतिष्ठाम्। अनुमतोऽसि विनिर्गमाय विद्यागृहात्सर्वाचार्यैः। उपगृहीतशिक्षं गन्धगधकुमारकमिव वारिविनिर्गतमवगतसकलकलाकलापं

(निर्देश) के साथ-साथ उसकी भुजाओंका ऊपरी भाग मांसल होता गया और कंठस्वरके साथ-साथ उसके हृदयमें गाम्भीर्य गुण आता गया।

जब राजा तारापीडको यह बात मालूम हुई कि अब चन्द्रापीड जवान हो गया है और उसने समस्त कलाओंका अभ्यास करके सभी विद्यायें सीख ली हैं, तब आचार्योंकी अनुमतिसे शुभ मुहूर्तमें राजाने उसे बुलानेके लिए बहुतेरे सवार तथा पैदल सैनिकोंके साथ सेनापति बलाहकको भेजा। विद्यालयके द्वारपर पहुँचकर सेनापतिने द्वारपालों द्वारा युवराजके पास खबर भेजवायी। अनुमति पाकर वह भीतर गया और भूमिपर चूडामणियुक्त माथा रखकर विनम्र-प्रणाम किया। उसके बाद वह राजदरबारमें जिस तरह बैठता था, उसी तरह भावसे युवराजकी अनुमति लेकर उसके पास अपने पदके योग्य आसनपर बैठ गया। क्षणभर बाद बलाहक राजकुमार चन्द्रापीडके निकट जाकर विनीत भावसे बोला—'राजकुमार! महाराज कहते हैं कि हमारे मनोरथ पूर्ण हो गये। क्योंकि आपने सब शास्त्र पढ़ लिये। सब कलायें सीख लीं। समस्त विद्याओंके पारंगत हो गये। अतएव सब सभी आचार्योंने आपको विद्यालयसे घर जानेकी अनुमति दे दी है। सो बन्धनघरसे बाहर निकले मदवाही गजराजके बच्चेकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पौर्णमासीशशिनमिव नवोद्गतं पश्यतु त्वां जनः। व्रजन्तु सफलतामतिचिरदर्शनोत्कण्ठितानि लोकलोचनानि। दर्शनं प्रति ते समुत्सुकान्यतीव सर्वाण्यन्तःपुराणि। अयमत्रभवतो दशमः संवत्सरो विद्यागृहमधिवसतः। प्रविष्टोऽसि षष्ठमनुभवन्वर्षम्। एवं संपिण्डितेनामुना षोडशेन प्रवर्धसे। तदद्यप्रभृति निर्गत्य दर्शनोत्सुकाभ्यो दत्त्वा दर्शनमखिलमातृभ्योऽभिवाद्य च गुरूणामुपगतनियन्त्रणो यथासुखमनुभव राज्यसुखानि नवयौवनलालितानि च। संमानय राजलोकम्। पूजय द्विजातीन्। परिपालय प्रजाः। आनन्दय बन्धुवर्गम्। अयं च त्रिभुवनैकरत्नमनिलगरुडसमजव इन्द्रायुधनामा तुरङ्गमः प्रेषितो महाराजेन द्वारि तिष्ठति। एष खलु देवस्य पारसीकाधिपतिना त्रिभुवनाश्चर्यमिति कृत्वा 'जलधिजलादुत्थितमयोनिजमिदमश्वरत्नमासादितं मया महाराजाधिरोहणयोग्यम्' इति संदिश्य प्रहितः। दृष्ट्वा च निवेदितं लक्षणविद्भिः—'देव, यान्युच्चैःश्रवसः श्रूयन्ते लक्षणानि तैरयमुपेतः। नैवंविधो

तरह अथवा पूर्णिमाको तत्काल उदित चन्द्रमाके समान शिक्षा प्राप्त करके विद्यालयसे घर पहुँचे हुए आपका सब लोग दर्शन करें। आपके दर्शनार्थ सारा अन्तःपुर अत्यन्त उत्कण्ठित है। घर छोड़कर आपको विद्यालयमें रहते यह दसवाँ साल है। जब आपकी उम्र छ वर्षकी थी, तभी यहाँ आये थे। इन सबको मिलाकर अब आप सोलहवें वर्षमें पदार्पण कर चुके हैं। सो आज आप यहाँसे चलकर माताओंको दर्शन दें और गुरुजनोंकी चरणवन्दना करके राज्यका सुख तथा नवयौवनके विलासका स्वतन्त्रताके साथ मनोनुकूल आनन्द लें। अब आप राजाओंका सम्मान करिए। द्विजजनोंकी पूजा करिए। प्रजाका पालन करिए और स्वजनोंको आनन्द दीजिए। महाराज द्वारा प्रेषित इन्द्रायुध नामका घोड़ा द्वारपर खड़ा है। जो सारी त्रिलोकीमें रत्न एवं पवन तथा गरुड़तुल्य वेगवान् है। पारसीक (फारस) देशके राजाने त्रिभुवनका एक आश्चर्य समझकर महाराजके पास भेजते हुए यह संदेश कहलाया था कि 'यह घोड़ा समुद्रके जलसे उत्पन्न होनेके कारण अयोनिज है। किसी प्रकार मुझे मिला तो मैंने सोचा कि यह महाराजकी सवारी लायक है।' घोड़ोंके लक्षण जाननेवाले लोगोंका कहना है कि इन्द्रके घोड़े

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूतो भावी वा तुरंगमः' इति। तदयमनुगृह्यतामधिरोहणेन। इदं च मूर्धाभिषिक्तपार्थिवकुलप्रसूतानां विनयोपपन्नानां शूराणामभिरूपाणां कलावतां च कुलक्रमागतानां राजपुत्राणां सहस्रं परिचारार्थमनुप्रेषितं तुरंगमारूढं द्वारि प्रणामलालसं प्रतिपालयति'। इत्यभिधाय विरतवचसि बलाहके चन्द्रापीडः पितुराज्ञां शिरसि कृत्वा नवजलधरध्वानगम्भीरया गिरा 'प्रवेश्यतामिन्द्रायुधः' इति निर्जिगमिषुरादिदेश।

अथ वचनान्तरमेव प्रवेशितम्, उभयतः खलीनकनककटकावलम्बाभ्यां पदे पदे कृताकुञ्चनप्रयत्नाभ्यां पुरुषाभ्यामवकृष्यमाणम्, अतिप्रमाणम्, ऊर्ध्वकरपुरुषप्राप्यपृष्ठभागम्, आपिबन्तमिव संमुखागतमखिलमाकाशम्, अतिनिष्ठुरेण मुहुर्मुहुः प्रकम्पितोदररन्ध्रेण हेषारवेण पूरितभुवनोदरविवरेण निर्भर्त्सयन्तमिवालीकवेगदुर्विदग्धं गरुत्मन्तम्, अतिदूर-

---

उच्चैःश्रवामें जो सुलक्षण हैं, वे ही इसमें भी हैं। ऐसा घोड़ा कभी कहीं न हुआ है और न भविष्यमें होगा।' अतएव इसपर सवारी करनेकी कृपा करिए। इसके अतिरिक्त महाराजने तिलकधारी राजाओंके कुलमें उत्पन्न, वीर, विनीत, रूपवान्, कलाविद् और कुलीन एक सहस्र राजपुत्रोंको आपकी सेवाके लिए भेजा है। घोड़ेपर सवार वे राजकुमार आपको प्रणाम करनेके लिए लालायित होकर द्वारपर खड़े प्रतीक्षा कर रहे हैं।' ऐसा कहकर जब बलाहक चुप हो गया, तब पिताकी आज्ञा शिरोधार्य करते हुए घर जानेका निश्चय करके चन्द्रापीडने नवीन मेघके गर्जन सदृश वाणीमें आज्ञा दी कि 'इन्द्रायुधको भीतर लाया जाय।'

राजकुमारके आज्ञा देते ही एक बहुत बड़ा घोड़ा सामने लाकर खड़ा कर दिया गया। उसकी लगामके दोनों ओर लगी सोनेकी जंजीर पकड़कर पद-पदपर रोकनेका प्रयत्न करते हुए दो सईस उसे खींचे हुए थे। वह बहुत ऊँचा था। इतना अधिक कि हाथ ऊँचा करनेपर ही उसकी पीठ छुई जा सकती थी। वह अपने समक्ष पड़नेवाले आकाशको जैसे पिये जा रहा था। वह बार-बार पेट फड़काकर हिनहिनाता हुआ अपने शब्दसे सारे भवनके उदरको भरे देता था और वेगका झूठा अभिमान करनेवाले गरुड़का तिरस्कार कर रहा था। सईसों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुन्नमता जवनिरोधस्फीतरोषघुरघुरायमाणघोणेन शिरोभागेन निजजव-दर्पवशादुल्लङ्घनार्थमाकलयन्तमिव त्रिभुवनम्, असितपीतहरितपाट-लाभिराखण्डलचापानुकारिणीभिर्लेखाभिः कल्माषितशरीरम्, आस्तीर्ण-विविधवर्णकम्बलमिव कुञ्जरकलभम्, कैलासतटाघातधातुधूलिपाटल-मिव हरवृषभम्, असुररुधिरपङ्कलेखालोहितसटमिव पार्वतीसिंहम्, रंहःसंघातमिव मूर्तिमन्तम्, अनवरतपरिस्फुरत्प्रोथपुटोन्मुक्तसूत्कारेणा-तिजवापीतमनिलमिव नासिकाविवरेणोद्वमन्तम्, अन्तःस्खलितमुखर-खलीनखरशिखरक्षोभजन्मनो लालाजलभुवः फेनपल्लवानुदधिनिवास-परिपीतामृतसरगण्डूषानिवोद्गिरन्तम्, अत्यायतमतिनिर्मांसतया समुत्कीर्णमिव वदनमुद्वहन्तम्, आननमण्डलनिहितारुणमणिसमुद्गतैरंशुक-लापैरुपेतेनावसक्तरक्तचामरेणेव निश्चलशिखरेण कर्णयुगलेन विराजमानम, उज्ज्वलकनकशृङ्खलारचितरश्मिकलापकलितया लाक्षालोहित-

---

द्वारा वेग रोकनेसे रुष्ट होकर अपना मस्तक ऊँचा किये नासिकासे घुरघुर शब्द कर रहा था। जिससे ऐसा लगता था कि मानो वह अपने वेगदर्पसे तीनों लोक लाँघनेका मंसूबा बाँध रहा हो। इन्द्र धनुष सरीखी काली, पीली हरी और लाल रेखाओंसे उसका शरीर चितकबरा हो गया था। अतएव वह अनेक रंगके फूलोंसे ढँका हाथीका बच्चा जैसा लग रहा था। वह कैलासकी धातुमयी चट्टानें खोदनेसे कुछ लाल शंकरवृषभ नन्दी जैसा सुन्दर दीखता था। अथवा दैत्योंके रुधिरसे भीगी सटा (अयाल) वाले पार्वतीके सिंह जैसी उसकी शोभा हो रही थी। वह जैसे वेगराशिका मूर्त रूप था। वह बारबार नथुना फुलाकर सूँसू शब्द करता था। जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि अतिशय वेगसे उसने जो हवा पी ली थी, उसे अब नाककी राह बाहर निकाल रहा है। उसके मुँहमें लगी पैनी लगामके अग्रभागकी रगड़से उत्पन्न लारकी फेन बाहर निकलकर ऐसी लगती थी कि जैसे समुद्रमें रहते समय पिये हुए अमृतकी घूँट उगल रहा है। उसका मुँह बड़ा लम्बा और मांसहीन होनेके कारण छेनीके सहारे पत्थरपर गढ़ा हुआ जैसा लग रहा था। मुखपर लटकती पद्मरागमणियोंकी किरणें उसके दोनों कानोंके सिरेपर पड़ रही थीं। इससे ऐसा लगता था कि मानो उनपर दो लाल चमर लटके हुए हों। स्वच्छ सुवर्णकी चमकीली जंजीरोंसे निकलती हुई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लम्बलोलसटासंतानया जलनिधिसंचरणलग्नविद्रुमपल्लवयेव शिरोधरयोपशोभितम्, अतिकुटिलकनकपत्रलताप्रतानभंगुरेण पदे पदे रणितरत्नमालेन स्थूलमुक्ताफलप्रायेण तारागणेनेव संध्यारागमरुणेनाश्वालंकारेणालंकृतम्, अश्वालंकरनिहितमरकतरत्नप्रभाश्यामायमानदेहतया गगनतलनिपतितदिवसकररथतुरंगमशङ्कामिवोपजनयन्तम्, अतितेजस्वितया जवनिरोधरोषवशात्प्रतिरोमकूपमुद्गतानि सागरपरिचयलग्नानि मुक्ताफलानीव स्वेदलवजालकानि वर्षन्तम्, इन्द्रनीलमणिपादपीठानुकारिभिरञ्जनशिलाघटितैरिवानवरतपतनोत्पतनजनितविषमखरमुखरवैः पृथुभिः खुरपुटैर्जर्जरितवसुंधरैर्मुरजवाद्यमिवाभ्यस्यन्तम्, उत्कीर्णमिव जङ्घासु, विस्तारितमिवोरसि, श्लक्ष्णीकृतमिव मुखे, प्रसारितमिव

किरणोंसे लाख सरीखो लाल, लम्बी और फहराती हुई सटासे युक्त उसकी गर्दन ऐसी दीख रही थी कि जैसे समुद्रमें घूमते समय उसमें प्रवालके पत्ते चिपक गये हों। जिनके रत्नजटित हार बराबर खनखना रहे थे, उनमें बड़े-बड़े मोती लगे थे और पतली-पतली रेखाओंसे जो बड़े सुन्दर दीख रहे थे, ऐसे लाल आभूषणोंसे आभूषित वह घोड़ा तारागणसे अलंकृत सन्ध्याकालकी तरह शोभित हो रहा था। उन आभूषणोंमें जड़ी मरकतमणिकी दीप्तिसे उसका शरीर कुछ काला पड़ गया था। अतएव उसे देखकर आकाशसे गिरे हुए सूर्यरथके अश्वकी शंका होने लगती थी। अत्यधिक तेजस्विताके कारण वेग रोकनेसे उत्पन्न रोषवश वह प्रत्येक रोमकूपसे जैसे पसीनेकी वर्षा कर रहा था। इससे ऐसा मालूम होता था कि जैसे समुद्रमें घूमते समय शरीरमें चिपके मोतियोंको बरसा रहा हो। उसके विस्तृत खुरोंको जैसे विधाताने काजल सरीखे काले पत्थरोंसे गढ़ा था। अतएव वे इन्द्रनीलमणि द्वारा निर्मित पादपीठ जैसे लग रहे थे। वे खुर अपने प्रहारसे पृथिवीको विदीर्ण किये देते थे। निरन्तर ऊपर-नीचे उठते-गिरते रहनेके कारण उन खुरोंके अग्रभागसे निकले विकट शब्दोंको सुनकर ऐसा मालूम पड़ता था कि जैसे वह अश्व मृदङ्ग बजानेका अभ्यास कर रहा था। उसकी जाँघें जैसे काठ अथवा पत्थर काटकर बनायी गयी थीं। छाती विस्तृत रची गयी थी। जैसे पालिश करके मुख चिकना किया गया था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कंधरायाम्, उल्लिखितमिव पार्श्वयोः, द्विगुणीकृतमिव जघनभागे, जवप्रतिपक्षमिव गरुत्मतः, त्रैलोक्यसंचरणसहायमिव मारुतस्य, अंशावतारमिवोच्चैःश्रवसः, वेगसब्रह्मचारिणमिव मनसः, हरिचरणमिव सकलवसुंधरोल्लङ्घनक्षमम्, वरुणहंसमिव मानसप्रचारम्, मधुमासदिवसमिव विकसिताशोकपाटलम्, व्रतिनमिव भस्मसितपुण्ड्रकाङ्कितमुखम्, कमलवनमिव मधुपङ्कपिङ्गकेसरम, ग्रीष्मदिवसमिव महायाममुग्रतेजसं च, भुजंगमिव सदागत्यभिमुखम्, उदधिपुलिनमिव शङ्खमालिकाभरणम्, भीतमिव स्तब्धकर्णम्, विद्याधरराज्यमिव चक्रवर्तिन-

---

जैसे उसके कन्धे खूब फैलाकर बने थे और उसके दोनों पार्श्वभाग चित्रित कर दिये गये थे। जघनभाग जैसे दूना कर दिया गया था। वेगमें मानो वह गरुड़का प्रतिद्वन्द्वी था। त्रिलोकीमें संचरणकार्य सम्पन्न करनेमें जैसे वह पवनका सहायक था। इन्द्रके अश्व उच्चैःश्रवाका मानो वह अंशावतार था। वेगकी शिक्षा प्राप्त करनेमें जैसे वह मनका सहपाठी था। वामनरूपधारी विष्णुभगवान्‌के चरणोंकी तरह वह तीनों लोक लाँघनेमें समर्थ था। वरुणदेवके हंसकी भाँति वह मानसप्रचार था (वरुणका हंस मानसरोवरमें विचरता है और वह अश्व मन सदृश वेगसे दौड़ता था)। चैत्रमासके दिनोंकी तरह वह अशोकपाटल था (चैत्रमें अशोक तथा पाटल वृक्षमें फूल लगते हैं और वह विकसित अशोक सदृश लाल रंगका था)। व्रतधारी पुरुषके समान उसके माथेपर राख सरीखा श्वेत तिलक विद्यमान था। कमलवनके समान वह मधुपिंगल केसर युक्त था (कमलके केसर मकरन्दसे पीले हो जाते हैं, किन्तु उस घोड़ेकी गर्दनके बाल मधुयुक्त पंकके लेपसे पीली पड़ गयी थी)। ग्रीष्मऋतुके दिनोंकी तरह वह महायाम था (ग्रीष्मऋतुके दिनोंका पहर बड़ा होता है और अश्वका शरीर बहुत बड़ा था) और वह प्रबल तेजस्वी था (ग्रीष्ममें तेज गर्मी पड़ती है और घोड़ा बहुत उत्साही था)। सर्पके समान वह सदागतिके अभिमुख रहता था (सर्प सदागति अर्थात् वायुके अभिमुख रहता है और वह अश्व सर्वदा चलनेको तैयार रहता था)। समुद्रतटके सदृश वह शंखमालासे विभूषित रहता था। भयभीतके समान सर्वदा उसके कान खड़े रहते थे। विद्याधरके राज्यकी भाँति वह चक्रवर्तिनरवाहनोचित (नरवाहन नामका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रवाहनोचितम्, सूर्योदयमिव सकलभुवनार्घार्हम्, अश्वातिशयमिन्द्रायुधमद्राक्षीत्।

दृष्ट्वा च तमदृष्टपूर्वममानुपलोकोचिताकारमखिलत्रिभुवनराज्योचितमशेषलक्षणोपपन्नमश्वरूपातिशयमतिधीरप्रकृतेरपि चन्द्रापीडस्य पस्पर्श विस्मयं हृदयम्। आसीच्चास्य मनसि—'सरभसपरिवर्तनवलितवासुकिभ्रमितमन्दरेण मथ्नता जलधिजलमिदमश्वरत्नमनभ्युद्धरता किं नाम रत्नमुद्धृतं सुरासुरलोकेन। अनारोहता च मेरुशिलातलविशालस्य पृष्ठमाखण्डलेन किमासादितं त्रैलोक्यराज्यफलम्। उच्चैःश्रवसा विस्मितहृदयो वञ्चितः खलु जलनिधिना शतमखः। मन्ये च भगवतो नारायणस्य चक्षुर्गोचरमियता कालेन नायमुपगतो येनाद्यापि तां गरुडारोहणव्यसनितां न त्यजति। अहो! खल्वतिशयितत्रिदशराज्यसमृद्धिरियं तातस्य राज्यलक्ष्मीर्यदेवंविधान्यपि सकलत्रिभुवनदुर्लभानि रत्नान्युपकरणतामागच्छन्ति। अतितेजस्वितया महाप्राणतया च सदैवतेयमस्या-

---

चक्रवर्ती राजा अथवा चक्रवर्ती मनुष्यको सवारी देने लायक) था। वह अश्व सूर्योदयके समान सभी भुवनोंमें पूजा पानेका अधिकारी था।

अत्यन्त धीर प्रकृति होते हुए भी चन्द्रापीड उस अदृष्टपूर्व, त्रिभुवनराज्यके योग्य, सभी सुलक्षणोंसे युक्त और लोकोत्तर आकारवाले सुन्दर अश्वको देखकर बहुत विस्मित हुआ। उसने अपने मनमें सोचा—'अतिशय वेगसे मुड़ते और सिमटते वासुकी नागके द्वारा मन्दर पर्वतसे देव-दानवोंने समुद्रको बड़े परिश्रमसे मथकर जब इस अश्वरत्नको नहीं निकाला तो आखिर निकाला ही क्या? सुमेरुके शिलातल सरीखी इसकी पीठपर यदि देवराज इन्द्र नहीं चढ़े तो त्रिलोकीका राज्य पाकर भी उन्हें क्या फल मिला? उच्चैःश्रवाको देखकर ही विस्मित हो जानेवाले इन्द्रको अवश्य समुद्रने ठग लिया है। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि अभी यह अश्व विष्णुभगवान्‌को दृष्टिगोचर नहीं हुआ है, तभी तो वे अबतक गरुड़की सवारी करना नहीं छोड़ रहे हैं। अहो! मेरे पिताजीकी राज्यलक्ष्मी इन्द्रसे भी बढ़ी-चढ़ी है। तभी तो वे समस्त त्रिलोकीमें दुर्लभ ऐसे-ऐसे रत्नोंका उपभोग कर रहे हैं। अत्यधिक तेजस्विता तथा प्रबल पराक्रमके कारण इस अश्वकी आकृति देवता जैसी दीखती है। अतएव इसपर चढ़नेमें मुझे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृतिर्यंत्सत्यमारोहणे शङ्कामिव मे जनयति। न हि सामान्यवाजिनाममानुषलोकोचिताः सकलत्रिभुवनविस्मयजनन्य ईदृश्यो भवन्त्याकृतयः। दैवतान्यपि हि मुनिशापवशादुज्झितनिजशरीराणि शापवचनोपनीतान्येतानि शरीरान्तराण्यध्यासत एव। श्रूयते हि पुरा किल स्थूलशिरा नाम महातपा मुनिरखिलत्रिभुवनललामभूतामप्सरसं रम्भाभिधानां शशाप। सा सुरलोकमपहायाश्वहृदये निवेश्यात्मानमश्वहृदयेति विख्याता वडवा मृत्तिकावत्यां शतधन्वानं नाम राजानमुपसेवमाना मर्त्यलोके महान्तं कालमुवास। अन्ये च महात्मानो मुनिजनशापपरिपीडितप्रभावा नानाकारा भूत्वा बभ्रमुरिमं लोकम्। असंशयमनेनापि महात्मना केनापि शापभाजा भवितव्यम्। आवेदयतीव मदन्तःकरणमस्य दिव्यताम्' इति विचिन्तयन्नेवारुरुक्षुरासनादुदतिष्ठत्। मनसा च तं तुरङ्गममुपसृत्य 'महात्मन्नर्वन्! योऽसि सोऽसि। नमोऽस्तु ते। सर्वथा मर्षणीयोऽयमारोहणातिक्रमोऽस्माकम्। अपरिगतानि दैवतान्य-

---

कुछ शंका जैसी हो रही है। क्योंकि साधारण घोड़ोंका देवलोकके योग्य तथा त्रिभुवनमें विस्मय उत्पन्न कर देनेवाला ऐसा विलक्षण आकार कदापि नहीं हो सकता। और फिर कभी-कभी देवता भी तो मुनियोंके शापसे अपना देवरूप त्यागकर अन्यान्य शरीर धारण कर लिया करते हैं। ऐसा सुना जाता है कि पूर्वकालमें स्थूलशिरा नामके एक महान् तपस्वीने निखिल त्रिलोकीकी अलंकारस्वरूपा रम्भानामकी अप्सराको शाप दे दिया था। तदनुसार वह देवलोक त्यागकर किसी अश्वके हृदयमें समा गयी। तदनन्तर अश्वहृदया नामकी घोड़ी होकर मृत्तिकावती नगरीके राजा शतधन्वाको सवारी देती हुई बहुत समयतक वह मर्त्यलोकमें रही। और भी बहुतेरे महात्मा मुनियोंके शापसे प्रभाव नष्ट हो जानेपर विविध आकार धारण करके इस लोकमें चक्कर काट चुके हैं। निःसंदेह, यह महात्मा भी किसी मुनिके शापका शिकार हुआ है। क्योंकि मेरी अंतरात्मा इसके देवत्वकी गवाही दे रही है।' ऐसा विचार करके वह घोड़ेपर चढ़नेके लिए आसनसे उठ खड़ा हुआ और इंद्रायुधके पास जाकर मन ही मन कहा—'महात्मा अश्व! तुम जो भी होओ। मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ। अपने ऊपर मेरी सवारीकी धृष्टताको क्षमा कर देना। क्योंकि कभी-कभी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ष्यनुचितपरिभवभाञ्जि भवन्ति' इत्यामन्त्रयांबभूव। विदिताभिप्राय इव स तमिन्द्रायुधश्चटुलशिरःकेसरसटाहत्याकूणिताकेकरतारकेण तिर्यक्चक्षुषा विलोक्य मुहुर्मुहुस्ताडयता क्षितितलमुत्खातधूलिधूसरितक्रोडरोमराजिना दक्षिणखुरेणारोहणायाह्वयन्निव स्फुरितघ्राणविवरघर्घरध्वनिमिश्रं मधुरमपरुषहुंकारपरम्परानुबद्धमतिमनोहरं हेषारवमकरोत्।

अथानेन मधुरहेषितेन दत्तारोहणाभ्यनुज्ञ इवेन्द्रायुधमारुरोह चन्द्रापीडः। समारुह्य तं प्रादेशमात्रमिव त्रैलोक्यमखिलं मन्यमानो निर्गत्य जलधरविमुक्तोपलासारपरुषेण जर्जरयतेव रसातलमतिनिष्ठुरेण खुरपुटानां रवेण, रजोनिरुद्धघ्राणघोषेण च हेषितेन बधिरीकृतसकलत्रिभुवनविवरम्, अशिशिरदीधितिसंस्पर्शस्फुरितविमलफलकेनोर्ध्वीकृतेन

अनजानमें देवता भी अनुचित अनादरके पात्र बन जाते हैं।' चंद्रापीडने ऐसा कहकर उससे अनुमति माँगी। तदनंतर जैसे उस घोड़ेने राजपुत्रका अभिप्राय समझ लिया हो, इस प्रकार माथेका बाल लगनेसे तनिक मुँदे तथा तिरछे नयनोंकी पुतलियोंको फेरकर वह उसकी ओर निहारने लगा। फिर बार बार धरतीपर दाहिना खुर पटकनेसे जो धूल उड़ रही थी, उससे छातीके बालोंको मटमैला किये वह अश्व मानों उसे सवार होनेके लिए बुला रहा हो—इस तरह फूले नथुनोंके छिद्रसे निकली फुंकारकी ध्वनिसे मिश्रित मधुर तथा पुनः पुनः हुंकार करता हुआ बड़े सुंदर ढंगसे हिनहिनाने लगा।

इस प्रकार मीठी हिनहिनाहटकी ध्वनि सुनकर चन्द्रापीड इंद्रायुधकी पीठपर इस तरह सवार हो गया, जैसे उस ध्वनिके रूपमें उसे चढ़नेकी अनुमति मिल गयी हो। उसपर चढ़कर चंद्रापीड सारी त्रिलोकीको बालिश्त बराबर नन्हा समझता हुआ विद्यालयसे बाहर निकला। द्वारपर उसने घोड़सवारोंकी एक इतनी बड़ी सेना देखी, जिसका अंत ही नहीं दीखता था। उस सेनाके घोड़े मेघसे गिरे ओलेकी तरह कठोर खुरोंके भीषण निनादसे जैसे रसातल तकको जर्जर किये दे रहे थे। उनके निष्ठुर खुरोंके आघातसे जो धूल उड़ती थी, उससे उनकी अवरुद्ध नासिका द्वारा निकले घोर शब्द पृथिवीतलकी समस्त कंदराओंको बहरी बनाये दे रहे थे। वह सेना सूर्यकी किरणोंके संस्पर्शसे चमकीले आवरणयुक्त ऊँचे उठे हुए भालेरूपी लतावनके ऊँचे दण्डवाले तथा नील

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुन्तलतावनेनोन्नालनीलोत्पलकलिकावनगहनं सर इव गगनतलमलं- कुर्वाणम्, उद्दण्डमायूरातपत्रसहस्रान्धकारिताष्टदिङ्मुखतया स्फुरितशतमन्युचापकलापकल्मापमिव जलधरवृन्दम्, उद्गमत्फेनपुञ्जधवलितमुखतयाऽनवरतवल्गनचटुलतया च प्रलयसागरजलकल्लोलसंघातमिव समुद्गतम्, अदृष्टपर्यन्यमश्वसैन्यमपश्यत्। तच्च सागरजलमिव चन्द्रोदयेन चन्द्रापीडनिर्गमेन सकलमत्र संचचालाश्वीयम्। अहमहमिकया च प्रणामलालसाः सरभसापनातातपत्रशून्यशिरसः परस्परोत्पीडनकुपिततुरंगमनिवारणायस्ता राजपुत्रास्तं पर्यवारयन्त। एकैकशश्च प्रतिनामग्राहमावेद्यमाना बलाहकेन विचलितमुकुटपद्मरागकिरणोद्गमच्छलेनानुरागमिवोद्वमद्भिः संघटितसेवाञ्जलिमुकुलतया यौवराज्याभिषेककलशावर्जितसलिलमग्नकमलैरिव दूरावनतैः शिरोभिः प्रणेमुः। चन्द्रापीडस्तु

कमलकी कलियोंके समूहोंसे भरे सरोवर सदृश आकाशको सुशोभित कर रही थी। उन सैनिकोंके ऊँचे दण्डवाले मोरपंखोंके बने हजारों छत्रोंके कारण दसों दिशाओंके मुख अंधकारसे आवृत हो गये थे। जिससे वह सेना चमकते हुए इंद्रधनुषसे चित्रित मेघसमूह जैसी दीख रही थी। अत्यधिक फेन निकलनेसे श्वेत मुखवाले तथा पल-पलपर चिहुँकते हुए उस सेनाके घोड़ोंको देखकर ऐसा लगता था कि जैसे प्रलयकालीन समुद्रकी तरंगें उठ रही हों। चंद्रापीडको देखते ही उस सेनामें ऐसी खलबली मच गयी, जैसे चंद्रमाको देखकर समुद्र उमड़ पड़ता है। तदनंतर 'पहले मैं प्रणाम करूँ' इस जल्दबाजीमें छत्र हट जानेसे राजकुमारोंके सिर नंगे हो गये और कुपित घोड़ोंके परस्पर भिड़ जानेके कारण वे अपने-अपने घोड़ोंको फेरनेका प्रयत्न करने लग गये। तनिक देर बाद वे सब चंद्रापीडको घेरकर खड़े हो गये और सेनापति बलाहक जिस क्रमसे एक-एकका नाम बताकर परिचय देता गया, उसी क्रमसे खिसके हुए मुकुटोंसे निकलती पद्मरागमणिकी दीप्तियोंके आकारमें जैसे अपना आंतरिक अनुराग प्रदर्शित करते हुए वे दूर ही से माथा नवा-नवाकर प्रणाम करने गये। उस समय उनकी सेवाञ्जलिरचना देखकर ऐसा लगता था कि जैसे यौवराज्याभिषेकके कलशसे जलके साथ-साथ गिरे हुए कमल चिपक गये हों।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तान्सर्वान्मानयित्वा यथोचितमनन्तरं तुरङ्गमाधिरूढेनानुगम्यमानः वैशम्पायनेन, राज्यलक्ष्मीनिवासपुण्डरीकाकृतिना सकलराजन्यकुलकुमुदखण्डचन्द्रमण्डलेनेव तुरङ्गमसेनास्रवन्तीपुलिनायमानेन क्षीरोदफेनधवलितवासुकिफणामण्डलच्छविना स्थूलमुक्ताकलापजालकावृतेनोपरि चिह्नीकृतं केसरिणमुद्वहताऽतिमहता कार्तस्वरदण्डेन ध्रियमाणेनातपत्रेण निवारितातपः, उभयतः समुद्धूयमानचामरकलापपवननर्तितकर्णपल्लवः, पुरः प्रधावता तरुणवीरपुरुषप्रायेणानेकसहस्रसंख्येन पदातिपरिजनेन जय जीवेति च मधुरवचसा मङ्गलप्रायमनवरतमुच्चैः पठता बन्दिजनेन स्तूयमानो नगराभिमुखं प्रतस्थे ।

क्रमेण च तं समासादितविग्रहमनङ्गमिवावतीर्णं नगरमार्गमनुप्राप्तमवलोक्य सर्व एव परित्यक्तसकलव्यापारो रजनिकरोदयपरिबुध्यमानकुमुदवनानुकारी जनः समजनि । 'सत्यस्मिन्मुखकुमुदकदम्बकविकृताकृतिः

तदनन्तर उन सभी राजपुत्रोंका यथोचित सम्मान करके घोड़ेपर सवार वैशम्पायनके साथ चन्द्रापीड उज्जयिनी नगरीकी ओर चला । धूपसे बचावके लिए उसके सिरपर छत्र लगा हुआ था । उस छत्रकी आकृति राज्यलक्ष्मीकी निवासभूमि पुण्डरीक (श्वेतकमल) सरीखी थी । उसे देख-देखकर वे राजपुत्र इस प्रकार प्रसन्न हो रहे थे, जैसे चन्द्रमाको देखकर कुमुद प्रफुल्लित हो रहे हों । वह छत्र अश्वसेनारूपिणी नदीका किनारा था और क्षीरसागरके फेनसे उज्ज्वलताको प्राप्त वासुकी नागके फन जैसा शुभ्र लग रहा था । उसके सुनहले दण्डपर मोतियोंके झुब्बे लटके थे और सिंहकी आकृति बनी हुई थी । चन्द्रापीडके दोनों ओर चमर चल रहे थे और उनकी वायुसे उसके कर्णपल्लव उड़कर जैसे नाच रहे थे । परिजनोंमेंसे आगे-आगे दौड़ते हुए हजारों युवक 'राजकुमारकी जय हो—वे चिरंजीवी हों' ऐसे मीठे शब्दोंके नारे लगा रहे थे और वन्दीजन मङ्गलमय वचन बोलते हुए ऊँचे स्वरसे स्तुतिपाठ कर रहे थे ।

इस प्रकार धीरे-धीरे चलता हुआ वह जब नगरीके राजपथपर पहुँचा, तब शरीरधारी कामदेवके समान सुन्दर चन्द्रापीडको देखकर सभी नागरिक अपना-अपना काम छोड़ चन्द्रमाको देखकर प्रफुल्लित कुमुदवनके समान हर्षसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कार्तिकेयो विडम्बयति कुमारशब्दम्। अहो! वयमतिपुण्यभाजो यद्मानुषीमस्याकृतिमन्तःसमारूढप्रीतिरसनिःस्यन्दविस्तारितेन कुतूहलोत्तानितेन लोचनयुगलेनानिवारिताः पश्यामः। सफला नोऽद्य जाता जन्मवत्ता। सर्वथा नमोऽस्मै रूपान्तरधारिणे भगवते चन्द्रापीडच्छद्मने पुण्डरीकेक्षणाय' इति वदन्नारचितप्रणामाञ्जलिर्नगरलोकः प्रणनाम। सर्वतश्च समुपावृत्तकपाटपुटप्रकटवातायनसहस्रतया चन्द्रापीडदर्शनकुतूहलान्नगरमपि समुन्मीलितलोचननिवहमिवाभवत्। अनन्तरं च 'समाप्तसकलविद्यो विद्यागृहान्निर्गतोऽयं चन्द्रापीडः—' इति समाकर्ण्यालोकनकुतूहलिन्यः सर्वस्मिन्नेत्र नगरे ससंभ्रममुत्सृष्टार्धपरिसमाप्तप्रसाधनव्यापाराः काश्चिद्वामकरतलगतदर्पणाः स्फुरितसकलरजनिकरमण्डला इव पौर्णमासीरजन्यः, काश्चिदार्द्रालक्तकरसपाटलितचरणपुटाः कमलपरिपीतबालातपा इव नलिन्यः, काश्चित्ससंभ्रमगतिविग-

---

प्रफुल्लित हो उठे। फिर वे सब परस्पर कहने लगे—'इस राजपुत्रके रहते खिले कुमुदसमूह जैसे अनेक (छ) मुखोंके कारण विकृत स्वरूपवाले स्वामिकार्तिकेय 'कुमार' शब्दको व्यर्थ लज्जित कर रहे हैं। अहो! हमलोग बड़े पुण्यात्मा हैं, जो चन्द्रापीडके दिव्य स्वरूपको हृदयमें उमड़ते प्रेमरसके सारसे विस्तार पाते तथा कुतूहलवश ऊपर उठे हुए दोनों नेत्रोंसे निधड़क देख रहे हैं। आज हमारा धरतीपर जन्म लेना सफल हो गया। चन्द्रापीडके स्वरूपमें रूपान्तरित कमलनयन विष्णुभगवान्‌को हमारा सर्वथा नमस्कार है।' ऐसा कहते हुए वे सभी नागरिक हाथ जोड़कर उसे नमस्कार करने लगे। चन्द्रापीडके नगरप्रवेशके उपलक्ष्यमें सभी भवनोंकी खिड़कियों और किवाड़ोंके खुल जानेसे ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह नगरी भी सहस्रों आँखें खोल-खोलकर उसका दर्शन कर रही है। तदनन्तर 'सब विद्यायें सीखकर चन्द्रापीड विद्यालयसे नगरीमें आ रहे हैं' यह समाचार सुनकर उसे देखनेको निकली नागरिक ललनायें हड़बड़ीमें आधा-तीहा शृङ्गार करती हुई कतिपय आभूषण पहनकर अस्त-व्यस्त दशामें ही भवनोंकी अँटारियोंपर जा पहुँचीं। उनमेंसे कइयोंके हाथमें दर्पण विद्यमान थे, जिनसे वे पूर्णचन्द्रमण्डलविमण्डित रात्रियोंसरीखी दीख रही थीं। कुछ स्त्रियोंके पैर महावर लगनेसे लाल-लाल थे। जिनसे वे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लितमेखलाकलापाकुलितचरणकिसलयाः, शृङ्खलासंदानमन्दमन्दसंचारिण्य इव करिण्यः, काश्चिज्जलधरसमयदिवसश्रिय इवेन्द्रायुधरागरुचिराम्बरधारिण्यः, काश्चिदुल्लसितधवलनखमयूखपल्लवान्नूपुररवाकृष्टगृहकलहंसकानिव चरणपुटानुद्वहन्त्यः, काश्चित्करतलस्थितस्थूलहारयष्ट्यो रतिमिव मदनविनाशशोकगृहीतस्फटिकाक्षवलयां विडम्बयन्त्यः, काश्चित्पयोधरान्तरालगलितमुक्तालतास्तनुविमलस्रोतोजलान्तरितचक्रवाकमिथुना इव प्रदोषश्रियः, काश्चिन्नूपुरमणिसमुत्थितेन्द्रायुधतया परिचर्यानुगतगृहमयूरिका इव विराजयन्त्यः, काश्चिदर्धपीतोज्झितमणिचषकाः स्फुरितरागैर्मधुरसमिवाधरपल्लवैः क्षरन्त्यो हर्म्यतलानि ललनाः समारुरुहुः।

प्रातःकालीन नवीन धूपसे व्याप्त कमलवाली कमलिनी (पोखरी) जैसी दीख रही थीं। जल्दबाजीमें कुछ महिलाओंकी करधनियाँ खुल गयी थीं, जिनमें उनके पाँव फँस गये थे। जिससे ऐसा लगता था कि मानों पैरके सिकड़ तोड़कर गजशाला-से निकली हुई हथिनियाँ धीरे-धीरे चली आ रही हों। बहुतेरी ललनायें वर्षा-कालीन दिनकी शोभासदृश इन्द्रधनुष जैसे विविध रंगोंके वस्त्र धारण किये थीं। कुछ नारियोंके पैरोंमेंसे निकली नाखूनोंकी उज्ज्वल किरणें फैल रही थीं, जिनसे उनके चरण पायलोंकी झनकार सुनकर वहाँ दौड़ आये हुए पालतू हंसों जैसे लग रहे थे। हड़बड़ीमें पहने न जा सकनेके कारण कुछ स्त्रियोंके हार हाथोंमें ही रह गये थे। कामदेवकी मृत्यु हो जानेपर शोकाकुल होकर वे स्फटिकमणिकी माला हाथमें लेकर खड़ी कामपत्नी रतिके समान दीख रही थीं। कुछ महिलाओंके स्तनोंपर मोतियोंके हार टूटकर लटक रहे थे। उन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानो स्वल्प और स्वच्छ जलप्रवाह द्वारा वियुक्त चकवा-चकवीसंयुक्त प्रदोषकालकी शोभायें वहाँ आ उपस्थित हुई हों। कुछ नगर-बधूटियोंके पायलोंमें जटित मणियोंसे विविध रंगकी किरणें निकलकर इन्द्रधनुषकी शोभा उपस्थित कर रही थीं। उनसे ऐसा लगता था कि जैसे घरमें पली हुई मोरनियाँ उनके साथ-साथ दौड़ी आ रही हों। हड़बड़ीमें कितनी ही ललनायें मणिरचित प्यालोंको आधा ही पीकर छोड़ चली थीं। उन्हें देखकर ऐसा मालूम होता था कि जैसे वे अपने फड़कते और रंगीन होठोंसे मधुरस चुआ रही हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अन्याश्च मरकतवातायनविवरविनिर्गतमुखमण्डला विकचकमलकोशपुटामम्बरतलसंचारिणीं कमलिनीमिव दर्शयन्त्यो ददृशुः। उदपादि च सहसा सरभससंचलनजन्मा, मधुरसारणास्फालितवीणारवकोलाहलबहलः, रशनारवाहूतसारसरसितसंभिन्नः, स्खलितचरणतलताडितसोपानजातगम्भीरध्वनिप्रहृष्टानामवरोधशिखण्डिनां केकारवैरनुगम्यमानः नवजलधररवभयचकितकलहंसकोलाहलकोमलः, मकरध्वजविजयघोषणानुकारी, परस्परविघट्टनारणिततारतरहारमणीनां रमणीनां श्रोत्रहारी, हर्म्यकुक्षिषु प्रतिरवनिर्ह्लादी भूषणनिनादः। मुहूर्तादिव युवतिजननिरन्तरतया नारीमया इव प्रासादाः, सालक्तकपदक्रमलविन्यासैः पल्लवमयमिव क्षितितलम्, अंगनांगप्रभाप्रवाहेण लावण्यमयमिव नगरम्, आननमण्डलनिवहेन चन्द्रबिम्बमयमिव गगनतलम्,

---

बहुतेरी अन्य स्त्रियाँ मकरतमणिकी खिड़कियोंमेंसे मुख बाहर निकालकर चन्द्रापीडको देख रही थीं। वे ऐसी लगती थीं कि जैसे विकसित कमलके साथ-साथ कमलिनयाँ गगनमण्डलमें विचर रही हों। उस समय हड़बड़ाकर जल्दी चलनेके कारण उच्च स्वरसे झनकते मणिमय हारोंसे लदी ललनाओंके आभूषणोंका श्रुतिमधुर शब्द एक साथ गूँज उठा। उनकी उँगलियों द्वारा बजती हुई वीणाके मधुर शब्दसदृश करधनियोंकी ध्वनि सुनकर दौड़े आये हुए सारसोंके कलनिनादमें मिल गया। सोपानों (सीढ़ियों) पर पाँव सरक जानेसे जायमान गम्भीर शब्द सुनकर आनन्दित पालतू मयूर केकाध्वनि करने लग गये। वह शब्द नवजलधरके गर्जनसे भयभीत होकर चिहुँके कलहंसोंके कोलाहल जैसा कोमल थां और वह कामदेवके विजयघोषका अनुकरण करता हुआ भवनोंकी प्रतिध्वनिसे और भी विस्तृत होता जा रहा था। क्षण ही भरमें महिलाओंकी अपार भीड़से उस नगरीके सभी प्रासाद जैसे स्त्रीमय हो गये। उनके महावररंजित चरणोंके पड़नेसे उन महलोंकी फर्श जैसे नवपल्लवमयी हो गयी। उन सुन्दरियोंकी देहसे निकली दीप्तिके प्रवाहसे जैसे सारा नगर लावण्यमय हो उठा। अगणित मुखमण्डलोंके कारण जैसे सारा आकाश चन्द्रबिम्बमय हो गया। सूर्यका आतप रोकनेके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आतपनिवारणायोत्तानितकरतलजालकेन कमलवनमयमिव दिक्चक्रवालम्, आभरणांशुकलापेनेन्द्रायुधमय इवातपः, लोचनमयूखलेखासंतानेन नीलोत्पलदलमय इव दिवसो बभूव। कौतुकप्रसारितनिश्चललोचनानां च पश्यन्तीनां तासामादर्शमयानीव सलिलमयानीव स्फटिकमयानीव हृदयानि विवेश चन्द्रापीडाकृतिः। आविर्भूतमदनरसानां चान्योन्यं सपरिहासाः सविश्रम्भाः ससंभ्रमाः सेर्ष्याः सोत्प्रासाः साभ्यसूयाः सविलासाः समन्मथाः सस्पृहाश्च तत्क्षणं रमणीयाः प्रसस्रुरालापाः। तथा हि 'त्वरितगमने, मामपि प्रतिपालय। दर्शनोन्मत्ते, गृहाणोत्तरीयम्। उल्लासयालकलतामाननावलम्बिनीं मूढे। चन्द्रलेखामुपहर। उपहारकुसुमस्खलितचरणा पतसि मदनान्धे! संयमय मदननिश्चेतने, केशपाशम्। उत्क्षिप चन्द्रापीडदर्शनव्यसनिनि, काञ्चीदामकम्। उत्सर्पय पापे, कपोलदोलायितं कर्णपल्लवम्। अहृदये, गृहाण

लिए ऊपर किये हुए बहुतेरे हाथोंके कारण जैसे दसों दिशायें कमलवनमयी हो गयीं। आभूषणोंकी दीप्तिसे सूर्यका प्रकाश जैसे इन्द्रधनुषमय दीखने लगा। नेत्रों द्वारा निकलती किरणोंसे वह दिन जैसे नीलकमलकी कलियोंसे भर गया। उत्सुकतासे आँखें फाड़कर निश्चल दृष्टिसे निहारती हुई उन कामिनियोंके दर्पणमय, जलमय अथवा स्फटिकमय अन्तःकरणोंमें चंद्रापीडकी सुन्दर आकृति घर कर गयी। उसे देखकर उन सुन्दरियोंके मनमें कामरस जागृत हो गया और वे परस्पर परिहाससहित, विश्वाससहित, भयसहित, ईर्ष्यासहित, हास्य और क्रोधसहित, विलास एवं कामसहित और स्पृहासंयुत बड़ी मीठी बातें करने लगीं। उनकी बातें इस प्रकार थीं—'अरी द्रुतगामिनी! मुझे भी साथ लेती चल। तू तो उसे देखनेके लिए जैसे पागल हो गयी है—अपनी ओढ़नी तो सम्हाल। अरी मूर्खे! तेरे बालोंकी लटें मुखपर आ गयी हैं, उन्हें ठीक कर ले। ले, यह अपने जूड़ेका चाँद तो लेती जा। अरी कामान्धे! तू पूजाके फूलोंपर फिसलकर गिर जायगी। अरी बावली! अपने बालोंको तो समेट ले। ओ चन्द्रापीडके दर्शनकी दीवानी! अपनी करधनी सरकाकर ऊँची कर। अरी पापिनी! गालोंपर लटके हुए कर्णपल्लवोंको एक ओर कर ले। ओ हृदय-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निपतितं दन्तपत्रम्। यौवनोन्मत्ते, विलोक्यसे जनेन स्थगय पयोधर-भारम्। अपगतलज्जे, शिथिलीभूतमाकलय दुकूलम्। अलीकमुग्धे, द्रुततरमागम्यताम्। कुतूहलिनि, देहि नृपदर्शनान्तरम्। असंतुष्टे, कियदालोकयसे। तरलहृदये, परिजनमपेक्षस्व। पिशाचि, गलितोत्त-रीया विहस्यसे जनेन। रागावृतनयने, पश्यसि न सखीजनम्। अनेकभ-ङ्गिविकारपूर्णे, दुःखमकारणायासितहृदया जीवसि। मिथ्याविनीते, किं व्यपदेशवीक्षितैः, विश्रब्धं विलोकय। यौवनशालिनि, किं पीडयसि पयोधरभारेण। अतिकोपने, पुरतो भव। मत्सरिणि, किमेकाकिनी रुणत्सि वातायनम्। अनङ्गपरवशे, मदीयमुत्तरीयांशुकमुत्तरीयतां नयसि। रागासवमत्ते, निवारयात्मानम्। उज्झितधैर्ये, किं धावसि गुरुजनसमक्षम्। उल्लसत्स्वभावे, किमेवमाकुलीभवसि। मुग्धे, निगूहस्व मदनज्वरजनितपुलकजालकम्। असाध्वाचरणे, किमेवमुत्ता-

---

हीने! तेरी हाथीदाँतकी कंघी गिर गयी है, उसे उठा ले। अरी जवानीमें मस्त सुन्दरी! अपने स्तन तो ढाँक ले। लोग देख रहे हैं। ओ निर्लज्जे! तेरे कपड़े ढीले पड़ गये हैं, उन्हें कस ले। अरी! तू तो व्यर्थ नादानी दिखाती है, जल्दी आ। अरी तमाशाइन! तनिक हट, मुझे भी चन्द्रापीडको देखने दे। अरी, तू कितना देखेगी। ओ चञ्चले! तनिक नौकर-चाकरोंका भी कुछ ख्याल कर। अरी पिशाचिनी! तेरी साड़ी सरक गयी है और तुझे देखकर लोग हँस रहे हैं। अरी प्रेमसे अन्धी! क्या तू अपनी सखियोंको भी नहीं देखती? अरी विविध कुटिलताओंसे भरी नागिन! तू अपने हृदयको सन्ताप देती हुई व्यर्थ जी रही है। अरी ओ बनावटी विनय दिखानेवाली नारी! तू छिपकर उसे क्यों देखती है? निधड़क होकर देख। अरी जवान! तू मुझे अपने स्तनोंसे क्यों दबा रही है? अरी कोपने! ले, तू ही आगे आ। अरी डाहिन! क्या तू अकेली ही पूरी खिड़की घेर लेगी? अरी! तू तो एकदम कामदेवके वशीभूत हो गयी है। मेरी ओढ़नीको क्यों खींचकर ओढ़े ले रही है? अरी! तू प्रेमरूपी मदिरा पीकर मतवाली हो गयी है। तनिक अपनेको सम्हाल। अरी धैर्यशून्ये! गुरुजनोंके सामने तू इस तरह क्यों दौड़ती है? अरी उतावली! तू इस तरह व्याकुल क्यों हो रही है? ओ मुग्धे! इस काम-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्यसि। बहुविकारे, अङ्गभङ्गवलनायासितमध्यभागा वृथा खिद्यसे। शून्यहृदये, स्वभवनान्निर्गतमपि नात्मानमवगच्छसि। कौतुकाविष्टे, विस्मृतासि निःश्वसितुम्। अन्तःसंकल्परचितरतसमागमसुखरसनिमीलितलोचने, समुन्मीलय लोचनयुगलम्, अतिक्रामत्ययम्। अनङ्गशरप्रहारमूर्च्छिते, रविकिरणनिवारणाय कुरु शिरस्युत्तरीयांशुकपल्लवम्। अयि सतीव्रतग्रहगृहीते, द्रष्टव्यमपश्यन्ती वञ्चयसि लोचनयुगलम्। अधन्ये, हतासि परपुरुषादर्शनव्रतेन। प्रसीदोत्तिष्ठ सखि, पश्य रतिविरहितं साक्षादिव भगवन्तमगृहीतमकरध्वजं मकरध्वजम्। अयमस्य सितातपत्रान्तरेण अलिकुलनीले शिरसि तिमिरशङ्कातिपतित इव शशिकरकलापो मालतीकुसुमशेखरोऽभिलक्ष्यते। एतदस्य कर्णाभरणमरकतप्रभाश्यामायितमुपरचितविकचशिरीषकुसुमकर्णपूरमिव कपोलत-

---

ज्वरजनित रोमांचको छिपा ले। अरी कुलटे! तू इस प्रकार घबराती क्यों है? ओ बहुतेरे विकारोंसे भरी नारी! तू तरह-तरहसे अंग टेढ़ा करके व्यर्थ अपनी कमरको क्यों कष्ट दे रही है? ओ सूने हृदयवाली! क्या तुझे अपने घरसे बाहर आनेकी भी सुधि नहीं है? ओ उत्सुके! तुझे तो जैसे साँस भी लेनेकी खबर नहीं रही। तूने तो सोच-सोचकर प्राप्त सुरत-समागमके सुखसे अपनी आँखें मूँद ली हैं। अरी! आँखें खोलकर देख, वह तो चला जा रहा है। अरी कामबाणसे मूर्छित नारी! धूपसे बचनेके लिए ओढ़नीका पल्ला सिरपर खींच ले। ओ सतीव्रतरूपी ग्रहसे आक्रांत सुन्दरी! देखनेके योग्य मनोज्ञ वस्तु न देखकर तू अपने नेत्रोंको धोखा दे रही है। अरी! तू बड़ी अभागिनी है। परपुरुषका मुख न देखनेका व्रत लेकर तू सब सुखोंको खो चुकी है। सखी! प्रसन्न हो, उठ और देख। यह रतिविहीन और मकरध्वजरहित स्वयं कामदेव आ रहा है। इसके श्वेत छत्रतले भ्रमर-समूहसे काले दीख रहे मस्तकपर अंधकार समझकर घुसी चंद्रकिरणोंके समुदायकी भाँति चमेलीके फूलोंका बना मोर दिखायी दे रहा है। यह उसके कपोलोंपर कर्णभूषणमें जटित मरकतमणिकी कुछ-कुछ श्याम आभा दीख रही है। उसे देखनेसे ऐसा लगता है कि जैसे उसने प्रफुल्लित शिरीष-कुसुमका कर्णफूल पहन रक्खा है। यह देख, हारमें जड़े पद्मरागमणिकी किरणोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लमाभाति । अयमस्य हारान्तर्निविष्टारुणमणिकिरणकलापच्छलेन हृदयं विविक्षुरभिनवयौवनराग इव वहिः परिस्फुरति । एतदनेन चामरकलापान्तरैरित इव वीक्षितम् । एतत्किमपि वैशम्पायनेन सह समामन्त्र्य दशनमयूखलेखाधवलीकृतदिक्चक्रवालं हसितम् । एषोऽस्य शुकपक्षतिहरितरागेणोत्तरीयांशुकप्रान्तेन बलाहकस्तुरगखुरचलनजन्मानं लग्नमग्रकेशेषु रेणुमपहरति । अयमनेन लक्ष्मीकरकमलकोमलतलः समुत्क्षिप्य तिर्यक्तुरङ्गमस्कन्धे निक्षिप्तश्चरणपल्लवः सलीलम् । अयमनेन च ताम्बूलयाचनार्थमुत्तानिततले दीर्घाङ्गुलिराताम्रपुष्करकोशशोभी गजेनेव शैवालकवलग्रासलालसः प्रसारितः करः । धन्या सा या लक्ष्मीरिव निर्जितकमलं करतलमस्य वसुन्धरासपत्नी ग्रहीष्यति । धन्या च देवी विलासवती सकलमहीमण्डलभारधारणक्षमः ककुभा दिग्गज इव गर्भेण यया व्यूढः । इत्येवंविधानि चान्यानि च वदन्तीनां तासामापीयमान इव लोचनपुटैः, आहूयमान इव भूषणरवैः, अनुगम्यमान इव हृदयैः,

---

बहाने जैसे नवयौवनका उल्लास उसके अन्तःकरणमें घुसनेके निमित्त मौका देखता हुआ बाहर चक्कर लगा रहा है। यह देखो, चलते हुए चमरोंके बीचसे वह इधर ही देख रहा है । वह देखो, वैशम्पायनसे कुछ बात करके अपनी दन्तकिरणोंको रेखासे सभी दिशाओंको प्रकाशित करता हुआ हँस रहा है । वह देखो, सेनापति बलाहक घोड़ोंके खुरसे उड़कर बालोंके अग्रभागपर पड़ी हुई धूलको अपने तोतेके पंख सरीखे हरे दुपट्टेकी कोरसे पोंछ रहा है । वह देखो, उसने लक्ष्मीके करकमल सदृश कोमल तलवाला पावँ उठाया और घोड़ेके कंधेपर आड़ा करके रख दिया । जैसे सेवारका ग्रास उठानेके लिए हाथी अपनी सूँड़ लम्बी करके फैलाता है, उसी प्रकार चंद्रापीडने ताम्बूल लेनेके लिए भावके साथ अपना लम्बी उँगलियोंवाला किंचित् रक्तकमलकोशसदृश सुन्दर हाथ फैलाया । धन्य वह पृथिवीकी सपत्नीस्वरूपा स्त्री होगी, जो कमलसे भी कोमल इसके हाथको लक्ष्मी बनकर ग्रहण करेगी। धन्य हैं रानी विलासवती, जिन्होंने दिशाओंकी तरह समस्त पृथिवीमंडलका भार वहन करनेवाले दिग्गजके समान वीर इस राजकुमारको अपनी कोखमें रक्खा। ऐसी-ऐसी बहुतेरी बातें करके वे रमणियाँ जैसे आँखोंसे उस चन्द्रापीडको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनुवध्यमान इवाभरणरत्नरश्मिरज्जुभिः, उपह्रियमाण इव नवयौवनः वलिभिः, शिथिलभुजलताविगलितधवलवलयनिकरे पदे पदे विवाहानल इव कुसुममिश्रैर्लाजाञ्जलिभिरवकीर्यमाणश्चन्द्रापीडो राजकुलसमीपमाससाद। क्रमेण च यामावस्थिताभिरनवरतकरटस्थलगलितमदमषीकरीभिरञ्जनगिरिमालामलिनाभिः कुञ्जरघटाभिरन्धकारितदिङ्मुखतया जलधरदिवसायमानमुद्दण्डधवलातपत्रसहस्रसंकटमनेकद्वीपान्तरागतदूतशतसंकुलं राजद्वारमासाद्य तुरङ्गमादवततार।

अवतीर्य च करतलेन करे वैशम्पायनमवलम्ब्य पुरः सविनयं प्रस्थितेन वलाहकेनोपदिश्यमानमार्गस्त्रिभुवनमिव पुञ्जीभूतम्, आगृहीतकनकवेत्रलतैः सितवारबाणैः सितकुसुमशेखरैः सितोष्णीषैः सितवेषपरिग्रहतया श्वेतद्वीपसंभवैरिव कृतयुगपुरुषैरिव महाप्रमाणैर्दिवानिशमालिखितैरिवो-

---

पीने लगीं, अपने आभूषणोंका झनकार करके जैसे उसे अपने पास बुलाने लगीं, हृदयसे जैसे उसका अनुसरण करने लगीं, आभूषणके रत्नोंकी किरण-रूपी रस्सीसे जैसे उसे बाँधने लगीं, अपने यौवनका उपहार दे-देकर जैसे उसकी पूजा करने लगीं और विवाहाग्निके निमित्त पुष्पमिश्रित लाजाञ्जलि-सदृश अपनी शिथिल भुजारूपिणी लताओंसे गिरे हुए श्वेत कंकणोंको जैसे पग-पगपर छितराने लगीं। इस प्रकार उन ललनाओं द्वारा समादृत होता हुआ चंद्रापीड धीरे-धीरे अपने राजमहलके समीप जा पहुँचा। वहाँ राजद्वार-पर गंडस्थलसे निरंतर बहते मद द्वारा काला कीचड़ करनेवाले एवं काले पहाड़ोंकी श्रेणी जैसे काले खम्भोंमें बँधे हुए हाथियोंसे जसे सभी दिशाओंके मुखपर अंधकार छाया हुआ था, जिससे वह स्थान बरसातके दिन जैसा दीख रहा था। डंडे ऊँचे करके उठे हुए हजारों छत्रोंसे वह सारा स्थान भर गया था और अनेक देशोंके राजदूत उपस्थित थे। वहाँ पहुँच जानेपर राजपुत्र चंद्रापीड घोड़ेसे उतर पड़ा।

घोड़ेसे उतरनेके बाद वह वैशम्पायनका हाथ थाम्हे हुए राजभवनमें प्रविष्ट हुआ। उस समय भी सेनापति बलाहक आगे-आगे चलता हुआ राह बता रहा था। वह राजमहल इतना विशाल था कि उसमें तीनों भुवन एकत्रित दिखायी दे रहे थे। उसके द्वारपर हाथमें सोनेकी छड़ी लिये सतयुगी मनुष्यों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्कीर्णैरिव तोरणस्तम्भनिषण्णैर्द्वारपालैरनुज्झितद्वारदेशम्, अनेकसंयव-वनचन्द्रशालाविटङ्कवेदिकासंकटशिखरैरभ्रंकषैरपहसितसितकैलासशोभैरमलसुधावदातैः सप्रालेयशैलेयमिव महाप्रासादैरनेकवातायनविवरविनिर्गतयुवतिकिरणसहस्रतया कनकशृङ्खलाजालकेनेवोपरि विस्तीर्णेन विराजमानम्, अन्तर्गतायुधनिवहाभिराशीविषकुलसंकुलाभिः पाताल-गुहाभिरिवातिगम्भीराभिरायुधशालाभिरुपेतम्, अबलाचरणालक्तकर-सरक्तमणिशकलैः शिखरनिलीनशिखिकुलकृतकेकारवकलकलैः क्रीडापर्व-तकैरुपशोभितम्, उज्ज्वलवर्णकम्बलावगुण्ठितकनकपर्याणाभिः प्रलम्ब-चामरकलापचुम्बितचलकर्णपल्लवाभिः कुलयुवतिभिरवोपरुद्धशिक्षाविन-

---

के समान बड़े-बड़े डील-डौलवाले द्वारपाल इस प्रकार निश्चलभावसे खड़े थे, जैसे वे मनुष्य न होकर लिखित या उत्कीर्णपुतले हों। उन सबके श्वेत कवच थे, श्वेत लेप उनके तनपर लगे थे, श्वेत पुष्पोंकी कलँगी थी और श्वेत ही साफा था। इस प्रकार उनका श्वेत वेष देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वे सब श्वेतद्वीपमें ही उत्पन्न हुए हों। वे लोग सदा तोरणस्तम्भके पास ही बैठे रहा करते थे। उस राजमहलके भीतर बने विशाल और उज्ज्वल प्रासादोंको देखकर ऐसा मालूम पड़ता था कि जैसे हिमालय पर्वत वहाँ ही विद्यमान है। उन प्रासादोंकी ऊँची छतोंपर चतुष्कोण कमरे, चन्द्रशाला (शिरोगृह), कबूतरोंके दरवे और बैठनेके लिए सुन्दर चौतरे बने हुए थे। वे अपनी ऊँचाईसे आकाशको चूमते थे और सौन्दर्यमें शुभ्र कैलासपर्वतकी ठठोली उड़ाते थे। उनपर स्वच्छ चूनेसे पुताई की हुई थी। उनकी खिड़कियोंसे युवतियोंके आभूषणोंकी सहस्रों किरणें निकलकर फैलती रहती थीं, जिन्हें देखकर ऐसा लगता था कि जैसे वहाँ सर्वत्र सोनेके तारोंका जाल बिछा दिया गया हो। उस राजभवनके अन्दर सर्पोंसे भरी पातालकन्दराके सदृश अतिशय गंभीर शस्त्रशालायें बनी थीं। उसमें बहुतेरे क्रीडापर्वत भी बने हुए थे। उनपर सुन्दरियोंके पाँवोंमें लगी महावरमें जैसे लाल पद्मरागमणिके टुकड़े जड़े हुए थे। इनके अतिरिक्त उनकी चोटियोंपर बैठे मयूर केकारवका मधुर निनाद करते रहते थे। उसके द्वारपर सुसज्जित हथिनियाँ खड़ी रहती थीं। उनकी पीठपर सोनेके तारसे काम किये हुए श्वेत झूल पड़े रहते थे। दोनों ओर लटकते हुए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यनिभृताभिर्यामकरेणुकाभिरशून्यकक्षान्तरम् , आलानस्तम्भनिषण्णेन च नवजलधरघोषगम्भीरमनुगतवीणावेणुरवरम्यमास्फालितघर्घरिकाघर्घरमनवरतसंगीतकमृदङ्गध्वनिमामीलितलोचनत्रिभागेन वामदशनकोटिनिषण्णहस्तेन निश्चलकर्णतालेनाकर्णयता सलीलमुभयपार्श्वावलम्बिवर्णकम्बलतया विन्ध्यगिरिणेवाविष्कृतधातुविचित्रितपक्षसंपुटेनाधोरणगीतानन्दकृतमन्द्रकण्ठगर्जितेन मदजलशबलशङ्खशोभितश्रवणपुटेन रजनिकरबिम्बचुम्बिसंवर्तकाम्बुदवृन्दविडम्बकेन कर्णावलम्बिना काञ्चनमयेन कृतकर्णपूरमिवाङ्कुशेन मुखमुद्वहता मदजलमलिनेन द्वितीयेनेव कर्णचामरेण कपोलतलदोलायमानेन मधुरकुलेनालंक्रियमाणेनात्युदग्रतया पूर्वकायस्य वामनतया च जघनभागस्य पातालादिवोत्तिष्ठता निशासम-

---

चमर नित्य उनके चंचल कर्णपल्लवोंका चूमा करते थे । कुलवन्ती स्त्रियोंके सदृश वे हथिनियाँ शिक्षा (संकेतका ज्ञान अथवा अध्यापनकार्य) तथा विनय (अधीनता अथवा विनम्रभाव) के कारण एक स्थानपर खड़ी रहती थीं । द्वारपर एक ओर गन्धमादन नामका मदवाही गजराज गजबन्धन स्तम्भके पास बैठा था । नवजलधरके गर्जन सदृश गम्भीर, वीणा-वेणुकी मधुर ध्वनिसे रमणीक, घर्घरिक (वाद्यविशेष) के निनादसे घर्घरित, निरन्तर चालू संगीत तथा मृदंगके शब्दको तनिक-सी आँख मूँद और सूँड़को बायें दाँतके अग्रभागपर रख तथा कानोंको निश्चल किये बड़ी मस्तीके साथ सुन रहा था । उसके दोनों ओर विविध रंगोंकी बनी झूल लटक रही थी । इस कारण वह नाना प्रकारकी धातुओंसे विचित्र पंखोंवाले विन्ध्यगिरि जैसा दीख रहा था । पीलवानका गीत सुनकर प्रसन्न होता हुआ वह अपने गंभीर कण्ठसे मन्द स्वरमें गर्जन करता चलता था । मदजलसे रंगे हुए चितकबरे शंख (गण्डस्थल) से उसके कान बहुत भले लगते थे । जिनकी अनुपम शोभासे वह चन्द्रबिम्बसे चुम्बित प्रलयकालीन मेघको भी लज्जित करता था । उसके कानपर स्वर्णनिर्मित अंकुश लटक रहा था, जिससे ऐसा लगता था कि मानो उसने कर्णफूल पहन लिया है । उसके गण्डस्थलके चारों ओर मँडराते हुए भौंरोंके झुण्ड ऐसे दीख रहे थे कि जैसे मदजलसे मलीन दूसरे कर्णचमर हों । उसके शरीरका पूर्वभाग बहुत ऊँचा और जघनप्रदेश नीचा था । इससे ऐसा लगता था कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

येनेव परिस्फुरत्सार्धचन्द्रनक्षत्रमालेन शरदारम्भेणेव प्रकटितारुणचारुपुष्करेण वामनरूपेणेव कृतत्रिपदीविलासेन स्फटिकगिरितटेनेव लग्नसिंहमुखप्रतिमेन प्रसाधितेनेवालोलकर्णपल्लवाहतमुखेन गन्धमादननाम्ना गन्धहस्तिना सनाथीकृतैकदेशम्, उज्ज्वलपट्टकम्बलपटप्रावारितपृष्ठैश्च रसितमधुरघण्टिकारवमुखरकण्ठैर्मञ्जिष्ठालोहितस्कन्धकेसरवालैर्वनगजरुधिरपाटलसटैरिव केसरिभिः पुरोनिहितयवसराशिशिखरोपविष्टमन्दुरापालैरासन्नमङ्गलगीतध्वनिदत्तकर्णैरन्तःकपोलधृतमधुरसरसलुलितलाज-

---

मानो वह अभी-अभी पाताल फोड़कर बाहर निकला हो। निशासमय (रात्रि) के समान वह अर्धचन्द्रयुक्त नक्षत्रगणसे विभूषित था (रात्रि आधे चन्द्रमा तथा नक्षत्रोंसे युक्त रहती है और उस हाथीने चाँद लगा हुआ हार पहन रक्खा था) शरदृतुके आरम्भकालकी तरह वह प्रकटित–अरुण–चारुपुष्कर था (शरदृतुके आरम्भमें सुन्दर-सुन्दर लाल कमल उत्पन्न होते हैं और उस हाथीकी सूँड़ बहुत सुन्दर तथा लाल थी)। वह गजराज वामनावतारकी तरह त्रिपदी-विलास था (वामनभगवान्‌ने अपने तीन पगोंसे त्रिभुवनको नापा था और वह हाथी पैरमें बँधी हुई त्रिपदी अर्थात् जंजीरसे खेलवाड़ करता था)। पर्वतकी स्फटिकमणिमयी तलैटीकी तरह लग्न-सिंहमुखप्रतिम था (स्फटिक-मणिमें वहाँके निवासी सिंहोंको अपना मुख दिखायी देता है और हाथीकी सूँड़पर सिंहका चित्र बना हुआ था)। अलंकृत पुरुषकी तरह चंचल कर्णपल्लव उसके मुखपर टकराया करते थे (अलंकृत पुरुषके मुखपर कर्णपल्लव लटका रहता है और उस हाथीके कानरूपी पल्लव मुखपर लटककर टकराते रहते थे)। उस राजद्वारपर अश्वशालासे लाये हुए राजाके प्रिय घोड़े खड़े थे। उनकी पीठ सफेद कम्बलसे ढँकी थी। घंटियोंके मधुर स्वरसे उनके कण्ठ मुखरित हो रहे थे। उनके सिरके बाल मानो मंजीठके रंगमें रंगे हुए थे, जिससे वे ऐसे दीख रहे थे कि मानों बनैले हाथियोंके रुधिरसे रंगे लाल सटावाले सिंह खड़े हों। उन घोड़ोंके सामने रक्खी हुई घासकी गठरियोंपर अश्वशालाके रक्षक बैठे थे। समीपसे आते हुए मंगलगीतके स्वरोंको वे घोड़े कान लगाकर बड़े प्रेमसे सुन रहे थे। मधुरसमें सने और भींगे चावलोंके ग्रास उनके मुखमें भरे हुए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कवलैर्भूपालवल्लभैर्मन्दुरागतैस्तुरङ्गमैरुद्भासितम्, अधिकरणमण्डपगतैश्चार्यवेषैरत्युच्चवेत्रासनोपविष्टैर्धर्ममयैरिव धर्माधिकारिभिर्महापुरुषैरधिष्ठितम्, अधिगतसकलग्रामनगरनामभिरेकभवनमिव जगदखिलमालोकयद्भिरालिखितसकलभुवनव्यापारतया धर्मराजनगरव्यतिकरमिव दर्शयद्भिरधिकरणलेखकैरालिख्यमानशासनसहस्रम्, अभ्यन्तरावस्थितनरपतिनिर्गमप्रतीक्षणपरेण च स्थानस्थानेषु बद्धमण्डलेन कनकमयार्धचन्द्रतारागणशवलचर्मफलकैर्निशासमयमिव दर्शयता स्फुरितनिशितकरवालकरप्ररोहकरालितातपेनैकश्रवणपुटघटितधवलदन्तपत्रेणोर्ध्वबद्धमौलिकलापेन धवलचन्दनस्थासकखचितभुजोरुदण्डेन बद्धासिधेनुकेनान्ध्रद्रविडसिंहलप्रायेण सेवकजनेनास्थानमण्डपगतेन च यथोचितासनोपविष्टेन प्रसारयता दुरोदरक्रीडामभ्यस्यताष्टाऽपदव्यापारमास्फालयता परिवादिनीमालिखता चित्रफलके भूमिपालप्रतिबिम्बमाबध्नता काव्य-

---

थे। न्यायालय (कचहरी) में बढ़िया पोशाकें पहने और बहुत ऊँची कुर्सियोंपर साक्षात् धर्मके मूर्तरूप बड़े-बड़े धर्माधिकारी (जज) विराजमान थे। सभी नगरों और गाँवोंका नाम याद रहनेके कारण समस्त संसारको एक ही घर जैसा देखते, समस्त भुवनमण्डलका कार्यकलाप लिखते रहनेके कारण जैसे धर्मराजके नगरसे भी सुन्दर कार्य प्रदर्शित करते हुए जजोंके लेखक (क्लर्क) वहाँपर हजारों आदेशपत्र लिख रहे थे। राजमहलके भीतर बैठे हुए राजाओंके बाहर आनेकी बाट जोहते हुए आन्ध्र-द्रविड़ तथा सिंहल आदि द्वीपोंके कई हजार सेवक जगह-जगह झुण्डके झुण्ड खड़े थे। वे लोग स्वर्णिम अर्धचन्द्र तथा बहुतेरे तारोंसे विचित्र दीखती गैंड़ेके चमड़ेकी ढालोंको धारण करके जैसे रात्रिकाल उपस्थित कर रहे थे। अपनी चमचमाती तलवारोंसे निकली हुई किरणको सूर्यके आतप (धूप) में मिलाकर जैसे उसकी तीक्ष्णताको वे और भी बढ़ा रहे थे। वे अपने एक-एक कानमें श्वेतदन्तपत्र (हाथीके दाँतका बना कुण्डल) पहने थे। उनके सिरपर ऊँचे साफे बँधे थे। सफेद चन्दनकाष्ठके बने आभूषण उनके भुजदण्डोंमें बँधे हुए थे और कमरमें बँधे छुरे लटक रहे थे। उस राजमहलके सभामण्डपमें यथोचित आसनोंपर हजारों तिलकधारी सामन्त राजे बैठे हुए थे। उनमेंसे कुछ राजे जुआ और कुछ शतरंज खेल रहे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गोष्ठीमातन्वता परिहासकथां विन्दता विन्दुमतीं चिन्तयता प्रहेलिकां भावयता नरपतिकृतकाव्यसुभाषितानि पठता द्विपदीं गृह्णता कविगुणानुत्किरता पत्रभंगानालपता वारविलासिनीजनमाकर्णयता वैतालिकगीतमनेकसहस्रसंख्येन धवलोष्णोषटपटाशिलष्टविकटकिरीटसंकटशिरसा सनिर्झरशिखरलग्नबालातपमण्डलेनेव कुलपर्वतचक्रवालेन मूर्धाभिषिक्तेन सामन्तलोकेनाधिष्ठितम्, आस्थानोत्थितभूमिपालसंवर्तितानां च कुथानां रत्नासनानां च राशिभिरनेकवर्णैरिन्द्रायुधपुञ्जैरिव विराजितसभापर्यन्तम्, अमलभूमिसंक्रान्तमुखनिवहप्रतिबिम्बतया विकचकमलपुष्पप्रकरमिव संपादयता गतिवशरणितनूपुरपारिहार्यरशनास्वनमुखरेण स्कन्धावसक्तकनकदण्डचामरेण निर्गच्छता प्रविशता चानवरतं वारविलासिनीजनेनाकुलितम्, एकदेशनिषण्णचामीकरश्रृंखलासंयतश्वगणम्, इतस्ततः प्रचलितपरिचितामितकस्तूरिकाकुरंगपरिमलवासितदि-

---

थे। कुछ वीणा बजाते और कुछ चित्रफलकपर राजा तारापीडका चित्र बना रहे थे। कुछ राजे काव्यालाप करते और कुछ परिहाससम्बन्धी कहानियाँ कह रहे थे। कुछ विन्दुमती (काव्यविशेष) की रचना करते और कुछ पहेली बूझबुझा रहे थे। कुछ राजा तारापीडके बनाये काव्यका मनन करते और कुछ दो पदोंमें बनी कविताका पाठ कर रहे थे। कुछ राजे कवियोंके गुणोंका बखान करते थे तो कुछ केतकीके पत्रका चित्र बना रहे थे। कुछ वेश्याओंके साथ बातें करते थे तो कुछ बन्दीजनोंके मुखसे गीत सुन रहे थे। उन लोगोंने अपने बड़े-बड़े मणिजटित मुकुटोंपर सफेद पगड़ीकी तह लपेट रक्खी थी। जिससे वे सनिर्झर शिखरपर बड़े बालातपमण्डलसम्पन्न कुलपर्वतके समूहसरीखे दीख रहे थे। उस सभामण्डपके एक कोनेमें राजसभासे राजाओंके उठ जानेपर तहाये हुए बहुतेरे गलीचे और रत्नजटित कुर्सियाँ रक्खी थीं, जो अनेक रंगोंवाले इन्द्रधनुष जैसी लगती थीं। निर्मल मणिभूमिपर पड़े मुखोंके प्रतिबिम्बसे जैसे कमलसमुदायको उत्पन्न करतीं, चलते समय झनझनाते पायल-कंकण और करधनीकी ध्वनि करतीं और कंधेपर स्वर्णदण्डके चमर रखकर बराबर आती-जाती हुई वेश्याओंसे सारा सभामण्डप खचाखच भर गया था। उसमें एक ओर सोनेकी जंजीरोंसे बँधे कुत्ते बैठे थे। कितने ही पालतू कस्तूरीमृग इधर-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ञ्जुखम्, अनेककुब्जकिरातवर्षवरबधिरवामनमूकसंकुलम्, उपाहृतकिन्नरमिथुनम्, आनीतवनमानुषम्, आबद्धमेषकुक्कुटकुररकपिञ्जललावकवर्तिकायुद्धम्, उत्कूजितचकोरकादम्बहारीतकोकिलम्, आलप्यमानशुकसारिकम्, इभपतिपरिमलामर्षजृम्भितैश्च निष्कूजद्भिः शिखरिणां जीवितैरिव गिरिगुहानिवासिभिर्गृहीतैः पञ्जरकेसरिभिरुद्भास्यमानम्, उत्त्रास्यमानैः काञ्चनभवनप्रभाजनितदावानलशंकैर्लोलतारकैर्भ्रमद्भिर्भवनहरिणकदम्बकैर्लोचनप्रभया शबलीकृतदिगन्तरम्, उद्दामकेकारवानुमीयमानमरकतकुट्टिमस्थितशिखण्डिमण्डलम्, अतिशिशिरचन्दनविटपिच्छायानिषण्णनिद्रायमाणगृहसारसम्, अन्तःपुरेण च बालिकाजनप्रस्तुतकन्दुकपञ्चालिकाक्रीडेनानवरतसंचाल्यमानदोलाशिखरक्वणितघंटाटङ्कारपूरिताशामुखेन भुजगनिर्मोकशङ्कितमयूरह्रियमाणहारेण सौधशिखरावतीर्णप्रचलितपारावतकुलतया स्थलोत्पलनीवनेनेवान्तःपुरिका-

---

उधर घूम रहे थे और उनकी सुगन्धिसे दसों दिशायें सुगन्धित हो रही थीं। वहाँपर बहुतेरे कुबड़े, नाटे, नपुंसक, बहरे, बौने और गूँगे भी थे। किन्नरदम्पती तथा वनमानुष लाकर वहाँ रक्खे गये थे। मेढ़ों, मुर्गों, कुररपक्षियों, कपिञ्जलों (चातकों), बया पक्षियों और कबूतरोंकी लड़ाईका कौतुक हो रहा था। चकोरोंका झुण्ड, कलहंस, हारीत और कोकिल कूक रहे थे। पींजरोंमें बन्द सिंह गजराजोंकी मदजनित सुगन्धिसे क्षुब्ध होकर भीषण गर्जन करते थे। पूर्वकालमें गिरिकन्दरानिवासी किन्तु अब पकड़कर पींजरोंमें बन्द सिंह उस राजमहलको शोभित कर रहे थे। उन स्वर्णनिर्मित दीवारोंकी दीप्तिको दावानल समझकर भयसे चपल नयनोंवाले वहाँ पले हुए मृगोंके नयनोंकी चमकसे सभी दिशायें अद्भुत दीख रही थीं। वहाँकी मरकतमणिमयी फर्शपर विचरते हुए मयूर अपनी बोलीसे ही पहचाने जाते थे। चन्दनवृक्षका बहुत ही ठंढी छायामें बैठे पालतू हंस ऊँघ रहे थे। उस राजमहलके अन्तःपुरमें बालिकायें गेंदों तथा गोटियोंके खेल खेल रही थीं। निरन्तर हिलते झूलेके ऊपर लगे घण्टोंके टंकार सब दिशाओंमें व्याप्त हो रहे थे। समान सफेदीसे साँपकी केंचुली समझकर हारको वहाँके मयूर खींच ले जाते थे। प्रासादोंसे नीचे उतरकर इधर-उधर विचरनेवाले कबूतरोंसे उनका भीतरी भाग ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनप्रस्तुतनरपतिचरितविडम्बनक्रीडेनाश्वमन्दुरापरिभ्रष्टागतैरवलुम्पभवन-दाडिमीफलैराखण्डितांगणसहकारपल्लवैरभिभूतकुब्जवामनकिरातकरत-लाच्छिन्नानि भूषणानि विकिरद्भिः कपिभिराकुलीभूतेन शुकसारिका-प्रकाशितसुरतविश्रम्भालापलज्जितावरोधजनेन प्रासादसोपानसमारोह-णचलितैरबलानां चरणावसक्तैर्मणिमयैः पदे पदे रणद्भिस्तुलाकोटिवलयै-र्द्विगुणीकृतकूजितरुताभिर्भवनहंसमालिकाभिर्धवलितांगणेन धृतधौतध-वलदुकूलोत्तरीयैः कलधौतदण्डावलम्बिभिः पलितपाण्डुरमौलिभिराधा-रमयैरिव मंगलमयैरिव गम्भीराकृतिभिः स्वभावधीरैरुष्णोपिपिभिर्वयःप-रिणामेऽपि जरत्सिंहैरिवापरित्यक्तसत्त्वावष्टम्भैः कञ्चुकिभिरधिष्ठितेन समुपेताभ्यन्तरम्, जलधरसनाथमिव कृष्णागुरुधूमपटलैः, सनीहार-

---

लगता था कि जैसे वह महल न होकर स्थलकमलिनीका वन हो। अन्तःपुरकी महिलायें राजा तारापीडके चरित्रका अनुकरण करती हुई अनेक खेल खेला करती थीं। अश्वशालामें पले बन्दर प्रायः वहाँ पहुँचकर सबको विकल कर देते थे। वे अनारोंके फल खा जाते, आँगनमें लगे आम्रवृक्षके पल्लव तोड़ डालते और कुबड़ों, बौनों तथा नाटे मनुष्योंके हाथसे आभूषण छीनकर जमीनपर बिखेर देते थे। वहाँकी शुक-सारिकाओंके मुखसे रातको होनेवाले भोग-विलास-की गुप्त बातोंको प्रकट होते देखकर अन्तःपुरकी सुन्दरियाँ लज्जित हो जाती थीं। उन प्रासादोंकी सीढ़ियोंपर चढ़ती हुई स्त्रियोंके पाँवोंके निरन्तर बजने-वाले मणिमय पायलों एवं कंकणोंके निनाद मिलनेसे जिनकी आवाज दूनी हो जाती थी, उन पालतू कलहंसोंके समुदायसे उन महलोंके आँगन सफेद दीखते थे। धुले हुए उज्ज्वल वस्त्र और दुपट्टा धारण किये, सिरपर साफा बाँधे, हाथमें सोनेकी छड़ी लिये, सफेद बालोंसे सफेद सिरवाले, जैसे वे आधार-मय मर्यादामय अथवा मंगलमय हों ऐसे गंभीर आकारवाले, धैर्यशाली प्रकृतिवाले और बुढ़ापा आ जानेपर भी वृद्ध सिंहसदृश सत्त्वका अवलम्बन न त्यागनेवाले कंचुकी वहाँ बराबर घूमते दिखायी देते थे (सिंह सत्त्वों अर्थात् पशुओंको पाकर नहीं छोड़ते और कंचुकी सत्त्व अर्थात् साहसका परित्याग नहीं करते थे)। वहाँ नित्य उड़नेवाले काले अगरके धुयेंके मेघ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिव यामकुञ्जरघटाकरसीकरैः, सनिशमिव तमालवीथिकान्धकारैः, सबा-लातपमिव रक्ताशोकैः, सतारागणमिव मुक्ताकलापैः, सवर्षासमयमिव धारागृहैः, सतडिल्लतमिव हेममयीभिर्मयूरयष्टिभिः, सगृहदैवतमिव शालभञ्जिकाभिः, शिवभवनमिव द्वारावस्थितदण्डपाणिप्रतीहारगणम्, उत्कृष्टकविगद्यमिव विविधवर्णश्रेणिप्रतिपाद्यमानाभिनवार्थसंचयम्, अप्सरोगणमिव प्रकटमनोरमारम्भम्, दिवसकरोदयमिवोल्लसत्पद्मा-करकमलामोदम्, उष्णकिरणमिव निजलक्ष्मीकृतकमलोपकारम्, नाटक-मिव पताकाङ्कशोभितम्, शोणितपुरमिव बाणयोग्यावासोपेतम्, पुरा-

---

छाये रहते थे। वहाँ नित्य तैयार खड़े हाथियोंकी सूँड़ोंसे उड़नेवाली जल-बिन्दुओंका कुहासा बना रहता था। तमालवृक्षोंकी झाड़ियोंके अन्धकारसे वहाँ सदा रात्रि बनी रहती थी। लाल-लाल अशोकवृक्षोंसे वहाँ नित्य बाल-सूर्य उदित दीखता था। वहाँके फौवारोंसे सदा वर्षाॠतु बनी रहती थी। मयूरोंको बैठनेके लिए वहाँ बहुतेरी सोनेकी डंडियाँ बनी थीं, जिनसे वह राजप्रासाद बिजलीकी लताओंसे अलंकृत दीख रहा था। वहाँकी अगणित पुतलियोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो स्वयं गृहदेवता वहाँ आ उपस्थित हुए हों। शिवजीके भवनसदृश उस राजप्रासादके द्वारपर हाथोंमें छड़ी लिये प्रतीहारगण (शिवगण अथवा द्वारपाल) सदा खड़े रहते थे। किसी बहुत उत्कृष्ट कवि द्वारा निर्मित गद्यकाव्यके समान वह प्रासाद विविध-वर्णश्रेणि-प्रतिपद्यमान-अभिनव-अर्थसंचय जैसा था (गद्यकाव्यमें विविध अक्षरोंके समवायसे नये-नये भाव व्यक्त होते हैं और राजभवनमें ब्राह्मणादि वर्णोंको बराबर द्रव्य मिलते रहते थे) अप्सराओंके समुदायकी तरह वह प्रकट मनोरमारम्भ था (अप्सराओंके समुदायमें रम्भा और मनोरमा थी, किन्तु राजप्रासादमें विविध प्रकारके मनोरम खेल आरंभ होते रहते थे)। सूर्योदयके समयकी तरह वहाँ पद्माकरसे सदा कमलकी सुगन्धि निकला करती थी। जिस प्रकार सूर्य अपने प्रकाशसे कमलोंको प्रकाशित करते हैं। उसी तरह वह राजप्रासाद अपनी अनुपम शोभासे राजलक्ष्मीका वृद्धिस्वरूप उपकार किया करता था। जैसे नाटकग्रन्थ पताकाङ्क द्वारा शोभित होता है, उसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णमिव विभागावस्थापितसकलभुवनकोशम्, संपूर्णचन्द्रोदयमिव मृदुकरसहस्रसंवर्धितरत्नालयम्, दिग्गजमिवाविच्छिन्नमहादानसंतानम्, ब्रह्माण्डमिव सकलजीवलोकव्यवहारकारणोत्पन्नहिरण्यगर्भम्, ईशानबाहुवनमिव महाभोगिमण्डलसहस्राधिष्ठितप्रकोष्ठम्, महाभारतमिवानन्तगीताकर्णनानन्दितनरम्, यदुवंशमिव कुलक्रमागतशूरभीमपुरुषोत्तमबलपरिपालितम्, व्याकरणमिव प्रथममध्यमोत्तमपुरुषविभक्तिस्थितानेकादेशकारकाख्यातसंप्रदानक्रियाऽव्ययप्रपञ्चसुस्थितम्, उदधिमिव

प्रकार वह राजप्रासाद भी पताकाओंसे सुशोभित था। शोणितपुरके समान वहाँ बाणके योग्य आवास था (शोणितपुरमें बाणासुरका घर था और उस राजप्रासादमें बाणादि शस्त्रास्त्र रखनेके स्थान थे)। जैसे पुराणोंमें सभी भुवनोंका वृत्तान्त वर्णित है, उसी प्रकार उस राजप्रासादमें समस्त विश्वका खजाना भरा हुआ था। जैसे पूर्णचन्द्रोदय अपनी मृदु किरणोंसे समुद्रको बढ़ाता है, उसी प्रकार उस राजप्रासादमें भी प्रजासे प्राप्त छोटे-छोटे करों द्वारा नित्य राज्यकोशकी वृद्धि होती रहती थी। जैसे दिग्गजोंकी विशाल मद-जलधारा निरन्तर बहती रहती है, उसी प्रकार उस राजभवनमें सर्वदा धनदान होता रहता था। जैसे ब्रह्माण्डमें प्राणियोंका व्यवहार निरूपण करनेके निमित्त हिरण्यगर्भ जायमान हुए थे, उसी प्रकार उस राजप्रासादमें भी लोगोंका न्याय करनेके अवसरपर फीसरूपमें प्राप्त धन एकत्रित हो गया था। शिवजीके भुजरूपी वनमें जैसे बड़े-बड़े फनवाले सर्प लिपटे रहते हैं। उसी प्रकार उस राजभवनमें बड़े-बड़े धनाढ्य निवास करते थे। जिस प्रकार महाभारतके महायुद्धमें भगवान् कृष्णके मुखसे गीता सुनकर अर्जुन आनन्दित हुए थे, उसी प्रकार उस राजप्रासादमें अनवरत गाये जानेवाले गीत सुनकर वहाँके लोग आनन्दित होते थे। जैसे यदुवंश कुलक्रमके अनुसार बड़े वीर और भयंकर रूपमें जायमान श्रीकृष्ण तथा बलराम द्वारा सुरक्षित था, उसी प्रकार वह राजभवन भी कुलक्रमागत वीर, भयंकर और उत्तम पुरुषोंके पराक्रम-से सुरक्षित था। जैसे व्याकरणशास्त्र प्रथम-मध्यम-उत्तम पुरुष, सुप-तिङ् आदि विभक्ति, प्रकृतिमें स्थित गम् अद् आदिके स्थानमें गच्छ-घस् आदि आदेश, षड्विध कर्ता आदि कारक, गच्छति-पश्यति प्रभृति आख्यात, सम्प्रदान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भयान्तःप्रविष्टसपक्षभूभृत्सहस्रसंकुलम्, उषानिरुद्धसमागममिव चित्रलेखादर्शितविचित्रसकलत्रिभुवनाकारम्, बलियज्ञमिव पुराणपुरुषवामनाधिष्ठिताभ्यन्तरम्, शुक्लपक्षप्रदोषमिव विततशशिकिरणकलापधवलाम्बरवितानम्, नरवाहनदत्तकथेवान्तःसंवर्धितप्रियदर्शनराजदारिकागन्धर्वदत्तोत्कण्ठम्, महातीर्थमिव सद्योऽनेकपुरुषप्राप्ताभिषेकफलम्, प्राग्वंशमिव नानासत्रपात्रसंकुलम्, निशासमयमिवानेकनक्षत्रमालालं-

---

अर्थात् चतुर्थी कारक, भू आदि धातु एवं उच्चैः नीचैः प्रभृति अव्ययके पदोंसे प्रसिद्धि प्राप्त करता है। उसी प्रकार वह राजभवन भी प्रथम, मध्यम तथा उत्तम श्रेणीके याचकोंको पहचाननेवाले बहुतेरे अधिकारी दानके लिए व्ययकी व्यवस्था करनेमें प्रसिद्ध थे। जैसे इन्द्रके हाथों पंख कटनेके भयसे भागकर मैनाक आदि हजारों पर्वत समुद्रमें छिप गये थे, उसी प्रकार उस राजभवनमें भी शत्रुओंसे भयभीत हजारों राजे अपने सहायकोंके साथ छिपे बैठे थे। उषा और अनिरुद्धके समागमके प्रसंगमें जैसे चित्रलेखाने समस्त त्रिलोकीके युवकोंका चित्र बनाकर उषाको दिखाया था, उसी प्रकार उस राजभवनमें भी चित्रकारोंने दीवारपर चित्र बनाकर त्रिभुवनका विचित्र आकार-प्रकार प्रदर्शित किया था। जैसे राजा बलिके यज्ञमें पुराणपुरुष वामनभगवान् उपस्थित थे, उसी प्रकार उस राजभवनमें भी अनेक वृद्ध और बौने पुरुष रहते थे। जैसे शुक्लपक्षकी रातमें चन्द्रमाकी खिली चन्द्रिकासे आकाश वितानका रूप धारण कर लेता है, उसी प्रकार उस राजभवनमें चन्द्रमाकी चाँदनी सदृश उज्ज्वल वितान (शामियाने) तने रहते थे। जैसे राजा नरवाहनदत्तकी कथामें सुना जाता है कि अन्तःपुरमें पली राजा सागरदत्तकी परम रूपवती पुत्री गन्धर्वदत्ताको नरवाहनदत्तका वियोग हो जानेपर उससे मिलनेकी उत्कण्ठा हुई थी, उसी प्रकार उस राजभवनमें पली बहुतेरी ऐसी सुन्दरी राजपुत्रियाँ थीं कि जिन्हें देखकर गन्धर्व भी उत्कण्ठित हो उठते थे। गंगादिक महातीर्थोंके समान वहाँ कितने ही लोगोंको अभिषेकका फल तत्काल मिल जाता था (तीर्थोंमें अभिषेक अर्थात् स्नान करनेसे लोगोको स्वर्गादि फल मिलते हैं और उस राजभवनमें जिसका अभिषेक होता, उसे राज्यप्राप्तिका फल मिलता था)। जैसे यज्ञशालामें विविध भाँतिके स्रुक्-स्रुवा आदि पात्र उपस्थित रहते हैं, उसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृतम्, प्रभातसमयमिव पूर्वदिग्भागरागानुमेयमित्रोदयम्, गंधिकभवनमिव स्नानधूपविलेपनवर्णकोज्ज्वलम्, ताम्बूलिकभवनमिव कृतलवलीलवङ्गैलाकङ्कोलपत्रसंचयम्, प्रथमवेश्यासमागममिवाविदितहृदयाभिप्रायचेष्टाविकारम्, कामुकजनमिव बहुचाटुसंलापसुभाषितरसास्वाददत्ततालशब्दम्, धूर्तमण्डलमिव दीयमानमणिशतसहस्रालंकरणकृतलेख्यपत्रसंचयम्, धर्मारम्भमिवाशेषजनमनःप्रह्लादनम्, महावनमिव श्वापदद्विजोपघुष्टम्, रामायणमिव कपिकथासमाकुलम्, माद्रीकुलमिव नकुला-

---

प्रकार उस राजभवनमें भी अगणित मद्यपात्र विद्यमान रहते थे। रात्रिके समयकी तरह वह राजभवन नक्षत्रमाला (अथवा मोतियोंके हार) से सुशोभित रहता था। जैसे प्रातःकालके समय पूर्वदिशामें लाली देखकर पहलेसे ही सूर्योदयका अनुमान कर लिया जाता है, उसी प्रकार उस राजभवनमें मित्रोंके प्रति राजा तारापीडकी प्रीति देखकर पहलेसे ही उनके अभ्युदयका अनुमान हो जाता था। सुगन्धित पदार्थ बेचनेवाले गंधीके घरकी तरह वह राजभवन भी स्नानोपयोगी वस्तुओं, धूप, उबटन तथा चन्दन आदि सामग्रियोंसे अलंकृत दीख रहा था। तमोलीके घरकी तरह वहाँ लवली (सुगन्धित लताविशेष) लौंग, इलायची, कंकोल और जायफल आदि पदार्थ एकत्रित रहते थे। वेश्याके प्रथमसमागमके समान वहाँवालोंकी चेष्टाओंसे उनके हार्दिक भावोंको नहीं जाना जा सकता था। कामी पुरुषोंके समान वहाँ मधुर सम्भाषण और सुभाषितरसके स्वादसे गद्‌गद होनेपर तालध्वनि की जाती थी। जैसे जुआड़ियोंकी मण्डलीमें हारे हुए व्यक्तिकी ओरसे देय द्रव्यके रूपमें सैकड़ों मणियों और हजारों अलंकारोंके लेख्यपत्र (दस्तावेज) लिखे जाते हैं, उसी प्रकार उस राजभवनमें रानियोंको पहननेके लिये दी जानेवाली सैकड़ों मणियों और हजारों अलंकारोंके लेख्यपत्र (तालिका अथवा सूची) लिखी जाती थी। धर्मकार्यके समान उस राजभवनके लोगोंका हृदय सदा प्रसन्न रहता था। महावनकी भाँति वहाँ नित्य बाघ आदि विविध पशुओं और द्विजों (पक्षियों अथवा ब्राह्मणों) का घोष सुनायी देता था। रामायणके समान वहाँ सर्वदा वानरोंकी कथा (बन्दरोंके किस्से अथवा हनुमान्‌जीकी कथा) होती रहती थी। माद्री अर्थात् महाराज पाण्डुकी छोटी रानीके कुलकी तरह वह राजभवन नकुल (युधिष्ठिरके छोटे भाई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लंकृतम्, संगीतभवनमिवानेकस्थानावस्थापितमृदङ्गम्, रघुकुलमिव भरतगुणानन्दितम्, ज्योतिषमिव ग्रहमोक्षकलाभागनिपुणम्, नारदीयमिव वर्ण्यमानराजधर्मम्, यन्त्रमिव विविधशब्दरसलब्धास्वादम्, मृदुकाव्यमिवान्यचिन्तितस्वभावाभिप्रायावेदकम्, महानदीप्रवाहमिव सर्वदुरितापहरम्, धनमिव न कस्यचिन्नाकांक्षणीयम्, संध्यासमयमिव दृश्यमानचन्द्रापीडोदयम्, नारायणवक्षःस्थलमिव श्रीरत्नप्रभाभासितदिगन्तम्, बलभद्रमिव कादम्बरीरसविशेषवर्णनाकुलमतिम्,

---

अथवा न्योले) से शोभित रहता था। संगीतालयके समान वहाँ स्थान-स्थानपर मृदङ्ग (अथवा मिट्टीके बने खिलौने) रक्खे हुए थे। रघुकुलकी तरह वहाँपर भरतके गुण (अथवा भरतमुनिकृत नाट्यशास्त्र) से सबको सुख मिलता था। जिस प्रकार ज्योतिषशास्त्र सूर्यके ग्रहण, मोक्ष, कला अर्थात् पाँच पलके समय और भाग अर्थात् पाँच दण्डके समयका प्रतिपादन करता है। उसी प्रकार उस राजभवनमें कितने ही ऐसे चतुर अधिकारी थे, जो दुष्टोंको पकड़ने और निरपराधियोंको छुड़ानेमें समर्थ थे। वे नृत्य-गीतादि कलाओं तथा द्रव्योंका शास्त्रानुसार विभाजन भी भली भाँति कर सकते थे। नारदपुराणकी भाँति वहाँ सदा राजधर्मका वर्णन हुआ करता था। वाद्ययन्त्रोंके समान उस राजभवनमें अनेक प्रकारके शब्दरसोंका माधुर्य व्याप्त रहता था। जैसे मृदु काव्य लोकोत्तर भावोंको प्रकट करता हुआ प्राकृतिक वर्णन करके आनन्द देता है, उसी प्रकार वह राजभवन असाधारण प्रकृति तथा भावको प्रकट करके सबको आनन्दित करता था। महानदीके बहावकी भाँति वह सबके दुरित (पाप अथवा दुराचार) को दूर करता था। धनकी तरह उस राजभवनसे कभी किसीको अनिच्छा नहीं होने आती थी। सन्ध्याकालकी तरह वहाँ चन्द्रापीड अर्थात् सन्ध्याके शिरोभूषणसदृश चन्द्रोदय अथवा राजकुमार चन्द्रापीडका अभ्युदय सुनाई देता था। जैसे भगवान् विष्णुका वक्षःस्थल लक्ष्मी तथा कौस्तुभ मणिकी दीप्तिसे दिशाओंको आलोकित करता है, उसी प्रकार वह राजभवन अगणित देदीप्यमान मणियोंकी प्रभासे सब दिशाओंको प्रकाशमान कर रहा था। श्रीकृष्णके भ्राता बलभद्रके समान वहाँ कादम्बरी (एक सुन्दरी कन्या अथवा मदिरा) के वर्णनसम्बन्धी विशेष रस लेनेमें लोगोंकी मति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ब्राह्मणमिव पद्मासनोपदेशदर्शितभूमण्डलम्, स्कन्धमिव शिखिक्रीडारम्भचञ्चलम्, कुलांगनाप्रचारमिव सर्वदोपजातशङ्कम्, वेश्याजनमिवोपचारचतुरम्, दुर्जनमिवापगतपरलोकभयम्, अन्त्यजजनमिवागम्यविषयाभिलाषम्, अगम्यविषयासक्तमपि प्रशंसनीयम, अन्तकभटगणमिव कृताकृतसुकृतविचारनिपुणम, सुकृतमिवादिमध्यावसानकल्याणकरम्, वासरारम्भमिव पद्मरागारुणीक्रियमाणनिशान्तम्, दिव्यमुनिगणमिव कलापिसनाथश्वेतकेतुशोभितम्, भारतसमरमिव कृतवर्मबाणचक्रसंभारभीषणम्, पातालमिव महाकञ्चुक्यध्यासितम्, वर्ष-

---

आकुल रहती थी। जैसे ब्राह्मण वेद (कमलासन ब्रह्मा) के कथनानुसार समस्त भूमण्डलका प्रतिपादन करता है, उसी प्रकार राजभवनमें पद्मासनका अभ्यास करनेके लिये एक विशेष कक्ष नियत था। स्वामिकार्तिकेयके समान वह राजभवन मयूरोंके नृत्यारम्भसे चंचल रहता था। कुलवंती नारीके आचरणके समान वहाँ सदा शंका (सन्देह अथवा सावधानी) बनी रहती थी। वह राजभवन वेश्याकी तरह सबका उपचार (खुशामद अथवा आतिथ्य-सत्कार) करनेमें निपुण था। दुर्जनोंके हृदयकी भाँति उसका परलोक (दूसरा लोक अथवा शत्रु) सम्बन्धी भय दूर हो गया था। चाण्डालादि अन्त्यज मनुष्योंके समान वह अगम्य विषयों (भोगके अयोग्य अथवा अप्राप्य देशों) का इच्छुक था। वह अगम्य विषय (अगम्य भोग अथवा अलभ्य प्रदेश) में आसक्त होता हुआ भी प्रशंसाके योग्य था। यमराजके दूतोंकी तरह वह किये गये भले-बुरे कार्योंका निर्णय करनेमें निपुण था। भले कार्यकी भाँति वह आदि-मध्य और अन्तमें कल्याणकारी था। जैसे दिनका आरम्भ अर्थात् प्रातःकाल कमलोंकी लालिमासे लाल हो जाता है, उसी तरह उस राजप्रासादके सभी महल पद्मरागमणिकी पच्चीकारी किये रहनेके कारण लाल थे। जैसे वसिष्ठादि दिव्य मुनिगण कलापी और श्वेतकेतु मुनिसे मिलकर शोभित हुए थे, उसी प्रकार वह राजभवन दिव्य मयूरचित्रित पताकाओंसे सुशोभित था। जैसे कौरवों और पाण्डवोंका भारतयुद्ध कृतवर्माके बाण तथा चक्रसमूहसे भयंकर हो उठा था, उसी प्रकार वह राजभवन भी वर्म (कवच), बाण तथा चक्रके विशाल संग्रहसे भीषण हो रहा था। पाताललोकके समान उस राज-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पर्वतसमूहमिवान्तःस्थितापरिमितशृङ्गिहेमकूटम्, महाद्वारमपि दुष्प्रवेशम्, अवन्तिविषयगतमपि मागधजनाधिष्ठितम्, स्फीतमपि भ्रमन्नग्नलोकं राजकुलं विवेश।

ससंभ्रमोपगतैश्च कृतप्रणामैः प्रतीहारमण्डलैरुपदिश्यमानमार्गः, सर्वतः प्रचलितेन च पूर्वकृतावस्थानेन दूरपर्यस्तमौलिशिथिलितचूडामणिमरीचिचुम्बितवसुधातलेन राजलोकेन प्रत्येकशः प्रतीहारनिवेद्यमानेन सादरं प्रणम्यमानः, पदे पदे चाभ्यन्तरविनिर्गताभिराचारकुशलाभिरन्तःपुरवृद्धाभिः क्रियमाणावतरणमंगलः, भुवनान्तराणीव विविधप्राणिसहस्रसंकुलानि सप्तकक्षान्तराण्यतिक्रम्याभ्यन्तरावस्थितम्,

---

भवनमें हजारों महाकंचुकियों (बड़े-बड़े सर्पों अथवा रनिवासमें रहनेवाले बड़े-बड़े वृद्ध ब्राह्मणों) का आवास था। जैसे हिमालय आदि वर्षपर्वतोंके मध्यमें बड़े उच्च शिखरवाले शृङ्गी और हेमकूट ये दो पर्वत हैं, उसी प्रकार राजभवन में बड़ी-बड़ी सींगोंवाले गौ आदि पशु तथा सुवर्णके ढेर विद्यमान थे। यद्यपि उसमें बहुत बड़े-बड़े द्वार थे, तथापि प्रवेश पाना कठिन था। यद्यपि वह राजभवन अवन्ती (मालवा) प्रदेशमें था, फिर भी उसमें अधिकांश मागध (मगधदेशीय अथवा बन्दीजन) लोग रहा करते थे। भलीभाँति समृद्ध होनेपर भी उसमें बहुतेरे नग्न (नंगे अथवा जैनी साधु) लोग घूमते रहते थे। ऐसे सुसम्पन्न राजकुलमें चन्द्रापीड प्रविष्ट हुआ।

राजकुमार चन्द्रापीडके उस राजमहलमें प्रविष्ट हो जानेपर द्वारपालगण शीघ्र आ पहुँचे और प्रणाम करनेके पश्चात् उसे मार्ग दिखाने लगे। अनेक देशोंसे आये हुए राजे चन्द्रापीडके आगमनकी प्रतीक्षामें पहलेसे ही वहाँ एकत्र थे। अब वे एक-एक करके आदरपूर्वक उसे प्रणाम करने लगे। दूरसे मस्तक झुकानेके कारण उनकी चूडामणियाँ ढीली पड़ गयीं और उनकी किरणें धरतीको चूमने लगीं। राज्यका एक अधिकारी पास ही खड़ा होकर उनके नाम-ग्रामका परिचय देने लगा। उसी समय देशाचार तथा कुलाचार जाननेवाली बहुतेरी वृद्धा स्त्रियाँ अन्तःपुरसे बाहर आयीं और उसके सवारीसे उतरनेके समय किये जानेवाले मङ्गलाचार करने लगीं। तदनन्तर चन्द्रापीड आगे बढ़कर सप्तभुवनान्तरोंके समान हजारों प्राणियोंसे भरी सात कक्षायें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनवरतशस्त्रग्रहणश्यामिकालीढकरतलैः करचरणलोचनवर्जमसितलोहजालकावृतशरीरैरालानस्तम्भैरिव गजमदपरिमललोभनिरन्तरनिलीनमधुकरपटलजटिलैः कुलक्रमागतैरुदात्तान्वयैरनुरक्तैर्महाप्राणतयातिकर्कशतया च दानवैरिवाशयाकारसंभाव्यमानपराक्रमैः सर्वतः शरीररक्षाधिकारनियुक्तैः पुरुषैः परिवृतम्, उभयतो वारविलासिनीभिश्चानवरतमुद्धूयमानधवलचामरम्, अमलपुलिनतलशोभिनि सुरकुञ्जरमिव मन्दाकिनीवारिणि हंसधवलशयनतले निषण्णं पितरमपश्यत्। आलोकयेति च प्रतीहारवचनानन्तरमतिदूरावनतेन चलितचूडामणिना शिरसा कृतप्रणाममेह्येहीत्यभिदधानो दूरादेव प्रसारितभुजयुगलः शयनतलादीषदुल्लसितमूर्तिरानन्दजलपूर्यमाणलोचनः समुद्गतपुलकतया सीव्य-

---

(ड्योढ़ियाँ) लाँघकर भीतर हंससदृश शुभ्र पलंगपर बैठे अपने पिताको देखा। उसकी शरीररक्षाके लिए उसके चारों ओर वंशपरम्परागत, सत्कुलोत्पन्न तथा उस राजापर प्रेम रखनेवाले अनेक अधिकारी उपस्थित थे। निरन्तर शस्त्र ग्रहण करनेके कारण उनकी हथेलियाँ कालीं पड़ गयी थीं। हाथ-पैर और नेत्रोंको छोड़कर उनका सारा शरीर लोहेके काले कवचसे ढँका रहता था। उन्हें इस रूपमें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वे मनुष्य न होकर हाथीके मदकी सुगन्धिके लोभवश सदा चिपके रहनेवाले भ्रमरोंसे युक्त हाथी बाँधनेके खम्भे हों। महावीरता और अतिशय कर्कशताके कारण वे दानवों जैसे भीषण दीखते थे। उनका आकार देखकर ही ज्ञात हो जाता था कि वे असाधारण पराक्रमी होंगे। दोनों ओर खड़ी वेश्यायें राजाके ऊपर चमर डुला रही थीं। राजाकी इन साज-सज्जाओंको देखकर ऐसा लगता था कि जैसे निर्मल पुलिन (तट) से सुशोभित आकाशगंगाके जलमें गजराज ऐरावत जलविहार कर रहा है। साथवाले प्रतीहारीके 'देखिए' कहते ही चन्द्रापीडने मस्तकको बहुत नीचे नवाकर पिताको प्रणाम किया। ऐसा करनेसे उसका चूडामणि विचलित हो गया। तभी 'आओ-आओ' कहते हुए राजाने दूरसे ही भुजायें फैला और पलंगसे शरीरको कुछ ऊँचे उठाकर अपने विनम्र पुत्रको छातीसे लगाकर आलिंगन किया। उस समय राजा तारापीडके नेत्र आनन्दके आसुओंसे तर थे। समस्त शरीरमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्निवैकीकुर्वन्निव पिबन्निव तं पिता विनयावनतमालिलिङ्ग । आलिङ्गितोन्मुक्तश्च पितुश्चरणपीठसमीपे पिण्डीकृतमुत्तरीयमात्मताम्बूलकरङ्कवाहिन्या सत्वरमासनीकृतमपनयेति शनैर्वदन्नग्रचरणेन समुत्सार्य चन्द्रापीडः क्षितितल एव निषसाद । अनन्तरं निहिते चास्यासने राज्ञा सुतनिर्विशेषमुपगूढो वैशम्पायनो न्यषीदत् ।

मुहूर्तमिव विस्मृतचामरोत्क्षेपनिश्चलानां वारविलासिनीनां साभिलाषैरनिलचलितकुवलयदामदीर्घैराजिह्मतरलतारसारैरवलुप्यमान इव दृष्टिपातैः स्थित्वा 'गच्छ वत्स, पुत्रवत्सलां मातरमभिवाद्य दर्शनलालसां यथाक्रमं सर्वा जननीर्दर्शनेनानन्दय' इति विसर्जितः पित्रा सविनयमुत्थाय निवारितपरिजनो वैशम्पायनद्वितयोऽन्तःपुरप्रवेशयोग्येन राजपरिजनेनोपदिश्यमानवर्त्मान्तःपुरमाययौ

रोमांच हो आया था । उस समय उसका प्रेमातिरेक देखकर ऐसा लगता था कि जैसे वह चन्द्रापीडको अपनी छातीमें चिपकाकर सो रहा हो, गाढ़ आलिंगन द्वारा दुविधा मिटाकर दोसे एक हो रहा हो या कि अपनी स्नेहभरी दृष्टिसे उसे पिये ले रहा हो । इस प्रकार बड़ी देरतक आलिंगन करनेके बाद महाराजने जब छोड़ा, तब महाराजकी ताम्बूलवाहिनी दासीने अपनी ओढ़नी चौपरत करके बैठनेके लिए आसन बना दिया । चन्द्रापीडने धीरेसे कहा—'इसे हटा ले'। इसके बाद उसने अपने नंगे पैरसे ओढ़नी हटा दी और जमीनपर ही बैठ गया। तदनन्तर चन्द्रापीडको बैठनेके लिए जो आसन रक्खा हुआ था, उसपर राजाके द्वारा पुत्रके समान आलिंगित होकर वैशम्पायन बैठा ।

उस समय चमर चलाना भूलकर निश्चल खड़ी वेश्यायें वायुसे कम्पित कमलदलकी मालाओंके सदृश बड़ी-बड़ी और टेढ़ी पुतलियोंसे विचित्र दीखते अभिलाषायुक्त नयनोंके कटाक्ष चन्द्रापीडपर फेंकने लगीं । थोड़ी देर बैठनेके बाद राजाने कहा—'जाओ वत्स ! अपनी पुत्रवत्सला माताको प्रणाम करके तुम्हें देखनेके लिए लालायित अन्यान्य माताओंको भी क्रमशः आनन्दित करो ।' इस प्रकार पितासे विदा पाकर वह विनीत भावसे उठा और निजी परिजनोंको लौटाकर अकेले वैशम्पायनके साथ राजपरिजनों द्वारा प्रदर्शित मार्गसे अन्तःपुरमें जा पहुँचा ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्र धवलकञ्चुकावच्छन्नशरीरैरनेकशतसंख्यैः श्रियमिव क्षीरोदकल्लोलैः समन्तात्परिवृता शुद्धान्तवंशिकैः, अतिप्रशान्ताकाराभिश्च कषायरक्ताम्बरधारिणीभिः संध्याभिरिव सकललोकवन्द्याभिः प्रलम्बश्रवणपाशाभिर्विदितानेककथावृत्तान्ताभिर्भूतपूर्वाः पुण्याः कथाः कथयन्तीभिरितिहासान्वाचयन्तीभिः पुस्तकानन्दधतीभिर्धर्मोपदेशान्निवेदयन्तीभिः जरत्प्रव्रजिताभिर्विनोद्यमानाम्, उपरचितस्त्रीवेषभाषेण गृहीतविकटप्रसाधनेन वर्षवरजनेनोपसेव्यमानाम्, अनवरताभिधूयमानवालव्यजनकलापाम्, अङ्गनाजनेन च वसनाभरणकुसुमपटवासताम्बूलतालवृन्ताङ्गरागभृङ्गारधारिणा मण्डलोपविष्टेनोपास्यमानाम्, पयोधरावलम्बिमुक्तागुणाम्, अचलमध्यस्रवद्गङ्गाप्रवाहमिव मेदिनीम्, आसन्नदर्पणपतितमुखप्रतिबिम्बाम्, अर्कबिम्बप्रविष्टशशिमण्डलामिव दिवं समुपसृत्य मातरं प्रणनाम। सा तु तं ससंभ्रमुत्थाप्य सत्यप्याज्ञासंपादनदक्षे

वहाँ राजकुमार चन्द्रापीडने माताके पास जाकर प्रणाम किया। उस समय श्वेत चोली पहले अन्तःपुरकी हजारों सेविकाओंके मध्यमें बैठी हुई माता विलासवती क्षीरसागरकी लहरियोंसे परिवृत लक्ष्मीके सदृश दीख रही थी। शुद्ध वंशमें उत्पन्न, अतिशय शान्त आकारवाली, जोगिया वस्त्र पहने, संध्यासदृश सबकी वन्दनीया, बड़े-बड़े कानोंवाली, अनेक प्रकारकी घटित घटनाओंका वृत्तान्त तथा पौराणिक कथाओंको कहती, इतिहास बाँचती और पुस्तकें लिये धर्मोपदेश करती हुई कितनी ही वृद्धा सन्यासिनियाँ उसका मनोविनोद कर रही थीं। स्त्रीवेषधारी और स्त्रियों जैसी ही वाणी बोलनेवाले हीजड़े विकट आकार-प्रकारके आभूषण पहनकर उसकी सेवा कर रहे थे। बराबर उसपर पंखे झले जा रहे थे। वस्त्र, आभूषण, फूल, कपड़े, सुगन्धित करनेकी सामग्री, पान, पंखे, उबटन और झारियाँ लेकर उपस्थित स्त्रियोंका विशाल समुदाय मंडल बनाकर बैठा उनकी सेवा कर रहा था। स्तनोंपर मोतियोंका हार लटक रहा था। जिससे वह दो पर्वतोंके बीचसे होकर बहनेवाले गंगाजीके बहावसे युक्त पृथिवी जैसी शोभित हो रही थी। पास ही रक्खे दर्पणमें उसके मुखका प्रतिबिम्ब दिखायी दे रहा था। जिससे ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो सूर्यमण्डलमें चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब झलक रहा है। उसे देखते ही रानी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri Gyaan Kosha

पार्श्वपरिवर्तिनि परिजने स्वयमेव कृतावतरणका प्रस्नुतपयोधरक्षरत्पयोबिन्दुच्छलेन द्रवीभूय स्नेहाकुलेन निर्गच्छतेव हृदयेनान्तःशुभशतानीव ध्यायन्ती मूर्धन्युपाघ्राय तं सुचिरमाशिश्लेष। अनन्तरं च तथैव कृतयथोचितसमुपचारमाश्लिष्टवैशम्पायना स्वयमुपविश्य विनयादवनितले समुपविशन्तमाकृष्य बलादनिच्छन्तमपि चन्द्रापीडमुत्सङ्गमारोपितवती। ससंभ्रमपरिजनोपनीतायामासन्द्यामुपविष्टे च वैशम्पायने चन्द्रापीडं पुनःपुनरालिङ्ग्य ललाटदेशे वक्षसि भुजशिखरयोश्च मुहुर्मुहुः करतलेन परामृशन्ती विलासवती तमवादीत्—'वत्स, कठिनहृदयस्ते पिता येनेयमाकृतिरीदृशी त्रिभुवनलालनीया क्लेशमतिमहान्तमियन्तं कालं लम्भिता। कथमसि सोढवानतिदीर्घामिमां गुरुजनयन्त्रणाम। अहो, बालस्यापि सतः कठोरस्येव ते महद्धैर्यम्। अहो, विगलितशिशुजनक्रीडा-

---

विलासवती उठ खड़ी हुई और बहुतेरे परिजनोंके रहते हुए भी उसने स्वयं उसके आगमनका मंगलाचार किया। चिरकाल बाद अपने पुत्रको समक्ष उपस्थित देखकर उसके स्तनोंमें दूधकी धारा उमड़ पड़ी। वह दुग्धधारा देखकर ऐसा लगता था कि जैसे उसके हृदयका स्नेह ही द्रवित होकर बाहर निकल आया है। ऐसे प्रेमार्द्र हृदयसे उसके लिए हजारों कल्याणोंकी कामना करती हुई रानीने उसका माथा सूँघा और वह बहुत देरतक उसे अपनी छातीसे चिपकाये रही। तदनन्तर उसने वैशम्पायनका भी उसी प्रकार यथायोग्य उपचार करके आलिंगन किया और आसनपर बैठ गयी। विनम्रभावसे जमीनपर बैठते हुए चन्द्रापीडको खींचकर उसने अपनी गोदमें बैठा लिया। यद्यपि वह ऐसा नहीं चाहता था। उसी समय दासियाँ दौड़कर गयीं और वैशम्पायनके लिए एक बेंतकी कुर्सी उठा लायीं। जब वैशम्पायन उसपर बैठ गया। तब चन्द्रापीडको पुनः पुनः छातीसे लगाकर उसके मस्तक, हृदय और कंधोंपर बार-बार हाथ फेरती हुई विलासवतीने कहा—'वत्स! तुम्हारे पिताजीका हृदय कितना कठोर है, जो उन्होंने ऐसी समस्त त्रिलोकी द्वारा लालनीय आकृतिको इतने लम्बे समय तक ऐसा महान् क्लेश सहवाया। इतनी बड़ी अवधि तक तुम गुरुजनोंका कठोर नियंत्रण कैसे सह सके होगे? अहो! यद्यपि तुम बालक हो, फिर भी तुममें प्रौढ़ों जैसा महान् धैर्य है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कौतुकलाघवमर्भके ते हृदयम्। अहो! गुरुजनस्योपरि भक्तिरसाधारणा सर्वा। यथा पितुः प्रसादात्समस्ताभिरुपेतो विद्याभिरालोकितोऽस्येवमचिरेणैव कालेनानुरूपाभिर्वधूभिरुपेतमालोकयिष्यामि' इत्येवमभिधाय लज्जास्मितावनतमात्ममुखप्रतिबिम्बगर्भे विकचकमलकृतकर्णपल्लवावतंस इव कपोले पर्यचुम्बदेनम्। एवं च तत्रापि नातिचिरमेव स्थित्वा क्रमेण सर्वान्तःपुराणि दर्शनेनानन्दयामास। निर्गत्य च राजकुलद्वारा बहिःस्थितमिन्द्रायुधमारुह्य तथैव तेन राजपुत्रलोकेनानुगम्यमानः शुकनासं द्रष्टुमयासीत्।

यामावस्थितविविधगजघटासंकटम्, अनेकतुरङ्गसहस्रसंबाधम्, अपरिमितजनसमूहसहस्रसंमर्दसंकुलम्, एकदेशोपविष्टैः सहस्रशो निबद्धचक्रवालैरनेककार्यागतैर्दर्शनोत्सुकैः समन्ततो विविधशास्त्राञ्जनोन्मीलितप्रतिभैश्चीवरच्छद्मना विनयानुरागिभिर्धर्मपटैरिवावगुण्ठितैः शाक्य-

---

अहो! तुम्हारे हृदयने बाल्यकालमें ही शिशुक्रीड़ाकी उत्कण्ठा त्याग दी। अहो! गुरुजनोंपर तुम्हारी असाधारण श्रद्धा है। तुम्हारे पिताकी कृपासे जैसे आज मैं तुम्हें सब विद्याओंमें पारंगत होकर सम्मुख उपस्थित देख रही हूँ, उसी प्रकार मैं शीघ्र अनुरूप बहुओंके साथ भी तुमको देखूँगी।' ऐसा कहकर रानीने लज्जा और मुस्कुराहटसे अवनत चन्द्रापीडका कपोल चूम लिया। उस कपोलपर रानीका प्रतिबिम्ब पड़ा तो ऐसा दीखने लगा कि जैसे राजकुमारके कानोंका विकसित कमलरचित कर्णाभरण देदीप्यमान हो रहा हो। इस प्रकार कुछ देर माताके पास रहनेके बाद चन्द्रापीडने क्रमशः अन्तःपुरकी सभी रानियोंको दर्शन देकर आनन्दित किया। तदनन्तर वहाँसे बाहर आकर राजद्वारपर खड़े इन्द्रायुधपर सवार हुआ और पहलेकी तरह अन्यान्य राजकुमारोंके साथ महामंत्री शुकनाशके दर्शनार्थ चल पड़ा।

थोड़ी ही देरमें वह शुकनासके भवनद्वारपर जा पहुँचा। वहाँपर हाथियोंके जमावड़ेकी जैसे घटा छायी हुई थी। कई हजार घोड़े खड़े थे। अगणित मनुष्योंकी अपार भीड़ लगी हुई थी। एक तरफ नाना प्रकारके कामोंसे आये हुए दर्शनोत्सुक, विविध शास्त्रोंका स्वाध्याय करनेसे विकसित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुनिशासनपथधौरेयै रक्तपटैः पाशुपतैर्द्विजैश्च दिवानिशमासेव्यमानम्, अभ्यन्तरप्रविष्टानां च सामन्तानां जघनोपविष्टपुरुषोत्सङ्गावस्थितद्विगुणकुथाभिरतिचिरावस्थाननिर्वेदप्रसुप्ताधोरणाभिरपर्याणाभिः सपर्याणाभिश्च निश्चलावस्थानप्रचलायिताभिः शतसहस्रशः करिणीभिराकीर्णं शुकनासगृहद्वारमासाद्य सत्वरप्रधावितैर्द्वारदेशावस्थितैः प्रतीहारपुरुषैरनिवार्यमाणोऽपि राजपुत्रो बाह्याङ्गण एव तुरगादवततार ।

द्वारदेशावस्थापितुतरङ्गश्च वैशम्पायनमवलम्ब्य पुरःप्रधावितैः समुत्सारितपरिजनैस्तत्प्रतीहारमण्डलैरुपदिश्यमानमार्गस्तथैव चलितमुकुटकोटिभिर्नरेन्द्रवृन्दैः सेवासमुपस्थितैरुत्थायोत्थाय प्रणम्यमानस्तथैव च प्रचण्डप्रतीहारहुंकारभयमूकीभवत्परिजनानि प्रचलितवेत्रलताचकित-

---

प्रतिभासम्पन्न, गेरुए वस्त्रके बहाने विनय और अनुराग प्रदर्शित करते हुए लोग मानो धर्मपटसे आच्छादित हों । बौद्धधर्मके मुख्य-मुख्य अनुयायी लाल वस्त्र धारण किये हुए थे । शैवमतानुयायी ब्राह्मणोंकी एक बहुत बड़ी मंडली रात-दिन मंत्री शुकनासकी सेवामें उपस्थित रहती थी । भीतर मिलनेके लिए गये हुए सामंतोंकी हजारों हथिनियाँ वहाँ खड़ी थीं । दोहरी करके लपेटी हुई झूल गोदमें लेकर हाथीवान उन हथिनियोंकी जाँघोंपर बैठे हुए थे । बड़ी देरतक प्रतीक्षा करते-करते थककर महावत ऊँघ रहे थे । उन हथिनियोंकी पीठपर गद्दी पड़ी हुई थी और बहुत देरतक निश्चलभावसे खड़ी रहनेसे ऊबकर वे टहलने लगीं थीं । इस प्रकार महामात्य शुकनासके द्वारपर पहुँचकर मर्यादाका पालन करता हुआ चन्द्रापीड घोड़ेसे उतर पड़ा । यद्यपि द्वारपर खड़े द्वारपालोंने उसे ऐसा करनेके लिए कहा नहीं था । फिर भी उसने राजकुलकी परम्परा निभायी ।

तदनन्तर उसने घोड़ेको द्वारपर ही छोड़ दिया और वैशम्पायनका हाथ पकड़कर राजभवनके ही समान भव्य महामंत्री शुकनासके भवनमें प्रविष्ट हुआ। उसे देखते ही प्रतीहारगण दौड़ पड़े। वे परिजनोंको हटाकर रास्ता बनाने लगे। सेवाके लिए एकत्रित तथा चलायमान मुकुटोंवाले राजे उठकर चन्द्रापीडको प्रणाम करने लगे। अब चन्द्रापीड पहलेके समान उस महलके एकके बाद एक कक्षको देखता हुआ आगे बढ़ा । उन सभी स्थानोंपर द्वारपालोंके प्रबल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सामन्तचक्रचरणशतचलितवसुन्धराणि कक्षान्तराणि निरीक्षमाणस्तथैव च नवनवसुधावदातप्रासादनिरन्तरं द्वितीयमिव राजकुलं शुकनासभवनं विवेश। प्रविश्य चानेकनरेन्द्रसहस्रमध्योपस्थितमपरमिव पितरमुपदर्शितविनयो दूरावनतेन मौलिना शुकनासं ववन्दे। शुकनासस्तं ससंभ्रमं समुत्थायानुपूर्व्येणोत्थितराजलोकः सादरमभिमुखदत्ताविरलपदः प्रहर्षविस्फारितविलोचनागतानन्दजलकणः समं वैशम्पायनेन प्रेम्णा गाढमालिलिङ्ग। आलिंगितोन्मुक्तश्च सादरोपनीतमपहाय रत्नासनमवनावेव राजपुत्रः समुपाविशत्। तदनु च वैशम्पायनः। उपविष्टे च राजपुत्रे शुकनासवर्जमन्यदखिलमवनिपालचक्रमुज्झितनिजासनमवनितलमभजत। स्थित्वा च तूष्णीं क्षणमिव शुकनासः समुद्गतप्रीतिपुलकैरङ्गैरावेद्यमानहर्षप्रकर्षस्तमब्रवीत्—'तात, अद्य खलु देवस्य तारापीडस्य समाप्तविद्यमुपारूढयौवनमालोक्य भवन्तं सुचिराद्भुवनराज्यफलप्राप्तिरुप-

---

हुंकारसे भयभीत परिजन चुप खड़े थे। बेंतकी छड़ियोंके सतत संचालन होते रहनेके कारण चकित सामन्तगण धीरे-धीरे खिसकने लगे। उनके सैकड़ों पैर एक साथ पड़नेसे जैसे वहाँकी भूमि काँपने लगी। वह भवन भी दूसरे राजभवन जैसा ही सुन्दर था। उसके भीतर भी नये चूनेसे पुते हुए हजारों प्रासाद विद्यमान थे। उसके भीतर जाकर उसने कई हजार राजाओंके मध्यमें बैठे दूसरे पिताके समान आदरणीय महामंत्री शुकनासको दूरसे ही मस्तक झुकाकर सविनय प्रणाम किया। चन्द्रापीडको देखकर वहाँ उपस्थित सभी राजे उठ खड़े हुए। शुकनास भी तुरन्त उठकर कई पग आगे आया और हर्षसे प्रफुल्लित नयनोंमें आनन्दके आँसू भरकर चन्द्रापीड तथा वैशम्पायनको अति प्रेमपूर्वक अपने हृदयसे लगाकर गाढ़ आलिंगन किया। बड़ी देर तक चिपके रहनेके बाद वे जब अलग हुए, तब एक सेवक उसके लिए एक रत्नजटित आसन ले आया। किन्तु उसे अलग हटाकर चन्द्रापीड जमीनपर ही बैठा और उसके साथ ही वैशम्पायन भी बैठ गया। राजकुमारको इस प्रकार भूमिपर बैठा देख शुकनासको छोड़कर बाकी सब राजे भी जमीनमें ही बैठे। तनिक देर खामोश रहनेके बाद अपने प्रेमपुलकित गात्रसे अपार हर्ष प्रकट करता हुआ शुकनास बोला—वत्स चन्द्रापीड! सब विद्याओंसे सम्पन्न एवं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जाता। अद्य समृद्धाः सर्वा गुरुजनाशिषः। अद्य फलितमनेकजन्मान्तरोपात्तमवदातं कर्म। अद्य प्रसन्नाः कुलदेवताः। न ह्यपुण्यभाजां भवादृशास्त्रिभुवनविस्मयजनकाः पुत्रतां प्रतिपद्यन्ते। क्वेदं वयः। क्वेयममानुषी शक्तिः। क्व चेदमशेषविद्याग्रहणसामर्थ्यम्। अहो, धन्याः प्रजा यासां भरतभगीरथप्रतिमो भवानुत्पन्नः पालयिता। किं खलु कृतमवदातं कर्म वसुन्धरया ययासि भर्ता समासादितः। हरिवक्षःस्थलनिवासासद्ग्रहव्यसनितया हता खलु लक्ष्मीः, या विग्रहवती भवन्तं नोपसर्पति। सर्वथा कल्पकोटीर्महावराह इव दंष्ट्रावलयेन वह बाहुना वसुन्धराभारं सह पित्रा' इत्यभिधाय च स्वयमाभरणवसनकुसुमाङ्गरागादिभिरभ्यर्च्य विसर्जयांचकार।

विसर्जितश्चोत्थायान्तःपुरं प्रविश्य दृष्ट्वा वैशम्पायनमातरं मनोरमा-

---

युवावस्थाको प्राप्त आपको देखकर बहुत समयके पश्चात् आज महाराज तारापीडको समस्त भुवनके राज्यका फल मिला है। आज सब गुरुजनोंका आशीर्वाद सफल हुआ। अनेक जन्मोंके शुभ कर्मोंका फल भी आज ही सामने आया है। आज ही कुलदेवता प्रसन्न हुए हैं। क्योंकि समस्त त्रिलोकीको विस्मयमें डाल देनेवाले आपसरीखे महापुरुष पुण्यहीन प्राणियोंको अपना पिता नहीं बना सकते। अपूर्व है आपकी मानुषी शक्ति और अद्भुत है समस्त विद्याओंको हृदयङ्गम करनेवाली आपकी सामर्थ्य। अहो! धन्य हैं वे प्रजाजन कि जिनके आप भरत तथा भगीरथ जैसे शासक होकर अवतीर्ण हुए हैं। इस धरतीने कौनसा ऐसा पुण्य किया था कि जिससे उसे आपके समान पति मिला है। भगवान् विष्णुके वक्षःस्थलमें ही रहनेकी हठीली लक्ष्मी अभागिन है। तभी तो वह सशरीर आकर आपके समक्ष नहीं उपस्थित हो रही है। जैसे वाराह भगवान्ने अपने दाँतोंसे पृथिवीका भार वहन किया था, उसी प्रकार पिताके साथ आप भी अपने बाहुबलसे करोड़ों कल्पतक वसुन्धराका भार वहन करें।' ऐसा कहकर मंत्री शुकनासने आभूषण, वस्त्र, पुष्प एवं अङ्गराग अर्पणपूर्वक सत्कार करके विदा किया।

इस प्रकार वहाँसे विदा होकर चन्द्रापीड अन्तःपुरमें जाकर वैशम्पायनकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिधानां निर्गत्य समारुह्येन्द्रायुधं पित्रा पूर्वकल्पितम्, प्रतिच्छन्दकमिव राजकुलस्य द्वारावस्थितसितपूर्णकलशम्, आवद्धहरितवन्दनमालम्, उल्लसितसितपताकासहस्रम्, अभ्याहतमङ्गलतूर्यरवपरिपूरितदिगन्तरम्, उपरचितविकचकमलकुसुमप्रकरम्, अचिरकृताग्निकार्यम्, उज्ज्वलविविक्तपरिजनम्, उपपादिताशेषग्रहप्रवेशमङ्गलं कुमारो भवनं जगाम। गत्वा च श्रीमण्डपावस्थिते शयने मुहूर्तमुपविश्य सह तेन राजपुत्रलोकेनाभिषेकादिमशनावसानमकरोद्दिवसविधिम्। अभ्यन्तरे च शयनीयगृह एवेन्द्रायुधस्यावस्थानमकल्पयत्।

एवंप्रायेण चास्योदन्तेन तदहः परिणतिमुपययौ। गगनतलादवतरन्त्या दिवसश्रियः पद्मरागनूपुरमिव स्वप्रभापिहितरन्ध्रं रविमण्डलमुन्मुक्तपादं पपात। जलप्रवाह इव रथचक्रमार्गानुसारेण दिवसकरस्य वासरालोकः प्रतीचीं ककुभमगात्। अभिनवपल्लवलोहिततलेन करेणेवाधो-

---

माता मनोरमासे मिला। तनिक देर वहाँ रुककर बाहर आया और इन्द्रायुध घोड़ेपर सवार होकर पिताके द्वारा पूर्वनिश्चित एवं राजभवनके प्रतिबिम्बसदृश अपने महलमें गया। उस महलके द्वारपर जलसे भरे श्वेत कलश रक्खे हुए थे। सब ओर हरी-हरी बन्दनवारें बँधी थीं। हजारों ध्वजायें फहरा रही थीं। तुड़ही आदि मङ्गलमय वाद्य बज रहे थे, जिनके मधुर गुञ्जारसे सभी दिशायें भर गयी थीं। प्रफुल्लित कमलपुष्पोंके ढेर लगे हुए थे। अभी-अभी हवन-कार्य सम्पन्न हुआ था। उज्ज्वल वस्त्र पहने साफ-सुथरे सेवक फिर रहे थे। गृहप्रवेशसम्बन्धी सब माङ्गलिक कृत्य सम्पन्न किये जा चुके थे। महलके भीतर जाकर वह श्रीमंडपमें बिछे पलङ्गपर तनिक देर बैठा। उसके बाद उठकर उन राजपुत्रोंके साथ जाकर उसने स्नान-भोजन आदि किया और इन्द्रायुधके रहनेका प्रबन्ध उसने अपने शयनागारमें ही कर दिया।

यह सब कार्यकलाप पूरा करते-करते दिन डूब गया। गगनसे उतरती हुई दिवसश्रीके पद्मरागमणिजटित नूपुरके समान दृश्यमान एवं अपनी ही दीप्तिसे अपना छिद्र भरनेवाला सूर्यमण्डल किरणोंको ऊपर फेंकता हुआ नीचे गिर गया। जलके बहाव सरीखा सूर्यनारायणका प्रकाश भी उनके रथचक्रका अनुसरण करता हुआ पश्चिम दिशामें जाकर लुप्त हो गया। दिनने नवीन पल्लव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुखप्रसृतेन रविबिम्बेन वासरः कमलरागमशेषं ममार्ज। कमलिनीपरिमलपरिचयागतालिमालाकुलितकण्ठं कालपाशैरिव चक्रवाकमिथुनमाकृष्यमाणं विजघटे करपुटैरादिवसान्तमापीतमरविन्दमधुरसमिव रक्तातपच्छलेन गगनगमनखेदादि दिवसकरबिम्बं ववाम। क्रमेण च प्रतीचीकर्णपूररक्तोत्पले लोकान्तरमुपगते भगवति गभस्तिमालिनि, समुल्लसितायामम्बरतटाकविकचकमलिन्यां संध्यायाम, कृष्णागुरुपंकपत्रलतास्विव तिमिरलेखासु स्फुरन्तीषु दिशामुखेषु, अलिकुलमलिनेन कुवलयवनेनेव रक्तकमलाकरे तिमिरेणोत्सार्यमाणे संध्यारागे, कमलिनीनिपीतमातपमुन्मूलयितुमन्धकारपल्लवेष्विव प्रविशत्सु रक्तकमलोदराणि मधुकरकुलेषु, शनैःशनैश्च निशाविलासिनीमुखावतंसपल्लवे गलिते संध्यारागे, दिक्षु विक्षिप्तेषु संध्यादेवतार्चनबलिपिण्डेषु, शिखरदेशलग्नतिमिरास्वनारूढम-

---

जैसे लाल हथेलीवाले हाथसदृश नीचे लटकते हुए सूर्यबिम्बकी कमलरागकी सारी लालिमा पोंछ दी। अभी दिनके समय भ्रमरगण कमलिनीकी सुगन्धिपर लुभाये हुए थे, किन्तु उसी समय उनके मुद्रित हो जानेपर दौड़कर उन्होंने चक्रवाकदम्पतीका कण्ठ घेर लिया। तभी कालपाशसे खिंचे हुएके समान वे पतिपत्नी एक दूसरेसे अलग हो गये। दिनभर सूर्यने अपने किरणरूपी सम्पुटसे कमलका जो मधुरस पिया था, उसे अब मानो आकाशमें चलनेकी थकावटके कारण लाल धूपके बहाने उगल दिया। क्रमशः प्रतीची (पश्चिम) दिशारूपिणी सुन्दरीके कर्णपूरके लाल कमलसदृश भगवान् किरणमाली (सूर्य) अन्य लोकको चले गये। आकाशसरोवरकी प्रफुल्लित कमलिनी सरीखी लाल सन्ध्या दिखायी देने लगी। गहरे काले अगरके रससे बनी पत्रलता जैसी अन्धकारराशि सभी दिशाओंके मुखमें फैलने लगी। भ्रमरोंके बैठनेसे मलिन नीलकमलवन सदृश काला अन्धकार लाल कमलवनके समान सन्ध्याकी लालिमाको हटाने लगा। दिनभर कमलिनियोंने जो आतप (धूप) पिया था, उसे मानो निकालनेके लिए अन्धकारके पल्लवसदृश भ्रमरोंके समुदाय लाल कमलके उदरमें घुसने लग गये। शनैः शनैः निशारूपिणी सुन्दरीके मुखका कर्णपल्लवस्वरूप सन्ध्याराग (लालिमा) दूर होने लगा। सन्ध्याकालीन देवपूजाके निमित्त दसों दिशाओंमें बलिपिण्ड रक्खे जाने लगे। मयूरोंको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यूरास्वपि मयूराधिष्ठितास्विव मयूरयष्टिषु, गवाक्षविवरनिलीनेषु प्रासादलक्ष्मीकर्णोत्पलेषु पारावतेषु, विगतविलासिनीसंवाहननिश्चलकाञ्चनपीठासु मूकीभूतघण्टास्वरास्वन्तःपुरदोलासु, भवनसहकारशाखावलम्बिपञ्जरेषु विगतालापेषु शुकसारिकानिवहेषु, संगीतविरामविश्रान्तरवासूत्सार्यमाणासु वीणासु, युवतिनूपुरशब्दोपशमनिभृतेषु भवनकलहंसेषु, अपनीयमानकर्णशङ्खचामरनक्षत्रमालामण्डनेषु, मधुकरकुलशून्यकपोलभित्तिषु मत्तवारणेषु, प्रदीप्यमानेषु राजवल्लभतुरंगमन्दुराप्रदीपेषु, प्रविशन्तीषु प्रथमयामकुञ्जरघटासु, कृतस्वस्त्ययनेषु निष्कामत्सु पुरोहितेषु, विसर्जितराजलोकविरलपरिजनेषु विस्तारितेष्विव राजकुलकक्षान्तरेषु, प्रज्वलितदीपिकासहस्रप्रतिबिम्बचुम्बितेषु कृतविकचचम्पकदलोपहारेष्विव मणिभूमिकुट्टिमेषु, निपतितदीपालोकासु रविविरहार्तनलि-

---

बैठनेके लिए नियत डंडोंपर अँधेरा छा जानेके कारण मोरोंके न बैठनेपर भी ऐसा भान होने लगा कि मानो वे उनपर बैठे हुए हैं। प्रासादलक्ष्मीके कर्णकमलस्वरूप कपोत अपने घोसलोंमें घुस गये। महिलाओंके न बैठनेके कारण अन्तःपुरके झूले तथा उनपर मढ़ी सोनेकी पटरियाँ निश्चल हो गयीं और उनमें लगी घटियोंकी आवाज बन्द हो गयी। आँगनमें लगे आम्रवृक्षोंकी शाखाओंपर लटकाये पींजरोंमें बैठे तोतों और मैनाओंका बोलना बन्द हो गया। संगीतका अन्तिम स्वर बंद करके वीणायें रख दी गयीं। स्त्रियोंके पायलोंकी रुनझुन बन्द हो जानेसे भवनोंके पालतू कलहंस शान्त हो गये। मतवाले हाथियोंके कर्णशंख, चमर, नक्षत्रमाला आदि आभूषण उतार लिये गये और भौंरोंके उड़ जानेसे उनके कपोल सूने हो गये। राजाके प्रिय अश्वोंकी अश्वशालामें दीपक जल उठे। प्रथम प्रहरके द्वाररक्षक हाथी वहाँसे हटकर फीलखानेमें चले गये। स्वस्त्ययन करके पुरोहितगण महलोंसे बाहर निकलने लगे। राजाओंके चले जानेपर थोड़ेसे परिजनोंके रह जानेसे वे कमरे बहुत बड़े-बड़े मालूम पड़ने लगे। महलमें प्रज्वलित हजारों दीपकोंके प्रतिबिम्बसे चुम्बित वहाँकी मणिमयी भूमि ऐसी दीखने लगी कि मानो प्रफुल्लित चम्पकपुष्पोंके उपहार बिखरे पड़े हों। उन दीपकोंका प्रकाश जब गृहसरोवरोंपर पड़ा तो ऐसा लगने लगा कि मानो सूर्यके विरहसे व्यथित कमलिनीका मन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नीविनोदनागतबालातपास्विव भवनदीर्घिकासु, निद्रालसेषु पञ्जरकेसरिषु, समारोपितकार्मुके गृहीतसायके यामिक इवान्तःपुरप्रविष्टे मकरकेतौ, अवतंसपल्लवेष्विव सरागेषु कर्णे क्रियमाणेषु सुरतदूतीवचनेषु, सूर्यकान्तमणिभ्य इव संक्रान्तानलेषु प्रज्वलत्सु मानिनीनां शोकविधुरेषु हृदयेषु, प्रवृत्ते प्रदोषसमये चन्द्रापीडः प्रज्वलितदीपिकाचक्रवालपरिवारश्चरणाभ्यामेव राजकुलं गत्वा पितुः समीपे मुहूर्तं स्थित्वा दृष्ट्वा च विलासवतीमागत्य स्वभवनमनेकरत्नप्रभाशबलमुरगराजफणामंडलमिव हृषीकेशः शयनतलमधिशिश्ये।

प्रभातायां च निशीथिन्यां समुत्थाय समभ्यनुज्ञातः पित्राभिनवमृगयाकौतुकाकृष्यमाणहृदयो भगवत्यनुदित एव सहस्ररश्मावारुह्येन्द्रायुधमग्रतो बालेयप्रमाणानाकर्षयद्भिश्चामीकरशृंखलाभिः कौलेयकाञ्जर-

---

बहलानेके लिए बालसूर्य वहाँ आ पहुँचा हो। पींजरोंमें बन्द सिंह सो गये। अब धनुष चढ़ा और बाण हाथमें लेकर पहरेदारके समान कामदेव अन्तःपुरमें प्रविष्ट हुआ। कर्णपल्लवके समान राग (रंग अथवा अनुराग) युक्त रतिदूतिकाओंके वचन सुनायी पड़ने लगे। जैसे सूर्यकान्त मणिसे निकला हुआ अग्नि विरहवेदनासे आकुल मानिनियोंका हृदय जलाने लगा। इस प्रकार रात्रिके पूर्णरूपसे व्याप्त हो जानेपर चन्द्रापीड प्रज्वलित दीपकोंसे परिवेष्टित होता हुआ टहलता-टहलता राजभवनमें पिताके पास गया। वहाँ थोड़ी देर बैठकर माता विलासवतीसे मिला। फिर वहाँसे अपने शयनकक्षमें लौट आया और जिस प्रकार भगवान् विष्णु अनेक रत्नोंकी दीप्तिसे देदीप्यमान शेषनागकी शय्यापर सोते हैं, उसी प्रकार अनेक रत्नोंकी प्रभासे विचित्र दीखनेवाली शय्यापर सो गया।

प्रातःकाल होनेपर वह उठा और अभिनव (नवीन) मृगयाकी उत्सुकतासे आकृष्टहृदय चन्द्रापीड सूर्योदयके पहले ही इन्द्रायुधपर सवार हो गया और बहुतेरे हाथी-घोड़े तथा पैदल सिपाहियोंको साथ लेकर जङ्गलकी ओर चल पड़ा। गधोंके बराबर बड़े-बड़े कुत्तोंको सोनेकी जंजीरोंमें बाँध तथा खींचकर ले चलनेवाले उनके रक्षक आगे-आगे दौड़ते तथा निरन्तर कोलाहल करते हुए चन्द्रापीडकी यात्राके उत्साहको द्विगुणित करने लगे। वे वृद्ध व्याघ्रके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वन्याघ्रचर्मशवलवसनकञ्चुकधारिभिरनेकवर्णपट्टचीरिकोद्बद्धमौलिभिरुप-चितश्मश्रुगहनमुखैरेककर्णावसक्तहेमतालीपुटैराबद्धनिविडकक्षैरनवरत-श्रमोपचितोरुपिण्डिकैः कोदण्डपाणिभिः श्वपोषकैरनवरतकृतकोलाहलैः प्रधावद्भिर्द्विगुणीक्रियमाणगमनोत्साहो बहुगजतुरगपदातिपरिवृतो वनं ययौ। तत्र चाकर्णान्ताकृष्टमुक्तैर्विकचकुवलयपलाशकान्तिभिर्भल्लैर्मदक-लकलभकुम्भभित्तिभिदुरैश्च नाराचैश्चापटङ्कारभयचकितवनदेवतार्धाक्ष-वीक्षितो वनवराहान्केसरिणः शरभांश्चामराननेककुरङ्गकांश्च सहस्रशो जघान। अन्यांश्च जीवत एव महाप्राणतया स्फुरतो जग्राह। समारूढे च मध्यमहः सवितरि वनात्स्नानोत्थितेनेव श्रमसलिलबिन्दुवर्षमनवर-तमुज्झता मुहुर्मुहुर्दशनविघट्टनैः खणखणायितखरखलीनेन श्रमशिथिल-मुखविगलितफेनिलरुधिरलवेन पर्याणपट्टकानुसरणात्थितफेनराजिना

चमड़ेसे बने विचित्र कंचुक पहने हुए थे। उनके माथेपर साफा बँधा था। बढ़ी हुई दाढ़ीसे उनका मुँह भरा दीखता था। उन्होंने केवल एक-एक कानमें सोनेका गहना पहन रक्खा था। बड़ी मजबूतीसे उन्होंने कमर बाँध ली थी। निरन्तर श्रम करनेके कारण उनकी जाँघें मोटी हो गयी थीं। उनके हाथमें धनुष विद्यमान थे। वनमें पहुँचकर कानतक खींचे गये विकसित नीलकमलकी पंखुड़ियों सदृश काले-काले भालों तथा मदमत्त बालगजोंकी कुम्भभित्ति (मस्तक) विदीर्ण करनेमें समर्थ लौहमय बाणोंसे चन्द्रापीडने हजारों बनैले सुअरों, सिंहों, शरभों (साँभरों) और चमरमृगोंको मारा। उसके धनुषका टङ्कोर सुनकर वनदेवियाँ चकित और भयभीत होकर कटाक्षसे निहारने लगीं। भागते हुए कितने वनजन्तुओंको बिना मारे उसने अपने पराक्रमसे जीवित ही पकड़ लिया। जब मध्याह्नका समय हो गया और सूर्य-नारायण मध्य आकाशमें आ पहुँचे, तब वह अपने घर लौटा। उस समय उसका घोड़ा इन्द्रायुध जैसे पसीनेसे नहा गया था। उसके शरीरसे बरसातकी तरह स्वेदकी बूँदें टपक रही थीं। वह बार-बार दाँत किटकिटाकर लगामकी तीखी खनखनाहट कर रहा था। थकावटके कारण उसके शिथिल मुखसे फेनके साथ रुधिरबिन्दु भी गिर रहे थे। पर्याणपट (जीन) की कारपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्णावतंसीकृतमुत्फुल्लकुसुमशबलमालपटलझङ्काररवमुखरं वनगमनचिह्नं पल्लवस्तबकमुद्वहतेन्द्रायुधेनोह्यमानः, समुद्गतस्वेदतयान्तरार्द्रीकृतमण्डलेन मृगरुधिरलवशतशबलेन वारबाणेन द्विगुणतरमुपजातकान्तिः, अनेकरूपानुसरणसंभ्रमपरिभ्रष्टच्छत्रधरतया छत्रीकृतेन नवपल्लवेन निवार्यमाणातपः, विविधवनलताकुसुमरेणुधूसरो वसन्त इव विग्रहवान्, अश्वखुररजोमलिनललाटाभिव्यक्तावदातस्वेदलेखः, दूरविच्छिन्नेन पदातिपरिजनेन शून्यीकृतपुरोभागः, प्रजवितुरङ्गमाधिरूढैरल्पावशिष्टैः सह राजपुत्रैः 'एवं मृगपतिः, एवं वराहः, एवं महिषः, एवं शरभः, एवं हरिण' इति तमेव मृगयावृत्तान्तमुच्चारयन्स्वभवनमाजगाम।

उत्तीर्य च तुरङ्गमात्ससंभ्रमप्रधावितपरिजनोपनीत उपविश्यासने वारबाणमवतार्य, अपनीय चाशेषं तुरङ्गाधिरोहणोचितं वेषपरिग्रहमि-

---

झागकी रेखा उभड़ आयी थी। पुष्पित कुसुमोंसे विचित्र, गुंजराते हुए भ्रमरोंसे शब्दायमान एवं वनगमनके चिह्नस्वरूप दो पल्लवगुच्छोंको उसने कर्णाभरणके स्थानमें धारण कर रक्खा था। ऐसे इन्द्रायुधपर सवार चंद्रापीडके शरीरसे निकले हुए पसीनेने उसके भीतरी वस्त्र भिगो दिये थे। शिकारके समय उड़े हुए मृगशरीरके रुधिरबिन्दुओंने कवचके ऊपरी भागको विचित्र बना दिया था। इससे अब वह कवच पहलेसे दूना सुन्दर दीखने लगा था। बहुतेरे मृगोंका पीछा करनेकी जल्दबाजीमें उसका छत्रधारी सेवक बिछड़ गया था। अतएव अब वह नये पत्तोंको छत्र बनाकर उन्हींसे धूप रोक रहा था। अब विविध वनवल्लरियोंके पुष्परजसे धूसरवर्ण होकर वह शरीरधारी वसन्तसरीखा दीख रहा था। घोड़ोंके खुरों द्वारा उड़ी धूलसे मलीन उसके ललाटपर स्वच्छ पसीनेकी बूँदें साफ झलक रही थीं। उसके पैदल सेवक बहुत दूर छूट गये थे। इस कारण उसको आगेका रस्ता सूना लग रहा था। इस प्रकार चन्द्रपीड तेज घोड़ोंपर सवार बहुत थोड़े राजपुत्रोंके साथ—'मैंने इस तरह सिंह मारा, यों सूकर मारा इस प्रकार महिष मारा, यों शरभको पछाड़ा और इस ढंगसे हिरनोंका वध किया।' इस तरह मृगयासम्बन्धी बातें करता हुआ अपने घर लौटा।

वहाँ पहुँचकर चन्द्रापीड घोड़ेसे उतर पड़ा। तत्काल एक सेवकने दौड़कर कुर्सी ला दी। उसपर बैठकर उसने कवच तथा घोड़सवारीकी सारी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्तनः प्रचलिततालवृन्तपवनापनीयमानश्रमो मुहूर्त विशश्राम। विश्रम्य च मणिरजतकनककलशशतसनाथामन्तर्निन्यस्तकाञ्चनपीठां स्नानभूमिमगात्। निर्वर्तिताभिषेकव्यापारस्य च विविक्तवसनपरिमृष्टवपुषः स्वच्छदुकूलपल्लवाकलितमौलेर्गृहीतवाससः कृतदेवार्चनस्याङ्गरागभूमौ समुपविष्टस्य राज्ञा विसर्जिता महाप्रतीहाराधिष्ठिता राजकुलपरिचारिकाः कुलवर्धनासनाथाश्च विलासवतीदास्यः सर्वान्तःपुरप्रेपिताश्चान्तःपुरपरिचारिकाः पटलकविनिहितानि विविधान्याभरणानि माल्यान्यङ्गरागान्वासांसि चादाय पुरतस्तस्योपतस्थुरुपनिन्युश्च। यथाक्रममादाय च ताभ्यः प्रथमं स्वयमुपलिप्य वैशम्पायनमुपरचिताङ्गरागो दत्त्वा च समीपवर्तिभ्यो यथार्हमाभरणवसनांगरागकुसुमानि विविधमाणभाजनसहस्रसारं शारदमम्बरतलमिव स्फुरिततारागणमाहारमण्डपमगच्छत्। तत्र द्विगुणितकुथासनोपविष्टः समापोपविष्टेन तद्गुणोपवर्ण-

---

वेषभूषा उतार डाली। इधर-उधर खड़े सेवक पंखा झलने लगे। इससे उसकी थकावट दूर हो गयी और तनिक देर उसने वहाँ हा विश्राम किया। इस प्रकार आराम करके वह स्नानागारमें गया। वहाँ मणि, सुवर्ण तथा चाँदीके सैकड़ों कलश भरे रक्खे थे और सोनेकी एक चौकी बिछा थी। वहाँपर उसने भली भाँति स्नान करके स्वच्छ वस्त्रसे शरीर पोंछा। फिर बढ़िया कपड़ेका साफा बाँधा और अन्यान्य वस्त्र धारण किया। तदनन्तर देवार्चन करके वह अङ्गरागशालामें जा पहुँचा। वहाँ वह जैसे ही बैठा, उसी समय प्रतीहारके साथ राजाके भेजे हुए राजकुलके सेवक और कुलवर्धनासमेत रानी विलासवतीकी दासियाँ तथा अन्तःपुरका सेविकायें सन्दूकोंमें भरे बहुतेरे आभूषण, हार, अंगलेप और वस्त्र लेकर उसक समक्ष आ उपस्थित हुईं। उन्होंने वह सारी सामग्री चंद्रापीडका सौंप दी। उसमेंसे अङ्गराग लेकर उसने अपने हाथसे पहले वैशम्पायनके शरीरमें लेप किया। उसके बाद अपने शरीरमें लगाकर आस-पास बैठे राजपुत्रोंको यथायोग्य गहने, कपड़े, अंगराग तथा फूलोंके गुच्छे दिये। तदनन्तर राजकुमार चन्द्रापीड भोजनशालामें गया। वहाँ विविध मणियोंके बने हजारों बर्तन रक्खे थे। उनको देखकर ऐसा लगता था कि जैसे शरद् ऋतुके स्वच्छ आकाशमें अगणित तारे चमक रहे हों। वहाँ पहुँचकर वह दो परत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नपरेण वैशम्पायनेन यथार्हं भूमिभागोपवेशितेन राजपुत्रलोकेन 'इदमस्मै दीयताम्, इदमस्मै दीयताम्' इति प्रसादविशेषदर्शनसंवर्धितसेवारसेन च सहाहारविधिमकरोत्। उपस्पृश्य च गृहीतताम्बूलस्तस्मिन्मुहूर्तमिव स्थित्वेन्द्रायुधसमीपमगमत्। तत्र चानुपविष्ट एव तद्गुणोपवर्णनप्रायालापाः कथाः कृत्वा सत्यप्याज्ञाप्रतीक्षणोन्मुखे पार्श्वपरिवर्तिनि परिजने तद्गुणहृतहृदयः स्वयमेवेन्द्रायुधस्य पुरो यवसमाकीर्य निर्गत्य राजकुलमयासीत्। तेनैव च क्रमेणावलोक्य राजानमागत्य निशामनैषीत्।

अपरेद्युश्च प्रभातसमय एव सर्वान्तःपुराधिकृतम्, अवनिपतेः परमसंमतम्, अनुमार्गागतया च प्रथमे वयसि वर्तमानया, राजकुलसंवासप्रगल्भयाप्यनुज्झितविनयया, किंचिदुपारूढयौवनया, शक्रगोपकालो-

---

करके बिछाये हुए कम्बलासनपर बैठा। समीपके ही आसनपर वैशम्पायन भी बैठ गया और उसके गुणोंका वर्णन करने लगा। उस समय चंद्रापीड वैशम्पायनके द्वारा राजपुत्रोंको यथायोग्य आसनोंपर बिठलवाकर परोसने वालोंसे कहने लगा—'यह वस्तु इन्हें दो और अमुक वस्तु उनको दो।' इस प्रकार वह उन राजपुत्रोंपर अपनी विशेष कृपा प्रदर्शित करने लगा। इससे उनके मनमें और भी तन्मयतापूर्वक राजकुमारकी सेवा करनेकी भावना बढ़ गयी। भोजन करनेके बाद हाथ-मुँह धोकर कुल्ला किया, पान खाया और वहाँ तनिक देर रुककर इन्द्रायुधके पास जा पहुँचा। वहाँ खड़े-खड़े ही वह उन राजपुत्रोंको उस घोड़ेके गुण बताता हुआ बातें करता रहा। उस समय यद्यपि बहुतेरे सेवक आज्ञाकी प्रतीक्षा करते हुए वहाँ खड़े थे, तथापि इन्द्रायुधके गुणोंपर मुग्ध रहनेके कारण चन्द्रापीडने अपने हाथों उसके आगे घास डाली। तदनन्तर पूर्वोक्त क्रमके अनुसार राजा तारापीडके दर्शन करके अपने महलमें जाकर उसने रात बितायी।

दूसरे दिन सवेरे ही उसने सारे अन्तःपुरके अधिकारी तथा राजाके अतिशय विश्वासभाजन कैलासनामक कंचुकीको आते देखा। उसके पीछे-पीछे एक बहुत ही गम्भीर आकृतिकी एक सुन्दरी कन्या भी आ रही थी। उसने अभी ही नवयौवनमें पदार्पण किया था। राजकुलमें नित्य निवास करनेके कारण यद्यपि वह ढीठ हो गयी थी। फिर भी उसने विनयभावको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हितरागेणांशुकेन राचतावगुण्ठनया सबालातपयेव पूर्वया ककुभा प्रत्यग्रदलितमनःशिलावर्णेनांगलावण्यप्रभाप्रवाहेणामृतरसनदीपूरेणेव भवनमापूरन्त्या, जोत्स्नयेव राहुग्रहग्रासभयादपहाय रजनिकरमण्डलं गामवतीर्णया, राजकुलगृहदेवतयेव मूर्तिमत्या, क्वणितमणिनूपुराकुलचरणयुगलया, कूजत्कलहंसाकुलितकमलयेव कमलिन्या, महार्हहेममेखलाकलापकलितजघनस्थलया, नातिनिर्भरोद्भिन्नपयोधरया, मन्दं मन्दं भुजलताविक्षेपप्रेङ्खितनखमयूखच्छलेन धाराभिरिव लावण्यरसमनवरतं क्षरन्त्या, दिङ्मुखविसर्पिणि हारलतानां रश्मिजाले निमग्नशरीरतया क्षीरसागरोन्मग्नवदनयेव लक्ष्म्या, वहलताम्बूलकृष्णिकान्धकारिताधरलेखया, समसुवृत्ततुंगनासिकया, विकसितपुण्डरीकलोचनया, मणिकुण्डलमकरपत्रभङ्गकोटिकिरणातपाहतकपोलतया सकर्णपल्ल-

---

नहीं त्यागा था। उसकी जवानी कुछ-कुछ खिलने लगी थी। उसने वीरबहूटीके समान लाल रंगकी ओढ़नी ओढ़ रक्खी थी। जिससे वह बालसूर्यसे अलंकृत पूर्वदिशा सरीखी दीख रही थी। ताजे पिसे मैनसिलके चूर्णसदृश अपने अङ्गोंके लावण्यप्रवाहसे वह जैसे अमृतकी नदीसे सारे भवनको भरे दे रही थी। वह चंद्रमाकी उस चाँदनी जैसी लग रही थी कि जो राहुग्रस्त होनेके भयसे धरतीपर उतर आयी हो। वह मूर्तिमती गृहदेवी जैसी लगती थी। उसके दोनों पाँवोंके मणिमय पायल बज रहे थे। जिससे वह उस पोखरी सरीखी लग रही थी कि जिसमें कमल खिले हों और हंस मस्तीके साथ बोल रहे हों। उसकी कमरमें बहुमूल्य करधनी विराज रही थी। अभी उसके कुचकलश अच्छी तरह नहीं उभरे थे। वह अपनी भुजलताओंकी नखदीप्तिसे धीरे-धीरे धाराबद्ध लावण्यरस बरसा रही थी। वह दसों दिशाओंमें अपने हारके किरणसमूहको फैलाती और उसीमें डूबी हुई उस लक्ष्मी जैसी लग रही थी, जिसका क्षीरसागरमें सब शरीर डूबा हो और मुख बाहर निकला हुआ हो। अत्यधिक ताम्बूल खानेके कारण उसके अधरपर एक काली रेखा खिंची हुई थी। उसकी नासिका सुडौल, गोल और ऊँची थी। प्रफुल्लित पुण्डरीकके समान उसके नेत्र थे। उसके कपोलपर मणिनिर्मित कुंडलोंकी मछलियोंकी किरणोंका प्रकाश पड़ रहा था। जिससे उसका मुख कर्णपल्लवविमण्डित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वमिव मुखमुद्वहन्त्या, पर्युषितधूसरचन्दनरसतिलकालंकृतललाटपट्टया, मुक्ताफलप्रायालंकारया, राधेयराज्यलक्ष्म्येवोपपादिताङ्गरागया, नववन-लेखयेव कोमलतनुलतया, त्रय्येव सुप्रतिष्ठितचरणया, मखशालयेव वेदिमध्यया, मेरुवनलतयेव कनकपत्त्रालंकृतया, महानुभावाकारयानुग-म्यमानं कन्यया कैलासनामानं कञ्चुकिनमायान्तमपश्यत्।

स कृतप्रणामः समुपसृत्य क्षितितलनिहितदक्षिणकरो विज्ञापया-मास—'कुमार! महादेवी विलासवती समाज्ञापयति—इयं खलु कन्यका महाराजेन पूर्वं कुलूतराजधानीमवजित्य कुलूतेश्वरदुहिता पत्त्रलेखाभिधाना बालिका सती बन्दीजनेन सहानीयान्तःपुरपरिचारि-कामध्यमुपनीता। सा मया विगतनाथा राजदुहितेति च समुपजातस्ने-हया दुहितृनिर्विशेषमियन्तं कालमुपलालिता संवर्धिता च। तदियमिदा-

---

दीख रहा था। उसके ललाटमें शुष्क चन्दनका धूसरवर्ण तिलक सुशोभित था। उसके सभी आभूषण प्रायः मोतीके बने थे। कर्णकी राज्यलक्ष्मीकी तरह वह अङ्गरागयुक्त थी (कर्णकी राज्यलक्ष्मीको अंगदेशपर प्रेम था और वह सुन्दरी अपने तनपर अंगराग लगाये थी)। नवीन वनराजिके समान उसकी तनुलता (नन्हीं-सी लता अथवा शरीररूपिणी लता) बहुत कोमल थी। त्रयी अर्थात् ऋक्, यजुः, सामवेदके चरणोंकी भाँति उसके चरण सुप्रतिष्ठित थे (तीनों वेदोंकी शाखायें भली भाँति स्थापित रहती हैं और उस सुन्दरीकी चाल बहुत सुन्दर लग रही थी)। जैसे यज्ञशालाके बीचमें वेदी रहती है, उसी प्रकार उस सुन्दरीका कटिभाग वेदीके समान कृश दीख रहा था। जैसे सुमेरुपर्वतकी वनलतायें स्वर्णपत्रोंसे शोभित होती हैं, उसी तरह वह सुन्दरी सुवर्णके बने पत्राकार गहनोंसे विभूषित थी। उस सुन्दरीका आकार बड़ा प्रभावशाली था।

कंचुकीने आगे बढ़कर प्रणाम किया और अपना दाहिना हाथ जमीनपर टेककर कहा—'राजकुमार! महारानी विलासवती कह रही हैं कि 'कुछ समय पहले महाराजने कुलूतेश्वरकी राजधानीको जीतकर राजा कुलूतकी पुत्री पत्रलेखाको बचपनमें ही बन्दीजनोंके साथ यहाँ लाकर दासियोंके साथ रख दिया था। इसे अनाथ राजपुत्री समझकर मैंने अपनी कन्याके समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नीमुचिता भवतस्ताम्बूलकरङ्कवाहिनीति कृत्वा मया प्रेपिता। न चास्यामायुष्मता परिजनसामान्यदृष्टिना भवितव्यम्। बालेव लालनीया। स्वचित्तवृत्तिरिव चापलेभ्यो निवारणीया। शिष्येव द्रष्टव्या। सुहृदिव सर्वविश्रम्भेष्वन्तरीकरणीया। दीर्घकालसंवर्धितस्नेहतया स्वसुतायामिव हृदयमस्यामस्ति मे। महाभिजनराजवंशप्रसूता चार्हतीयमेवंविधानि कर्माणि नियतं स्वयमेवेयमतिविनीततया कतिपयैरेव दिवसैः कुमारमाराधयिष्यति। केवलमतिचिरकालोपचिता बलवती मे प्रेमप्रवृत्तिरस्याम्। अविदितशीलश्चास्याः कुमार इति संदिश्यते। सर्वथा तथा कल्याणिना प्रयतितव्यं यथेयमतिचिरमुचिता परिचारिका ते भवति' इत्यभिधाय विरतवचसि कैलासे कृताभिजातप्रणामां पत्रलेखामनिमिषलोचनं सुचिरमालोक्य चन्द्रापीडः 'यथाज्ञापयत्यम्बा' एवमुक्त्वा कञ्चुकिनं प्रेषयामास। पत्रलेखा तु ततः प्रभृति दर्शनेनैव समु-

---

बड़े ही स्नेहसे पाला है। अब यह तुम्हारी ताम्बूलवाहिनी बननेके लायक हो गयी है। अतएव इसे तुम्हारे पास भेज रही हूँ। तुम इसे साधारण दासियोंके समान न समझकर एक बालिकाकी तरह इसपर प्रेम रखना। साथ ही अपनी चित्तवृत्तिके समान इसे चपलता करनेसे रोकना। इसे सदा अपनी शिष्या समझना और मित्रके सदृश इसपर विश्वास करना। बहुत दिनोंसे पास रहनेके कारण इसपर मेरा स्नेह बढ़ गया है और मैं इसे अपनी पुत्रीके समान मानती हूँ। उच्चकुलके राजवंशमें इसका जन्म हुआ है। इसलिए यह सभी कामोंके योग्य है। यह निश्चित है कि कुछ ही दिनों बाद अपने विनयभावसे यह स्वयं उत्तम रीतिसे तुम्हारी सेवा करने लग जायगी। कंचुकीके द्वारा सन्देश इसलिए भेज रही हूँ कि इसपर बहुत समयसे बढ़ता हुआ मेरा प्रेम गाढ़ हो गया है और तुम अभी इसके स्वभावसे परिचित नहीं हो। अतएव सर्वथा ऐसा प्रयत्न करते रहना कि जिससे यह बहुत समयके लिए तुम्हारी योग्य परिचारिका बन सके।' इतना कहकर कैलास चुप हो गया और पत्रलेखाने तनिक आगे बढ़कर राजपुत्रको प्रणाम किया। तब एकाग्र दृष्टिसे बड़ी देरतक उसे निहारकर चद्रापीडने कंचुकीसे कहा—'जैसी माताजीकी आज्ञा'। ऐसा कहकर उसे लौटा दिया। पत्रलेखाने राजकुमारको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पजातसेवारसा न दिवा न रात्रौ न सुप्तस्य नासीनस्य नोत्थितस्य न भ्रमतो न राजकुलगतस्य छायेव राजसूनोः पार्श्वं मुमोच। चन्द्रापीडस्यापि तस्यां दर्शनादारभ्य प्रतिक्षणमुपचीयमाना महती प्रीतिरासीत्। अभ्यधिकं च प्रतिदिनमस्य प्रसादमकरोत्। आत्महृदयादव्यतिरिक्तामिव चैनां सर्वविश्रम्भेष्वमन्यत।

एवं समतिक्रामत्सु दिवसेषु राजा चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षुः प्रतीहारानुपकरणसंभारसंग्रहार्थमादिदेश। समुपस्थितयौवराज्याभिषेकं च तं कदाचिद्दर्शनार्थमागतमारूढविनयमपि विनीततरमिच्छञ्शुकनासः सविस्तरमुवाच—'तात चन्द्रापीड, विदितवेदितव्यस्याधीतसर्वशास्त्रस्य ते नाल्पमप्युपदेष्टव्यमस्ति। केवलं च निसर्गत एवाभानुभेद्यमरत्नालोकोच्छेद्यमप्रदीपप्रभापनेयमतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। अपरिणामोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः। कष्टमनञ्जनवर्तिसा-

---

देखा, तभीसे उसकी सेवामें उसे रस मिलने लगा। अतएव वह रात-दिन सोते बैठते चलते अथवा राजभवनमें जाते समय छायाके समान सदा साथ रहती हुई तनिक देरके लिए भी उसे नहीं छोड़ती थी। चंद्रापीडने भी जब उसे देखा, तभीसे उसपर उत्तरोत्तर उसका स्नेह बढ़ता गया। ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे, त्यों त्यों वह अधिकाधिक कृपा करता हुआ अपने हृदयसे अभिन्न समझकर उसपर अधिकाधिक विश्वास रखने लगा।

इस तरह कुछ दिन बीतनेके बाद महाराज तारापीडको चन्द्रापीडका यौवराज्याभिषेक करनेकी अभिलाषा हुई और उसने प्रतीहारोंको सामग्री जुटानेका आदेश दे दिया। जब अभिषेकका समय समीप आया और चन्द्रापीड मिलने गया, तब स्वतः विनीत युवराजको विनीततर बनानेके विचारसे महामंत्री शुकनास विस्तारके साथ उपदेश देता हुआ कहने लगा—'तात चन्द्रापीड! तुम जानने योग्य सब बातोंको भलीभाँति जानते हो। क्योंकि तुमने सभी शास्त्रोंको पढ़ा है। अतएव अब तुम्हें किसी उपदेशकी जरूरत नहीं है। फिर भी मुझे केवल यह कहना है कि यौवनका अन्धकार स्वभावतः इतना गाढ़ा होता है कि वह सूर्यके प्रकाश, रत्नोंकी प्रभा और दीपककी ज्योतिसे भी नहीं दूर किया जा सकता। लक्ष्मीका मद इतना भयानक होता है कि वह बहुत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ध्यमपरमैश्वर्यतिमिरान्धत्वम् । अशिशिरोपचारहार्योऽतितीव्रो दर्पदाहज्वरोष्मा । सततममूलमन्त्रगम्यो विषमो विषयविषास्वादमोहः । नित्यमस्नानशौचवध्यो रागमलावलेपः । अजस्रमक्षपावसानप्रबोधा घोरा च राज्यसुखसंनिपातनिद्रा भवतीति विस्तरेणाभिधीयसे । गर्भेश्वरत्वमभिनवत्वमप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वं चेति महतीयं खल्वनर्थपरंपरा सर्वा । अविनयानामेकैकमप्येषामायतनम्, किमुत समवायः । यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालननिर्मलापि कालुष्यमुपयाति बुद्धिः । अनुज्झितधवलतापि सरागैव भवति यूनां दृष्टिः । अपहरति च वात्येव शुष्कपत्रं समुद्भूतरजाभ्रान्तिरतिदूरमात्मेच्छया यौवनसमये पुरुषं प्रकृतिः । इन्द्रियहरिणहारिणी च सततदुरन्तेयमुपभोगमृगतृष्णिका । नवयौवनकषायितात्मनश्च सलिलानीव तान्येव

अवस्था बीत जानेपर भी शान्त नहीं होने आता । ऐश्वर्यका तिमिरान्ध रोग ऐसा भीषण दुखदायी होता है कि अंजनकी सलाईसे भी नहीं दूर होता । अभिमानरूपी दाहज्वरकी गर्मी इतनी तीव्र होती है कि वह अनेकशः शीतोपचारसे भी नहीं शान्त होती । विषयरूपी विषके स्वादसे जायमान अज्ञान इतना भयंकर होता है कि वह जड़ी-बूटी तथा मंत्रोपचारसे भी नहीं दूर होता । राग (विषयाभिलाषा) रूपी मलका लेप इतना प्रबल होता है कि वह नित्य स्नान और पवित्रतासे भी नहीं दूर होने आता । राज्यकी सुखरूपिणी सन्निपातनिद्रा इतनी भीषण होती है कि वह रात बीतनेपर भी नहीं हटती । यही कारण है कि मैं कुछ विस्तारके साथ कह रहा हूँ । गर्भसे ही ऐश्वर्यलाभ, नवयौवन, अनुपम सौन्दर्य तथा अमानुषी शक्ति यह एक बहुत बड़ी अनर्थपरम्परा है । इनमेंसे एक-एक अनर्थ भी सब अवगुणोंके घर होते हैं । फिर जहाँ इन चारोंका समुदाय एक साथ विद्यमान हो तो क्या कहना । जवानीके आरम्भमें शास्त्ररूपी जलसे धोनेके कारण निर्मल होती हुई भी बुद्धि प्रायः कलुषित रहती है । युवकोंकी आँखें स्वच्छ होनेपर भी सराग (रंगीन अथवा प्रेमभरी) होती हैं । यौवनकालमें रजोगुणकी प्रबलता होनेके कारण मानवस्वभावमें भ्रम उत्पन्न हो जाता है । अतएव जैसे आँधी सूखे पत्तोंको उड़ा ले जाती है, उसी प्रकार वह भ्रान्तप्रकृति मनुष्यको बहुत दूर खींच ले जाती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विपयस्वरूपाण्यास्वाद्यमानानि मधुरतराण्यापतन्ति मनसः। नाशयति च दिङ्मोह इवोन्मार्गप्रवर्तकः पुरुषमत्यासंगो विषयेषु। भवादृशा एव भवन्ति भाजनान्युपदेशानाम्। अपगतमले हि मनसि स्फटिकमणाविव रजनिकरगभस्तयो विशन्ति सुखेनोपदेशगुणाः। गुरुवचनममलमपि सलिलमिव महदुपजनयति श्रवणस्थितं शूलमभव्यस्य। इतरस्य तु करिण इव शङ्खाभरणमाननशोभासमुदयमधिकतरमुपजनयति। हरत्यतिमलिनमन्धकारमिव दोषजातं प्रदोषसमयनिशाकर इव गुरूपदेशः। प्रशमहेतुवयःपरिणाम इव पलितरूपेण शिरसिजजालममलीकुर्वन्गुणरूपेण तदेव परिणमयति। अयमेव चानास्वादितविपयरसस्य ते काल

है। सदा अतिशय दुखदायिनी सम्भोगकी इच्छारूपिणी मृगतृष्णा मनुष्यके इन्द्रियरूपी हरिणोंको अपनी ओर खींच लेती है। नवयौवनसे जिनकी आत्मा काषाययुक्त हो जाती है, ऐसे मनुष्योंके मनको विषयोंमें रस मिलने लगता है। जैसे हड़-आँवला आदि कसैली वस्तु खानेपर जिह्वाको जल विशेष मीठा लगता है, उसी प्रकार नवयौवनसे काषायित मनवाले लोगोंको विषयरूपी जल उत्तरोत्तर मीठा लगता जाता है। जैसे दिशाभ्रम मनुष्योंको कुपथमें ले जाकर नष्ट कर देता है, उसी प्रकार विषयोंकी अत्यासक्ति मनुष्योंको नष्ट कर देती है। आप जैसे सुशिक्षित लोग ही उपदेशके पात्र होते हैं। क्योंकि जिसका मैल नष्ट हो चुका हो, उसी स्फटिक मणिपर चन्द्रमाकी किरणें भलीभाँति पड़ती हैं। उसी प्रकार शुद्ध हृदयपर ही उपदेश अपना गुण प्रकट करते हैं। निर्मल होते हुए भी गुरुवचन अयोग्य मनुष्योंके कानमें जलके समान भीषण शूल उत्पन्न कर देते हैं। किन्तु वे ही गुरुवचन योग्य पुरुषके मुखको उसी प्रकार अधिकाधिक शोभित करते हैं, जैसे हाथीको शंखके आभूषण अलंकृत करते हैं। प्रदोषकालका चन्द्रमा जिस प्रकार संध्याकालीन अन्धकारको नष्ट कर देता है, वैसे ही गुरुका शांतिदायक उपदेश अतिशय मलिन दोषोंके भी अन्धकारको नष्ट कर देता है। जैसे बुढ़ौती सिरके बालोंको श्वेत बनाकर निर्मल कर देती है, उसी प्रकार गुरुका उपदेश सब दोषोंको गुणके रूपमें परिणत कर दिया करता है। अभी आपने विषयरसका स्वाद नहीं पाया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपदेशस्य। कुसुमशरशरप्रहारजर्जरिते हि हृदि जलमिव गलत्युपदिष्टम। अकारणं च भवति दुष्प्रकृतेरन्वयः श्रुतं वाविनयस्य। चन्दनप्रभवो न दहति किमनलः। किं वा प्रशमहेतुनापि न प्रचण्डतरीभवति वडवानलो वारिणा। गुरूपदेशश्च नाम पुरुषाणामखिलमलप्रक्षालनक्षममजलं स्नानम्, अनुपजातपलितादिवैरूप्यमजरं वृद्धत्वम्, अनारोपितमेदोदोषं गुरूकरणम्, असुवर्णविरचनमग्राम्यं कर्णाभरणम, अतीतज्योतिरालोकः, नोद्वेगकरः प्रजागरः। विशेषेण राज्ञाम्। विरला हि तेषामुपदेष्टारः। प्रतिशब्दक इव राजवचनमनुगच्छति जनो भयात्। उद्दामदर्पाश्च पृथुस्थगितश्रवणविवराश्चोपदिश्यमानमपि ते न शृण्वन्ति। शृण्वन्तोऽपि च गजनिमीलितेनावधीरयन्तः खेदयन्ति हितोपदेशदा-

---

अतएव उपदेश ग्रहण करनेका यही उपयुक्त अवसर है। क्योंकि कामदेवके बाणोंसे हृदयके छलनी हो जानेपर गुरुजनोंका उपदेश उसमेंसे जलकी तरह बाहर निकल जाता है। दुष्प्रकृति मनुष्यको उसका कुल अथवा ज्ञान विनयी नहीं बना सकता। क्या शीतल चन्दनसे जायमान अग्नि जलाती नहीं है? क्या शांतिदायक जलसे बना वडवानल अत्यधिक प्रचण्ड नहीं होता? जैसे जलमें स्नान करनेसे शरीरकी मैल धुल जाती है, उसी प्रकार गुरुके उपदेशसे मनका सारा मल धुल जाता है। गुरुके उपदेशसे केश श्वेत हुए बिना ही वृद्धता और मेदेका विकार हुए बिना ही गुरुता आ जाती है। क्योंकि मेदेका विकार होनेपर मनुष्य शरीरसे मोटा हो जाता है, किन्तु गुरुके उपदेशसे बिना किसी विकारके मनुष्य गौरव प्राप्त कर लेता है। गुरुका उपदेश बिना सुवर्णका उत्तम कर्णभूषण है। गुरुका उपदेश प्रकाशहीन आलोक है और उससे किसी बिना उद्वेगके जागरण बना रहता है अर्थात् वह सदा विषयोंसे बचनेके लिए प्राणीको जागरूक रखता है। राजाओंके लिए तो उस उपदेशकी नितान्त आवश्यकता रहती है। क्योंकि उन्हें उपदेश देनेवाले लोग विरले ही होते हैं। भयके कारण सब लोग राजाके प्रत्येक शब्दका अनुसरण करते हैं। जैसे सूजनसे कान बन्द हो जाते हैं। उसी प्रकार प्रबल अभिमानके कारण राजाके कान बहरे हो जाते हैं और वे किसीकी कोई बात नहीं सुनते। और यदि सुनते भी हैं तो हाथियोंके समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यिनो गुरून्। अहङ्कारदाहज्वरमूर्च्छान्धकारिता विह्वला हि राजप्रकृतिः, अलोकाभिमानोन्मादकारीणि धनानि, राज्यविषविकारतन्द्राप्रदा राजलक्ष्मीः। अवलोकयतु तावत्कल्याणाभिनिवेशो लक्ष्मीमेव प्रथमम्। इयं हि खड्गमण्डलोत्पलवनविभ्रमभ्रमरी लक्ष्मीः क्षीरसागरात्पारिजातपल्लवेभ्यो रागम्, इन्दुशकलादेकान्तवक्रताम, उच्चैःश्रवसश्चञ्चलताम्, कालकूटान्मोहनशक्तिम्, मदिराया मदम्, कौस्तुभमणेर्नैष्ठुर्यम्, इत्येतानि सहवासपरिचयवशाद्विरहविनोदचिह्नानि गृहीत्वैवोद्गता। न ह्येवंविधमपरिचितमिह जगति किंचिदस्ति यथेयमनार्या। लब्धापि खलु दुःखेन परिपाल्यते। दृढगुणसंदाननिस्पन्दीकृतापि नश्यति।

आँखें बन्द करके अवज्ञापूर्वक सुनते हैं और भलेके लिए उपदेश देनेवाले गुरुजनोंको दुःख देते हैं। राजाओंका स्वभाव अहंकाररूपी दाहज्वरजनित मूर्छाके अन्धकारसे अन्धा हो जाता है। धन मनुष्यके हृदयमें मिथ्या अभिमान उत्पन्न करके उसको उन्मत्त बना देता है। राज्यलक्ष्मी राज्यरूपी विषके विकारसे आलस्य उत्पन्न कर देती है। कल्याणके अभिलाषी आप पहले लक्ष्मीको ही देखिए। जिस तरह कमलवनमें भ्रमरी विचरती है, उसी प्रकार यह वीरोंके तलवाररूपी वनमें भ्रमण करती है। यह पारिजातकी पत्तीसे राग (लालिमा अथवा प्रेम), खण्डित चन्द्रमाकी कलासे वक्रता (टेढ़ापन अथवा कुटिलता), इन्द्रके घोड़े उच्चैःश्रवासे चञ्चलता (चपलता अथवा अस्थायित्व), कालकूट विषसे मोहनशक्ति (मूर्छित करनेकी सामर्थ्य अथवा वशीकरणकी शक्ति), वारुणी मदिरासे मद (पागलपन अथवा अभिमान) और कौस्तुभमणिसे अतिशय नैष्ठुर्य इन अवगुणोंको जैसे अपने साथ ही लेकर जनमी है। क्योंकि ये सब क्षीरसागरसे एक साथ उत्पन्न हुए थे। एक साथ ही रहनेके कारण इनमें परस्पर स्वाभाविक प्रेम था। उनका वियोगजनित दुःख दूर करनेके लिए ही लक्ष्मीने प्रत्येक साथीका एक-एक चिह्न अपना लिया था। इस दुष्टाके समान अपरिचित इस संसारमें कोई भी वस्तु नहीं है। पहले तो इसका मिलना ही कठिन है, किसी प्रकार मिल जानेपर भी इसका सम्हालना कठिन हो जाता है। खूब मजबूत गुणरूपी रस्सियोंसे बाँधनेपर भी यह भाग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उद्दामदर्पभटसहस्रोल्लासितासिलतापञ्जरविधृताऽप्यपक्रामति। मदजल-दुर्दिनान्धकारगजघटितघनघटापरिपालितापि प्रपलायते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्ममनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति। न सत्यमनुबुध्यते। न लक्षणं प्रमाणीकरोति। गन्धर्वनगरलेखेव पश्यत एव नश्यति। अद्याप्यारूढमन्दरपरिवर्तावर्तभ्रान्तिजनितसंस्कारेव परिभ्रमति। कमलिनीसंचरणव्यतिकरलग्ननलिननालकण्टकेव न क्वचिदपि निर्भरमाबध्नाति पदम्। अतिप्रयत्नविधृतापि परमेश्वरगृहेषु विविधगन्धगजगण्डमधुपानमत्तेव परिस्खलति। पारुष्यमिवोपशिक्षितुमसिधारासु निवसति। विश्वरूपत्वमिव ग्रहीतुमाश्रिता नारायणमू-

---

जाती है। हजारों अति गर्वीले वीरों द्वारा चमकायी गयी तलवाररूपी वल्लरीके पींजरोंमें बन्द करके रखनेपर भी यह निकल भागती है। मदजल बरसाकर अन्धकार कर देनेवाले बड़े बड़े हाथियोंके घेरेमें रक्खी जानेपर भी यह नहीं रुकती। यह न परिचयका ख्याल करती है, न कुलकी मर्यादा देखती है, न रूपकी ओर निहारती है, न कुलकी परम्पराका साथ देती है, न शीलपर दृष्टिपात करती है, न चतुराईकी परवा करती है, न शास्त्रीय ज्ञान सुनती है, न धर्मका पालन करती है, न उदारताका सम्मान करती है, न विशेषज्ञताका विचार करती है, न आचारका पालन करती है, न सत्यको कुछ समझती है और न सामुद्रिकादि शास्त्रोक्त लक्षणोंको आप्त वाक्य मानती है। यह तो आकाशमें दीखनेवाले गन्धर्वनगरके समान देखते-देखते गायब हो जाती है। इस तरह यह निरन्तर घूमती रहती है कि जैसे अमृतमंथनके समय मन्दराचलके घूमनेसे उत्पन्न भ्रान्तिका संस्कार अबतक इसमें विद्यमान हो। यह इस तरह कहीं भी अपने पैर जमाकर नहीं रखती, जैसे कमलिनीके वनमें घूमनेके कारण इसके पाँवोंमें कमलनालके काँटे चुभनेसे घाव हो गये हों। अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक बड़े-बड़े भूपालोंके भवनोंमें सम्हालकर रखनेपर भी यह इस तरह निकल जाती है कि जैसे बहुतेरे मदवाही गजराजोंके गण्डस्थलका मद पीकर मतवाली हो गयी हो। कठोरता सीखनेके लिए ही यह मानो तलवारकी धारपर बसती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तिम्, अप्रत्ययवहुला च दिवसान्तकमलमिव समुपचितमूलदण्डकोशमण्डलमपि मुञ्चति भूभुजम्, लतेव विटपकानध्यारोहति। गङ्गेव वसुजनन्यपि तरंगबुद्बुदचञ्चला, दिवसकरगतिरिव प्रकटितविविधसंक्रान्तिः, पातालगुहेव तमोवहुला, हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्यहृदया, प्रावृडिवाचिरद्युतिकारिणी, दुष्टपिशाचीव दर्शितानेकपुरुषोच्छ्राया स्वल्पसत्त्वमुन्मत्तीकरोति। सरस्वतीपरिगृहीतमीर्ष्ययेव नालिङ्गति जनम्। गुणवन्तमपवित्रमिव न स्पृशति। उदारसत्त्वममङ्गलमिव न बहु मन्यते।

विश्वरूपत्व (अनेकरूपता) प्राप्त करनेके निमित्त ही जैसे इसने विष्णुभगवान्‌के शरीरका आश्रय स्वीकार किया है। सन्ध्याकालीन कमल सदृश समुपचित मूलदण्ड (जिसकी जड़, दण्ड तथा पंखुड़ियाँ बढ़ गयी हों अथवा जिस राजाका मूलधन, दण्डव्यवस्था तथा खजाना समृद्ध हो) एवं कोशमंडलसम्पन्न राजाको भी यह अविश्वासपूर्वक त्याग देती है। लताकी नाई यह विटपों (वृक्षों अथवा धूर्तों) का आश्रय लेती है। जैसे गंगा वसुओंकी माता होनेपर भी तरंगों तथा बुद्बुदोंसे चञ्चल रहती है, उसी प्रकार यह लक्ष्मी धनकी जननी होती हुई भी तरंग और बुद्बुदके समान चञ्चल रहती है। जैसे सूर्य अनेक राशियोंपर संक्रमण करता रहता है, उसी प्रकार लक्ष्मी भी एक व्यक्तिसे दूसरे और दूसरेसे तीसरेके पास जाती रहती है। पातालकी कन्दराके समान यह सदा तम (अन्धकार अथवा तमोगुण) से भरी रहती है। हिडिम्बा (भीमकी पत्नी और घटोत्कचकी माता) के समान इसका हृदय एकमात्र भीमसाहस अर्थात् अतिशय कठिन साहससे ही इस लक्ष्मीका हृदय हरा जा सकता है। (हिडिम्बा एक राक्षसी थी, जो भीमसेनका साहस देखकर उसपर मुग्ध हो गयी थी।) वर्षाऋतुके समान यह क्षणभंगुर ज्योति (बिजली अथवा दीप्ति) को जन्म देती है। यह दुष्टा पिशाचिनीके समान अनेक पुरुषोंकी उन्नति (ऊँचाई अथवा अभ्युदय) प्रदर्शित करती है, किन्तु अल्पबली पुरुषोंको पागल बना देती है। जिस पुरुषपर सरस्वतीकी कृपा रहती है, उसका जैसे ईर्ष्यावश आलिंगन नहीं करती। गुणीको जैसे अछूत समझकर उसको नहीं छूती। उदार व्यक्तिको जैसे मनहूस समझकर उसका सम्मान नहीं करती। सज्जनको कुल-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुजनमनिमित्तमिव न पश्यति। अभिजातमहिमिव लंघयति। शूरं कण्टकमिव परिहरति। दातारं दुःस्वप्नमिव न स्मरति। विनीतं पातकिनमिव नापसर्पति। मनस्विनमुन्मत्तमिवोपहसति। परस्परविरुद्धं चेन्द्रजालमिव दर्शयन्ती प्रकटयति जगति निजं चरितम्। तथा हि। संततमूष्माणमुपजनयन्त्यपि जाड्यमुपजनयति। उन्नतिमादधानापि नाचस्वभावतामाविष्करोति। तोयराशिसंभवापि तृष्णां संवर्धयति। ईश्वरतां दधानाप्यशिवप्रकृतित्वमातनोति। बलोपचयमाहरन्त्यपि लघिमानमापादयति। अमृतसहोदरापि कटुकविपाका, विग्रहवत्यप्यप्रत्यक्षदर्शना, पुरुषोत्तमरतापि खलजनप्रिया, रेणुमयीव स्वच्छमपि कलुषीकरोति। यथा यथा चेयं चपला दीप्यते तथा तथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव

क्षण समझकर उसकी ओर नहीं निहारती। कुलीनको साँप समझकर दूरसे ही त्यागकर चली जाती है। वीरको काँटा समझकर त्याग देती है। दाताको बुरा सपना मानकर स्मरण तक नहीं करती। विनीतको पातकी समझकर उसके पास नहीं जाती। मनस्वीको पागल समझकर उसकी हँसी उड़ाती है। यह लक्ष्मी इन्द्रजाल (जादूके खेल) के समान परस्परविरुद्ध धर्ममय चरित्र दिखलाती है। जैसे—यह सर्वदा उष्णता (गर्मी अथवा दर्प) उत्पन्न करती हुई भी जाड्य (ठंढक अथवा जड़ता) की सर्जना करती है। यह लक्ष्मी उन्नति (उत्कर्ष अथवा पदोन्नति) करती हुई भी नीच स्वभाव (अकर्तव्य कर्म) प्रदर्शित करती है। यह जलराशिमें जन्म पा करके भी तृष्णा (प्यास अथवा लोभ) बढ़ाती है। ईश्वरत्व (प्रभुता तथा शिवता) प्रदान करती हुई भी यह अशिव (अशुभ) प्रकृति कर देती है। बल (पराक्रम अथवा सेना) को बढ़ाती हुई भी यह लघिमा (कृपणता अथवा दैन्य) प्रदान करती है। अमृतकी सगी बहिन होती हुई भी यह लक्ष्मी अंतमें कटुता (तीतापन अथवा दुःखस्वरूपता) प्रदर्शित करती है। यद्यपि यह सशरीरा (मूर्तिमती अथवा कलहकारिणी) है, तथापि आँखोंसे नहीं दिखायी देती। पुरुषोत्तम (विष्णु अथवा सज्जन) पर अनुरक्त कहलाती हुई भी दुष्टोंसे प्रेम करती है। यह स्वच्छ (निर्मल अथवा शुद्धहृदय) को भी रेणुमय (मलिन अथवा रजोगुणी) कर देती है। यह चंचला लक्ष्मी ज्यों-ज्यों प्रकाश करती है, त्यों-त्यों दीपशिखा सदृश काजल जैसे काले कर्म ही उगलती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कम केवलमुदमति। तथा हि। इयं संवर्धनवारिधारा तृष्णाविषवल्लीनाम्, व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्, परामर्शधूमलेखा सच्चरितचित्राणाम्, विभ्रमशय्या मोहदीर्घनिद्राणाम्, निवासजीर्णवलभी धनमदपिशाचिकानाम, तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम्, पुरःपताका सर्वाविनयानाम, उत्पत्तिनिम्नगा क्रोधावेगग्राहाणाम्, आपानभूमिर्विषयमधूनाम्, सङ्गीतशाला भ्रूविकारनाट्यानाम, आवासदरी दोषाशीविषाणाम्, उत्सारणवेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम्, अकालप्रावृड् गुणकलहंसकानाम्, विसर्पणभूमिर्लोकापवादविस्फोटकानाम्, प्रस्तावना कपटनाटकस्य, कदलिका कामकरिणः, वध्यशाला साधुभावस्य, राहुजिह्वा धर्मेन्दुमंडलस्य। न हि तं पश्यामि यो ह्यपरिचितयानया न निर्भरमुपगूढः, यो वा न विप्रलब्धः। नियतमियमालेख्यगतापि चलति, पुस्तकमय्यपीन्द्रजाल-

---

क्योंकि जैसे जलकी धारा विषकी लताओंका पोषण करती है, उसी प्रकार यह तृष्णारूपिणी लताओंको सींचती है। यह इन्द्रियरूपी मृगोंकी व्याधगीति है। जैसे धुआँ चित्रको मिटा देता है, उसी प्रकार यह मनुष्यके सदाचारको नष्ट कर देती है। जैसे शय्यापर भली तरह निद्रा आती है, उसी तरह यह मोह (अज्ञान) की रमणशय्या है। जैसे टूटी-फूटी अँटारियोंपर चुड़ैलें रहती हैं, उसी प्रकार यह धनमदकी निवासभूमि है। यह लक्ष्मी शास्त्ररूपी दृष्टिका तिमिररोग (रतौंधी) है। यह सभी दुराचारोंके जलूमके आगे-आगे उड़ती हुई चलनेवाली पताका है। यह क्रोधके आवेशरूपी ग्राहोंको जन्म देनेवाली एक बड़ी भयानक नदी है। यह विषयरूपिणी मदिराकी भूमि अर्थात् मधुशाला है। यह लक्ष्मी भ्रूविकाररूपी अभिनयका सङ्गीतालय है। यह दोषरूपी सर्पोंके निवासकी कन्दरा है। यह सज्जनोंके सद्व्यवहारोंको मारकर दूर भगा देनेवाली बेंतकी छड़ी है। यह दया-धर्म आदि सद्गुणरूपी कलहंसोंके लिए असमयकी वर्षाऋतु है। यह लोकापवाद (लोकनिन्दा) रूपी विस्फोटक पदार्थोंका विस्तार करनेवाली भूमि है। यह कपटरूपी नाटककी प्रस्तावना है। यह कामरूपी गजराजके लिए केलेका वन है। यह साधुभाव (सद्व्यवहार) की वधशाला तथा धर्मरूपी चन्द्रमण्डलको चाट जानेवाले राहुकी जीभ है। मैं किसी भी ऐसे पुरुषको नहीं देखता, जिसे बिना जानी-पहचानी इस डायनने भरपूर आलिङ्गन करके बादमें धोखा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

माचरति, उत्कीर्णापि विप्रलभते, श्रुताप्यभिसंधत्ते, चिंतितापि वञ्चयति।

एवंविधयापि चानया दुराचारया कथमपि दैववशेन परिगृहीता विक्लवा भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति। तथाहि। अभिषेकसमय एव चैतेषां मङ्गलकलशजलैरिव प्रक्षाल्यते दाक्षिण्यम्, अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्, पुरोहितकुशाग्रसंमार्जनीभिरिवापह्रियते क्षान्तिः, उष्णीषपट्टबन्धेनेवाच्छाद्यते जरागमनस्मरणम्, आतपत्रमण्डलेनेवापसार्यते परलोकदर्शनम्, चामरपवनैरिवापह्रियते सत्यवादिता, वेत्रदण्डैरिवोत्सार्यन्ते गुणाः, जयशब्दकलकलरवैरिव तिरस्क्रियन्ते साधुवादाः, ध्वजपटपल्लवैरिव परामृश्यते यशः। तथाहि। केचिच्छ्रमवशशिथिलशकुनिगलपुटचटुलाभिः खद्योतोन्मेषमुहूर्तमनो-

---

न दिया हो। यह निश्चित है कि यदि इसे चित्रित करके रक्खा जाय, तब भी यह निकल भागती है। पुस्तकमें लिखी जानेपर भी यह ऐन्द्रजालिकी मायाका विस्तार करती है। यदि पत्थरपर खुदवायी जाय तो भी यह धोखा देती है। शास्त्रज्ञान रखनेवाली भी यह लक्ष्मी अपने भक्तोंके साथ दुर्व्यवहार करती है। बारबार चिन्तन करनेपर भी यह चिन्तकको ठगती ही है।

इस प्रकारकी यह दुराचारिणी लक्ष्मी भाग्यवश यदि राजाओंका किसी तरह परिग्रह कर भी ले तो इसकी चपेटमें पड़कर वे अधीर हो उठते हैं, जिससे सब प्रकारके दुराचार उनके मनमें घर कर लेते हैं। जैसे—राज्याभिषेक होते समय ही उनकी सारी चतुराई मङ्गलकलशसे गिरते हुए जलके साथ ही बह जाती है। अभिषेकके समय होनेवाले होमके धुएँसे ही उनके हृदय मलिन हो जाते हैं। पुरोहितके हाथमें विद्यमान कुशाग्ररूपी झाड़ू ही जैसे उनका क्षमा-गुण बुहार देती है। जैसे ही उनके सिरपर रेशमी कपड़ेकी पगड़ी बँधती है, तभी उन्हें बुढ़ौती स्मरण आने लगती है। माथेपर छत्र लगते ही उनकी परलोकसम्बन्धी भावना दूर भाग जाती है। चमरकी वायुसे ही जैसे उनकी सत्यवादिता उड़ जाती है। बेंतकी छड़ियों द्वारा जैसे उनके सभी सद्गुण बाहर निकाल दिये जाते हैं। जयजयकारके कोलाहल ही जैसे उनके सभी सौजन्यजनित गुणोंको दूर भगा देते हैं। ध्वजाके वस्त्र ही जैसे उनके यशको पोंछ डालते हैं। यही कारण है कि मनस्वी लोग सम्पदाका तिरस्कार करते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हराभिर्मनस्विजनगर्हिताभिः संपद्भिः प्रलोभ्यमाना धनलवलाभावलेपविस्मृतजन्मानोऽनेकदोषोपचितेन दोषासृजेव रागावेशेन बाध्यमानाः, विविधविषयग्रासलालसैः पञ्चभिरप्यनेकसहस्रसंख्यैरिवेन्द्रियैरायास्यमानाः, प्रकृतिचञ्चलतया लब्धप्रसरेणैकेनापि शतसहस्रतामिवोपगतेन मनसाकुलीक्रियमाणा विह्वलतामुपयान्ति। ग्रहैरिव गृह्यन्ते, भूतैरिवाभिभूयन्ते, मन्त्रैरिवावेश्यन्ते, सत्त्वैरिवावष्टभ्यन्ते, वायुनेव विडम्ब्यन्ते, पिशाचैरिव ग्रस्यन्ते, मदनशरैर्मर्माहता इव मुखभङ्गसहस्राणि कुर्वते, धनोष्मणा पच्यमाना इव विचेष्टन्ते, गाढप्रहाराहता इवाङ्गानि न धारयन्ति, कुलीरा इव तिर्यक्परिभ्रमन्ति, अधर्मभग्नगतयः पङ्गव इव परेण संचार्यन्ते, मृषावादविपाकसंजातमुखरोगा इवातिकृच्छ्रेण जल्पन्ति,

---

हैं। क्योंकि वह परिश्रमसे थके पक्षीकी गर्दनके सदृश चञ्चल तथा जुगुनूके प्रकाशकी तरह केवल क्षण भरके लिए सुन्दर लगती है। वह सम्पदा बहुतेरे लोगोंको लुभा लेती है। वे थोड़ेसे धनके लोभवश अपने जन्मके समयकी दशा भूल जाते हैं। वे वात-पित्तादि दोषोंसे दूषित रुधिरके समान काम-क्रोधादि दोषोंसे समृद्ध विषयोंमें आसक्त होकर विविध यातनायें भोगते हैं। विविध विषयोंका रसास्वादन करनेकी इच्छावश संख्यामें पाँच होती हुई भी अनेक सहस्र-सी मालूम पड़नेवाली ज्ञानेन्द्रियोंसे वे बहुत कष्ट पाते हैं। जब चञ्चल प्रकृतिका सहारा मिलता है तो मन अकेला होता हुआ भी जैसे हजारोंकी संख्यामें परिणत होकर व्याकुल कर देता है, जिससे वे राजे विह्वल हो जाते हैं। ऐसी स्थितिमें जैसे उन्हें ग्रह घेर लेते हैं, उन राजाओंके सिरपर भूत सवार हो जाता है, जैसे मन्त्रोंका उनमें आवेश आ जाता है और जैसे बड़े-बड़े भयंकर जीव उन्हें बरबस धर दबोचते हैं। वायु जैसे उनकी हँसी उड़ाती है। पिशाच जैसे उन्हें निगल जाते हैं। जैसे कामदेवके बाणोंसे भयभीत होकर वे हजारों तरहसे मुँह बिगाड़ते हैं और जैसे धनकी गर्मी झुलस रही हो, इस प्रकार वे छटपटाते हैं। जैसे भीषण प्रहारसे आहत होकर वे अङ्गोंको वशमें नहीं रख पाते। केकड़ोंकी तरह वे टेढ़ी चाल चलते हैं। जैसे अधर्मके कारण उनकी गतिशक्ति लुप्त हो जाती है और पंगुकी भाँति औरोंके सहारे चलते हैं। सदा असत्य बोलते रहनेके कारण जैसे उनके मुँहमें रोग हो जाता है। जिससे वे बड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सप्तच्छदतरव इव कुसुमरजोविकारैः पार्श्ववर्तिनां शिरःशूलमुत्पादयन्ति, आसन्नमृत्यव इव बन्धुजनमपि नाभिजानन्ति, उत्कम्पितलोचना इव तेजस्विनो नेक्षन्ते, कालदष्टा इव महामन्त्रैरपि न प्रतिबुध्यन्ते, जातुषाभरणानीव सोष्माणं न सहन्ते, दुष्टवारणा इव महामानस्तम्भनिश्चलीकृता न गृह्णन्त्युपदेशम् , तृष्णाविषमूर्च्छिताः कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति, इषव इव पानवर्धिततैक्ष्ण्याः परप्रेरिता विनाशयन्ति, दूरस्थितान्यपि फलानीव दण्डविक्षेपैर्महाकुलानि शातयन्ति, अकालकुसुमप्रसवा इव मनोहराकृतयोऽपि लोकविनाशहेतवः, श्मशानाग्नय इवातिरौद्रभू-

---

कठिनाईसे बोल पाते हैं। जैसे सप्तपर्ण (छतिवन) का वृक्ष अपने पुष्पोंके परागसे आस-पासके लोगोंके माथेमें दर्द पैदा कर देता है, उसी प्रकार वे रजोगुणजनित विकारसे अपने पार्श्ववर्तियोंके सिरमें शिरःशूल उत्पन्न कर देते हैं। जैसे मरणोन्मुख मनुष्य कुछ नहीं देख पाता, उसी प्रकार वे अपने समीपवर्तियोंको भी नहीं देख पाते। जैसे आँख उठने अथवा कोई रोग हो जानेपर लोग उजालेको नहीं देखते, उसी प्रकार वे ईर्ष्यावश तेजस्वी पुरुषोंकी ओर नहीं निहारते। जिस तरह कालरूपी सर्पसे काटे हुए मनुष्यको विषवैद्य बड़े-बड़े मंत्रोंसे भी होशमें नहीं ला पाते, उसी प्रकार वे बड़ीसे बड़ी मंत्रणासे भी नहीं सजग होते। जैसे लाखकी बनी चूड़ी आदि वस्तु गर्मी नहीं सह सकती, उसी प्रकार वे किसीका धनी होना नहीं सह पाते। जैसे दुष्ट हाथी सिक्कड़ों द्वारा बड़े भारी खम्भेमें बाँधकर निश्चल कर दिये जानेपर भी महावतकी शिक्षा नहीं ग्रहण करता, उसी प्रकार वे अहङ्कारवश किसीका सदुपदेश हृदयङ्गम नहीं करते। तृष्णारूपी विषसे मोहित होकर वे सभी चीजोंको सुवर्णमय देखते हैं। जिस तरह सानपर चढ़ाकर तीक्ष्ण किया हुआ बाण धनुष द्वारा छोड़े जानेपर अपने लक्ष्यको नष्ट कर देता है, उसी प्रकार वे भी मदिरा पीकर क्रूरता बढ़ जानेपर शत्रुके द्वारा उकसाये जाकर औरोंका विनाश कर देते हैं। जैसे लोग डालपर बहुत दूर लगे फलको डंडेसे मारकर गिरा लेते हैं, उसी प्रकार वे भी दण्डप्रयोग अर्थात् जुर्माना आदि लगाकर दूरसे दूरके कुलीन लोगोंको उखाड़ फेंकते हैं। असमयमें फूले फूलकी तरह देखनेमें सुन्दर लगते हुए भी वे लोगोंके विनाशके हेतु होते हैं। श्मशान-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तयः, तैमिरिका इवादूरदर्शिनः उपसृष्टा इव क्षुद्राधिष्ठितभवनाः, श्रूयमाणा अपि प्रेतपटहा इवोद्वेजयन्ति, चिन्त्यमाना अपि महापातकाध्यवसाया इवोपद्रवमुपजनयन्ति, अनुदिवसमापूर्यमाणाः पापेनेवाध्मातमूर्तयो भवन्ति, तदवस्थाश्च व्यसनशतसंख्यतामुपगता वल्मीकतृणाग्रावस्थिता जलबिन्दव इव पतितमप्यात्मानं नावगच्छन्ति।

अपरे तु स्वार्थनिष्पादनपरैर्धनपिशितग्रासगृध्रैरास्थाननलिनीधूर्तबकैर्द्यूतं विनोद इति, परदाराभिगमनं वैदग्ध्यमिति, मृगयां श्रम इति, पानं विलास इति, प्रमत्ततां शौर्यमिति, स्वदारपरित्यागमव्यसनितेति, गुरुवचनावधीरणमपरप्रणेयत्वमिति, नृत्तगीतवाद्यवेश्याभिसक्तिं रसिकतेति, महापराधावकर्णनं महानुभावतेति, पराभवसहत्वं क्षमेति, स्वच्छन्दता

को अग्निके समान उनकी सम्पदा बड़ी भयकर होती है। तिमिरांधनामक नेत्ररोगीके समान वे अदूरदर्शी होते हैं। जैसे रतिपरायणा वेश्याओंके घरमें कामी पुरुषोंका जमावड़ा रहता है, उसी प्रकार उनके यहाँ भी क्षुद्र पुरुषोंकी ही मंडली जमी रहती है। जैसे मुर्देके साथ बजनेवाला बाजा उद्वेग उत्पन्न करता है, उसी प्रकार उनका नाम भी सुननेसे उद्वेग बढ़ जाता है। उनका स्मरण भी आ जानेपर बड़े-बड़े उपद्रव वैसे ही उपस्थित हो जाते हैं। जसे महान् पातकोंका स्मरण होनेपर मन उद्विग्न होता है। दिनो-दिन बढ़ते हुए पापसे ही जैसे वे फूलकर तुन्दिल हो जाते हैं। ऐसी दशामें सेकड़ों व्यसनोंके व्यसनी होते हुए भी वे वल्मीकपर उगे तृणके अग्रभागमें स्थित जलबिन्दुके समान अपने आपको पतित नहीं समझते।

इनके अतिरिक्त कितने ही स्वार्थसाधनपरायण, धनरूपी मांसको नोच-नोचकर खानेवाले गृध्र, सभारूपिणी कमलिनीके बगुले सरीखे धूर्त लोग राजाओंको समझाकर कहते हैं—जुआ मनोरंजन है, परस्त्रीगमन चतुराई है, शिकार व्यायाम है, मदिरापान विलास है, प्रमाद वीरता है, अपनी ब्याहता स्त्रीको त्यागना व्यसनसे बचना है, गुरुजनोंकी बातका अनादर करना स्वतंत्रता है, अपराधी सेवकोंको दण्ड न देना सुसेव्य प्रभु बननेकी कुंजी है, नाचना-गाना-बजाना और सदा बाजारू वेश्याओंमें लिप्त रहना रसिकता है, बड़े-बड़े अपराधोंको सुनकर भी अनसुनी कर देना बड़प्पन है, औरोंसे अपमानित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रभुत्वमिति देवावमाननं महासत्त्वतेति, वन्दिजनख्यातिं यश इति, तरलतामुत्साह इति, अविशेषज्ञतामपक्षपातित्वमिति, दोषानपि गुणपक्ष-मध्यारोपयद्भिरन्तः स्वयमपि विहसद्भिः प्रतारणकुशलैर्धूर्तैरमानुपलोको-चिताभिः प्रतार्यमाणा वित्तमदमत्तचित्ता निश्चेतनतया तथैवेत्यात्मन्या-रोपितालीकाभिमाना मर्त्यधर्माणोऽपि दिव्यांशावतीर्णमिव सदैवतमिवा-तिमानुषमात्मानमुत्प्रेक्षमाणाः प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावाः सर्वजन-स्योपहास्यतामुपयान्ति। आत्मविडम्बनां चानुजीविना जनेन क्रियमा-णामभिनन्दन्ति । मनसा देवताध्यारोपणविप्रतारणादसद्भूतसंभावनोप-हताश्चान्तःप्रविष्टापरभुजद्वयमिवात्मबाहुयुगुलं संभावयन्ति। त्वगन्तरि-ततृतीयलोचनं स्वललाटमाशङ्कन्ते। दर्शनप्रदानमप्यनुग्रहं गणयन्ति । दृष्टिपातमप्युपकारपक्षे स्थापयन्ति। संभाषणमपि संविभागमध्ये कुर्व-

---

होकर तिरस्कार सह लेना क्षमा है, स्वेच्छाचार प्रभुता है, देवताओंका अपमान करना बहुत बड़ी वीरता है, बन्दीजनों द्वारा की गयी प्रशंसा यश है, मनकी चपलता उत्साह है एवं भले-बुरेमें कोई भेद न समझना ही निष्पक्षपातिता है। इस प्रकार वे धूर्त दोषोंको भी गुणके रूपमें उपस्थित करते हैं। इन मान्यताओं-पर यद्यपि वे स्वयं भी मन ही मन हँसते हैं । तथापि मनुष्योंके लिए अयोग्य तथा देवताओंके योग्य स्तुतियाँ कर-करके वे राजाओं ठगते हैं । धनके मदसे उन राजाओंका चित्त मतवाला हो जाता है । अतएव अज्ञानतावश वे उन धूर्तोंकी बात सच मानकर व्यर्थ अभिमान करने लगते हैं । उसी आवेशमें वे मनुष्य होते हुए भी अपनेको देवांशसे जायमान, सदैवत अथवा साक्षात् देवता ही समझकर दिव्यपुरुषोचित कार्य करके अपनी महिमा प्रदर्शित करते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि वे सबके उपहासास्पद बन जाते हैं। सेवकगण यदि उनकी मखौल करते हों तो उसका भी वे अभिनन्दन करते हैं। अपनेको देवता समझनेकी मूर्खतापूर्ण धारणासे उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है । तब वे सोचने लगते हैं कि 'मेरी इन दो भुजाओंके भीतर दो भुजायें और छिपी हैं । अतएव मैं मनुष्य न होकर साक्षात् विष्णु हूँ ।' इसी प्रकार मस्तककी त्वचाके भीतर तृतीय नेत्र छिपा मानकर वे अपनेको शिव समझने लगते हैं। लोगोंको दर्शन देनेमें वे अपनी कृपा समझते हैं । दृष्टिपातको भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्ति। आज्ञामपि वरदानं मन्यन्ते। स्पर्शमपि पावनमाकलयन्ति। मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराश्च न प्रणमन्ति देवताभ्यः, न पूजयन्ति द्विजातीन्, न मानयन्ति मान्यान्, नार्चयन्त्यर्चनीयान्, नाभिवादयन्त्यभिवादनार्हान्, नाभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून्, अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखमित्युपहसन्ति विद्वज्जनम्, जरावैक्लव्यप्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम्, आत्मप्रज्ञापरिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय, कुप्यन्ति हितवादिने।

सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति, तं संवर्धयन्ति, तेन सह सुखमवतिष्ठन्ते, तस्मै ददति, तं मित्रतामुपजनयन्ति, तस्य वचनं शृण्वन्ति, तत्र वर्षन्ति, तं बहु मन्यन्ते, तमाप्ततामापादयन्ति, योऽहर्निशमनवरतमुपरचिताञ्जलिरधिदैवतमिव विगतान्यकर्तव्यः स्तौति, यो वा माहात्म्यमुद्भावयति। किं वा तेषां सांप्रतं येषामतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणं कौटिल्यशास्त्रं प्रमाणम्, अभिचारक्रियाः

वे उपकार गिनते हैं। वार्तालापको पुरस्कारवितरण मानते हैं। आज्ञाप्रदानको वरदान समझते हैं। अपने स्पर्शतकको पुनीत सोचते हैं। वे अपनी महिमाके मिथ्या गर्वसे फूलकर देवताओंको प्रणाम नहीं करते, द्विजजनोंकी अर्चना नहीं करते, मान्यजनोंका सम्मान नहीं करते, पूज्योंकी पूजा नहीं करते, नमस्कारके योग्य लोगोंको नमस्कार नहीं करते और आसनसे उठकर गुरुजनोंका आदर नहीं करते। विद्वान् लोगोंको सुखभोग छोड़कर धर्मके लिए व्यर्थ परिश्रम करनेवाला गँवार समझकर वे उनका उपहास करते हैं। वृद्धोंके उपदेशको वूढ़ोंका प्रलाप समझते हैं। मंत्रीकी सलाहको अपना बुद्धिकी अवज्ञा समझकर उससे डाह करने लगते हैं। उनके भलेके लिए कुछ कहनेवालेपर कुपित हो जाते हैं।

जो अन्य सब काम छोड़ रात-दिन हाथ जोड़कर देवताकी तरह स्तुति करता हुआ उनके गुण गाता है, वे सर्वथा उसीका अभिनन्दन करते हैं। उसीको अपने पास बैठाते हैं। उसीका उसीके साथ सम्भाषण करते हैं। उसीका संवर्धन करते हैं। उसीके साथ सुखसे रहते हैं। उसीको दान देते हैं। उसीसे मैत्री करते हैं। उसीकी बात सुनते हैं। उसीपर धन बरसाते हैं। उसीका सम्मान करते हैं और उसीको अपना विश्वासपात्र मानते हैं। उन राजाओंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्रूरैकप्रकृतयः पुरोधसो गुरवः, पराभिसंधानपरा मन्त्रिण उपदेष्टारः, नरपतिसहस्रभुक्तोज्झितायां लक्ष्म्यामासक्तिः, मारणात्मकेषु शास्त्रेष्वभियोगः, सहजप्रेमार्द्रहृदयानुरक्ता भ्रातर उच्छेद्याः। तदेवंप्रायातिकुटिलकष्टचेष्टासहदारुणे राज्यतन्त्रेऽस्मिन्महामोहकारिणि च यौवने कुमार! तथा प्रयतेथा यथा नोपहस्यसे जनैः, न निन्द्यसे साधुभिः, न धिक्क्रियसे गुरुभिः, नोपालभ्यसे सुहृद्भिः। न शोच्यसे विद्वद्भिः। यथा च न प्रकाश्यसे विटैः, न प्रतार्यसे कुशलैः, नास्वाद्यसे भुजङ्गैः, नावलुप्यसे सेवकवृकैः, न वञ्च्यसे धूर्तैः, न प्रलोभ्यसे वनिताभिः, न विडम्ब्यसे लक्ष्म्या, न नर्त्यसे मदेन, नोन्मत्तीक्रियसे मदनेन, नाक्षिप्यसे विषयैः, नावकृष्यसे रागेण, नापह्रियसे सुखेन। कामं

विषयमें और कहाँ तक कहा जाय। वे अतिशय क्रूरतापूर्ण उपदेशोंसे भरे चाणक्यशास्त्रको ही प्रमाण मानते हैं। निरन्तर मारणक्रिया करते रहनेसे क्रूर प्रकृतिवाले पुरोहितोंको ही वे अपना गुरु समझते हैं। अन्यान्य लोगोंको ठगनेमें संलग्न मंत्री ही उनके उपदेशक होते हैं। सहस्रों राजाओं द्वारा भोगकर छोड़ी हुई लक्ष्मीमें वे सदा आसक्त रहा करते हैं। मारण-उच्चाटन आदि प्रयोगसम्बन्धी शास्त्रोंका ही वे विशेष मनन-मन्थन करते हैं। किन्तु स्वाभाविक प्रेमवश हृदयसे अनुराग रखनेवाले भाइयोंका मूलोच्छेद कर देनेको तत्पर रहते हैं। अतएव हे राजकुमार चन्द्रापीड! इसी प्रकारकी हजारों अतिशय कुटिल तथा कष्टदायिनी चेष्टाओंके कारण कठोर राज्यशासनके व्यवहार तथा इस महामोहकारी यौवनमें तुम ऐसा प्रयत्न करो कि जिससे लोग तुम्हारा उपहास न करें। साधुजन तुम्हारी निन्दा न करें, गुरुजन तुम्हें धिक्कार न दें, तुम्हारे मित्रगण उलाहना न दे पायें और विद्वान् लोग संतप्त न हों। कामी लोग तुम्हारी बुराई न करें, चतुर लोग तुम्हें ठगें नहीं, लम्पटजन तुमसे धन न झँसें, भेड़िये जैसे भयानक भृत्यगण तुम्हें न लूटें, धूर्त तुम्हें धोखा न दे सकें, स्त्रियाँ तुम्हें लुभा न सकें, लक्ष्मी तुम्हारी बिडम्बना न करे, मद (अहंकार) न नचाये, कामदेव तुम्हें प्रमादी न बना सके, विषयवासना तुम्हें कुपथकर न ले जा पाये, राग तुम्हें अपनी ओर न खींच सके और सुख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भवान्प्रकृत्यैव धीरः, पित्रा च समारोपितसंस्कारः, तरलहृदयमप्रतिबुद्धं च मदयन्ति धनानि, तथापि भवद्गुणसंतोषो मामेवं मुखरीकृतवान्। इदमेव च पुनःपुनरभिधीयसे। विद्वांसमपि महासत्त्वमप्यभिजातमपि धीरमपि प्रयत्नवन्तमपि पुरुषमियं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीरिति। सर्वथा कल्याणैः पित्रा क्रियमाणमनुभवतु भवान्नवयौवराज्याभिषेकमङ्गलम्। कुलक्रमागतामुद्वह पूर्वपुरुषैरूढां धुरम्। अवनमय द्विषतां शिरांसि। उन्नमय स्वबन्धुवर्गम्। अभिषेकानन्तरं च प्रारब्धदिग्विजयः परिभ्रमन्विजितामपि तव पित्रा सप्तद्वीपभूषणां पुनर्विजयस्व वसुन्धराम्। अयं च ते कालः प्रतापमारोपयितुम्। आरूढप्रतापो राजा त्रैलोक्यदर्शीव सिद्धादेशो भवति, इत्येतावदभिधायोपशशाम। उपशान्तवचसि शुकनासे चन्द्रापीडस्ताभिरुपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीलित इव, स्वच्छीकृत इव, निर्मृष्ट इव, अभिषिक्त

तुम्हें अपने अधीन न कर ले। वैसे तो तुम स्वयं बड़े धैर्यशाली हो। तुम्हारे पिताने बड़े यत्नपूर्वक तुम्हारे सब संस्कार सम्पन्न किये हैं। केवल चंचल हृदय और मूढ़ प्रकृतिवाले लोगोंको ही धनका मद होता है। तथापि तुम्हारे गुणोंसे प्रसन्न होकर ही मैंने इतना कहा है—और फिर भी कह रहा हूँ कि कोई मनुष्य चाहे कितना ही विद्वान्, सावधान, महाबली, कुलीन, धैर्यवान् और उद्योगी क्यों न हो, उसे भी यह दुष्टा लक्ष्मी खल बना डालती है। अपने पिताके द्वारा किये गये इस मङ्गलमय यौवराज्याभिषेकसे प्राप्त होनेवाले सभी कल्याणोंसे प्राप्त सब प्रकारके सुख भोगो। अपने कुलक्रमसे चले आते हुए राज्यभारका वहन करो। शत्रुओंका मस्तक नीचा कर दो। अपने बन्धुजनोंका उत्कर्ष करो। अभिषेकके बाद दिग्विजयके लिए चल पड़ो और अपने पिता द्वारा विजित सप्तद्वीपवती वसुन्धराको फिरसे जीतो। यह तुम्हारे प्रभाव बढ़ानेका समय है। जिस राजाका प्रभाव जम जाता है, वह त्रैलोक्यदर्शी सिद्ध पुरुषके समान अपनी आज्ञा सबसे मनवा लेता है। क्योंकि सिद्ध पुरुषका वचन सर्वथा सत्य होता है।' यह कहकर महामंत्री शुकनास खामोश हो गया। मंत्रीके चुप हो जानेपर चन्द्रापीड उन उपदेशोंसे जैसे धुल गया हो, विकसित हो गया हो, स्वच्छ हो गया हो, चमक उठा हो, सुस्नात हो चुका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव, अभिलिप्त इव, अलंकृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयो मुहूर्तं स्थित्वा स्वभवनमाजगाम।

ततः कतिपयदिवसापगमे च राजा स्वयमुत्क्षिप्तमङ्गलकलशः सह शुकनासेन पुण्येऽहनि पुरोधसा संपादिताशेषराज्याभिषेकमङ्गलमनेकनरपतिसहस्रपरिवृतः सर्वेभ्यस्तीर्थेभ्यः सर्वाभ्यो नदीभ्यः सर्वेभ्यश्च सागरेभ्यः समाहृतेन सर्वौषधिभिः सर्वफलैः सर्वमृद्भिः सर्वरत्नैश्च परिगृहीतेनानन्दबाष्पजलमिश्रेण मन्त्रपूतेन वारिणा सुतमभिषिषेच। अभिषेकसलिलार्द्रदेहं च तं लतेव पादपान्तरं निजपादपमसुञ्चत्यपि तारापीडं तत्क्षणमेव संचक्राम राज्यलक्ष्मीः। अनन्तरमखिलान्तःपुरपरिवृतया च प्रेमार्द्रहृदयया विलासवत्या स्वयमापादतलादामोदिना चन्द्रातपधवलेन चन्दनेनानुलिप्तमूर्तिः, अभिनवविकसितकुसुमकृतशेखरः, गोरोचनाच्छुरितदेहः, दूर्वाप्रवालरचितकर्णपूरः, दीर्घदशम-

---

हो, अलंकृत हो गया हो, विभूषित हो गया हो, पुनीत हो गया हो और देदीप्यमान हो उठा हो। इस प्रकार मन ही मन प्रसन्न होकर कुछ देर वहाँ रुकनेके बाद चन्द्रापीड अपने महलको लौट गया।

तदनन्तर कुछ दिन बीतनेके बाद एक शुभ दिन राजपुरोहितने राज्याभिषेककी समस्त मांगलिक सामग्री उपस्थित कर दी। तब मंत्री शुकनास तथा कई हजार राजाओंके साथ राजा तारापीडने स्वयं अपने हाथमें मंगलकलश लेकर सभी तीर्थोंसे, सब नदियोंसे और सब सागरोंसे लाये गये तथा सब औषधियोंसे, सब फलोंसे, सब प्रकारकी मिट्टियोसे, सब रत्नोसे परिपूर्ण, आनन्दाश्रुमिश्रित एवं सब मंत्रों द्वारा पवित्रित जलसे राजकुमारका अभिषेक किया। जिस तरह लता अपने मूल वृक्षको छोड़े बिना ही दूसरे वृक्षपर लग जाती है, उसी तरह राज्यलक्ष्मी भी राजा तारापीडको छोड़े बिना ही अभिषेकसे गीले शरीरवाले राजकुमार चन्द्रापीडके पास तत्काल जा पहुँची। तत्पश्चात् समस्त अन्तःपुरसे घिरी और प्रेमसे आर्द्रहृदया रानी विलासवतीने अपने हाथों उसके मस्तकसे लेकर पैरोंतक चन्द्रमाकी चाँदनीसदृश उज्ज्वल एवं सुगन्धित चन्दन लगाया। फिर उसने खिले हुए ताजे श्वेत पुष्पोंका बना मुकुट पहनाया, शरीरपर गोरोचन लगाया, दूर्वादलके बने कर्णपूर तथा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नुपहतमिन्दुधवलं दुकूलयुगलं वसानः, पुरोहितप्रतिबद्धप्रतिसरप्रसाधितपाणिः, नवराजलक्ष्मीकमलिनीमृणालेनाभिषेकदर्शनार्थमागतेन सप्तर्षिमण्डलेनेव हारेणालिङ्गितवक्षःस्थलः, सितकुसुमग्रथिताभिराजानुलम्बिनीभिरिन्दुकरकलाभिर्वैकक्षकस्रग्भिर्निरन्तरनिचितशरीरतया धवलवेषपरिग्रहतया च नरसिंह इव विधृतकेसरनिकरः, कैलास इव स्रवत्स्रोतस्विनीस्रोतोराशिः, ऐरावत इव मन्दाकिनीमृणालनालजटिलः, क्षीरोद इव स्फुरितफेनलवाकुलस्तत्कालप्रतिपन्नवेत्रदण्डेन पित्रा स्वयं पुरःप्रारब्धसमुत्सारणः सभामण्डपमुपगम्य काञ्चनमयं शशीव मेरुशृङ्गं चन्द्रापीडः सिंहासनमारुरोह ।

आरूढस्य चास्य कृतयथोचितसकलराजलोकसंमानस्य मुहूर्तं स्थित्वा दिग्विजयप्रयाणशंसी प्रलयघनघटाघोषघर्घरध्वनिरुद्धधिरिव मन्दरघातैः, वसुन्धरापीठमिव युगान्तनिर्घातैः, उत्पातजलधर इव

चौड़े पाड़के चन्द्रमासदृश उजले दो नवीन वस्त्र पहनाये । तभी पुरोहितने मंगलसूत्र बाँधकर उसका हाथ सुशोभित कर दिया । नूतन राज्यलक्ष्मीरूपिणी कमलिनीके मृणाल तथा राजकुमारका अभिषेक देखनेको आये हुए सप्तर्षिमण्डलके समान शुभ्र मोतियोंका हार वक्षस्थलपर धारण किया। श्वेत पुष्पोंकी गुँथी, जंघातक लटकती, चन्द्रकिरणों सरीखी सुन्दर तथा यज्ञोपवीतके सदृश पहनी हुई मालाओंसे सारा शरीर भर जाने और उसी श्वेत रंगकी पोशाक भी होनेके कारण राजकुमार चन्द्रापीड ऐसा शोभित हुआ । जैसे छितरायी हुई श्वेत जटायुक्त नृसिंह, नदियोंके प्रवाहसे अलंकृत कैलास, आकाशगंगासे उत्पन्न कमलोंके मृणालसे युक्त ऐरावत एवं उफनते फेनसे अलंकृत क्षीरसागर हो । उस समय पिता राजा तारापीड स्वयं अपने हाथमें बेंतकी छड़ी लेकर भीड़को हटाने-बढ़ाने लगा । तब सभामण्डपमें जाकर चन्द्रापीड उसी तरह सिंहासनपर बैठा, जैसे सुमेरुपर्वतके स्वर्णिम शिखरपर चन्द्रमा आरूढ होता है ।

इस प्रकार सिंहासनासीन होकर चन्द्रापीडने सब राजाओंका यथोचित सम्मान किया । फिर तनिक ही देर बाद दिग्विजयके निमित्त प्रस्थानकी सूचना देनेवाली प्रलयकालीन मेघघटाके गर्जन सदृश घरघर शब्द करती हुई तथा स्वर्णदंड द्वारा बजायी गयी प्रस्थानदुन्दुभीकी तुमुल ध्वनि गूँज

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तडिद्दण्डपातैः, पातालकुक्षिरिव महावराहघोणाभिघातैः, कनककोणैरभिहन्यमानः प्रस्थानदुन्दुभिरामन्थरं दध्वान। येन ध्वनता समाध्मातानीवोन्मीलितानीव पृथक्कृतानीव विस्तारितानीव गर्भीकृतानीव प्रदक्षिणीकृतानीव बधिरीकृतानीव रवेण भुवनान्तराणि विश्लेषिता इव दिशामन्योन्यबन्धसंधयः। यस्य च भयवशविषमचलितोत्तानफणासहस्रेणालिङ्ग्यमान इव रसातले शेषेण, मुहुर्मुहुरभिमुखदन्तोर्ध्वघातैराहूयमान इव दिक्षु दिक्कुञ्जरैः, संत्रासरचितरेचकमण्डलैः प्रदक्षिणीक्रियमाण इव नभसि दिवसकररथतुरङ्गमैः, अपूर्वशर्वाट्टहासशङ्काहर्षहुंकृतेनाश्रुतपूर्व आभाष्यमाण इव कैलासशिखरिणि त्र्यम्बकवृषभेण, कृतगम्भीरकण्ठगर्जितेन प्रत्युद्गम्यमान इव मेरावैरावतेन, अश्रुतपूर्वरवरोषावेशतिर्यगवनमितविषाणमण्डलेन प्रणम्यमान इव विबुधसद्मनि कृतान्तमहिषेण, संत्रस्तलोकपालाकर्णितो बभ्राम त्रिभुवनं निनादः।

उठी। उस समय ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे मन्दराचलके आघातसे क्षीरसमुद्र, प्रलयकालमें निर्घातवायुके आघातसे महाभूतोंके परस्पर टकरानेपर पृथिवी, बिजलीरूपी दण्डके गिरनेसे प्रलयङ्कर मेघ तथा महावराहकी नासिकाके आघातसे पाताल गम्भीररूपमें चीत्कार कर रहा हो। उस भीषण निनादसे जैसे सभी भुवनान्तर भर गये, विकसित हो गये, पृथक् पृथक् हो गये, विस्तृत हो गये, लुप्त हो गये, घूमने लगे, बहरे हो गये और उन सबके पारस्परिक सन्धिबन्धन टूट गये। उस घनघोर शब्दका रसातलमें भयके कारण अति भीषण अपने हजारों फणोंसे शेषभगवान् जैसे आलिंगन करने लगे। बार-बार अपने दाँत ऊपरको उठाकर दिग्गज जैसे उसे अपने पास बुलाने लगे। आकशमें सूर्यरथके घोड़े भयभीतभावसे मण्डल बनाकर जैसे उसकी परिक्रमा करने लगे। कैलासपर शंकरजीका नादिया उस निनादको शिवजीका अपूर्व हास्य समझकर जैसे अपने पास आनेका निमंत्रण देने लगा। स्वर्गलोकमें इन्द्रका ऐरावत अपने कंठसे भीषण गर्जन करके जैसे उस तुमुल ध्वनिका सत्कार करने लगा। उस अश्रुतपूर्व निनादको सुनकर यमपुरीमें यमराजका महामहिष रोषमें भर और सींगें टेढ़ी करके जैसे प्रणाम करने लगा। लोकपालगण उसे सुनकर डर गये। इस प्रकार दुन्दुभीका वह महानिनाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ततो दुन्दुभिरवमाकर्ण्य जयजयेति च सर्वतः समुद्घुष्यमाणजयशब्दः सिंहासनात्सह द्विषतां श्रिया संचचाल चन्द्रापीडः। समन्तात्ससंभ्रमोत्थितैश्च परस्परसंघट्टविघटितहारसूत्रविगलितानवरतमाशाविजयप्रस्थानमंगललीलालाजानिव मुक्ताफलप्रकरान्क्षरद्भिः, पारिजात इव सितकुसुममुकुलपातिभिः कल्पपादपैः, ऐरावत इव विमुक्तकरशीकरैराशागजैः, गगनाभोग इव तारागणवर्षिभिर्दिगन्तरैः, जलदकाल इव स्थूलजललवासारस्यन्दिभिर्जलधरैरनुगम्यमानो नरपतिसहस्रैरास्थानमण्डपान्निरगात्।

निर्गत्य च पूर्वारूढया पत्रलेखयाध्यासितान्तरासनामुपपादितप्रस्थानसमुचितमंगल्यालंकारां ससंभ्रमाधोरणोपनीतां करेणुकामारुह्याचलरेचकचक्रीकृतक्षीरोदावर्तपाण्डुरेण दशवदनबाहुदण्डावस्थितकैलासकान्तिना मुक्ताफलजालिना शतशलाकेनातपत्रेण निवार्यमाणातपो

तीनों लोकोंमें गूँज गया। उसे सुनते ही चारों ओर जयजयकार होने लगा और सिंहासनसे उतरकर चन्द्रापीड शत्रुओंकी श्रीके साथ-साथ चल पड़ा। उसे उठा देख सभी राजे भी उठ खड़े हुए और उसके पीछे-पीछे चलने लगे। उस समय परस्परकी धक्का-धुक्कीसे टूटकर छितराये हुए उनके मुक्ताहार ऐसे लग रहे थे, जैसे दिग्विजययात्राके उस मंगलमय अवसरपर धानका लावा बरस रहा हो। अथवा देवलोकसे कल्पवृक्ष एवं देवता पारिजातके श्वेत पुष्पों तथा कलियोंकी वर्षा कर रहे हों। अथवा दिग्गजोंके साथ ऐरावत अपनी सूँड़से जलकी बूँदें बरसा रहा हो या कि सब दिशाओंके साथ आकाश तारे बरसा रहा हो अथवा मेघगणों द्वारा वर्षाऋतु बड़ी-बड़ी बूँदोंवाली जलधारा उँड़ेल रही हों। ऐसी अपूर्व शोभाके बीच चंद्रापीड सभामण्डपसे बाहर निकला।

बाहर आकर वह महावत द्वारा शीघ्र लायी हुई उस हथिनीपर सवार हुआ कि जिसपर पत्रलेखा पहलेसे ही बैठी हुई थी और जो यात्राकालीन सभी मांगलिक अलंकारोंसे अलंकृत थी। तदनन्तर मन्दरगिरि द्वारा मथित क्षीरसमुद्रके आवर्तकी नाईं उज्ज्वल, रावणके भुजदण्डपर विराजमान कैलास सदृश तेजस्वी और मोतीकी झालरों युक्त सौ तीलियोंवाला विशाल छत्र आतप-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निर्गन्तुमारेभे। निर्गच्छंश्चाभ्यन्तरावस्थित एव प्राकारान्तरितदर्शनानां प्रतिपालयतां राज्ञामुन्मयूखानां चूडामणीनामलक्तकद्रवद्युतिमुषा बहलेनालोकबालातपेन राज्याभिषेकानन्तरप्रसृतेन स्वप्रतापवह्निनेवात्यर्थं पिञ्जरीक्रियमाणा दश दिशो यौवराज्याभिषेकजन्मना निजानुरागेणेव राज्यमानमवनितलमासन्नरिपुविनाशपिशुनेन दिग्दाहेनेव पाटलीक्रियमाणमम्बरतलमभिमुखागतभुवनतललक्ष्मीचरणालक्तकरसेनेव लोहितायमानातपं दिवसं ददर्श। विनिर्गतश्च ससंभ्रमप्रचलितगन्धगजघटासहस्रैरन्योन्यसंघट्टजर्जरितातपत्रमण्डलैरादरावनतमौलिशिथिलमणिमुकुटपंक्तिभिरावर्जितकर्णपूरैः कपोलस्थलस्खलितकुण्डलैराज्ञप्तसेनापतिनिर्दिश्यमाननामभिरवनिभुजां चक्रवालैः प्रणम्यमानः बहलसिन्दूररेणुपाटलेन क्षितितलदोलायमानमुक्ताकलापावचूलेन सितकुसुम-

---

निवारणार्थ उसके ऊपर ताना गया। चलते समय उस हथिनीके हौदेपर बैठे ही बैठे चन्द्रापीडने देखा कि असंख्य राजे द्वारपर खड़े होकर उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ऊँचे परकोटेके कारण यद्यपि उन राजाओंकी आकृति साफ-साफ नहीं दीख रही थी, किन्तु उनके मुकुटकी चूडामणियोंके महावरकी कान्ति चुरानेवाले बालरविके पुष्कल आलोक (प्रकाश) से दसों दिशायें जैसे राज्याभिषेकके बाद फैले हुए प्रतापरूपी अग्निसे अतिशय पीली हो गयीं। यौवराज्याभिषेकसे जायमान अनुरागवश जैसे भूतल लाल हो गया। शीघ्र ही होनेवाले शत्रुनाशको सूचित करनेवाले दिग्दाहसे जैसे अखिल गगनमण्डल गुलाबी रंगका हो गया और सम्मुख उपस्थित भुवनलक्ष्मीके चरणोंकी महावरसे दिनकी धूप लाल हो गयी। उसके बाहर आते ही राजाओंके विशाल समुदाय उसे प्रणाम करने लगे। वे बड़ी शीघ्रतासे अपने हजारों मदवाही हाथियोंको चला रहे थे। परस्पर एक दूसरेसे टकरानेके कारण उनके छत्र जर्जर हो गये। आदरपूर्वक मस्तक झुकानेके कारण उनके मुकुटमणिकी पंक्तियाँ शिथिल हो गयीं। उनके कर्णपूर झुक गये और उनके रत्नजटित कुण्डल सरककर कपोलोंपर आ गये। चंद्रापीडके आज्ञानुसार सेनापति एक-एक करके सभी राजाओंके नाम बताता जा रहा था। अत्यधिक सिन्दूर लगनेके कारण गन्धमादनका मस्तक लाल हो गया था। उसकी पीठपर फहराती पता-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मालाजालशबलशिरसा संलग्नसंध्यातपेन तिर्यगावर्जितश्वेतगंगाप्रवाहेण तारागणदन्तुरितशिलातलेन मरुगिरिणेव गन्धमादनेनानुगम्यमानः, कनकालंकारप्रभाकल्माषितावयवेन च दत्तकुङ्कुमस्थासकेनेवाकृष्यमाणेनेन्द्रायुधेन सनाथीकृतपुरोभागः शनैः शनैः प्रथममेव शातक्रतवीमाशामभिप्रतस्थे ।

अथ चलितगजघटाकम्पितातपत्रवनमनेककल्लोलपरंपरापतितचन्द्रमण्डलप्रतिबिम्बसहस्रं महाप्रलयजलधिजलमिव प्लावितमहीतलमद्भुतोद्भूतकलकलमखिलं संचचाल बलम् । उच्चलितस्य चास्य स्वभवनादुपपादितप्रस्थानमंगलो धवलदुकूलवासाः सितकुसुमांगरागो महता बलसमूहेन नरेन्द्रवृन्दैश्चानुगम्यमानो धृतधवलातपत्रो द्वितीय इव युवरा-

---

कामें टँकी मोतियोंकी झालर धरतीतक झूल रही थी। सफेद फूलोंकी मालाओंसे लदा हुआ उसका मस्तक विचित्र दीख रहा था। उसे दशामें उस देखकर ऐसा लगता था कि मानो सन्ध्याकालकी लालिमासे युक्त तिरछे बहते हुए श्वेत गंगाके बहाव तथा तारागणोंसे अलंकृत शिखरोंवाला सुमेरु पर्वत हो। सुनहले गहनोंकी दीप्तिसे अपने चितकबरे अंगोंपर जैसे केसरका तिलक लगाये हुए इन्द्रायुध सबके आगे-आगे चल रहा था। इस तरह राजकुमार चन्द्रापीड राजभवनसे प्रस्थान करके सर्वप्रथम पूर्व दिशाकी ओर चला।

इस प्रकार प्रस्थान कर देनेपर उसकी सेनाके सैनिक विचित्र तरहके कोलाहल करते हुए जैसे समस्त जगतीतलको प्लावित कर देंगे, इस तरह उसके पीछे-पीछे चले। हाथियोंके चलनेपर उनकी पीठपर तने छत्र हिलने लगे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो अगणित जलतरंगोंपर सहस्रों चन्द्रबिम्ब प्रतिबिम्बित हो रहे हों और प्रलयकालका समुद्र उमड़ पड़ा हो। थोड़ी ही देर बाद द्वितीय राजकुमारके समान सुन्दर वैशम्पायन भी एक द्रुतगामिनी हथिनीपर सवार होकर चन्द्रापीडसे आ मिला। उसने यात्राकालके सभी मांगलिक कृत्य सम्पन्न कर लिये थे। वह श्वेत वस्त्रकी बनी पोशाक पहने हुए था। श्वेत पुष्पोंकी माला उसके गलेमें शोभायमान थी। एक विशाल सेना तथा विपुल राजाओंका एक बहुत बड़ा झुण्ड उसके पीछे-पीछे चल रहा था। सिरपर छत्र लगा हुआ था। जब वह चन्द्रापीडके पास पहुँचा तो ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जस्त्वरितपदसंचारिण्या करिण्या वैशम्पायनः समीपमाजगाम। आगत्य च शशिकर इव रवेरासन्नवर्ती बभूव। अनन्तरमिनश्चेतश्च 'निर्गतो युवराजः' इति समाकर्ण्य प्रधावतां बलानां भरेण चलितकुलशैलकीलितजलधिजलतरङ्गगतेव तत्क्षणमाचकम्पे मेदिनी। संमुखागतैरन्यैश्चान्यैश्च प्रणमद्भिर्भूमिपालैः, अंशुलताजालजटिलचूलिकानां मणिमुकुटानामालोकेनोन्मिषितबहुलरोचिषां च पत्रभङ्गिनीनां केयूरमण्डलीनां प्रभासंतानेन क्वचिद्विकीर्यमाणचाषपक्षक्षोदा इव, क्वचिदुत्पतितशिखिकुलचलच्चन्द्रकशतशारा इव, क्वचिदकालजलधरतडित्तरला इव, क्वचित्सकल्पतरुपल्लवा इव, क्वचित्सशक्रचापा इव, क्वचित्सबालातपा इव क्रियन्ते दश दिशः। धवलान्यपि विविधमणिनिकरकल्माषैरुत्सर्पिभिश्चूडामणिमरीचिभिर्मायूराणीव राजन्ते राज्ञामातपत्राणि। क्षणेन च तुरगमयमिव महीतलम्, कुञ्जरमयमिव दिक्चक्रवालम्, आतपत्रमण्डलमयमिवान्तरिक्षम्, ध्वजवनमयमिवाम्बरतलम्, इभमदगन्धमय इव समीरणः, भूपालमयीव प्रजासृष्टिः, आभरणांशुमयीव दृष्टिः, किरीटमय

लगा कि जैसे सूर्य और चंद्रमा एकत्र हो गये हों। तदनन्तर 'युवराज चल पड़ा' यह बात सुनकर इधर-उधरसे दौड़ती हुई सेनाके भारसे पृथिवी इस प्रकार काँपने लगी, जैसे वह विचलित कुलपर्वतोंसे आहत समुद्रकी तरंगोंपर तैर रही हो। उस समय बहुतेरे राजे सामने आ-आकर उसे प्रणाम करने लगे। उनके मस्तकपर चमकती कलँगीकी किरणों, मणिजटित मुकुटोंके प्रकाश तथा अतिशय देदीप्यमान पत्रभंग युक्त बाजूबन्दोंकी दीप्तिसे दसों दिशायें ऐसी दीखने लगीं कि जैसे कहीं नीलकंठके पंखोंका चूरा बिखरा दिया गया हो, कहीं उड़ते हुए मयूरोंके चंद्रकोंकी रंगीनी छायी हो और कहीं असमय उमड़े हुए मेघकी बिजली चमक रही हो। कहीं कल्पतरुके पत्तोंसे, कहीं इन्द्रधनुषसे और कहीं बालरविकी लाल किरणोंसे वे प्रकाशमयी हो रहीं हों। यद्यपि उन राजाओंके छत्र सफेद थे, किन्तु विविध रंगकी मणियों तथा चूडामणिकी किरणोंके पड़नेसे वे मयूरोंके झुण्डसरीखे दीखने लगे। क्षण हीं भरमें वहाँका सारा वातावरण ऐसा हो गया कि जिससे सारी पृथिवी तुरंगमयी, दसों दिशायें गजमयी, समस्त आकाशमण्डल छत्रमय, समस्त अन्तरिक्ष

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव दिवसः, जयशब्दमयमिव त्रिभुवनमभवत् । सर्वतश्च कुलपर्वताकारैः प्रचलद्भिर्मत्तवारणैरुत्पातचन्द्रमण्डलनिभैश्च प्रेङ्खद्भिरातपत्रैः, संवर्तकाम्भोदगम्भीरभीमनादेन च ध्वनता दुन्दुभिना, तारकावर्षसदृशेन विसर्पता गजसीकरनिकरेण, धूमकेतुधूसरैश्चोल्लसद्भिरवनिरजोदण्डकैः, निर्घातपातपरुषगम्भीरघोषैश्च करिकण्ठगर्जितैः, क्षतजकणवर्षबभ्रुणा च भ्रमता मतङ्गजकुम्भसिन्दूररेणुना, संक्षुभितजलधिजलकल्लोलचञ्चलाभिश्च प्रविसर्पन्तीभिस्तुरङ्गममालाभिः, अन्धकारितदिगन्तरेण चानवरतं क्षरता मदजलधारादुर्दिनेन, कलकलेन च भुवनान्तरव्यापिना महाप्रलयकाल इव संजज्ञे ।

बलबहलकोलाहलभीता इव धवलध्वजनिवहनिरन्तरावृता ययुः क्वापि दश दिशः । मलिनावनिरजःसंस्पर्शशङ्कितमिव समदगजघटावचूलसहस्रसंरुद्धमतिदूरमम्बरतलमपससार । प्रबलवेत्रिवेत्रलतासमुत्सार्यमाणा

ध्वजमय, वायु गजमदगन्धमय, समस्त प्रजासृष्टि भूपमयी, दृष्टि आभूषणमयी, आतप किरीटमय, दिवस चमरमय और समस्त त्रिलोकी जयशब्दमयी प्रतीत होने लगी । सब ओर कुलपर्वतों जैसे ऊँचे-ऊँचे मस्त हाथियों, प्रलयकालीन चन्द्रमण्डल सदृश झूमते छत्रों, प्रलयंकर मेघकी नाईं गम्भीर तथा भयानक निनाद करती हुई दुन्दुभी, नक्षत्रोंकी वर्षाकी भाँति हाथियोंकी सूँड़ोंसे उड़ती जलबिन्दुओं, पृथिवीसे उठी धूमकेतु जैसी धूसरवर्णकी धूलके अम्बारों, वज्रपात सदृश कठोर तथा गंभीर घोषयुक्त गजकण्ठके गर्जनों, रक्तकणकी वर्षा सरीखी हाथियोंके मस्तकसे उड़ती सिन्दूरी रज और क्षुब्ध समुद्रकी जलतरंगोंके सदृश चपल अश्वोंकी सब ओर फैलती हुई कतारोंसे सब दिशाओंमें व्याप्त घनघोर अन्धकार, अहर्निशि होनेवाली मदधारारूपिणी वर्षा तथा समस्त भुवनान्तरोंमें व्याप्त कलकल निनादके कारण महाप्रलयकाल जैसा दृश्य उपस्थित हो गया।

उन उज्ज्वल ध्वजाओंके समुदायसे सर्वथा आच्छादित दसों दिशायें जैसे उस विशाल वाहिनीके कोलाहलसे भयभीत होकर कहीं भाग गयीं। हजारों मस्त गजरूपिणी घटाओंके आवरणोंसे भरा हुआ गगनमण्डल जैसे धरतीकी मलिन धूलके स्पर्शकी आशंकावश और भी ऊपरकी ओर बड़ी दूरतक खिसक गया । उस सेनाके घोड़ोंके खुरोंसे उड़ती धूलसे मलीन हो जानेके भयसे सूर्यकी किरणें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव तुरगखुररजोधूसरताभीतार्ककिरणा मुमुचुः पुरोभागम्। इभकरसीकरनिर्वापणत्रस्त इवातपत्रसंछादितातपो दिवसो ननाश। बलभरजर्जरीकृता मदकलकरिचरणशतखण्डिता द्वितीयेव प्रयाणभेरी भैरवं भूमी ररास। गुल्फद्वयसे चतुरंगमुखविनिःसृतसितफेनपल्लविते मदपयसि मदस्रुतां करिणां प्रचस्खलुः पदे पदे पदातयः। हरितालपरिमलनिभेन चातिपटुना गजमदामोदेनानुलिप्तस्य सामजस्येव समुपययौ निखिलान्यगन्धग्रहणसामर्थ्यं घ्राणेन्द्रियस्य। क्रमेण च प्रसर्पतो बलस्य पुरः प्रधावतां जनकदम्बकानां कोलाहलेन तारतदीर्घेण च काहलानां निनादेन, खुररवविमिश्रेण च वाजिनां हर्षहेषारवेण, अनवरतकर्णतालस्वरसंपृक्तेन च दन्तिनामाडम्बररवेण, ग्रैवेयककिङ्किणीक्वणितानुसृतेन च गतिवशाच्छिन्नविरागिणीनां घण्टानां टंकृतेन, मंगलशङ्खशब्दसंवर्धितध्वनीनां च प्रयाणपटहानां निनादेन, मुहुर्मुहुरितस्ततस्ताड्यमानानां च डिण्डिमानां निःस्वनेन जर्जरीकृतश्रवणपुटस्य मूर्च्छेवाभवज्ज-

---

जैसे प्रबल वेत्रधारी प्रतीहारोंकी बेंतोंसे मार-मारकर दूर खदेड़ दी गयी हों, इस प्रकार उस सेनाके आगेसे हट गयीं। हाथियोंकी सूँड़ों द्वारा निकलनेवाले पानीकी बूँदोंसे नष्ट हो जानेके डरसे छत्रोंसे ढँके आतपवाला दिवस जैसे दूर हट गया। उस विकराल सेनाके भारसे जर्जर तथा मतवाले हाथियोंकी सैकड़ों पाँवसे रौंदी जाती हुई धरती जैसे दूसरी प्रयाणभेरीके सदृश भीषण चीत्कार करने लगी। मदवाही गजराजोंके घुटनेतक आये हुए तथा घोड़ोंके मुखसे निःसृत फेनसे बढ़े गजमदके कीचड़से पग-पगपर सैनिकोंके पैर फिसलने लगे। हरतालकी गन्धसदृश बहुत ही तीखी मदसुगन्धि भर जानेके कारण गजराजोंके समान ही सब मनुष्योंकी भी नासिकाकी अन्य सुगन्धियोंको ग्रहण करनेकी शक्ति सर्वथा लुप्त हो गयी। क्रमशः आगे बढ़ती हुई सेनाके समक्ष दौड़ते हुए लोगोंके कोलाहल, नक्कारोंके अत्यन्त घनघोर निनाद, घोड़ोंके टापकी कर्कश ध्वनि, एक साथ बहुतेरे घोड़ोंकी हिनहिनाहट, कर्णतालके स्वरसे मिश्रित बार-बार होनेवाली हाथियोंकी चिंघाड़, गलेमें पहने आभूषणोंके घुँघुरुओंकी ध्वनिके साथ घंटियोंकी टनटनाहट, मांगलिक शंखनादसे संवर्धित प्रस्थानदुन्दुभीकी गड़गड़ाहट और इधर-उधर बजनेवाले डमरुओंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नस्य । शनैःशनैश्च बलसंक्षोभजन्मा क्षितेरनेकवर्णतया क्वचिज्जीर्णशफरक्रोडधूम्रः, क्वचित्क्रमेलकसटासंनिभः, क्वचित्परिणतरल्लकरोमपल्लवमलिनः, क्वचिदुत्पन्नोर्णातन्तुपाण्डुरः, क्वचिज्जरठमृणालदण्डधवलः, क्वचिज्जरत्कपिकेशकपिलः, क्वचिद्धरवृषभरोमन्थफेनपिण्डपाण्डुरः, त्रिपथगाप्रवाह इव हरिचरणप्रभवः कुपित इव मुञ्चन्क्षमाम्, आरब्धपरिहास इव रुन्धन्नयनानि, तृषित इव पिबन्करिकरसीकरजलानि, पक्षवानिवोत्पतन्गगनतलम्, अलिनिवह इव चुम्बन्मदलेखाम्, मृगपतिरिव रचयन्करिकुम्भस्थलेषु पदम्, उपात्तविजय इव गृह्णन्पताकाम्, जरागम इव पांडुरीकुर्वञ्शिरांसि, मुद्रयन्निव पक्ष्मप्रसंस्थितो दृष्टिम्, आजिघ्रन्निव मकरन्दमधुबिन्दुपङ्कलग्नः कर्णोत्पलानि, मदकलकरिकर्ण-

---

निनादसे लोगोंके कान सुन्न हो गये और उन्हें मूर्च्छा-सी आ गयी । धीरे-धीरे आगे बढती हुई सेनाके पदाघातसे उठी धूल आकाशमें उड़ने लगी । धरतीपर जगह-जगह अनेक वर्णकी होनेके कारण वह धूल कहीं वृद्ध मत्स्यकी छातीके सदृश धुँधली, कहीं ऊँटके रोयें जैसी मटमैली, कहीं वृद्ध लीलगायके बाल सरीखी मैली, कहीं मकड़ी जैसे लाल-सफेद मिश्रित वर्णकी, कहीं परिपक्व मृणालखण्ड जैसी उजली, कहीं वृद्ध बन्दरके रोयें जैसी पीली और कहीं-कहीं वह धूल शंकरजीके बैल नन्दीके जुगाली करनेपर निकले फेन जैसी एकदम श्वेतवर्ण थी । गंगाजीके प्रवाहकी तरह वह हरि (विष्णु भगवान् अथवा घोड़े) के चरणसे उत्पन्न हुई थी । क्रुद्ध व्यक्तिके समान वह क्षमा (सहनशक्ति अथवा पृथिवी) का त्याग कर रही थी । प्यासे व्यक्तिके समान वह धूल हाथियोंकी सूँड़से निकला हुआ जल पी रही थी। हँसी-मजाक करनेवालोंकी तरह वह लोगोंके नेत्र बन्द कर देती थी (प्रायः लोग हँसीमें पीछेसे आकर आँख बन्द कर लेते हैं, वैसे ही धूलके कारण भी लोग आँखें बन्द कर लिया करते हैं) । पंखधारी पक्षीके समान वह आकाशमें उड़ती थी। भौंरोंके झुण्डकी तरह वह हाथियोंके मदका चुम्बन करती थी । सिंहकी तरह वह हाथियोंके मस्तकपर जा बैठती थी । विजयी पुरुषके समान वह झंडा उड़ाती थी। वृद्धावस्थाकी तरह वह लोगोंका सिर सफेद कर रही थी। पलकोंके आगे बैठकर लोगोंकी आँखें बन्द कर देती थी । मधुरसकी बूँदोंमें चिपककर वह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तालताडनत्रस्त इव विशन्कर्णशङ्खोदरविवराणि, पीयमान इवोन्मुखीभिरवनिपतिमुकुटमणिपत्रभंगमकरिकाभिः अभ्यर्च्यमान इव तुरगमुखविक्षेपविप्लुतैः फेनपल्लवकुसुमस्तबकैः, अनुगम्यमान इव मत्तगजघटाकुम्भभित्तिसंभवेन धातुधूलिवलयेन, आलिंग्यमान इव चलच्चामरकलापविधुतेन पटवासपांसुना, प्रोत्साह्यमान इव नरपतिशेखरसहस्रपरिच्युतैः कुसुमकेशररजोभिः, उत्पातराहुरिव दिवसकरमण्डलमकाण्ड एव पिबन्, नृपप्रस्थानमंगलप्रतिसरवलयमालिकासु गोरोचनाचूर्णायमानः, क्रकचकृतचन्दनक्षोदधूसरो रेणुरुत्पपात।

अपरिमाणबालसंघट्टसमुपचीयमानश्च शनैः शनैः संहरन्निव विश्वमशेषमकालकालमेघपटलमेदुरो विस्तारमुपगन्तुमारेभे। तेन च क्रमेणोपचीयमानबहलमूर्तिना, दिग्विजयमंगलध्वजेन, रिपुकुलकमलप्रलयनीहारेण, राजलक्ष्मीविलासपटवासचूर्णेन, अहितातपत्रपुण्डरीकखण्डनतु-

---

कर्णकमल सूँघती थी। मतवाले हाथियोंके सदा हिलनेवाले कानोंकी मारसे जैसे डरी हुई वह उनके कान तथा कनपटीके भीतर घुस जाती थी। सामने पड़ती हुई राजाओंके मुकुटोंमें बनी मकरियाँ मानों उन धूलोंको पी रही थीं। घोड़ोंके मुखसे निकले और फेनरूपी पल्लवसे बने फूलके गुच्छे मानों उनकी पूजा कर रहे थे। मस्त हाथियोंके मस्तकमें लगा सिन्दूर उड़-उड़कर जैसे उनका अनुसरण कर रहा था। राजाओंपर चलते हुए चमरसे उड़ता पटवास जैसे उस धूलको गले लगा रहा था। उन राजाओंके सहस्रों मुकुटोंसे उड़ी पुष्पोंकी रज जैसे उसे उत्साह प्रदान कर रही थी। प्रलयंकर राहुसरीखी वह धूल असमयमें ही जैसे सूर्यमण्डलको पिये लेती थी। प्रस्थानको वेलामें राजाओंके अंगोंमें बँधे हुए मंगलसूत्रों तथा हारोंपर वह गोरोचनके चूर्ण जैसी लगती थी और आरेसे चीरी गयी चन्दनकी शाखासे नीचे गिरनेवाले चूर्ण (बुरादे) सरीखी धुँधली दीखती थी।

अपरिमित सेनाकी भीड़भाड़से बढ़ती हुई वह धूलराशि असमयमें उमड़े प्रलयकालीन मेघसमुदायकी भाँति काली होकर जैसे समस्त विश्वका संहार करती हुई शनैः शनैः फैलने लगी। धीरे-धीरे बढ़ता हुआ वह धूलका अम्बार बहुत बड़ा होकर तीनों लोकोंमें भर गया। वह जैसे दिग्विजयका मंगलध्वज था। शत्रुकुलरूपी कमलवनका नाश करनेवाला पाला था। राज्य-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धारेण, सैन्यभरपीडितमहीतलमूर्छान्धकारेण, चलद्बलजलदकालकदम्ब-कुसुमोद्गमेन, दिवसकरकरकमलवनादलनद्विपयूथेन, गगनमहीतलप्लावनप्रलयपयोधिपूरेण, त्रिभुवनलक्ष्मीशिरोऽवगुण्ठनपटेन, महावराहकेसरनिकरकर्बुरेण, प्रलयानलधूमराजिमांसलेन, पातालतलादिवाक्तिष्ठता, चरणेभ्य इव निर्गच्छता, लोचनेभ्य इव निष्पतता, दिग्भ्य इवागच्छता, नभस्तलादिव पतता, पवनादिवोल्लसता, रविकिरणेभ्य इव संभवता, अनपहृतचेतनेन निद्रागमेन, अनवगणितसूर्येणान्धकारेण, अधर्मकालोपस्थितेन भूमिगृहेण, अनुदिततारागणनिवहेन, बहुलनिशाप्रदोषेण, पतितसलिलेन जलधरसमयेन, अभ्रान्तभुजंगमेन रसातलेन, हरिचरणेनेव संवर्धमानेन त्रिभुवनमलंघयत रजसा। विकचकुवलयवनमिव नवोदकेन गगनतलमवष्टभ्यमानमलक्ष्यत क्षीरोदपाण्डुना क्षितिक्षोदेन ।

लक्ष्मीकी पोशाकका वह पटवासचूर्ण (सुगन्धित पाउडर) था। वह शत्रुओंके छत्ररूपी पुण्डरीक (श्वेत कमल) का तुषार था । उस अपार सेनाके भारसे पीड़ित धरतीकी मूर्छाका अन्धकार था। आगे बढ़ती हुई सेनारूपी वर्षाकालमें कदम्बके फूलोंका उद्गम था। वह धूलिसमूह सूर्यकिरणरूपी कमलवनको रौंद डालनेवाला हाथियोंका झुण्ड था । वह भूमि तथा आकाशको बहा देनेवाला प्रलयकालीन समुद्रका प्रवाह था । तीनों लोकोंकी लक्ष्मीकी ओढ़नीका वस्त्र था। वह महावराहकी सटाके सदृश चितकबरा था। वह प्रलयानलकी धूमराशिकी भाँति मांसल (मोटा) था । वह धूलिसमूह जैसे पातालसे निकला था, चरणोंसे उठा था, नेत्रोंसे बाहर होता था, विभिन्न दिशाओंसे आता था, आकाशसे गिरता था, वायुसे उड़ता था और सूर्यकी किरणोंसे जायमान होता था। वह चेतना नष्ट न करनेवाला निद्रागम था। सूर्यको कुछ भी न समझनेवाला अन्धकार था। वह बिना ग्रीष्मऋतुके बनाया गया अभ्यन्तरगृह (तहखाना) था। जिसमें तारागण न दीखते हों, ऐसे कृष्णपक्षका प्रदोष था। जिसमें जल बरस चुका हो, ऐसा मेघकाल था। इधर-उधर घूमनेवाले सर्पोंसे विहीन पाताल था और वह वामनभगवान्‌के चरणों जैसा बढ़ रहा था। नववर्षासे विकसित कुवलय (कुमुदिनी) का वन जैसे शोभित होता है, वैसे ही पृथिवीकी उस धूलसे समस्त आकाशमण्डल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बहुलरजोधूसरितमशिशिरकिरणबिम्बमवचूलचामरमिव निष्प्रभमभवत्। दुकूलपटधवला कदलिकेव कलुषतामाजगाम गगनापगा। नरपालबलभरमसहमाना पुनरिव भारावतारणार्थममरलोकमारुरोह रजोमिषेण मही। निःशेषपीतातपमन्तर्दह्यमानमिव जलधिजलेषु धूसरितरविरथध्वजपटमपतद्वनिरजः। मुहूर्तेन च गर्भवासमिव, संहारसागरजलमिव, कृतान्तजठरमिव, महाकालमुखमिव, नारायणोदरमिव, ब्रह्माण्डमिव विवेश पृथिवी। मृन्मय इव बभूव दिवसः। पुस्तमय्य इव चकाशिरे ककुभः। रेणुरूपेणेव परिणतमम्बरतलम्। एकमहाभूतमयमिव त्रैलोक्यमासीत्।

अथ निजमदोष्मसंतप्तानां दन्तिनां दिशि दिशि करविवरनिःसृतैः क्षरद्भिः क्षीरोदधवलैः शीकरासारैः, कर्णपल्लवप्रहतिविसृतेन च विसर्पता दानजलबिन्दुदुर्दिनेन, हेषारवविप्रकीर्णैश्च वाजिनां लालाजललव-

---

क्षीरसमुद्रके फेन सदृश उज्ज्वल दिखायी देने लगा। अत्यधिक धूलसे धुँधला सूर्यमण्डल हाथीके कानपर लटकनेवाले चमरके समान निष्प्रभ हो गया। जैसे उज्ज्वल वस्त्रके समान श्वेत केलेका खम्भा धूल पड़नेसे गन्दा हो जाता है, उसी प्रकार धूलराशिसे मन्दाकिनी काली पड़ गयी। उस समय ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो उन राजाओंकी सेनाका अपार भार सहनेमें असमर्थ होकर पृथिवी उसी धूलके बहाने स्वर्गलोकको चली जा रही है। अथवा मानो सूर्यकी सम्पूर्ण धूप पीकर भीतरसे धधकती धरतीकी धूल सूर्यरथकी पताकाको मटमैला करके समुद्रमें जा पड़ी हो। क्षण ही भरमें पृथिवी जैसे गर्भवासमें, प्रलयकालीन समुद्रके जलमें, महाकाल शंकरके मुखमें, विष्णुभगवान्के उदरमें अथवा ब्रह्माण्डमण्डलमें विलीन हो गयी। वह सारा दिन जैसे धूलिमय हो गया। दिशायें ऐसी दीखने लगीं कि मानो किसीने कोरे कागजपर कुछ लिख दिया हो। समस्त आकाशमण्डल धूलिमय हो गया और सारी त्रिलोकी एक महाभूत (पृथिवीतत्त्व) मयी हो गयी।

तदनन्तर अपने ही मदसे सन्तप्त हाथियोंकी सूँड़के छिद्रोंसे निकलकर सभी दिशाओंमें गिरते हुए क्षीरसागरके दुग्धसदृश श्वेत जलकणोंको वर्षासे, कर्णपल्लवके आघात द्वारा गल-गलकर बहते हुए हाथियोंके मदजलकी बूँदों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जालकैरुपशमिते रजसि, पुनरपि जातालोकासु दिक्षु, सागरादिवोन्म-ग्नमालोक्य तदपरिमाणं बलमुपजातविस्मयः सर्वतो दत्तदृष्टिर्वैशम्पाय-नश्चन्द्रापीडमाबभाषे—

'युवराज, किं न जितं देवेन महाराजाधिराजेन तारापीडेन यज्जेष्यसि, का दिशो न वशीकृता या वशीकरिष्यसि, कानि दुर्गाणि न प्रसाधितानि यानि प्रसाधयिष्यसि, कानि द्वीपान्त-राणि नात्मीकृतानि यान्यात्मीकरिष्यसि, कानि रत्नानि नोपार्जितानि यान्युपार्जयिष्यसि, के वा न प्रणता राजनः, कैर्न विरचितः शिरसि बालकमलकुड्मलकोमलः सेवाञ्जलिः, कैर्न मसृणीकृताः प्रतिबद्धहेम-पट्टैर्ललाटैः सभाभुवः, कैर्न घृष्टाः पादपीठे चूडामणयः, कैर्न प्रतिपन्ना वैत्रलताः, कैर्नोद्धृतानि चामराणि, कैर्नोच्चारिता जयशब्दाः, केषां न पीताः क्रिरीटपत्रमकरैः सलिलधारा इव निर्मलास्त्वच्चरणनखमयूख-

---

तथा हिनहिनाते हुए घोड़ोंके मुखसे टपकती लार द्वारा उस धूलराशिके शान्त हो जानेपर फिर दसों दिशायें दृष्टिगोचर होने लगीं। तब जैसे समुद्रसे निकलकर बाहर आयी हो, ऐसी उस अपरिमित सेनाको सब ओरसे भली भाँति निहारकर अत्यधिक विस्मित वैशम्पायनने चंद्रापीडसे कहा—

'युवराज! महाराजाधिराज तारापीडने कौनसा प्रदेश नहीं जीता है, जिसे अब आप जीतेंगे? किन दिशाओंको उन्होंने अपने अधीन नहीं किया है, जिन्हें अब आप अपने अधीन करेंगे? किन किलोंको उन्होंने अपने कब्जेमें नहीं लिया, जिन्हें आप लेंगे? किन द्वीपोंको उन्होंने अपने अधीन नहीं किया, जिनको आप करेंगे? उन्होंने किन रत्नोंका उपार्जन नहीं किया, जिनका उपार्जन अब आप करेंगे? कौन-कौनसे ऐसे राजे हैं, जो उनके समक्ष नत-मस्तक नहीं हुए तो फिर अब आप किनको नतमस्तक करेंगे? कितने ऐसे लोग हैं कि जिन्होंने अपने मस्तकपर कमलकी नाई सेवांजलि न बाँधी हो? किसने सुवर्णकिरीटधारी मस्तककी रगड़से आपके सभामण्डपकी धरती चिकनी नहीं की? कितने लोगोंने उनके चरणपीठपर अपने मस्तककी चूडामणियाँ नहीं रगड़ीं? किन लोगोंने बेंतकी छड़ियाँ नहीं थाम्हीं? किसने महाराजाधिराजके ऊपर चमर नहीं डुलाया? कितने लोगोंने उनका जयजयकार नहीं किया? कितने ऐसे राजे हैं कि जिनके किरीटोंमें बने मगरोंने जलधारा जैसी निर्मल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राजयः। एते हि चतुरुदधिजलावगाहदुर्ललितबलमदावलिप्ता दशरथभगीरथभरतदिलीपालर्कमान्धातृप्रतिमाः कुलाभिमानशालिनः सोमपायिनो मूर्धाभिषिक्ताः पृथिव्यां सर्वपार्थिवा रक्षाभूतिमिवाभिषेकपयःपातपूतैश्चूडामणिपल्लवैरुद्वहन्ति मङ्गल्यां भवच्चरणरजःसंहतिम्। एभिरियमादिपर्वतैरिवापरैर्धृता धरित्री। एतानि चाप्यमीषामाप्लावितदशदिगन्तरालानि सैन्यानि भवन्तमुपासते। तथा हि। पश्य पश्य यस्यां यस्यां दिशि विक्षिप्यते चक्षुस्तस्यां तस्यां रसातलमिवोद्गिरति, वसुधेव सूते, ककुभ इव वमन्ति, गगनमिव वर्षति, दिवस इव सृजति बलानि। अपरिमितबलभराक्रान्ता मन्ये स्मरति महाभारतसमरसंक्षोभस्याद्य क्षितिः। एष शिखरदेशेषु स्खलितमंडलो ध्वजानां गणयन्निव कुतूहलाद्भ्रमति कदलिकावनान्तरेषु मयूखमाली। सर्वतश्च मदजलमुचां करिणामेलापरिमलसुरभिणि वाणकावाहिनि मदवारिणि निरन्त-

---

चरणनखकिरणोंकी राशिको नहीं पिया ? चारों समुद्रोंके जलमें स्नान करनेके लिए हठीली सेनासे मतवाले बने हुए दशरथ, भगीरथ, भरत, दिलीप, अलर्क तथा मांधाता सरीखे धरतीके सभी कुलाभिमानी तथा सोमरस पीनेवाले तिलकधारी राजे आपकी मंगलकारिणी चरणधूलिको अभिषेकजलके संस्पर्शसे पवित्रित अपनी चूडामणिमें रक्षाभस्मके समान सम्हालकर रखते हैं। आदि कुलपर्वतके समान धैर्यशाली ये राजे सारी पृथिवीका भार वहन कर रहे हैं। और फिर दसों दिशाओंमें फैली हुई उनकी विशाल सेना भी तो सदा आपकी सेवामें उपस्थित रहती है। देखिए न, मैं तो जिस दिशामें भी दृष्टि दौड़ाता हूँ, उधर ऐसा दीखता है कि जैसे पाताल सेना उगल रहा हो, धरती उनका प्रसव करती हो, सभी दिशायें जैसे सेनाका वमन कर रही हों, आकाश जैसे सेनाकी वर्षा कर रहा हो और दिवस जैसे उन्हींका सृजन करता हो। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि इस अपरिमित सेनाके भारसे दबी हुई पृथिवी आज मानो महाभारतके समयकी हलचलका स्मरण कर रही है। यह सूर्यमण्डल कुछ झुक तथा ध्वजाओंके शिखरपर प्रतिबिम्बित होकर कौतूहलवश जैसे उन पताकाओंको गिनता हुआ उन्हींके जंगलमें घूम रहा है। इलायचीके समान सुगन्धित मद बरसानेवाले हाथियोंके अतिशय वेगसे बहते हुए मदजलमें सर्वथा डूबी पृथिवी उड़ते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रमग्ना निपतितमधुकरकुलकलकलकलिला कालिन्दीजलकल्लोलकलितेव भाति भूतधात्री । सैन्यभरसंक्षोभभयात्सरित इव गगतलमुत्पतिता आच्छादयन्त्येता दिक्चक्रवालमिन्दुधवला ध्वजपंक्तयः । सर्वथा चित्रं यन्नाद्य विघटितसकलकुलशैलसंधिबन्धा सहस्रशः शकलीभवति बलभरेण धरित्री, यद्वा बलभरपीडितवसुधाधारणविधुरा न चलन्ति फणिनां पत्युः फणाभित्तयः' इत्येवं वदत एव तस्य युवराजः समुच्छ्रितानेकतोरणां तृणमयप्राकारमन्दिरसहस्रसंबाधामुल्लासितधवलपटमण्डपशतशोभिनोमावासभूमिमवाप । तस्यां चावतीर्य राजवत्सर्वाः क्रियाश्चकार । सर्वैश्च तैः समेत्य नरपतिभिरमात्यैश्च विविधाभिः कथाभिर्विनोद्यमानस्तं दिवसमशेषमभिनवपितृवियोगजन्मना शोकावेगेनायास्यमानहृदयो दुःखेनात्यवाहयत् । अतिवाहितदिवसश्च यामिनीमपि स्वशयनीयस्य नातिदूरे निहितशयननिषण्णेन वैशम्पायनेन,

---

हुए भौंरोंके गुंजारके बहाने ऐसी ध्वनि करती है कि जैसे वह यमुनाजलसे भर गयी हो । चंद्रमासदृश उज्ज्वल ध्वजाओंको सब दिशायें ढाँकते देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो इस विशाल वाहिनीके भारसे क्षुब्ध होकर बहुतेरी नदियाँ आकाशमें चली गयी हैं । सबसे बड़ी आश्चर्यकी बात तो यह है कि इस सेनाके भारसे सभी कुलपर्वतरूपी सन्धिबन्ध टूट जानेके कारण धरतीके हजारों टुकड़े नहीं हो जाते । अथवा सेनाके भारसे पीड़ित पृथिवीको धारण करनेमें असमर्थ होकर शेषनागकी फनरूपी दीवारें नहीं ढह जाती।' वैशम्पायन यह कहकर जैसे ही चुप हुआ, उसी समय युवराज चंद्रापीड एक पड़ावपर जा पहुँचा । वहाँ बहुतेरे तोरण लटके हुए थे । तृणकी चहारदीवारियोंसे घिरे हजारों घर बने थे । श्वेतवस्त्रनिर्मित अगणित तम्बू तने हुए थे । वहाँ उतरकर उसने सभी राजोचित कार्य सम्पन्न किये । उसके साथवाले सभी राजे और मंत्री तरह-तरहकी बातें करके उसका मनोरंजन करने लगे । इस प्रकार युवराजने पिताके नववियोगजनित दुःखसे दुःखित होते हुए वह सारा दिन बड़ी कठिनाईसे बिताया । दिन बीतनेके बाद उसने रात्रि भी उसी प्रकार खिन्न हृदयसे प्रायः जागकर ही व्यतीत की । उसके समीप एक ओर पलंगपर वैश-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अन्यतश्च समीपे क्षितितले विन्यस्तकुथप्रसुप्तया पत्रलेखया सह, अन्तरा पितृसक्तम्, अन्तरा मातृसंबद्धम्, अन्तरा शुकनासमयं कुर्वन्नालापं नातिजातनिद्रः प्रायेण जाग्रदेव निन्ये।

प्रत्यूषे चोत्थाय तेनैव क्रमेणानवरतप्रयाणकैः प्रतिप्रयाणकमुपचीयमानेन सेनासमुदायेन जर्जरयन्वसुन्धराम्, आकम्पयन्गिरीन्, उत्सिञ्चन्सरितः, रिक्तीकुर्वन्सरांसि, चूर्णयन्काननानि, समीकुर्वन्विषमाणि, दलयन्दुर्गाणि, पूरयन्निम्नानि, निम्नयन्स्थलानि प्रतिष्ठता शनैः शनैश्च स्वेच्छया परिभ्रमन्, नमयन्नुन्नतान्, उन्नमयन्नवनतान्, आश्वासयन्भीतान्, रक्षञ्शरणागतान्, उन्मूलयन्विटपकान्, उत्सादयन्कण्टकान्, अभिषिञ्चन्स्थानस्थानेषु राजपुत्रान्, समर्जयन्रत्नानि, प्रतीच्छन्नुपायनानि, गृह्णन्करान्, आदिशन्देशव्यवस्थाम्, स्थापयन्स्वचिह्नानि, कुर्वन्कीर्तनानि, लेखयञ्शासनानि, पूजयन्नग्रजन्मनः, प्रणमन्मुनीन्, पालयन्नाश्रमान्, जनानुरागं जनयन्, प्रकाशयन्विक्रमम्, आरोपयन्प्रतापम्,

---

म्पायन बैठा था तथा दूसरी तरफ पास ही जमीनमें बिछे गलीचेपर पत्रलेखा लेटी थी। बीच-बीचमें कुछ देर पिता, कुछ देर माता और कभी-कभी मंत्री शुकनाससम्बन्धी वार्तालाप चलता था।

बड़े सबेरे उठकर युवराज फिर पहले दिनकी तरह राहमें बिना कहीं रुके चलता रहा। उत्तरोत्तर आगे बढ़ती हुई अपनी सेना द्वारा वह वसुन्धराको जर्जरित करता, पर्वतोंको कँपाता, नदियोंको हटाता, तालाबोंको सुखाता, वनोंको रौंदकर चर-चर करता, ऊँची जगहोंको बराबर करता, किलोंको ध्वस्त करता, नीची जमीनको भरता और ऊँचे टीलोंको ढहाता जाता था। इस प्रकार शनैः शनैः चलता हुआ वह उन्नत लोगोंको दबाकर नीचे करता, नम्र पुरुषोंको उन्नत करता, भयभीत लोगोंको आश्वासन देता, शरणागतोंकी रक्षा करता, घूर्तोंका उन्मूलन करता, रत्नोंका संग्रह करता, विविध भाँतिके पारितोषिक देता, लोगोंसे कर लेता, व्यवस्थासम्बन्धी आदेश देता, यात्रासम्बन्धी स्मारक स्थापित करता, आदेशपत्र लिखवाता, ब्राह्मणोंका पूजन करता, मुनिजनोंको नमस्कार करता, मार्गमें पड़नेवाले आश्रमोंकी रक्षाका प्रबन्ध करता, लोगोंमें अपना अनुराग उत्पन्न करता, पराक्रम प्रकट करता, लोगोंपर अपना प्रभाव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपचिन्वन्यशः, विस्तारयन्गुणान्, प्रख्यापयन्सच्चरितम्, आमृद्नंश्च वेलावनानि, बलरेणुभिराधूसरीकृतसकलसागरसलिलः पृथिवीं विचचार। प्रथमं प्राचीम्, ततस्त्रिशंकुतिलकाम्, ततो वरुणलाञ्छनाम्, अनन्तरं च सप्तर्षिताराशबलां दिशं विजिग्ये। वर्षत्रयेण चात्मीकृताशेषद्वीपान्तरं सकलमेव चतुरुदधिखातवलयपरिखाप्रमाणं बभ्राम महीमण्डलम्। ततः क्रमेणावजितसकलभुवनतलः प्रदक्षिणीकृत्य वसुधां परिभ्रमन्, कदाचित्कैलाससमीपचारिणां हेमकूटनाम्नां किरातानां सुवर्णपुरं नाम निवासस्थानं नातिविप्रकृष्टं पूर्वजलनिधेर्जित्वा जग्राह। तत्र च निखिलधरणीतलपर्यटनखिन्नस्य निजबलस्य विश्रामहेतोः कतिपयान्दिवसानतिष्ठत्।

एकदा तु तत्रस्थ एवेन्द्रायुधमारुह्य मृगयानिर्गतो विचरन्कानने शैलशिखरादवतीर्णं यदृच्छया किन्नरमिथुनमद्राक्षीत्। अपूर्वतया तु

जमाता, कीर्तिका संचय करता, अपने गुणोंका विस्तार करता, सदाचारका प्रचार करता, तटवर्ती वनोंको रौंदता और अपनी विशाल सेनाके पैरोंसे उड़ी धूल द्वारा समुद्रके जलको मलिन करता हुआ पृथिवीपर विचरता रहा। इस प्रकार उसने पहले पूर्व दिशा, फिर दक्षिण दिशा, फिर पश्चिम दिशा और उसके बाद सप्तर्षिके सात नक्षत्रोंसे विचित्रित उत्तर दिशापर विजय प्राप्त की। सब मिलाकर तीन वर्षतक वह समस्त द्वीपान्तरोंको अपने अधीन करता हुआ चार समुद्ररूपी खाईसे घिरी पृथिवीपर घूमता रहा। इस तरह क्रमशः सारा भुवनमण्डल जीत तथा पृथिवीकी प्रदक्षिणा करते-करते कैलास पर्वतके पास भ्रमण करते समय पूर्वी समुद्रके तटपर विद्यमान हेमकूटपर्वतनिवासी किरातोंका सुवर्णपुर जीतकर उसने अपने अधीन कर लिया। तत्पश्चात् समग्र पृथिवीमण्डलका पर्यटन करनेसे खिन्न अपनी सेनाको विश्राम देनेके विचारसे वह कुछ दिनोंके लिए वहाँ रुका।

वहाँ रहते समय एक बार इन्द्रायुधपर सवार होकर चन्द्रापीड मृगयाके लिए निकला। उस बीहड़ वनमें घूमते-घूमते सहसा उसने पर्वतशिखरसे उतरता हुआ किन्नरोंका एक जोड़ा देखा। उनका अपूर्व आकार-प्रकार देख-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समुपजातकुतूहलः कृतग्रहणाभिलाषस्तत्समीपमादराढुपसर्पिततुरगः समुपसर्पन्, अदृष्टपूर्वपुरुषदर्शनत्रासप्रधावितं च तत्पलायमानमनुसरन्ननवरतपार्ष्णिप्रहारद्विगुणीकृतजवेनेन्द्रायुधेनैकाकी निर्गत्य बलसमूहात्सुदूरमनुससार। 'अत्र गृह्यते, इदं गृहीतम, इदं गृहीतम्' इत्यतिरभसाकृष्टचेता महाजवतया तुरंगमस्य मुहूर्तमात्रेणैकपदमिवासहायस्तस्मात्प्रदेशात्पञ्चदशयोजनमात्रमध्वानं जगाम। तच्चानुबध्यमानमालोकयत एवास्य संमुखापतितमचलतुङ्गशिखरमारुरोह। आरूढे च तस्मिञ्शनैः शनैस्तदनुसारिणीं निवर्त्य दृष्टिम्, अचलशिखरप्रस्तरप्रतिहतमतिप्रसरो विधृततुरङ्गश्चन्द्रापीडस्तस्मिन्काले समुपारूढश्रमस्वेदार्द्रशरीरमिन्द्रायुधमात्मानं चावलोक्य क्षणमिव विचार्य स्वयमेव विहस्याचिन्तयत्—'किमिति निरर्थकमयमात्मा मया शिशुनेवायासितः। किमनेन गृहीतेनागृहीतेन वा किन्नरयुगलेन प्रयोजनम्। यदि गृहीतमिदं ततः किम्, अथ न गृहीतं ततोऽपि किम्। अहो मे मूर्खतायाः प्रकारः। अहो

कर उसे कुतूहल हुआ और उस जोड़ेको पकड़नेके अभिप्रायसे अपना घोड़ा उधर बढ़ाया। वे दोनों एक अपरिचित पुरुषको अपनी ओर आते देख भाग खड़े हुए। किन्तु चन्द्रापीड इन्द्रायुधको एड़ लगा-लगाकर द्विगुणित वेगसे दौड़ाता हुआ अकेला उनका पीछा करता-करता अपनी सेनाको पीछे छोड़कर बहुत दूर चला गया। 'अब पकड़ा' 'अब ले लिया' इस ललकमें पड़कर घोड़ेकी चाल बहुत तेज होनेके कारण क्षणभरमें वह अकेला अपने शिविरसे पद्रह योजन दूर आगे निकल गया। तिसपर भी जिसके लिए उसने इतनी तेज दौड़ लगायी थी, वह किन्नरोंका जोड़ा उसके देखते-देखते एक ऊँचे पर्वतके शिखरपर चढ़ गया। इस प्रकार उस किन्नरयुगलके पर्वतपर चढ़ जानेके बाद युवराजने अपनी दृष्टि उधरसे मोड़ी। उस पहाड़पर जो चट्टानें थीं, उनके कारण मार्ग अवरुद्ध था। अतएव उसने घोड़ेको वहीं रोक दिया। वहाँ अपनेको और इन्द्रायुधको पसीनेसे तर देखकर उसने क्षणभर कुछ सोचा और मन ही मन हँसकर कहने लगा—'बच्चोंकी तरह मैंने क्यों अपने आपको व्यर्थ कष्ट दिया? इस किन्नरके जोड़ेको पकड़नेसे मेरा कौन सा प्रयोजन सिद्ध होता? यदि पकड़ लेता तो क्या लाभ होता और नहीं पकड़नेसे मेरा क्या बिगड़ गया? अहो! मैंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यत्किंचनकारितायामादरः। अहो निरर्थकव्यापारेष्वभिनिवेशः। अहो बालिशचरितेष्वासक्तिः। साधुफलं कर्म क्रियमाणं वृथा जातम्। अवश्यकर्तव्या क्रिया प्रस्तुता विफलीभूता। सुहृत्कार्यमुपपाद्यमानं नोपपन्नम्। राजधर्मः प्रवर्तितो न निष्पन्नः। गुर्वर्थः प्रारब्धो न परिसमाप्तः। विजिगीषुव्यापारप्रयत्नो न सिद्धः। कस्मादहमाविष्ट इवोत्सृष्टनिजपरिवार एतावती भूमिमायातः। कस्माच्च मया निष्प्रयोजनमिदमनुसृतमश्वमुखद्वयमिति विचार्यमाणे सत्ययमात्मैव मे पर इव हासमुपजनयति। न जाने कियताध्वना विच्छिन्नमिता बलमनुयायि मे। महाजवो हीन्द्रायुधो निमेषमात्रेणातिदूरमतिक्रामति। न चागच्छता मया तुरगवेगवशात्किन्नरमिथुने बद्धदृष्टिनास्मिन्नविरलतरुशतशाखागुल्मलतासंतानगहने निरन्तरनिपतितशुष्कपर्णावकीर्णतले महावने पन्था निरूपितो येन प्रतिनिवृत्त्य यास्यामि। न चास्मिन्प्रदेशे प्रयत्नेनापि परिभ्रमता मया मर्त्यधर्मा कश्चिदासाद्यते यः सुवर्णपुरगामिनं पन्थानमुपदेक्ष्यति। श्रुतं हि मया बहुशः कथ्यमानमुत्तरेण सुवर्णपुरं

बड़ी विचित्र मूर्खता की। मेरा यह काम कितना अविचारपूर्ण था। इस निरर्थक और मूर्खतापूर्ण काममें मेरी कैसी आसक्ति हो गयी थी! अच्छे परिणामवाले भी मेरे कर्म व्यर्थ हो गये। अवश्य किये जाने योग्य कर्म विफल हो गये। जो करना चाहिए, वह मित्रोंका काम भी पूर्ण नहीं हुआ। राजधर्म निभाने चला था, वह भी अधूरा रह गया। जो बड़ा भारी काम हाथमें लिया था, उसे भी पूरा नहीं किया। विश्वविजयका कार्य भी नहीं सिद्ध हो सका। एक पागलकी तरह मैं क्यों अपने साथियोंको छोड़कर इतनी दूर दौड़ आया? निष्प्रयोजन मैंने इस घोड़े जैसे मुखवाले किन्नरके जोड़ेका क्यों पीछा किया? इस बातपर विचार करनेपर अन्य व्यक्तिकी तरह मेरी आत्मा ही मेरा उपहास करती दीखती है। यहाँसे न जाने कितनी दूर मेरी सेना और मेरे अनुचर होंगे। यह इन्द्रायुध तो बड़ा वेगवान् है, पलक मारते बहुत दूर चला जाता है। आते समय दृष्टि उस किन्नरके जोड़ेपर ही जमी थी। अतएव सैकड़ों वृक्षों एवं लताओंकी उलझी शाखाओंसे भरे और निरन्तर गिरती हुई सूखी पत्तियोंसे ढके मार्गको भी मैं नहीं देख सका था कि उधरसे ही पीछे लौट जाऊँ। अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक भटकनेपर भी इस निर्जन वनमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सीमान्तलेखा पृथिव्याः सर्वजनपदानाम्, ततः परतो निर्मानुषमरण्यम्, तच्चातिक्रम्य कैलासगिरिरिति। अयं च कैलासः। तदिदानीं प्रतिनिवृत्त्यैकाकिना स्वयमुत्प्रेक्ष्योत्प्रेक्ष्य दक्षिणामाशां केवलमङ्गीकृत्य गन्तव्यम्। आत्मकृतानां हि दोषाणां नियतमनुभवितव्यं फलमात्मनैव' इत्यवधार्य वामकरतलवलितरश्मिपाशस्तुरङ्गमं व्यावर्तयामास।

निर्वर्तिततुरङ्गमश्च पुनश्चिन्तितवान्—'अयमुद्भासितप्रभाभास्वरो भगवान्भानुरधुना दिवसश्रियो रशनामणिरिव मध्यमलंकरोति। परिश्रान्तश्चायमिन्द्रायुधः। तदेनं तावदागृहीतकतिपयदूर्वाप्रवालकवलं कस्मिंश्चित्सरसि शिलाप्रस्रवणे वा सरिदम्भसि वा स्नातपीतोदकमपनीतश्रमं कृत्वा स्वयं च सलिलं पीत्वा कस्यचित्तरोरधश्छायायां मुहूर्तमात्रं विश्रम्य ततो गमिष्यामि' इति चिन्तयित्वा सलिलमन्वेषमाणो मुहुर्मुहुरितस्ततो दत्तदृष्टिः पर्यटन्नलिनीजलावगाहोत्थितस्याचिरादपक्रान्तस्य महतो गिरिचरस्य वनगजयूथस्य चरणोत्थापितैः पङ्कपटलैरार्द्रीकृतम्,

---

किसी मनुष्यके मिलनेकी संभावना नहीं है कि जो मुझे सुवर्णपुरकी राह बता सके। किन्तु मैंने बहुतेरे लोगोंको कहते सुना है कि सुवर्णपुर पृथिवीतलके सब देशोंकी उत्तरी सीमापर है। उसके आगे निर्जन वन है और उस वनके आगे कैलासपर्वत है। अतएव यह कैलास है। सो अब यहाँसे लौटकर अकेले ही टटोलते हुए मुझे केवल दक्षिण दिशाकी ओर चलना चाहिए। अपने किये हुए अपराधोंका फल अपनेको ही भोगना पड़ता है।' ऐसा विचार करके चन्द्रापीडने बायें हाथसे लगाम खींचकर घोड़ेको पीछेकी ओर घुमाया।

वहाँसे घोड़ा मोड़कर युवराजने फिर सोचा—'अभी अपनी पूर्ण प्रभासे भासमान भगवान सूर्यदेव दिवसश्रीकी करधनीमें जटित मणिके समान आकाशके मध्यभागको सुशोभित कर रहे हैं। इन्द्रायुध बहुत थक गया है। अतएव इसे कहीं कुछ दूबके ग्रास खिलाकर किसी सरोवरमें, पत्थरोंके झरनेमें अथवा किसी नदीके जलमें नहलानेके बाद पानी पिलाऊँ। इसकी थकावट दूर करके स्वयं भी जलपान करूँ और किसी वृक्षकी छायामें मुहूर्त भर विश्राम करनेके बाद चलूँ।' ऐसा सोचकर वह जलकी खोजमें बार-बार इधर-उधर निगाह दौड़ाता हुआ चला। तभी किसी तालाबमें स्नान करके थोड़े ही समय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करावकृष्टैश्च समृणालमूलनालैः कमलकलापैः कल्माषितम्, आर्द्रार्द्रैश्च शैवलप्रवालैः श्यामलितोद्देशम्, उद्दलितैश्च कुमुदकुवलयकह्लारकुड्मलैरन्तरान्तरा विच्छुरितम्, उत्खातैश्च सकर्दमैः शालूककंदैराकीर्णम्, आखण्डितैश्च कुसुमस्तबकसारैर्वनपल्लवैराच्छादितम्, आलूनाभिश्च कुसुमोपविष्टोल्लसत्षट्पदाभिर्वनलताभिराकुलितम्, अभिनवकुसुमपरिमलग्राहिणा च तमालपल्लवसरसश्यामेन मदजलेन सर्वतः सिक्तं मार्गमद्राक्षीत्।

उपजातजलाशयशङ्कश्च तं प्रतीपमनुसरन्नुद्ग्रीवदृश्यैरुपरिच्छत्रमंडलकारैः सरलसारसल्लकीप्रायैर्विरलैरपि निःशाखतया विरलैरिवोपलक्ष्यमाणैः पादपैरुपेतेन, स्थूलकपिलवालुकेन, शिलाबहुलतया विरलतृणोलपेन, वनद्विपदशनदलितमनःशिलाधूलिकपिलेन, आभङ्गिनीभिरु-

---

पहले उधरसे गुजरे हुए बड़े-बड़े जङ्गली हाथियोंके चरणचिह्नसे चिह्नित तथा कीचड़से गीला मार्ग उसको दिखलायी दिया। वह रास्ता सूँड़से खींचकर तोड़े हुए मृणाल, कमलकन्द तथा डंठल समेत कमलोंसे विचित्र हो गया था। बहुत गीली सेवारकी पत्तियोंके पड़नेसे उस मार्गका कुछ हिस्सा काला हो रहा था। उखाड़कर तोड़ी गयी कुमुद, कमल तथा कह्लार (सौगन्धिक कमल) की अधखिली कलियाँ यत्र-तत्र छितरायी हुई थीं। उखाड़े हुए ढेरके ढेर कीचड़ लगे कमलकन्द बिखरे पड़े थे। बरबस तोड़कर फेंके हुए फूलके गुच्छों समेत बहुतेरे पत्तोंसे वह मार्ग ढँका हुआ था। कितनी ही काटकर गिरायी गयी वनलताओंके पुष्पोंपर भौंरे बैठकर आनन्द ले रहे थे। एकदम ताजे फूलोंकीसी सुगन्धि फैलाते तथा तमालके पत्तों सरीखे काले मतवाले हाथियोंके मदजलसे वह मार्ग सिंचा हुआ था।

इन चिह्नोंसे सरोवरकी आशंका करके चंद्रापीड उसी रास्ते आगे बढ़ा। इस प्रकार चलते-चलते वह कैलासकी तलैटीमें जा पहुँचा। वहाँ र साल, सरल और सल्लकीके अगणित वृक्ष लगे थे। वे इतने ज्यादा ऊँचे थे कि गर्दन ऊँची करके ही देखे जा सकते थे। उनके ऊपरी हिस्सेमें छत्रमण्डलकी आकृतिमें बहुत घने पल्लव थे, किन्तु उनमें शाखायें नहीं थीं। अतएव वे विरल दीख रहे थे। वहाँकी बालू मोटी और पीली थी। चट्टानोंकी अधिकताके कारण कहीं ही कहीं घास उगी दीखती थी। बनैले हाथियोंके दाँतों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्कीर्णाभिरिव पत्रभङ्गकुटिलाभिः पाषाणभेदकमञ्जरीभिर्जटिलीकृत-शिलान्तरालेन, अनवरतगलद्गुग्गुलुद्रुमद्रवार्द्रीकृतदृषदा, शिखरस्रुतशिलाजतुरसपिच्छिलोपलेन टङ्कनहयखुरखण्डितहरितालक्षोदपांसुलेन, आखुनखरोत्खातबिलावकीर्णकाञ्चनचूर्णेन, सिकतानिमग्नचमरकस्तूरिकामृगीखुरपंक्तिना, संशीर्णरंकुरल्लकरोमप्रकरनिचितेन, विषमशिलाच्छेदोपविष्टजीवंजीवकयुगलेन, वनमानुषमिथुनाध्यासिततटगुहामुखेन, गन्धपाषाणपरिमलामोदिना, वेत्रलताप्रतानप्ररूढवेणुना कैलासतलेन कंचिदध्वानं गत्वा तस्यैव कैलासशिखरिणः पूर्वोत्तरे दिग्भागे जलभारालसं जलधरव्यूहमिव बहुलक्षपान्धकारमिव पुञ्जीकृतमत्यायतं तरुखडं ददर्श। तत्र संमुखागतेन कुसुमरजःकषायामोदिना जलसंसर्गशिशिरेण शीकरिणा चन्दनरससमस्पर्शेनालिङ्ग्यमान इव जलतरङ्गमा-

---

द्वारा तोड़ी गयी मैनसिलकी धूलसे वह जमीन पीले रङ्गकी थी। सब तरफसे टेढ़ी और उत्कीर्ण (लिखी या खोदी गयी) जैसी दीखती पाषाणभेद (पथरी घास) की मंजरियाँ उन चट्टानोंके बीच पड़ी हुई दरारोंमें घुसी हुई थीं। निरन्तर पिघलती हुई गूगुलके रससे वहाँके शिलाखण्ड तर हो गये थे। पर्वतशिखरसे बहनेवाले शिलाजीतके रससे उनमें फिसलन आ गयी थी। छेनीके सदृश कठोर घोड़ोंके टापोंसे टूटे हरतालके चूर्णसे वे शिलायें मैली हो गयी थीं। चूहोंके नाखूनोंसे खुदी हुई बिलोंमें सोनेके चूरे बिछे हुए थे। वहाँकी रेतमें चमरी गाय और कस्तूरी मृगके खुरोंकी कतारके निशान बने हुए थे। रंकु और रल्लकजातिके मृगोंके रोयें बिखरे पड़े थे। वहाँके ऊँचे-नीचे शिलाखण्डोंपर चकोरदम्पती विराजमान थे। उसकी तटवर्तिनी कन्दराओंमें वनमानुषोंके जोड़े रहा करते थे। सुगन्धित पाषाणोंकी सुगन्धि गमक रही थी और बेंतोंकी वल्लरियोंके बीच-बीचमें बाँस उगे हुए थे। इस प्रकारकी तलैटीसे होते हुए चन्द्रापीडने कुछ दूर आगे जाकर कैलासके उत्तरपूर्वी भागमें जलके भारसे अलसाये हुए मेघोंके समुदायकी भाँति एवं कृष्णपक्षकी काली रात्रि तथा एकत्र अन्धकारराशिके समान वृक्षोंका एक बहुत बड़ा झुरमुट देखा। सामनेसे आती हुई, पुष्पपरागसे सुरभित, जलके संसर्गसे ठंढी, पानीकी महीन फुहारोंसे युक्त, चन्दनरसकी भाँति सुगन्धित और शिशिर स्पर्शवाली जलतरङ्गोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रुतेन कमलमधुपानमत्तानां च श्रोत्रहारिभिः कलहंसानां कोलाहलैराहूयमान इव विवेश।

प्रविश्य च तस्य तरुखण्डस्य मध्यभागे मणिदर्पणमिव त्रैलोक्यलक्ष्म्याः, स्फटिकभूमिगृहमिव वसुंधरादेव्याः, जलनिगमनमार्गमिव सागराणाम्, निस्यन्दमिव दिशाम्, अंशावतारमिव गगनतलस्य, कैलासमिव द्रवतामापन्नम्, तुषारगिरिमिव विलीनम्, चन्द्रातपमिव रसतामुपेतम्, हराट्टहासमिव जलीभूतम्, त्रिभुवनपुण्यराशिमिव सरोरूपेणावस्थितम्, वैदूर्यगिरिजालमिव सलिलाकारेण परिणतम्, शरदभ्रवृन्दमिव द्रवीभूयैकत्र निस्यन्दितम्, आदर्शमिव प्रचेतसः स्वच्छतया, मुनिमनोभिरिव सज्जनगुणैरिव हरिणलोचनप्रभाभिरिव मुक्ताफलांशुभिरिव निर्मितम्, आपूर्णपर्यन्तमप्यन्तःस्पष्टदृष्टसकलवृत्ता-

---

वायु जैसे युवराजका आलिंगन कर रही थी एवं कमलोंका मधु पीकर मस्त कलहंसोंका कोलाहल जैसे उसे अपनी ओर बुला रहा था। इस प्रकारके उस विकट झुरमुटके भीतर वह घुसा।

उसके भीतर घुसते ही चन्द्रापीडने उस झुरमुटके मध्यमें एक अतिशय मनोहारी तथा नेत्रोंके लिए अनन्ददायी अच्छोद नामका एक बहुत बड़ा सरोवर देखा। वह सरोवर मानो त्रिलोकीकी लक्ष्मीका मणिमय दर्पण था। वह जैसे भगवती वसुन्धरा देवी (पृथ्वी) का स्फटिकमणिनिर्मित भूमिगृह (तहखाना) था। वह जैसे सभी समुद्रोंका जल बाहर निकालनेका मार्ग था। वह जैसे सब दिशाओंका झरना था। वह जैसे आकाशमण्डलका अंशावतार था। वह गले हुए कैलासपर्वतके समान था। वह विलीन हिमालयके सदृश था। वह रसरूपमें परिणत चन्द्रमाकी चाँदनी सरीखा था। वह शंकरभगवान्के पिघले हुए हास्यके समान उज्ज्वल था। उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे सारी त्रिलोकीकी पुण्यराशि सरोवरके रूपमें परिणत होकर वहाँ जा उपस्थित हुई थी। जैसे बहुतेरे वैदूर्यमणिके पर्वत पानीके स्वरूपमें वहाँ जा पहुँचे थे। वह सरोवर ऐसा दीखता था कि मानो बहुतेरे शरत्कालके मेघ पिघलकर एकत्रित हो गये हों। वह वरुणदेवके दर्पणकी नाईं स्वच्छ था। वह जैसे मुनियोंके मन, सज्जनोंके सद्गुण, मृगोंके नेत्रोंकी दीप्ति और मोतियोंकी किरणों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्ततया रिक्तमिवोपलक्ष्यमाणम्, अनिलोद्धूतजलतरङ्गशीकरधूलिजन्मभिः सर्वतः संस्थितैः संरक्ष्यमाणमिवेन्द्रचापसहस्रैः, प्रतिमानिभेनान्तःप्रविष्टसजलचरकाननशैलनक्षत्रग्रहचक्रवालं त्रिभुवनमुद्भिन्नपङ्कजेनोदरेण नारायणमिव बिभ्राणम्, आसन्नकैलासावतीर्णस्य च शतशो भगवतः खण्डपरशोर्मज्जनोन्मज्जनक्षोभचलितचूडामणिचन्द्रखण्डच्युतेनामृतरसेन जलक्षालितवामार्धकपोलगलितलावण्यप्रवाहानुकारिणा मिश्रितजलम्, उपकूलतमालवनप्रतिबिम्बान्धकारिताभ्यन्तरैर्दृश्यमानरसातलद्वारैरिव सलिलप्रदेशैर्गभीरतरम्, दिवाप्युपजातनिशाशङ्कैश्चक्रवाकमिथुनैः परिह्रियमाणनीलोत्पलवनगहनम्, असकृत्पितामहपरिपूरितकमण्डलुपरिपूतजलम्, अनेकशो बालखिल्यकदम्बककृतसंध्योपासनम्, बहुशः सलिलावतीर्णसावित्रीभग्नदेवार्चनकमलसहस्रम्, सहस्रशः सप्तर्षिमण्डल-

---

को एकत्र करके बनाया गया था। भली भाँति भरा होनेपर भी उसके भीतर तलप्रदेश तककी सब वस्तुयें स्पष्ट दिखायी देती थीं, जिससे वह छूँछा-सा लगता था। वायुवेगसे उठती हुई तरंगोंकी महीन फूहियाँ सब दिशाओंमें एकत्र हो गयी थीं। जिन्हें देखकर ऐसा लगता था कि मानो हजारों इन्द्रधनुष उसकी रखवाली कर रहे हों। उसके भीतर वनों, पर्वतों, नक्षत्रों और ग्रहोंके प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखलायी देते थे। जिनसे ऐसा लगता था कि मानो विकसित कमलधारी विष्णुभगवान्‌की तरह उसने भी अपने उदरमें तीनों लोक धारण कर रक्खा हो। भगवती पार्वतीके जलधौत कपोलसे निकली लावण्यराशिका अनुकरण करनेवाला और समीपवर्ती कैलासपर्वतसे नीचे उतरकर शंकरजीके अनेकशः डुबकी लगानेके क्षोभवश चलायमान चूडामणिरूपी चंद्रमाके टुकड़ेसे निकला अमृतरस उस सरोवरके जलमें मिला हुआ था। उसके भीतर तटवर्ती तमालवृक्षोंके प्रतिबिम्ब पड़नेके कारण अन्धकारसे व्याप्त रसातलके द्वार प्रदर्शित करनेवाले जलीय प्रदेशोंसे वह सरोवर बहुत ही गहरा दीख रहा था। दिनके समय भी रात्रिकी आशंका करके चकवा-चकवीके जोड़े उसके गहन नील कमलको त्याग देते थे। ब्रह्माजी बहुत बार अपना कमण्डल भरकर उसके जलको पवित्र कर चुके थे। बालखिल्य मुनियोंने कई बार उसके तटपर संध्यावन्दन किया था। भगवती सावित्रीने बहुत बार उसके जलमें उतरकर देव-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्नानपवित्रकृतीम्, सर्वदा सिद्धवधूधौतकल्पलतावल्कलपुण्योदकम्, उदकक्रीडादोहदागतानां च गुह्यकेश्वरान्तःपुरकामिनीनां मकरकेतुचापचक्राकृतिभिरतिविकटैरावर्तिभिर्नाभिमण्डलैरापीतसलिलम्, क्वचिद्वरुणहंसोपात्तकमलवनमकरन्दम, क्वचिद्दिग्गजमज्जनजर्जरितजरन्मृणालदण्डम, क्वचित्त्र्यम्बकवृषभविषाणकोटिखण्डिततटशिलाखण्डम्, क्वचिद्यममहिषशृङ्गशिखरविक्षिप्तफेनपिण्डम्, क्वचिदैरावतदशनमुसलखण्डितकुमुदखण्डम्, यौवनमिवोत्कलिकाबहुलम्, उत्कण्ठितमिव मृणालवलयालंकृतम, महापुरुषमिव मीनमकरकूर्मचक्रप्रकटलक्षणम्, षण्मुखचरितमिव श्रूयमाणक्रौञ्चवनिताप्रलापम, भारतमिव पाण्डुधार्त-

---

ताओंको पूजाके लिए कमलके फूल तोड़े थे। सप्तर्षियोंने हजारों बार वहाँ स्नान करके उस सरोवरको पवित्र किया था। नित्य अपने कल्पलतानिर्मित वल्कलवसन धोकर सिद्धवधुओंने उसके जलको पुनीत किया था। जलक्रीड़ाकी अभिलाषासे आयी हुई कुवेरके अन्तःपुरकी नारियोंके कामदेवके चापचक्राकार, अत्यन्त विकट भँवर सदृश आकारवाले नाभिमण्डलोंने उसका जल पिया था। उस सरोवरके किसी न किसी भागमें वरुणदेवके पालतू हंस कमलवनका मकरन्द पी रहे थे। उस महान् सरोवरके किसी-किसी भागमें दिग्गजोंके नहानेके कारण परिपक्व मृणालदण्ड जर्जर हो गये थे। कहीं-कहीं शंकरजीके बैल नन्दीकी सींगोंके अग्रभागसे उसके तटकी शिलायें टूट गयी थीं। कहीं-कहीं यमराजके महिषने अपनी सींगोंकी नोकसे उसके फेनको इधर-उधर बिखेर दिया था। कहीं-कहीं ऐरावतके मुसलसरीखे दाँतोंने कुमुदवनको खण्ड खण्ड कर डाला था। जिस तरह यौवनकाल विविध उत्कण्ठाओंसे परिपूर्ण रहता है, उसी प्रकार वह सरोवर बहुतेरी नयी-नयी कलियोंसे भरा हुआ था। जैसे कोई प्रेमी विरहकालमें प्रेमकी पीड़ासे पीड़ित होकर शान्ति प्राप्त करनेके लिए मृणालके कंगन पहनता है, उसी प्रकार वह सरोवर भी मृणालरूपी वलयसे अलंकृत था। जैसे महापुरुषोंके हाथ-पैरमें मत्स्य, मकर, कच्छप और चक्रके चिह्न विद्यमान रहते हैं, उसी प्रकार उस सरोवरमें भी मत्स्य-मकर-कछुए और चक्रवाक पक्षी प्रत्यक्ष विद्यमान दीखते थे। जैसे स्वामिकार्तिकेयके चरित्रमें क्रौञ्चपर्वतकी स्त्रीके रुदनकी कथा सुनी जाती है, उसी प्रकार उस सरोवरमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राष्ट्रकुलपक्षकृतक्षोभम्, अमृतमथनसमयमिव तीरकासारावस्थितशितिकण्ठपीयमानविषम्, कृष्णबालचरितमिव तटकदम्बशाखाधिरूढहरिकृतजलप्रपातक्रीडम्, मदनध्वजमिव मकराधिष्ठितम्, दिव्यमिवानिमिषलोचनरमणीयम्, अरण्यमिव विजृम्भमाणपुण्डरीकम्, उरगकुलमिवानन्तशतपत्रपद्मोद्भासितम्, कंसबलमिव मधुकरकुलोपगीयमाननकुवलयापीडम्, कद्रूस्तनयुगलमिव नागसहस्रापीतपयोगण्डूषम्, मलयमिव चन्दनांशशिशिरवनम्, असत्साधनमिवादृष्टान्तम्, अतिमनोहरमाह्लादनं दृष्टेरच्छोदं नाम सरो दृष्टवान्।

भी क्रौञ्चवनिताओं अर्थात् बगुलियोंका रोदन सुनायी देता था। जैसे महाभारतमें पाण्डवों और धृतराष्ट्रके पुत्रोंमें परस्पर युद्ध हुआ था, उसी प्रकार उस सरोवरमें भी श्वेत हंस परस्पर पंखोंका प्रहार करते हुए लड़ते थे। जैसे अमृतमन्थनकालमें समुद्रतटपर शिवजीने विषपान किया था। उसी प्रकार उस सरोवरके तटपर रहनेवाले शितिकण्ठ (मयूर) उसका विष (जल) पीते थे। भगवान् कृष्णकी बाललीलाके समान उस सरोवरके तटवर्ती कदम्बवृक्षोंकी शाखाओंपर हरि (बन्दरों) के जलमें कूदनेका खेल होता रहता था। कामदेवकी ध्वजाके समान उसमें मगर भरे रहते थे। स्वर्गलोकमें जैसे देवता अनिमिषलोचन होकर रहते हैं, उसी प्रकार उस विशाल अच्छोद सरोवरमें अनिमिषनयन मछलियाँ रहती थी। जैसे बड़े-बड़े वनोंमें व्याघ्र जागनेपर जँभाई लेता है, उसी प्रकार उस सरोवरमें प्रातःकाल कमलवृन्द विकसित होकर जँभाई लेते थे। जैसे सर्पकुलमें अनन्त, शतपत्र और पद्मजातिके सर्प होते हैं। उसी प्रकार वह सरोवर असंख्य पंखुड़ियोंवाले कमलोंसे सुशोभित था। जैसे कंसकी सेनामें मदलोलुप भ्रमरोंका गुंजन सुननेवाला कुवलयापीड हाथी था, उसी तरह उस सरोवरके नीलकमलसमूहपर भौंरे गुञ्जारते हुए गाया करते थे। जैसे नागमाता कद्रूके स्तनको हजारों नाग पीते थे, उसी प्रकार उस सरोवरके जलको हजारों हाथी पिया करते थे। जैसे मलयपर्वत चन्दनवनसे शीतल रहता है, उसी प्रकार वह सरोवर चन्दनवनके सदृश शीतल था। जैसे असत् हेतुका कोई दृष्टान्त नहीं होता, उसी प्रकार उस सरोवरकी सीमाका कहीं भी अन्त नहीं दिखायी देता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आलोकमात्रेणैवापगतश्रमो दृष्ट्वा मनस्येवमकरोत्—अहो निष्फलमपि मे तुरङ्गमुखमिथुनानुसरणमेतदालोकयतः सरः सफलतामुपगतम्। अद्य परिसमाप्तमीक्षणयुगलस्य द्रष्टव्यदर्शनफलम्, आलोकितः खलु रमणीयानामन्तः, दृष्ट आह्लादनीयानामवधिः, वीक्षिता मनोहराणां सीमान्तलेखा, प्रत्यक्षीकृता प्रीतिजननानां परिसमाप्तिः, विलोकिता दर्शनीयानामवसानभूमिः। इदमुत्पाद्य सरःसलिलममृतरसमुत्पादयता वेधसा पुनरुक्तनामिव नीता स्वसृष्टिः। इदमपि खल्वमृतमिव सर्वेन्द्रियाह्लादनसमर्थमतिविमलतया चक्षुषः प्रीतिमुपजनयति, शिशिरतया स्पर्शसुखमुपहरति, कमलसुगन्धितया घ्राणमाप्याययति, हंसमुखरतया श्रुतिमानन्दयति, स्वादुतया रसनामाह्लादयति। नियतं चास्यैव दर्शनतृष्णया न परित्यजति भगवान्कैलासनिवासव्यसनमुमापतिः। न खलु सांप्रतमाचरति जलशयनदोहदं देवो रथाङ्गपाणिर्यदिदममृतरससुरभिसलिलमपहाय लवणरसपरुषपयस्युदन्वति स्वपिति।

उस दिव्य सरोवरको देखकर ही चन्द्रापीडकी थकावट दूर हो गयी और वह मन ही मन सोचने लगा—'अहो! यद्यपि उस किन्नरदम्पतीका अनुसरणकार्य विफल रहा, फिर भी इस महान् सरोवरको देखकर मेरा यहाँ आना सफल हो गया। मेरे दोनों नेत्रोंको आज द्रष्टव्य वस्तुयें देखनेका पूरा लाभ मिल गया। इसे देखकर मानों मैंने सभी रमणीय वस्तुओंकी अन्तिम छोर देख ली। आनन्ददायक सभी पदार्थोंका अन्त मुझे आज दीख गया। इस सरोवरके जलको उत्पन्न करनेके बाद ब्रह्माने अमृतकी सृष्टि करके जैसे अपनी सृष्टिमें पुनरुक्ति दोष उत्पन्न कर दिया है। क्योंकि अमृतके समान ही यह सरोवर भी अपनी अतिशय विमलताके कारण सब इन्द्रियों और नेत्रोंको आनन्दित कर रहा है। अपनी शीतलताके कारण यह स्पर्शसुख प्रदान करता है। यह कमलोंकी सुगन्धिसे नासिकाको आनन्दित कर रहा है। यह अपने तटवर्ती हंसोंकी ध्वनिसे कानोंको और मीठे जलसे जिह्वाको सुख दे रहा है। यह निश्चित है कि इस सरोवरको देखते रहनेकी तृष्णासे ही शंकरजी कैलासवासका व्यसन नहीं त्यागते। अब नारायण भी जलमें शयन करनेकी विशेष आकांक्षा नहीं रखते। तभी तो वे इस तरह अमृतरसके समान सुरभित जलको त्यागकर नमकके रससे रूखे जलवाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नूनं चेदं न प्रथममासीत्सरो येन प्रलयवराहघोणाभिघातभीता भूतधात्री कलशयोनिपानपरिकलितसकलसलिलं सागरमवतीर्णा, अन्यथा यद्यत्रागाधानेकपातालगम्भीराम्भसि निमग्ना भवेन्महासरसि किमेकेन, महावराहसहस्रैरपि नासादिता भवेत्। नूनं चास्मादेव सलिललेशमादायादाय महाप्रलयेषु प्रलयपयोदाः प्रलयदुर्दिनान्धकारितदशदिशः प्लावयन्ति भुवनान्तराणि। मन्ये च यत्सृष्टेरर्वाक्सलिलमयं ब्रह्माण्डरूपमादौ भुवनमभूत्तदिदं पिण्डीभूय सराव्यपदेशेनावस्थितम्' इति विचारयन्नेव तस्य शिलाशकलकर्कशवालुकाप्रायम्, विद्याधरोद्धृतसनालकुमुदकलापार्चितानेकचारुसैकतलिङ्गम्, अरुन्धतीदत्तार्घपयःपर्यस्तरक्तकमलशोभितम्, उपकूलशिलातलोपविष्टजलमानुषनिषेव्यमाणातपम्, अभ्यर्णतया च कैलासस्य स्नानागतमातृमण्डलपदपङ्क्तिमुद्रा-

---

समुद्रमें पड़े सोते रहते हैं। वास्तवमें पहले यह सरोवर नहीं रहा होगा। क्योंकि प्रलयकालमें महावराहकी नासिकाके आघातसे डरकर पृथिवी अगस्त्यमुनिके द्वारा पान कर लिये जानेके कारण थाह लगे हुए समुद्रमें चली गयी थी। यदि ऐसा न होता और पृथिवी यदि इस महान् सरोवरके अथाह तथा पाताल सदृश गहरे जलमें उतर गयी होती तो एक क्या हजारों महावराह भी उसे न खोज पाते। यह भी निश्चित है कि प्रलयकाल उपस्थित होनेपर प्रलयकालीन मेघ अत्यन्त भयंकर वर्षासे दसों दिशाओंमें अन्धकार फैलाते हुए इस सरोवरसे ही थोड़ा-थोड़ा जल ले जाकर सब भुवनोंको भर दिया करते हैं। मेरा ऐसा ख्याल है कि सृष्टिके पहले जो समस्त ब्रह्माण्ड जलमय था, वही सिमटकर इस सरोवरके रूपमें यहाँ विद्यमान है।' ऐसा सोचता हुआ चन्द्रापीड उस सरोवरके दक्षिणी तटपर पहुँचा। उस स्थानपर पत्थरोंके चूणकी कर्कश बालू बिखरी थी। वहाँपर विद्याधरोंने डण्ठल समेत कुमुद तोड़कर बालुकानिर्मित अनेकानेक सुन्दर शिवलिङ्गोंपर चढ़ाये थे। वहाँ ही अरुन्धतीने सूर्यनारायणको अर्घ्य दिया था और उस जलसे गिरे हुए लाल कमलके पुष्प बिखरे पड़े थे। सरोवरके तटवर्ती शिलाखण्डोंपर बैठे जलमानुष धूप खा रहे थे। कैलास समीप होनेके कारण स्नानार्थ आयी हुई पार्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ङ्कितम्, अवकीर्णभस्मसूचितमग्नोत्थितगणकदम्बकोद्धूलनम्, अवगाहावतीर्णगणपतिगण्डस्थलगलितमदप्रस्रवणसिक्तम्, अतिप्रमाणपादानुमीयमाननृपितकात्यायनीसिंहावतरणमार्गं दक्षिणतीरमासाद्य तुरगादवततार। अवतीर्य च व्यपनीतपर्याणमिन्द्रायुधमकरोत्। क्षितितललुठितोत्थितं च गृहीतकतिपययवसग्रासं सरोऽवतार्य पीतसलिलमिच्छया स्नातं चोत्थाप्यान्यतमस्य समीपवर्तिनस्तरोर्मूलशाखायामपगतखलीनं हस्तपाशशृंखलया कनकमय्या चरणौ बद्ध्वा कृपाणिकावलूनान्क्षिप्त्वा चाग्रतः कतिचित्सरस्तीरदूर्वाप्रवालान्पुनरपि सलिलमवततार। ततश्च प्रक्षालितकरयुगलश्चातक इव कृत्वा जलमयमाहारम्, चक्राह्व इवास्वाद्य मृणालशकलानि, शिशिरांशुरिव कराग्रैः स्पृष्ट्वा कुमुदानि, फणीवाभिनंद्य जलतरङ्गवातान्, अनङ्गशरप्रहारातुर इवो-

---

आदि माताओंके चरणचिह्न दीख रहे थे। यत्र-तत्र भस्म पड़ी दिखाई दे रही थी, जिससे ऐसा सूचित होता था कि स्नान करनेके पश्चात् उसे शिवगणोंने अपने शरीरपर मला था। स्नानके लिए आये हुए गणेशजीके गण्डस्थलसे बहे मदके झरनेसे तटभूमि गीली हो गयी थी। जहाँ-तहाँ बड़े-बड़े पाँवोंके चिह्न दीख रहे थे, जिनसे यह अनुमान होता था कि भगवतीका वाहन सिंह उसी राह जल पीनेके लिए उतरा होगा। ऐसे दक्षिणी तटपर पहुँचकर चन्द्रापीड घोड़ेसे उतर पड़ा और जीन उतार ली। जब इन्द्रायुध रेतमें लोटकर उठा, तब युवराजने थोड़ी-सी घास लाकर उसे खिलायी। फिर सरोवरमें ले जाकर जीभर जल पिलाया, नहलाया और बाहर ले आया। अब उसकी लगाम निकाल ली और समीपवर्ती वृक्षकी शाखामें सुनहली जंजीरसे उसके दोनों पैर बाँध दिये। तदनन्तर युवराज गया और सरोवरके तटपर उगी हरी-हरी कुछ घास अपनी खंजरसे काट लाया, उसे इन्द्रायुधके आगे डालकर स्वयं भी सरोवरके जलमें उतरा। उसमें उसने दोनों हाथ धोये और जलके लिए तरसनेवाले चातककी तरह जल पिया। तदनन्तर चकवेके समान मृणालके कुछ टुकड़े खाये। फिर चन्द्रमाकी तरह उसने अपने कराग्र (चन्द्रपक्षमें किरणके अग्रभाग तथा चंद्रापीडके पक्षमें हाथकी अंजली) से कुमुदपुष्पका स्पर्श किया। तदनन्तर साँपके समान जलतरंगोंसे शीतल वायुके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रसि निधाय नलिनीदलोत्तरीयम्, अरण्यराज इव शीकरार्द्रपुष्करोपशोभितकरः सरःसलिलादुदगात्। प्रत्यग्रभग्नशिशिरैश्च समृणालकैर्जलकणिकाचितैः कमलिनीपलाशैर्लतामण्डपपरिक्षिप्ते शिलातले स्रस्तरमास्तीर्य निधाय शिरसि पिण्डीकृतमुत्तरीयं निषसाद।

मुहूर्तं विश्रान्तश्च तस्य सरस उत्तरे तीरप्रदेशे समुच्चरन्तमुन्मुक्तकवलेन निश्चलश्रवणपुटेन तन्मुखीभूतेनोद्ग्रीवेणेन्द्रायुधेन प्रथममाकर्णितं श्रुतिसुभगं वीणातन्त्रीझंकारमिश्रममानुषं गीतशब्दमशृणोत्। श्रुत्वा च कुतोऽत्र विगतमर्त्यसंपाते प्रदेशे गीतध्वनेः संभूतिरिति समुपजातकौतुकः कमलिनीदलसंस्तरादुत्थाय तामेव गीतसंपातसूचितां दिशं चक्षुः प्राहिणोत्। अतिदवीयस्तया तु तस्य प्रदेशस्य प्रयत्नव्यापृतलोचनोऽपि विलोकयन्न किंचिद्ददर्श। तमेव केवलमनवरतं शब्दं शुश्राव। कुतूहल-

---

झोंकेका आनन्द लिया और कामबाणसे आहत मनुष्यकी भाँति छातीपर वस्त्रसदृश पुरइनके पत्तोंको रखकर बनैले हाथीकी तरह जलकणसे आर्द्र पुष्कर (सूँड़का अग्रभाग अथवा कमल) से सुशोभित कर (सूँड़ अथवा हाथ) समेत उस सरोवरसे बाहर आया। वहाँ एक चट्टानपर तत्काल टूटे होनेसे शीतल और जलकणसे भरे मृणाल समेत कमलके पत्तोंका बिस्तर बिछा तथा लिपटे दुपट्टेका तकिया लगाकर लेट गया।

इस प्रकार केवल मुहूर्तभर विश्राम करनेके पश्चात् उसी सरोवरके उत्तरी तटपर हो रहे स्वर्गीय गायनकी मोहक ध्वनि सुनी। सर्वप्रथम उस ध्वनिको इन्द्रायुधने सुना। सो सुनकर उस घोड़ेने घास खाना छोड़ दिया। उसके कान निश्चल हो गये। उसने अपना मुँह उधर ही घुमा लिया और गर्दन ऊँची कर ली। उस गायनकी ध्वनि कानोंको बड़ी मीठी लग रही थी और उसके साथ वीणाके तारोंकी झनकार भी सुनायी पड़ रही थी। वह गायन सुनकर 'इस निर्जन वनमें गानेकी ध्वनि कहाँसे आ रही है?' यह सोचता हुआ कौतूहलवश कमलपत्रके बिछौनेसे उठकर वह जिधरसे गीतकी ध्वनि आ रही थी, उधर ही निहारने लगा। किन्तु वह स्थान बहुत दूर था, अतएव अतिशय प्रयत्नपूर्वक आँखें घुमा-घुमाकर देखनेपर भी उसको कुछ नहीं दीखा। उस गीतकी ध्वनि बराबर अब भी सुनायी दे रही थी। 'गीतकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वशाच्च गीतध्वनिप्रभवजिज्ञासया कृतगमनबुद्धिर्दत्तपर्याणमिन्द्रायुधमारुह्य प्रियगीतैः प्रथमप्रस्थितैरप्रार्थितैरपि वनहरिणैरुपदिश्यमानवर्त्मा बकुलैलालवङ्गलवलीलतालालकुसुमसुरभिपरिमलयालिकुलविरुतिमुखरितया तमालनीलया दिङ्नागमदवीथ्येव पश्चिमया वनलेखया निमित्तीकृत्य तं गीतध्वनिमभिप्रतस्थे ।

क्रमेण च संमुखागतैः, अच्छनिर्झरजलकणजालजनितजडिमभिः, जर्जरितभूर्जवल्कलैः, धूर्जटिवृषरोमन्थफेनबिन्दुवाहिभिः, षण्मुखशिखण्डिशिखाचुम्बिभिः, अम्बिकाकर्णपूरपल्लवोल्लासनदुर्ललितैः, उत्तरकुरुकामिनीकर्णोत्पलप्रेङ्खोलनदोहदिभिः, आकम्पितकक्कोलैःनमेरुकुसुमपांसु-

---

यह ध्वनि कहाँ से आ रही है' इस जिज्ञासासे उसने उधर जानेका निश्चय किया। तदनुसार वह इन्द्रायुधकी पीठपर जीन कसकर सवार हो गया। गीतप्रिय होनेके कारण उधर ही दौड़ते हुए जंगली हिरनों द्वारा बिना पूछे बताये मार्गपर वह उसी ध्वनिकी जगह खोजता-खोजता उस सरोवरके पश्चिमी तटके गहन वनको झाँकता हुआ चला। वह वनलेखा मौलसिरी, इलायची, लौंग तथा लवलीकी वल्लरियोंपर झूमते हुए पुष्पोंकी सुगन्धिसे गमक रही थी। भौरोंके गुञ्जारसे वह वनराजि मुखरित हो रही थी। तमालवृक्षोंकी अधिकतासे कारण वह काली पड़ गयी थी। अतएव वह दिग्गजोंकी मदरेखा सरीखी दीख रही थी।

इस प्रकार क्रमशः अपने सम्मुख विद्यमान कैलासकी आनन्ददायिनी तथा पुनीत वायुसे आनन्दित होता हुआ चन्द्रापीड उस गीतध्वनिवाले स्थानके समीप पहुँच गया। निर्मल झरनोंकी महीन-महीन बूँदोंवाली फूहियोंसे मिश्रित होनेके कारण कैलासकी वायु बड़ी ठंढी थी। उसने भोजपत्रकी छालोंको छिन्न-भिन्न कर डाला था। वह शिवजीके बैल (नन्दी) की जुगालीसे उत्पन्न फेनकी बूँदोंको उड़ाकर ला रही थी। वह स्वामिकार्तिकेयके मयूरकी शिखाको चूम रही थी। भगवती पार्वतीके कर्णपल्लवोंको पुचकार रही थी। उत्तरी कुरुदेशकी सुन्दरियोंके कर्णकमलको वह वायु कम्पित करनेकी इच्छा कर रही थी। वह कक्कोल (कोशफल) के वृक्षोंको हिलाती और नमेरु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पातिभिः पशुपतिजटाबन्धातंवासुकिपरिपीतशेषैराह्लादिभिः पुण्यैः कैलासमारुतैरभिनन्द्यमानो गत्वा च तं प्रदेशं सर्वतो मरकतहरितैः, हारिहारीतरुतिरमणीयैः, भ्रमद्भृङ्गराजनखरजर्जरितजरठकुड्मलैः, उन्मदकोकिलकुलकवलीकृतसहकारकोमलाग्रपल्लवैः, उन्मदषट्चरणचक्रवालत्राचालितविकचचूतकलिकैः, अचकितचकोरचुम्बितमरिचांकुरैः चम्पकपरागपुञ्जपिञ्जरकपिञ्जलजग्धपिप्पलीफलैः, फलभरनिकरपीडितदाडिमनीडप्रसूतकलविङ्कैः, प्रक्रीडितकपिकुलकरतलताडनतरलितताडीपुटैः, अन्योन्यकुपितकपोतपक्षपालीपातितकुसुमैः, कुसुमरजोराशिसारसारिकाश्रितशिखरैः, शुकशतमुखनखशिखरशकलितफलस्फीतैः जलधरजललुब्धविप्रलब्धमुग्धचातकध्वानमुखरिततमालखण्डैः, इभकलभको-

---

(रुद्राक्ष) वृक्षोंके पुष्पोंको गिराती तथा शिवजीकी जटामें बँधनेसे व्यथित वासुकी नाग द्वारा पी जानेके बाद बची हुई थी। सरोवरके उस पश्चिमी तटपर पहुँचकर चन्द्रापीडने चन्द्रमाकी चन्द्रिकाके सदृश उज्ज्वल दीप्तिसे सारे प्रदेशको उज्ज्वल करती हुई चन्द्रप्रभा नामकी कैलास पर्वतकी तलहटीमें निर्मित शिवजीका एक सूना सिद्धमन्दिर देखा। उस मन्दिरके चारों ओर मरकतमणि सदृश हरे-हरे पेड़ लगे हुए थे। उनके ऊपर मनोहारी हारीत पक्षी बोल रहे थे, जिससे उनका सौन्दर्य और भी निखर उठा था। उड़ते हुए भृङ्गराज-पक्षीके नखोंसे उनकी परिपक्व कलिकायें जर्जरित हो गयी थीं। मस्त कोकिल-समुदाय वहाँके आम्रोंकी कोमल कोंपलोंको खा रहा था और खिली कलियोंपर बैठे भौंरे अपनी गुञ्जारसे उन्हें मुखरित कर रहे थे। चकोर पक्षी निर्भीकभावसे मिर्चके अंकुरोंको कुतर रहे थे। चम्पाके प्रचुर पराग पड़नेसे पीतवर्ण बने हुए चातक पीपलके गोदोंका आहार कर रहे थे। फलोंके बोझसे झुके और घने अनारवृक्षपर बने घोंसलोंमें गौरेया पक्षियोंने बच्चे दे रक्खे थे। क्रीडानिमग्न बन्दरोंके करताडनसे तालवृक्ष हिल रहे थे। कुपित कपोतोंके पारस्परिक युद्धमें पंखोंका प्रहार होनेपर वृक्षोंके फूल झड़ रहे थे। विविध पुष्पोंकी रजोराशिसे विचित्रित मैनायें उन वृक्षोंके शिखरोंपर विराजमान थीं। सैकड़ों तोते अपने मुख तथा नखाग्रसे उनके फलोंको कुतर-कुतरकर खण्ड-खण्ड कर रहे थे। मेघोंका समूह समझकर किन्तु बादमें धोखा खाये हुए जलके लोभी चातक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ल्लूनपल्लववेल्लितलवलीवलयैः, आलीयमाननवयौवनमत्तपारावतपक्ष-क्षेपपर्यस्तकुसुमस्तबकैः, तनुपवनकम्पितकोमलकदलीदलवीजितैः, अवि-रलफलनिकरावनतनालिकेरवनैः, अकठोरपत्रपुटपूगविटपिपरिवृतैः, अनिवारितविहंगतुण्डखण्डितपिण्डखर्जूरजालकैः, मदमुखरमयूरीमधुर-रवविराजितान्तरैः, आकलितकलिकाकलापदन्तुरितैः, अन्तरान्तरा कैला-सतरंगिणीतरङ्गितसिकतिलतलभूमिभागैः, वनदेवताकरतलनिग्रहनिभ-मलक्तकजललवसिक्तमिव किसलयनिकरमतिसुकुमारमुद्वहद्भिः, ग्रन्थिपर्ण-ग्रासमुदितचमरीकुलनिषेवितमूलैः, कर्पूरागुरुप्रायैः, इन्द्रायुधैरिव घना-वस्थानैः, कुमुदैरिवादत्तदिनकरप्रवेशशिशिराभ्यन्तरैः, दाशरथिबलै-रिवाञ्जननीलनलपरिगतप्रान्तैः, प्रासादैरिव सपारावतैः, भवनतापसै-

---

तमाल वृक्षोंकी झुरमुटमें बैठकर बोलते हुए उसे मुखरित कर रहे थे। हाथियों-के बच्चों द्वारा पत्तियाँ नुच जानेके कारण लवलीकी लतायें काँप रही थीं। नवयौवनसे मस्त कबूतरोंके पंख फड़फड़ाकर बैठनेसे उन वृक्षोंके पुष्पगुच्छ टूटकर गिर रहे थे। मन्द-मन्द चलनेवाली हवासे हिलते हुए कोमल कदलीके पत्ते पंखेका काम कर रहे थे। फलोंके अत्यधिक बोझसे नारियलके वन झुक गये थे। पास ही कठोर पत्तोंवाले सुपारीके वृक्ष लगे थे। वहाँपर कोई रोकने-वाला नहीं था, इसलिए पक्षियोंके झुण्ड निर्द्वन्द्वभावसे पिण्डखजूरके असंख्य फलोंको कुतरे डाल रहे थे। उन वृक्षोंके भीतरसे जहाँ-तहाँ बोलती हुई मदमत्त मयूरोंका मधुर शब्द सुनायी दे रहा था। उन वृक्षोंपर भरपूर कलिकायें लगी हुई थीं। वहाँकी रेतली जमीनपर बीच-बीचमें कैलासकी नदियोंकी तरंगोंसे तर हवाके झोंके आ जाया करते थे। वनदेवियोंके करतल सदृश तथा महावरके रससे आर्द्र जैसी अतिशय कोमल कोंपलें उन वृक्षोंपर लगी हुई थीं। ग्रन्थिपर्ण (शूकवृक्ष) की मुलायम पत्तियें खा-खाकर चमरमृगगण उनकी छायामें सानन्द बैठे हुए थे। उस स्थानपर कपूर और अगुरुके वृक्षोंकी अधिकता था। जैसे मेघोंमें इन्द्रधनुष रहता है, उसी प्रकार वे वृक्ष भी बहुत घने लगे हुए थे। इसी कारण कुमुदवनके समान सूर्यकी किरणें न पहुँच पानेसे उन वृक्षोंकी झुरमुटमें सदा ठण्ढक बनी रहती थी। जैसे श्रीरामचन्द्रकी सेनामें आंजन (हनुमान्), नल और नील विद्यमान रहा करते थे। उसी प्रकार उसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिव संनिहितवेत्रासनैः, रुद्रैरिव नागलताबद्धपरिकरैः, उदधिकूलपुलिनैरिव निरन्तरोद्भिन्नप्रवाललताङ्कुरजालकैः, अभिषेकसलिलैरिव सर्वौषधिकुसुमफलकिसलयसनाथैः, आलेख्यगृहैरिव बहुवर्णचित्रपत्रशकुनिशतसंशोभितैः, कुरुभिरिव भारद्वाजद्विजोपसेवितैः, महासमरमुखैरिव पुंनागसमाकृष्टशिलीमुखैः, महाकरिभिरिव प्रलम्बबालपल्लवस्पृष्टभूतलैः, अप्रमत्तपार्थिवैरिव पर्यन्तावस्थितबहुगुल्मकैः, दंशितैरिव भ्रमरसंघातकवचावृतकायैः, प्रमाणाभिमुखैरिव वानरकरांगुलिस्पृष्टगुञ्जैः, अव-

---

किनारे अंजनके समान काली घासें उगी हुई थीं। जैसे बड़े बड़े भवनोंमें कबूतरोंका निवास रहता है, वैसे ही वहाँ वानरोंका निवास था। जैसे गृहस्थ तपस्वियोंके घरोंमें वेत्रासन अर्थात् बेंतकी चटाइयाँ रहती हैं, उसी प्रकार वहाँ वेत्र (बेंत) और असन नामके वृक्ष थे। जैसे एकादश रुद्र अपनी कमरमें साँपोंकी लता लपेटे रहते हैं, उसी प्रकार उन वृक्षोंपर पानकी वेलें लगी हुई थीं। जैसे समुद्रके तटीय प्रदेशमें श्रेणीबद्ध लताओंकी तरह मूँगेकी कतारें लगी रहती हैं, उसी प्रकार वहाँ नित्य नये-नये पत्ते और नयी-नयी कोंपलें विद्यमान रहती थीं। अभिषेकके लिए नियत जलकी तरह वहाँ भी सब औषधियाँ, पुष्प, फल तथा पल्लव एकत्रित थे। चित्रशालाकी तरह विविध वर्ण और नाना प्रकारके रंगोंवाले पंखोंयुक्त पक्षी उस स्थानको शोभित कर रहे थे। जैसे दुर्योधनादि कौरवोंकी सेनामें भरद्वाजगोत्रीय द्रोणाचार्य उपस्थित रहते थे, उसी प्रकार वहाँ भरद्वाज पक्षी रहा करते थे। जैसे महासमरके आरम्भमें सर्वप्रथम बाणों द्वारा अग्रगामी हाथियोंपर प्रहार किया जाता है, उसी प्रकार वहाँके मतवाले हाथी अपने मदकी सुगन्धिसे भौंरोंको अपनी ओर आकृष्ट करते थे। जिस तरह बड़े-बड़े हाथियोंकी पूँछका बाल धरतीका स्पर्श करता रहता है, उसी प्रकार वे वृक्ष अपने नये-नये पल्लवोंके भारसे झुककर पृथिवीका स्पर्श कर रहे थे। जैसे राज्यकी रक्षामें तत्पर राजाओं द्वारा अपने राज्यकी सीमापर जगह जगह बहुतेरे गुल्म अर्थात् सेनाके शिविर बनाये जाते हैं, उसी प्रकार वहाँ भी जगह-जगह गुल्म अर्थात् झाड़ियाँ विद्यमान थीं। जैसे सेनाके सैनिकोंका शरीर भ्रमरसमूहके सदृश काले-काले कवचोंसे ढंका रहता है, उसी प्रकार वह स्थान भी भ्रमररूपी कवचसे सदा आवृत रहता था। जैसे सोना-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निपालशयनैरिव सिंहपादाङ्कितचरणतलैः, आरब्धपञ्चतपःक्रियैरिवोच्छिखशिखिमण्डलपरिवृतैः, दीक्षितैरिव कृतकृष्णसारविषाणकण्डूयनैः, जरद्गृहमुनिभिरिव जटालबालकमण्डलुधरैः, इन्द्रजालिकैरिव दृष्टिहारिभिः पादपैः परिवृतं चन्द्रप्रभनाम्नस्तस्य सरसः पश्चिमे तीरे कैलासपादस्य ज्योत्स्नावदातया प्रभया धवलितम्तं प्रदेशं भूतलभागसंनिविष्टं भगवतः शूलपाणेः शून्यं सिद्धायतनमपश्यत्।

तच्च पवनोद्धूतैरितस्ततः समापतद्भिः केतकीगर्भधूलिभिर्धवलीक्रियमाणकायः पशुपतिदर्शनहेतोर्बलादिव प्रतिपाद्यमानो भस्मव्रतमायतनप्रवेशपुण्यैरिव परिगृह्यमाणः प्रविश्याद्राक्षीच्चतुःस्तम्भस्फटिकमण्डपि-

---

चाँदी तौलनेके लिए उद्यत दूकानदार गुंजा (रत्ती) उठाते हैं, उसी प्रकार वहाँके वानर अपनी उँगलियोंसे वृक्षोंपर लसी लताओंमें लगी हुई गुंजाके गुच्छे तोड़ रहे थे। जैसे राजाओंके पलंगके पाँवोंमें सिंहके पैरकी आकृति बनी रहती है, उसी प्रकार वहाँ सिंहोंके संचरणसे उनके पैरके चिह्न बराबर दिखायी देते थे। जैसे पंचाग्नि तापनेवाले लोग उच्चशिखा अर्थात् ऊँची लपटोंवाली अग्निके अहरोंमें घिरे रहते हैं, उसी प्रकार वह ऊँची शिखावाले मयूरोंसे घिरा रहता था। जिस प्रकार यज्ञके लिए दीक्षित पुरुष आवश्यक होनेपर हिरनकी सींगसे देह खुजलाते हैं, उसी प्रकार वहाँके निवासी हिरन वृक्षोंपर रगड़कर अपनी सींगें खुजलाते थे। जिस प्रकार वृद्ध गृहस्थ मुनि अपने जटा-कमंडलुधारी बालकोंका पालन-पोषण करते हैं, उसी प्रकार वे वृक्ष भी जटाओंसे सम्पन्न अपने जलभरे थालोंकी रक्षा करते थे। जैसे कुशल मदारी अपने कौशलसे लोगोंकी दृष्टि हर लेते हैं, उसी प्रकार वे वृक्ष भी अपने सौन्दर्यसे लोगोंका दृष्टि बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लिया करते थे।

वहाँ पहुँचकर युवराज चन्द्रापीड उस मन्दिरके भीतर प्रविष्ट हुआ। वायुके द्वारा इधर-उधरसे उड़कर आये केवड़ेके पराग पड़नेसे उज्ज्वल हो जानेके कारण युवराज ऐसा दीख रहा था कि जैसे शंकरजीका दर्शन करनेके लिए उसने बरबस अपने सारे शरीरमें भस्म मल ली हो और मन्दिरप्रवेशके पुण्योंने मूर्तिमान् हो-होकर उसे चारों ओरसे घेर लिया हो। मंदिरके भीतर जाकर उसने सभी लोकों द्वारा वन्दितचरण और चराचर समस्त प्राणियोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कातलप्रतिष्ठितम्, अचिरोद्धूतैरार्द्रदलशिखरगलज्जलबिन्दुभिरूर्ध्वविपाटितचन्द्रबिम्बदलैरिव निजाट्टहासावयवैरिव शेषफणाशकलैरिव पाञ्चजन्यसहोदरैरिव क्षीरोदहृदयाकारैरुपपादितमौक्तिकमुकुटविभ्रमैः शुचिभिर्मन्दाकिनीपुण्डरीकैः कृतार्चनम्, अमलमुक्ताशिलाघटितलिङ्गम्, अशेषत्रिभुवनवन्दितचरणम्, चराचरगुरुम्, चतुर्मुखम्, भगवन्तं त्र्यम्बकम्। तस्य च दक्षिणां मूर्तिमाश्रित्याभिमुखीमासीनाम्, उपरचितब्रह्मासनाम्, अतिविस्तारिणा सर्वदिङ्मुखप्लावकेन प्रलयविप्लुतक्षीरपयोधिपूरपाण्डुरेणातिदीर्घकालसंचितेन तपोराशिनेव सर्वतो विसर्पता पादपान्तरैस्त्रिस्रोतोजलनिभेन पिण्डीभूय वहतेव देहप्रभावितानेन सगिरिकाननं दन्तमयमिव तं प्रदेशं कुर्वतीम्, अन्यथैव धवलयन्तीं कैलासगिरिम्, अन्तर्द्रष्टुरपि लोचनपथप्रविष्टेन श्वेतिमानमिव

पिता चतुर्मुख शंकरभगवान्‌की प्रतिमा देखी। वह प्रतिमा स्फटिकमणिनिर्मित चार स्तम्भोंपर बने एक मण्डपमें विराजमान थी। निर्मल मुक्ताशिलासे उस प्रतिमाका निर्माण हुआ था। तुरन्त ही तोड़े गये, अत्यन्त गीली पंखुड़ियोंके अग्रभागसे जलकी बूँदें टपकानेवाले तथा मन्दाकिनीमें उत्पन्न पुनीत पुंडरीक (श्वेत कमल) के पुष्पोंसे उस प्रतिमाकी जैसे अभी-अभी पूजा की गयी थी। वे पुष्प ऊपरसे चीरे गये चन्द्रमण्डलके टुकड़ों, अपने (शंकरजीके) अट्टहासके अवयवों तथा शेषनागके फनके खण्डों सरीखे दीख रहे थे। अथवा वे उज्ज्वल पांचजन्य शंखके सहोदर भाइयों एवं क्षीरसमुद्रके हृदयके सारांशकी नाईं शुभ्र थे और उन्हें देखनेसे ऐसा लगता था कि मानो बहुतसे मोतियोंके मुकुट वहाँ एकत्र हो गये हों। वहाँ युवराज चन्द्रापीडने उस भव्य प्रतिमाके समक्ष पाशुपतव्रत धारण करके शिवाराधन करती हुई एक कन्याको उपस्थित देखा। वह ब्रह्मासन लगाकर बैठी थी। वह अत्यन्त विस्तृत तथा सभी दिशाओंको डुबा देनेके लिए उद्यत होकर उमड़े हुए प्रलयकालीन क्षीरसागरके प्रवाहकी तरह उज्ज्वल, चिरकालसे संचित तपस्याकी राशि सदृश विस्तृत होते हुए वृक्षसमूहके मध्य गंगाजलकी भाँति एकत्र होकर बहते, अपनी शारीरिक दीप्तिरूपी वितानके द्वारा जैसे बनों-पर्वतों समेत सारे प्रदेशको हाथीके दाँतसे बने हुएके समान उज्ज्वल किये दे रही थी। स्वतः शुभ्र कैलास पर्वतको जैसे वह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मनो नयन्तीम्, अतिधवलप्रभापरिगतदेहतया स्फटिकगृहगतामिव दुग्धसलिलमग्नामिव विमलचैलांशुकान्तरितामिव आदर्शतलसंक्रान्तामिव शरदभ्रपटलतिरस्कृतामिव अपरिस्फुटविभाव्यमानावयवाम्, पञ्चमहाभूतमयमपहाय द्रव्यात्मकमङ्गनिष्पादनोपकरणकलापं धवलगुणेनेव केवलेनोत्पादिताम्, अध्वरक्रियामिवोद्धूतगणकचग्रहभयोपसेवितत्र्यम्बकाम्, रतिमिव मदनदेहनिमित्तं हरप्रसादनार्थमागृहीतहराराधनाम्, क्षीरोदाधिदेवतामिव सहवासपरिचितहरचन्द्रलेखोत्कण्ठाम्, इन्दुमूर्तिमिव स्वर्भानुभयकृतत्रिनयनशरणगमनाम्, ऐरावतदेहच्छविमिव गजाजिनावगुण्ठनोत्कण्ठितशितिकण्ठचिन्तितोपनताम्, पशुपतिदक्षिणमुखहासच्छविमिव बहिरागत्य कृतावस्थानाम्, शरीरिणीमिव

अपनी कान्तिसे और भी उज्ज्वल कर रहा था। वह जैसे नेत्रोंकी राहसे भीतर घुसकर अपने दर्शकोंके मनको भी शुभ्र कर रही थी। उसके शरीरकी अतिशय धवल कान्ति चारों ओर फैल रही थी। जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह स्फटिकमणिके घरमें बैठी है, दूधरूपी जलमें डूबी हुई है, स्वच्छ और बहुत ही बारीक कपड़ेसे उसने अपना तन ढाँक रक्खा है, एक बहुत बड़े दर्पणमें उसका प्रतिबिम्ब दीख रहा है अथवा वह शरत्कालके श्वेत बादलोंमें छिपी हुई है। इन कारणोंसे उसके अङ्ग स्पष्ट तौरपर साफ-साफ नहीं दीख रहे थे। उसे देखकर ऐसा अनुमान होता था कि जैसे देहनिर्माणके समय पृथिवी-जल आदि पंचमहाभूतोंको अलग करके विधाताने केवल धवलगुणोंसे ही उसकी रचना की है। उजड्ड रुद्रगणोंके हाथों केश खींचे जानेसे भयभीत होकर दक्षप्रजापतिके यज्ञकी यज्ञक्रिया ही मानो वहाँ शिवजीकी सेवा करनेके लिए भाग आयी हो। जैसे कामदेवकी भस्मीभूत देहको पुनः प्राप्त करनेकी कामनासे उसकी पत्नी रति शिवजीको प्रसन्न करनेके लिए आराधना कर रही हो। चिरकालतक एक साथ रहनेसे भली-भाँति परिचित शंकरजीके मस्तकपर रहनेवाले चन्द्रमाकी कलासे भेंट करनेके लिए जैसे क्षीरसमुद्रकी अधिदेवी ही वहाँ आ उपस्थित हुई हो। जैसे राहु द्वारा ग्रसे जानेके भयसे भयभीत होकर साक्षात् चन्द्रमाकी मूर्ति ही शिवजीकी शरणमें चली आयी हो। नित्य गजचर्म ओढ़नेको उत्कण्ठित शंकरजीके सोचते ही मानो ऐरावतके शरीरकी छवि वहाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रुद्रोद्धूलनभूतिम्, आविर्भूतां ज्योत्स्नामिव हरकण्ठान्धकारविघट्टनोद्यमप्रभाम्, गौरीमनःशुद्धिमिव कृतदेहपरिग्रहाम्, कार्तिकेयकौमारव्रतक्रियामिव मूर्तिमतीम, गिरिशवृषभदेहद्युतिमिव पृथगवस्थिताम्, आयतनतरुकुसुमसमृद्धिमिव शंकराभ्यर्चनाय स्वयमुद्यताम्, पितामहतपःसिद्धिमिव महीतलमवतीर्णाम्, आदियुगप्रजापतिकीर्तिमिव सप्तलोकभ्रमणखेदविश्रान्ताम, त्रयीमिव कलियुगध्वस्तधर्मशोकगृहीतवनवासाम, आगामिकृतयुगबीजकलामिव प्रमदारूपेणावस्थिताम्, देहवतीमिव मुनिजनध्यानसंपदम्, अमरगजवीथिमिवाभ्रगङ्गाभ्याग्रापातताम्, कैलासश्रियमिव दशमुखोन्मूलनक्षोभनिपतितम्, श्वेतद्वीपलक्ष्मीमिवान्यद्वीपावलोकनकुतूहलागताम्, काशकुसुमविकासकान्तिमिव शरत्स-

---

आ उपस्थित हुई हो। शंकरभगवान्के दक्षिण मुखकी हास्यदीप्ति ही मानो बाहर आकर उनके समक्ष बैठी हो। जैसे शंकरजीके शरीरमें लगनेवाली भस्म ही मूर्तिमती होकर उनके सामने आयी हुई हो। जैसे शिवजीके कण्ठमें विद्यमान विषकी नीलिमारूपी अन्धकारको नष्ट करनेके लिए चन्द्रमाकी चाँदनी आ पहुँची हो। जैसे भगवती पार्वतीकी मनःशुद्धि शरीरिणी होकर उनके समक्ष बैठी हुई हो। जैसे स्वामिकार्तिकेयकी कौमार्य अवस्थाकी तपस्या वहाँ विद्यमान हो। जैसे शंकरजीके वृषभ नन्दीके शरीरकी कान्ति ही अलग होकर विराज रही हो। उस मंदिरके वृक्षोंकी कुसुमसमृद्धि ही मानो शंकरजीका पूजन करनेके लिए आयी हुई हो। जैसे पितामह ब्रह्माकी तपःसिद्धि ब्रह्मलोकसे पृथिवीपर उतर आयी हो। जैसे आदियुगके प्रजापतिकी कीर्ति सात लोकोंमें भ्रमण करती-करती थककर वहाँ सुस्तानेके लिए बैठी हुई हो। जैसे कलियुगमें धर्म नष्ट हो जानेके शोकसे शोकाकुल साक्षात् त्रयी (ऋक् यजुः साम इन तीनों वेदोंका समूह) वनवास करनेका निश्चय करके वहाँ चली आयी हो। जैसे आगामी सत्ययुगकी बीजकला स्त्रीके रूपमें वहाँ उपस्थित हो। जैसे मुनिजनोंकी ध्यानसम्पदा मूर्तिमती होकर वहाँ आ गयी हो। जैसे देवताओंके श्वेत हाथियोंकी कतार गंगाजीके बहावमें बह आयी हो। जैसे रावणके हाथों उन्मूलित होनेके कारण क्षुब्ध होकर कैलासकी श्री उपस्थित हो। जैसे द्वीपान्तरोंको देखनेकी अभिलाषासे श्वेतद्वीपकी लक्ष्मी वहाँ आयी हुई हो। जैसे कासके फूलोंकी दीप्ति शरत्-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मयमुदीक्षमाणाम्, शेषशरीरच्छायामिव रसातलमपहाय निर्गताम्, मुशलायुधदेहप्रभामिव मधुमदविघूर्णनायासविगलिताम्, शुक्लपक्षपरंपरामिव पुञ्जीकृताम्, सर्वहंसैरिव धवलतया कृतसंविभागाम, धर्महृदयादिव विनिर्गताम ,शङ्खादिवोत्कीर्णाम्, मुक्ताफलादिवाकृष्टम्, मृणालैरिव विरचितावयवाम्, दन्तदलैरिव घटिताम्, इन्दुकरकूर्चकैरिवाक्षालिताम्, वर्णसुधाच्छटाभिरिवाच्छुरिताम्, अमृतफेनपिण्डैरिव पाण्डुरीकृताम्, पारदरसधाराभिरिव धौताम्, रजतद्रवेणेव निर्मृष्टाम्, चन्द्रमण्डलादिवोत्कीर्णाम्, कुटजकुन्दसिन्दुवारकुसुमच्छविभिरिव ल्लासिताम्, इयत्तामिव धवलिम्नः, स्कन्धावलम्बिनीभिरुदयतटगतादर्कबिम्बादुद्धृत्य बालरश्मिप्रभाभिरिव निर्मिताभिरुन्मिषत्तडित्तरलतेजस्ताम्राभिरचिरस्नानावस्थितविरलवारिकणतया प्रणामलग्न-

---

कालके आगमनकी प्रतीक्षा करती हुई वहाँ बैठी हो। जैसे शेषभगवान्के शरीरकी छाया रसातल त्यागकर वहाँ चली आयी हो। जैसे बलरामके शरीरकी दीप्ति मदिराका मद चढ़नेके कारण गलकर गिर पड़ी हो। जैसे शुक्लपक्षकी राशि वहाँ एकत्र हो गयी हो। उस कन्याकी उज्ज्वलता देखकर जैसे हंसोंने भी अपनी श्वेतताका कुछ अंश उसे दे दिया हो। जैसे धर्मके हृदयसे उसका जन्म हुआ हो। जैसे शंखसे उत्कीर्ण कर दी गयी हो। जैसे मोतियोंसे उसकी रचना की गयी हो। जैसे उसके अंग मृणालसे बने हुए थे। जैसे हाथीके दाँतसे वह रची गयी थी। जैसे विधाताने उसे बनाकर चन्द्रमाकी किरणोंकी कूँचीसे साफ किया था। जैसे बन जानेके बाद उसके शरीरपर चूनाकारी कर दी गया थी। जैसे अमृतके फेनसे वह साफ की गयी थी। जैसे पारेके पानीसे धोयी गयी थी। जैसे उसपर चाँदीका पानी फेर गया था। जैसे वह चन्द्रमण्डलको टाँकियोंसे काटकर गढ़ी गयी हो। जैसे वह कुटज (कौरैया), कुन्द तथा सिन्दुवारके फूलोंकी शोभासे बनी हुई हो। जैसे वह उज्ज्वलताकी चरम सीमा हो। उस कन्याके मस्तकपर लाल रंगकी जटा विद्यमान थी। जो उदयगिरिपर उदित सूर्यनारायणकी लाल किरणोंकी दीप्ति अथवा चमकनेवाली बिजलीके चंचल तेज जैसी लाल थी। तनिक ही देर पहले स्नान करनेके कारण उसकी जटामें यत्र-तत्र पानीकी बूँदें लटकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पशुपतिचरणभस्मचूर्णाभिरिव जटाभिरुद्धासितशिरोभागाम्, जटापाश-ग्रथितमुत्तमाङ्गेन मणिमयं नामाङ्कमीश्वरचरणद्वयमुद्वहन्तीम्, रविरथ-तुरङ्गखुरक्षुण्णनक्षत्रक्षोदविशदेन भस्मना कृतललाटपट्टिकाम्, शिखर-शिलाश्लिष्टशशाङ्ककलामिव शैलराजमेखलाम्, अतुलभक्तिप्रसाधितया लक्ष्यीकृतलिङ्गयाऽपरयेव पुण्डरीकमालया दृष्ट्या संभावयन्ती भूत-नाथम्, अनवरतगीतपरिस्फुरिताधरपुटवशादतिशुचिभिः शुद्धहृदयम-यूखैरिव गीतगुणैरिव स्वरैरिव स्तुतिवर्णैरिव मूर्तिमद्भिर्मुखान्निष्पतद्भि-र्दशनांशुभिः पुनरपि स्नपयन्ती गौरीनाथम्, अतिविमलैश्च वेदार्थैरिव साक्षात्पितामहमुखादाकृष्टैर्गायत्रीवर्णैरिव ग्रथनस्फीततामुपगतैर्नारायण-नाभिपुण्डरीकबीजैरिवोद्धृतैः सप्तर्षिभिरिव करस्पर्शपूतमात्मानमिच्छ-द्भिस्तारकारूपेणागतैरामलकीफलस्थूलैर्मुक्ताफलैरुपरचितेनाक्षवलयेना—

हुई थीं। अतएव प्रणाम करते समय उसमें भस्म लग गयी थी। माथेके जटापाशमें उसने शिवनामाङ्कित शंकरजीके दोनों चरणोंका मणिमय चिह्न गूँथ रक्खा था। सूर्यके रथमें जुने घोड़ोंके खुरसे खुदे नक्षत्रोंके चूर्णसरीखे उज्ज्वल भस्मसे उसका ललाट सुशोभित था। अतएव वह शिखरकी चट्टानमें जटित चन्द्रकलासमन्वित हिमवान्की मेखलाके समान दिखायी दे रही थी। अतुलित भक्तिसे सुशोभित होती हुई वह शिवलिङ्गको लक्ष्य करके दूसरी पुण्डरीकमाला सरीखी अपनी दृष्टिसे भगवान् भूतनाथकी आराधना कर रही थी। अनवरत गान करनेसे हिलते हुए अधरपुटके कारण मुखसे निःसृत अतिशय निर्मल दन्तकिरणों द्वारा जैसे वह शंकरजीको पुनः स्नान करा रही थी। वे दन्तकिरणें उसके पुनीत हृदयकी रश्मियोंकी तरह, गायनके मूर्तिमान् माधुर्यकी भाँति, मूर्तिमती स्वरलहरी जैसी और मूर्तरूपमें विद्यमान स्तुतिके अक्षरोंके समान दीख रही थी। उसने अपने गलेमें आँवले जितने बड़े बड़े मोतियोके दानोंकी माला पहन रक्खी थी। जो माला प्रजापति ब्रह्माके मुखसे निकले हुए अतिशय विमल साक्षात् वेदार्थके सदृश, गुंथे हुए गायत्रीके अक्षरोंके सदृश, भगवान् विष्णुके नाभिकमलसे निकले हुए बीज सदृश और उसके हाथका स्पर्श पाकर पवित्र होनेकी अभिलाषासे नक्षत्रोंका रूप धारण करके आये हुए सप्तर्षियोंके सदृश मनकोंसे युक्त थी। वह तपस्विनी कन्या परिवेष—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धिष्ठितकण्ठभागाम्, परिवेषपरिगतचन्द्रमण्डलामिव पौर्णमासीनिशाम्, अधोमुखहरशिरःकपालमण्डलाकारेण मोक्षद्वारनियुक्तकलशकान्तिना स्तनयुगलेनैकहंसमिथुनसनाथामिव श्वेतगङ्गाम्, गौरीसिंहसटामयेनेव चामररुचिराकृतिना स्तनयुगलमध्यनिबद्धग्रन्थिना कल्पतरुलतावल्कलेन कृतोत्तरीयकृत्याम्, अयुग्मलोचनसकाशात्प्रसादलब्धेन चूडामणिचन्द्रमयूखजालेनेव मण्डलीकृतेन ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकायाम्, आप्रपदीनेन च स्वभावसितेनापि ब्रह्मासनबन्धोत्तानचरणतलप्रभापरिष्वङ्गाल्लोहितायमानेन दुकूलपटेन प्रावृतनितम्बाम्, यौवनेनापि स्वकालोपसर्पिणा निर्विकारेण विनीतेन शिष्येणेवोपास्यमानाम्, लावण्येनापि कृतपुण्येनेव स्वच्छात्मना परिगृहीताम्, रूपेणापि रुचिरलोचनेन विगतचापलेनायतनमृगेणेव सेविताम्, उत्सङ्गगतां च स्वसुतामिव

युक्त चन्द्रमण्डलसे अलंकृत पूर्णिमाकी रात्रिसरीखी सुन्दर लग रही थी। नीचे मुख करके बैठे शिवजीके कपालसदृश मंडलाकार तथा मोक्षके द्वारपर रक्खे हुए दो कलशोंकी भाँति देदीप्यमान स्तनयुगलोंसे वह हंसोंके एक जोड़ेसे अलंकृत श्वेतगङ्गा सरीखी दीख रही थी। जैसे भगवती पार्वतीके सिंहकी सटाका ही बना हुआ चमरसदृश सुन्दर आकारसम्पन्न एवं कल्पवृक्षका बना हुआ वल्कल उसके स्तनोंपर बँधा हुआ था। वही उसके उत्तरीय वस्त्रका भी काम कर रहा था। जैसे त्रिनेत्र शंकरजीकी कृपासे प्राप्त तथा मस्तकपर विद्यमान चूडामणिके चन्द्रमाकी किरणोंसे निर्मित यज्ञोपवीतसे उसकी काया पवित्र हो रही थी। पाँवतक लटकनेवाली, स्वभावतः श्वेत होते हुए भी ब्रह्मासनसे बैठी रहनेके कारण ऊर्ध्वमुख करके रक्खे हुए चरणतलकी प्रभाके सम्पर्कसे लाल दिखलायी देते हुए वस्त्रसे उसने अपना नितम्ब ढाँक रक्खा था। समयानुसार आया हुआ यौवनकाल भी निर्विकार एवं विनीत शिष्यकी भाँति उस तपस्विनी कन्याकी सेवा कर रहा था। उस कन्याका लावण्य भी किसी पुण्यात्मा और स्वच्छ हृदयवाले प्राणीकी भाँति उसकी सम्हाल कर रहा था। सुन्दर नयनोंवाला उसका रूप भी चंचलता त्यागकर मंदिरमें पले हुए मृगकी तरह उसकी सेवकाई कर रहा था। वह अपनी पुत्रीके समान प्रिय तथा हस्तिदन्तभूषित वीणा गोदमें रखकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सूक्ष्मदन्तखण्डिकांगुलीयकापूरितांगुलिना त्रिपुण्ड्रकावशिष्टभस्मपाण्डुरेण प्रकोष्ठबद्धशङ्खखण्डकेन नखमयूखदन्तुरतया गृहीतदन्तकोणेनेव दन्तमयीं दक्षिणकरेण वीणामास्फालयन्तीम्, प्रत्यक्षामिव गन्धर्वविद्यां मणिमण्डपिकास्तम्भलग्नाभिरात्मानुरूपाभिः सहचरीभिरिव सवीणाभिर्विलासवतीभिः प्रतिमाभिरुपेताम्, स्नपनार्द्रलिङ्गसंक्रान्तप्रतिबिम्बतयातिप्रबलभक्त्याराधितस्य हृदयमिव प्रविष्टां हरस्य हारलतयेव प्राप्तकण्ठयोगया ग्रहपंक्त्येव ध्रुवप्रतिबद्धया क्रुद्धयेव रागरक्तमुखवर्णया मत्तयेव घूर्णितमन्द्रतारयोन्मत्तयेवानेककृततालया मीमांसयेवा-

---

दाहिने हाथसे बजा रही थी। उसने दाहिने हाथकी उँगलियोंमें हाथी दाँतकी सूक्ष्म अंगूठियाँ पहन रक्खी थीं। त्रिपुण्ड्र धारण करनेके बाद उसने अवशिष्ट भस्मको उसी हाथमें लगा लिया था, जिससे वह उज्ज्वल हो गया था। उसके भुजबन्धपर शंखनिर्मित आभूषण विद्यमान था। जो नखकिरणोंके पड़नेपर हाथीदाँतके बने मिजराबसे युक्त जैसा लग रहा था। अतएव वह मूतरूपमें विद्यमान गान्धर्वविद्याके समान दीख रही थी। उस मण्डपके स्तम्भोंमें दीखते हुए उसके प्रतिबिम्बोंको देखकर ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो उसके अनुरूप बहुतेरी सहचारियाँ वीणा ले-लेकर बैठी हुई थीं। स्नान करानेके कारण गीले शिवलिंगपर भी उसका प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। जिसे देखकर ऐसा लगता था कि मानो अत्यधिक भक्तिके कारण वह शंकरजीके हृदयमें समा गयी हो। वीणावादनके साथ-साथ वह शंकरजीकी स्तुति भी करती चलती थी। उसका वह गायन मुक्तामय हारकी तरह उसके कण्ठमें संलग्न था। जैसे ग्रहपंक्ति ध्रुवनक्षत्रके साथ रहती है, उसी प्रकार वह स्तुतिगान भी गायनके अंगस्वरूप ध्रुव (ध्रुपद) के लक्षणोंसे युक्त था। जैसे किसी कुपिता सुन्दरीका मुख लाल रहता है, उसी प्रकार उस गायनमें भी विविध राग-रागिनियोंके स्वर उच्चरित हो रहे थे। जैसे मदमत्त सुन्दरीके नेत्रोंकी पुतलियाँ नाचती रहती हैं, उसी प्रकार उस गानेके स्वर भी कभी मन्द और कभी उच्च होकर उस मण्डपको गुञ्जायमान कर रहे थे। जैसे कोई मतवाली स्त्री अत्यधिक तालियाँ बजाती है, वैसे ही उस गायनमें भी बहुतेरे ताल दिये जा सकते थे। जैसे मीमांसाशास्त्रमें शाब्दी और आर्थी नामकी दो भावनायें रहती हैं, उसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नेकभावनानुविद्धया गीत्या देवं विरूपाक्षमुपवर्णयन्तीम्, अतिमधुरगोतावकृष्टैर्ध्यानमिवाभ्यस्यद्भिर्निश्चलकर्णपुटैर्मृगवराहवानरवारणशरभसिंह-प्रभृतिभिर्वनचरैराबद्धमण्डलैराकर्ण्यमानगीतानुविद्धविपञ्चीनिर्घोषाम्, अमरापगामिव नभसाऽवतीर्णाम्, दीक्षितवाचमिवाप्राकृताम्, त्रिपुरारिशरशलाकामिव तपोमयीम्, पीतामृतामिव विगततृष्णाम्, ईशानशिरःशशिकलामिवानुपजातरागाम्, अमथितोदधिजलसंपदमिवान्तःप्रसन्नाम्, असमस्तपदवृत्तिमिवाद्वंद्वाम्, बौद्धबुद्धिमिव निरालम्बनाम्, वैदेहीमिव प्राप्तज्योतिःप्रवेशाम्, द्यूतकलाकुशलामिव वशीकृताक्षहृद-

---

प्रकार उस सङ्गीतमें भी मूर्च्छना-श्रुति आदि अनेक संगीताङ्ग विद्यमान थे। उस परम मधुर संगीतसे आकृष्ट होकर अपने कान निश्चल करके जैसे ध्यानका अभ्यास करते हुए अगणित मृग, वराह, वानर, हाथी, सिंह और शरभ आदि वनजन्तु मंडल बाँधकर वह गायन और उसके साथ बजती हुई वीणाकी रसमयी ध्वनि सुन रहे थे। वह कन्या आकाशसे भूतलपर उतरी हुई देवगंगा मन्दाकिनी जैसी दीखती थी। जैसे यज्ञमें दीक्षित लोग प्राकृत (ग्राम्य) भाषाका प्रयोग नहीं करते, उसी प्रकार वह प्राकृत न होकर दिव्य बालिका थी। जैसे शंकरजीकी बाणशलाका अग्नि सदृश तेजस्विनी थी, उसी प्रकार वह कन्या भी असाधारण कान्तिमती थी। जैसे अमृत पिये हुए लोगोंकी तृष्णा (पिपासा) शान्त हो जाती है, उसी प्रकार उसकी भी विषयवासना-सम्बन्धी तृष्णा नष्ट हो चुकी थी। जैसे शिवजीके माथेपर विराजमान चन्द्रमाकी कलामें राग अर्थात् लाली नहीं रहती, उसी प्रकार उस बालिकामें भी किसी प्रकारका राग अर्थात् आसक्ति नहीं रह गयी थी। जैसे बिना मथे हुए समुद्रका जल तथा रत्नादि सम्पदा शान्त रहती है, उसी प्रकार वह अपने आपमें प्रसन्न थी। जैसे समासविरहित शब्द अलग-अलग रहते हैं, उसी प्रकार वह भी सुख-दुःखादि सब द्वन्द्वोंसे अलग थी। जैसे बौद्धशास्त्र शून्यवाद सिद्धान्तके अनुसार निरवलम्ब रहता है, उसी प्रकार वह कन्या समस्त संसारका सहारा छोड़ चुकी थी। जैसे सीताजीने अपने सतीत्वका प्रमाण देनेके लिए अग्निमें प्रवेश किया था, उसी प्रकार वह बालिका भी साधना द्वारा ज्योति अर्थात् परब्रह्म परमात्मामें प्रविष्ट हो चुकी थी। जैसे द्यूतक्रीडामें कुशल कोई स्त्री

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

याम्, महीमिव जलभृतदेहाम्, हिमसमयदिनमुखलक्ष्मीमिव परिगृहीतभास्करातपाम्, आर्यामिवोपात्तयतिगणोचितमात्राम्, आलिखितामिवाचलावस्थानाम्, अंशुमयीमिव तनुच्छायानुलिप्तभूतलाम, निर्ममाम्, निरहंकाराम्, निर्मत्सराम्, अमानुषाकृतिम्, दिव्यत्वादपरिज्ञायमानवयःपरिमाणामप्यष्टादशवर्षदेशीयामिवोपलक्ष्यमाणाम्, प्रतिपन्नपाशुपतव्रतां कन्यकां ददर्श।

ततोऽवतीर्य तरुशाखायां बद्ध्वा तुरङ्गममुपसृत्य भगवते भक्त्या प्रणम्य त्रिलोचनाय तामेव दिव्ययोषितमनिमिषपक्ष्मणा निश्चलनिबद्धलक्ष्येण चक्षुषा पुनर्निरूपयामास। उदपादि चास्य रूपसंपदा कान्त्या

पासोंका सारा रहस्य हृदयंगम कर लेती है, उसी प्रकार उसने सभी इन्द्रियोंको अपने वशमें कर लिया था। जैसे पृथिवी चहुँधा जलसे घिरी रहती है, उसी प्रकार वह बालिका केवल जल पीकर अपने शरीरको जीवित रक्खे हुए थी। जैसे जाड़ेके दिनोंका प्रभात हिमपातके कारण सूर्यदर्शनसे विहीन होता है, उसी प्रकार पंचाग्नि तापती हुई उस बालिकाने भी सूर्यके तापको सर्वथा पी लिया था। जैसे आर्या छन्दकी यति (विश्राम) और गण मात्राके अनुसार रक्खे जाते हैं, उसी प्रकार उसने यतियों (संन्यासियों) के योग्य वस्त्र धारण कर रक्खे थे। जैसे चित्रलिखित मूर्ति सदा एक ही स्थानपर स्थिर रहती है, उसी प्रकार वह बालिका भी उस पर्वतपर सदा स्थायीरूपसे निवास करती थी। जैसे कोई तेजस्विनी मूर्ति अपने तेजसे भूतलको प्रकाशित करती है, उसी प्रकार वह बालिका भी अपने असाधारण तेजसे उस स्थानको आलोकित कर रही थी। उसकी सारी ममता मर चुकी थी। अहंकार लुप्त हो गया था। उसने मत्सर (औरोंकी उन्नतिसे डाह) का गला घोंट दिया था। उसकी आकृति अलौकिक थी। उसके दिव्य शरीरको देखकर उसकी उम्रका सही-सही अनुमान लगाना असम्भव था, किन्तु देखनेमें वह लगभग अठारह वर्षकी लग रही थी।

अब युवराज चन्द्रापीड घोड़ेसे उतरा। इन्द्रायुधको उसने एक वृक्षकी डालमें बाँध दिया। तदनन्तर मन्दिरके भीतर गया और बड़ी भक्तिके साथ भगवान् शंकरको प्रणाम करके उस दिव्य सुन्दरीको अपलक नयनोंसे टकटकी बाँधकर देखने लगा। उसकी लोकोत्तर रूपसम्पदा, असाधारण कान्ति और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रशान्त्या चाविर्भूतविस्मयस्य मनसि—'अहो ! जगति जन्तूनामसमर्थितोपनतान्यापतन्ति वृत्तान्तान्तराणि। तथाहि । मया मृगयायां यदृच्छया निरर्थकमनुबध्नता तुरङ्गमुखमिथुनमयमतिमनोहरो मानवानामगम्यो दिव्यजनसंचरणोचितः प्रदेशो वीक्षितः । अत्र च सलिलमन्वेषमाणेन हृदयहारि सिद्धजनोपस्पृष्टजलं सरो दृष्टम् । तत्तीरलेखाविश्रान्तेन चामानुषं गीतमाकर्णितम् । तच्चानुसरता मानुषदुर्लभदर्शना दिव्यकन्यकेयमालोकिता । न हि मे संशीतिरस्या दिव्यतां प्रति। आकृतिरेवानुमापयत्यमानुषताम्। कुतश्च मर्त्यलोके संभूतिरेवंविधानां गान्धर्वध्वनिविशेषाणाम् । तद्यदि मे सहसा दर्शनपथान्नापयाति, नारोहति वा कैलासशिखरम्, नोत्पतति वा गगनतलम्, ततः 'का त्वम्, किमभिधाना वा किमर्थं वा प्रथमे वयसि प्रतिपन्ना व्रतम्' इति सर्वमेवैतदेनामुपसृत्य पृच्छामि। अतिमहानयमत्रकाश आश्चर्या-

---

आनन्ददायिनी शान्ति देखकर विस्मित होता हुआ वह मन ही मन सोचने लगा—'अहो ! संसारमें मनुष्यको कभी-कभी कैसे अकल्पित संयोग उपलब्ध हो जाते हैं। मैं एकाएक मृगयाके लिए चला और व्यर्थ उस किन्नरके जोड़ेका पीछा करता हुआ इस ऐसे मनोहर प्रदेशमें आ पहुँचा, जहाँ मनुष्योंकी गति असंभव है और जहाँ केवल दिव्य पुरुष ही संचरण कर सकते हैं । फिर पानीकी खोज करते-करते यहाँ एक ऐसा मनोहारी सरोवर देखा कि केवल सिद्ध पुरुष ही जिसके जलका उपयोग करते हैं। सरोवरके किनारे विश्राम करते समय सहसा दिव्य संगीत सुनायी पड़ा । उसका अनुसंधान करनेके प्रसंगमें यह एक दिव्य बालिका दिखायी पड़ी, जिसका दर्शन किसी मनुष्यके लिए दुर्लभ था। इसकी दिव्यतामें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है । इसकी आकृति देखकर ही यह अनुमान होने लगता है कि यह कोई मानवी कन्या नहीं है। मृत्युलोकमें इस प्रकार गान्धर्व गीतकी ध्वनिका श्रवण कैसे सम्भव हो सकता है ? सो यदि सहसा यह मेरी आँखोंसे ओझल न हो जायगी, कैलासके शिखरपर न चढ़ जायगी अथवा आकाशमें न उड़ जायगी तो मैं इसके पास जाकर सब कुछ पूछ लूँगा कि 'तुम कौन हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? इस युवावस्थामें ही तुमने संन्यासका व्रत क्यों ले लिया है ?' क्योंकि इस कन्यामें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णाम्' इत्यवधार्य तस्यामेव स्फटिकमण्डपिकायामन्यतमं स्तम्भमाश्रित्य समुपविष्टो गीतसमाप्त्यवसरं प्रतीक्षमाणस्तस्थौ।

अथ गीतावसाने मूकीभूतवीणा प्रशान्तमधुकरमधुररुतेव कुमुदिनी सा कन्यका समुत्थाय प्रदक्षिणीकृत्य कृतहरप्रणामा परिवृत्य स्वभावधवलया तपःप्रभावप्रगल्भया दृष्ट्या समाश्वासयन्तीव, पुण्यैरिव स्पृशन्ती, तीर्थजलैरिव प्रक्षालयन्ती, तपोभिरिव पावयन्ती, शुद्धिमिव कुर्वाणा, वरप्रदानमिवोपपादयन्ती, पवित्रतामिव नयन्ती, चन्द्रापीडमाबभाषे—'स्वागतमतिथये। कथमिमां भूमिमनुप्राप्तो महाभागः। तदुत्तिष्ठ। आगम्यताम्। अनुभूयतामतिथिसत्कारः' इति। एवमुक्तस्य तया संभाषणमात्रेणैवानुगृहीतमात्मानं मन्यमान उत्थाय भक्त्या कृतप्रणामः 'भगवति, यथाज्ञापयसि' इत्यभिधाय दर्शितविनयः शिष्य इव तां व्रजन्तीमनुवव्राज। व्रजंश्च समर्थयामास—'हन्त, तावन्नेयं मां दृष्ट्वा तिरोभूता। कृतं हि मे कुतूहलेन प्रश्नाशया हृदि पदम्। यथा

आश्चर्यके बहुतेरे कारण विद्यमान है।' ऐसा निश्चय करके वह उसी मरकतमय मण्डपके एक खम्भेके पास बैठ गया और संगीतसमाप्तिके अवसरकी प्रतीक्षा करने लगा।

कुछ देर बाद संगीत समाप्त हुआ तो उसकी वीणा मौन हो गयी। तब जिसपर भौंरोंका गुञ्जार बन्द हो गया हो, ऐसी कुमुदिनीके समान बालिका उठी और उसने शंकरजीको प्रदक्षिणा करके प्रणाम किया। तदनन्तर स्वभावतः श्वेत और तपस्याके प्रभावसे प्रगल्भ (ढीठ) नयनोंसे जैसे आश्वासन देती, पुनीत तीर्थजलसे नहलाती, अपने तपोबलसे पवित्र करती, उसकी कायाको शुद्ध करती, वरदान देती और पवित्रताकी वर्षा करती हुई उस सुन्दरीने चन्द्रापीडसे कहा—'अतिथे! मैं आपका स्वागत करती हूँ। आप यहाँ कैसे आये? अच्छा, अब उठिए और चलकर मेरा आतिथ्यसत्कार स्वीकार करिए।' उसके ऐसा कहनेपर सम्भाषणमात्रसे अपनेको अनुगृहीत मानता हुआ चन्द्रापीड उठा और बड़ी श्रद्धाके साथ प्रणाम करके बोला—'भगवति! जैसी आपकी आज्ञा।' यों कहकर विनीत भाव प्रदर्शित करता हुआ वह एक शिष्यकी तरह उसके पीछे-पीछे चलने लगा। चलते-चलते उसने सोचा—'बड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चेयमस्यास्तपस्विजनदुर्लभदिव्यरूपाया अपि दाक्षिण्यातिशया प्रतिपत्तिरभिजाता विभाव्यते, तथा संभावयामि नियतमियमखिलमात्मोदन्तमभ्यर्थ्यमाना मया कथयिष्यति' इत्येवं च कृतमतिः पदशतमात्रमिव गत्वा निरन्तरैर्दिवापि रजनीसमयमिव दर्शयद्भिस्तमालतरुभिरन्धकारितपुरोभागाम्, उत्फुल्लकुसुमेषु लतानिकुञ्जेषु गुञ्जतां मन्दं मन्दं मदमत्तमधुलिहां विरुतिभिर्मुखरीकृतपर्यन्ताम्, अतिदूरपातिनीनां च धवलशिलानलप्रतिघातोत्पतनफेनिलानामपां प्रस्रवणैरुत्कोटिग्रावविटङ्कविपाट्यमानैरुच्चरद्ध्वनिभिरवशीर्यमाणतुषारशिशिरशीकरासारैर्बध्यमाननीहाराम्, हिमहारहरहासधवलैरुभयतः क्षरद्भिर्निर्झरैर्द्वारावलम्बितचलच्चामरकलापामिवोपलक्ष्यमाणाम्, अन्तःस्थापितमणिकमण्डलुमण्डलाम्, एकान्तावलम्बितयोगपट्टिकाम्, विशाखिकानि-

---

प्रसन्नताका विषय है कि यह मुझे देखकर अलक्षित नहीं हो गयी। सो अब इसने मेरे हृदयमें ऐसा अवकाश दे दिया है कि जिससे मैं अपना कुतूहल शान्त करनेके लिए इससे सब बातें पूछ सकूँगा। ऐसे तपस्विजनदुर्लभ रूपसे युक्त होते हुए भी इसने जो अतिशय सम्मानके साथ मेरा आतिथ्य किया है, इससे मुझे ऐसा भरोसा हो रहा है कि यदि मैं प्रार्थना करूँगा तो यह अपना सारा वृत्तान्त कह सुनायेगी।' इस प्रकार सोचता हुआ वह उसके साथ केवल सौ पग चला था कि उसने एक कन्दरा देखी। उस गुफाके आगे लगे हुए असंख्य तमालवृक्षोंने दिनमें भी जैसे रात्रिके समयका अन्धकार कर रक्खा था। जिनमें बहुतेरे फूल खिले हुए थे, ऐसे निकुञ्जोंमें गुञ्जारते हुए भ्रमरोंसे उसके आस-पासका प्रदेश मुखरित हो रहा था। श्वेत पत्थरकी चट्टानोंसे टकराकर उछलनेसे फेनिल एवं अति दूर गिरते हुए झरनोंके आघातसे उभड़ी कोरवाले पत्थरोंके अग्रभागसे जर्जरित तथा बड़ी जोरसे हाहाकार करके खण्ड-खण्ड होती हुई बर्फके शीतल कणोंकी सतत वर्षासे जैसे वहाँ दिनमें भी ओस पड़ रही थी। उस कन्दराके दोनों ओर हिमके हार एवं शंकर भगवान्के हास्यकी तरह श्वेत झरने झर रहे थे। उन्हें देखकर ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो उसके दरवाजेपर दो चमर टँगे हुए हैं। गुफाके भीतर बहुतेरे मणिमय कमण्डल और एक ओर योगसाधनके समय पहननेके वस्त्र धरे थे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बद्धनालिकेरीफलवल्कलमयधौतोपानद्युगोपेताम्, अवशीर्णाङ्गभस्मधूसरवल्कलशयनीयसनाथैकदेशाम्, इन्दुमण्डलेनेव टङ्कोत्कीर्णेन शङ्खमयेन भिक्षाकपालेनाधिष्ठिताम्, संनिहितभस्मालाबुकां गुहामद्राक्षीत। तस्याश्च द्वारि शिलातले समुपविष्टो वल्कलशयनशिरोभागविन्यस्तवीणां ततः पर्णपुटेन निर्झरादागृहीतमर्घजलमादाय तां कन्यकां समुपस्थिताम् 'अलमतियन्त्रणया। कृतमतिप्रसादेन। भगवति, प्रसीद। विमुच्यतामयमत्यादरः। त्वदीयमालोकनमपि सर्वपापप्रशमनमघमर्षणमिव पवित्रीकरणायालम्। आस्यताम्' इत्यब्रवीत। अनुबध्यमानश्च तया तां सर्वामतिथिसपर्यामतिदूरावनतेन शिरसा सप्रश्रयं प्रतिजग्राह। कृतातिथ्यया च तया द्वितीयशिलातलोपविष्टया क्षणमिव तूष्णीं स्थित्वा क्रमेण परिपृष्टो दिग्विजयादारभ्य किन्नरमिथुनानुसरणप्रसंगेनागमनमात्मनः सर्वमाचचक्षे। विदितसकलवृत्तान्ता चोत्थाय सा कन्यका

एक ओर शिकहरपर नारियलकी जटाके बने साफ-सुथरे जूतोंका जोड़ा रक्खा था। एक तरफ उसके अङ्गसे छूटी भस्मसे धुँधला वल्कलमय बिछौना बिछा हुआ था। टाँकीसे काटकर बनाये गये चन्द्रमण्डलके सदृश शुभ्र शंखका भिक्षापात्र उसके एक कोनेमें रक्खा हुआ था। उसके पास ही भस्मसे भरी एक तुम्बी रक्खी थी। वहाँ पहुँचकर चन्द्रापीड द्वारपर पड़ी एक शिलापर बैठ गया। कन्या गुफाके भीतर चली गयी और वीणाको बिछौनेके सिरहाने रखकर पत्तेके दोनेमें उन्हीं झरनोंमेंसे अर्घ्यके लिए जल भर लायी। उसे जल लिये सम्मुख उपस्थित देखकर युवराजने कहा—'बस-बस भगवति! अधिक कष्ट न करिए। आपने मेरे ऊपर कृपा करके ही बहुत बड़ा सत्कार कर दिया। अब और अधिक आदर न करिए। आपका दर्शन ही अघमर्षण मंत्रके समान समस्त पापोंका नाश करके पवित्र करनेके लिए पर्याप्त है। अब आप बैठिए।' किन्तु उस कन्याके विशेष अनुरोध करनेपर चन्द्रापीडने माथा झुकाकर बहुत ही विनीत भावसे उसका आतिथ्य स्वीकार किया। आतिथ्य करनेके बाद वह एक अन्य शिलातलपर बैठ गयी और तनिक देर चुप रहनेके बाद युवराजसे वहाँ आनेका कारण पूछा। उसके प्रश्नपर चन्द्रापीडने दिग्विजयसे लेकर किन्नरदम्पतीका पीछा करने और वहाँ पहुँचने तकका सारा हाल कह सुनाया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिक्षाकपालमादाय तेषामायतनतरूणां तलेषु विचचार। अचिरेण च तस्याः स्वयंपतितैः फलैरपूर्यत भिक्षाभाजनम्। आगत्य च तेषां फलानामुपयोगाय नियुक्तवती चन्द्रापीडम्। आसीच्च तस्य चेतसि—'नास्ति खल्वसाध्यं नाम तपसाम्। किमतः परमाश्चर्यं यत्र व्यपगतचेतना अपि सचेतना इवास्यै भगवत्यै समतिसृजन्तः फलान्यात्मानुग्रहमुपपादयन्ति वनस्पतयः। चित्रमिदमालोकितमस्माभिरदृष्टपूर्वम्' इत्यधिकतरोपजातविस्मयश्चोत्थाय तमेव प्रदेशमिन्द्रायुधमानीय व्यपनीतपर्याणं नातिदूरे संयम्य निर्झरजलनिर्वर्तितस्नानविधिस्तान्यमृतस्वादून्युपभुज्य फलानि पीत्वा च तुषारशिशिरं प्रस्रवणजलमुपस्पृश्य चैकान्ते तावदवतस्थे यावत्तयापि कन्यकया कृतो जलफलमूलमयेष्वाहारेषु प्रणयः।

इति परिसमापिताहारां निर्वर्तितसंध्योचिताचारां शिलातले विश्रब्धमुपविष्टां निभृतमुपसृत्य नातिदूरे समुपविश्य मुहूर्तमिव स्थित्वा

सो सुनकर वह कन्या उठी और भिक्षापात्र लेकर मन्दिरके हातेमें लगे वृक्षोंके नीचे घूमने लगी। थोड़ी ही देरमें स्वतः पककर गिरे फलोंसे उसका भिक्षापात्र भर गया। वहाँसे लौटकर उसने चन्द्रापीडसे उस फलोंको खानेके लिए कहा। तब युवराजने मन ही मन सोचा—'तपस्यासे कोई भी कार्य असाध्य नहीं रह जाता। इससे बढ़कर आश्चर्यकी बात और क्या होगी कि इस वनके ये अचेतन वृक्ष भी सचेतनकी भाँति इस भगवतीको फल अर्पण करके अपना अनुग्रह प्रदर्शित कर रहे हैं। मैंने यहाँ यह अद्भुत और विचित्र बात देखी।' इस तरह अत्यधिक विस्मित होता हुआ वह उठा और हातेसे बाहर जाकर इन्द्रायुधको भी वहाँ ले आया। अब उसकी पीठपरसे जीन उतार दी और एक ओर बाँध दिया। तत्पश्चात् उसने झरनेके जलमें स्नान किया और अमृत सरीखे स्वादिष्ट फल खाकर बर्फ जैसा ठंढा झरनेका जल पिया और हाथ धोकर एक तरफ बैठ गया। तब तक उस कन्याने भी जल-फल-मूलका आहार कर लिया।

इस प्रकार भोजन तथा सन्ध्याकालीन सब क्रियायें सम्पन्न करनेके बाद जब वह कन्या एक शिलाखण्डपर चुपचाप बैठी हुई थी। तब धीरेसे चन्द्रा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रापीडः सविनयमवादीत्—'भगवति, त्वत्प्रसादप्राप्तिप्रोत्साहितेन कुतूहलेनाकुलीक्रियमाणो मानुषतासुलभो लघिमा बलादनिच्छन्तमपि मां प्रश्नकर्मणि नियोजयति। उपजनयति हि प्रभुप्रसादलवोऽपि प्रागल्भ्यमधीरप्रकृतेः। स्वल्पाप्येकावस्थाने कालकला परिचयमुत्पादयति। अणुरप्युपचारपरिग्रहः प्रणयमारोपयति। तद्यदि नातिखेदकरमिव ततः कथनेनात्मानमनुग्राह्यमिच्छामि। अतिमहत्खलु भवद्दर्शनात्प्रभृति मे कौतुकमस्मिन्विषये। कतरन्मरुतामृषीणां गन्धर्वाणां गुह्यकानामप्सरसां वा कुलमनुगृहीतं भगवत्या जन्मना। किमर्थं वास्मिन्कुसुमसुकुमारे नवे वयसि व्रतग्रहणम्। क्वेदं वयः, क्वेयमाकृतिः, क्व चायं लावण्यातिशयः, क्वेयमिन्द्रियाणामुपशान्तिः। तदद्भुतमिव मे प्रतिभाति। किं वानेकसिद्धसाध्यसंबद्धानि सुरलोकसुलभान्यपहाय दिव्याश्रमपदान्येकाकिनी वनमिदममानुषमधिवससि। कश्चायं प्रकारो यत्तै-

---

पीड भी जाकर उसके पास बैठ गया। तनिक देर चुप रहकर चन्द्रापीडने बड़ी नम्रतापूर्वक कहा—'भगवति! आपकी इस कृपासे मेरी उत्सुकता बढ़ गयी है। अतएव मानवजातिसुलभ लघुता इच्छा न रहते हुए भी मुझे बरबस आपसे कुछ पूछनेके लिए प्रेरित कर रही है। क्योंकि स्वामीसे प्राप्त तनिक-सी भी कृपा मुझ जैसे चञ्चल प्रकृतिके प्राणीको ढीठ बना देती है। किसी स्थानपर कुछ देर भी एक साथ रहनेसे परिचय हो जाता है और उस समय प्राप्त थोड़ा-सा भी सत्कार प्रेम उत्पन्न कर देता है। अतएव यदि आपको विशेष कष्ट न हो तो अपना वृत्तान्त बताकर मुझे अनुगृहीत करिए। मैंने जबसे आपको देखा है, तभीसे यह जाननेके लिए मेरी उत्सुकता बढ़ रही है। भगवति! आपने जन्म लेकर देवताओं, ऋषियों, गन्धर्वों, यक्षों तथा अप्सराओंमेंसे किसके वंशको अनुगृहीत किया है? ऐसे फूल सदृश सुकुमार नवयौवनमें आपने यह संन्यास व्रत क्यों ले लिया है? कहाँ यह अवस्था, कहाँ यह सुन्दर आकार, कहाँ यह लावण्य और कहाँ इन्द्रियोंके निग्रह जैसा दुष्कर कार्य? मुझे तो यह सब बड़ा अद्भुत लग रहा है। असंख्य सिद्ध-साध्योंसे भरे तथा देवलोकमें प्राप्य दिव्य आश्रमोंको त्यागकर आप इस निर्जन वनमें अकेली क्यों रह रही हैं? और फिर वह कौन-सी युक्ति है कि जिससे इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रेव पञ्चभिर्महाभूतैरारब्धमीदृशं धवलतां धत्ते शरीरम् । नेदमस्माभिरन्यत्र दृष्टश्रुतपूर्वं वा। अपनयतु नः कौतुकम्। आवेदयतु भवती सर्वमिदम्' इत्येवमभिहिता सा किमप्यन्तर्ध्यायन्ती तूष्णीं मुहूर्तमिव स्थित्वा निःश्वस्य स्थूलस्थूलैरन्तर्गतां हृदयशुद्धिमिवादाय निर्गच्छद्भिः, इन्द्रियप्रसादमिव वर्षद्भिः, तपोरसनिःस्यन्दमिव स्रवद्भिः, लोचनविषयं धवलिमानमिव द्रवीकृत्य पातयद्भिः, अच्छाच्छैः, अमलकपोलस्थलस्खलितैः, अवशीर्णहारमुक्ताफलतरलपातैः, अनुबद्धबिन्दुभिः, वल्कलावृतकुचशिखरजर्जरितसीकरैरश्रुभिरामीलितलोचना निःशब्दं रोदितुमारेभे।

तां च प्ररुदितां दृष्ट्वा चन्द्रापीडस्तत्क्षणमचिन्तयत्—'अहो दुर्निवारता व्यसनोपनिपातानाम्, यदीदृशीमप्याकृतिमनभिभवनीयामात्मीयां कुर्वन्ति। सर्वथा न न कंचन स्पृशन्ति शरीरधर्माणमुपतापाः।

प्रकार संकट सहते हुए भी आपका पञ्चभूतात्मक शरीर गोरा बना हुआ है ? अन्यत्र कहीं ऐसा होते न मैंने देखा है और न सुना ही है। अतएव आप मेरी पूछी सब बातें बताकर मेरा कुतूहल दूर करिए।' उसके इस प्रश्नको सुनकर वह तपस्विनी कन्या मनमें कुछ सोचती हुई तनिक देर चुप बैठी रही। तदनन्तर बड़ी लम्बी साँस लेकर वह बड़े-बड़े अश्रुबिन्दुओंको टपकाती हुई रोने लगी। वे आँसू जैसे उस बालिकाकी अन्तःशुद्धिको साथ लेकर भीतरसे बाहर निकल रहे थे। वे मानो इन्द्रियोंकी प्रसन्नता बरसा रहे थे। वे मानो उसके तपस्यारूपी सरस झरनेको प्रवाहित करते हुए नेत्रोंकी धवलिमाको गलाकर गिरा रहे थे। वे आँसू बहुत ही स्वच्छ थे और उसके निर्मल कपोलोंपर लुढ़क रहे थे। वे टूटे मोतियोंकी तरह शीघ्रतापूर्वक लड़ीकी भाँति निकलते हुए वल्कल वसनसे ढँके स्तनशिखरपर गिरकर जर्जरित हो जानेके कारण कणोंके रूपमें बिखर रहे थे।

उसे रोती देखकर चन्द्रापीडके मनमें तत्काल यह विचार उठा—'अहो ! विपत्तियोंका प्रहार भी बड़ा दुर्निवारणीय होता है। वे विपत्तियाँ इस प्रकार दुःखके अयोग्य आकृतियोंको भी अपने वशीभूत कर लेती है। संसारमें कोई भी ऐसा जीव नहीं है कि जिसे ये सन्तापदायक दुःख न सताते हों। सुख-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बलवती हि द्वन्द्वानां प्रवृत्तिः। इदमपरमधिकतरं जनितमतिमहन्मनसि मे कौतुकमस्या बाष्पसलिलपातेन। न ह्यल्पीयसा शोककारणेन वैक्लव्यीक्रियन्त एवंविधा मूर्तयः। न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता चलति वसुधा, इति संवर्धितकुतूहलश्च शोकस्मरणहेतुतामुपगतमपराधिनमिवात्मानमवगच्छन्नुत्थाय प्रस्रवणादञ्जलिना मुखप्रक्षालनोदकमुपनिन्ये। सा तु तदनुरोधादविच्छिन्नबाष्पजलधारासंतानापि किंचित्कषायितोदरे प्रक्षाल्य लोचने वल्कलोपान्तेन वदनमपमृज्य दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य शनैः शनैः प्रत्यवादीत्—

'राजपुत्र, किमनेनातिनिर्घृणहृदयाया मम मन्दभाग्यायाः पापाया जन्मनः प्रभृति वैराग्यवृत्तान्तेनाश्रवणीयेन श्रुतेन। तथापि यदि महत्कुतूहलं तत्कथयामि। श्रूयताम्। एतत्प्रायेण कल्याणाभिनिवेशिनः श्रुतिविषयमापतितमेव यथा विबुधसद्मन्यप्सरसो नाम कन्यकाः सन्तीति। तासां चतुर्दश कुलानि—एकं भगवतः कमलयोनेर्मनसः समुत्पन्नम्,

---

दुःखादि द्वन्द्वोंका व्यवहार बड़ा प्रबल होता है। इसका रोदन देखकर मेरे मनका कौतूहल और भी बढ़ रहा है। किसी साधारण शोकके कारण ऐसी-ऐसी मूर्तियाँ विह्वल नहीं हुआ करतीं। क्योंकि किसी मामूली वज्राघातसे पृथिवी नहीं डोलती। इस प्रकार जिज्ञासाकी उत्सुकता बढ़ जानेपर वह उठा और अपने आपको ही उसके शोकस्मरणका कारण एवं अपराधी समझता हुआ उसका मुख धुलानेके निमित्त पासके ही झरनेसे अपनी अञ्जलीमें जल भर ले आया। उस बालिकाके नेत्रोंसे अभी भी आँसुओंकी झड़ी लगी हुई थी। तथापि युवराजके अनुरोधपर उसने भीतरसे तनिक लाल अपने नेत्रोंको धोया और वल्कलसे मुँह पोंछ तथा बड़ी लम्बी साँस लेकर धीरेसे बोली—

'राजपुत्र! मुझ जैसी क्रूरहृदया, अभागिनी और पापिनी नारीके जन्मसे लेकर वैराग्यपर्यन्तकी न सुनने योग्य गाथा सुनकर क्या करिएगा? फिर भी यदि आपका कुतूहल बहुत बढ़ा हुआ हो तो मैं कहती हूँ। सुनिए—शुभेच्छुक आपने प्रायः यह तो सुना ही होगा कि देवताओंके धाम स्वर्गलोकमें अप्सरा नामकी कन्यायें रहा करती हैं। उनके सब मिलाकर चौदह कुल हैं। उनमेंसे एक कुल कमलयोनि ब्रह्माजीके मनसे उत्पन्न हुआ है। दूसरा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वेदेभ्यः संभूतम्, अन्यदग्नेरुद्भूतम्, अन्यत्पवनात्प्रसूतम्, अन्यदमृतान्मथ्यमानादुत्थितम्, अन्यज्जलाज्जातम्, अन्यदर्ककिरणेभ्यो निर्गतम्, अन्यत्सोमरश्मिभ्यो निपतितम्, अन्यद्भूमेरुद्भूतम्, अन्यत्सौदामिनीभ्यः प्रवृत्तम्, अन्यन्मृत्युना निर्मितम्, अपरं मकरकेतुना समुत्पादितम्, अन्यत्तु दक्षस्य प्रजापतेरतिप्रभूतानां कन्यकानां मध्ये द्वे सुते मुनिरारिष्टा च बभूवतुस्ताभ्यां गन्धर्वैः सह कुलद्वयं जातम्। एवमेतान्येकत्र चतुर्दश कुलानि। गन्धर्वाणां तु दक्षात्मजाद्वितयसंभवं तदेव कुलद्वयं जातम्। यत्र मुनेस्तनयः सेनादीनां पञ्चदशानां भ्रातॄणामधिको गुणैः षोडशश्चित्ररथो नाम समुत्पन्नः। स किल त्रिभुवनप्रख्यातपराक्रमो भगवता समस्तसुरमौलिमालालालितचरणनलिनेनाखण्डलेन सुहृच्छब्देनोपबृंहितप्रभावः सर्वेषां गन्धर्वाणामाधिपत्यमसिलतामरीचिनिचयमेचकितेन बाहुना समुपार्जितं शैशव एवाप्तवान्। इतश्च नातिदूरे तस्यास्माद्भारतवर्षादुत्तरेणानन्तरे किम्पुरुषनाम्नि वर्षे वर्षपर्वतो हेमकूटो नाम निवासः। तत्र च तद्भुजयुगपरिपालितान्यनेकानि गन्ध-

---

वेदोंसे, तीसरा अग्निसे, चौथा वायुसे, पाँचवाँ अमृतमन्थनसे, छठाँ जलसे, सातवाँ सूर्यकी किरणोंसे, आठवाँ चन्द्रमाकी किरणोंसे, नवाँ पृथिवीसे, दसवाँ बिजलीसे, ग्यारहवाँ मृत्युसे, बारहवाँ कामदेवसे, तेरहवाँ और चौदहवाँ ये दो कुल दक्ष प्रजापतिकी बहुतेरी कन्याओंमेंसे मुनि तथा अरिष्टा नामकी दो पुत्रियोंसे गन्धर्वोंके साथ जायमान हुए थे। इस प्रकार ये सब मिलाकर चौदह कुल होते हैं। दक्षकी पुत्रियोंसे जायमान दोनों कुल गन्धर्व कहलाये। इनमेसे दक्षपुत्री मुनिके चित्रसेन आदि पन्द्रह पुत्र होनेके बाद सोलहवाँ अपने सभी भाइयोंसे अधिक गुणी चित्ररथ उत्पन्न हुआ। जिनका पराक्रम त्रिभुवनमें विख्यात है और सब देवताओंकी मुकुटमाला जिनके चरणोंको दुलराती है, उन देवराज इन्द्रने चित्ररथको अपना मित्र बना लिया। जिससे चित्ररथका प्रभाव बहुत बढ़ गया और बाल्यकालमें ही तलवारकी किरणें पड़नेसे काली भुजाओंवाले उस वीरने गन्धर्वोंकी अध्यक्षता प्राप्त कर ली। यहाँसे थोड़ी दूर भारतवर्षसे उत्तर किंपुरुष देशमें हेमकूट नामका एक वर्षपर्वत है। उसीपर वह चित्ररथ रहता है। उसकी दोनों भुजाओंसे सुरक्षित होते हुए कई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वंशतसहस्राणि प्रतिवसन्ति। तेनैव चेदं चैत्ररथं नामातिमनोहरं काननं निर्मितम्, इदं चाच्छोदाभिधानमतिमहत्सरः खानितम्, अयं च भवानीपतिरुपरचितो भगवान्। अरिष्टायास्तु पुत्रस्तस्मिन्द्वितीये गन्धर्वकुले गन्धर्वराजेन चित्ररथेनैवाभिषिक्तो बाल एव राज्यपदमासादितवान्। अपरिमितगन्धर्वबलपरिवारस्य तस्यापि स एव गिरिरधिवासः। यत्तु तत्सोमपीयूषसंभूतानामप्सरसां कुलं तस्मात्किरणजलानुसारगलितेन सकलेनेव रजनिकरकलाकलापलावण्येन निर्मिता त्रिभुवननयनाभिरामा भगवती द्वितीयेव गौरी गौरीति नाम्ना हिमकिरणकिरणावदातवर्णा कन्यका प्रसूता। तां च द्वितीयकुलाधिपतिर्हंसो मन्दाकिनीमिव क्षीरसागरः प्रणयिनीमकरोत्। सा तु भगवता मकरकेतनेनेव रतिः, शरत्समयेनेव कमलिनी, हंसेन संयोजिता। सदृशसमागमोपजनितामतिमहतीं मुदमुपगतवती निखिलान्तःपुरस्वामिनी च तस्याभवत्। तयोश्च तादृशयोर्महात्मनोरहमीदृशी विगतलक्षणा शोकाय

लाख गन्धर्व वहाँ रहते हैं। उसीने यह चैत्ररथ नामका अत्यन्त सुन्दर उद्यान बनवाकर अच्छोदनामक बड़ा भारी सरोवर खोदवाया है और मन्दिर बनवाकर इन शंकरजीकी स्थापना की है। द्वितीय गन्धर्वकुलमें अरिष्टाके छ पुत्रोंमें सबसे श्रेष्ठ हंसनामसे विख्यात गन्धर्व हुआ। गन्धर्वराज चित्ररथने शैशवावस्थामें ही अभिषेक करके उसे राजा बना दिया। अगणित गन्धर्व-परिवारोंके साथ वह भी उसी हेमकूट पर्वतपर रहता है। जो चन्द्रमाकी किरणोंसे अप्सराओंका वंश जायमान हुआ था, उसमें मानो किरणोंके साथ-साथ गले हुए चन्द्रमाकी समस्त कलाओंसे परिपूर्ण लावण्य द्वारा निर्मित तथा तीनों लोकोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाली द्वितीय गौरीके समान रूपगुणसम्पन्न एवं चन्द्रमाकी किरणों सरीखी शुभ्रवर्ण गौरी नामकी कन्या उत्पन्न हुई। जैसे क्षीरसमुद्रने आकाशगंगा मन्दाकिनीका पाणिग्रहण किया था, उसी प्रकार द्वितीय गन्धर्वकुलके अधिपति हंसने गौरीको अपनी प्रियतमा भार्या बनाया। जैसे भगवान् कामदेवके साथ रति तथा शरत्कालके साथ कमलिनीका परिणय हुआ था, उसी प्रकार गौरीका विवाह गन्धर्वराज हंसके साथ सम्पन्न हुआ। इस समान समागमसे उसको अपार हर्ष हुआ और गौरी उसके सारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केवलमनेकदुःखसहस्रभाजनमेकैवात्मजा समुत्पन्ना। तातस्त्वनपत्यतया सुतजन्मातिरिक्तेन महोत्सवेन मम जन्माभिनन्दितवान्। अप्राप्ते च दशमेऽहनि कृतयथोचितसमाचारो महाश्वेतेति यथार्थमेव नाम कृतवान्। साहं पितृभवने बालतया कलमधुरप्रलापिनी वीणेव गन्धर्वाणामङ्कादङ्कं संचरन्त्यविदितस्नेहशोकायासं शैशवमतिनीतवती। क्रमेण च कृतं मे वपुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरेण, मधुकर इव मदेन नवयौवनेन पदम्।

अथ विजृम्भमाणनवनलिनवनेषु, अकठोरचूतकलिकाकलापकृतकामुकोत्कलिकेषु, कोमलमलयमारुतावतारतरङ्गितानङ्गध्वजांशुकेषु, मदकलितकामिनीगण्डूषसीधुसेकपुलकितवकुलेषु, मधुकरकुलकलङ्कितालोकत-

---

रनिवासकी स्वामिनी बन गयी। इस प्रकारके उन दोनों महात्माओंको जैसे केवल हजारों तरहके दुःख तथा शोक देनेके लिए मुझ जैसी लक्षणहीना पुत्री जनमी। निःसन्तान होनेके कारण पिताजीने मेरे जन्मका पुत्रजन्मसे भी अधिक अभिनन्दन किया। तदनन्तर दसवें दिन कुलाचारके अनुसार सब कृत्य पूर्ण करनेके बाद उन्होने मेरा 'महाश्वेता' नाम रक्खा। जो मेरे रूपके सर्वथा अनुरूप था। उन दिनों पिताजीके भवनमें वीणाके समान मधुर बोल बोलती एवं एक गन्धर्वसे दूसरे और दूसरेसे तीसरेकी गोदमें खेलती हुई स्नेह, शोक तथा क्लेशसे अनभिज्ञ रहकर मैंने अपनी शैशवावस्था वितायी। आगे चलकर धीरे-धीरे जैसे वसन्तमें चैत्रमास, चैत्रमें नवपल्लव, नवपल्लवमें पुष्प, पुष्पमें भौंरे और भौंरोमें मदका संचार होता है, उसी प्रकार मेरे तनपर नवयौवनने अधिकार कर लिया।

एक दिन जब कि समस्त जीवसमुदायके हृदयको आनन्द देनेवाले चैत्रमासमें नवीन कमलोंके वन, कुमुद, कुवलय और कह्लारके फूल खिले हुए थे, तब मैं अपनी माँके साथइसी अच्छोद सरोवरमें स्नान करने आयी। उस समय आमकी मंजरियोंका समूह कामी पुरुषोंको उत्तेजित कर रहा था। कोमल और शीतल मलयवायु चलकर कामदेवकी पताकाको उड़ा रही थी। मदसे मतवाली सुन्दरियोंके मुखसे मदिराका गंडूष (कुल्ला) पाकर बकुल (मौलसिरी)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कालेयककुसुमकुड्मलेषु, अशोकतरुताडनरणितरमणीयमणिनूपुरझंकार-सहस्रमुखरेषु, विकसन्मुकुलपरिमलपुञ्जितालिजालमञ्जुसिञ्जितसुभगसहकारेषु, अविरलकुसुमधूलिवालुकापुलिनधवलितधरातलेषु, मधुमदविडम्बितमधुकरकदम्बकसंवाह्यमानलतादोलेषु उत्फुल्लपल्लवलवलीलीयमानमत्तकोकिलोल्लासितमधुरशीकरोद्दामदुर्दिनेषु, प्रोषितजनजायाजीवोपहारहृष्टमन्मथास्फालितचापरवभयस्फुटितपथिकहृदयरुधिरार्द्रीकृतमार्गेषु, अविरतपतत्कुसुमशरपतत्रिपत्रसूत्कारबधिरीकृतदिङ्मुखेषु, दिवापि प्रवृत्तमदनरागान्धाभिसारिकासार्थसंकुलेषु, उद्वेलरतिरससागरपूरप्लावितेषु, सकलजीवलोकहृदयानन्ददायकेषु मधुमासदिवसेष्वेकदाऽहमम्बया सह मधुमासविस्तारितशोभं प्रोत्फुल्लनवनलिनकुमुदकुवलयकह्लारामदमच्छोदं सरः स्नातुमभ्यपतम।

के वृक्ष पुलकित हो रहे थे। काले-काले भौंरोंरूपी कलंकसे चमेलीकी नयी-नयीं कलियाँ काली पड़ गयी थीं। अशोक वृक्षोंपर पादप्रहार करते समय सुन्दरियोंके हजारों मणिजटित नूपुरोंके झनकारसे दसों दिशायें मुखरित हो रही थीं। फूले हुए आमके बौरोंकी मादक सुगन्धिसे एकत्रित मधुकरोंके मनोहारी गुंजारसे भरे-पूरे वृक्ष सुन्दर लग रहे थे। उस समय समस्त भूतल बालुकामयी नदीके तटकी नाईं चारों ओर फैले कुसुमरेणुसे उज्ज्वल दीख रहा था। मधुमद पी-पीकर मतवाली मधुकरियाँ लताओंपर बैठ-बैठकर झूला झूल रही थीं। मस्त कोकिल नवीन पत्तियोंसे ढँकी लवली-लताओंके कुंजमें घुसकर बैठा और मधुकी महीन फूहियाँ उड़ाता हुआ जैसे बरसातका मौसम उपस्थित कर रहा था। जिनके पति परदेश गये हुए थे, ऐसी नायिकाओंके प्राण ले-लेकर प्रसन्न कामदेवके चढ़े हुए धनुषकी टंकोरके शब्दसे ही भयभीत प्रवासियोंके हृदय विदीर्ण हो गये थे और उनके रुधिरसे सारा मार्ग तर हो गया था। कामदेवके बाणोंके पंखोंकी अनवरत सुनायी देती हुई सनसनाहटकी ध्वनिसे जैसे दसों दिशायें बहरी हो गयी थीं। दिनके समय भी कामोद्दीपन होनेके कारण अभिसारिकायें अन्धी होकर अपने प्रेमीकी तलाशमें निकल पड़ी थीं और रतिरस (श्रृंगार) रूपी महासागरकी उफानमें सारे संसारके जीव डूब गये थे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अत्र च स्नानार्थमागतया भगवत्या पार्वत्या तटशिलातलेषु विलिखितानि सभृङ्गिरिटीनि पांसुनिमग्नक्रशपदमण्डलानुमितमुनिजनप्रणामप्रदक्षिणानि त्र्यम्बकप्रतिबिम्बकानि वन्दमाना भ्रमरभुग्नगर्भकेसरजर्जरकुसुमोपहाररम्योऽयं लतामण्डपः, परभृतनखकोटिपाटितकुड्मलनालविवरविगलितमधुनिकरधारः सुपुष्पितोऽयं सहकारतरुः, उन्मदमयूरकुलकलकलभीतभुजङ्गमुक्ततला शिशिरेयं चन्दनवीथिका, विकचकुसुमपुञ्जपातसूचितवनदेवताप्रेङ्खोलनाशोभनेयं लतादोला, बहलकुसुमरजःपटलमग्नकलहंसपदलेखमतिरमणीयमिदं तीरतरुतलमिति स्निग्धमनोहरतरोद्देशदर्शनलोभाक्षिप्तहृदया सह सखीजनेन व्यचरम्। एकस्मिंश्च प्रदेशे झटिति वनानिलेनोपनीतं निर्भरविकसितेऽपि काननेऽभिभूतान्य-

---

जब मैं यहाँ स्नानके लिए आयी तो सरोवरकी तटवर्तिनी शिलाओंपर भगवती पार्वतीके हाथों लिखित भृङ्गी तथा रिटी नामके गणों समेत शिवजीकी अनेक मूर्तियाँ दिखायी पड़ीं। उनके समीपकी बालुकाओंपर उभरे हुए चरणचिह्नोंको देखकर ऐसा अनुमान होता था कि वहाँपर बहुतेरे मुनियोंने उन चित्रोंको प्रणाम करके परिक्रमा की थी। अतएव मैंने भी उनकी वन्दना की और इस मनोहर प्रदेशको देखनेके लोभसे आकृष्ट होकर अपनी सहेलियोंके साथ विचरने लगी। घूमते समय मैं अपनी सखियोंको बताती चलती थी कि यह भौंरोंके बोझसे झुके गर्भकेसर एवं जर्जर कुसुमोंसे अतिशय सुन्दर दीखनेवाला लतामण्डप है। यह फूले हुए बौरोंसे लदा आम्रवृक्ष है। इसकी खिली हुई कलियोंकी डंडीमें कोयलोंने अपने नाखूनोंसे छेद कर दिया है और उसमेंसे मधुकी धारा बह रही है। मस्त मयूरोंके निरन्तर होते हुए केकानिनादसे त्रस्त सर्पों द्वारा त्यागी हुई यह चन्दनके वृक्षोंकी ठंढी झाड़ी है। यहाँपर बहुतेरे फूले हुए फूल गिरे पड़े हैं, इससे ऐसा मालूम पड़ता है कि यह वनदेवियोंको झूलनेके लिए लताओंका बना हुआ झूला है। यहाँ प्रचुरमात्रामें पुष्परज गिरनेके कारण कलहंसोंका चरणचिह्न लुप्त हो गया है। यह तटवर्ती वृक्षोंकी अतिशय रमणीक छाया है। घूमती-घूमती मैं जब उसके एक प्रदेशमें पहुँची तो सहसा वायु द्वारा उड़ाकर लायी हुई मानव प्राणियोंके लिए अलभ्य पुष्पसुगन्धि मैंने सूँघी। यद्यपि उस समय सारा बन फूला हुआ था, किन्तु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुसुमपरिमलम्, विसर्पन्तम्, अतिसुरभितयानुलिम्पन्तमिव तर्पयन्तमिव पूरयन्तमिव घ्राणेन्द्रियम्, अहमहमिकया मधुकरकुलैरनुबध्यमानम्, अनाघ्रातपूर्वम्, अमानुषलोकोचितं कुसुमगन्धमभ्यजिघ्रम्। कुतोऽयमित्युपारूढकुतूहला चालं मुकुलितलोचना तेन कुसुमगन्धेन मधुकरीवाकृष्यमाणा कौतुकतरलाभ्यधिकतरोपजातमणिनूपुरझङ्काराकृष्टसरःकलहंसानि कतिचित्पदानि गत्वा हरहुताशनेन्धनीकृतमदनशोकविधुरं वसन्तमिव तपस्यन्तम्, अखिलमण्डलप्राप्त्यर्थमीशानशिरःशशाङ्कमिव धृतव्रतम्, अयुग्मलोचनं वशीकर्तुकामं काममिव सनियमम्, अतितेजस्वितया प्रचलत्तडिल्लतापञ्जरमध्यगतमिव ग्रीष्मदिवसदिवसकरमण्डलोदरप्रविष्टमिव ज्वलनज्वालाकलापमध्यस्थितमिव विभाव्यमानम्, उन्मिषन्त्या बहुलबहुलया दीपिकालोकपिङ्गलया देहप्रभया कपि-

---

वह सुगन्धि सब पुष्पोंकी सुवासको नीचा दिखा रही थी। वह चारों ओर फैल रही थी। अत्यधिक सुगन्धके कारण जैसे वह नासिकाको लीप रही थी, परिपूरित करती थी और पूर्ण तृप्ति प्रदान कर रही थी। भौंरे उतावले होकर उसका अनुसरण कर रहे थे। उस सुगन्धिको पहले कोई भी नहीं सूँघ सका था। अब मेरे मनमें यह जिज्ञासा जागृत हुई कि यह सुगन्धि कहाँसे आयी? अतएव नेत्र मूँदकर मैं पुष्पकी सुगन्धिसे आकृष्ट भ्रमरकी नाईं कई पग आगे बढ़ गयी। जल्द-जल्दी पैर आगे पड़नेके कारण नूपुरोंकी झङ्कार बहुत अधिक तीव्र हो गयी थी, जिसे सुनकर सरोवरके कलहंस मेरी ओर दौड़ पड़े। उसी समय मैंने शंकरजीकी नेत्राग्निसे भस्मीभूत कामदेवके शोकसे व्याकुल होकर तपस्या करते हुए वसंतके सदृश, अपना मंडल पूर्ण करनेकी कामनासे व्रत लिये हुए शिवमस्तकनिवासी चन्द्रमाके सदृश और शंकरजीको अपने वशमें करनेके लिए नियमोंका पालन करते हुए कामदेवके समान एक अत्यधिक सुन्दर मुनिकुमारको देखा, जो वहाँ स्नान करनेके लिए आया हुआ था। उसकी प्रखर तेजस्विता देखकर ऐसा लगता था कि जैसे वह चमकती हुई बिजलीके पींजरेमें बन्द हो, ग्रीष्मकालीन सूर्यमण्डलमें प्रविष्ट हो अथवा धधकती हुई अग्निज्वालाके बीचमें विद्यमान हो। वह अपनी देहसे दीपकके पीत प्रकाशकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लीकृतकाननं कनकमयमिव तं प्रदेशं कुर्वाणम्, रोचनारसलुलितप्रतिसरसमानसुकुमारपिङ्गलजटम्, पुण्यपताकायमानया सरस्वतीसमागमोत्कण्ठाकृतचन्दनरेखयेव भस्मललाटिकया बालपुलिनरेखयेव गङ्गाप्रवाहमुद्भासमानम्, अनेकशापभ्रूकुटिभवनतोरणेन भ्रूलताद्वयेन विराजितम्, अत्यायततया लोचनमयीं मालामिव ग्रथितामुद्वहन्तम्, सर्वहरिणैरिव दत्तलोचनशोभासंविभागम्, आयतोत्तुङ्गघ्राणवंशम्, अप्राप्तहृदयप्रवेशेन नवयौवनरागेणेव सर्वात्मना पाटलीकृताधररुचकम्, अनुद्भिन्नश्मश्रुत्वादनासादितमधुकरावलीवलयपरिक्षेपविलासमिव बालकमलमाननं दधानम्, अनङ्गकार्मुकस्य गुणेनेव कुण्डलीकृतेन तपस्तटाककमलिनीमृणालेनेव यज्ञोपवीतेनालंकृतम्, एकेन सनालबकुलफलाकारं कमण्डलुमपरेण मकरकेतुविनाशशोकरुदिताया रतेरिव बाष्पजलबिन्दु-

---

नाईं अत्यधिक पीला प्रकाश फैलाकर जैसे समस्त वनको स्वर्णमय बनाये दे रहा था। गोरोचनके रसमें डुबाकर विवाहादि शुभ अवसरोंपर बाँधे जानेवाले मांगलिक सूत्रके सदृश उसकी जटा पीली तथा सुकुमार थी। सरस्वतीके समागमसे उत्कण्ठापूर्वक की गयी चन्दनरेखा सदृश, नूतन पुलिनरेखासे अङ्कित गङ्गाजीकी धारा सरीखी अथवा पुण्यपताका जैसी भस्मकी रेखा उस मुनिकुमारके ललाटमें शोभायमान हो रही थी। उसकी दोनों भौंहें अनेक शापकालकी भ्रुकुटियोंके भवनतोरण सदृश दीखती थीं। उसकी अतिशय विस्तृत और बड़ी-बड़ी आँखोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह आँखोंकी ही गुँथी माला पहने हुए था। जैसे वनके सभी हिरनोंने अपनी-अपनी आंखोंका सौंदर्य समानरूपसे बाँटकर उसे प्रदान किया था। उसकी नाक ऊँची तथा लम्बी थी। नौजवानीकी लाली उसके हृदयमें प्रवेश नहीं पा सकी थी। अतएव वह पूरी शक्तिसे उसके अधरपुटपर बैठ गयी थी। अभी दाढ़ी-मूछ नहीं निकली थी। अतएव उसका मुख भ्रमरपंक्तियोंके वलय-विलाससे विहीन बालकमल सदृश दीख रहा था। वह कामदेवके धनुषकी मंडलीकृत प्रत्यञ्चा तथा तपस्यारूपी तड़ागकी कमलिनीके मृणालतन्तुकी भाँति जनेऊ पहने हुए था। उसने अपने एक हाथमें डंठल समेत बकुलफल सरीखा कमंडल ले रक्खा था। दूसरे हाथमें उसने एक स्फटिकमाला ले रक्खी थी, जो मानो अपने पति कामदेवके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिरारचितां स्फटिकाक्षमालिकां करेण कलयन्तम्, अनेकविद्यापगासंगमावर्तनिभया नाभिमुद्रयोपशोभमानम्, अन्तर्ज्ञाननिराकृतस्य मोहान्धकारस्यापनयनपदवीमिवाञ्जनरजोलेखाश्यामलां रोमराजिमुदरेण तनीयसीं बिभ्राणम्, आत्मतेजसा विजित्य सवितारं परिगृहीतेन परिवेषमण्डलेनेव मौञ्जमेखलागुणेन परिक्षिप्तजघनभागम्, अभ्रगङ्गास्रोतोजलप्रक्षालितेन जरच्चकोरलोचनपुटपाटलकान्तिना मन्दारवल्कलेनोपपादिताम्बरप्रयोजनम्, अलंकारमिव ब्रह्मचर्यस्य, यौवनमिव धर्मस्य, विलासमिव सरस्वत्याः, स्वयंवरपतिमिव सर्वविद्यानाम्, संकेतस्थानमिव सर्वश्रुतीनाम्, निदाघकालमिव साषाढम्, हिमसमयकाननमिव स्फुटितप्रियंगुमञ्जरीगौरम्, मधुमासमिव कुसुमधवलतिलकभूतिविकुपितमुखम्, आत्मानुरूपेण सवयसा परेण देवतार्चनकुसुमान्युच्चिन्वता तापसकुमारेणानुगतम्, अतिमनोहरम्, स्नानार्थमागतं मुनिकुमार-

---

विनाशजनित शोकसे रोती हुई रतिके आँसुओंकी बूदोंसे गुँथी हुई थी। अनेक विद्यारूपिणी नदियोंके संगमके आवर्तकी भाँति उसकी नाभिमुद्रा थी। उसके पेटपर बहुत ही पतली रोमरेखा उभरी हुई थी। जिसको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे अन्तःकरणमें फैले हुए ज्ञानके प्रकाशने भीतरी अज्ञानको बाहर निकलनेका मार्ग बना दिया है। अपने तेजसे सूर्यको पराजित करके छीने हुए परिवेशमण्डलकी नाईं मूँजकी करधनी उसकी कमरमें विद्यमान थी। आकाशगङ्गाकी धाराके जलमें प्रक्षालित तथा बूढ़े चकोरकी आँखोंकी भाँति लाल मन्दारवृक्षकी छालसे ही वह वस्त्रका काम ले रहा था। वह मुनिकुमार जैसे ब्रह्मचर्यका अलङ्कार, यौवनका धर्म, सरस्वतीका विलास, सभी विद्याओंका स्वयं चुना हुआ पति तथा समस्त श्रुतियोंका संकेतस्थल था। जैसे ग्रीष्मऋतुमें आषाढ मास रहता है, उसी तरह उसके हाथमें आषाढ अर्थात् दण्ड विद्यमान रहता था। जैसे शीतकालमें वन स्फुटित प्रियंगुकी मञ्जरीसे गौरवर्ण दीखते हैं। उसी प्रकार वह मुनिकुमार भी मंजरीके समान गौर था। जैसे चैत्रमासका मुख तिलकवृक्षके सफेद फूलोंसे शोभित होता है, उसी तरह उसका मुख तिलकपुष्पके सदृश श्वेत भस्मके तिलकसे अलंकृत था। उसीके अनुरूप तथा समवयस्क एक अन्य मुनिकुमार पूजाके निमित्त फूल चुनता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कमपश्यम्।

तेन च कर्णावतंसीकृतां वसन्तदर्शनानन्दितायाः स्मितप्रभामिव वनश्रियः, मलयमारुतागमनार्थलाजाञ्जलिमिव मधुमासस्य यौवनलीलामिव कुसुमलक्ष्म्याः, सुरपतिश्रमस्वेदजलकणजालकावलीमिव रतेः, ध्वजचिह्नचामरपिच्छिकामिव मनोभवगजस्य, मधुकरकामुकाभिसारिकाम्, कृत्तिकातारास्तबकानुकारिणीम्, अमृतबिन्दुनिस्यन्दिनीम्, अदृष्टपूर्वां कुसुममञ्जरीमद्राक्षम्।

'अस्याः परिभूतान्यकुसुमामोदो नन्वयं परिमलः' इति मनसा निश्चित्य तं तपोधनयुवानमीक्षमाणाऽहमचिन्तयम्—'अहो रूपातिशयनिष्पादनोपकरणकोशस्याक्षीणता विधातुः, यत्त्रिभुवनाद्भुतरूपसंभारं भगवन्तं कुसुमायुधमुत्पाद्य तदाकारातिरिक्तरूपातिशयराशिरयमपरो मुनिमायामयो मकरकेतुरुत्पादितः। मन्ये च सकलजगत्त्रयनानन्दकरं

हुआ उसके पीछे-पीछे चल रहा था।

उस मुनिकुमारके कानमें खुँसी और जैसे अमृतकी बूँदें टपकाती हुई ऐसी कुसुममञ्जरी दीख रही थी, जैसी कि पहले मैंने कभी कहीं नहीं देखी थी। वह वसन्तको देखकर आनन्दसे मुसकाती वनश्री जैसी सुन्दर थी। वह मलयवायुका स्वागत करनेके लिए फैली वसन्तकी लाजाञ्जलिकी भाँति लगती थी। वह कुसुमशोभाके यौवनविलासकी तरह, रतिके संभोगश्रमजनित पसीनेकी बूँदोंसे गुँथे हारकी भाँति, कामदेवरूपी गजराजके ध्वजचिह्नसे अङ्कित चमर सदृश, मधुकररूपी कामुककी अभिसारिका नायिका सरीखी और कृत्तिका नक्षत्रके गुच्छेकी तरह दीख रही थी।

'इसी मञ्जरीका सुवास सब पुष्पोंकी सुगन्धिको परास्त कर रहा था।' मन ही मन ऐसा निश्चय करके उस युवक मुनिकुमारको देखती हुई मैं सोचने लगी—'अहो! विधाताके भण्डारमें रूपसौन्दर्यको भली भाँति निखारनेके लिए आवश्यक उपकरणोंकी कभी भी कमी नहीं होने आती। तभी तो उसने समस्त त्रिलोकीमें सर्वाधिक सुन्दर भगवान् कामदेवकी रचना करनेके बाद उससे भी अधिक रूपसम्पदा देकर इस मुनिरूपधारी एक अन्य कामदेवको रच डाला है। मुझे तो ऐसा ज्ञात होता है कि अखिल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शशिबिम्बं विरचयता लक्ष्मीलीलावासभवनानि कमलानि सृजता ब्रह्म-णैतदाननाकारकरणकौशल्याभ्यास एव कृतः, अन्यथा किमिव हि सदृ-शवस्तुविरचनायां कारणम्। अलीकं चेदं यथा किल सकलाः कलाः कलावतो बहुपक्षे क्षीयमाणस्य सुषुम्नानाम्ना रश्मिना रविरापिबतीति, ताः खल्वस्य गभस्तयः समस्ता वपुरिदमाविशन्तीति। कुतोऽन्यथा रूपापहारिणि क्लेशबहुले तपसि वर्तमानस्येदं लावण्यम्' इति चिन्तय-न्तीमेव मामविचारितगुणदोषविशेषो रूपैकपक्षपाती नवयौवनसुलभः कुसुमायुधः कुसुमसमयमद इव मधुकरीं परवशामकरोदुच्छ्वसितैः सह। विस्मृतनिमेषेण किंचिदामुकुलितपक्ष्मणा जिह्मिततरलतरतारसा-रोदरेण दक्षिणेन चक्षुषा सस्पृहमापिबन्तीव, किमपि याचमानेव, 'त्व-दायत्तास्मि' इति वदन्तीव, अभिमुखं हृदयमर्पयन्तीव, सर्वात्मनानुप्र-विशन्तीव, तन्मयतामिव गन्तुमीहमाना, 'मनोभवाभिभूतां त्रायस्व'

विश्वके नेत्रोंको आनन्ददायक चंद्रमाके बिम्ब तथा लक्ष्मीके विलासभवनस्वरूप कमलोंको बनाकर ब्रह्माने इस मुनिकिशोरका मुख बनानेके निमित्त पहले अभ्यास किया था। यदि ऐसा न होता तो एक ही आकार-प्रकारकी अन्यान्य वस्तुयें रचनेकी क्या आवश्यकता थी? लोगोंका यह कथन भी मिथ्या है कि कृष्णपक्षके क्षीयमाण चंद्रमाकी सभी कलाओंको सूर्य अपनी सुषुम्ना नामकी किरणों द्वारा पी लेता है। सच तो यह है कि चद्रमाकी वे सब किरणें इस मुनिकुमारके शरीरमें प्रविष्ट हो जाती हैं। यह बात न होती तो रूपको नष्ट करनेवाले और अत्यन्त कष्टदायिनी तपस्यामें लीन एक तपस्वीमें इतना प्रचुर लावण्य कैसे रहता? मैं यह सब सोच ही रही थी कि इतनेमें गुण-दोषके विचारसे हीन, एकमात्र रूपके पक्षपाती और नवयौवनसुलभ कामदेवने उसी तरह मुझे पराधीन कर दिया, जैसे वसन्तकालीन मद भ्रमरीको परवश कर दिया करता है। अब लम्बी-लम्बी साँसें लेती हुई मैं निर्निमेष, कुछ-कुछ मुँदी, जरा-सी टेढ़ी, अत्यन्त चपल तथा भीतरकी तरफ कुछ विचित्रता लिये हुए दहिनी आँखसे जैसे बड़ी चावसे उसे पीती, उससे कुछ माँगती, 'मैं सर्वथा तुम्हारे वशमें हूँ' यह कहती, उसके आगे अपना हृदय खोलकर रखती, सर्वात्मभावसे उसीमें समाती, उसीमें एकदम तल्लीन हो जानेकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इति शरणमिवोपयान्ती, 'देहि हृदयेऽवकाशम्' इत्यर्थितामिव दर्शयन्ती, 'हा हा, किमिदमसांप्रतमतिह्रेपणमकुलकुमारीजनोचितमिदं मया प्रस्तुतम्' इति जानानाप्यप्रभवन्ती करणानाम्, स्तम्भितेव, लिखितेव, उत्कीर्णेव, संयतेव, मूर्छितेव, केनापि विधृतेव, निस्पन्दसकलावयवा तत्कालाविर्भूतेनावष्टम्भेन, अकथितशिक्षितेनानाख्येयेन स्वसंवेद्येन केवलं न विभाव्यते किं तद्रूपसंपदा किं मनसा किं मनसिजेन किमभिनवयौवनेन किमनुरागेणेवोपदिश्यमानं किमन्येनैव वा केनापि प्रकारेण, अहं न जानामि कथंकथमिति तमतिचिरं व्यलोकयम्। उत्क्षिप्य नीयमानेव तत्समीपमिन्द्रियैः पुरस्तादाकृष्यमाणेव हृदयेन, पृष्ठतः प्रेर्यमाणेव पुष्पधन्वना कथमपि मुक्तप्रयत्नमात्मानमधारयम्। अनन्तरं च मेऽन्तर्मदनेनावकाशमिव दातुमाहितसंताना निरीयुः श्वासमरुतः। साभिलाषं

आकांक्षा करती, 'कामदेव मुझे सता रहा है, मेरी रक्षा करो' यों कहकर उसकी शरणमें जाती, 'अपने हृदयमें मुझे जगह दो' ऐसा कहकर अपनी याचकता दिखाती, 'हाय हाय, मैंने कुलीन कुमारियोंके लिए अत्यन्त लज्जाजनक और अनुचित यह काम कैसे कर डाला ?' यह जानती हुई भी इन्द्रियोंपर काबू न पानेसे मैं उसकी ओर बड़ी देरतक निहारती रही। उस समय मैं जैसे स्तब्ध हो गयी थी, लिखित चित्र सरीखी हो गयी थी, उत्कीर्ण सी हो गयी थी, बँध गयी थी, मूर्छित हो गयी थी अथवा जैसे किसीके द्वारा पकड़ ली गयी थी। इस प्रकार तत्काल उत्पन्न अवष्टम्भ (निश्चलता) से मेरे सब अङ्ग निश्चल हो गये और बिना कहे सिखाये गये, न कहने लायक तथा केवल मुझको ही मालूम होती हुई किसी भावनासे अथवा न जाने उसकी रूपसम्पदासे, मनसे, कामदेवसे, नवयौवनसे तथा अनुरागसे किसीने मुझे ऐसा करनेके लिए सिखाया था अथवा अन्य किसी प्रकारसे, यह मैं नहीं जानती। फिर भी किसी न किसी तरह मैं उसे देखती ही रही। उस समय इन्द्रियाँ जैसे मुझे उठाकर उसके पास ले जाने लगीं। हृदय मुझे जैसे आगेकी ओर खींचने लगा। कामदेव मुझे जैसे पीठकी ओरसे धक्का देकर उसीकी ओर ढकेलने लगा। तथापि किसी प्रकार बड़े कष्टसे मैं अपनेको काबूमें किये रही। तदनन्तर जैसे मेरे हृदयमें कामदेवको विशेष जगह देनेके लिए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृदयमाख्यातुकाममिव स्फुरितमुखमभूत्कुचयुगलम्। स्वेदलवलेखाक्षालितेवागलल्लज्जा। मकरध्वजनिशितशरनिपातत्रस्तेवाकम्पत गात्रयष्टिः। तद्रूपातिशयं द्रष्टुमिव कुतूहलादालिङ्गनलालसेभ्योऽङ्गेभ्यो निरगाद्रोमाञ्चजालकम्। अशेषतः स्वेदाम्भसा धौतश्चरणयुगलादिव हृदयमविशद्रागः। आसीच्च मम मनसि—'शान्तात्मनि दूरीकृतसुरतव्यतिकरेऽस्मिञ्जने मां निक्षिपता किमिदमनार्येणासदृशमारब्धं मनसिजेन। एवं च नामातिमूढं हृदयमङ्गनाजनस्य, यदनुरागविषययोग्यतामपि विचारयितुं नालम्। क्वेदमतिभास्वरं धाम तेजसां तपसां च, क्व च प्राकृतजनाभिनन्दितानि मन्मथपरिस्पन्दितानि। नियतमयं मामेवं मकरलाञ्छनेन विडम्ब्यमानामुपहसति मनसा। चित्रं चेदं यदहमेवमवगच्छन्त्यपि न शक्नोम्यात्मनो विकारमुपसंहर्तुम्। अन्या अपि कन्यकात्रपां विहाय स्वयमुपयाताः पतीन्, अन्या अप्यनेन दुर्विनीतेन मन्मथेनोन्मत्ततां

श्वासवायु धारावाहिक रूपमें भीतरसे बाहर निकलने लगी। जैसे मेरे अभिलाषा भरे हृदयसे कुछ कहनेके लिए दोनों कुचोंके मुँह फड़कने लगे। जैसे कामदेवके तीखे बाणोंके प्रहारसे डरकर मेरा सारा शरीर काँपने लगा। उसका वह अत्यन्त आकर्षक रूप देखने तथा आलिङ्गन करनेके लिए उतावले मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्गमें रोमांच हो आया। पसीनेके पानीसे भलीभाँति धुला हुआ अनुराग जैसे मेरे दोनों पाँवोंसे होकर हृदयमें प्रविष्ट हो गया। फिर मनमें यह विचार उठा कि जिसने स्त्रीसम्भोग त्याग दिया है, ऐसे एक शान्तात्मा युवकपर मुझे आसक्त करके दुष्ट कामदेवने कितना अनुचित काम किया है। इसमें सन्देह नहीं कि नारीजातिका हृदय बड़ा मूर्ख होता है। क्योंकि वह यह भी नहीं सोच पाता कि किसपर प्रेम करना चाहिए और किसपर नहीं। कहाँ यह तेज और तपस्याका अखंड भंडार और कहाँ नीच प्रकृतिवालों द्वारा प्रशंसित कामदेवकी ओछी चेष्टायें। मुझे कामदेवके द्वारा इस प्रकार विडम्बित होते देखकर यह अवश्य मन ही मन हँस रहा होगा। यह भी बड़ी विचित्र बात है कि सब कुछ जानती हुई भी मैं अपने विकारको दूर नहीं कर सकती। बहुत-सी अन्य कन्यायें लज्जा त्यागकर स्वयं अपने पतिके पास चली जा चुकी हैं। और भी बहुतेरी नारियोंको इस दुर्विनीत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नोता नार्यः, न पुनरहमेका यथा। कथननेन क्षणेनाकारमात्रालोकनाकुलीभूतमेवमस्वतन्त्रतामुपैत्यन्तःकरणम्। कालो हि गुणाश्च दुर्निवारतामारोपयन्ति मदनस्य सर्वथा। यावदेव सचेतनास्मि, यावदेव च न परिस्फुटमनेन विभाव्यते मे मदनदुश्चेष्टितलाघवमेतत्, तावदेवास्मात्प्रदेशादपसर्पणं श्रेयः। कदाचिदनभिमतस्मरविकारदर्शनकुपितोऽयं शापाभिज्ञां करोति माम्। अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः' इत्यवधार्यापसर्पणाभिलाषिण्यहमभवम्। अशेषजनपूजनीया चेयं जातिरिति कृत्वा तद्वदनाकृष्टदृष्टिप्रसरम्, अचलितपक्ष्ममालम्, अदृष्टभूतलम्, उल्लसितकर्णपल्लवोन्मुक्तकपोलमण्डलम्, आलोलालकलतालसत्कुसुमावतंसम्, अंसदेशदोलायितमणिकुण्डलमस्मै प्रणाममकरवम्।

अथ कृतप्रणामायामपि दुर्लङ्घ्यशासनतया मनोभुवः, मदजननतया च मधुमासस्य, अतिरमणीयतया च तस्य प्रदेशस्य, अविनयबहु-

---

कामदेवने पागल बनाया है। किन्तु इसने मेरे समान और किसीकी भी दुर्गति न की होगी। न जाने क्यों, इसको देखते ही क्षणमात्रमें मेरी अन्तरात्मा अकुला उठी है और परवश हो गयी है। सच पूछा जाय तो काल और गुण ही सर्वथा कामदेवको दुर्निवार्य बना देते हैं। अस्तु, जबतक मुझे होश है और कामविकारकी दुश्चेष्टायें इसे नहीं दीख जातीं, उसके पहले ही मुझे यहाँसे टरक जाना चाहिए। ऐसा न हो कि अप्रिय कामविकार देखकर यह कुपित हो जाय और शाप दे दे। क्योंकि मुनिजनोंको कुपित होनेमें देर नहीं लगती।' ऐसा विचार करके मैंने वहाँसे लौटना चाहा। फिर यह सोचती हुई कि मुनिजन तो सबके पूज्य होते हैं, मैं उसके मुखपर दृष्टि जमाकर, पलकोंका गिरना रोककर, पृथिवीकी ओर न देखकर, कपोलसे तनिक ऊपरकी ओर सरके हुए कर्णपल्लवयुक्त, बालोंकी चंचल लटोंमें खुँसे फूलोंयुक्त और कन्धे तक लटकते हुए मणिमय कुण्डलोंवाले उस मुनिकुमारको मैंने प्रणाम किया।

इस प्रकार प्रणाम करनेके पश्चात् कामदेवके अनिवार्य शासनसे, उस चैत्रमासमें मद उत्पादन करनेकी शक्तिसे, उस स्थानकी अतिशय रमणीयतासे,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लतया चाभिनवयौवनस्य, चञ्चलप्रकृतितया चेन्द्रियाणाम्, दुर्निवार-तया च विषयाभिलाषाणाम्, चपलतया च मनोवृत्तेः तथा भवितव्य-तया च तस्य तस्य वस्तुनः, किं बहुना मम मन्दभाग्यदौरात्म्यादस्य चेदृशस्य क्लेशस्य विहितत्वात्तमपि मद्विकारापहृतधैर्यं प्रदीपमिव पवनस्तरलतामनयदनङ्गः।

तदा तस्याप्यभिनवागतमदनं प्रत्युद्गच्छन्निव रोमोद्गमः प्रादुरभवत्। मत्सकाशमभिप्रस्थितस्य मनसो मार्गमिवोपदिशद्भिः पुरः प्रवृत्तं श्वासैः। वेपथुगृहीता व्रतभङ्गभीतेवाकम्पत करतलगताऽक्षमाला। द्वितीयेव कर्णावसक्तकुसुममञ्जरी कपोलतलासङ्गिनी समदृश्यत स्वेदसलिल-सीकरजालिका। मद्दर्शनप्रीतिविस्तारितस्य चोत्तानतारकस्य पुण्डरीक-मयमिव तमुद्देशमुपदर्शयतो लोचनयुगलस्य विसर्पिभिरंशुसंतानैर्यदृच्छ-याच्छोदसलिलमपहाय विकचकुवलयवनैरिव गगनतलसमुत्पतितैर-

---

नौजवानीकी उच्छृंखलतासे, इन्द्रियोंकी चंचलतासे, विषयाभिलाषाओंकी दुर्निवारतासे, मनोवृत्तिकी चपलतासे, ऐसी घटनाओंकी भवितव्यतासे और कहाँ तक कहूँ—मेरे अभाग्यकी दुष्टतासे उस मुनिकुमारके भाग्यमें यह क्लेश भोगना निश्चित होनेके कारण प्रणाम करनेके साथ मेरा मनोविकार देखते ही उसका भी धैर्य जाता रहा और जैसे वायु दीपककी लौको चञ्चल कर देती है, उसी प्रकार कामदेवने उसे भी चञ्चल कर दिया।

तभी जैसे नये अतिथिके रूपमें आये हुए कामदेवका आगे बढ़कर स्वागत करनेके लिए उस मुनिकुमारके भी शरीरमें रोमांच हो आया। मेरे पास आते हुए मनको मानो रास्ता बताता हुआ श्वास बड़े वेगसे आगे-आगे चलने लगा। जैसे व्रतभङ्गसे भयभीत होकर उसके हाथमें विद्यमान माला काँपने लगी। कानोंमें पहनी हुई दूसरी कर्णमञ्जरीके समान उसके कपोलपर पसीनेकी बूँदोंकी माला झलकने लगी। मुझे देखनेकी लालसासे विस्तृत, चढ़ी हुई पुतलियों युक्त, उस प्रदेशको श्वेतकमलमय प्रदर्शित करते हुए उसके दोनों नयनोंसे निकलकर फैलती हुई किरणोंसे दसों दिशायें उसी प्रकार भर गयीं, जैसे अपनी इच्छासे उस अच्छोदसरोवरका जल त्यागकर कमलवन आकाशमें उड़ रहा हो। तात्पर्य यह कि उसके दोनों नेत्र चञ्चल होकर इधर-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रुध्यन्त दश दिशः। तया तु तस्यातिप्रकटया विकृत्या द्विगुणीकृतमदनावेशा तत्क्षणमहमवर्णनयोग्यां काममप्यवस्थामन्वभवम्। इदं च मनस्यकरवम्—'अनेकसुरतसमागमलास्यलीलोपदेशोपाध्यायो मकरकेतुरेव विलासानुपदिशति, अन्यथा विविधरसासङ्गललितेष्वीदृशेषु व्यतिकरेष्वप्रविष्टबुद्धेरस्य जनस्य कुत इयमनभ्यस्ताकृती रतिरसनिःस्यन्दमिव क्षरन्ती, अमृतमिव वर्षन्ती, मदमुकुलितेव, खेदालसेव, निद्राजडेव, आनन्दभरमन्थरतरत्तारसञ्चारिणी, अनिभृतभ्रूलतोल्लासिनी दृष्टिः। कुतश्चेदमतिनैपुण्यम्, यच्चक्षुषैवानक्षरमेवमन्तर्गतो हृदयाभिलाषः कथ्यते।' प्राप्तप्रसरा चोपसृत्य तं द्वितीयमस्य सहचरं मुनिबालकं प्रणामपूर्वकमपृच्छम्—'भगवान्किमभिधानः। कस्य वायं तपोधनस्य युवा। किंनाम्नश्च तरोरियमवतंसीकृता कुसुममञ्जरी। जनयति हि मे मनसि महत्कौतुकमस्याः समुत्सर्पन्नसाधारणसौरभोऽयमनाघ्रातपूर्वो

उधर निहारने लगे। इस प्रकार उसके मनोविकारको स्पष्टरूपसे प्रकट होते देखकर मेरा कामावेश द्विगुणित हो उठा और तत्काल मैं एक वर्णनातीत अवस्थाका अनुभव करने लगी। तब मैंने अपने मनमें सोचा—'विविध भाँतिकी सुरतसम्बन्धी नृत्यक्रीडाका शिक्षक कामदेव ही प्राणीको नाना प्रकारके नेत्रविकारोंका उपदेश देता है। यदि ऐसा न होता तो विविध रसोंके सम्पर्कसे सुन्दर दीखनेवाली चेष्टाओंमें जिसका मन नहीं रमा है, ऐसे इस वीतराग पुरुषकी दृष्टि सहसा ऐसी क्यों हो जाती। क्योंकि श्रृंगाररसके अनुकूल आकृतिसे सर्वथा अपरिचित होती हुई भी यह दृष्टि इस समय जैसे रतिरसका झरना-सा बहाती, अमृतकी वर्षा करती, मदसे कुछ मुँदी हुई, खेदसे अलसायी हुई, नींदसे जड़ बनी, आनन्दके भारसे दबकर धामी एवं चञ्चल पुतलियोंके साथ घूमते भौंहोंको निर्भयभावसे नचाती हुई क्यों दीखती? और फिर सहसा इसमें इतना कौशल कहाँसे आ गया कि मुँहसे बिना एक भी अक्षर बोले आँखोंसे ही अन्तःकरणकी समस्त अभिलाषायें कहे दे रहा है।' इसके बाद मौका पाकर मैं उसके उस दूसरे साथीके पास गयी और प्रणाम करके पूछा—'भगवन्! इन युवा तपस्वीका क्या नाम है? ये किस तपोधन महात्माके पुत्र हैं? यह किस वृक्षकी मञ्जरी इनके कानमें खुँसी हुई है? इस-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गन्धः' इति। स तु मामीषद्विहस्याब्रवीत्—'बाले, किमनेन पृष्टेन प्रयोजनम्। अथ कौतुकमावेदयामि। श्रूयताम्—

अस्ति त्रिभुवनप्रख्यातकीर्तिरत्युदारतया सुरासुरसिद्धवृन्दवन्दितचरणयुगलो महामुनिर्दिव्यलोकनिवासी श्वेतकेतुर्नाम। तस्य च भगवतः सुरलोकसुन्दरीहृदयानन्दकरम्, अशेषत्रिभुवनसुन्दरम्, अतिशयितनलकूबरं रूपमासीत्। स कदाचिद्देवतार्चनकमलान्युद्धर्तुमैरावतमदजलबिन्दुबद्धचन्द्रकशतखचितजलां हरहसितसितस्रोतसं मन्दाकिनीमवततार। अवतरन्तं च तं तदा कमलवनेषु संततसंनिहितविकचसहस्रपत्रपुण्डरीकोपविष्टा देवी लक्ष्मीर्ददर्श। तस्यास्तु तमवलोकयन्त्याः प्रेममदमुकुलितेनानन्दबाष्पभरतरङ्गतरलतारेण लोचनयुगलेन रूपमास्वादयन्त्या जृम्भिकारम्भमन्थरमुखविस्यन्तपल्लवाया मन्मथविकृतं

की असाधारण सुगन्धि और पहले कभी भी नहीं सूँघी हुई सुरभिसे मेरे मनमें बहुत बड़ा कौतूहल उत्पन्न हो गया है।' मेरी बात सुनकर मुसकराते हुए उसके साथी मुनिबालकने कहा—'हे बाले! इस प्रश्नसे आपका क्या प्रयोजन है? फिर भी यदि आपको कुतूहल ही हो तो कहता हूँ, सुनिए—

समस्त त्रिलोकीमें विख्यात कीर्तिसम्पन्न और अपनी अत्यन्त उदारताके कारण सभी देवताओं तथा दैत्यों द्वारा पूजित चरणोंवाले श्वेतकेतु नामके महामुनि दिव्यलोकमें निवास करते हैं। उन भगवान् श्वेतकेतुका रूप तीनों लोकोंमें सबसे अधिक सुन्दर एवं नल-कूबरसे भी बढ़कर था और समस्त सुरों-असुरोंकी सुन्दरियोंके हृदयोंको आनन्दित करता था। एक दिन वे देवपूजनके निमित्त कमलके फूल तोड़नेके लिए इन्द्रगज ऐरावतके मदजलबिन्दुओंसे बने सैकड़ों चन्द्रकसंयुत जलवाली तथा शंकरजीके हास्यसदृश उज्ज्वल धारावाली मन्दाकिनी नदीमें उतरे। जलमें उतरते समय उन्हें सदा कमलवनमें निवास करनेवाली प्रफुल्लित सहस्रदलसम्पन्न श्वेतकमलपर विराजमान भगवती लक्ष्मीने देखा। उनको देखते ही लक्ष्मीजीका मन कामदेवके आवेगसे विकृत हो गया। उनकी आँखें प्रेमके मदसे आधी मुँद गयीं और उनमें आनन्दके आँसू उमड़ पड़े। चंचल पुतलियोंवाले नयनोंसे उनके अनुपम रूपका आस्वादन करती हुई लक्ष्मी जँभाइयाँ लेने और अपने अलसाये मुखपर हाथ रखने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मन आसीत्। आलोकनमात्रेण च समासादितसुरतसमागमसुखाया-स्तस्मिन्नेवासनीकृते पुण्डरीके कृतार्थतासीत्। तस्माच्च कुमारः समुदपादि। ततस्तमुत्सङ्ग आदाय सा 'भगवन्, गृहाण तवायमात्मजः' इत्युक्त्वा तस्मै श्वेतकेतवे ददौ। असावपि बालजनोचिताः सर्वाः क्रियाः कृत्वा तस्य पुण्डरीकसंभवतया तदेव पुण्डरीक इति नाम चक्रे। प्रतिपादितव्रतं च तमागृहीतसकलविद्याकलापमकार्षीत। सोऽयम्। इयं च सुरासुरैर्मथ्यमानात्क्षीरसागरादुद्गतः पारिजातनामा पादपस्तस्य मञ्जरी। यथा चैषा व्रतविरुद्धमस्य श्रवणसंसर्गमासादितवती तदपि कथयामि। अद्य चतुर्दशीति भगवन्तमम्बिकापतिं कैलासगतमुपासितुममरलोकान्मया सह नन्दनवनसमीपेनायमनुसरन्निर्गत्य साक्षान्मधुमासलक्ष्मीदत्तललितहस्तावलम्बया वकुलमालिकामेखलया कुसुमपल्लवग्रथिताभिराजानुलम्बिनीभिः कण्ठमालिकाभिर्निरन्तराच्छादितविग्रहया

लगीं। इस प्रकार दर्शनमात्रसे उन्हें सम्भोगका सुख प्राप्त हो गया और उसी पुण्डरीक कमलपर उनकी अभिलाषापूर्ण हो गयी, जिसपर कि वे बैठी थीं। कालान्तरमें उनसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। तब भगवती लक्ष्मीने उस शिशुको गोदमें लेकर कहा—'भगवन्! यह पुत्र आपका है। इसे लीजिए।' ऐसा कहकर उन्होंने वह पुत्र महात्मा श्वेतकेतुको दे दिया। उन्होंने भी बालकका जातकर्म आदि समस्त संस्कार सम्पन्न करके इसी कारण उसका 'पुण्डरीक' नाम रक्खा कि पुण्डरीकपर ही उसका जन्म हुआ था। तदनन्तर उपनयन-संस्कार करनेके बाद उन्होंने उसे सब विद्यायें पढ़ाकर विद्वान् बना दिया। यह वही कुमार है। जब कि देव-दानव मिलकर क्षीरसमुद्रका मन्थन कर रहे थे, तब जो पारिजात वृक्ष निकला था, यह उसीकी मंजरी है। जिस प्रकार नियमविरुद्ध यह मंजरी इसके कानपर आयी, वह वृत्तान्त भी बता रहा हूँ। आज चतुर्दशी है। अतएव कैलासवासी पार्वतीपति शंकर भगवान्का पूजन करनेके लिए हम दोनों नन्दनवनके पाससे होकर गुजर रहे थे। उसी समय जिसे साक्षात् भगवती वसन्तलक्ष्मीने अपने सुन्दर हाथका सहारा दे रक्खा था, जिसने मौलसिरीके पुष्पोंकी बनी करधनी पहन रक्खी थी, पुष्पपल्लवोंसे ग्रथित तथा जाँघों तक लटकनेवाली कंठमालाओंसे जिसका सारा शरीर आच्छादित हो रहा था और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नवचूताङ्कुरकर्णपूरया पुष्पासवपानमत्तया वनदेवतया पारिजातकुसुममञ्जरीमिमादाय प्रणम्याभिहितः—'भगवन्, सकलत्रिभुवनदर्शनाभिरामायास्तवाकृतेरस्याः सदृशोऽयमलंकारः प्रसादीक्रियताम्। इयमवतंसविलासदुर्ललिताऽऽरोप्यतां श्रवणशिखरम्। व्रजतु सफलतां जन्म पारिजातस्य' इत्येवमभिदधानां चायमात्मरूपस्तुतिवादत्रपावनमितलोचनस्तामनादृत्यैव गन्तुं प्रवृत्तः। मया तु तामनुयान्तीमालोक्य 'को दोषः सखे, क्रियतामस्याः प्रणयपरिग्रहः' इत्यभिधाय बलादियमनिच्छतोऽप्यस्य कर्णपूरीकृता। तदेतत्कार्त्स्न्येन योऽयम्, यस्य चायम्, या चेयम्, यथा चास्य श्रवणशिखरं समारूढा तत्सर्वमावेदितम्।' इत्युक्तवति तस्मिन्स तपोधनयुवा किंचिदुपदर्शितस्मितो माममवादीत्—'अयि कुतूहलिनि, किमनेन प्रश्नायासेन। यदि रुचितसुरभिपरिमला गृह्यतामियम्' इत्युक्त्वा समुपसृत्यात्मीयाच्छ्रवणादपनीय कलैरलिकुल-

---

जिसने आमके नूतन अंकुरका कर्णफूल पहन रक्खा था, वह पुष्पोंका आसव पीकर मतवाली साक्षात् नन्दनवनकी वनदेवी बाहर निकली और पारिजात-पुष्पकी यह मंजरी हाथमें लेकर प्रणाम करती हुई इनसे बोली—'भगवन्! समस्त त्रिलोकीको आनन्दित करनेवाली आपकी आकृतिके अनुरूप यह अलंकार है। सो आप इसे धारण करनेकी कृपा करिए। आपका कर्णपूर बननेके लिए ललचायी हुई इस मंजरीको पहनकर पारिजातका जीवन कृतार्थ करिए।' वनदेवीका यह वचन तथा अपने रूपकी स्तुति सुनकर लज्जासे निगाह नीची करके देवीका अनादर करते हुए ये वहाँसे चल पड़े। इनके पीछे-पीछे वनलक्ष्मीको दौड़ती देखकर मैंने कहा—'मित्र! इसमें हर्ज ही क्या है? जब यह प्रेमपूर्वक दे रही है, तब इसे स्वीकार कर लीजिए न।' ऐसा कहकर इनकी इच्छा न रहनेपर भी मैंने बरजोरी यह मंजरी इनके कानपर खोंस दी। इस प्रकार मैंने वह सब बातें भली भाँति बता दीं कि ये कौन हैं, यह मंजरी किसका है और कैसे इनके कानपर आयी।' उसके ऐसा कहनेके बाद मन्द-मन्द मुसकाकर पुण्डरीक स्वयं बोला—'हे कुतूहलिनि! आप ऐसे प्रश्न करनेका कष्ट क्यों कर रही है! यदि आपको इसकी सुगन्धि अच्छी लगती है तो इसे ले लीजिए।' ऐसा कह और मेरे पास आकर उन्होंने वह मंजरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्वणितैः प्रारब्धरतिसमागमप्रार्थनामिव मदीये श्रवणपुटे तामकरोत्। मम तु तत्करतलस्पर्शलाभेन तत्क्षणमपरमिव पारिजातकुसुममञ्जरी-सस्थाने पुलकमासीत्। स च मत्कपोलस्पर्शसुखेन तरलीकृतांगुलिजाल-कात्करतलादक्षमालां लज्जया सह गलितामपि नाज्ञासीत्। अथाहं ताम-संप्राप्तामेव भूतलमक्षमालां गृहीत्वा सलीलं तद्भुजपाशसंदानितकण्ठग्रह-सुखमिवानुभवन्ती दर्शितापूर्वहारलतालीलां कण्ठाभरणतामनयम्।

इत्थंभूते च व्यतिकरे छत्रग्राहिणी मामवोचत्—'भर्तृदारिके, स्नाता देवी। प्रत्यासीदति गृहगमनकालः। तत्क्रियतां मज्जनविधिः' इति। अहं तु तेन तस्या वचनेन नवग्रहा करिणीव प्रथमाङ्कुशपातना-निच्छया, कथकथमपि समाकृष्यमाणा तन्मुखाल्लावण्यामृतपङ्कमग्ना-मिव कपालपुलककण्टकजालकलग्नामिव मदनशरशलाकाकीलितामिव सौभाग्यगुणस्यूतामिव अतिकृच्छ्रेण दृष्टिं समाकृष्य स्नातुमुदचलम्।

मंजरी अपने कानसे उतारकर मेरे कानमे पहना दी। उस समय वह मंजरी भौंरोंके गुञ्जारके बहाने जैसे रतिसमागमके लिए प्रार्थना कर रही थी। उसकी हथेलियोंके संस्पर्शके लिए लालायित होनेके कारण अन्य पारिजात कुसुमसदृश कोमल मेरे शरीरमें सहसा रोमांच आया। मेरे कपोलका स्पर्शसुख पाकर पुण्डरीककी उँगलियाँ काँपने लगीं और लज्जाके साथ-साथ हाथसे गिरी हुई अक्षमालाको भी नहीं देख सका। वह माला भूमिपर नहीं गिरने पायी और मैंने उसे बीचमें ही रोक लिया। अब जैसे उसके भुजपाशको ही अपने गले-में डालकर आलिंगन सुख मानती तथा अपूर्व हारलताकी शोभा प्रदर्शित करती हुई उस मालाको मैंने बड़े भावके साथ अपने गलेमें पहन लिया।

यह घटना घटित होनेके बाद ही मेरी छत्रग्राहिणीने आकर कहा—भर्तृ-दारिके! महारानी नहा चुकीं। अब घर चलनेका समय हो रहा है। अतएव अब आप भी चलकर स्नान कर लें। उसका यह वचन नयी पकड़ी गयी हथिनीपर प्रथम अंकुशके प्रहारकी भाँति समझती हुई अनिच्छासे बहुत प्रयत्नपूर्वक मैं पीछे मुड़ी। फिर जैसे पुंडरीकके मुखलावण्यरूपी दलदलमें फँस गयी हो, कपोलों-पर उभरे रोमांचरूपी काँटोंकी झाड़ीमें उलझ गयी हो, कामबाणकी शलाकासे छिद गयी हो अथवा जैसे सौभाग्यके डोरेसे सिल गयी हो, ऐसी अपनी दृष्टिको बड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उच्चलितायां च मयि द्वितीयो मुनिदारकस्तथाविधं तस्य धैर्यस्खलितमालोक्य किंचित्प्रकटितप्रणयकोप इवावादीत्—'सखे पुण्डरीक, नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्णः क एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः। किं यः कश्चन प्राकृत इव विक्लवीभवन्तमात्मानं न रुणत्सि। कुतस्तवापूर्वोऽयमद्येन्द्रियोपप्लवः, येनास्येवं कृतः, क्व ते तद्धैर्यम्, क्वासाविन्द्रियजयः, क्व तद्वशित्वम्, चेतसः क्व सा प्रशान्तिः, क्व तत्कुलक्रमागतं ब्रह्मचर्यम्, क्व सा सर्वविषयनिरुत्सुकता, क्व ते गुरूपदेशाः, क्व तानि श्रुतानि, क्व ता वैराग्यबुद्धयः, क्व तदुपभोगविद्वेषित्वम्, क्व सा सुखपराङ्मुखता, क्वासौ तपस्यभिनिवेशः, क्व सा भोगानामुपर्यरुचिः, क्व तद्यौवनानुशासनम्? सर्वथा निष्फला प्रज्ञा, निर्गुणो धर्मशास्त्राभ्यासः, निरर्थकः संस्कारः, निरुपकारको गुरूपदेशविवेकः, निष्प्रयोजना प्रबुद्धता, निष्कारणं ज्ञानम्, यदत्रभवादृशा अपि रागा-

---

कठिनाईके साथ उसके मुखपरसे हटाकर मैं स्नान करने चली। मेरे चल देनेपर पुण्डरीकको बहुत अधीर होते देखकर कुछ प्रणयकोप दिखाता हुआ उसका दूसरा साथी मुनिपुत्र बोला—'सखे पुण्डरीक! यह बात आपके योग्य नहीं है। यह मार्ग क्षुद्रजनोंके जानेका है। साधुपुरुष तो धैर्य धारण करते हैं। एक मामूली आदमीके समान विकल होकर आप अपनेको रोकते क्यों नहीं?' आज आपमें इस प्रकारका अपूर्व इन्द्रियविकार कैसे उत्पन्न हो गया? जिससे आपकी यह दुर्दशा हो रही है। आपका वह धैर्य कहाँ गया? आपका वह इन्द्रियविजयवाला पुरुषार्थ कहाँ गया? मनको वशमे करनेवाली शक्ति कहाँ गयी? आपकी शान्तिवृत्ति कहाँ गयी? कुलक्रमागत आपका ब्रह्मचर्यव्रत कहाँ गया? सभी विषयोंसे निरुत्सुकता कहाँ चली गयी? गुरुजनोंके उपदेश कहाँ गायब हो गये? शास्त्राध्ययन कहाँ चला गया? वह वैराग्यबुद्धि कहाँ भाग गयी? वह सुखके प्रति अरुचिका भाव कहाँ चला गया? वह तपस्याके प्रति प्रेमभाव कहाँ लुप्त हो गया? भोगोंके प्रति निःस्पृहभावना कहाँ चली गयी? यौवनका अनुशासन कहाँ गया? आपकी प्रज्ञा सर्वथा निष्फल हो गयी। धर्मशास्त्रका अभ्यास निर्गुण सिद्ध हुआ। सब संस्कार निरर्थक हो गये। गुरुजनोंके उपदेशका ज्ञान निरुपकारी हो गया। प्रबुद्धता निष्प्रयोजन हो गयी। ज्ञान व्यर्थ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिषंगैः कलुषीक्रियन्ते । प्रमादैश्चाभिभूयन्ते। कथं करतलाद्गलितामप-हृतामक्षमालामपि न लक्षयसि। अहो विगतचेतनत्वमपहृतानामेवम्। इदमपि तावद्ध्रियमाणमनयाऽनार्यया निवार्यतां हृदयम्'।

इत्येवमभिधीयमानश्च तेन किंचिदुपजातलज्ज इव प्रत्यवादीत्— 'सखे कपिञ्जल, किं मामन्यथा संभावयसि ? नाहमेवमस्या दुर्विनीतकन्यकाया मर्षयाम्यक्षमालाग्रहणापराधमिमम्' इत्यभिधायालीककोपकान्तेन प्रयत्नविरचितभीषणभ्रूकुटिभूषणेन चुम्बनाभिलाषस्फुरिताधरेण मुखेन्दुना मामवदत्—'चञ्चले, प्रदेशादस्मादिमामक्षमालामदत्त्वा पदात्पदमपि न गन्तव्यम्' इति। तच्च श्रुत्वाहमात्मकण्ठादुन्मुच्य मकरध्वजलास्यारम्भलीलापुष्पाञ्जलिमेकावलीम् 'भगवन्, गृह्यतामक्षमाला' इति मन्मुखासक्तदृष्टेः शून्यहृदयस्यास्य प्रसारिते पाणौ निधाय स्वेदसलिलस्नातापि पुनः स्नातुमवातरम्। उत्थाय च कथमपि प्रयत्नेन निम्न-

---

हो गया। क्योंकि अब आप सरीखे महापुरुष भी विषयासक्तिसे कलुषित तथा प्रमादसे पराजित होने लगे। अहो! बड़े ही आश्चर्यकी बात है कि आपके हाथसे माला गिर पड़ी और उसे कोई अन्य व्यक्ति उठा ले गया, किन्तु आप नहीं जान सके। अस्तु, माला तो गयी। किन्तु वह दुष्टा लड़की आपका हृदय भी हरे लिये जा रही है, अब उसको तो रोकिए।'

उस साथी मुनिकुमारके ऐसा कहनेपर कुछ लज्जित होकर पुण्डरीक बोला—'सखे कपिञ्जल! इस प्रकार तुम मेरे विषयमें व्यर्थकी बातें क्यों सोचते हो? इस ढीठ लड़कीके इस मालाहरणस्वरूप अपराधको मैं कदापि न सहूँगा।' ऐसा कहकर बनावटी क्रोधसे सुन्दर लगता, बड़े प्रयत्नसे रचित भ्रूकुटीरूपिणी भूषणसे विभूषित तथा चुम्बनाभिलाषुक एवं कम्पित अधरवाले मुखचन्द्र द्वारा वह मुझसे बोला—'चंचले! मेरी माला दिये बिना यहाँसे एक पग भी आगे मत बढ़ना।' उसकी यह बात सुनकर कामदेवके नृत्यारंभके अवसरपर दी जानेवाली पुष्पाञ्जलिके समान एक लरकी मुक्तामयी माला अपने गलेसे उतारकर मैंने कहा—'भगवन्! यह लीजिए अपनी माला।' ऐसा कहनेके बाद अपनी ही ओर अनिमिष नयनोंसे निहारते हुए उस शून्यमन मुनिकुमारके माला लेनेके निमित्त फैले हुए हाथपर रखकर पसीनेसे नहायी हुई भी मैं पुनः

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गेव प्रतीपं नीयमाना सखीजनेन बलादम्बया सह तमेव चिन्तयन्ती स्वभवनमयासिषम्। गत्वा च प्रविश्य कन्यान्तःपुरं ततः प्रभृति तद्विरहविधुरा किमागतास्मि, किं तत्रैव स्थितास्मि, किमेकाकिन्यस्मि, किं परिवृतास्मि, किं तूष्णीमस्मि, किं प्रस्तुतालापास्मि, किं जागर्मि, किं सुप्तास्मि, किं रोदिमि, किं न रोदिमि, किं दुःखमिदम्, किं सुखमिदम्, किमुत्कण्ठेयम्, किं व्याधिरयम्, किं व्यसनमिदम्, किमुत्सवोऽयम्, किं दिवस एषः, किं निशेयम्, कानि रम्याणि, कान्यरम्याणीति सर्वं नावगच्छम्। अविज्ञातमदनवृत्तान्ता च क्व गच्छामि, किं करोमि, किं शृणोमि, किं पश्यामि, किमालपामि, कस्य कथयामि, कोऽस्य प्रतीकार इति सर्वं च नाज्ञासिषम्। केवलमारुह्य कुमारीपुरप्रासादं विसर्ज्य च सखीजनं द्वारि निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा, सर्वव्यापारानुत्सृज्यैकाकिनी मणिजालगवाक्षनिक्षिप्तमुखी तामेव दिशं तत्सनाथतया

स्नान करनेके लिए सरोवरकी तरफ बढ़ चली। तदनन्तर मेरी सखियाँ प्रयत्नपूर्वक उलटी बहाकर ले जायी जानेवाली नदीके समान मुझे वहाँसे लौटा लायीं। फिर निरन्तर उसी मुनिकुमारका स्मरण करती हुई मैं माताजीके साथ बरजोरी अपने घर आयी और घरके कन्यान्तःपुरमें चली गयी। उसके बिछोहसे शोकाकुल रहनेके कारण मैं यह भी नहीं जान सकी कि घर आ गयी या अभी वहीं खड़ी हूँ, मैं अकेली हूँ या कि परिजनोंसे घिरी हूँ, मैं चुप हूँ या बोल रही हूँ, मैं जागती हूँ या सो गयी हूँ, मैं रोती हूँ या नहीं रोती, मैं सुखमें हूँ या कि दुःखमें, यह उत्कण्ठा है या कोई रोग, यह कोई उत्सव है या कि व्यसन, यह दिन है या रात, कौनसी वस्तु रम्य है और कौन अरम्य, यह सब मैं कुछ भी नहीं जान सकी। कामदेवके क्रियाकलापसे अनभिज्ञ होनेके कारण मैं यह भी नहीं सोच सकी कि कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, क्या देखूँ, क्या कहूँ, किससे कहूँ और इसका क्या प्रतीकार हो सकता है, इन सब बातोंका मैं कुछ भी निर्णय नहीं कर सकी। किया यह कि कन्याओंके रहनेवाले प्रासादके ऊपर जाकर सखियोंको विदा कर दिया और परिजनोंको भीतर आनेकी मनाही करके सब काम छोड़ मणिजटित जालियोंसे सम्पन्न खिड़कीपर मुख रखकर अकेली खड़ी-खड़ी उसी सुन्दर दिशाकी ओर निहारने लगी। क्योंकि वह मुनि-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रसाधितामिव महारत्ननिधानाधिष्ठितामिव अमृतरससारसागरपूरप्लावितामिव पूर्णचन्द्रोदयालंकृतामिव दर्शनसुभगामीक्षमाणा, तस्माद्दिगन्तरादागच्छन्तमनिलमपि वनकुसुमपरिमलमपि शकुनिध्वनिमपि तद्वार्ता प्रष्टुमाद्रियमाणा तद्वल्लभतया तपःक्लेशायापि स्पृहयन्ती तत्प्रीत्येव गृहीतमौनव्रता स्मरजनितपक्षपाता च तत्परिग्रहान्मुनिवेषस्याग्राम्यतां तदास्पदतया यौवनस्य चारुतां तच्छ्रवणसंपर्कात्पारिजातकुसुमस्य मनोहरतां तन्निवासात्सुरलोकस्य रम्यतां तद्रूपसंपदा कुसुमायुधस्य दुर्जयतामध्यारोपयन्ती दूरस्थस्यापि कमलिनीव सवितुः सागरवेलेव चन्द्रमसः मयूरीव जलधरस्य तस्यैव तां तद्विरहातुरजीवितोद्गमरक्षावलीमिवाक्षावलीं कण्ठेनोद्वहन्ती तथैव च तया प्रस्तुततद्रहस्यालापयेव कर्णल-

---

कुमार उधर ही रहता था। अतएव मुझे वह दिशा ऐसी लग रही थी कि जैसे वह सुभूषित हो, बहुमूल्य रत्नोंकी खान हो, अमृतरससार-समुद्रके प्रवाहमें डूबी हुई हो और पूर्ण चन्द्रोदयसे अलंकृत हो। उस दिशासे आनेवाली वायुसे, वन्यकुसुमोंकी सुगन्धिसे एवं बोलते हुए पक्षियोंको बोलीसे भी मैं उसका समाचार पूछना चाहती थी। मुनिकुमार तपस्वी था। अतएव तपस्याके कष्ट झेलनेकी मेरी भी इच्छा हो रही थी। उससे प्रेम होनेके कारण ही जैसे मैंने मौनव्रत धारण कर लिया था। कामदेवने उसके प्रति विशेष पक्षपात उत्पन्न कर दिया था। अतएव अब मैं मुनिवेषको इसलिए अग्राम्य (सभ्य) समझने लगी कि वह इसी वेषमें रहता था। उसमें यौवन था, इसलिए अब मैं यौवनको रमणीक मानने लगी। क्योंकि वह पारिजातकुसुम उसके कानका स्पर्श कर चुका था, अतएव उसे अब मैं सबसे मनोहर समझने लगी। वह देवलोकमें रहता था, इस कारण अब मैं उस लोकको रम्य समझने लगी। उसकी रूपसम्पदाको कामदेवकी देन समझकर अब मैं कामदेवको दुर्जय मानने लगी। यद्यपि मैं उससे दूर थी, फिर भी कमलिनी जैसे सूर्यकी ओर, समुद्र जैसे चंद्रमाकी ओर और मयूरी जैसे मेघकी ओर निहारा करती है। उसी प्रकार मैं भी नित्य उसी दिशाकी ओर निहारा करती थी। उसके वियोगमें निकलनेवाले प्राणोंकी रक्षाके लिए एक यंत्रके समान उसकी माला अब भी ज्योंकी त्यों मेरे गलेमें पड़ी हुई थी। जैसे उसके विषयमें सारी रहस्यकी बात बताती हुई वह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ग्नया पारिजातमञ्जर्या तथैव च तेन तत्करतलस्पर्शसुखजन्मना कदम्बमुकुलकर्णपूरायमाणेन रोमाञ्चजालेन कण्टकितैककपोलफलका निष्पन्दमतिष्ठम् ।

अथ ताम्बूलकरङ्कवाहिनी मदीया तरलिका नाम मयैव सह गता स्नातुमासीत् । सा च पश्चाच्चिरादिवागत्य तथावस्थितां शनैः शनैर्मामवादीत्—भर्तृदारिके, यौ तौ तापसकुमारकौ दिव्याकारावस्माभिरच्छोदसरस्तीरे दृष्टौ, तयोरेको येन भर्तृदुहितुरियं कर्णावतंसीकृता सुरतरुमञ्जरी स तस्माद्द्वितीयादात्मनो रच्छन्दर्शनमतिनिभृतपदः कुसुमितलतासंतानगहनान्तरेणोपसृत्य मामागच्छन्तीं पृष्ठतो भर्तृदारिकामुद्दिश्याप्राक्षीत्—'बालिके, केयं कन्यका, कस्य वापत्यम्, किमभिधाना, क्व वा गच्छति' इति। मयोक्तम्—'एषा खलु भगवतः श्वेतभानोरंशुसंभूतायामप्सरसि गौर्यां समुत्पन्ना देवस्य सकलगन्धर्वमुकुटमणिशलाकाशिखरोल्लेखमसृणितचरणनखचक्रस्य प्रणयप्रसुप्तगन्धर्वकामिनीकपोलपत्रलताला‌ञ्छितभुजतरुशिखरस्य पादपीठीकृतलक्ष्मीकरकमलस्य गन्ध-

---

पारिजात-कुसुममंजरी अब भी मेरे कानमें खुँसी हुई थी। उसके हाथके स्पर्श-जनित सुखसे उभरे हुए तथा कदम्बकी कलीके बने कर्णपूर सदृश रोमांचसे अब भी मेरा एक कपोल भरा हुआ था।

उसी समय मेरी ताम्बूलवाहिनी तरलिका जो मेरे साथ स्नान करने गयी थी। वह जैसे बहुत देर बाद आकर धीरे-धीरे कहने लगी—भर्तृदारिके ! अच्छोद सरोवरके पास हमें वे जो दो दिव्य मुनिकुमार दिखायी दिये थे, उनमेंसे एक जिसने कि तुम्हारे कानमें यह कुसुममञ्जरी पहनायी थी। वह अपने दूसरे साथीसे छिपता हुआ पुष्पित लताओंकी झुरमुटमें दबे पावँ मेरे पीछेसे आया और आपके विषयमें पूछता हुआ धीरेसे बोला—'बालिके! यह कन्या कौन है ? किसकी पुत्री है ? इसका क्या नाम है और यह कहाँ जा रही है ?' । मैंने कहा—'यह भगवान् चन्द्रदेवकी किरणोंसे उत्पन्न गौरी नामवाली अप्सराकी पुत्री है। सभी गंधर्वोंकी मकुटमणियोंकी रगड़से जिनके चरणनख चिकने हो गये हैं । प्रेमपूर्वक सोती हुई गंधर्वियोंके कपोलोंपर चित्रित पत्रलतिकाओंसे जिनके भुजवृक्षशिखर अंकित हैं । जिन्होंने लक्ष्मीके करकमलको अपना आसन बनाया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

र्वाधिपतेर्हंसस्य दुहिता महाश्वेता नाम गन्धर्वाधिवासं हेमकूटाचलमभिप्रस्थिता' इति कथिते च तया किमपि चिन्तयन्मुहूर्तमिव तूष्णीं स्थित्वा विगतनिमेषेण चक्षुषा चिरमभिवीक्षमाणो मां सानुनयमर्थितामिव दर्शयन्पुनराह--'बालिके कल्याणिनि, तवाविसंवादिन्यचपला बालभावेऽप्याकृतिरियम् । तत्करोपि मे वचनमेकमभ्यर्थ्यमाना' इति। ततो मया सविनयमुपरचिताञ्जलिपुटया दर्शितादरमभिहितः--'भगवन्, कस्मादेवमभिधत्से । काहम् । महात्मानः सकलत्रिभुवनपूजनीयास्त्वादृशाः पुण्यैर्विना निखिलकल्मषापहारिणीमस्मद्विधेषु दृष्टिमपि न पातयन्ति, किं पुनराज्ञाम् । तद्विश्रब्धमादिश्यतां कर्तव्यम् । अनुगृह्यतामयं जनः' इति । एवमुक्तश्च मया सस्नेहया सखीमिवोपकारिणीमिव प्राणप्रदामिव दृष्ट्या मामभिनन्द्य निकटवर्तिनस्तमालपादपात्पल्लवमादाय निष्पीड्य तटशिलातले तेन गन्धगजमदसुरभिपरिमलेन रसेनोत्तरीयवल्कलैकदेशाद्विपाट्य पट्टिकां स्वहस्तकमलकनिष्ठिकानखशिखरेणा-

---

है, वे गन्धर्वाधिपति महाराज हंस इस कन्याके पिता हैं। इसका महाश्वेता नाम है और यह गन्धर्वोंके निवासस्थान हेमकूट पर्वतपर जा रही है।' मेरे ऐसा कहनेपर कुछ सोचता हुआ वह मुहूर्तभर चुप रहा । इसके बाद देरतक निर्निमेष नयनोंसे मुझे देखता हुआ वह बड़े विनीत भावसे प्रार्थनाभरे शब्दोंमें बोला--'बालिके! इस बाल्यावस्थामें भी तुम्हारी आकृति मंगलकारिणी, कपटशून्य और गम्भीर दीख रही है । अतएव यदि मैं प्रार्थना करूँ तो क्या तुम मेरी एक बात मानोगी ?' तब मैं विनयपूर्वक हाथ जोड़कर उसके प्रति आदरभाव प्रदर्शित करती हुई बोली--'भगवन्! आप ऐसा क्यों कहते हैं ? मैं हूँ ही क्या चीज ? अखिल त्रिलोकीके पूजनीय आप सरीखे महात्मा तो बिना पुण्योदयके हम जैसोंपर अपनी पापनाशिनी दृष्टि भी नहीं डालते। फिर आज्ञाकी तो बात ही क्या है । सो आप निधड़क आदेश देते हुए कर्तव्य कार्य बताकर मुझे अनुगृहीत करें।' मेरे ऐसा कहनेपर मुझे सखीके समान, उपकारिणीके समान और प्राणदायिनीके समान सस्नेह दृष्टिसे देखकर उसने मेरा अभिनन्दन किया। तदनन्तर पासके ही एक तमालवृक्षसे पत्ते तोड़ लाया और पत्थरकी चट्टानपर उसे कूँचकर रस निकाला । तब अपने दुपट्टेके एक छोरसे पट्टी फाड़कर उसीके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिलिख्येयं पत्रिका 'त्वया तस्यै कन्यकायै प्रच्छन्नमेकाकिन्यै देया' इत्यभिधायार्पितवान्। इत्युक्त्वा च सा ताम्बूलभाजनादाकृष्य तामदर्शयत्। अहं तु तेन तत्संबन्धिनालापेन शब्दमयेनापि स्पर्शसुखमिवान्तर्जनयता श्रोत्रविषयेणापि रोमोद्गमानुमितसर्वाङ्गानुप्रवेशेन मदनावेशमन्त्रेणेवावेश्यमाना तस्याः करतलादादाय तां वल्कलपत्रिकां तस्यामिमामभिलिखितामार्यामपश्यम्—

दूरं मुक्तालतया विससितया विप्रलोभ्यमानो मे।
हंस इव दर्शिताशो मानसजन्मा त्वया नीतः॥'

अनया च मे दृष्ट्या दिङ्मोहभ्रान्त्येव प्रनष्टवर्त्मनः, बहुलनिशयेवान्धस्य, जिह्वोच्छित्त्येव मूकस्य, इन्द्रजालिकपिच्छिकयेवातत्त्वदर्शिनः, ज्वरप्रलापप्रवृत्त्येवासंबद्धभाषिणः, दुष्टनिद्रयेव विषविह्वलस्य, लोकाय-

---

ऊपर उसी गन्धगजके मदसरीखे सुरभित रससे अपने करकमलकी कनिष्ठिका उँगलीके नाखून द्वारा लिखकर कहा कि 'यह पत्रिका छिपाकर उस कन्याको अकेलेमें दे देना।' ऐसा कहकर उसने यह पत्रिका मुझे दे दी। इसके बाद तरलिकाने ताम्बूलपात्रसे पत्र निकालकर दिखाया। मैं तो उसके सम्बन्धकी शब्दमयी वार्ता ही सुनकर जैसे स्पर्शसुखका अनुभव करती, श्रवणमात्रसे रोमांचित होती अथवा जैसे कामदेवके किसी मंत्रविशेषसे आवेशमें आती हुई उसके हाथसे वह वल्कलपत्रिका लेकर पढ़ने लगी। उसमें यह आर्या लिखी हुई थी—

"मानसरोवरमें जनमा हुआ हंस जैसे मृणालसदृश शुभ्र मोतियोंकी मालासे लुभा तथा आशा दिलाकर बहुत दूर तक ले जाया जाय। ठीक उसी प्रकार तुमने मिलनकी अभिलाषाको जगा तथा मृणालसदृश शुभ्र इस एक लड़ीकी मुक्तामालिकासे ललचाकर कामदेवको बहुत दूर तक पहुँचा दिया है॥'

दिशाभ्रमके कारण राह भूले व्यक्तिकी भाँति, कृष्णपक्षकी रात्रिसे अन्धेकी तरह, जीभ कटे हुए गूँगेकी भाँति, ऐन्द्रजालिक अर्थात् मदारीके मोरछलसे भरमाये हुए तत्त्वज्ञानविहीन व्यक्तिके समान, ज्वरप्रलापमें असम्बद्धभाषीके सदृश, विष खाकर विह्वल व्यक्तिकी दूषित निद्राके समान, जड़वादी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तिकविप्रयेवाधर्मरुचेः, मदिरयेवोन्मत्तस्य, दुष्टावेशक्रिययेव पिशाचग्रहस्य, दोषविकारोपचयः सुतरामक्रियत स्मरातुरस्य मे मनसः, येनाकुलीक्रियमाणा सरिदिव पूरेण विह्वलतामभ्यगमम्। तां च द्वितीयदर्शनेन कृतमहापुण्यामिवानुभूतसुरलोकवासामिव देवताधिष्ठितामिव लब्धवरामिव पीतामृतामिव समासादितत्रैलोक्यराज्याभिषेकामिव मन्यमाना, सततसंनिहितामपि दुर्लभदर्शनामिवातिपरिचितामप्यपूर्वामिव सादरमाभाषमाणा पार्श्वस्थितामपि सर्वलोकस्योपर्यवस्थितामिव पश्यन्ती, कपालयोरलकलताभंगेषु च सोपग्रहं स्पृशन्ती, विपरीतमिव परिजनस्वामिसंबन्धमुपदर्शयन्ती, 'तरलिके, कथय कथं स त्वया दृष्टः, किमभिहितासि तेन, कियन्तं कालमत्रस्थितासि तत्र, कियदनुस-

---

ज्ञानसे भ्रांत अधर्मीके समान, मदिरा पीकर मत्त व्यक्ति सदृश और किसी दूषित आवेशक्रियासे आवेशमें आये हुए पिशाचग्रस्त व्यक्तिके समान वह आर्या देखकर मेरे कामाकुल मनका दोषविकार सहसा अत्यधिक बढ़ गया। अतएव मैं बाढ़से बढ़ी हुई नदीके समान व्याकुल होकर विह्वल हो उठी। क्योंकि तरलिकाने मेरे प्रणयीको दूसरी बार देखा था। अतएव वह जैसे परम पुण्यात्मा हो, जैसे देवलोकमें निवास करनेका सुख अनुभव करके लौटी हो, जैसे उसपर किसी देवताकी छाया उतरी हुई हो, जैसे वह कहीं वरदान प्राप्त कर चुकी हो, जैसे अमृत पी आयी हो और तीनों लोकोंकी राजगद्दीपर जैसे उसका अभिषेक हो चुका हो। इस प्रकार आदरकी दृष्टिसे मैं उसे देखने लगी। यद्यपि वह सदा मेरे पास रहती थी, किन्तु अब ऐसा लगने लगा कि उसका दर्शन दुर्लभ है। अतिशय परिचित होती हुई भी अब वह मुझे नवागन्तुक जैसी दीखने लगी। अब मैं बड़े आदरपूर्वक उससे बोलती थी। सदा पास रहती हुई भी उसको मैं अब सब लोकोंसे ऊपरके लोकमें स्थित मानती थी। अब मैं विशेष आग्रहके साथ उसके कपोलों और बालोंकी लटोंका स्पर्श करती थी। अब जैसे वह मेरी स्वामिनी थी और मैं उसकी दासी। इस प्रकार स्वामी-सेवकके विपरीत भाव प्रदर्शित करती हुई मैं कहती—'तरलिके! तनिक बता तो तूने उसे कैसे देखा? उसने तुझसे क्या कहा? वहाँ तू कितनी देर रही? वह कितनी दूरतक मेरे पीछे-पीछे आया था!' इन्हीं बातों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रस्मान्मानसाद्वागतः' इति पुनः पुनः पर्यपृच्छम्। अनयैव च कथया तया सह तस्मिन्नेव प्रासादे तथैव प्रतिषिद्धाशेषपरिजनप्रवेशा दिवसमत्यवाहयम्।

अथ मदीयेनेव हृदयेन कृतरागसंविभागे लोहितायति गगनतलोपान्तावलम्बिनि रविबिम्बे, सरागदिवसकरदर्शनानुरक्तायां कृतकमलशयनायामनङ्गातुरायामिव पाण्डुतां व्रजन्त्यामातपलक्ष्म्याम् गैरिकगिरिसलिलप्रपातपाटलेषु कमलवनेभ्य उत्थाय वनगजयूथेष्विव पुञ्जीभवत्सु भास्करकिरणेषु, गगनावतारविश्रामलालसानां रविरथवाजिनां हर्षहेषारवप्रतिशब्दकेन सह विशति मेरुगिरिगह्वरं वासरे, मुकुलितरक्तपङ्कजपुटप्रविष्टमधुकरावलीषु विरहमूर्च्छान्धकारिहृदयास्विव प्रारब्धनिमीलनासु पद्मिनीषु, ग्रासीकृतसामान्यमृणाललताविवरसंक्रामितानीव परस्परहृदयान्यादाय विघटमानेषु रथाङ्गनाम्नां युगलेषु सा छत्रग्राहि-

---

को मैं बार-बार उससे पूछती रही। इस प्रकार तरलिकाके साथ उसीके सम्बन्धमें बातें करती हुई समस्त परिजनोंके आनेकी मनाही करके उसी प्रासादपर मैंने वह दिन व्यतीत किया।

तदनन्तर जैसे मेरे ही हृदयके राग (अर्थात् लालिमा अथवा प्रेम) का बँटवारा करके आकाशमण्डलके पश्चिमी छोरपर जब सूर्यका गोला लाल हो उठा। जब रँगीले सूर्यपर आसक्त एवं कमलवनमें सोनेवाली दिवसश्री जैसे कामातुर होकर पीली पड़ गयी। जब गेरूके पर्वतसे गिरनेवाले झरनेकी भाँति दीखती हुई सूर्यकी लाल-लाल किरणें कमलवनसे निकल-निकलकर वन्य गजयूथोंकी तरह एकत्रित होने लगीं। जब गगनमण्डलसे उतरकर विश्राम करनेके इच्छुक सूर्यरथके घोड़ोंकी हर्षभरी हिनहिनाहटकी प्रतिध्वनिके साथ दिन सुमेरुपर्वतकी कन्दराओंमें छिपने लगा। जब मुकुलित रक्तकमलकोशोंमें भौंरोंके घुसने तथा सूर्यके बिछोहसे मूर्छित होकर हृदयमें अँधेरा छा जानेसे विकल कमलिनियाँ सम्पुटित होने लगीं और जब दोनों चंचुओं द्वारा पकड़े हुए एक ही मृणालदण्डके छिद्रोंसे निकलकर बाहर आये हुए हृदयको लेकर चकवा-चकवीका जोड़ा बिछुड़ने लगा। उसी समय मेरी छत्रग्राहिणी दासीने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ण्यागत्याकथयत्—'भर्तृदारिके, तयोर्मुनिकुमारयोरन्यतरो द्वारि तिष्ठति। कथयति चाक्षमालामुपयाचितुमागतोऽस्मि' इति। अहं तु मुनिकुमारनामग्रहणादेव स्थानस्थितापि गतेव द्वारदेशं समुपजाततदागमनाशङ्का समाहूयान्यतमं कञ्चुकिनम 'गच्छ। प्रवेश्यताम्' इत्यादिश्य प्राहिणवम्। अथ मुहूर्तादिव तं तस्य रूपस्येव यौवनम्, यौवनस्येव मकरकेतनम्, मकरकेतनस्येव वसन्तसमयम्, वसन्तसमयस्येव दक्षिणानिलमनुरूपं सखायं मुनिकुमारकं कपिञ्जलनामानं जराधवलितस्य कञ्चुकिनोऽनुमार्गेण चन्द्रातपस्येव बालातपमनुयायिनमपश्यम्। अन्तिकमुपागतस्य चास्य पर्याकुलमिव सविषादमिव शून्यमिवार्थिनमिवानुपरताभिप्रेतमाकारमलक्षयम्। उत्थाय च कृतप्रणामा सादरं स्वयमासनमुपाहरम्। उपविष्टस्य च बलादनिच्छतोऽपि प्रक्षाल्य चरणावुपमृज्य चोत्तरीयांशुकपल्लवेनाव्यवधानायां भूमावेव तस्या-

---

आकर मझसे कहा—'भर्तृदारिके! उन दोनों मुनिकुमारोंमेंसे एक द्वारपर आकर खड़ा है और कहता है कि 'मैं अक्षमाला माँगने आया हूँ।' मैं तो उसके मुखसे मुनिकुमारका नाम सुनते ही वहाँ बैठी हुई भी जैसे द्वारपर जा पहुँची और उसीके आगमनकी आशंका करती हुई एक अन्य कंचुकीको बुलाकर कहा—'उसे भीतर बुला लाओ।' यह आज्ञा देकर उसे बाहर भेज दिया। क्षण ही भर बाद जैसे रूपका साथी यौवन, यौवनका साथी कामदेव, कामदेवका साथी वसन्त और वसन्तका साथी दक्षिणी पवन होता है, उसी प्रकार उसके अनुरूप साथी मुनिकुमार कपिंजलको उस कंचुकीके पीछे-पीछे आते देखा कि वृद्धावस्थाने जिसके केश श्वेत कर दिये थे। उस समय कपिंजलको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे चन्द्रमाकी चाँदनीके पीछे-पीछे बालरविका सुनहला प्रकाश चल रहा हो। समीप आनेपर मुझे उसका आकार अतिशय व्याकुल, विषादयुक्त, सूना-सूना एवं भिखारी जैसा दीखा। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उसके अन्तःकरणमें कोई बहुत बड़ा अभिप्राय छिपा हुआ है। तत्काल उठकर मैंने प्रणाम किया और उसके लिए आसन स्वयं लाकर बिछा दिया। जब वह बैठ गया, तब उसकी इच्छा न होते हुए भी मैंने उसके पाँव धोये और अपनी चादरसे पोंछकर खाली जमीनपर ही उसके पास बैठ गयी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्तिके समुपाविशम्। अथ मुहूर्तमिव स्थित्वा किमपि विवक्षुरिव स तस्यां समीपोपविष्टायां तरलिकायां चक्षुरपातयत्। अहं तु विदिताभिप्राया दृष्ट्यैव 'भगवन्, अव्यतिरिक्तेयमस्मच्छरीरात्। अशङ्कितमभिधीयताम्' इत्यवोचम्।

एवमुक्तश्च मया कपिञ्जलः प्रत्यवादीत्—'राजपुत्रि, किं ब्रवीमि। वागेव मे नाभिधेयविषयमवतरति त्रपया। क्व कन्दमूलफलाशी शान्तो वननिरतो मुनिजनः, क्व वायमनुपशान्तजनोचितो विषयोपभोगाभिलाषकलुषो मन्मथविविधविलाससंकटो रागप्रायः प्रपञ्चः। सर्वमेवानुपपन्नमालोकय। किमारब्धं दैवेन। अयत्नेनैव खलूपहासास्पदतामीश्वरो नयति जनम्। न जाने किमिदं वल्कलानां सदृशम्, उताहो जटानां समुचितम्, किं तपसोऽनुरूपम्, आहोस्विद्धर्मोपदेशाङ्गमिदम्। अपूर्वेयं विडम्बना केवलम्। अवश्यकथनीयमिदम्। अपर उपायो न दृश्यते। अन्या प्रतिक्रिया नोपलभ्यते। अन्यच्छरणं नालोक्यते। अन्या गति-

---

तनिक देर बाद जैसे कुछ कहनेके लिए उसने तरलिकाकी ओर निहारा। इस प्रकारका दृष्टिपात देखते ही मैंने उसका अभिप्राय समझ लिया और कहा—'भगवन्! इसके और मेरे शरीरमें कोई अन्तर न समझकर आप जो कुछ कहना चाहते हों, सो निःशंकभावसे कहिए।'

मेरे यह कहनेपर कपिंजल बोला—'राजकन्यके! मैं क्या कहूँ? लज्जाके वशीभूत होनेके कारण मेरी वाणी मनोगत भावको व्यक्त करनेमें समर्थ नहीं हो रही है। कहाँ कन्द-मूल-फल खाकर वनवास करनेवाले शान्तप्रकृति मुनिजन और कहाँ अशान्त प्रकृतिवाले लोगोंके योग्य विषयभोगकी अभिलाषासे कलुषित एवं कामदेवके विविध कामचेष्टाओंसे संकुल यह रागबहुल प्रपंच। तनिक देखिए तो सही, विधाताने यह कैसा अनुचित कार्य कर डाला है। ईश्वर बिना कोई प्रयत्न किये ही मनुष्यको उपहास्य बना देता है। मुझे मालूम नहीं कि यह कार्य वल्कलवसनके लिए उपयोगी है या कि जटाके लिए उचित है। यह तपस्याके अनुरूप है या कि धर्मोपदेशका कोई एक अङ्ग है। यह तो एकमात्र अभूतपूर्व विडम्बना है। किन्तु कहना आवश्यक है। क्योंकि कहनेके सिवाय और दूसरा कोई उपाय नहीं है। अन्य आश्रय नहीं है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नास्ति। अकथ्यमाने च महाननर्थोपनिपातो जायते। प्राणपरित्यागेणापि रक्षणीयाः सुहृदसव इति कथयामि। अस्ति भवत्याः समक्षमेव स मया तथा निष्ठुरमुपदर्शितकोपेनाभिहितः। तथा चाभिधाय परित्यज्य तं तस्मात्प्रदेशादुपजातमन्युरुत्सृष्टकुसुमावचयोऽन्यप्रदेशमगमम्। अपयातायां च भवत्यां मुहूर्तमिव स्थित्वैकाकी किमयमिदानीमाचरतीति संजातवितर्कः प्रतिनिवृत्त्य विटपान्तरितविग्रहस्तं प्रदेशं व्यलोकयम्। यावत्तत्र तं नाद्राक्षम्। आसीच्च मे मनस्येवम्—'किं नु मदनपरायत्तचित्तवृत्तिस्तामेवानुसरन्गतो भवेत्। गतायां च तस्या लब्धचेतनो लज्जमानो न शक्नोति मे दर्शनपथमुपगन्तुम्। आहोस्वित्कुपितः परित्यज्य मां गतः। उतान्वेषमाणो मामेव प्रदेशमन्यमितः समाश्रितः स्यात्' इत्येवं विकल्पयन्कंचित्कालमतिष्ठम्। तेन तु जन्मनः प्रभृत्यनभ्यस्तेन तस्य क्षणमप्यदर्शनेन दूयमानः पुनरचिन्तयम्—'स कदाचिद्धैर्यस्खलनविलक्षः किंचिदनिष्टमपि समाचरेत्। न हि किंचिन्न क्रियते

और कोई गति नहीं है। यदि मैं वह बात नहीं कहता हूँ तो बहुत बड़ा अनर्थ हो जानेकी संभावना है। अपने प्राण देकर भी मित्रके प्राण बचाने चाहिए। इसीलिए वह बात कह रहा हूँ। उस समय आपके सामने ही कुपित होकर मैंने उसे बहुत कड़ी बातें कहीं थीं। उससे वैसा कह और प्रकुपित भावसे फूल चुनना छोड़कर मैं उस स्थानसे अन्यत्र चला गया। जब आप वहाँसे चली आयीं, तब तनिक देर रुककर मैं उसे देखनेके लिए लौट पड़ा और वृक्षकी झाड़ियोंमें छिपकर देखने लगा कि अकेलेमें वह क्या करता है। किन्तु वह वहाँ नहीं दीखा। तब मैंने सोचा कि 'कामके वशीभूत होकर वह आपके पीछे-पीछे तो नहीं चला आया है। यह भी हो सकता है कि आपके चली आनेके बाद होशमें आकर लज्जावश मेरी आँखोंके समक्ष आनेकी उसमें सामर्थ्य ही न हो। अथवा क्रोधवश वह मुझे त्यागकर कहीं चला तो नहीं गया। या कि मुझे ही खोजता हुआ कहीं दूर तो नहीं निकल गया।' इन्हीं बातोंको सोचता हुआ मैं कुछ देर वहाँ रुका रहा, परन्तु जन्मसे लेकर अबतक क्षणभर भी हमारा-उसका वियोग नहीं हुआ था। अतएव अब उसके वियोगसे मुझे असह्य दुःख होने लगा। मैंने फिर सोचा—'ऐसा न हो कि धैर्य छूट जानेके कारण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ह्रिया। तन्न युक्तमेनमेकाकिनं कर्तुम्' इत्यवधार्यान्वेष्टुमादरमकरवम्। अन्वेषमाणश्च यथा यथा नापश्यं तं तथा तथा सुहृत्स्नेहकातरेण मनसा तत्तदशोभनमाशङ्कमानस्तरुलतागहनानि चन्दनवीथिकालतामण्डपान्सरःकूलानि च वीक्षमाणो निपुणमितस्ततो दत्तदृष्टिः सुचिरं व्यचरम्।

अथैकस्मिन्सरःसमीपवर्तिनि निरन्तरतया कुसुममय इव मधुकरमय इव परभृतमय इव मयूरमय इवातिमनोहरे वसन्तजन्मभूमिभूते लतागहने कृतावस्थानम्, उत्सृष्टसकलव्यापारतया लिखितमिवोत्कीर्णमिव स्तम्भितमिवोपरतमिव प्रसुप्तमिव योगसमाधिस्थमिव निश्चलमपि स्ववृत्ताच्चलितम्, एकाकिनमपि मन्मथाधिष्ठितम्, सानुरागमपि पाण्डुतामावहन्तम्, शून्यान्तःकरणमपि हृदयनिवासिदयितम्, तूष्णीकमपि कथितमदनवेदनातिशयम्, शिलातलाधिष्ठितमपि मरणे व्यवस्थि-

---

निराश होकर वह कोई अनर्थ कर गुजरे। क्योंकि लज्जित मनुष्य सब कुछ कर सकता है। अतएव उसे अकेला छोड़ना ठीक नहीं है।' ऐसा सोचकर मैं उसे खोजने लगा। खोजनेपर भी वह ज्यों-ज्यों नहीं मिल रहा था, त्यों-त्यों मित्रके स्नेहवश मेरा मन व्याकुल होता गया और उसके विषयमें अमङ्गलकी अनेकानेक शंकायें होने लगीं। वृक्षों-लताओंकी कुञ्जों, चन्दनकी वीथियों, लतामण्डपों और सरोवरके तटवर्ती प्रदेशोंमें खोजता तथा इधर-उधर अच्छी तरह दृष्टिनिक्षेप करता हुआ बड़ी देरतक भटकता रहा।

तदनन्तर उस सरोवरके पास एक बहुत ही रमणीक तथा वसन्तकी जन्मभूमि सदृश सुन्दर लताकुंजमें जो कि बहुत सघन होनेके कारण पुष्पमय, भ्रमरमय, कोकिलमय तथा मयूरमय दीख रहा था, वहाँ मैंने उसे बैठे देखा। सब काम छोड़ देनेके कारण जैसे वह चित्रलिखित हो, स्तब्ध हो, मर गया हो, सोया हो अथवा योगकी समाधिमें लीन हो, इस प्रकार दिखायी पड़ा। इस तरह निश्चल होता हुआ भी वह अपने सदाचारसे चलायमान हो गया था। अकेला होता हुआ भी वह कामदेवके साथ था। रक्तवर्णका होता हुआ भी वह अनुरागके कारण पीला पड़ गया था। शून्यहृदय होते हुए भी उसने अपने हृदयमें प्रेमिका बसा रक्खी थी। चुप रहता हुआ भी वह कामवेदनाका आधिक्य बता रहा था। शिलातलपर बैठा हुआ भी मृत्युकी शरणमें जा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तम्, शापप्रदानभयादिवादत्तदर्शनेन कुसुमायुधेन संताप्यमानम्, अतिनिःस्पन्दतया हृदयनिवासिनीं प्रियां द्रष्टुमन्तःप्रविष्टैरिवासह्यसंतापसंत्रासप्रलीनैरिव मनःक्षोभप्रकुपितैरिवोन्मुच्य गतैरिन्द्रियैः शून्यीकृतशरीरम्, निःस्पन्दनिमीलितेनान्तर्ज्वलन्मदनदहनधूमाकुलिताभ्यन्तरेणेवाक्षिपक्ष्मान्तरविवरवान्तानेकधारमनवरतमोक्षणयुगलेन बाष्पजलदुर्दिनमुत्सृजन्तम्, आलोहिनीमधरप्रभामनङ्गाग्नेः प्रदहतो हृदयादूर्ध्वंसंसर्पिणीं शिखामिवादाय निष्पतद्भिरुच्छ्वासैस्तरलीकृतासन्नलताकुसुमकेशरम्, वामकपोलशयनीकृतकरतलतया समुत्सर्पद्भिरमलैर्नखांशुभिर्विमलीकृतमच्छाच्छचन्दनरसरचितललाटिकमिव ललाटदेशमुद्वहन्तम्, अचिरापनीतपारिजातकुसुमकर्णपूरतया सशेषपरिमलामोदलोभोपसर्पिणा कलविरुतच्छलेन मदनसंमोहनमन्त्रमिव जपता मधुकरकुलेन सनीलोत्पलमिव सतमालपल्लवमिव श्रवणदेशं दधानम्, उत्कण्ठाज्वर-

---

चुका था। जैसे शापसे भयभीत होकर कामदेव समक्ष न जाकर अदृश्यरूपसे उसे सता रहा था। उसकी अतिशय निश्चलता देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि हृदयवासिनी प्रियतमाको देखनेके लिए उसकी समस्त इंद्रियाँ भीतर समा गयी थीं, असह्य संतापकी वेदनासे डरकर नष्ट हो गयी थीं अथवा उसके मनका भीषण क्षोभ देख तथा क्रुद्ध होकर उसे सर्वथा त्याग गयी थीं। इस प्रकार उसका शरीर इन्द्रियोंसे शून्य दीख रहा था। निश्चल तथा मुँदे होनेके कारण भीतर प्रज्वलित कामाग्निके धुएँसे विकल उसके नेत्रोंकी बरौनियोंके बीचसे होकर अगणित धाराओंमें विभक्त अनवरत अश्रुवर्षा हो रही थी। हृदयको जलानेवाली कामाग्नि ऊँचे उठती हुई ज्वाला जैसी लाल अधरकी दीप्तिको साथ लेकर बाहर निकलते हुए उच्छ्वासोंसे उसके आस-पासकी लताओंके पुष्पकेसर चञ्चल हो रहे थे। उसने बायें कपोलके नीचे अपनी हथेली रख ली थी। इससे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे उसके निर्मल नखोंकी किरणें विमल ललाटपर फैलकर स्वच्छ चन्दनरसके तिलकका काम कर रही थीं। अभी थोड़ी ही देर पहले कानमेंसे पारिजातकी पुष्पमंजरी हटी थी, अतएव उसके अवशिष्ट सौरभके लोभसे आकृष्ट भौंरे वहाँ आकर अस्पष्ट तथा मीठी ध्वनिके बहाने जैसे कामदेवके सम्मोहनमंत्रका जप कर रहे थे। उन काले भौंरोंसे ऐसा लगता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोमाञ्चव्याजेन प्रतिरोमकूपनिपतितानां मदनशराणां कुसुमशरशल्यशकलनिकरमिवाङ्गलग्नं बिभ्राणम्, दक्षिणकरेण च स्फुरितनखकिरणनिकरां करतलस्पर्शसुखकण्टकितामिव मुक्तावलीमविनयपताकामुरसि धारयन्तम्, मदनवशीकरणचूर्णेनेव कुसुमरेणुना तरुभिराहन्यमानम्, आत्मरागमिव संक्रामयद्भिरासनैरनिलचलितैरशोकपल्लवैः स्पृश्यमानम्, सुरताभिषेकसलिलैरिवाभिनवपुष्पस्तबकमधुशीकरैर्वनश्रियाभिषिच्यमानम्, अलिनिवहनिपीयमानपरिमलैरुपरि पतद्भिश्चम्पककुड्मलैस्तप्तशरशल्यकैरिव सधूमैः कुसुमशरेण ताड्यमानम्, अतिबहलवनामोदमत्तमधुकरनिकरझंकारनिःस्वनैर्हुंकारैरिव दक्षिणानिलेन निर्भर्त्स्यमानम्, मदकलकोकिलकुलकोलाहलैर्वसन्तजयशब्दकलकलैरिव मधुमासेनाकुलीक्रियमाणम्, प्रभातचन्द्रमिव पाण्डुतया परिगृहीतम्, निदाघगंगा-

---

था कि जैसे उसने अपने कानमें नीलकमल तथा तमालके पल्लव पहन लिये हों। उत्कण्ठाजनित ज्वरमें उभरे रोमाञ्चके बहाने उसने जैसे अपने प्रत्येक रोमकूपमें व्याप्त कामबाणोंकी नोकोंको अङ्ग-अङ्गमें धारण कर लिया था। नख-किरणें पड़नेसे जैसे हथेलियोंके संस्पर्शसुखसे कंटकित दीखती हुई उस अविनयकी पताका सरीखी मुक्तावलीको उसने दाहिने हाथमें लेकर छातीपर रख लिया था। वहाँके वृक्ष कामको वशमें करनेवाले चूर्णसदृश पुष्पोंका पराग उसके ऊपर बिखेर रहे थे। वायुके झोंकेसे हिलते हुए अशोकपल्लव जैसे अपनी लालिमा देते हुए उसके शरीरका स्पर्श कर रहे थे। वनलक्ष्मी सुरत-अभिषेकके जल सदृश नवीन पुष्पगुच्छोंके मधुकणसे उसे नहला रही थी। जिनका मधु भौंरोंके झुण्ड पीते थे, उन चम्पकोंकी कलियाँ टूट-टूटकर उसके ऊपर गिर रही थीं। उनको देखकर ऐसा ज्ञात होता था कि जैसे कामदेव अपने तपाये हुए धूमसहित बाणकी नोकसे उसपर प्रहार कर रहा हो। अत्यधिक सुगन्धिसे मस्त भौंरोंके गुञ्जारके बहाने जैसे दक्षिणी वायु हुङ्कार करती हुई उसे धमका रही थी। मत्त कोकिलोंके समुदाय द्वारा वसन्तकी जयजयकारके कोलाहलके बहाने चैत्रमास उसे विकल कर रहा था। प्रभातकालका पीतवर्ण चन्द्रमा जैसे उसे अपनी पाण्डुता प्रदान करता था। ग्रीष्मऋतुके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रवाहमिव कृशिमानमागतम्, अन्तर्गतानलं चन्दनविटपमिव म्लायन्तम्, अन्यमिवादृष्टपूर्वमिवापरिचितमिव जन्मान्तरमिवोपनतम्, रूपान्तरेणेव परिणतम्, आविष्टमिव महाभूताधिष्ठितमिव ग्रहगृहीतमिवोन्मत्तमिव छलितमिवान्धमिव बधिरमिव मूकमिव विलासमयमिव मदनमयमिव परायत्तचित्तवृत्तिं परां कोटिमधिरूढं मदनावेशस्य, अनभिज्ञेयपूर्वाकारं तमहमद्राक्षम्।

अपगतनिमेषेण चक्षुषा तदवस्थं चिरमुद्वीक्ष्य समुपजातविषादो वेपमानेन हृदयेनाचिन्तयम् —'एवं नामायमतिदुर्विषहवेगो मकरकेतुः, येनानेन क्षणेनायमीदृशमवस्थान्तरप्रकारमप्रतीकारमुपनीतः। कथमेवमेकपदे व्यर्थीभवेदेवंविधो ज्ञानराशिः। अहो बत महच्चित्रम्, तथा नामायमाशैशवाद्धीरप्रकृतिरस्खलितवृत्तिर्मम चान्येषां च मुनिकुमारकाणां

गङ्गाप्रवाह सदृश वह बराबर कृश होता जा रहा था। जिसके भीतर आग लग गयी हो, उस चन्दनवृक्षके समान उसका मुख म्लान हो गया था। जैसे वह अपरिचित हो, जन्मान्तर में पहुँच गया हो, रूपान्तरित हो गया हो या आवेशमें हो। पञ्चमहाभूतोंने जैसे उसे अपना अधिष्ठान बना लिया हो, किसी ग्रहने धर दबोचा हो, पागल हो गया हो, किसीने उसे धोखा दिया हो, अन्धा-बहरा या गूँगा हो गया हो, विलासी हो गया हो और जैसे सारे शरीरसे कामदेवमय हो गया हो। इस प्रकार वह कामावेशकी अन्तिम छोरपर पहुँच गया था ओर उसकी चित्तवृत्ति सर्वथा परवश हो गयी थी। उसमें पूर्वका आकार तनिक भी लक्षित नहीं होता था।

ऐसी दशाको प्राप्त अपने सखाको निर्निमेष नयनोंसे मैं बड़ी देरतक देखता रहा। इससे मुझे बड़ा दुःख हुआ। मेरा हृदय काँप उठा और मैं विचार करने लगा कि 'कामदेवका वेग बड़ा दुःसह होता है। जिसने क्षण ही भरमें इसको ऐसी दुर्दशा कर डाली कि जिसका किसी तरह प्रतीकार नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा न होता तो ऐसी ज्ञानकी राशि एकाएक इस तरह क्यों व्यर्थ हो जाती। अहो! यह बड़े आश्चर्यकी बात है। बाल्यकालसे ही इसकी प्रकृति बड़ी गंभीर थी और आचार इतना दृढ़ था कि हम सभी मुनिकुमार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्पृहणीयचरित आसीत्। अत्र त्वितर इव परिभूय ज्ञानमवगणय्य तपःप्रभावमुन्मूल्य गाम्भीर्यं मन्मथेन जडीकृतः। सर्वथा दुर्लभं यौवनमस्खलितम् इति। उपसृत्य च तस्मिन्नेव शिलातलैकपार्श्वे समुपविश्यांसावसक्तपाणिस्तमनुन्मीलितलोचनमेव 'सखे पुंडरीक, कथय किमिदम्' इत्यपृच्छम। अथ सुचिरसंमीलनाल्लग्नमिव कथमपि प्रयत्नेनानवरतरोदनवशात्समुपजानारुणभावमश्रुजलपटलप्रप्लावितमुत्कम्पितमिव सवेदनमिव स्वच्छांशुकान्तरितरक्तकमलवनच्छायं चक्षुरुन्मील्य मन्थरमन्थरया दृष्ट्या सुचिरं विलोक्य मामायततरं निःश्वस्य लज्जाविशार्यमाणाक्षरम् 'सखे कपिञ्जल, विदितवृत्तान्तोऽपि किं मां पृच्छसि ?' इति कृच्छ्रेण शनैः शनैरवदत्। अहं तु तदाकर्ण्य तदवस्थयैवाप्रतीकारविकारोऽयं तथापि सुहृदा सुहृदसन्मार्गप्रवृत्तो यावच्छक्तितः सर्वात्मना निवारणीय इति मनसावधार्याब्रवम—'सखे पुण्डरीक, सुविदितमेतन्मम।

चरित्रनिर्माणमें इससे ईर्ष्या करते थे। आज कामदेवने इसके ज्ञानको परास्त, तपस्याके प्रभावको तिरस्कृत एवं गाम्भीर्यको नष्ट करके इसे जड़ बना दिया है। इससे यह निश्चित है कि सर्वथा निर्विकार यौवन दुर्लभ ही होता है। तदनन्तर मैं उसके पास गया और उसी शिलापर एक ओर बैठ तथा उसके कंधेपर हाथ रखकर आँखें मूँदे हुए उस साथीसे कहा—'सखे पुडरीक! बोलो, तुम्हें क्या हो गया है?' तत्पश्चात् चिरकालतक बन्द रहनेके कारण जैसे परस्पर सँट गयी थीं, निरन्तर रोदन करनेसे जिनमें लाली आ गयी थीं, आँसुओंकी धारामें डूबी हुई, सूखी तथा दुखतीसी दीखती और साफ-सुथरे वस्त्रसे ढँका लाल कमल सरीखी आँखें उघार तथा सूनी-सूनी दृष्टिसे बड़ी देरतक निहार और दीर्घ निःश्वास लेकर लज्जासे लड़खड़ाती वाणीमें कहा—'मित्र कपिञ्जल! तुम तो सब कुछ जानते हो, फिर मुझसे क्यों पूछ रहे हो?' ये शब्द बड़ी कठिनाईसे और बहुत धीरे-धीरे उसके मुखसे निकले। सो सुन और उसकी दशा देखकर मुझे ऐसा लगा कि उसका विकार मेटना असंभव है। तथापि मित्रका यह कर्तव्य है कि कुमार्गगामी मित्रको जहाँ तक वश चले, तहाँतक रोके। मन ही मन ऐसा सोचकर मैंने कहा—'मित्र पुण्डरीक! यह मुझे अच्छी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केवलमिदमेव पृच्छामि, यदेतदारब्धं भवता किमिदं गुरुभिरुपदिष्टम्, उत धर्मशास्त्रेषु पठितम्, उत धर्मार्जनोपायोऽयम्, उतापरस्तपसां प्रकारः, उत स्वर्गगमनमार्गोऽयम्, उत व्रतरहस्यमिदम्, उत मोक्षप्राप्तियुक्तिरियम्, आहोस्विदन्यो नियमप्रकारः। कथमेतद्युक्तं भवतो मनसापि चिन्तयितुम्, किं पुनराख्यातुमीक्षितुं वा। अप्रबुद्ध इवानेन मन्मथहतकेनोपहासास्पदतां नीयमानमात्मानं नावबुध्यसे। मूढो हि मदनेनायास्यते। का वा सुखाशा साधुजननिन्दितेष्वेवंविधेषु प्राकृतजनबहुमतेषु विषयेषु भवतः। स खलु धर्मबुद्ध्या विषलतां सिञ्चति, कुवलयमालेति निस्त्रिंशलतामालिंगति, कृष्णागुरुधूमलेखेति कृष्णसर्पमवगूहति रत्नमिति ज्वलन्तमंगारमभिस्पृशति, मृणालमिति दुष्टवारणदन्तमुसलमुन्मूलयति, मूढो विषयोपभोगेष्वनिष्टानुबन्धिषु यः सुखबुद्धिमारोपयति। अधिगतविषयतत्त्वोऽपि कस्मात्खद्योत इव ज्योतिर्निर्वीर्य-

---

तरह मालूम है। तथापि मैं केवल यह पूछना चाहता हूँ कि आपने जो राह पकड़ी है, उसे क्या गुरुने दिखाया है? अथवा धर्मशास्त्रमें पढ़ा है? क्या यह धर्मोपार्जनका साधन है? या यह तपस्याका कोई प्रकार है? क्या यह स्वर्ग जानेका रास्ता है? या कि किसी व्रतका रहस्य है? अथवा मोक्ष प्राप्त करनेकी कोई युक्ति है? या कि व्रताचरणका कोई नया नियम है? जो आप कर हैं, वह सब क्या मनसे भी सोचना आपके लिए उचित है? फिर कहने या देखनेकी तो बात ही न्यारी है। एक मूढ़ व्यक्तिके समान क्या आप यह नहीं सोचते कि इस पाजी कामदेवने आपको उपहासास्पद बना दिया है? और फिर कामदेव तो मूर्खोंको कष्ट देता है। साधुजनों द्वारा निन्दित और जनसाधरणको प्रिय विषयोंसे आप किस सुखकी आशा करते हैं? जो मूर्ख अन्तमें दुखदायी विषयोपभोगसे सुखकी कल्पना करता है, वह अपना धर्म समझकर विषकी लताको सींचता है। कमलकी माला समझकर वह तलवाररूपी लताका आलिङ्गन करता है। काली अगर बत्तीका धुआँ समझकर काले साँपको गले लगाता है। रत्न समझकर जलते अंगारेका स्पर्श करता है और मृणाल समझकर दुष्ट हाथीका दाँतरूपी मूसल खींचता है। सब विषयोंका तत्त्व जानते हुए भी आप जुगुनूके प्रकाशकी भाँति इस निर्वीर्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिदं ज्ञानमुद्वहसि, यतो न निवारयसि प्रबलरजःप्रसरकलुषितानि स्रोतांसीवोन्मार्गप्रस्थितानीन्द्रियाणि, न नियमयसि वा क्षुभितं मनः। कोऽयमनंगो नाम। धैर्यमवलम्ब्य निर्भर्त्स्यतामयं दुराचारः' इत्येवं वदत एव मे वचनमाक्षिप्य प्रतिपक्ष्मान्तरालप्रवृत्तवाष्पवर्णिकं प्रमृज्य चक्षुः करतलेन मामवलम्ब्यावोचत्—'सखे, किं बहूक्तेन। सर्वथा स्वस्थोऽसि। आशीविषविषवेगविषमाणामेतेषां कुसुमचापसायकानां पतितोऽसि न गोचरे। सुखमुपदिश्यते परस्य। परस्य यस्य चेन्द्रियाणि सन्ति मनो वा वर्तते, यः पश्यति वा, शृणोति वा, श्रुतमवधारयति वा, यो वा शुभमिदं न शुभमिदमिति विवेक्तुमलं स खलूपदेशमर्हति। मम तु सर्वमेवेदमतिदूरापेतम्। अवष्टम्भो ज्ञानं धैर्यं प्रतिसंख्यानमित्यस्तमितैषा कथा। कथमप्येव मेऽयत्नविधृतास्तिष्ठन्त्यसवः। दूरातीतः खलूपदेशकालः। समतिक्रान्तो धैर्यावसरः। गता प्रतिसंख्यानवेला। अतीतो ज्ञानावष्टम्भसमयः। केन वान्येनास्मिन्समये भवन्तमपहायोपदेष्टव्यम्,

---

ज्ञानको क्यों अपनाये हुए हैं। प्रबल रजःप्रसर (धूल अथवा रजोगुणके फैलाव) से मलीन नदियोंको भाँति कुमार्गपर जाती हुई इन्द्रियों तथा अपने क्षुब्ध मनको आप रोकते क्यों नहीं ! आखिर कामदेव चीज ही क्या है ! आप धैर्यका अवलम्बन करके इस दुराचारी कामदेवको दुत्कार दीजिए।' तब बीच ही में मेरी बात काटकर बरौनियोंके बीचसे बहनेवाले आँसुओंकी धारा हाथसे पोंछ और मेरा हाथ थाम्हकर उसने कहा—'मित्र ! अधिक कहनेसे क्या मतलब, तुम सब तरहसे स्वस्थ हो। क्योंकि अभी सर्पविषके समान भयंकर कामबाणोंके लक्ष्य नहीं बने हो। औरोंको उपदेश देना बहुत सरल काम है, किन्तु उपदेश ऐसे ही व्यक्तिको देना चाहिए कि जिसकी इन्द्रियाँ और मन काबूमें हो। जो भला बुरा देख सकता हो, सुन सकता हो, देख सुनकर उसपर विचार कर सकता हो और यह निर्णय कर सकता हो कि क्या शुभ है और क्या अशुभ। लेकिन मित्र ! मेरी तो यह सारी पूँजी समाप्त हो चुकी है। स्थैर्य, ज्ञान, धैर्य और विवेचनशक्ति इनमेंसे कुछ भी बाकी नहीं बचा है। केवल विना यत्नके रुके ये प्राण न जाने क्यों अभी नहीं गये हैं। उपदेश देनेका समय बीत गया। धैर्य धारण करनेका अवसर जाता रहा। विवेचनकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उन्मार्गप्रवृत्तिनिवारणं वा करणीयम्। कस्यान्यस्य वा वचसि मया स्थातव्यम् । को वापरस्त्वत्समो मे जगति बन्धुः। किं करोमि, यन्न शक्नोमि निवारयितुमात्मानम्। इयमनेनैव क्षणेन भवता दृष्टा दुष्टावस्था । तद्गत इदानीमुपदेशकालः । यावत्प्राणिमि तावदस्य कल्पान्तोदितद्वादशदिनकरकिरणातपतीव्रस्य मदनसंतापस्य प्रतिक्रियां क्रियमाणामिच्छ ।पच्यन्त इव मेऽङ्गानि, उत्क्वथ्यत इव हृदयम्, प्लुष्यत इव दृष्टिः, ज्वलतीव शरीरम्। अत्र यत्प्राप्तकालं तत्करोतु भवान्' इत्यभिधाय तूष्णीमभवत्। एवमुक्तेऽप्यहमेनं प्राबोधयं पुनः पुनः। यदा शास्त्रोपदेशविशदैः सनिदर्शनैः सेतिहासैश्च वचोभिः सानुनयं सोपग्रहं चाभिधीयमानोऽपि नाकरोत्कर्णे, तदाहमचिन्तयम्—'अतिभूमिमयं गतः, न शक्यते निवर्तयितुम्। इदानीं निरर्थकाः खलूपदेशाः। तत्प्राण-

---

वेला भी अब नहीं रही। ज्ञानबलसे मनको वशमें करनेका समय भी समाप्त हो गया। इस संकटके समय तुम्हारे सिवाय और कौन मुझे उपदेश देगा और कौन कुपथपर जानेसे रोकेगा ? और फिर अन्य किसीकी बात मैं मानूँगा भी कैसे ? तुम्हारे जैसा मेरा बन्धु संसारमें और कौन है ? किन्तु मित्र ! मैं क्या करूँ ? अब मैं अपने आपको रोकनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ। इस समय मेरी कैसी दुरवस्था है, सो तुम देख ही रहे हो। अब उपदेश देनेका समय समय नहीं है । मेरी अभिलाषा यही है कि जबतक इस शरीरमें प्राण शेष हैं, तबतक प्रलयकालमें उदित होनेवाले द्वादश सूर्योंकी किरणों जैसे तीव्र इस कामजनित सन्तापको निवृत्त करनेका कोई उपाय करो। मेरे अंग-अंग जैसे जले जा रहे हैं। हृदय उबल रहा है । आँखें धधक रही हैं । सारा शरीर जला जा रहा है । ऐसी दशामें तुम जो उचित समझो सो करो।' इतना कहनेके बाद वह चुप हो गया। उसके ऐसा कहनेपर भी मैंने फिर उसे बार-बार समझाया। लेकिन जब शास्त्रोपदेशसे निर्मल दृष्टान्तों तथा इतिहाससम्पन्न वाक्यों द्वारा अनुनय करके आग्रहपूर्वक समझानेपर भी वह नहीं समझ सका। तब मैंने सोचा कि 'अब यह आवेगकी चरम सीमापर पहुँच गया है। अतएव किसी तरह लौटाया नहीं जा सकता। अब उपदेश देना व्यर्थ है। अब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिरक्षणेऽपि तावदस्य यत्नमाचरामि' इति कृतमतिरुत्थाय गत्वा तस्मात्सरसः सरसा मृणालिकाः समुद्धृत्य कमलिनीपलाशानि जललवलाञ्छितान्यादाय गर्भधूलिकषायपरिमलमनोहराणि च कुमुदकुवलयकमलानि गृहीत्वागत्य तस्मिन्नेव लतागृहशिलातले शयनमस्याकल्पयम्। तत्र च सुखनिषण्णस्य प्रत्यासन्नवर्तिनां चन्दनविटपादीनां मृदूनि किसलयानि निष्पीड्य तेन स्वभावसुरभिणा तुषारशिशिरेण रसेन ललाटिकामकल्पयम्, आचरणतलादंगचर्चां चारचयम्। अभ्यर्णपादपस्फुटितवल्कलविवरशीर्णेन च करसंचूर्णितेन कर्पूररेणुना स्वेदप्रतिक्रियामकरवम्। उरोनिहितचन्दनद्रवार्द्रवल्कस्य स्वच्छसलिलसीकरनिकरस्राविणा कदलीदलेन व्यजनक्रियामन्वतिष्ठम्। एवं च मुहूर्मुहुरन्यदन्यन्नलिनीदलशयनमुपकल्पयतः, मुहुर्मुहुश्चन्दनचर्चामारचयतः, मुहुर्मुहुश्च स्वेदप्रतिक्रियां कुर्वतः, कदलीदलेन चानवरतं वीजयतः समुदभून्मे मनसि चिन्ता—'नास्ति खल्वसाध्यं नाम भगवतो मनोभुवः। क्वायं हरिण इव

तो इसके प्राण बचानेका कोई उपाय करना चाहिए।' ऐसा निश्चय करके मैं उठा और उस सरोवरसे ताजे मृणाल, जलबिन्दुसयुक्त कमलके पत्ते, रजकी सुगन्धिसे मनोहारी कुमुद-कुवलय तथा कमलके फूल लेकर आया और उसी लतामडपके शिलातलपर उसके लिए बिछौना बिछा दिया। जब वह उसपर सानन्द बैठ गया, तब पास ही विद्यमान चन्दन आदि वृक्षोंकी कोमल पत्तियाँ लाकर रस निचोड़ा और स्वभावतः सुगंधित तथा बर्फकी भाँति शीतल वह रस उसके माथेपर लगाकर पैरतक सारे शरीरमें लेप कर दिया। पास ही के वृक्षोंकी छालकी दरारसे निकला कपूर लाकर हाथोंसे मसला और उसी चूर्णसे उसका पसीना सुखाया। उसकी छातीपर चन्दनके रसमें भीगा वल्कलवसन सँटाकर साफ पानीकी महीन-महीन बूँदें टपकाता हुआ केलेके पत्तेसे पंखा झला। इस प्रकार पुनः पुनः कमलके पत्तोंका बिछौना बदलता हुआ बार-बार चन्दनका लेप चढ़ाता रहा। बार-बार पसीना सुखाता और केलेके पत्तेका पंखा करता रहा। यह सब करते-धरते मैंने मनमें सोचा कि 'भगवान् कामदेवके लिए कोई भी कार्य असाध्य नहीं है। कहाँ मृगके समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वनवासनिरतः स्वभावमुग्धो जनः, क्व च विविधविलासरसरा शिर्गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता। सर्वथा नहि किंचिदस्य दुर्घटं दुष्करमनायत्तमकर्तव्यं वा जगति। दुरुपपादेष्वप्ययमवज्ञया विचरति। न चायं प्रतिकूलयितुं शक्यते। का वा गणना सचेतनेषु, अपगतचेतनान्यपि संघट्टयितुमलं यद्यस्मै रोचते। कुमुदिन्यपि दिनकरकरानुरागिणी भवति, कमलिन्यपि शशिकरद्वेषमुज्झति, निशापि वासरेण सह मिश्रतामेति, ज्योत्स्नाप्यन्धकारमनुवर्तते, छायापि प्रदीपाभिमुखमवतिष्ठते, तडिदपि जलदे स्थिरतां व्रजति, जरापि यौवनेन संचारिणी भवति। किं वा तस्य दुःसाध्यमपरम्, एवंविधो येनायमगाधगाम्भीर्यसागरस्तृणवल्लघुतामुपनीतः। क्व तत्तपः, क्वेयमवस्था। सर्वथा निष्प्रतीकारेयमापदुपस्थिता। किमिदानीं कर्तव्यम्, किंवा चेष्टितव्यम्, कं देशं गन्तव्यम्, किं शरणम्, को वोपायः, कः सहायः कः प्रकारः, का युक्तिः, कः समाश्रयो

स्वभावसे ही मुग्ध तथा वनवासी पुण्डरीक और कहाँ विविध विलासकी रसराशिस्वरूपा गन्धर्वराजकी पुत्री महाश्वेता। संसारमें कामदेवके लिए कोई भी काम दुर्घट, दुष्कर, वशके बाहर अथवा अकर्तव्य नहीं है। दुःखसे साध्य होनेवाले कामोंको भी वह अवज्ञापूर्वक क्षणभरमें कर डालता है। कोई भी प्राणी उसके प्रतिकूल नहीं चल सकता। सचेतन प्राणियोंकी तो बात ही क्या, यदि वह चाहे तो अचेतनोंको भी मनमाना नाच नचा सकता है। उसकी इच्छा हो तो कुमुदिनी सूर्यकी किरणोंसे प्रीति कर सकती है। कमलिनी चन्द्रमाकी किरणोंका द्वेष त्याग सकती है। रात दिनसे मिल सकती है। उजेला अँधेरेका अनुसरण कर सकता है। छाया दीपकके समक्ष खड़ी हो सकती है। बिजली मेघमें स्थायीरूपसे रह सकती है और बुढ़ौती जवानीके साथ-साथ टिक सकती है। जब कि वह पुण्डरीक जैसे अगाध गाम्भीर्यके समुद्रको तिनकेकी नाईं हल्का बना सकता है, तब उसके लिए दुःसाध्य और कौन काम होगा? कहाँ वह उदात्त तपस्या और कहाँ इसकी यह अवस्था। इस विपत्तिसे छुटकारेका अब कोई उपाय नहीं है। अब मैं क्या करूँ? कौनसी चेष्टा करूँ? किस दिशामें जाऊँ? किसकी शरण गहूँ? कौन उपाय करूँ? किसकी सहायता लूँ? किस विधिसे चलूँ? कौनसी युक्ति करूँ? और किसका सहारा लूँ कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

येनास्यासवो धार्यन्ते। केन वा कौशलेन, कतमया वा युक्त्या, कतरेण वा प्रकारेण, केन वावष्टम्भेन, कया वा प्रज्ञया, कतमेन वा समाश्वासनेनायं जीवेत्' इत्येते चान्ये च मे विषण्णहृदयस्य संकल्पाः प्रादुरासन्। पुनश्चाचिन्तयम्—'किमनया ध्यातया निष्प्रयोजनया चिन्तया। प्राणास्तावदस्य येनकेनचिदुपायेन शुभेनाशुभेन वा रक्षणीयाः। तेषां च तत्समागममेकमपहाय नास्त्यपरः संरक्षणोपायः। बालभावादप्रगल्भतया च तपोविरुद्धमनुचितमुपहासमिवात्मनो मदनव्यतिकरं मन्यमानो नियतमेकोच्छ्वासावशेषजीवितोऽपि नायं तस्याः स्वयमभिगमनेन पूरयति मनोरथम्। अकालान्तरक्षमश्चायमस्य मदनविकारः। सततमतिगर्हितेन कृत्येनापि रमणीयान्मन्यन्ते सुहृदसून्साधवः। तदतिह्रेपणमकर्तव्यमप्येतदस्माकमवश्यकर्तव्यतामापतितम्। किं वान्यत्क्रियते। का चान्या गतिः। सर्वथा प्रयामि तस्याः सकाशम्। आवेदयाम्येतामवस्थाम्' इति चिन्तयित्वा कदाचिदनुचितव्यापारप्रवृत्तं मां विज्ञाय सं-

---

जिससे इसके प्राण बच जायँ। किस चतुराई, किस युक्ति, किस प्रकार, किस आधार, किस बुद्धि, किस प्रज्ञा तथा किस समाश्वासनसे यह जीवित बच सकता है? मेरे विषादभरे मनमें ऐसे-ऐसे अनेकानेक संकल्प उत्पन्न होने लगे। फिर सोचा कि 'ऐसी व्यर्थकी बातें सोचनेसे क्या लाभ होगा? अब तो भले या बुरे जिस किसी भी उपायसे इसके प्राण बचाना आवश्यक है किन्तु इन दोनोंके मिलनके सिवाय इसे बचानेका और कोई उपाय नहीं है। लेकिन बचपनके कारण अभी इसमें इतना साहस नहीं है कि यह महाश्वेताके पास जाकर अपनी इच्छा पूर्ण कर सके। क्योंकि इस कामको यह तपके विरुद्ध, अनुचित और उपहास्य मानता हुआ एक श्वासके भी रहते नहीं कर सकेगा। इसका मदनविकार अब कुछ भी विलम्ब नहीं सह सकता। अच्छे लोग अतिशय निंद्य एवं अकरणीय कार्यको भी करके मित्रके प्राण बचाना अपना कर्तव्य समझते हैं। सो अब मुझे अतिशय लज्जाजनक और न करने योग्य काम भी करना ही पड़ेगा। और किया ही क्या जा सकता है, और कोई गति ही नहीं है। अतएव महाश्वेताके पास जाकर उसे इसकी हालत बता दूँ।' ऐसा सोचकर कदाचित् मुझे इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

जातलज्जो निवारयेदित्यनिवेद्यैव तस्मै तत्प्रदेशात्सव्याजमुत्थायागतोऽहम्। तदेवमवस्थिते यदत्रावसरप्राप्तम्, ईदृशस्य चानुरागस्य सदृशम्, अस्मदागमनस्य चानुरूपम्, आत्मनो वा समुचितं तत्रभवती प्रभवति' इत्यभिधाय किमियं वक्ष्यतीति मन्मुखासक्तदृष्टिस्तूष्णीमासीत्।

अहं तु तदाकर्ण्य सुखामृतमये ह्रद इव निमग्ना, रतिरसमयमुदधिमिवावतीर्णा, सर्वानन्दानामुपरि वर्तमाना, सर्वमनोरथानामग्रमिवाधिरूढा, सर्वोत्सवानामतिभूमिमिवाधिशयाना, तत्कालोपजातया लज्जया किंचिदवनम्यमानवदनत्वादस्पृष्टकपोलोदरैः ग्रथितैरिवोपर्युपरिपतनानुबन्धदर्शितमालाक्रमैः, अप्राप्तपक्ष्मसंश्लेषतयोपजातप्रथिमभरैरमलैरानन्दवाष्पजलबिन्दुभिः स्रवद्भिरावेद्यमानप्रहर्षप्रसरा तत्क्षणमचिन्तयम्। दिष्ट्या तावदयमनङ्गो मामिव तमप्यनुबध्नाति, यत्सत्यमेतेन मे संतापयताप्यंशेन दर्शितानुकूलता। यदि च सत्यमेव तस्येदृशी दशा वर्तते, ततः किमिव नोपकृतमनेन, किं वा नोपपादितम्, को वानेनापरः

अनुचित कामको करने जाते देखकर यह लज्जावश रोक न दे, इस कारण उससे बिना कुछ कहे ही किसी बहाने उठकर मैं यहाँ चला आया हूँ। ऐसी अवस्थामें जो समयके अनुकूल हो, ऐसे उत्कट अनुरागके लिए उपयोगी हो, मेरे आगमनके अनुरूप हो और आपके लिए भी उचित हो, वही करिए।' ऐसा कहकर वह उत्तर सुननेकी उत्सुकतावश मेरा मुँह निहारता हुआ चुप हो गया।

उसके वचन सुनकर मैं तो जैसे आनन्दके अमृतमय सरोवरमें डूब गयी। मानो रतिरससम्पन्न समुद्रमें उतर गयी। जैसे समस्त सुखोंके ऊपर जा बैठी और जैसे सभी उत्सवोंकी पराकाष्ठापर जा पहुँची। किन्तु तत्काल उपजी लज्जाके कारण मेरा मुख नीचा हो गया। अब कपोलोंको छुए बिना ही परस्पर गुँथे हुएके समान निरन्तर तर-ऊपर गिरनेसे मालाका भ्रम उत्पन्न करती तथा बरौनियोंका संस्पर्श न होनेके कारण बड़ी-बड़ी दीखती स्वच्छ आनंदश्रुकी बूँदें गिरनेसे हर्ष प्रकट करती हुई मैं सोचने लगी—'यह मेरे लिए बड़े भाग्यकी बात है कि मेरी ही तरह मदन उन्हें भी सता रहा है। इस प्रकार मुझे सताते हुए भी उसने कुछ अंशोंमें मेरे प्रति अनुकूलता ही दिखायी है। यदि सचमुच उनकी यह दशा हो तो फिर कामदेवके उपकारमें कौनसी न्यूनता रह गयी? उसने क्या नहीं किया? इससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समानो बन्धुः, कथं वा कपिञ्जलस्य स्वप्नेऽपि वितथा भारती प्रशान्ताकृतेरस्माद्वदनान्निष्क्रामति। इत्थंभूते किं मयापि प्रतिपत्तव्यम्, तस्य वा पुरः किमभिधातव्यम्' इत्येवं विचारयन्त्यैव प्रविश्य ससंभ्रमा प्रतीहारी मामकथयत्—'भर्तृदारिके, त्वमस्वस्थशरीरेति परिजनादुपलभ्य महादेवी प्राप्ता' इति। तच्च श्रुत्वा कपिञ्जलो महाजनसंमर्दभीरुः सत्वरमुत्थाय 'राजपुत्रि, महानयमुपस्थितः कालातिपातः। भगवांश्च भुवनत्रयचूडामणिरस्तमुपगच्छति दिवसकरः। तद्गच्छामि सर्वथाभिमतसुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थमयमुपरचितोऽञ्जलिः। एष मे परमो विभवः' इत्यभिधाय प्रतिवचनकालमप्रतीक्ष्यैव पुरोयायिनाम्बायाः प्रविशता कनकवेत्रलताकरेण प्रतीहारीजनेन कञ्चुकिलोकेनागृहीतताम्बूलकुसुमपटवासाङ्गरागेण चामरव्यग्रपाणिना कुब्जकिरातबधिरवामनवर्षवरकलमूकानुवीतेन परिजनेन सर्वतः संरुद्धे द्वारदेशे कथमप्यवाप्तनिर्गमः

बढ़कर बान्धव मेरा और कौन होगा? प्रशान्त आकारसम्पन्न कपिंजलके मुखसे स्वप्नमें भी भला असत्य वचन कैसे निकल सकते हैं? ऐसी परिस्थितिमें क्या करना और क्या कहना चाहिये।' मैं ऐसा सोच ही रही थी कि इतनेमें घबड़ायी हुई प्रतिहारी दौड़ी-दौड़ी आयी और कहने लगी—'भर्तृदारिके! परिजनों द्वारा आपके अस्वास्थ्यका हाल सुनकर महारानी आपको देखने आ रही हैं।' यह सुनकर भारी भीड़-भाड़की संभावनासे भयभीत होकर कपिञ्जल उठ खड़ा हुआ और कहने लगा—'राजपुत्रि! बहुत देर हो गयी। त्रिभुवनके चूडामणि और दिवस करनेवाले सूर्यनारायण अब अस्त हो रहे हैं। अब मैं जा रहा हूँ। किन्तु जाते-जाते हाथ जोड़कर यही विनती करता हूँ कि मेरे प्रिय मित्रकी प्राणरक्षारूपिणी दक्षिणा मुझको अवश्य दीजिएगा। हाथ जोड़नेके सिवाय और मैं कर ही क्या सकता हूँ। यही मेरा सबसे बड़ा धन है।' ऐसा कह और उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही किसी तरह द्वारसे निकलकर चला गया। यद्यपि उस समय हाथमें सोनेकी छड़ी लेकर माताजीके आगे-आगे चलनेवाली प्रतीहारियोंसे, ताम्बूल, पुष्प, पटवास तथा अंगराग लेकर चलनेवाले कंचुकियोंसे और कुबड़ों, बहरों, वामनों, नपुंसकों एवं कलमूक जनोंके आगे-आगे हाथमें चमर लेकर चलनेवाले परिजनोंसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रययौ। अम्बा तु मत्समीपमागत्य सुचिरं स्थित्वा स्वभवनमयासीत्। तया तु तत्रागत्य किं कृतं किमभिहितं किमाचेष्टितमिति शून्यहृदया सर्वं नालक्षयम। गतायां च तस्यामस्तमुपगते भगवति हारीतहरितवाजिनि सरोजिनीजीवितेश्वरे चक्रवाकगृहृदि सवितरि, लोहितायमाने पश्चिमाशामुखे, हरितायमानेषु कमलवनेषु, निलायमाने पूर्वदिग्भागे, पातालपङ्ककलुषेण महाप्रलयजलधिपयःपूरेणेव तिमिरेणावष्टभ्यमाने जीवलोके किंकर्तव्यताविमूढा तामेव तरलिकामपृच्छम्—'अयि तरलिके, कथं न पश्यसि दृढमाकुलं मे हृदयम्। अप्रतिपत्तिविह्वलानि चेन्द्रियाणि। न स्वयमणवपि कर्तव्यमलमस्मिन्ज्ञातुम्। उपदिशतु मे भवती यदत्र सांप्रतमयमेवं त्वत्समक्षमेवाभिधाय गतः कपिञ्जलः। यदि तावदितरकन्यकेव विहाय लज्जाम्, उत्सृज्य धैर्यम्, अवमुच्य विनयम्, अचिन्तयित्वा जनापवादम्, अतिक्रम्य सदाचारम्, उल्लङ्घ्य शीलम्,

---

वह द्वार सर्वथा अवरुद्ध था। तदनन्तर माताजी मेरे पास आयीं और बड़ी देरतक बैठकर अपने महलोंको लौट गयीं। उन्होंने मेरे पास आकर क्या किया, क्या कहा और कौन-सी चेष्टायें कीं, शून्य हृदय होनेके कारण मैं यह कुछ भी नहीं देख सकी। माताजीके चले जानेपर जब हारीत पक्षी सदृश हरे घोड़ोंवाले, कमलिनीके प्राणेश्वर और चकवा-चकवीके मित्र भगवान् भास्कर अस्त हो गये। जब पश्चिम दिशाका मुख लाल हो गया। अन्धकारके कारण जब कमलवन हरे दीखने लगे। पूर्वदिशामें नीलिमा छा गयी। जब सभी जीवलोकमें पातालपंककी भाँति तथा महाप्रलयकालीन समुद्रके जलप्रवाहकी तरह अन्धकार फैलने लगा। तब 'क्या करना चाहिए' यह निर्णय करनेमें असमर्थ होकर मैंने तरलिकासे कहा—'अरी तरलिके! तू मेरे हृदयकी व्याकुलताको क्यों नहीं देखती? कोई निश्चय न कर सकनेके कारण मेरी इन्द्रियाँ विकल हो रही हैं। इस विषयमें स्वयं मैं तनिक भी नहीं सोच पाती कि क्या करना चाहिए। अतएव जो उचित हो सो बता। तेरे सामने ही कपिंजल सब बातें बता गया है। यदि मैं साधारण लड़कियोंकी तरह लज्जा त्याग, धैर्य छोड़, विनयको ठुकरा, लोकहँसाईसे मुँह मोड़, सदाचारको ठोकर मार और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अवगणय्य कुलम्, अङ्गीकृत्यायशो रागान्धवृत्तिः, अननुज्ञाता पित्रा, अननुमोदिता मात्रा, स्वयमुपगम्य ग्राहयामि पाणिम्। एवं गुरुजनातिक्रमादधर्मो महान्। अथ धर्मानुरोधादितरपक्षावलम्बनद्वारेण मृत्युमङ्गीकरोम्येवमपि प्रथमं तावत्स्वयमागतस्य प्रथमप्रणयिनस्तत्रभवतः कपिञ्जलस्य प्रणयप्रसरभङ्गः। पुनरपरं यदि कदाचित्तस्य जनस्य मत्कृतादाशाभङ्गात्प्राणविपत्तिरुपजायते, तदपि मुनिजनवधजनितं महदेनो भवेत्' इत्येवमुच्चारयन्त्यामेव मयि चन्द्रोदयजन्मना विरलविरलेनालोकेन वसन्तवनराजिरिव कुसुमरजसा धूसरतां वासवी दिगयासीत्।

ततः शशिकेसरिविदार्यमाणतमःकरिकुम्भसंभवेन मुक्ताफलक्षोदेनेव धवलतामुपनीयमानम्, उदयगिरिसिद्धसुन्दरीकुचच्युतेन चन्दनचूर्णराशिनेव पाण्डुरीक्रियमाणम्' चलितजलधिजलकल्लोलानिलोल्लासितेन वेलापुलिनसिकतोद्गमेनेव पाण्डुतामापद्यमानं पश्चिमेतरमिन्दु-

---

शीलको लाँघकर कुलकी अवहेलना करती हुई अपयश अंगीकार करके प्रेमसे अन्धी बनकर पिताजीकी आज्ञा तथा माताजीका अनुमोदन प्राप्त किये बिना स्वतः जाकर पाणिग्रहण करा लूँ तो गुरुजनोंका तिरस्कार होनेसे बहुत बड़ा अधर्म हो जायगा। और यदि धर्मका आग्रह करके वहाँ न जाकर यहीं प्राण त्याग दूँ तो ऐसा करनेसे एक तो स्वयं आये हुए तथा पहली बार प्रार्थना करनेवाले आदरणीय कपिंजलका प्रेम भंग होगा। दूसरे यदि कदाचित् मेरी ही दी हुई आशा भंग हो जानेसे पुंडरीकके प्राणोंपर संकट आ गया तो मुझे एक मुनिकी हत्याका महापाप लगेगा।' मैं ऐसा कह ही रही थी कि इतनेमें पुष्परजसे आच्छादित वसन्त ऋतुकी वनश्रेणीके समान चन्द्रोदयके तनिक-तनिक आलोकसे पूर्वदिशा धुँधली होने लग गयी।

तदनन्तर चन्द्रदेवके प्रकाशसे पूर्वदिशा चन्द्रमारूपी सिंहके किरणरूपी नखोंसे विदीर्ण अन्धकाररूपी हाथीके गंडस्थलसे निकले मोतीके चूर्णसे जैसे धवलवर्णकी हो गयी। उदयगिरिनिवासिनी सिद्धसुन्दरियोंके स्तनोंसे छूटे चन्दनचूर्णकी राशिसे वह दिशा जैसे श्वेत हो गयी। क्षुब्ध समुद्रके जलकी तरंगोंको कम्पित करनेवाली वायु द्वारा उड़ायी हुई समुद्रतटवर्ती रेतके ऊपर ऊठनेसे पूर्व दिशा शुभ्र दीखने लगी। क्योंकि चन्द्रमा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धाम्ना दिगन्तरमदृश्यत। शनैः शनैश्चन्द्रदर्शनान्मन्दमन्दस्मिताया दशनप्रभेव ज्योत्स्ना निष्पतन्ती निशाया मुखशोभामकरोत्। तदनु रसातलादवनीमवदीर्योद्गच्छता शेषफणामण्डलेनेव रजनीकरबिम्बेनाराजत रजनी। क्रमेण च सकलजीवलोकानन्दकेन कामिनीजनवल्लभेन किंचिदुन्मुक्तबालभावेन मकरध्वजबन्धुभूतेन समुपारूढरागेण सुरतोत्सवोपभोगैकयोग्येनामृतमयेन यौवनेनेवारोहता शशिना रमणीयतामनीयत यामिनी। अथ तं प्रत्यासन्नसमुद्रविद्रुमप्रभापाटलितमिव, उदयगिरिसिंहकरतलाहतहरिणशोणितशोणीकृतमिव, रतिकलहकुपितरोहिणीचरणालक्तकरसलाञ्छितमिवाभिनवोदयरागलोहितं रजनीकरमुदितं विलोक्यान्तर्ज्वलितमदनानलाप्यन्धकारितहृदया तरलिकोत्संगविधृतशरीरापि मन्मथहस्तवर्तिनी चन्द्रगतनयनापि मृत्युमालोकयन्ती तत्क्षणमचिन्तयम्—'एकत्र खलु मधुमासकाममलयमारुतप्रभृतयः समस्ताः, एकत्र चायं पापकारी चन्द्रहतको न शक्यते सोढुम्। इदमतिदुर्विषहं

धीरे-धीरे उठ रहा था। अतएव उसकी चाँदनी मन्द-मन्द मुसकानेवाली निशासुन्दरीकी दन्तप्रभा बनकर उसका मुख सुशोभित कर रही थी। तत्पश्चात् पृथिवीको फाड़कर रसातलसे बाहर निकलनेवाले शेषनागके फणमण्डलकी भाँति चन्द्रबिम्बसे रात्रि जगमगा उठी। प्राणिमात्रके आनन्ददाता, कामिनियोंके वल्लभ, कामदेवके मित्र, राग (लाली या अनुराग) से युक्त, एकमात्र सुरतोपभोगके योग्य और अमृतमय चन्द्रदेव क्रमशः बालभाव त्यागकर यौवनकी ओर अग्रसर हुए। जिससे रात बड़ी रमणीक लगने लगी। उसके बाद समीपवर्ती समुद्रस्थित विद्रुम (मूँगे) की दीप्तिसे गुलाबी, उदयाचलनिवासी किसी सिंहके करतलसे घायल अपने मृगके रुधिरसे लाल, रतिकलहसे कुपित रोहिणीके पाँवोंकी महावरसे मानो रंगे हुए और नूतन उदयकालीन रागसे रक्तवर्ण चन्द्रमाको उदित देखकर कामाग्निके भीतर ही भीतर जलते रहनेपर भी अन्धकारयुक्त हृदयवाली मैं ताम्बूलवाहिनी तरलिकाकी गोदमें इस शरीरके रहनेपर भी वस्तुतः कामदेवके हाथों पड़ी और चन्द्रमाकी ओर दृष्टि रहनेपर भी मृत्युको देखती हुई सोचने लगी—'एक तरफ कामदेव, चैत्रमास, मलयवायु आदि और दूसरी तरफ यह पापी तथा हत्यारा चन्द्रमा असह्य हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मे हृदयम्। अस्य चोद्गमनमिदं सदाहज्वरग्रस्तस्यांगारवर्षः, शीतार्तस्य तुषारपातः, विषविस्फोटमूर्च्छितस्य कृष्णसर्पदंशः, इत्येवं चिन्तयन्त्येव चन्द्रोदयोपनीता कमलवनग्लानिनिद्रेव मूर्च्छा मां निमीलितलोचनामकार्षीत्। अचिरेण च संभ्रान्ततरलिकोपनीताभिश्चन्दनचर्चाभिस्तालवृन्तानिलैश्चोपलब्धसंज्ञा तामेवाकुलाकुलां मूर्तनेत्राधिष्ठितां विषादेन मल्ललाटविधृतस्रवच्चन्द्रकान्तमणिशलाकामविच्छिन्नबाष्पजलधारान्धकारितमुखीं रुदन्तीं तरलिकामपश्यम्। उन्मीलितलोचनां च मां सा कृतपादप्रणामा चन्दनपङ्काद्रेण करयुगलेन बद्धाञ्जलिरवादीत्—'भर्तृदारिके, किं लज्जया गुरुजनापेक्षया वा। प्रसीद। प्रेषय माम्। आनयामि ते हृदयदयितं जनम्। उत्तिष्ठ। स्वयं वा तत्र गम्यताम्। अतः परमसमर्थासि सोढुमिमं प्रबलचन्द्रोदयविजृम्भमाणोत्कलिकाशत-

---

रहा है। मेरा हृदय दुःसह कामपीड़ासे विकल है। इसका उदय मुझे उसी प्रकार दुःख दे रहा है, जैसे किसी दाहज्वरसे ग्रस्त प्राणीपर अंगारकी वर्षा होती हो। किसी शीतसे व्याकुल जीवपर तुषारपात हो रहा हो अथवा किसी जहरीले फोड़ेकी टीससे मूर्छित व्यक्तिको काला नाग डस ले।' जब मैं इन बातोंको सोच रही थी, उसी समय जैसे चन्द्रोदय देखकर कमलवन मुद्रित एवं निद्रित हो जाता है। उसी प्रकार मुझे भी मूर्छा आ गयी और मेरी आँखें मुँद गयीं। किन्तु तनिक ही देर बाद अत्यन्त घबड़ायी हुई तरलिका द्वारा किये गये चन्दनके लेप और पंखेकी हवासे मुझे चेतना आ गयी। तब मैंने देखा तो तरलिका जैसे विषादकी साक्षात् मूर्ति बनी बैठी थी। उस समय वह बहुत ही व्याकुल थी। मेरे माथेपर वह जलस्राव करनेवाली चन्द्रकान्तमणिकी शलाका रक्खे रो रही थी। निरन्तर अश्रुपातसे उसका मुख मलीन हो गया था। मेरे नेत्र खुले देखकर उसने मुझे प्रणाम किया और चंदनरससे गीले दोनों हाथ जोड़कर बोली—'राजपुत्री! अब लज्जा तथा गुरुजनोंके भयसे क्या लाभ? आप प्रसन्न हों और मुझे भेजें, जिससे कि मैं आपके प्राणवल्लभको ले आऊँ। अथवा आप स्वयं उठकर उसके पास चलें। चन्द्रोदय देखकर उमड़ती हुई सैकड़ों तरंगोंवाले समुद्रकी भाँति कामदेवके आवेगको अब आप ज्यादा देरतक नहीं सह सकेंगी।' उसकी यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुदधिमिव मकरचिह्नम्' इत्येवंवादिनीं तामत्रोचम्—'उन्मत्ते, किं मन्मथेन। नन्वयं सर्वविकल्पानपाहरन्, सर्वोपायदर्शनान्युत्सारयन्, अन्तरायानन्तरयन्, सर्वसंदेहानपयन्, सर्वशङ्कास्तिरस्कुर्वन्, लज्जामुन्मूलयन्, स्वयमभिगमनलाघवदोषमावृण्वन्, कालातिपातं परिहरन्, आगत एव मृत्योस्तस्यैव वा सकाशं नेता कुमुदबान्धवः। तदुत्तिष्ठ। यथाकथंचिदनुगमनेन जीविता संभावयामि हृदयदयितमायासकारिणं जनम्' इत्यभिदधाना मदनमूर्च्छास्वेदविह्वलैरङ्गैः कथंचिदवलम्ब्य तामेवोदतिष्ठम्। उच्चलितायाश्च मे दुर्निमित्तनिवेदकमस्पन्दत दक्षिणं लोचनम्। उपजातशङ्का चाचिन्तयम्—'इदमपरं किमप्युपक्षिप्तं दैवेन' इति।

अथ नातिदूरोद्गतेन त्रिभुवनप्रासादमहाप्रणालानुकारिणा सुधासलिलपूरानिव वहता चन्दनरसनिर्झरनिकरानिव क्षरताऽमृतसागरपूरानिवोद्गिरता श्वेतगङ्गाप्रवाहसहस्राणीव वमता चन्द्रमण्डलेन प्लाव्यमाने

बात सुनकर मैंने कहा—'अरी पगली! कामदेवकी बात छोड़। सब विचारोंको दूर करता, सब उपायोंके मार्गको अवरुद्ध करता, सभी बाधाओंको हटाता, सभी आशंकाओंको हेय समझना, लज्जाको नष्ट करता, वहाँ स्वयं जानेके सभी दोषोंको ढँकता, विलम्बको दूर करता और मृत्यु तथा मेरे प्यारेके पास पहुँचानेका उद्योग करता हुआ चन्द्रमा स्वयं आ पहुँचा है। सो अब उठ, जबतक जीवित हूँ, चलकर अपने दुखदायी प्रियतमको जीवित रखनेकी चेष्टा करूँ।' ऐसा कहती हुई कामजनित मूर्छाके वेगवश उमड़े पसीनेसे तर अंगों द्वारा उसी तरलिकाका सहारा लेकर जैसे-तैसे किसी तरह उठी। किन्तु जैसे ही आगे बढ़ी, उसी समय अशुभ परिणामकी सूचना देनेवाली मेरी दाहिनी आँख फड़कने लगी। इससे मेरे मनमें शंका उत्पन्न हो गयी और मैं सोचने लगी कि 'अब दैवने कोई दूसरी विपत्ति खड़ी कर दी।'

तदनन्तर त्रिभुवनरूपी महाप्रासादके महाप्रणाल (परनाला) की तरह जैसे अमृतरूपी जलकी धाराको नीचे बहाते, जैसे चन्दनरसके झरनोंको प्रवाहित करते, जैसे श्वेतगंगाकी सहस्रों धाराओंको उगलते और अमृतमय समुद्रके प्रवाहोंका वमन करते हुए चन्द्रमण्डलने जब अपनी ज्योत्स्ना (चाँदनी)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ज्योत्स्नया भुवनान्तराले, श्वेतद्वीपनिवासमिव सोमलोकदर्शनसुखमिवानुभवति जने, महावराहदंष्ट्रामण्डलनिभेन शशिना क्षीरसागरोदरादिवोद्ध्रियमाणे महीमण्डले, प्रतिभवनमंगनाजनेन विकचकुमुदगन्धैश्चन्दनोदकैरुपह्रियमाणेषु चन्द्रोदयार्घेषु कामिनीप्रहितसुरतदूतीसहस्रसंकुलेषु राजमार्गेषु नीलांशुकरचितावगुण्ठनासु चन्द्रलोकभयचकितासु कमलवनलक्ष्मीष्विव नीलोत्पलप्रभापिहितास्वितस्ततः पलायमानास्वभिसारिकासु, प्रतिकुमुदमाबद्धमधुकरमण्डलासु प्रबुध्यमानासु भवनदीर्घिकाकुमुदिनीषु, स्फुटितकुमुदवनबहलधूलिधवलितोदरे निशानदीपुलिनायमानेऽन्तरिक्षे, चन्द्रोदयानन्दनिर्भरे महोदधाविव रतिरसमय इव उत्सवमय इव विलासमय इव प्रीतिमय इव जीवलोके शशिमणिप्रणालनिर्झरे प्रमोदमुखरमयूररवरम्ये प्रदोषसमये, गृहीतविविधकुसुमताम्बू-

---

में समस्त आकाशको डुबाना आरम्भ कर दिया। जब संसारके सभी प्राणी जैसे श्वेतद्वीपके निवास तथा चंद्रलोकके दर्शनका आनन्द लेने लगे। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे महावराहके दाँतों सदृश श्वेत चन्द्रमा मही (पृथ्वी) मण्डलको क्षीरसागरसे बाहर निकाल रहा है। उस समय घर-घरकी नारियाँ विकसित कुमुदकुसुमसे सुगन्धित तथा चंदनरसमिश्रित जलसे चन्द्रोदयके उपलक्ष्यमें अर्घ्य दे रही थीं। कामिनियों द्वारा भेजी हुई हजारों सुरतदूतियाँ राजमार्गपर आ-जा रही थीं। काले कपड़ेके बने अवगुण्ठनों (बुर्कों) से मुँह ढाँककर अभिसारिकायें जब इधर-उधर दौड़ रही थीं तो उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे चंद्रमाके प्रकाशसे भयभीत होकर नीलकमलकी दीप्तिसे आवृत कमलवनकी लक्ष्मी मुँह ढाँके घूम रही हो। जहाँ प्रत्येक कुमुदपुष्पपर भौंरे मँडरा रहे थे, ऐसे गृहसरोवरकी कुमुदिनियाँ विकसित होने लगी थीं। खिले हुए कुमुदवनसे अत्यधिक रज उड़नेके कारण मध्यभाग उज्ज्वल हो जानेसे आकाशमण्डल निशारूपिणी नदीके तटसरीखा दीख रहा था। सारे संसारके जीव महासागर सदृश चंद्रोदयके आनंदसे विभोर होकर जैसे श्रृंगाररसमय, उत्सवमय, विलासमय एवं प्रीतिमय हो गये थे। चन्द्रकान्तमणिरूपी परनालोंसे जलका झरना बहने लगा था। आनन्दोल्लासवश बोलते हुए मयूरोंके स्वरसे मनोहर रात्रिकाल उपस्थित होनेपर तरह-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लाङ्गरागपटवासचूर्णया तरलिकयाऽनुगम्यमाना तेनैव मूर्च्छानिहितेन किंचिदाश्यानचन्दनललाटिकालग्नधूसराकुलालकेन चन्दनरसचर्चाङ्गरागवेषेणार्द्रेण तथैव च तया कण्ठस्थितयाऽक्षमालया श्रवणशिखरचुम्बिन्या पारिजातमञ्जर्या पद्मरागरत्नरश्मिविनिर्मितेनेव रक्तांशुकेन कृतशिरोऽवगुण्ठना केनचिदात्मीयेनापि परिजनेनानुपलक्ष्यमाणा तस्मात्प्रासादशिखरादवातरम् ।

अवतीर्य च पारिजातकुसुममञ्जरीपरिमलाकृष्टेन रिक्तीकृतोपवनेन कुमुदवनान्यपहाय धावता मधुकरजालेन नीलपटावगुण्ठनविभ्रममिव सम्पादयतानुबध्यमाना प्रमदवनपक्षद्वारेण निर्गत्य तत्समीपमुदचलम् । प्रयान्ती च तरलिकाद्वितीयपरिजनमात्मानमवलोक्याचिन्तयम्—'प्रियतमाभिसरणप्रवृत्तस्य जनस्य किमिव कृत्यं बाह्येन परिजनेन । नन्वेत एव परिजनलीलामुपदर्शयन्ति । तथा हि । समारोपितशरासनासक्तसा-

---

तरहके पुष्प, पान, अंगलेपन द्रव्य, पटवास चूर्ण (पाउडर) लेकर पीछे-पीछे चलनेवाली तरलिकाके साथ मैं अपने प्रासादशिखरसे नीचे उतरी। उस समय मूर्छाकी दशामें लगाये गये लेप कुछ-कुछ सूख चले थे। चन्दनके लेपमें चिपक जानेके कारण मेरे केशकी लटें धूसर वर्ण होकर बिखर गयी थीं । चन्दनरसके लेपनस्वरूप अंगरागसे मेरे सारे वेषविन्यास भींग गये थे। मुनिकुमार पुण्डरीककी अक्षमाला ज्योंकी त्यों अब भी मेरे गलेमें पड़ी हुई थी । उन्होंने मेरे कानमें जो पारिजातमंजरी खोंस दी थी, वह अब तक नहीं उतरी थी। पद्मरागमणिकी किरणों सदृश लाल कपड़ेका बना अवगुण्ठन (बुर्का) मैं ओढ़े थी। मैंने ऐसी रीति अपनायी थी कि जिससे मेरे परिजन भी मुझे न देख सकें ।

प्रासादसे नीचे उतरी तो उस पारिजातमंजरीकी सुगन्धिके लोभी भौंरे सारा उपवन खालीकर तथा कुमुदवन त्यागकर दौड़ आये और जैसे मेरे ऊपर काले कपड़ेका अवगुण्ठन ओढ़ाते हुए मेरे इर्द-गिर्द मँडराने लगे। अब मैं प्रमदवन (जनाने बाग) के पिछवाड़ेवाले द्वारसे बाहर होकर पुण्डरीकके स्थानकी तरफ चल पड़ी। चलते समय परिजनके रूपमें अकेली तरलिकाको देखकर मैंने सोचा—'अपने प्रियतमके पास अभिसारके लिए जानेवाली नारीको किसी अन्य परिजनकी क्या आवश्यकता ? क्योंकि परिजनका काम तो ये ही सब कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यकोऽनुसरति कुसुमायुधः। दूरप्रसारितकरः करमिव कर्षति शशी। प्रस्खलनभयात्पदेपदेऽवलम्बते रागः। लज्जां पृष्ठतः कृत्वा पुरः सहेन्द्रियैर्धावति हृदयम्। निश्चयमारोप्य नयत्युत्कण्ठा' इति। प्रकाशं चावदम्—'अयि तरलिके, अपि नाम मामिवायमिन्दुहतकस्तमपि किरणकचग्रहाकृष्टमभिमुखमानयेत्' इत्येवं वादिनीं च मामसौ विहस्याब्रवीत्—'भर्तृदारिके, मुग्धासि। किमस्य तेन जनेन। अयमात्मनैव तावन्मदनातुर इव भर्तृदारिकायास्तास्ताश्चेष्टाः करोति। तथा हि। प्रतिबिम्बच्छलेन स्वेदसलिलकणिकाञ्चितं चुम्बति कपोलयुगलम्। लावण्यवति पयोधरभारे निपतति प्रस्फुरितकरः। स्पृशति रशनामणीन्। निर्मलनखलग्नमूर्तिः पादयोः पतति। किं चास्य मदनातुरस्येव वपुस्तापाच्छुष्कचन्दनानुलेपपाण्डुतां वहति। मृणालवलयधवलान्करान्धत्ते। प्रतिमाव्याजेन स्फटिकमणिकुट्टिमेषु निपतति। केतकीगर्भकेसरधूलिधूस-

---

देते हैं। जैसे कामदेव स्वयं धनुषपर बाण चढाकर पीछे-पीछे चलता है। चंद्रमा दूर ही से किरणरूपी हाथ फैलाकर आगेकी ओर खींचता है। गिरनेके भयसे बचानेके लिए आसक्ति पग-पगपर सहारा देती रहती है। लज्जाको पीठपीछे छोड़कर इन्द्रियों समेत मन आगे-आगे दौड़ता है और पियामिलनका दृढ निश्चय करके उत्कण्ठा ढकेलती चलती है।' किन्तु प्रकटरूपमें मैंने कहा—'अरी तरलिके! कहीं ऐसा न हो कि यह पापी चन्द्रमा मेरे ही समान उनको भी केश पकड़कर मेरे समक्ष खींच लाये।' मेरे ऐसा कहनेपर तरलिकाने हँसकर कहा—'राजपुत्रि! आपको तो मोहने घेर रक्खा है। इसीलिए उलटी बातें कर रही हैं। अरे, चन्द्रमा तो स्वयं कामातुरकी भाँति आपके सामने तरह-तरहकी चेष्टायें कर रहा है। जैसे कि प्रतिबिम्बके बहाने यह आपके पसीनेकी महीन बूँदोंसे भरे कपोलोंका चुम्बन करता है। लावण्यभरे स्तनोंपर यह काँपती हुई किरणरूपी हाथ रख रहा है। आपकी करधनीमें जड़ी हुई मणियोंको छूता है। आपके निर्मल नखोंमें प्रतिबिम्बित होकर पैरों पड़ता है। किसी कामातुर प्राणीके समान इसकी देह इतनी पीली पड़ गयी है कि जैसे कामदेवके सन्तापसे संतप्त इसके शरीरपर शुष्क चन्दनका लेप किया गया हो। यह मृणालवलयके समान श्वेत किरणोंको धारण किये हुए है। प्रतिबिम्बके बहाने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रपादः कुमुदसरांस्यवगाहते । सलिलसौकरार्द्रान्शशिमणीन्करैरामृशति द्वेष्टि विघटितचक्रवाकमिथुनानि कमलवनानि । एतैश्चान्यैश्च तत्कालोचितैरालपैस्तया सह तमुद्देशमभ्युपागमम् । तत्र च मार्गलताकुसुमरजोधूसरं चरणयुगलं कैलासतटाच्चन्द्रोदयप्रस्रुतचन्द्रकान्तमणिप्रस्रवणे क्षालयन्ती यस्मिन्प्रदेशे स आस्ते तस्मिन्नेव चास्य सरसः पश्चिमे तटे पुरुषस्येव रुदितध्वनिं विप्रकर्षान्नातिव्यक्तमुपालक्षयम् । दक्षिणेक्षणस्फुरणेन च प्रथममेव विषण्णेनान्तरात्मना 'तरलिके, किमिदम् ?' इति सभयमभिदधाना वेपमानगात्रयष्टिरभिमुखमतित्वरितमगच्छम् ।

अथ निशीथप्रभावाद्दूरादेव विभाव्यमानस्वरमुन्मुक्तार्तनादम् 'हा

यह स्फटिकमणिके चबूतरोंपर गिरता है । केवड़ेके फूलके भीतरी रजकी भाँति धूसर किरणोंके रूपमें यह कुमुदभरे सरोवरमें स्नान करता है । जलकणोंके संस्पर्शसे आर्द्र चन्द्रकान्तिमणिको यह अपने किरणरूपी हाथोंसे छू रहा है । जहाँ चकवा-चकवीका जोड़ा बिछुड़ गया है, उन कमलवनोंसे यह कुढ़ रहा है ।' ऐसी-ऐसी बहुतेरी समयोपयोगी बातें करती-करती मैं उसके साथ चलकर उस प्रदेशमें जा पहुँची । वहाँपर कैलासकी तलैटीमें विद्यमान चन्द्रकान्तमणियोंपर शशिकिरणें पड़नेसे पसीज-पसीजकर गिरते हुए झरनोंमें पथपर चलते समय लगी लताओं-पुष्पोंकी धूलिसे धुँधले पड़े हुए अपने पाँवको जब मैं धो रही थी । उसी समय जहाँ कि वह मुनिकुमार था, उसी ओरसे इस अच्छोद-सरोवरके पश्चिमी तटपर दूर होनेके कारण कुछ-कुछ अस्पष्टरूपमें किसीपुरुष के रोदनकी ध्वनि मेरे कानमें पड़ी । दाहिनी आँख फड़कनेके कारण पहले ही मेरे मनमें शंका हो गयी थी, किन्तु उस रोदनकी ध्वनि सुनकर तो जैसे मेरा हृदय ही विदीर्ण हो गया । कोई अनिष्ट सूचित करता हुआ मेरा अन्तःकरण भीतरसे खिन्न हो उठा । उसी दशामें मैं चिल्ला पड़ी—'तरलिके ! यह क्या हुआ !' भयपूर्वक यह कहकर मैं जल्दी-जल्दी पग बढ़ाती हुई उधर ही चल पड़ी । किन्तु मेरा सारा शरीर काँप रहा था ।

आधी रातके समय सन्नाटा होनेके कारण दूरसे ही मैंने उस स्वरको पहचान लिया । वह और कोई नहीं, कपिञ्जल करुण क्रन्दन करके जोर-जोरसे रुदन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हतोऽस्मि । हा दग्धोऽस्मि । हा किमिदमापततिम् । किं वृत्तम् । उत्सन्नोऽस्मि। दुरात्मन्मदनपिशाच पाप निर्घृण ! किमिदमकृत्यमनुष्ठितम्। आः पापे दुष्कृतकारिणि दुर्विनीते महाश्वते ! किमनेन तेऽपकृतम् । आः पाप दुश्चरित चन्द्र चाण्डाल ! कृतार्थोऽसि । इदानीमपगतदाक्षिण्य दक्षिणानिलहतक ! पूर्णास्ते मनोरथाः । कृतं यत्कर्तव्यम्। वहेदानीं यथेष्टम् । हा भगवन् श्वेतकेतो पुत्रवत्सल ! न वेत्सि मुषितमात्मानम् । हा धर्म ! निष्परिग्रहोऽसि । हा तपः ! निराश्रयमसि । हा सरस्वति ! विधवासि । हा सत्य ! अनाथमसि । हा सुरलोक ! शून्योऽसि । सखे ! प्रतिपालय माम् । अहमपि भवन्तमनुयास्यामि । न शक्नोमि भवन्तं विना क्षणमप्यवस्थातुमेकाकी । कथमपरिचित इवादृष्टपूर्व इवाद्य मामकपदे उत्सृज्य प्रयासि । कुतस्तवेयमतिनिष्ठुरता । कथय त्वदृते क्व गच्छामि । कं याचे । कं शरणमुपैमि । अन्धोऽस्मि संवृत्तः । शून्या मे दिशो जाताः ।

करता हुआ कह रहा था—'हाय, मैं मारा गया । हाय, मैं जलकर भस्म हो गया। हाय, मैं बुरी तरह ठगा गया । हाय, यह कैसी विपत्ति आ पड़ी ? क्या हो गया ? मैं उजड़ गया । अरे दुरात्मा, पापी और निर्दयी मदनपिशाच ! तूने यह कैसा कुकर्म कर डाला ? अरी पापिनी, दुराचारिणी और दुर्विनीते महाश्वेते ! इस गरीबने तेरा क्या बिगाड़ा था ? अरे ओ पापी, दुष्ट और चाण्डाल चन्द्रमा ! अब तेरी इच्छा पूरी हो गयी ? अरे क्रूर और हत्यारे दक्षिण पवन ! तेरे मनोरथ पूर्ण हो गये । तूने जो चाहा सो किया । अब तू अपनी इच्छाके अनुसार बह । हाय पुत्रवत्सल भगवन् श्वेतकेतो ! आपको नहीं पता है कि आप लुट गये हैं । हा धर्म ! अब तुझे कोई नहीं अपनायेगा। हा तप ! अब तुम निराश्रय हो गये । हाय सरस्वती देवी ! अब तुम विधवा हो गयीं। हाय सत्य ! अब तुम अनाथ हो गये। हाय देवलोक ! अब तुम सूने हो गये । मित्र ! तनिक देर प्रतीक्षा करो, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा । तुम्हारे बिना अकेला मैं क्षणभर भी नहीं रह सकता । तुम मुझे क्यों एक अपरिचित तथा अदृष्टपूर्वके समान सर्वथा छोड़कर चले जा रहे हो ? तुममें ऐसी निष्ठुरता कहाँसे आ गयी ? तनिक बताओ तो सही, तुम्हारे बिना मैं अकेला कहाँ जाऊँ ? किससे माँगूँ ? किसकी शरणमें जाऊँ ? मैं तो अन्धा हो गया ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निरर्थकं जीवितम्, अप्रयोजनं तपः, निःसुखाश्च लोकाः। केन सह परिभ्रमामि। कमालपामि। केन वार्तां करोमि। उत्तिष्ठ त्वम्। देहि मे प्रतिवचनम्। क्व तन्ममोपरि सुहृत्प्रेम। क्व सा स्मितपूर्वाभिभाषिता च' इत्येतानि चान्यानि च विलपन्तं कपिञ्जलमश्रौषम्।

तच्च श्रुत्वा पतितैरिव प्राणैर्दूरादेव मुक्तैकताराक्रन्दा, सरस्तीरलतासक्तित्रुट्यमानांशुकोत्तरीया, यथाशक्तित्वरितैरज्ञातसमविषमभूमिभागविन्यस्तैः पादप्रक्षेपैः प्रस्खलन्ती पदे पदे, केनाप्युत्क्षिप्य नीयमानेव तं प्रदेशं गत्वा सरस्तीरसमीपवर्तिनि शिशिरशीकरासारस्राविणि शशिमणिशिलातले विरचितं कुमुदकुवलयकमलविविधवनकुसुमसुकुमारमालामयमिव मृणालमयम्, कुसुमशरसायकमयमिव शयनमधिशयानम्, अतिनिष्पन्दतया मत्पदशब्दमिवाकर्णयन्तम्, अन्तःक्रोधशमितमदन-

---

मेरे लिए सभी दिशायें सूनी हो गयीं। मेरी जिन्दगी अकारथ हो गयी। मेरी तपस्या प्रयोजनशून्य हो गयी। मेरे लिए सब लोक सुखहीन हो गये। अब मैं किसके साथ घूमूँ ? किससे वार्तालाप करूँ ? अब तुम उठो और मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो। मेरे प्रति तुम्हारा मित्रप्रेम कहाँ चला गया ? मुसका-मुसकाकर बातें करनेकी तुम्हारी निजी शैली कहाँ चली गयी ?' इस प्रकार विविध प्रकारकी बातें कह-कहकर कपिंजल रुदन कर रहा था।

उसका यह करुण रोदन सुनकर तो जैसे मेरे प्राण ही निकल गये और दूरसे ही मैं बड़ी जोरसे घिघियाकर रोने लगी। सरोवरतटवर्तिनी लताओंमें उलझ-उलझकर मेरी ओढ़नीके किनारे फट गये। अपनी शक्ति भर तेजीसे दौड़नेके कारण ऊँची-नीची भूमिका ज्ञान नहीं रह गया था, अतएव पैर इधर-उधर पड़नेसे मैं पग-पगपर ठोकर खाकर गिर पड़ती थी। फिर भी जैसे किसीने गोदमें उठाकर मुझे पहुँचा दिया हो, इस प्रकार मैं उस स्थानपर जा पहुँची। वहाँ इसी अच्छोद सरोवरके एक किनारे ठंढे जलकण निकालते चन्द्रकान्तमणिके एक शिलातलपर बिछे कुमुद, कुवलय, कमल तथा अन्यान्य वनैले सुकुमार पुष्पोंकी कोमल मालाओंसे निर्मित, मृणालमय और जैसे साक्षात् कामदेवके बाणोंसे ही बनायी हुई शय्यापर पड़े और तत्काल मरे हुए महात्मा पुण्डरीकको मुझ पापिनी तथा अभागिनीने देखा। उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संतापतया तत्क्षणलब्धसुखप्रसुप्तमिव मुनिक्षोभप्रायश्चित्तप्राणायामावस्थितमिवातिप्रस्फुरितप्रभेण त्वत्कृते ममेयमवस्थेति कथयन्तमिवाधरेण, इन्दुद्वेषिपरिवर्तितदेहतया पृष्ठभागनिपतितैर्मदनदहनविह्वलहृदयन्यस्तहस्तनखमयूखच्छलेन छिद्रितमिव शशिकिरणैः, तच्छुष्कपाण्डुरया स्वविनाशोत्पातोत्पन्नया मदनचन्द्रकलयेव चन्दनलेखिकया रचितललाटिकम्, ईषदालक्ष्यपरिवृत्ततारकेणानवरतरोदनताम्रेण प्राणोत्सर्गोपजाताश्रुक्षयतया रुधिरमिव क्षरता मदनशरशल्यवेदनाकूणितत्रिभागेन नातिनिमीलितेन लोचनयुगलेन 'मत्तोऽतिप्रियतरस्तवापरो जनो जातः' इति कुपितेनेव जीवितेन परित्यक्तम्, मन्मथव्यथया सहैतानसूस्वयमिवोत्सृज्य निश्चेतनासुखमनुभवन्तम्, अनङ्गयोगविद्यामिव ध्यायन्तम्,

---

जैसे पूर्ण निश्चलभावसे वह मेरे पाँवोंकी आहट ले रहा हो। अन्तःकरणके क्रोधसे जैसे उसका सारा कामजनित सन्ताप दूर हो गया। अतएव वह बड़े सुखसे सो रहा हो। 'मुझ जैसे मुनिको क्षोभ न करना चाहिए' यह सोचकर जैसे प्रायश्चित्त करता हुआ प्राणायाम कर रहा हो। अपने चमकते हुए अधरोंसे जैसे मुझसे कह रहा हो कि 'तुम्हारे ही कारण मेरी यह दशा हुई है।' चन्द्रमासे जैसे द्वेष करता हुआ मुँह फेरकर सोया हो। उस समय उसकी पीठपर चन्द्रमाकी जो किरणें पड़ रही थीं, उन्होंने कामाग्निसे विह्वल हृदयपर रक्खे हाथके नखकिरणोंकी आकृतिमें जैसे छिद्र कर दिये थे। उसके मस्तकपर शुष्क तथा श्वेत रंगकी चन्दनरेखा विद्यमान थी, जो अपने ही विनाशके लिए उत्पन्न उत्पातस्वरूप मदनचक्रकी कला सरीखी दीख रही थी। जिसकी पुतलियाँ टेढ़ी और निरन्तर रोदन करनेके कारण लाल हो गयी थीं। प्राण निकल जानेसे जिनका आँसू सूख गया था, अतएव वे आँखें जैसे रुधिर वमन कर रही थीं। कामबाण लगनेसे जिनका तिहाई भाग तीखा हो गया था। ऐसे अधमुँदे नेत्रोंसे जैसे वह तरेर कर कह रहा था कि 'मेरी अपेक्षा अधिक प्रिय तेरे लिए कोई अन्य प्राणी उत्पन्न हो गया है' इस भावनासे ही कुपित होकर जैसे प्राणोंने उसे छोड़ दिया था। कामवेदनाके साथ-साथ जैसे प्राणोंको भी स्वतः त्यागकर वह निश्चेनताका आनन्द ले रहा था। जैसे वह कामशास्त्रका मनन कर रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपूर्वप्राणायाममिवाभ्यस्यन्तम्, उपपादितास्मदागमनेन प्रणयादिवापहृतप्राणपूर्णपात्रमनङ्गेन रचितचन्दनललाटिकात्रिपुण्ड्रकम्, धृतसरसबिसमूत्रयज्ञोपवीतम्, अंसावसक्तकदलीगर्भपत्रचारुचीरम्, एकावलीविशालाक्षमालम्, अविरलामलकर्पूरक्षोदभस्मधवलम्, आबद्धमृणालरक्षाप्रतिसरमनोहरम्, मनोभवव्रतवेषमास्थाय मत्समागममन्त्रमिव साधयन्तम्, 'भोः कठिनहृदये, दर्शनमात्रकेणापि न पुनरनुगृहीतोऽयमनुगतो जनः' इति सप्रणयं मामुपलभमानमिव चक्षुषा, किंचिद्विवृताधरतया जीवितमपहर्तुमन्तःप्रविष्टैरिवेन्दुकिरणैर्निर्गच्छद्भिर्दशनांशुभिर्धवलितपुरोभागम्, मन्मथव्यथाविघटमानहृदयनिहितेन वामेन पाणिना 'प्रसीद, प्राणैः समं प्राणसमे, न गन्तव्यम्' इति हृदयस्थितां मामिव धारयन्तम्, इतरेण च नखमयूखदन्तुरतया चन्दनमिव स्रवतो-

---

था। एक अनोखे प्रकारका प्रणायाम जैसा साध रहा था। मुझे उसके पास पहुँचाकर कामदेवने जैसे प्रेमपूर्वक दिया हुआ पुरस्कारस्वरूप उसका प्राणरूपी पूर्णपात्र ले लिया था। उसके ललाटपर चन्दनका त्रिपुंड्र लगा हुआ था। वह ताजे और सरस मृणालसूत्रका जनेऊ पहने हुए था। कन्धेपर केलेकी भीतरी छालका बना सुन्दर वस्त्र पड़ा हुआ था। वह एकावलीके समान बहुत बड़ी जपमाला पहने हुए था। निरन्तर कपूरका चूर्ण मले जानेके कारण उसका शरीर उज्ज्वल दीख रहा था। हाथोंमें मृणालनिर्मित रक्षासूत्र बाँधे रहनेसे वह बड़ा सुन्दर लग रहा था। वह जैसे कामव्रतका वेष धारण करके मेरा मिलन प्राप्त करनेके लिए किसी मंत्रकी साधना कर रहा था। 'अरे कठोर-हृदये! अपनेपर अनुरक्त इस प्रेमीको तूने दर्शन तक देनेकी भी कृपा नहीं की!' प्रेमपूर्वक यह कहती हुई उसकी आँखें जैसे मुझे उलाहना दे रही थीं। उसका ऊपरी होंठ कुछ खुला हुआ था, जिससे मालूम होता था कि प्राण लेनेके लिए भीतर घुसी हुई चंद्रमाकी किरणें अब बाहर निकल रही थीं। ऐसी दंत-किरणोंके प्रकाशसे उसका अग्रिम भाग श्वेत हो गया था। कामवेदनासे फटते हुए हृदयपर बायाँ हाथ रखकर हृदयमें बैठी मुझे जैसे यह कहते हुए धारण किये था—'प्राणप्रिये! प्रसन्न होओ। प्राणोंके साथ-साथ तुम भी मुझे छोड़कर मत चली जाना।' उससे विषम नखकिरणें निकलती हुई चंदनस्रावका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्तानीकृतेन चन्द्रातपमिव निवारयन्तम्, अन्तिकस्थितेन चाचिरोद्गत-जीवितमार्गमिवोद्ग्रीवेण विलोकयता तपःसुहृदा कमण्डलुना समुपेतम्, कण्ठाभरणीकृतेन च मृणालवलयेन रजनीकरकिरणपाशेनेव संयम्य लोकान्तरं नीयमानम्, कपिञ्जलेन मद्दर्शनात् 'अब्रह्मण्यम्' इत्यूर्ध्वहस्तेन द्विगुणीभूतबाष्पोद्गमेनाक्रोशता कण्ठे परिष्वक्तं तत्क्षणविगतजीवितं तमहं पापकारिणी मन्दभाग्या महाभागमद्राक्षम्।

उद्भूतमूर्च्छान्धकारा च पातालतलमिवावतीर्णा तदा क्वाहमगमम्, किमकरवम्, किं व्यपलम्, इति सर्वमेव नाज्ञासिषम्। असवश्च मे तस्मिन्क्षणे किमतिकठिनतयास्य मूढहृदयस्य, किमनेकदुःखसहस्रसहिष्णुतया हतशरीरकस्य, किं विहिततया दीर्घशोकस्य, कि भाजनतया जन्मान्तरोपात्तस्य दुष्कृतस्य, किं दुःखदाननिपुणतया दग्धदैवस्य, किमेकान्तवामतया दुरात्मनो मन्मथहतकस्य केन हेतुना नोद्गच्छन्ति स्म

भ्रम उपस्थित कर रही थीं। उसकी भुजाको उतान करके रक्खा देखकर ज्ञात होता था कि वह चंद्रमाके प्रकाशको अपने ऊपर पड़नेसे रोक रहा था। उसकी तपस्याके समयका मित्र कमण्डल उसके पास ही रक्खा था। जिसे देखनेसे ऐसा लगता था कि वह गर्दन ऊँची करके अभी ही गये हुए अपने मित्रके प्राणोंकी राह देख रहा हो। उसके गलेमें पड़े मृणालवलयसे ऐसा लगता कि जैसे उसे कोई चंद्रमाकी किरणोंके फन्देमें बाँधकर परलोकमें लिये जा रहा हो। मुझे देखते ही कपिञ्जल दोनों हाथ उठाकर 'हाय, बहुत बड़ा अनर्थ हो गया' यों कहता और दूने जोरसे चीखता हुआ उसके तत्काल मृत शरीरसे लिपट गया।

उसकी यह दशा देखकर मुझे तो मूर्छा आ गयी, आँखोंके सामने अँधेरा छा गया और जैसे मैं पातालमें धँस गयी। उसके बाद मैं कहाँ गयी, क्या किया और क्या कहा, यह सब मैं कुछ नहीं जान सकी। उस समय मेरे मूढ़ हृदयकी अथवा हजारों दुःख सहनेकी अभ्यस्त इस शरीरकी कठिनता तथा जन्मान्तरके पापोंका पात्र होनेके कारण अथवा लोगोंको दुःख प्रदान करनेमें परम निपुण पापी दैव अथवा दुष्ट तथा हत्यारे कामदेवकी अत्यन्त प्रतिकूलता या किन्हीं अन्य कारणोंवश क्यों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तदपि न ज्ञातवती। केवलमतिचिराल्लब्धचेतना दुःखभागिनी वह्नाविव पतितमसह्यशोकदह्यमानमात्मानमवनौ विचेष्टमानमपश्यम्। अश्रद्दधानं चासंभावनीयं तत्तस्य मरणमात्मनश्च जीवितमुत्थाय, 'हा, किमिदमुपनतम्' इति मुक्तार्तनादा, 'हा अम्ब, हा तात, हा सख्यः' इति व्याहरन्ती 'हा नाथ जीवितनिबन्धन, आचक्ष्व। क्व मामेकाकिनीमशरणामकरुणं विमुच्य यासि। पृच्छ तरलिकां त्वत्कृते मया याऽनुभूतावस्था। युगसहस्रायमाणः कृच्छ्रेण नीतो दिवसः। प्रसीद। सकृदप्यालप। दर्शय भक्तवत्सलताम्। ईषदपि विलोकय। पूरय मे मनोरथम्। आर्तास्मि। भक्तास्मि। अनुरक्तास्मि। अनाथास्मि। बालास्मि। अगतिकास्मि। दुःखितास्मि। अनन्यशरणास्मि। मदनपरिभूतास्मि। किमिति न करोषि दयाम्। कथय किमपराद्धम्, किं वा नानुष्ठितं मया, कस्यां वा नाज्ञायामादृतम्, कस्मिन्वा त्वदनुकूले नाभिरतम्, येन कुपितोऽसि।

मेरे प्राण नहीं निकल गये, यह भेद भी मैं नहीं जान सकी। बहुत देर बाद जब मुझे होश आया, तब मैंने केवल इतना देखा कि जैसे मैं अग्निमें गिरी पड़ी हूँ, असह्य शोकसे झुलस रही हूँ और अपार दुःखमें पड़कर छटपटा रही हूँ। उसकी इस अविश्वसनीय और असंभव मृत्युको तथा अपने व्यर्थ जीवनको देखकर मैं उठ खड़ी हुई और बड़े ही करुणापूर्ण स्वरमें चीखकर कहने लगी— 'हाय-हाय यह क्या हो गया। हाय माताजी, हाय पिताजी, हाय सखियों, यह कहती 'हा नाथ! हाय मेरे जीवनस्वामी! ऐसे निष्ठुर बन और मुझे अकेली छोड़कर तुम कहाँ जा रहे हो? तनिक इस तरलिकासे पूछो कि तुम्हारे लिए मैंने किन-किन विपत्तियोंका सामना किया है। हजार युगोंके समान लम्बा यह दिन मैंने कैसी कठिनाईसे काटा है। मुझपर प्रसन्न होकर एक बार तो कुछ बोलो। अपनी भक्तवत्सलता प्रकट करो। तनिक देखो तो सही। मेरी कामना पूर्ण करो। मैं बड़ी दुखिया हूँ। तुम्हारी भक्त हूँ। तुमपर आसक्त हूँ। अनाथ हूँ। निरी बच्ची हूँ। मेरे लिए अब कोई गति नहीं है। मैं बड़े दुःखमें पड़ गयी हूँ। मेरा कोई भी शरणदाता नहीं है। कामदेवने मुझे कुचल डाला है। ऐसी दशामें भी तुम मुझपर दया क्यों नहीं करते? बताओ तो सही, मैंने क्या कसूर किया है? मैंने तुम्हारे लिए क्या नहीं किया? तुम्हारी किस आज्ञाकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दासीजनमकारणात्परित्यज्य व्रजन्न बिभेषि कौलीनात्। अलीकानुरागविप्रतारणकुशलया किं वा मया वामया पापया। आः, अहमद्यापि प्राणिमि। हा, हतास्मि मन्दभागिनी। कथं मे न त्वं, न तातः, न विनयः, न बन्धुवर्गः, न परलोकः। धिङ्मां दुष्कृतकारिणीम्, यस्याः कृते तवेयमीदृशी दशा वर्तते। नास्ति मत्सदृशी नृशंसहृदया, याहमेवंविधं भवन्तमुत्सृज्य गृहं गतवती। किं मे गृहेण, किमम्बया, किं वा तातेन, किं बन्धुभिः, किं परिजनेन। हा, कमुपयामि शरणम्। मयि दैव, दर्शय दयाम्। विज्ञापयामि त्वाम्। देहि दयितदक्षिणां भगवति भवितव्यते। कुरु कृपाम्। पाहि वनितामनाथाम्। भगवत्यो वनदेवताः, प्रसीदत। प्रयच्छतास्य प्राणान्। अव वसुंधरे, सकललोकानुग्रहजननि। रजनि, नानुकम्पसे। तात कैलास, शरणागतास्मि ते। दर्शय दयालुताम्' इत्येतानि चान्यानि च व्याक्रोशन्ती, कियद्वा स्मरामि, ग्रहगृहीतेवाविष्टेवो-

---

अवहेलना की है? मैंने तुम्हारे अनुकूल कौनसा कार्य नहीं किया है कि जिससे रूठ गये हो? बिना किसी कारण अपनी दासीको छोड़कर जानेमें तुम्हें लोकापवादका भी भय नहीं होता? हाँ, झूठा प्रेम दिखाकर ठगहारी करनेमें निपुण एवं कुटिल मुझ जैसी कन्याको साथ लेकर तुम क्या करोगे? ओह! मैं अब भी जीवित हूँ। हाय, मैं मन्दभागिनी मारी गयी। जब तुम नहीं रहे तो न पिता रहे, न विनय रह गया, न स्वजन रह गये और न परलोक ही रह गया। मुझ पापिनीको धिक्कार है, जिसके कारण तुम्हारी ऐसी गति हुई। मेरे सदृश क्रूरहृदया नारी और कोई भी नहीं होगी। क्योंकि मैं तुम्हें छोड़कर अपने घर चली गयी थी। अब मुझे घरसे, मातासे, पितासे, बन्धुजनोंसे और परिजनोंसे क्या मतलब? हाय, अब मैं किसकी शरणमें जाऊँ? दैव! मुझपर दया कर। मैं प्रार्थना करती हूँ। भगवति भवितव्यते! मेरे प्रियतमको जीवित करके मुझे दक्षिणाके रूपमें दे दो। मेरे ऊपर कृपा करो। मुझ अनाथ नारीकी रक्षा करो। हे भगवती वनदेवियों! मुझपर प्रसन्न होकर मेरे प्राणनाथके प्राण लौटा दो। सब प्राणियोंपर कृपा करनेवाली पृथिवी माता! मेरी रक्षा करो। हे देवि रजनी! तुम क्यों नहीं कृपा करतीं? हे पिता कैलास! मैं तुम्हारी शरणागत हूँ। अपनी दयालुता प्रकट करो।' इस प्रकार बहुतेरी बातें कह-कहकर इतनी रोती-चिल्लाती और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्मत्तेव भूतोपहतेव व्यलपम्। उपर्युपरि पतितनयनजलधारानिकरच्छलेन विलीयमानेव, द्रवतामिव नीयमाना, जलाकारेणेवात्मीक्रियमाणा, प्रलापाक्षरैरपि दशनमयूखशिखानुगततया साश्रुधारैरिव निष्पतद्भिः शिरोरुहैरप्यविरलविगलत्कुसुमतया मुक्तबाष्पजलबिन्दुभिरिवाभरणैरपि प्रसूतविमलमणिकिरणाश्रुतया प्ररुदितैरिवोपेता, तज्जीवितायेवात्ममरणाय स्पृहयन्ती, मृतस्यापि सर्वात्मना हृदयं प्रवेष्टुमिवेच्छन्ती, करतलेन कपोलयोराश्यानचन्दनश्वेतजटामूले च ललाटे निहितसरसबिसयोश्चांसयोर्मलयजरसलवलुलितकमलिनीपलाशावगुण्ठिते च हृदये स्पृशन्ती, 'पुण्डरीक, निष्ठुरोऽसि। एवमप्यार्तां न गणयसि माम्' इत्युपालभमाना मुहुरेनमन्वनयम्, मुहुः पर्यचुम्बम्, मुहुर्मुहुः कण्ठे गृहीत्वा व्याक्रोशम्। 'आः पापे, त्वयापि मत्प्रत्यागमनकालं यावदस्यासवो न

घिघियाती रही कि उनको मैं कहाँ तक स्मरण करूँ। उस समय जैसे मुझे किसी ग्रहने धर दबोचा था, जैसे मैं पागल हो गयी थी, जैसे आवेशमें आ गयी थी अथवा जैसे मुझपर भूत सवार हो गया था। निरन्तर गिरती हुई अश्रुधाराके प्रवाहके बहाने मैं जैसे गली जा रही थी, पानी बनी जा रही थी अथवा जलके आकारमें परिणत हुई जा रही थी। उस समय मेरे प्रलापके शब्द भी दन्तकिरणोंकी शिखाका अनुसरण करते हुए निकलते थे। अतएव वे भी आँसूसे भींगे जैसे रहते थे। विलाप करते-करते मेरे बालोंके फूल गिरने लगे, वे केशोंके आँसूकी बूँदोंके सदृश दीखते थे। मेरे अलंकार भी निर्मल किरणरूपी आँसू बरसाते हुए रो रहे थे। अब जैसे उसे जीवित करनेके लिए ही मैं मरना चाह रही थी। मर जानेपर भी सर्वात्मभावसे मैं उसके हृदयमें समा जाना चाहती थी। अतएव मैं अपनी हथेलीसे उसके कपोल, शुष्क चन्दनके लेपसे उज्ज्वल जटामूलयुक्त मस्तक, सरस और ताजे मृणालसे आवृत कन्धे तथा चंदनरससे तर किया हुआ कमलका पत्ता जहाँ रक्खा था, उस हृदयपर हाथ फेरती तथा उलाहना देती हुई कहने लगी—'पुण्डरीक! तुम बड़े निष्ठुर हो। इस प्रकार मुझे आर्त देखकर भी कुछ नहीं ख्याल करते?' तदनन्तर मैं बारम्बार अनुनय करती और उसे चूमती हुई गले लगाकर चीखने लगी। 'अरी पापिनी!

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रक्षिताः' इति तामेकावलीमगर्हयम् । 'अयि भगवन्, प्रसीद । प्रत्युज्जीवयैनम्' इति मुहुः कपिञ्जलस्य पादयोरपतम्, मुहुश्च तरलिकां कण्ठे गृहीत्वा प्रारुदम् । अद्यापि चिन्तयन्ती न जानामि तस्मिन्काले कुतस्तान्यचिन्तितान्यशिक्षितान्यनुपदिष्टान्यदृष्टपूर्वाणि मे हतपुण्यायाः कृपणानि चाटुसहस्राणि प्रादुरभवन्, कुतस्ते संलापाः, कुतस्तान्यतिकरुणानि वैक्लव्यरुदितानि । अन्य एव स प्रकारः । प्रलयोर्मय इवोदतिष्ठन्नन्तर्बाष्पवेगानाम्, जलयन्त्राणीवामुच्यन्ताश्रुप्रवाहाणाम्, प्ररोहा इव निरगच्छन्प्रलापानाम्, शिखरशतानीवावर्धन्त दुःखानाम्, प्रसूतय इवोदपाद्यन्त मूर्च्छानाम्' इत्येवमात्मवृत्तान्तं निवेदयन्त्या एव तस्याः समतिक्रान्तं कथमप्यतिकष्टमवस्थान्तरमनुभवन्त्या इव चेतनां जहार मूर्छा । मूर्छावेगान्निष्पतन्तीं च शिलातले तां ससंभ्रमं प्रसारितकरः परिजन इव जातपीडश्चन्द्रापीडो विधृतवान् । अश्रुजलार्द्रेण च तदीये-

---

मेरे आनेके समयतक भी तूने इसके प्राण नहीं बचाये ?' यों कहकर मैंने उस एकावली (एक लरकी माला) को धिक्कारा । 'हे भगवन् ! मेरे ऊपर प्रसन्न होकर आप इन्हें जीवित कर दें ।' ऐसा कहकर मैं बार-बार कपिंजलके पैरों पड़ने लगी और बार-बार तरलिकाके गलेसे लिपटकर रोयी । भलीभाँति सोचकर भी मैं आजतक यह नहीं जान पायी कि उस समय वे अचिंतित, अशिक्षित, अनुपदिष्ट, अदृष्टपूर्व, हजारों चाटुकारितासे परिपूर्ण तथा दीन वचन मुझ पापिनी मुखसे कैसे निकल गये । वे संलाप और अतिशय करुण रुदन मेरे द्वारा न जाने कैसे हो गये । वह प्रकार ही दूसरा था । उस समय भीतरसे आनेवाले आँसुओंका वेग बढ़ गया और प्रलयकाल सरीखी तरंगें उठने लगीं । तब अश्रुओंका जैसे फोहारा छूट पड़ा । प्रलापोंके जैसे नये-नये अंकुर निकलने लगे । दुःखरूपी पर्वतके सैकड़ों नये-नये शिखर बढ़ने लगे और एकके बाद दूसरी मूर्छाओंकी तो जैसे परम्परा चल पड़ी ।' इस प्रकार अपनी आपबीती सुनाते-सुनाते भूतकालकी बातें स्मरण आ जानेसे जैसे उन्हीं दुःखोंका अनुभव करती हुई महाश्वेताकी चेतनाको मूर्छाने हर लिया । उस मूर्छाके आवेगसे वह शिलातलपर गिर ही रही थी कि इतनेमें शोकाकुल चन्द्रापीडने एक सेवकके समान हड़बड़ीमें जल्दीसे हाथ फैलाकर उसे सम्हाल लिया । तत्पश्चात्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नैवोत्तरीयवल्कलप्रान्तेन शनैःशनैर्वीजयन्संज्ञां ग्राहितवान् । उपजातकारुण्यश्च बाष्पसलिलोत्पीडनेन प्रक्षाल्यमानकपोलो लब्धचेतनामवादीत्—'भगवति, मया पापेन तवायं पुनरभिनवतां नीतः शोकः, येनेदृशी दशामुपनीतासि । तदलमनया कथया । संह्रियतामियम् । अहमप्यसमर्थः श्रोतुम् । अतिक्रान्तान्यपि हि संकीर्त्यमानानि प्रियजनविश्वासवचनान्यनुभवसमां वेदनामुपजनयन्ति सुहृज्जनस्य दुःखानि । तन्नार्हसि कथंकथमपि विधृतानिमानसुलभानसून्पुनः शोकानल इन्धनतामुपनेतुम्' ।

इत्येवमुक्ता दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य बाष्पायमाणलोचना सनिर्वेदमवादीत्— राजपुत्र, या तदा तस्यामतिदारुणायां हतनिशायामेभिरतिनृशंसैरसुभिर्न परित्यक्ता ते मामिदानीं परित्यजन्तीति दूरापेतम् । नूनमपुण्योपहतायाः पापाया मम भगवानन्तकोऽपि परिहरति दर्शनम् । कुतश्च मे कठिनहृदयायाः शोकः । सर्वमिदमलीकमस्य शठहृ-

---

आँसुओंके जलसे भींगे उसीके वल्कलनिर्मित दुपट्टेकी छोरसे धीरे-धीरे पंखा झलकर होशमें लाया । उसकी आत्मकथा सुनकर चन्द्रापीडके भी हृदयमें करुणा उमड़ पड़ी, जिससे उसके कपोलोंको आँसुओंकी धारा धोने लगी। जब महाश्वेता सचेत हो गयी, तब वह बोला—'भगवति ! मुझ पापीने आपके पुराने शोकको उभाड़कर फिर ताजा कर दिया।इसी कारण आपकी यह दशा हो गयी । अब यह करुण कहानी यहीं रोक दें । मैं भी अब अधिक सुननेमें असमर्थ हूँ । मित्रोंके बीते हुए भी दुःख एवं प्रियजनोंके विश्वसनीय वचन दुहरानेसे सद्यः अनुभवकी भाँति ही वेदना उत्पन्न कर दिया करते हैं। अतएव अब आप किसी प्रकार बचाये हुए इन दुर्लभ प्राणोंको फिरसे शोकाग्निका इंधन न बनाइए ।'

उसके ऐसा कहनेपर लम्बी और गरम साँस लेकर डबडबायी आँखोंमें आँसू भरकर महाश्वेता बड़े दुःखके साथ बोली—'राजकुमार ! जब उस महादारुण और अभागिनी रात्रिमें भी मेरे क्रूर प्राण नहीं निकले तो अब वे निकल जायँगे, यह बड़ी दूरकी बात है।सच तो यह है कि भगवान् यमराज भी मुझ पापिनी और अभागिनी मुँह नहीं देखना चाहते।मुझ कठोर हृदयवाली नारीको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दयस्य। सर्वथाहमनेन त्यक्तत्रपेण निरपत्रपाणामग्रसरी कृता। यया चाविष्कृतमदनतया वज्रमय्येवेदमनुभूतम्, तस्याः का गणना कथनं प्रति। किं वा परमतः कष्टतरमाख्येयमन्यद्भविष्यति यन्न शक्यते श्रोतुमाख्यातुं वा केवलमस्य वज्रपातस्यानन्तरमाश्चर्यं यदभूत्तदावेदयामि। आत्मनश्च प्राणधारणकारणलव इवाव्यक्तो यः समुत्पन्नः, तं च कथयामि। यया दुराशामृगतृष्णिकया गृहीताहमिदमुपरतकल्पं परकीयमिव भारभूतमप्रयोजनमकृतज्ञं च हतशरीरं वहामि तदलं श्रूयताम्'। ततश्च तथाभूते तस्मिन्नवस्थान्ते मरणैकनिश्चयात्तत्तद्बहु विलप्य तरलिकामब्रवम्—'अयि उत्तिष्ठ निष्ठुरहृदये, कियद्रोदिषि। काष्ठान्याहृत्य विरचय चिताम्। अनुसरामि जीवितेश्वरम्' इति।

अत्रान्तरे झटिति चन्द्रमण्डलनिर्गतो गगनादवतीर्य केयूरकोटिलग्नममृतफेनपिण्डपाण्डुरं पवनतरलमंशुकोत्तरीयमाकर्षन्, उभयकर्णा-

---

शोक क्यों होगा? यह सब तो इस झूठे और शठ हृदयकी झूठी चाल है। इस निर्लज्जने ही मुझे संसारके सब निर्लज्जोंका अग्रणी बना दिया है। उसके बाद कामपीड़ा उत्पन्न करके इसने मुझे वज्रमयी बनाकर जो-जो दुःख दिया है, उसे मैं कहकर कहाँतक गिनाऊँगी। और फिर इससे अधिक दुःखदायी कथन और कौनसा होगा, जो न कहा और सुना जा सके। यह वज्रगत हो जानेके पश्चात् जो आश्चर्यजनक घटना घटी, अब केवल उसे ही कह रही हूँ। साथ ही इन प्राणोंको धारण किये रहनेका जो एक छोटासा गुप्त कारण उपस्थित हो गया, उसे भी बताती हूँ। जिस दुराशारूपिणी मृगतृष्णिकाके पीछे पड़कर मैं यह मृतक सदृश, परकीय, भारस्वरूप, निरर्थक, अकृतज्ञ, पापी शरीर धारण किये हुए हूँ, सो भी सुन लीजिए। वैसी दशामें एकमात्र मरनेका निश्चय करके तथा विविध भाँतिसे विलाप करनेके पश्चात् मैंने तरलिकासे कहा—'अरी ओ कठोहृदये! इस तरह कबतक रोयेगी? जाकर लकड़ियें ला और चिता तैयार कर। जिससे सती होकर मैं अपने प्राणनाथका अनुसरण कर सकूँ।'

उसी समय आकाशके चन्द्रमण्डलसे निकलकर एक पुरुष धरतीपर उतरा। वह पुरुष अपने बाजूबन्दकी कोरमें संलग्न, अमृतफेनके पिण्डसदृश उज्ज्वल तथा वायुके झोकोंसे फहराते दुपट्टेको खींच रहा था। दोनों कानोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्दोलितकुण्डलमणिप्रभानुरक्तगण्डस्थलः, स्थूलमुक्ताफलतया तारागण-मिव ग्रथितमतितारं हारमुरसा दधानः, धवलदुकूलपल्लवकल्पितोष्णीष-ग्रन्थिः, अलिकुलनीलकुटिलकुन्तलनिकरत्रिकटमौलिः, उत्फुल्लकुमुदक-र्णपूरः, कामिनीकुचकुङ्कुमपत्रलतालाञ्छितांसदेशः, कुमुदधवलदेहः, महाप्रमाणः पुरुषः, महापुरुषलक्षणोपेतः, दिव्याकृतिः, स्वच्छवारिधव-लेन देहप्रभावितानेन क्षालयन्निव दिगन्तराणि, आमोदिना च शरीरतः क्षरता शिशिरेण शीतज्वरमिव जनयतामृतशीकरवर्षेण तुषारपटलेनेवा-नुलिम्पन्, गोशीर्षचन्दनरसच्छटाभिरिवासिञ्चन्, ऐरावतकरपीव-राभ्यां बाहुभ्यां मृणालधवलांगुलिभ्यां शीतलस्पर्शाभ्यां तमुपरतमुत्क्षि-पन्, दुन्दुभिगम्भीरेण स्वरेण 'वत्से महाश्वेते ! न त्याज्यास्त्वया प्राणाः । पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः' इत्येवं पितेवाभिधाय सहै-वानेन गगनतलमुदपतत् । अहं तु तेन व्यतिकरेण सभया सविस्मया

झूलते हुए कुण्डलोंमें जटित मणियोंकी प्रभासे उसके गण्डस्थल रक्तवर्ण हो रहे थे । तारागणके समान मोतीके बड़े-बड़े दानेका बना बहुत बड़ा हार उसकी छातीपर सुशोभित था । उज्ज्वल रेशमी वस्त्रकी पगड़ी उसके मस्तकपर बँधी थी । भौंरोंकी भाँति काले और टेढ़े बालोंकी लटें उसके माथेपर फैली हुई थीं। प्रफुल्लित कुमुदपुष्पका कर्णपूर पहने, कुमुदके सदृश शुभ्र देहधारी, बहुत बड़े आकारका, महापुरुषके सभी लक्षणोंसे संपन्न, दिव्यवपु, स्वच्छ जल-की नाईं अपनी शारीरिक कान्तिसे वह समस्त दिगन्तरोंको धो रहा था । स्त्रियोंके स्तनोंकी कुङ्कुमपत्रलतासे उसका कन्धा चिह्नित था। वह अपने शरीरसे निकली शीतल सुगन्धसे जैसे अतिशय ठढकभरा शीतज्वर उत्पन्न कर रहा था । वह अमृतबिन्दुकणोंकी वर्षासे जैसे सभी दिगन्तरोंमें हिमसमूह तथा चन्दनका अनुलेपन करता हुआ गोरोचनका रस बरसा रहा था। हमारे पास आकर उसने ऐरावतकी सूँड़के समान मोटी, मृणालसदृश उज्ज्वल अँगुलियोंसे शोभित एवं शीतल स्पर्शयुक्त भुजाओंसे पुण्डरीकके शवको उठा लिया। साथ ही दुन्दुभीके निनादसदृश गम्भीर स्वरमें पिताके समान स्नेहपूर्वक कहा—'बेटी महाश्वेता ! तुम अपने प्राण मत त्यागना । क्योंकि भविष्यमें इसके साथ तुम्हारा समागम होगा ।' इतना कह और उस शवको लेकर वह आकाशमें उड़ गया । मैं तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सकौतुका चोन्मुखी किमिदमिति कपिञ्जलमपृच्छम्। असौ तु संसंभ्रममदत्त्वैवोत्तरमुदतिष्ठत। दुरात्मन्, क मे वयस्यमपहृत्य गच्छसि ?' इत्यभिधायोन्मुखः सञ्जातकोपो बध्नन्सावेगमुत्तरीयवल्कलेन परिकरम्, उत्पत्योत्पतन्तं तमेवानुसरन्नन्तरिक्षमुदगात्। पश्यन्त्या एव च मे सर्व एव ते तारागणमध्यमविशन्।

मम तु तेन द्वितीयेनेव प्रियतममरणेन कपिञ्जलगमनेन द्विगुणीकृतशोकायाः सुतरामदीर्यत हृदयम्। किंकर्तव्यतामूढा च तरलिकामब्रुवम्—'अयि, न जानासि। कथय किमेतत्' इति। सा तु तदवलोक्य स्त्रीस्वभावकातरा तस्मिन्क्षणे शोकाभिभाविना भयेनाभिभूता वेपमानाङ्गयष्टिर्मम मरणशङ्कया च वराकी विषण्णहृदया सकरुणमवादीत्—'भर्तृदारिके, न जानामि पापकारिणी। किंतु महदिदमाश्चर्यम्। अमानुषाकृतिरेष पुरुषः। समाश्वासिता चानेन गच्छता सानुकम्पं पित्रेव

इस कार्यकलापसे विस्मित और भयभीत हो गयी। तदनन्तर आश्चर्यके साथ ऊपर निहारती हुई मैंने कपिञ्जलसे पूछा कि 'यह क्या हुआ ?' किन्तु वह तो घबराहटमें बिना कुछ उत्तर दिये ही उठ खड़ा हुआ और 'अरे दुष्ट ! मेरे मित्रको लेकर तू कहाँ जा रहा है ?' यह कह और क्रोधके साथ मुख ऊँचा करके बड़े आवेशपूर्वक उत्तरीयको कमरमें बाँधा और उस उड़नेवाले पुरुषके पीछे-पीछे गगनमण्डलमें उड़ गया। फिर क्षणभरमें वे सब मेरे देखते-देखते तारागणोंके मध्यमें विलीन हो गये।

इस प्रकार कपिजलके भी चले जानेसे दूसरे प्रियतमके मरण सरीखा मेरा शोक द्विगुणित हो उठा और हृदय विदीर्ण हो गया। अब मैं किंकर्तव्यविमूढ होकर तरलिकासे बोली—'अरी तरलिके ! क्या तू भी नहीं जानती कि यह सब क्या हो रहा है ?' परन्तु वह बेचारी स्त्रीस्वभाववश कातर एवं शोकसे भी अधिक भयभीत तथा कम्पित शरीर होती हुई मेरे मरणकी आशंकासे अत्यन्त दुःखिनी होकर दैन्यभरे स्वरमें बोली—'राजपुत्रि ! मैं पापिनी तो कुछ नहीं समझ पा रही हूँ। किन्तु यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है। उस पुरुषकी आकृति अमानुषी थी। जाते-जाते उसने पिताके सदृश दयापूर्ण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भर्तृदारिका । प्रायेण चैवंविधा दिव्याः स्वप्नेऽप्यविसंवादिन्यो भवन्त्याकृतयः, किमुत साक्षात् । न चाल्पमपि विचारयन्ती कारणमस्य मिथ्याभिधाने पश्यामि । अतो युक्तं विचार्यात्मानमस्मात्प्राणपरित्यागव्यवसायान्निवर्तयितुम् । अतिमहत्खल्विदमाश्वासस्थानमस्यामवस्थायाम् । अपि च तमनुसरन्गत एव कपिञ्जलः । तस्माच्च 'कुतोऽयम्, को वायम्, किमर्थं वानेनायमपगतासुरुत्क्षिप्य नीतः, क्व वा नीतः, कस्माच्चासंभावनीयेनामुना पुनः समागमाशाप्रदानेन भर्तृदारिका समाश्वासिता' इति सर्वमुपलभ्य जीवितं वा मरणं वा समाचरिष्यसि । अदुर्लभं हि मरणमध्यवसितम । पश्चादप्येतद्भविष्यति । नच जीवन्कपिञ्जलो भर्तृदारिकामदृष्ट्वा स्थास्यति, तेन तत्प्रत्यागमनकालावधयाऽपि तावद्ध्रियन्ताममी प्राणाः' इत्याभदधाना पादयोर्मे न्यपतत् । अहं तु सकललोकदुर्लङ्घ्यतया जीविततृष्णायाः, क्षुद्रतया च स्त्रीस्वभावस्य, तया च तद्वचनो-

---

शब्दोंमें आपको आश्वासन दिया था । ऐसे दिव्य पुरुष प्रायः स्वप्नमें भी यदि कुछ कहते हैं तो वह सच्चा हो जाता है । फिर समक्ष आकर कहें, तब तो कहना ही क्या है । बहुत सोचनेपर भी उसके झूठ बोलनेका मैं कोई कारण नहीं देखती । अतएव अब उचित यही है कि आप विचार करके अपने प्राण त्यागनेका संकल्प त्याग दें । ऐसी परिस्थितिमें यह आश्वासन आपके लिए बहुत उपयोगी है । और फिर उस पुरुषका पीछा करता हुआ कपिंजल भी गया है । उससे आपको यह पता तो लग ही जायगा कि वह पुरुष कौन था, कहाँ से आया था, किस लिए वह शव उठा ले गया और क्यों उसने आपको पुनः समागमकी असंभव आशा दिलाते हुए आश्वस्त किया है । यह सब बातें मालूम हो जानेके बाद ही आप जीवित रहने या मर जानेका निश्चय करिएगा । मर जाना कोई कठिन काम नहीं है । यह तो बादमें भी हो सकता है । यदि कपिंजल जीवित लौटेगा तो आपसे मिले बिना नहीं रहेगा । अतएव आप उसके लौटनेके समयतक तो अवश्य अपने प्राणोंकी रक्षा करिए ।' ऐसा कहती हुई तरलिका मेरे पैरोंपर गिर पड़ी । जीवनकी तृष्णा त्यागना सबके लिए दुष्कर होता है, इस कारण अथवा नारीजातिकी क्षुद्रतावश या कि उस दिव्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पनीतया दुराशामृगतृष्णिकया, कपिञ्जलस्य प्रत्यागमनकांक्षया च, तस्मिन्काले तदेव युक्तं मन्यमाना नोत्सृष्टवती जीवितम्। आशया हि किमिव न क्रियते। तां च पापकारिणीं कालरात्रिप्रतिमां वर्षसहस्रायमाणां यातनामयीमिव दुःखमयीमिव नरकमयीमिवाग्निमयीमिवोत्सन्ननिद्रा तथैव क्षितितले विचेष्टमाना रेणुकणधूसरैरश्रुजलार्द्रकपोलसंदानितैर्विमुक्तव्याकुलैः शिरोरुहैरुपरुद्धमुखी निर्दयाक्रन्दजर्जरस्वरक्षयक्षामेण कण्ठेन तस्मिन्नेव सरस्तीरे तरलिकाद्वितीया क्षपां क्षपितवती।

प्रत्युषसि तूत्थाय तस्मिन्नेव सरसि स्नात्वा कृतनिश्चया, तत्प्रीत्या तमेव कमण्डलुमादाय, तान्येव च वल्कलानि तामेवाक्षमालां गृहीत्वा बुद्ध्वा निःसारतां संसारस्य, ज्ञात्वा च मन्दपुण्यतामात्मनः, निरूप्य चाप्रतीकारदारुणतां व्यसनोपनिपातानाम्, आकलय्य दुर्निवारतां शोकस्य, दृष्ट्वा च निष्ठुरतां दैवस्य, चिन्तयित्वा चातिबहुलदुःखतां स्नेहस्य, भावयित्वा चानित्यतां सर्वभावानाम्, अवधार्य चाकाण्ड-

पुरुषकी बातसे उत्पन्न दुराशारूपिणी मृगतृष्णासे अथवा कपिंजलके पुनः लौटनेकी आकांक्षाके कारण मैंने तरलिकाकी बातको ही युक्तिसङ्गत मानकर प्राणत्याग नहीं किया। आशा क्या नहीं कर लेती? वह पापमयी, कालरात्रिकी भाँति भीषण, हजारों वर्षके समान लम्बी यातनामयी, दुःखमयी, नरकमयी और अग्निमयी सारी रात मैंने जागकर वैसे ही धरतीपर छटपटाती हुई उसी अच्छोदसरोवरके तटपर तरलिकाके साथ व्यतीत की। भूमिपर लोटनेके कारण धूलसे धुँधले, आँसुओंसे गीले होकर कपोलपर चिपके और खुलकर छितराये हुए केशोंसे मेरा मुख ढँका हुआ था। बड़ी जोरसे चिचियाकर रोनेके कारण मेरा स्वर क्षीण और कण्ठ शुष्क हो गया था।

सवेरे बड़े भोर उठकर मैंने उसी सरोवरमें स्नान करके दृढ़ निश्चय किया। तदनुसार पुण्डरीकपर प्रीति होनेके कारण उसका ही कमंडलु, उसीका वल्कलवसन और वही अक्षमाला लेकर, सारे संसारको असार समझकर, अपने पुण्यकी अल्पता समझकर, सहसा आ पड़नेवाली विपत्तियोंकी अनिवार्य दारुणता देखकर, शोकका प्रतीकार कठिन समझकर, दैवकी निष्ठुरता देखकर, स्नेहको बहुतरे दुःखोंसे भरा सोचकर, सभी भावनाओंकी अनित्यता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भंगुरतां सर्वसुखानाम्, अविगणय्य तातमम्बां च परित्यज्य सह परिजनेन सकलबन्धुवर्गम्, निवर्त्य विषयसुखेभ्यो मनः, संयम्येन्द्रियाणि, गृहीतब्रह्मचर्या देवं त्रैलोक्यनाथमनाथशरणमिमं शरणार्थिनी स्थाणुमाश्रिता। अपरेद्युश्च कुतोऽपि समुपलब्धवृत्तान्तस्तातः सहाम्बया सह बन्धुवर्गेणागत्य सुचिरं कृताक्रन्दस्तैस्तैरुपायैः अभ्यर्थनाभिश्च वह्वीभिः, उपदेशैश्चानेकप्रकारैः, सान्त्वनैश्च नानाविधैः, गृहागमनाय मे महान्तं यत्नमकरोत्। यदा च नेयमस्माद्व्यवसायात्कथंचिदपि शक्यते व्यावर्तयितुमिति निश्चयमधिगतवान्, तदा निराशोऽपि दुस्त्यजतया दुहितृस्नेहस्य पुनःपुनर्मया विसृज्यमानोऽपि बहून्दिवसान्स्थित्वा सशोक एवान्तर्दह्यमानहृदयो गृहानयासीत्। गते च ताते ततः प्रभृति तस्य जनस्याश्रुमोक्षमात्रेण कृतज्ञतां दर्शयन्ती, तदनुरागकृशमिदमपुण्यबहुलमस्तमितलज्जममङ्गलभूतमनेकक्लेशायाससहस्रनिवासं दग्धशरीरकं बहुविधैर्नियमशतैः शोषयन्ती, वन्यैश्च फलमूलवारिभिर्वर्त-

---

विचारकर, सब सुखोंको क्षणभगुर मानकर, पिताकी अवहेलना करके और माताको छोड़कर, सभी परिजनों तथा बान्धवोंको त्यागकर, विषयसुखोंसे मन हटाकर और इन्द्रियोंको काबूमें करके ब्रह्मचर्यव्रत धारणपूर्वक मैंने शरण पानेके लिए अनाथोंके शरणदाता और त्रिलोकीनाथ इन भगवान् शकरकी शरण ली। दूसरे दिन कहींसे खबर पाकर मेरे माता-पिता अपने सभी बान्धवोंके साथ यहाँ आये। बहुत देरतक वे रोये। उसके बाद अनेक उपायों, बहुतेरी प्रार्थनाओं, अनेकानेक उपदेशों एवं विविध सान्त्वनाओंसे उन्होंने मुझे घर ले जानेका बहुत प्रयत्न किया। किन्तु जब उन्होंने समझ लिया कि यह किसी तरह अपने संकल्पसे विचलित नहीं होगी, तब निराश होकर मेरे द्वारा बार बार विसर्जित किये जानेपर भी कन्याका स्नेह त्यागना कठिन होनेके कारण वे कई दिन यहाँ रहकर शोकाकुल भावसे भीतर ही भीतर धधकता हृदय लेकर घर लौटे। इस प्रकार पिताजीके चले जानेपर अपने प्रियतमको केवल आँसू गिराकर अपनी कृतज्ञता दिखाती, उसके प्रेमवश कृश, पापके बोझसे दबे, निर्लज्ज, अमंगलमय, कई हजार क्लेश तथा श्रम सहनेमें समर्थ इस दग्ध शरीरको सैकड़ों व्रतोंसे सुखाती, वनैले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

माना जपव्याजेन तद्गुणगणानिव गणयन्ती, त्रिसंध्यमत्र सरसि स्नानमुपस्पृशन्ती, प्रतिदिनमर्चयन्ती देवं त्र्यम्बकम्, अस्यामेव गुहायां तरलिकया सह दीर्घं शोकमनुभवन्त्यवसम्। साहमेवंविधा पापकारिणी निर्लक्षणा निर्लज्जा क्रूरा निःस्नेहा नृशंसा गर्हणीया निष्प्रयोजनोत्पन्ना निष्फलजीविता निरवलम्बना निःसुखा च। किं मया दृष्टया पृष्टया वा कृतब्राह्मणवधमहापातकया करोति महाभागः' इत्युक्त्वा पाण्डुना बल्कलोपान्तेन शशिनमिव शरन्मेघशकलेनाच्छाद्य वदनं दुर्निवारबाष्पवेगमपारयन्ती निवारयितुमुन्मुक्तकण्ठमतिचिरमुच्चैः प्रारोदीत्।

चन्द्रापीडस्तु प्रथममेव तस्या रूपेण विनयेन दाक्षिण्येन च मधुरालापतया निःसङ्गतया तपस्वितया च प्रशान्तत्वेन च निरभिमानतया च महानुभावत्वेन च शुचितया चोपारूढगौरवोऽभूत्। तदानीं तु तेनापरेण दर्शितसद्भावेन स्ववृत्तान्तकथनेन तया च कृतज्ञतया हृतहृदयः सुतरामारोपितप्रीतिरभवत्। आर्द्रीकृतहृदयश्च शनैःशनैरेनाम-

---

फल-मूल और जलसे जीवन यापन करती, जपके ब्याजसे उसीके गुणगण गिनती, प्रातः-सायं-मध्याह्न इन तीनों संध्याओंके समय इसी सरोवरमें स्नान, प्रतिदिन त्र्यम्बक शंकरजीका पूजन और दारुण शोकका अनुभव करती हुई मैं तरलिकाके साथ इसी कन्दरामें रह रही हूँ। सो मैं इस प्रकारकी पापिनी, कुलक्षणी, निर्लज्ज, क्रूर, स्नेहशून्य, निर्दय, निन्दनीय, निष्प्रयोजन जन्म लेनेवाली, निष्फल जीवनधारिणी, असहाय और सुखहीन हूँ। ब्राह्मणवध जैसा महापाप करनेवाली मुझ नारीको देखने या कुछ पूछनेसे आप सरीखे महाभागको क्या लाभ होगा? ऐसा कह और शरत्कालीन शुभ्र मेघसदृश उज्ज्वल वल्कल वसनकी कोरसे अपने चन्द्रमा सरीखे मुखको ढाँककर दुर्निवार्य अश्रुप्रवाहके वेगको रोकनेमें असमर्थ होती हुई बड़ी जोरसे चिल्लाकर रोने लगी।

चन्द्रापीड तो उसके रूप, विनय, अनुकूलता, मधुर वचन, निःसंगता, तपस्विता, शान्तभाव, अभिमानशून्यता, महाप्रभावता तथा पवित्रता देखकर पहले ही उसके गौरवका कायल हो चुका था। किन्तु इस प्रकार सद्भावना प्रदर्शित करती हुई उसने जब अपना वृत्तान्त सुनाया तो कृतज्ञतासे उसका हृदय हर गया और असाधारण प्रीति उत्पन्न हो गयी। तब आर्द्रहृदय होकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भाषत—'भगवति, क्लेशभीरुरकृतज्ञः सुखासङ्गलुब्धो लोकः स्नेहसदृशं कर्मानुष्ठातुमशक्तो निष्फलेनाश्रुपातमात्रेण स्नेहमुपदर्शयन्रोदिति। त्वया तु कर्मणैव सर्वमाचरन्त्या किमिव न प्रेमोचितमाचेष्टितम्, येन रोदिषि। तदर्थमाजन्मनः प्रभृति समुचितपरिचयः प्रेयानप्यसंस्तुत इव परित्यक्तो बान्धवजनः। संनिहिता अपि तृणावज्ञयाऽवधीरिता विषयाः। मुक्तान्यतिशयितशुनासीरसमृद्धान्यैश्वर्यसुखानि। मृणालिनीवातितनीयस्यपि नितरां तनिमानमनुचितैः संक्लेशैरुपनीता तनुः। गृहीतं ब्रह्मचर्यम्। आयोजितस्तपसि महत्यात्मा। वनिताजनदुष्करमपि कृतमरण्यावस्थानम्। अपि चानायासेनैवात्मा दुःखाभिभूतैः परित्यज्यते। महीयसा न तु यत्नेन गरीयसि क्लेशे निक्षिप्यते केवलम्। यदेतदनुमरणं नाम तदतिनिष्फलम्। अविद्वज्जनाचरित एष मार्गः। मोहविलसितमेतत्, अज्ञानपद्धतिरियम्, रभसाचरितमिदम्, क्षुद्रदृष्टिरेषा,

---

चन्द्रापीडने धीरे-धीरे कहा—'भगवति! क्लेशसे डरनेवाले, अकृतज्ञ और सुखके लोभी लोग स्नेहके अनुरूप कर्म करनेमें असमर्थ होकर व्यर्थके आँसू बहाकर ही स्नेह प्रदर्शित करते हुए रोते हैं। किन्तु आपने तो कर्मसे सब कुछ कर दिखाया है। प्रेमके अनुरूप आपने क्या नहीं किया कि जिससे इस प्रकार रुदन कर रही हैं? उसके लिए आपने जन्मसे ही परिचित एवं प्रिय बन्धुजनोंको अपरिचितकी नाईं त्याग दिया। सुलभ होते हुए भी सब विषयभोगोंको आपने तृणवत् समझकर ठुकरा दिया है। देवराज इन्द्रसे भी बढ़ी-चढ़ी समृद्धिसे सम्पन्न ऐश्वर्यसुखको आपने सर्वथा त्याग दिया है। मृणालसदृश गौर एवं कोमल तनको आपने विविध व्रतोंका कष्ट देकर एकदम सुखा डाला है। आपने सदाके लिए ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है। आपने अपनी महान् आत्माको तपस्याके हाथों सौंप दिया है। स्त्रियोंके लिए सर्वथा दुष्कर होनेपर भी आप वनवास कर रही हैं। कितने ही दुखिया लोग दुःखसे ऊबकर अनायास आत्महत्या कर लेते हैं, किन्तु आपकी तरह प्रयत्नपूर्वक अपने आपको महान् क्लेशमें नहीं डालते। और फिर किसी प्रियजनके मर जानेपर स्वयं भी मर जाना व्यर्थ है। यह मार्ग मूर्खोंका है। अपने पिता, भ्राता, मित्र या पतिके मर जानेपर प्राण त्यागना मूर्खता है, अज्ञान है,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अतिप्रमादोऽयम्, मौर्ख्यस्खलितमिदम्, यदुपरते पितरि भ्रातरि सुहृदि भर्तरि वा प्राणाः परित्यज्यन्ते। स्वयं चेन्न जहति न परित्याज्याः। अत्र हि विचार्यमाणे स्वार्थ एव प्राणपरित्यागोऽयमसह्यशोकवेदनाप्रतीकारत्वादात्मनः। उपरतस्य तु न कमपि गुणमावहति। न तावत्तस्यायं प्रत्युज्जीवनोपायः, न धर्मोपचयकारणम्, न शुभलोकोपार्जनहेतुः, न निरयपातप्रतीकारः, न दर्शनोपायः, न परस्परसमागमनिमित्तम्। अन्यामेव स्वकर्मफलपाकोपचितामसाववशो नीयते भूमिम्। असावप्यात्मघातिनः केवलमेनसा संयुज्यते। जीवंस्तु जलाञ्जलिदानादिना बहूपकरोत्युपरतस्यात्मनश्च, मृतस्तु नोभयस्यापि।

स्मर तावत्प्रियामेकपत्नीं रतिं भगवति भर्तरि मकरकेतौ सकलाबलाजनहृदयहारिणि हरहुतभुग्दग्धेऽप्यविरहितामसुभिः। पृथां च वार्ष्णेयीं शूरसेनसुतामभिरूपे सावज्ञविजितसकलराजकमौलिकुसुमवा-

---

अविवेकपूर्ण कार्य है, क्षुद्रदृष्टि है, बहुत बड़ा प्रमाद है और मूर्खताके कारण होनेवाला महापतन है। यदि प्राण स्वतः न निकल जायँ तो हठ करके उन्हें न निकालना चाहिए। विचार करनेपर ज्ञात होता है कि प्राणत्याग भी एक प्रकारका स्वार्थ है। क्योंकि यह असह्य शोक और वेदनाको दूर करनेका एक उपाय है। ऐसा करनेसे मरनेवालेका कोई उपकार नहीं होता। इससे वह फिर जी नहीं जाता, इससे उसका धर्म नहीं बढ़ता, शुभ लोकका उपार्जन नहीं होता, वह नरकमें जानेसे नहीं बचता, मरे हुएका दर्शन नहीं होता और मरनेके बाद दोनोंका मिलन भी नहीं हो पाता। क्योंकि वह पराधीन होनेके कारण अपने कर्मोंका फल भोगने योग्य स्थानमें गया रहता है। इस प्रकार मरनेवाला प्राणी केवल आत्मघातके पापका भागी बनता है। वह यदि जीवित रहे तो जलाञ्जलि आदि देकर मृतकका और अपना दोनोंका कल्याण कर सकता है। किन्तु मरकर वह दोमेंसे किसीका कुछ उपकार नहीं कर सकता।

सोचिए तो सही, समस्त नारियोंका हृदय हरनेवाले भगवान् कामदेव जब शंकरजीकी नेत्रज्वालामें जलकर भस्म हो गये, तब उनकी प्रिय पत्नी रतिने अपने प्राण नहीं त्यागे थे। जिसने अवज्ञापूर्वक सब राजाओंको जीत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सिताशेषपादपीठे पत्यावखिलभुवनवलिभागभुजि पाण्डौ किंदममुनिशापानलेन्धनतामुपगतेऽप्यपरित्यक्तजीविताम् । उत्तरां च विराटदुहितरं बालां बालशशिनीव नयनानन्दहेतौ विनयवति विक्रान्ते च पञ्चत्वमभिमन्यावागतेऽपि धृतदेहाम् । दुःशल्यां च धृतराष्ट्रदुहितरं भ्रातृशतोत्सङ्गलालितामतिमनोहरे हरवरप्रदानवर्धितमहिम्नि सिन्धुराजे जयद्रथेऽर्जुनेन लोकान्तरमुपनीतेऽप्यकृतप्राणपरित्यागाम् । अन्याश्च रक्षःसुरासुरमुनिमनुजसिद्धगन्धर्वकन्यका भर्तृरहिताः श्रूयन्ते सहस्रशो विधृतजीविताः । प्रोन्मुच्येतापि जीवितं संदिग्धोऽप्यस्य समागमो यदि स्यात् । भगवत्या तु ततः पुनः स्वयमेव समागमसरस्वती समाकर्णिता । अनुभवे च को विकल्पः कथं च तादृशानामप्राकृताकृतीनां महात्मनामवितथगिरां गरीयसापि कारणेन गिरि वैतथ्यमास्पदं कुर्यात् । उपरतेन च सह जीवन्त्याः कीदृशी समा गतिः । अतो निःसंशयमसावुपजातकारु-

---

लिया था और वे विजित राजे अपने मुकुटोंमें लगे फूलोंसे जिसके चरणासनको सुगन्धित किया करते थे । जिसने सभी भुवनोंसे राजकर प्राप्त किया था, ऐसे परम रूपवान् पाण्डु नामक पतिके किन्दम मुनिके शापानलमें जल जानेपर भी उसकी प्रियपत्नी और यदुवंशी राजा शूरसेनकी पुत्री कुन्तीने अपना तन नहीं त्यागा था । राजा विराटकी पुत्री उत्तराको ही देखिए, उसने भी बालचन्द्रमाके सदृश सबके आनन्ददायी, विनयी और पराक्रमी अभिमन्युके रणमें मर जानेपर भी अपने शरीरकी रक्षा की थी। सौ भाइयोंकी गोदमें खेली हुई महाराज धृतराष्ट्रकी पुत्री दुःशल्याको देखिए, जिसने जयद्रथ नामके अपने अतिशय मनोहर पतिके—जिसकी महिमा शंकरजीसे वरदान पा जानेके कारण बहुत बढ़ गयी थी—अर्जुन द्वारा मारे जानेपर भी अपना तन नहीं त्यागा था। इनके अतिरिक्त भी बहुतेरी राक्षसों, सुरों, असुरों, मुनियों, मनुष्यों, सिद्धों तथा गन्धर्वोंकी कन्याओंने पतिके मर जानेपर भी अपने प्राणोंकी रक्षा की थी। यदि प्राण त्यागनेसे प्रियमिलनकी कुछ संभावना हो तो त्याग भी दे । किन्तु आपने तो स्वयं पुनः प्रियसमागम होनेकी बात सुनी है और अनुभव भी किया है। तब फिर शंकाकी बात ही कहाँ रही । इस प्रकारके दिव्य महापुरुषोंकी वाणी मिथ्या कदापि नहीं हो सकती । मरे हुए प्राणीका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ण्यो महात्मा पुनः प्रत्युज्जीवनार्थमेवैनमुत्क्षिप्य सुरलोकं नीतवान्। अचिन्त्यो हि महात्मनां प्रभावः। बहुप्रकाराश्च संसारवृत्तयः। चित्रं च दैवम्। आश्चर्यातिशययुक्ताश्च तपःसिद्धयः। अनेकविधाश्च कर्मणां शक्तयः। अपि च सुनिपुणमपि विमृशद्भिः किमिवान्यत्तदपहरणे कारणमाशङ्क्येत जीवितप्रदानादृते। न चासंभाव्यमिदमवगन्तव्यं भगवत्या। चिरप्रवृत्त एष पन्थाः। तथा हि। विश्वावसुना गन्धर्वराजेन मेनकायामुत्पन्नां प्रमद्वरां नाम कन्यकामाशीविषविलुप्तजीवितां स्थूलकेशाश्रमे भार्गवस्य च्यवनस्य नप्ता प्रमतितनयो मुनिकुमारको रुरुर्नाम स्वायुषोऽर्धेन योजितवान्। अर्जुनं चाश्वमेधतुरगानुगामिनम्, आत्मजेन बभ्रुवाहननाम्ना समरशिरसि शरापहृतप्राणम्, उलूपी नागकन्यका सोच्छ्वासमकरोत्। अभिमन्युतनयं च परीक्षितमश्वत्थामास्त्रपावकपरिप्लुष्टम्, उदरादुपरतमेव विनिर्गतम्, उत्तराप्रलापोपजनितकृपो भगवान्वासुदेवो

जीवित व्यक्तिके साथ समागम असंभव होता है। यह समझकर ही वे महात्मा आपके ऊपर दया करके उन्हें पुनरुज्जीवित करनेके लिए उठाकर देवलोक ले गये हैं। ऐसे-ऐसे महात्माओंका प्रभाव तर्कनाशक्तिके परे होता है। संसारकी वृत्तियाँ बहुत प्रकारकी होती हैं। दैव भी बड़ा विचित्र है। तपस्याकी सिद्धियाँ अतिशय आश्चर्यजनक होती हैं। कर्मोंकी शक्तियाँ नाना प्रकारकी हुआ करती हैं। भली भाँति विचार करनेपर भी उन्हें जीवन प्रदान करनेके सिवाय उठाकर ले जानेका कोई अन्य कारण नहीं दीखता। आप इस बातको असंभव न समझें। ऐसा पहले भी हो चुका है। जैसे—गन्धर्वराज विश्वावसुके द्वारा मेनकासे उत्पन्न प्रमद्वरा नामकी कन्याको जब सर्पने काट लिया और वह मर गयी। तब स्थूलकेशके आश्रमपर महामुनि च्यवनके नाती और प्रमतिके पुत्र मुनिकुमार रुरुने अपना आधा जीवन देकर जीवित किया था। जब अश्वमेधके घोड़ेका अनुसरण करते हुए अर्जुन अपने पुत्र बभ्रुवाहनके द्वारा युद्धमें बाणोंकी मारसे मारे गये, तब उलुपी नामकी नागकन्याने उन्हें पुनः जीवित कर दिया था। अभिमन्युपुत्र परीक्षित् जब अश्वत्थामाके आग्नेय बाणसे झुलसकर मरे हुए ही गर्भसे बाहर निकले थे, तब उत्तराके रोदनसे कृपालु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दुर्लभानसूनप्रापितवान्। उज्जयिन्यां च संदीपनिद्विजतनयमन्तकपुरादपहृत्य त्रिभुवनवन्दितचरणः स एवानीतवान्। अत्रापि कथंचिदेवमेव भविष्यति। तथापि किं क्रियते, किं वा लभ्यते। प्रभवति हि भगवान्विधिः। बलवती च नियतिः। आत्मेच्छया न शक्यमुच्छ्वसितुमपि। अतिपिशुनानि चास्यैकान्तनिष्ठुरस्य दैवहतकस्य विलसितानि। न क्षमते दीर्घकालमव्याजरमणीयं प्रेम। प्रायेण च निसर्गत एवानायतस्वभावभंगुराणि सुखानि, आयतस्वभावानि च दुःखानि। तथा हि। कथमप्येकस्मिञ्जन्मनि समागमः, जन्मान्तरसहस्राणि च विरहः प्राणिनाम्। अतो नार्हस्यनिन्द्यमात्मानं निन्दितुम्। आपतन्ति हि संसारपथमतिगहनमवतीर्णानामेते वृत्तान्ताः। धीरा हि तरन्त्यापदम्' इत्येवंविधैरन्यैश्च मृदुभिरुपसान्त्वनैः संस्थाप्य तां पुनरपि निर्झरजलेनाञ्जलिपुटोपनीतेनानिच्छन्तीमपि बलात्प्रक्षालितमुखीमकारयत्।

होकर भगवान् वासुदेवने उनके दुर्लभ प्राणोंको फिरसे लौटा लिया था। उन्हीं निखिल त्रिलोकीके द्वारा वन्दितचरण भगवान् वासुदेवने उज्जयिनी नगरीमें अपने गुरु सान्दीपनिके मृत पुत्रको यमपुरीसे लाकर दिया था। अतएव यहाँ आपके भी विषयमें ऐसा ही कुछ होगा। तथापि क्या किया जाय? शोक करनेसे क्या लाभ होगा? भगवान् विधाता सबसे प्रबल हैं। भाग्य भी बड़ा बलवान् है। अपनी इच्छासे कोई प्राणी श्वास भी नहीं ले सकता। अत्यन्त निर्दयी दैवके कार्य बड़े दुःखदायी होते हैं। निष्कपट एवं रमणीक प्रेम बहुत अधिक दिनों तक नहीं टिकता। सुख स्वभावतः क्षणभंगुर और दुःख चिरस्थायी हुआ करते हैं। जैसा कि प्राणियोंका कभी एक जन्ममें समागम होता है और हजारों जन्मतक विरह बना रहता है। अतएव अब आप अपनी अनिंद्य आत्माकी निंदा न करें। अतिशय गहन संसार पथपर चलनेवाले पथिकोंके समक्ष ऐसी-ऐसी घटनायें घटती ही रहती हैं। जो लोग धैर्यशाली होते हैं, वे ही विपत्तियोंको पार करते हैं।' ऐसे-ऐसे अनेक प्रकारके आश्वासनभरे वचनोंसे उसे ढाढ़स बँधाकर चन्द्रापीडने उसकी इच्छा न रहनेपर भी झरनेसे अंजलीमें जल लाकर हठपूर्वक उसका मुँह धुलाया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अत्रान्तरे च श्रुतमहाश्वेतावृत्तान्तोपजातशोक इव समुत्सृष्टदिवस-व्यापारो रविरपि भगवानधोमुखतामयासीत्। अथ क्षीणे दिवसे, परिणतप्रियंगुमञ्जरीरजोनिभे पिञ्जरिम्णा रज्यमाने विलम्बिनि ब्रध्नमण्डले, अविरलकुसुम्भकुसुमरसरक्तदुकूलकोमलेन चास्ततापेन मुच्यमानेषु दिङ्मुखेषु, चकोरनयनतारकाकान्तिना च पिङ्गलिम्ना विलिप्यमाने तिरोहितनीलिम्नि व्योम्नि, कोकिलविलोचनच्छविबभ्रुणि चारुणायति सांध्ये भुवनमर्चिषि, यथाप्रधानमुन्मिषत्सु ग्रहग्रामेषु, वनमहिषमलीमसवपुषि च मुषिततारकापथप्रथिम्नि कालिमानमातन्वति शार्वरे तमसि, अतनुतिमिरतिरोहितहरिततासु गहनतां यान्तीषु वनराजिषु, रजनिजलजालबिन्दुजनितजडिम्नि बहलवनकुसुमपरिमलानुमितगमने चलितलताविटपगहने प्रवृत्ते च पवने, निद्रानिभृतपतत्रिणि त्रियामामुखे महाश्वेता मन्दं मन्दमुत्थाय भगवतीमुपास्य पश्चिमां संध्यां कम-

---

इसी बीच भगवान् सूर्य भी जैसे महाश्वेताका वृत्तान्त सुनकर शोकाकुल हो उठे और दिवससम्बन्धी समस्त व्यापार त्यागकर उन्होंने अपना मुख नीचे कर लिया। तदनंतर जब दिन क्षीण हो गया और गगनमें लटकता हुआ सूर्यमंडल परिपक्व प्रियंगुमंजरीके परागकी नाईं पीतवर्णसे रंग गया। जब कुसुमपुष्पके रसमें रंगे गये कपड़ेकी भाँति कोमल अस्तकालीन सूर्यातपने सब दिशाओंका मुख त्याग दिया। जब आकाशकी नीलिमा दूर हो गयी और चकोरके नेत्रोंकी पुतलीकी भाँति वह पिंगलवर्णके रंगमें रंग गया। जब सारा भुवन कोकिलकी आँखोंकी तरह सायंकालीन सन्ध्याके पिंगल प्रकाशसे लाल हो उठा। जब प्रधान-अप्रधानके क्रमसे नक्षत्रगण उदित होने लगे। जब बनैले भैंसेकी नाईं श्यामवर्णका अन्धकार गगनके विस्तारको समेटता हुआ अधिकाधिक काला होने लगा। जब गहरे अन्धकारसे ढँक जानेके कारण वनकी झाड़ियाँ अपनी हरियाली त्यागकर गहरी काली दिखायी देने लगीं। जब रातमें पड़नेवाली ओसकी बूँदोंसे जडता जायमान करती एवं वनके कुञ्जोंको झुमाती हुई ऐसी बयार बहने लगी कि वन्य पुष्पोंकी सुगंधिसे ही जिसके चलनेका अनुमान लगाया जा सकता था। रात्रिका पूर्ण प्रसार हो जानेपर जब पक्षीगण सो गये। तब महाश्वेता धीरेसे उठी। उसने कमंडल-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ण्डलुजलेन प्रक्षालितचरणा वल्कलशयनीये सखेदमुष्णं च निःश्वस्य निषसाद। चन्द्रापीडोऽप्युत्थाय सकुसुमं प्रस्रवणजलाञ्जलिमवकीर्य कृतसंध्याप्रणामस्तस्मिन्द्वितीये शिलातले मृदुभिर्लतापल्लवैः शय्यामकल्पयत्। उपविष्टश्च तस्यां पुनस्तमेव मनसा महाश्वेतावृत्तान्तमन्वभावयत्। आसीच्चास्य मनस्येवम्—'अयमप्रतीकारदारुणो दुर्विषहवेगः कष्टः कुसुमायुधः, यदनेनाभिभूता महान्तोऽप्येवमनपेक्षितकालक्रमाः समुत्सारितधैर्याः सद्यो जीवितं जहति। सर्वथा नमो भगवते त्रिभुवनाभ्यर्चितशासनाय मकरकेतनाय' इति। पुनः पप्रच्छ चैनाम् 'भगवति, सा तव परिचारिका वनवासव्यसनमित्रं दुःखसब्रह्मचारिणी तरलिका क्व गता' इति।

अथ साऽकथयत्—महाभाग, यत्तन्मया कथितममृतसंभवमप्सरसां कुलं तस्मान्मदिरेति नाम्ना मदिरायतेक्षणा कन्यकाऽभूत्। तस्या-

---

के जलसे पाँव धोकर भगवती सायंकालीन सन्ध्याकी उपासना की और खेदसे साथ गरम श्वास लेती हुई अपनी वल्कलमयी शय्यापर बैठ गयी। उसी समय चन्द्रापीडने भी झरनेपर जाकर फूलोंके साथ जलाञ्जलि देकर सन्ध्याको प्रणाम किया और एक अन्य शिलातलपर लताओंकी कोमल पत्तियोंका बिस्तर बिछाया। उसपर बैठकर वह बारम्बार महाश्वेताके वृत्तान्तका ही मनन करने लगा। उसने अपने मनमें सोचा—'इस दुःखदायी कामदेवका वेग वास्तवमें असह्य है। अप्रतीकार्य होनेके कारण यह बड़ा भयानक भी है। इसकी चपेटमें पड़कर बड़े-बड़े महापुरुष भी धैर्य खो देते हैं और स्वाभाविक मरणकालकी राह देखे बिना ही तत्काल प्राण त्याग देते हैं। तीनों लोक जिनके शासनका आदर करते हैं, उन मकरकेतन भगवान् कामदेवको सर्वथा प्रणाम है। तनिक देर बाद चन्द्रापीडने महाश्वेतासे पूछा—'भगवति! वह वनवासके दुःखकी साथिन और हर विपत्तिमें हाथ बँटानेवाली आपकी परिचारिका तरलिका कहाँ गयी?'

इसपर वह बोली—'महाभाग! मैंने पहले ही आपसे कहा है कि अमृतसे अप्सराओंका कुल जायमान हुआ था। उसी कुलमें मदिरा नामकी एक ऐसी कन्या उत्पन्न हुई, जिसकी मदभरी आँखें बड़ी-बड़ी थीं। समस्त गन्धर्वकुलके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्चासौ सकलगन्धर्वकुलमुकुटकुड्मलपीठप्रतिष्ठितचरणो देवश्चित्ररथः पाणिमग्रहीत् । अपरिमितगुणाकृष्टहृदयश्च वनितादुर्लभेनाधःकृताशेषान्तःपुरेण हेमपट्टलाञ्छनेन छत्रवेत्रचामरचिह्नेन महादेवीशब्देन परं प्रीतः प्रसादमकरोत् । अन्योन्यप्रेमसंवर्धनपरयोश्च तयोर्यौवनसुखानि सेवमानयोः कालेनाश्चर्यभूतमेकजीवितमिव पित्रोः, अथवा सर्वस्यैव गन्धर्वकुलस्य वा जीवलोकस्य, दुहितृरत्नमुदपादि कादम्बरीति नाम्ना सा च मे जन्मनः प्रभृत्येकाशनशयनपानासना परं प्रेमस्थानमखिलविस्रम्भधाम द्वितीयमिव हृदयं बालमित्रम् । एकत्र तया मया च गीतनृत्यकलासु कृताः परिचयाः । शिशुजनोचिताभिश्च क्रीडाभिरनियन्त्रणनिर्भरमपनीतो बालभावः । सा चामुनैव मदीयेन हतवृत्तान्तेन समुपजातशोका निश्चयमकार्षीत्—'नाहं कथंचिदपि सशोकायां महाश्वेतायामात्मनः पाणिं ग्राहयिष्यामि' इति । सखीजनस्य पुरतः सश-

---

मुकुटके अग्रभागस्वरूप पादपीठपर पाँव रखनेवाले देव चित्ररथके साथ उसका विवाह हो गया । मदिराके अनुपम गुणोंकी ओर आकृष्ट होकर चित्ररथने उसे अन्यान्य नारियोंके लिए दुर्लभ एवं समस्त अन्तःपुरमें सर्वोच्च पद, हेमपट्टलांछित, छत्र-वेत्र-चमरके चिह्नसे चिह्नित 'महादेवी'की पदवी प्रदान की । जब परस्पर उनका प्रेम बढ़ता गया और वे पूर्ण यौवनका आनन्द लेने लगे तो कालान्तरमें माता-पिताके एक ही जीवन तथा समस्त गंधर्वकुल अथवा यों कहिए कि सारे जीवलोकके एक जीवके समान कन्याओंमें रत्नस्वरूपा 'कादम्बरी' नामकी कन्या उत्पन्न हुई। जन्मसे ही वह और मैं दोनों एक ही साथ बैठतीं, साथ ही खाती-पीतीं और रहती थीं । इसी कारण उसके प्रति मेरा प्रेम बहुत बढ़ गया । उसपर मेरा पूर्ण विश्वास हो गया और जैसे वह मेरा दूसरा हृदय हो, इस प्रकार वह मेरी बालसखी बन गयी। एक साथ ही हम दोनोंने नृत्य-गीतादि समस्त कलाओंको सीखा और हमारे बचपनके दिन पूर्ण स्वतंत्रताके साथ बड़े आनन्दसे बीते । बादमें जब उसने मेरे इस अनिष्टका समाचार सुना तो उसे बहुत दुःख हुआ । उसी समय उसने प्रण कर लिया कि 'जबतक महाश्वेता शोकावस्थामें रहेगी, तब तक मैं भी कदापि अपना विवाह नहीं करूँगी ।'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रथमभिहितवती च—'यदि कथमपि मामनिच्छन्तीमपि बलात्तातः कदाचित्कस्मैचिद्दातुमिच्छति तदाहमनशनेन वा हुताशनेन वा रज्ज्वा वा विषेण वा नियतमात्मानमुत्स्रक्ष्यामि' इति। सर्वं च तदात्मदुहितुः कृतनिश्चयं निश्चलभाषितं कर्णपरम्परया परिजनसकाशाद्गन्धर्वराजश्चित्ररथः स्वयमशृणोत्। गच्छति काले समुपारूढनिर्भरयौवनामालोक्य स तां बलवदुपतापपरवशः क्षणमपि न धृतिमलभत, एकापत्यतया चातिप्रियतया च न शक्तः किंचिदपि तामभिधातुमित्यपश्यंश्चान्यदुपायान्तरम्। इदमत्र प्राप्तकालमिति मत्वा तया महादेव्या मदिरया सहावधार्य क्षीरोदनामानं कञ्चुकिनम् 'वत्से महाश्वेते, त्वद्व्यतिरेकेणैव दग्धहृदयाणामिदमपरमस्माकमुपस्थितम्। इदानीं तु कादम्बरीमनुनेतुं त्वं शरणम्' इति संदिश्य मत्समीपं प्रत्युषसि प्रेषितवान्। ततो मया गुरुवचनगौरवेण सखीप्रेम्णा च क्षीरोदेन सार्धं सा तरलिका 'सखि कादम्बरि, किं दुःखितमपि जनमतितरां दुःखयसि।

इसके बाद उसने अपनी सखियोंके समक्ष शपथ खाकर कहा—'यदि किसी तरह मेरी इच्छाके विरुद्ध पिताजी किसीके साथ हठपूर्वक मेरा विवाह करना चाहेंगे तो मैं अनशन करके, आगमें जलकर, फँसरी लगाकर या कि विष खाकर अपने प्राण दे दूँगी।' अपनी कन्याके किये हुए निश्चय तथा ये अकाट्य वचन परिजनों द्वारा कानों-कान महाराज चित्ररथने भी सुने। समय बीतते-बीतते कादम्बरी जब सयानी हो गयी तो उसे देखकर वे बहुत सन्तप्त हुए और उन्हें क्षणभर भी चैन मिलना दूभर हो गया। इकलौती सन्तति होनेके नाते उनका कादम्बरीपर अत्यधिक स्नेह था। इसी कारण वे उससे कुछ कह भी नहीं पाते थे। सर्वथा निरुपाय होकर उन्होंने महादेवी मदिरासे मंत्रणा की और आज बड़े सबेरे ही क्षीरोद नामके कंचुकी द्वारा मेरे पास कहला भेजा—'वत्से महाश्वेते! एक तो तुम्हारे ही शोकका समाचार सुनकर हमारे हृदय जले जा रहे हैं। उसपर भी कादम्बरीका हठ एक अन्य विपत्तिके रूपमें आ उपस्थित हुआ है। अब उसे मनाना तुम्हारे ही बूतेका काम है।' मैंने भी बड़ोंकी बातका सम्मान करते हुए क्षीरोदके साथ तरलिकाको भेजकर कहलाया है—'सखी कादम्बरी! मुझ दुखियाको तू क्यों और अधिक दुःख दे रही है?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि जीवन्तीमिच्छसि चेन्मां तत्कुरु गुरुवचनमवितथम्' इति संदिश्य विसर्जिता। नातिचिरं गतायां च तस्यामनन्तरमेवेमां भूमिमनुप्राप्तो महाभागः' इत्यभिधाय तूष्णीमभवत्।

अत्रान्तरे लाञ्छनच्छलेन विडम्बयन्निव शोकानलदग्धमध्यं महाश्वेताहृदयम्, उद्वहन्निव मुनिकुमारवधमहापातकम्, दर्शयन्निव चिरकाललग्नं दक्षशापानलदाहचिह्नम्, अविरलभस्माङ्गरागधवलो मृगाजिनप्रावृतार्धो वामस्तन इवाम्बिकाया धूर्जटिजटामण्डलचूडामणिर्भगवानुदगात्तारकाराजः। क्रमेण चोद्गते गगनमहापयोधिपुलिने सप्तलोकनिद्रामङ्गलकलशे कुमुदबान्धवे विघटितकुमुदवने धवलितदशदिशि शङ्खश्वेते श्वेतिमानमातन्वति मानिनीमानदस्यौ शशाङ्कमण्डले, शशिकरकलापकलितास्वातन्वतीषु कृशिमानमौडवीषु प्रभासु, प्रस्रवत्सु च कैलासशशिमणिशिलानां सर्वतः स्रोतःस्राविषु प्रस्रवणेषु, मृणालकन्दलिनि चावस्कन्दपतितचन्द्रकर इव विलुप्तकमलवनशोभे भात्यच्छो-

---

यदि तू चाहती हो कि मैं जीवित रहूँ तो गुरुजनोंकी बात मान ले।' तरलिकाके जाते ही श्रीमान् यहाँ पधारे हैं।' यह कहकर महाश्वेता चुप हो गयी।

उसी समय शंकरजीकी जटाके चूडामणि भगवान् चन्द्रदेव आकाशमें उदित हो गये। वे अपने लांछनके बहाने जैसे शोकाग्निसे दग्ध महाश्वेताके हृदयका अनुकरण कर रहे थे। वे जैसे मुनिकुमार पुण्डरीककी हत्याका महापाप धारण किये हुए थे। चिरकालसे संलग्न दक्षके शापाग्निजनित दाहके चिह्नको उसी लांछनके बहाने प्रकट कर रहे थे। वे अत्यधिक भस्म लगानेके कारण उज्ज्वल एवं काले मृगचर्मसे आधे ढँके पार्वतीके बायें स्तन सदृश दीख रहे थे। क्रमशः धीरे-धीरे जब आकाशरूपी महासागरका तट, सातों लोकोंकी निद्राका मंगलकलश, कुमुदोंका बन्धु, कुमुदवनका विकासक, दसों दिशाओंको उज्ज्वल करनेवाला, शंखसदृश शुभ्र और मानिनियोंके मानका तस्कर चन्द्रमण्डल उदित हो गया। जब कि चन्द्रमाकी किरणोंसे ढँक जानेके कारण नक्षत्रोंकी दीप्ति घट गयी। जब कैलास पर्वतपर चन्द्रकान्तमणिकी शिलाओंके झरनोंसे सब ओर जलप्रवाह होने लगा। जब मृणालभरे अच्छोद सरोवरके कमलवनकी शोभा नष्ट करती हुई चन्द्रमाकी किरणें जलपर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दसरःपयसि, समुपोढमोहनिद्रे च द्राघीयोवीचिविचलितवपुषि विरुवति विरहिणि चक्रवाकचक्रवाले, निवृत्ते च चन्द्रोदये विद्रुते हर्षनयनजलकणनीहारिणि वियद्विहारिणि मनोहारिणि विद्याधराभिसारिकाजने, चन्द्रापीडः सुप्तामालोक्य महाश्वेतां पल्लवशयने शनैः शनैः समुपाविशत्। 'अस्यां वेलायां किं नु खलु मामन्तरेण चिन्तयति वैशम्पायनः, किं वा वराकी पत्रलेखा, किं वा राजपुत्रलोकः' इति चिन्तयन्नेव निद्रां ययौ।

अथ क्षीणायां क्षपायामुषसि संध्यामुपास्य शिलातलोपविष्टायां पवित्राण्यघमर्षणानि जपन्त्यां महाश्वेतायां निर्वर्तितप्राभातिकविधौ चन्द्रापीडे तरलिका षोडशवर्षवयसा, सावष्टम्भाकृतिना, मदखेदालसगजगमनगुरूणि पदानि निक्षिपता, पर्युषितचन्दनाङ्गरागधूसरोरुदण्डद्वयेन कुंकुमरागपिञ्जरारुणेन चामीकरशृंखलाकलापनिबिडनियमितं

गिरकर उसको चमकाने लगीं। जब मोहकी नींदमें पड़कर सरोवरकी बड़ी-बड़ी तरङ्गोंकी उछालसे कम्पितगात्र चकवा-चकवीका जोड़ा बिछुड़कर चिचियाने लगा। जब चन्द्रोदयका समय व्यतीत हो गया और नेत्रोंसे आनन्दके आँसुओंकी बूँदोंके रूपमें बरसाती हुई आकाशचारिणी विद्याधरोंकी सुन्दरी अभिसारिकायें इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगीं। तब महाश्वेताको सोती देखकर अपनी पल्लवमयी शय्यापर चन्द्रापीड स्वयं भी धीरेसे लेटा और 'मेरे बारेमें वैशम्पायन, बेचारी पत्रलेखा तथा अन्यान्य राजकुमार लोग क्या सोचते होंगे।' इन्हीं बातोंको सोचता हुआ वह सो गया।

रात बीतनेपर सवेरे सन्ध्यावन्दन करके शिलातलपर बैठी महाश्वेता जब पवित्र अघमर्षण मंत्र जप रही थी और चन्द्रापीड प्रभातकालीन सारा कृत्य समाप्त कर चुका था कि इतनेमें बड़े सवेरे तरलिका आ गयी। उसके पीछे-पीछे एक सोलह वर्षका गंधर्वबालक केयूरक भी मदके खेदसे मंद-मंद चलनेवाले गजराजकी तरह भारी-भारी पावँ रखता हुआ आया था। उसका चेहरा स्वाभिमानसम्पन्न तथा एक सुसभ्य नागरिक जैसा था। बासी चन्दन लगे रहनेके कारण उसके दोनों ही उरुदंड मटमैले हो रहे थे। तनपर लगे कुंकुमके कारण वह लाल-पीले मिश्रित रंगका दीख रहा था। वह केवल धोती पहने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कक्षाबन्धातिरिक्तप्रेङ्खत्पल्लवमधरवास एव केवलं वसानेन, निरुदरतया विभक्तमध्येन, विपुलवक्षसा, दीर्घानुवृत्तपीनबाहुना, वामप्रकोष्ठदोलायमानमाणिक्यवलयेन, कर्णाभरणमणेर्विप्रकीर्यमाणमधोमुखकिरणेन्द्रायुधजालवर्णांशुकोत्तरीयमिवैकस्कन्धक्षिप्तमुद्वहता, चूतपल्लवकोमलमनवरतताम्बूलबद्धरागान्धकारमधरं दधता, कर्णान्तायतस्य स्वभावधवलम्य धवलिम्ना लोचनयुगलस्य धवलयतेव दिगन्तराणि कुमुदवनानीव वर्षता, पुण्डरीकमयमिव दिवसं कुर्वता, कनकपट्टपृथुललाटेन, अलिकुलनीलसरलशिरसिजेन, अग्राम्याकृतिना, राजकुलसंपर्कचतुरेण, गन्धर्वदारकेण केयूरकनाम्नानुगम्यमाना प्रत्यूषस्येव प्रादुरासीत्। आगत्य च कोऽयमित्युपजातकुतूहला चन्द्रापीडं सुचिरमवलोक्य महाश्वेतायाः समीपमुपसृत्य कृतप्रमाणा सविनयमुपाविशत्। अनन्तरं चातिदूरानतेनोत्तमाङ्गेन प्रणम्य केयूरकोऽपि महाश्वेतादृष्टिनिसृष्टं

हुए था और वह सुवर्णकी करधनीसे कमरमें मजबूत बँधी हुई थी। धोतीका किनारा कक्षबन्ध त्यागकर अलग फहरा रहा था। उदर कृश होनेके कारण उसके शरीरका मध्यभाग अलग दीख रहा था। उसकी छाती विशाल थी। उसकी भुजायें लम्बी, गोल और मोटी थीं। उसके वाम प्रकोष्ठपर मानिकका निर्मित कंकण हिल रहा था। उसने कानोंमें जो आभूषण पहन रक्खे थे, उनमें जटित विविध मणियोंकी दीप्ति उसके कंधेके दुपट्टेको इन्द्रधनुषके समान रंगीन बना रही थी। उसका अधर नवीन आम्रपल्लवके समान कोमल था और सदा पान खानेके कारण काला पड़ गया था। कानों तक फैले और स्वभावतः धवल नयनोंकी शुभ्र कान्तिसे वह जैसे सभी दिशाओंको उज्ज्वल किये दे रहा था। वह नेत्रोंसे जैसे कुमुदपुष्पकी वर्षा कर रहा था और सम्पूर्ण दिवसको मानो पुण्डरीक-कमलमय बनाये दे रहा था। उसका माथा सुवर्णपट्टके समान विशाल था। उसके बाल भ्रमरसमुदाय सरीखे काले और मुलायम थे। राजकुलका सम्पर्क होनेके कारण वह बड़ा चतुर था। वहाँ पहुँचकर तरलिकाने चन्द्रापीडको बड़ी देर तक देखा। बादमें 'यह कौन है?' इस जिज्ञासाके कुतूहलवश वह महाश्वेताके पास जा पहुँची और सविनय प्रणाम करके बैठ गयी। तदनन्तर केयूरक भी गया और बहुत नीचे तक मस्तक झुका-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नातिसमीपवर्ति शिलातलं भेजे। उपविष्टश्च तमदृष्टपूर्वमधःकृतकुसुमायुधमुपहसितसुरासुरगन्धर्वविद्याधररूपं रूपातिशयं चन्द्रापीडस्य दृष्ट्वा विस्मयमापेदे।

परिसमाप्तजपा तु महाश्वेता पप्रच्छ तरलिकाम्—'किं त्वया दृष्टा प्रियसखी कादम्बरी कुशलिनी। करिष्यति वा तदस्मद्वचनम्' इति। अथ सा तरलिकया विनयावनतमौलिरीषदवलम्बितकर्णपाशमतिमधुरया गिरा व्यजिज्ञपत्—'भर्तृदारिके, दृष्टा खलु मया भर्तृदारिका कादम्बरी सर्वतः कुशलिनी। विज्ञापिता च निखिलं भर्तृदुहितुः संदेशम्। आकर्ण्य च यत्तया संततमुक्तस्थूलाश्रुबिन्दुवर्षं रुदित्वा प्रतिसंदिष्टम्, तदेष तयैव विसर्जितस्तस्या एव वीणावादकः केयूरकः कथयिष्यति' इत्युक्त्वा विरराम। विरतवचसि तस्यां केयूरकोऽब्रवीत्—'भर्तृदारिके महाश्वेते, देवी कादम्बरी दृढदत्तकण्ठग्रहा त्वां विज्ञापयति—'यदियमागत्य मामवदत्तरलिका तत्कथय किमयं गुरुजनानुरोधः, किमिदं

कर प्रणाम किया और महाश्वेताकी दृष्टि द्वारा बताये हुए पास ही एक शिलातलपर बैठ गया। वहाँ बैठकर वह एक पहले कभी न देखे हुए और अपने सौंदर्यसे कामदेवको भी नीचा दिखानेवाले, देव-दानव-गन्धर्व तथा विद्याधरोंके भी रूपका उपहास करनेवाले चन्द्रापीडका परम उत्कृष्ट रूप देखकर केयूरकको बड़ा आश्चर्य हुआ।

जप समाप्त होनेके बाद महाश्वेताने तरलिकासे पूछा—'तूने मेरी सखी कादम्बरीको सकुशल देखा? क्या अब वह मेरा कहा करेगी?' तब तरलिकाने कानका तनिक स्पर्शकर और विनयके साथ माथा नीचे करके बड़ी ही मधुर वाणीमें कहा—'राजपुत्रि! मैंने आपकी प्रियसखी कादम्बरीको सर्वथा कुशलिनी देखा। आपका पूरा संदेश मैंने उन्हें कह सुनाया। सो सुनकर आँसूकी बड़ी-बड़ी बूँदें गिराती हुई रुदनपूर्वक उसने जो प्रत्युत्तर दिया है, उसे यह उनका वीणावादक केयूरक आपको बतायेगा। इतना कहकर वह चुप होगयी। उसके शान्त हो जानेपर केयूरक बोला—'भर्तृदारिके महाश्वेते! देवी कादम्बरी आपको दृढ कंठालिंगन (अँकावर भेट) करके कहती हैं कि 'तरलिकाने आकर मुझसे जो कुछ कहा है, वह क्या गुरुजनोंका अनुरोध है? अथवा मेरे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मच्चित्तपरीक्षणम्, किं गृहनिवासापराधनिपुणोपालम्भः, किं प्रेमविच्छेदाभिलाषः, किं भक्तजनपरित्यागोपायः, किं वा प्रकोपः। जानास्येव मे सहजप्रेमनिस्यन्दनिर्भरं हृदयम्। एवमतिनिष्ठुरं संदिशन्ती कथमसि न लज्जिता। तथा मधुरभाषिणी केनासि शिक्षिता वक्तुमप्रियं परुषमभिधातुं वा। स्वस्थोऽपि तावत्क इव सहृदयः कनीयस्यवसानविरसे कर्मणीदृशे मतिमुपसर्पयेत्, किमुतातिदुःखाभिहतहृदयोऽस्मद्विधो जनः। सुहृद्दुःखखेदिते हि मनसि कैव सुखाशा कैव निर्वृतिः, कीदृशाः संभोगाः, कानि वा हसितानि। येनेदृशीं दशामुपनीता प्रियसखी, कथमतिदारुण तमहं विषमिवाप्रियकारिणं कामं सकामं कुर्याम्। दिवसकरास्तमयविधुरासु नलिनीषु सहवासपरिचयाच्चक्रवाकयुवतिरपि पतिसमागमसुखानि त्यजति, किमुत नार्यः। अपि च यत्र भर्तृविरहविधुरा परिहृतपरपुरुषदर्शना दिवानिशं निवसति प्रियसखी, कथमिव तन्मम

चित्तकी परीक्षा लेनेके लिए कहा गया है? या कि मैं तुम्हारे साथ न रहकर घरपर रह रही हूँ, उसी अपराधका यह मर्मभरा उलाहना है? अथवा प्रेमविच्छेद करनेकी इच्छा है? या कि एक भक्तजनको त्यागनेका उपाय अथवा कोप है? यह तो आपको मालूम ही है कि मेरा हृदय स्वाभाविक प्रेमके रससे लबालब भरा हुआ है। यह जानते हुए भी आपको ऐसा निष्ठुर संदेश भेजनेमें लज्जा नहीं आयी? आप तो बड़ी मधुरभाषिणी हैं, फिर इस प्रकार अप्रिय और नीरस बात करना आपको किसने सिखाया? सर्वथा स्वस्थ रहते हुए कोई भी ऐसा सहृदय व्यक्ति न होगा, जो ऐसे तुच्छ तथा परिणाममें रसहीन काममें बुद्धि लगायेगा। तब फिर मुझ जैसी दुःखसे दग्ध हृदयकी तो बात ही न्यारी है। अपनी सखीके दुःखसे खिन्न मेरे हृदयको भला सुखकी आशा क्योंकर हो सकती है? उसके लिए कैसी शान्ति, कैसा संभोग और कैसा हास्य? जिसने मेरी प्रिय सखीकी ऐसी दुर्दशा की, विषके समान भीषण उस कामदेवको मैं क्या सकाम करूँगी? भगवान् सूर्यके वियोगसे जब कमलिनी विधवा जैसी शोकातुर हो जाती है, तब सहवासके परिचयवश चकवी भी अपने पतिका समागम छोड़ देती है। तब स्त्रियोंके विषयमें क्या कहना है? फिर जब कि पतिवियोगसे पीड़ित मेरी प्रियसखी परपुरुषका दर्शन त्यागकर अहर्निशि एकान्त-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृदयमपरः प्रविशेज्जनः। यत्र च भर्तृविरहविधुरा व्रतकर्शिताङ्गी प्रियसखी महत्कृच्छ्रमनुभवति, तत्राहमवगणय्यैतत्कथमात्मसुखार्थिनी पाणिं ग्राहयिष्यामि ? कथं वा मम सुखं भविष्यति ? त्वत्प्रेम्णा चास्मिन्वस्तुनि मया कुमारिकाजनविरुद्धं स्वातन्त्र्यमालम्ब्याङ्गीकृतमपयशः, समवधीरितो विनयः, गुरुवचनमतिक्रामितम्, न गणितो लोकापवादः, वनिताजनस्य सहजमाभरणमुत्सृष्टा लज्जा, सा कथय कथमिव पुनरत्र प्रवर्तते। तदयमञ्जलिरुपरचितः, प्रणामोऽयम्, इदं च पादग्रहणम्, अनुगृहाण माम्, वनमितो गतासि मे जीवितेन सहेति मा कृथाः स्वप्नेऽपि पुनरिममर्थं मनसि' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत्।

महाश्वेता तु तच्छ्रुत्वा सुचिरं विचार्य 'गच्छ। स्वयमेवाहमागत्य यथार्हमाचरिष्यामि' इत्युक्त्वा केयूरकं प्राहिणोत्। गते च केयूरके चन्द्रापीडमुवाच—'राजपुत्र ! रमणीयो हेमकूटः, चित्रा च चित्ररथरा-

---

वास कर रहा है, तब फिर मेरे हृदयमें कोई अन्य पुरुष भला कैसे प्रवेश पा सकता है ? जब कि मेरी प्रियसखी महाश्वेता पतिवियोगसे कातर होकर कठोर व्रतों द्वारा अपना शरीर गलाती हुई अपार दुःख भोग रही है, तब इन सब कष्टोंको कुछ न गिनकर मैं अपने सुखके लिए विवाह करूँ ? और ऐसा करके भी मुझे सुख मिलेगा ? आपके प्रेमवश मैं इस सुखके विषयमें कुमारी कन्याओंके विरुद्ध स्वतंत्रता अंगीकार करके अपयशका भाजन बनी हूँ। मैंने विनयकी अवहेलना कर दी है। गुरुजनोंका कहना नहीं माना है। लोकापवादको कुछ नहीं गिना है। नारीजातिके स्वाभाविक आभूषण लज्जा तकको त्याग दिया है। तब आप ही कहें कि मैं ब्याह कैसे करूँ ? अतएव मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करके और पैर पकड़कर कहती हूँ कि मेरे ऊपर कृपा करिए। मेरे प्राणोंके साथ-साथ आप वहाँ वनवास कर रही हैं। अतः अब आप स्वप्नमें भी यह बात मनमें न लाइएगा।' ऐसा कहकर केयूरक चुप हो गया।

यह सुनकर महाश्वेताने भली-भाँति विचार करके 'अच्छा, तुम जाओ। मैं स्वयं वहाँ आकर जो उचित होगा, सो करूँगी।' ऐसा कहकर उसे भेज दिया। केयूरकके चले जानेपर वह चन्द्रापीडसे बोली—'राजपुत्र ! हेमकूट बड़ा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जधानी, बहुकुतूहलः किंपुरुषविषयः, पेशलो गन्धर्वलोकः, सरलहृदया महानुभावा च कादम्बरी। नातिखेदकरमिव गमनं कलयसि, नावसीदति वा गुरुप्रयोजनम्, अदृष्टचरावपयकुतूहलि वा चेतः, मद्वचनमनुरुन्यते वा भवान्, अतिसुखदायि वाश्चर्यदर्शनम, अर्हसि वा प्रणयम्, इममप्रत्याख्यानयोग्यं वा जनं मन्यसे, समारूढो वा परिचयलेशः, अनुग्राह्यो वायं जनः, ततो नार्हसि निष्फलां कर्तुमभ्यर्थनामिमाम्। इतो मयैव सह गत्वा हेमकूटमतिरमणीयतानिधानं तत्र दृष्ट्वा च मन्निर्विशेषां कादम्बरीमपनीय तस्याः कुमतिमनोमोहविलसितमेकमहो विश्रम्य श्वोभूते प्रत्यागमिष्यसि। मम हि निष्कारणबान्धवं भवन्तमालोक्यैव दुःखान्धकारभाराक्रान्तेन महतः कालादुच्छ्वसितमिव चेतसा श्रावयित्वा स्ववृत्तान्तमिमं सह्यतामिव गतः शोकः। दुःखितमपि जनं रमयन्ति सज्जनसमागमाः। परसुखोपपादनपराधीनश्च भवादृशां गुणो-

---

रमणीक प्रदेश है। राजा चित्ररथकी राजधानी बड़ी विचित्र है। किम्पुरुष देश बड़ा कुतूहलपूर्ण है। गन्धर्व लोग बहुत कोमल स्वभावके होते हैं और मेरी सखी कादम्बरी बड़ी प्रभावशालिनी एवं बड़ी सरल हृदयकी कन्या है। अतएव यदि आप वहाँ चलना खेदजनक न समझते हों। किसी बड़े प्रयोजनकी हानि न हो। आपका हृदय यदि किसी कुतूहलभरे स्थानको देखनेके लिए लालायित हो। यदि मेरी बात मनको भाती हो। यदि आश्चर्यजनक वस्तु देखनेमें रुचि हो। यदि आप मेरे प्रेमको चाहते हों। यदि मेरी प्रार्थनाको टालना अनुचित समझते हों। यदि मुझसे कुछ परिचय हो गया हो और आप मुझे अपने अनुग्रहकी अधिकारिणी समझते हों तो आप मेरी प्रार्थनाको निष्फल न करें। आप यहाँसे मेरे साथ रमणीयताके आगार हेमकूट चलकर वहाँ मेरी अभिन्न सखी कादम्बरीको देखें। वहाँपर उसका मोहजनित विकार दूर करके एक दिन विश्राम करनेके पश्चात् लौट आइएगा। आप मेरे अकारण बान्धव बन गये हैं। आपको देख तथा अपनी आपबीती सुनाकर घोर दुःखरूपी अन्धकारके भारसे दबा हुआ मेरा हृदय बहुत दिनों बाद आज जैसे हल्का होकर भारी शोक भी सहनेमें समर्थ हो गया है। सज्जनोंकी संगति दुखिया जनोंको भी आनन्दित कर देती है। फिर आप जैसे महानुभावोंका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दयः' इत्युक्तवतीं चैनां चन्द्रापीडोऽब्रवीत्—'भगवति, दर्शनात्प्रभृति परवानयं जनः कर्तव्येषु यथेष्टमशङ्कितया नियुज्यताम्' इत्यभिधाय तया सहैवोदचलत्।

क्रमेण च गत्वा हेमकूटमासाद्य गन्धर्वराजकुलं समतीत्य काञ्चनतोरणानि सप्तकक्षान्तराणि कन्यान्तःपुरद्वारमवाप। महाश्वेतादर्शनप्रधावितेन दूरादेव कृतप्रणामेन कनकवेत्रलताहस्तेन प्रतीहारजनेनोपदिश्यमानमार्गः प्रविश्यासंख्येयनारीशतसहस्रसंबाधः स्त्रीमयमपरमिव जीवलोकम्, इयत्तां ग्रहीतुमेकत्र त्रैलोक्यस्त्रैणमिव संहृतम्, अपुरुषमिव सर्गान्तरम्, अङ्गनाद्वीपमिवापूर्वमुत्पन्नम्, पञ्चममिव नारीयुगावतारम्, अपरमिव पुरुषद्वेषि प्रजापतिनिर्माणम्, अनेककल्पकल्पनार्थमुत्पाद्य स्थापितमिवाङ्गनाकोशम्, अतिविस्तारिणा युवतिजनलावण्यप्रभापूरेण

गुणोदय तो दूसरोंको सुखी करनेमें ही व्यस्त रहता है।' ऐसा कहती हुई महाश्वेतासे चन्द्रापीडने कहा—'भगवति! जब आपका दर्शन हुआ, तभीसे मैं आपके अधीन हो चुका हूँ। आप निःशंक मनसे जो चाहें, वह आज्ञा दे सकती हैं।' ऐसा कहकर वह महाश्वेताके साथ चल पड़ा।

वहाँसे क्रमशः चलता हुआ वह हेमकूट पहुँचा तथा गन्धर्वराजके घर जाकर स्वर्णतोरणसे अलंकृत सात ड्योढ़ियाँ लाँघनेके बाद कन्याके अन्तःपुरके द्वारपर पहुँचा। वहाँ महाश्वेताको देखते ही दौड़कर प्रणाम करके हाथमें सोनेकी छड़ी लिए प्रतीहारजन उन्हें मार्ग दिखाने लगे। द्वारके भीतर जाते ही चन्द्रापीडने देखा तो उसे ऐसा लगा कि जैसे लाखों स्त्रियोंसे भरा वह नारियोंका एक स्वतंत्र संसार हो। जैसे गिनती करनेके निमित्त वहाँ समस्त त्रिलोकीकी स्त्रियाँ एकत्र कर ली गयी हों। वह जैसे एक ऐसी सृष्टि थी कि जहाँ पुरुष कोई नहीं था। जैसे वह एक अपूर्व स्त्रीद्वीप हो। जैसे नारीयुगका पाँचवाँ अवतार हो। युग चार ही होते हैं, किन्तु यह पाँचवाँ नारीयुग था। जैसे पुरुषोंसे द्वेष करके प्रजापतिने एक दूसरा संसार ही रच दिया हो अथवा जैसे अनेकानेक कल्पोंमें रचनाके निमित्त इकट्ठे ही उत्पन्न करके तैयार रक्खा हुआ स्त्रियोंका कोष हो। ऐसी थी कन्याके अन्तःपुरकी स्थिति। अतिशय विस्तृत युवतीसमुदायकी लावण्यमयी प्रभाका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्लावितदिगन्तरेण सिञ्चतेवामृतरसविसरेण दिवसमार्द्रीकुर्वतेव भुवनान्तरालं बहलप्रभावर्षिणा मरकतमणिमयेन सर्वतः परिगततया तेजोमयमिव चन्द्रमण्डलसहस्रैरिव निर्मितसंस्थानम्, ज्योत्स्नयेव घटितसंनिवेशम्, आभरणप्रभाभिरिव निष्पादितदिगन्तरम्, विभ्रमैरिव कृतसर्वोपकरणम्, यौवनविलासैरिवोत्पादितावयवम्, रतिविलसितैरिव रचितसंचयम्, मन्मथाचरितैरिव कल्पितावकाशम्, अनुरागेणेवानुलिप्तसकलजनप्रवेशम्, शृंगारमयमिव, सौन्दर्यमयमिव, सुरताधिदैवतमयमिव, कुसुमशरमयमिव, कुतूहलमयमिव, आश्चर्यमिव, सौकुमार्यमयमिव, कुमारः कुमारीपुराभ्यन्तरं ददर्श। अतिबहलतया च तस्य कन्यकाजनस्य समन्तादाननद्युतिभिरिन्दुबिम्बवृष्टिमिव पतन्तीम्, अपाङ्गविक्षेपैश्चलितकुवलयवनमयीमिव क्रियमाणामवनीम्, अतिनिभृतभ्रूलताविभ्रमैः कामकार्मुकबलानीव प्रचलितानि, शिरसिज-

---

प्रवाह वहाँ सर्वत्र व्याप्त दीखता था। दिनके समय वह जैसे अमृतरसके प्रवाहसे सिंच रहा था। इसी प्रकार वह अन्तःपुर जैसे आकाशको गीला करता, सभी दिशाओंको डुबाता और अधिकाधिक मरकतमणिमयी प्रभाकी वर्षा करता हुआ बहुत विस्तृत होता जा रहा था। इससे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वह तेजोमय हो, सहस्रों चन्द्रमण्डलोंसे बना हुआ हो, जैसे चन्द्रमाकी चाँदनीसे उसका निर्माण हुआ हो, आभूषणोंकी दीप्तिसे जैसे उसमें विभिन्न दिशाओंका अवकाश निर्मित किया गया हो, भौंहोंके विलाससे जैसे उसके सब उपकरण बने हों, यौवनके विलाससे जैसे उसके सब अङ्ग बने हुए हों, वहाँ जैसे रतिविलासका ही संग्रह किया गया हो, कामदेवके आचरणोंसे ही जैसे वहाँके सब स्थान बने हुए हों, अनुरागसे ही जैसे वहाँके सभी जनप्रवेशके मार्ग लिपे हुए हों, जैसे वह शृंगारमय हो, सौन्दर्यमय हो, सुरत-अधिदैवतमय हो, कुतूहलमय हो, आश्चर्यमय हो, सौकुमार्यमय हो और सर्वथा प्रेममय हो। कन्याओंका अतिशय आधिक्य होनेके कारण उनके मुखोंकी दीप्तिसे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वहाँ चारों ओर चन्द्रबिम्बोंकी वर्षा हो रही हो। उनके कटाक्षविक्षेपसे ऐसा लगता था कि जैसे सारी धरती चलती-फिरती कुवलय-वनमयी हो रही हो। स्वच्छन्दतापूर्वक किये गये भ्रूलता-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलापान्धकारैर्बहुलपक्षप्रदोषार्थानिव संवध्नतः, स्मितप्रभाभिरुत्फुल्लकुसुमधवलानिव वसन्तदिवसान्संचरतः, श्वसितानिलपरिमलैर्मलयमारुतानिव परिभ्रमतः, कपोलमण्डलालोकैर्माणिक्यदर्पणसहस्राणीव स्फुरितानि, करतलरागेण रक्तकमलवनवर्षिणमिव जीवलोकम्, कररुहस्फुरणेन कुसुमायुधशरसहस्रैरिव संछादितदिगन्तराणि, आभरणकिरणेन्द्रायुधालकैरुड्डीयमानानीव भवनमयूरवृन्दानि, यौवनविकारैरुत्पाद्यमानानीव मन्मथसहस्राण्यद्राक्षीत् । उचितव्यापारव्यपदेशेन कुमारिकाणां सखीहस्तावलम्बेषु पाणिग्रहणानि, वेणुवाद्येषु चुम्बनव्यतिकरान्, वीणासु कररुहव्यापारान्, कन्दुकक्रीडासु करतलप्रहारान्, भुवनलतासेककलशकण्ठेषु भुजलतापरिष्वङ्गान्, लीलादोलासु नितम्बस्तनप्रेङ्खितानि, ताम्बूलवीटिकावखण्डनेषु दशनोपचारान्, वकुलवि-

---

के विलाससे ऐसा लगता था कि जैसे कामदेवके धनुषकी कतार चल रही हो । केशकलापके अन्धकाररूपमें जैसे वहाँ कृष्णपक्षके अगणित प्रदोष आ उपस्थित हुए हों । उनके मुसकानकी दीप्तिसे ऐसा लगता था कि जैसे प्रफुल्लित कुसुमोंसे उज्ज्वल वसन्तके दिन विचर रहे हों । उनके श्वासवायुकी सुगन्धिसे ऐसा भासमान होता था कि जैसे मलयवायु डोल रही हो । असंख्य कपोलोंकी दमकसे ऐसा लगता था कि जैसे हजारों माणिक्यके बने दर्पण जगमगा रहे हों । उनकी हथेलियोंके लाल रंगसे ऐसा लगता था कि जैसे सारी पृथिवीपर लाल कमलके फूलोंकी वर्षा हो रही हो । उनके नखोंकी दीप्तिसे ऐसा लगता था कि जैसे कामदेवके हजारों बाणोंसे सभी दिशायें भर गयी हों । उनके आभूषणोंकी इन्द्रधनुष सरीखी बहुरंगी किरणोंसे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे पालतू मोरोंका झुंड उड़ रहा हो और उनके यौवन-विकारसे ऐसा भासमान होता था कि जैसे वहाँ हजारों कामदेव उत्पन्न हो गये हों । चन्द्रापीडने यह सब वहाँ देखा । उन कुमारियोंके उचित कर्म करनेके ब्याजसे सखियों द्वारा हाथ पकड़े जानेमें पाणिग्रहण, वंशीवादनमें चुम्बन, वीणावादनमें नखव्यापार, गेंदके खेलमें करतलप्रहार, घरेलू लताओंका सिंचन करनेके लिए कलश कन्धेपर रखनेमें भुजालिङ्गन, हिंडोलेपर झूला झूलनेमें नितम्ब तथा स्तनोंका संचालन, पानका बीड़ा चबानेमें दन्तक्षत, बकुल-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

टपेषु मधुगण्डूषप्रचारान्, अशोकतरुताडनेषु चरणाभिघातान्, उपहारकुसुमस्खलनेषु सीत्कारानतिरिक्तं सुरतमिवाभ्यस्यन्तीनामपश्यत्।

यत्र च कन्यकाजनस्य कपोलतलालोक एव मुखप्रक्षालनम्, लोचनान्येव कर्णोत्पलानि, हसितच्छवय एवाङ्गरागाः, निःश्वासा एवाधिवासगन्धयुक्तयः, अधरद्युतिरेव कुङ्कुममुखानुलेपनम्, आलापा एव तन्त्रीनिनादाः, भुजलता एव चम्पकवैकक्ष्यमालाः, करतलान्येव लीलाकमलानि, स्तना एव दर्पणाः, निजदेहप्रभैवांशुकावगुण्ठनम्, जघनस्थलान्येव विलासमणिशिलातलानि, कोमलाङ्गुलिराग एव चरणालक्तरसः, नखमणिमरीचय एव कुट्टिमोपहारकुसुमप्रकराः। यत्र चालक्तरसोऽपि चरणातिभारः, बकुलमालिकामेखलाकलनमपि गमनविघ्नकरम्, अङ्गरागगौरवमप्यधिकश्वासनिमित्तम्, अंशुकभारोऽपि ग्लानिकारणम्,

---

(मौलसिरी) के वृक्षोंपर मदिराके कुल्लेका प्रक्षेप, अशोक वृक्षोंका ताड़न करनेमें चरणाभिघात तथा उपहारपुष्पोंके गिरनेमें सीत्कार, इस प्रकारके विविध कार्य करके जैसे वे कुमारिकायें वहाँ अत्यधिक सुरतव्यापारका अभ्यास कर रही थीं। चन्द्रापीडने वहाँ यह सब कार्यकलाप होते देखा।

वहाँपर उन कन्याओंके मुखका प्रकाश ही मुखप्रक्षालन (मुँह धोनेका जल) था। उनके नेत्र ही कर्णकमल थे। उनकी हास्यशोभा ही अंगलेप था। उनके निःश्वास ही वस्त्र सुगन्धित करनेके उपकरण थे। उनके अधरोंकी दीप्ति ही केसरका लेप था। उनका परस्पर वार्तालाप वीणाका निनाद था। उनकी भुजलता ही चम्पाकी माला थी। उनकी हथेलियाँ ही लीलाकमल थीं। उनके स्तन ही दर्पण थे। उनके शरीरकी कान्ति ही वस्त्रनिर्मित अवगुण्ठन था। उनके जघनस्थल ही विलास करनेके लिए नियत मणिमय शिलातल थे। उनकी कोमल उँगलियोंकी लालिमा ही पाँवोंमें लगानेकी महावर थी और उनकी नखमणियोंसे निकलनेवाली किरणें ही शृंगारके लिए चबूतरेपर रक्खे हुए फूल थे। वे कुमारियाँ इतनी सुकुमार थीं कि पैरमें लगा हुआ महावरका रंग भी उन्हें बोझ लगता था। मौलसिरीकी मालासे बनी करधनी भी पहनकर चलना उनके लिए कठिन था। शरीरमें चंदन आदिके लेपका भार भी उन्हें असह्य हो उठता था और उससे उनके श्वासकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मङ्गलप्रतिसरवलयविधृतिरपि करतलविधुतिहेतुः, अवतंसकुसुमधारणमपि श्रमः, कर्णपूरकमलतरलमधुकरपक्षपवनोऽप्यायासकरः। तथा च यत्र सखीदर्शनेष्वकृतहस्तावलम्बनमुत्थानमतिसाहसम्, प्रसाधनेषु हारभारसहिष्णुता स्तनकार्कश्यप्रभावः, कुसुमावचयेषु द्वितीयपुष्पग्रहणमप्ययुवतिजनोचितम्, कन्यकाविज्ञानेषु माल्यग्रन्थनमसुकुमारजनव्यापारः, देवताप्रणामेषु मध्यभागभङ्गो नातिविस्मयकरः।

तस्य चैवंविधस्य किंचिदभ्यन्तरमतिक्रम्येतश्चेतश्च परिभ्रमतः कादम्बरीप्रत्यासन्नस्य परिजनस्य शुश्राव तांस्तानतिमनोहरानालापान्। तथाहि—'लवलिके, कल्पय केतकीधूलिभिर्लवलीलतालवालमण्डलानि। सागरिके, गन्धोदकदीर्घिकासु विकिर रत्नवालुकाम्। मृणालिके, कृत्रि-

---

गति बढ़ जाती थी। पहने हुए वस्त्रोंके भारसे भी उन्हें ग्लानि होने लगती थी। मंगलसूत्रके कंगनको पहननेसे उनके हाथ काँपने लगते थे। शोभाके लिए जूड़े आदिमें फूल लगानेपर उन्हें थकान आने लगती थी। कानमें पहने पुष्पके कर्णपूरपर यदि भौंरे मँडराते थे तो उनके पंखोंकी हवासे भी उन्हें कष्ट होता था। उस अन्तःपुरकी कन्याओंमें सखियोंसे भेंटनेके लिए बिना किसीके हाथका सहारा लिये उठना भी बड़े साहसका काम समझा जाता था। अलंकारोंमें हारके भारको सहन कर लेना स्तनकी कठोरताका प्रभाव माना जाता था। फूल चुननेके अवसरपर एकके बाद दूसरा फूल चुनना भी उन युवतियोंके लिए अयोग्य कार्य था। उन कन्याओंमें फूलकी माला गूँथना भी मेहनतका काम समझा जाता था। देवताओंको प्रणाम करते समय सूक्ष्मतावश उनकी कमरका दुहरा हो जाना कोई विस्मयजनक बात नहीं मानी जाती थी।

इस प्रकारके उस मनोहर अन्तःपुरके भीतर तनिक आगे बढ़कर कादम्बरीकी समीपवर्तिनी एवं इधर-उधर फिरनेवाली दासियोंके बड़े सुन्दर वार्तालाप सुनायी पड़े। जैसे—'अरी ओ लवलिके! केवड़ेके फूलोंका रज लेकर लवलीलताके थाले बाँध दे। सागरिके! तू सुगन्धित जलसे भरे स्वर्णसरोवरमें रत्नोंकी बालू बिछा दे। ओ मृणालिके! तू बनावटी कमलोंपर बने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मकमलिनीषु कुङ्कुमरेणुमुष्टिभिश्छुरय यन्त्रचक्रवाकमिथुनानि। मकरिके, कर्पूरपल्लवरसेनाधिवासय गन्धपात्राणि। रजनिके, तमालवीथिकान्धकारेषु निधेहि मणिप्रदीपान्। कुमुदिके, स्थगय शकुनिकुलरक्षणाय मुक्ताजालैर्दाडिमीफलानि। निपुणिके, लिख मणिशालभञ्जिकास्तनेषु कुङ्कुमरसपत्रभङ्गान्। उत्पलिके, परामृश कनकसंमार्जनीभिः कदलीगृह-मरकतवेदिकाम्। केसरिके, सिञ्च मदिरारसेन बकुलकुसुममालागृहाणि। मालतिके, पाटलय सिन्दूररेणुना कामदेवगृहदन्तवलभिकाम्। नलि-निके, पायय कमलमधुरसं भवनकलहंसान्। कदलिके, नय धारागृहं गृहमयूरान्। कमलिनिके, प्रयच्छ चक्रवाकशावकेभ्यो मृणालक्षीररसम्। चूतलतिके, देहि पञ्जरपुंस्कोकिलेभ्यश्चूतकलिकाङ्कुराहारम्। पल्लविके, भोजय मरिचाग्रपल्लवदलानि भवनहारीतान्। लवङ्गिके, निक्षिप चकोरपञ्जरेषु पिप्पलीदलशकलानि। मधुकरिके, विरचय कुसुमाभरणकानि। मयूरिके, संगीतशालायां विसर्जय किंनरमिथुनानि।

पँचदार चकवेपर मुट्ठी भर-भरके केसरकी बुकनी छिड़क दे। मकरिके! तू कर्पूरपत्रके रससे सभी सुगन्धिपात्रोंको सुगंधित कर दे। रजनिके! तू तमाल-वृक्षोंके अँधेरे कुंजमें मणिदीपोंको रख दे। कुमुदिके! तू अनारके फलोंपर मोतियोंकी जाली लगाकर पक्षियोंसे उनकी रक्षाका प्रबंध कर। अरी निपुणके! तू मणिनिर्मित पुतलियोंके स्तनोंपर केसरके रससे फूल-पत्ती चित्रित कर दे। अरी ओ उत्पलिके! तू केलेके कुंजके मरकतमणिनिर्मित चबूतरेपर उस सोनेकी झाड़ूसे बुहारी कर दे। केसरिके! तू बकुलपुष्पोंकी मालासे बने मंडपमें मदिरा-रसका छिड़काव कर। मालतिके! तू कामदेवके मण्डपवाली हाथीदाँतकी अँटारीपर सिन्दूर मलकर उसे गुलाबी कर दे। नलिनिके! तू पालतू कलहंसोंको कमलका मधुरस पिला दे। कदलिके! तू पालतू मयूरोंको फोहारेके घरमें ले जा। कमलिनिके! तू चकवोंके बच्चोंको मृणालके रसका दूध पिला। अरी आम्र-लतिके! तू पींजरेके पुंस्कोकिलोंको आमकी कलियोंके नये-नये अंकुर खिला दे। पल्लविके! तू पालतू हारीतोंको मिर्चकी मुलायम पत्तियाँ खोंटकर खिला। लवं-गिके! तू चकोरके पींजरेमें पिप्पलीपल्लवके टुकड़े खोंटकर डाल दे। ओ मधु-करिके! तू फूलोंके गहने बना डाल। मयूरिके! संगीतशालामें किन्नरोंके जोड़े

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कन्दलिके, समारोहय क्रीडापर्वतशिखरं जीवंजीवमिथुनानि। हरिणिके, देहि पञ्जरशुकसारिकाणामुपदेशम्' इत्येतान्यन्यानि च परिहासजल्पितान्यश्रौषीत्। तथा हि—'चामरिके, मिथ्यामुग्धतां प्रकटयन्ती कमभिसंधातुमिच्छसि। अयि यौवनविलासैरुन्मत्तीकृते, विज्ञातासि या त्वं स्तनकलशभारावनम्यमानमूर्तिर्मणिस्तम्भमयूरानालम्बसे। परिहासकांक्षिणि, रत्नभित्तिपतितमात्मप्रतिबिम्बमालपसि। पवनहृतोत्तरीयांशुके, हारप्रभाभायासितकरतलाकलयसि। मणिकुट्टिमेपूपहारकमलस्खलनभीते, निजमुखप्रतिबिम्बकानि परिहरसि। जालवातायनपतितपद्मरागालोकं प्रति बालातपशङ्कया करतलमातपत्रीकरोषि। खेदस्रस्तहस्तगलितचामरा नखमणिमयूखकलापमाधुनोषि' इत्येतान्यन्यानि च शृण्वन्नेव कादम्बरीभवनमुपपयौ।

छोड़ आ। कन्दलिके! इस चकोरके जोड़ेको तू क्रीडापर्वतकी चोटीपर चढ़ा दे। हरिणिके! तू पींजरेके तोतों और मैनाओंको पढ़ा।' वहाँपर चन्द्रापीडने इन्हें तथा ऐसे-ऐसे बहुतेरे परिहासके वचन सुने। जैसे—'चामरिके! तू यों झूठा भोलापन दिखाकर किसको ठगना चाहती है? अरी ओ यौवनविलासोन्मत्तिके! मुझे मालूम है कि स्तनकलशके बोझसे शरीर झुक जानेके कारण अब तू मणिमय खम्भोंके मोरोंका सहारा लेकर चलती है। अरी परिहासाकांक्षिणी! अब तो तू रत्नमयी दीवारोंपर पड़ती हुई अपनी परछाहींसे बातें करती है। अरी सखी! तेरा उत्तरीय वायुके झोंकेसे उड़ गया है। उसे न सम्हालकर तू हारकी दीप्तिको पकड़नेकी चेष्टा करती हुई व्यर्थ अपने हाथोंको कष्ट दे रही है। सखी! तू तो मणिमयी भूमिपर रक्खे हुए पूजाके कमलपुष्पोंपर फिसलनेके भयवश अपनी परछाहींसे भी दूर भागती है। अरी सखी! तू तो खिड़कियोंकी जालीपर पड़ते हुए पद्मरागमणिके प्रकाशको बालसूर्य समझकर उसकी धूपसे बचनेके लिए अपने हाथोंसे छतरीका काम ले रही है। अरी सखी! तेरे थके हाथसे चमर गिर पड़ा है, इस बातका तुझे पता नहीं है और अब तू केवल अपनी नखमणिकी किरणोंको ही हिला रही है।' इन वचनोंको सुनता हुआ चन्द्रापीड कादम्बरीके भवनके पास जा पहुँचा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुलिनायमानमुपवनलतागलितकुसुमरेणुपटलैः, दुर्दिनायमानमनिभृतपरभृतनखक्षताङ्गणसहकारफलरसवर्षैः, नीहारायमाणमनिलविप्रकीर्णैर्वकुलसेकसीधुधाराधूलिभिः, काञ्चनद्वीपायमानं चम्पकदलोपहारैः, लीलाशोकवनायमानं कुसुमप्रकरपतितमधुकरवृन्दान्धकारैः, तथा च संचरतः स्त्रीजनस्य रागसागरायमाणं चरणालक्तकरसविसरैः, अमृतोत्पत्तिदिवसायमानमङ्गरागामोदैः, चन्द्रलोकायमानं दन्तपत्रप्रभामण्डलैः, प्रियंगुलतायमानं कृष्णागुरुपत्रभंगैः, लोहितायमानं कर्णाशोकपल्लवैः, धवलायमानं चन्दनरसविलेपनैः, हरितायमानं शिरीपकुसुमाभरणैः, अथ सेवार्थमागतेनोभयत ऊर्ध्वस्थितेन स्त्रीजनेन प्राकारेणेव लावण्यमयेन कृतदीर्घरथ्यामुखाकारं मार्गमद्राक्षीत्। तेन चान्तर्निपत-

---

उस भवनका मार्ग उपवनकी लताओंके पुष्पोंसे पराग गिरनेके कारण किसी सरोवरके तट जैसा दीख रहा था। आँगनके आम्रवृक्षोंपर कोकिलाओंके नखसे कुतरे आम्रफलोंका रस टपकनेके कारण वहाँ नित्य बादलोंके छाये रहनेका भ्रम होता था। वायुके झोंकेसे इधर-उधर बिखरे बकुलवृक्षपर छिड़कावके लिए उपयोगमें लायी गयी मद्यधाराके कणोंसे वहाँ नित्य ओस पड़ती रहनेका भ्रम होता था। यत्र-तत्र चम्पकपत्रोंके ढेर एकत्र होनेसे वह मार्ग सुवर्णमय द्वीप सरीखा दीख रहा था। फूलोंके ढेरपर भौंरोंके झुण्ड मँडराते देखकर वह लीलाके अशोकवनमय जैसा दीखता था। उस मार्गपर जो स्त्रियाँ चला करती थीं, उनके पाँवोंकी महावर छूट-छूटकर लग जाती थी। जिससे वह मार्ग रंगका सागर जैसा प्रतीत होता था। उसपर नित्य अंगरागकी सुगन्धि आती रहती थी, जिससे वह अमृतकी उत्पत्तिके दिवस सरीखा लगता था। दन्तपत्रोंकी दीप्तिके मंडलसे वह चंद्रलोक जैसा प्रतीत होता था। यत्र-तत्र कालागुरुके पत्रभंगकी रचनासे वह प्रियंगुकी लता सदृश दीखता था। कर्णपूरके निमित्त एकत्रित अशोकपत्रोंसे वह एकदम लाल हो रहा था। राहगीरोंके चन्दनरसका लेप किये रहनेसे वह उज्ज्वल दीखता था। सिरसके फूलोंके अलङ्कारसे वह हरा हो रहा था। सदा सेवाके लिए उपस्थित और कतारोंमें खड़ी स्त्रियोंका झुण्ड उसके लावण्यमय प्राकार सरीखा दीख रहा था। ऐसे मार्गको चंद्रापीडने देखा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्तमाभरणकिरणालोकं संपिण्डितं नदीवेणिकाजलप्रवाहमिव वहन्तमपश्यत्। तन्मध्ये च प्रतिस्रोत इव गत्वा प्रतिहारीमण्डलधिष्ठितपुरोभागं श्रीमण्डपं ददर्श।

तत्र च मध्यभागे पर्यन्तरचितमण्डलेनाथ उपविष्टेन चानेकसहस्रसंख्येन परिस्फुरदाभरणसमूहेन कल्पलतानिवहेनेव कन्यकाजनेन परिवृताम्, नीलांशुकप्रच्छदपटप्रावृतस्य नातिमहतः पर्यङ्कस्याश्रये धवलोपधानन्यस्तद्विगुणभुजलतावष्टम्भेनावस्थिताम्, महावराहदंष्ट्रावलम्बिनीमिव महीं विस्तारिणि देहप्रभाजालजले भुजलताविक्षेपपरिभ्रमैः प्रतरन्तीभिरिव चामरग्राहिणीभिरुपवीज्यमानाम्, निपतितप्रतिबिम्बतयाधस्तान्मणिकुट्टिमेषु नागैरिवापह्रियमाणाम, उपान्ते च रत्नभित्तिषु दिक्पालैरिव नीयमानाम्, उपरिमणिमण्डपेष्वमरैरिवोत्क्षिप्यमाणाम्, हृदयमिव प्रवेशितां महामणिस्तम्भैः, आपीतामिव भवनद-

---

आगे बढ़कर भीतरकी ओर निगाह पड़ी तो उसने देखा कि युवतियोंके आभूषणोंका प्रकाश नदीके जलप्रवाहकी नाईं वेगसे बह रहा है। नदीके बहावके विपरीत जैसे कोई आगे बढ़ रहा हो, उसी प्रकार आगे जाकर उसने एक श्रीमंडप देखा। जिसके आगे प्रतीहारियोंकी भारी भीड़ लगी हुई थी।

उस श्रीमण्डपके मध्यमें मंडलाकार बैठी और आभूषणोंकी जगमगाहटसे कल्पलता जैसी दीखनेवाली कई सहस्र कुमारियोंसे घिरी, नीले रंगकी चादरसे ढँके एक ऐसे पलङ्गपर, जो बहुत बड़ा नहीं था, श्वेत तकियेके सहारे हाथ दुहरा करके उठँगी एवं महावराहके दाँतोंपर लटकती पृथिवीके सदृश सुशोभित कादम्बरीको देखा। उसके अगल-बगल खड़ी चामरग्राहिणी दासियाँ हाथ ऊपर-नीचे करके जो चमर झल रही थीं, उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे कादम्बरीके देहकी दीप्तिरूपी जलप्रवाहमें वे हाथ नीचे-ऊपर करके तैर रही हों। नीचेकी मणिमयी फर्शपर जो कादम्बरीका प्रतिबिम्ब पड़ रहा था, उसे देखकर ऐसा लगता था कि जैसे सर्पगण उसे उठाकर नीचे पाताललोकमें लिये जा रहे हों। आस-पासकी दीवारोंपर पड़ते हुए प्रतिबिम्बको देखकर मालूम पड़ता था कि जैसे दिक्पालगण पृथक्-पृथक् उसे उठाये लिये जा रहे हों। मणिमण्डपकी छतपर उसका प्रतिबिम्ब देखकर ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

र्पणैः, अधोमुखेन श्रीमण्डपमध्योत्कीर्णेन विद्याधरलोकेन गगनतलमिवा-रोप्यमाणाम्, चित्रकर्मच्छलेनावलोकनकुतूहलसंपुञ्जितेन त्रिभुवनेनेव परिवृताम्, भूषणरवप्रवृत्तशिखिशतविततचित्रचन्द्रकेण भवनेनापि कौतुकोत्पादितलोचनसहस्रेणेव दृश्यमानाम्, आत्मपरिजनेनापि दर्शनलोभादुपार्जितदिव्यचक्षुषेवानिमिषनयनेन निर्वर्ण्यमानाम्, लक्षणैरपि रागाविष्टैरिवाधिष्ठितसर्वाङ्गाम्, अकृतपुण्यमिव मुञ्चतीं बालभावम्, अदत्तामपि मन्मथावेशपरवशेनेव गृह्यमाणां यौवनेन, अविचलितचरणरागदीधितिभिरिव निर्गताभिरलक्तकरसपाटलितलावण्यजलवेणिकाभिरिव गलिताभिर्निवसितांशुकदशाशिखाभिरिवावलम्बिताभिः पादाभरणरत्नांशुलेखासंदेहदायिनीभिरतिकोमलतया नखविवरेण वर्प-

लगता था कि देवता उसे ऊपर आसमानमें उठाये लिये जा रहे हों। बड़े-बड़े मणिमय स्तम्भोंपर पड़ते हुए उसके प्रतिबिम्बसे ऐसा मालूम पड़ता था कि जैसे वे उसे अपने कलेजेमें बैठाये ले रहे हों। भवनके बड़े-बड़े दर्पणोंमें पड़ा हुआ प्रतिबिम्ब देखकर ऐसा लगता था कि जैसे वे दर्पण उसे पिये ले रहे हों। उस श्रीमण्डपमें पत्थरोंपर नीचे मुख किये हुए गंधर्वोंकी जो मूर्तियाँ गढ़कर बनायी गयी थीं। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वे उसे आकाशमें उड़ाये लिये जा रही हों। उसको देखनेके लिए लालायित तीनों भुवन मानो उसका चित्र लेनेके बहाने वहाँ चारों ओरसे घेरकर खड़े थे। जिसमें वह बैठी थी, वह भवन भी जैसे आभूषणोंकी झनकार सुनकर नाचते हुए सैकड़ों मयूरोंके बहुरंगी चंद्रकरूपी सहस्रों नयनोंको उत्पन्न करके उन्हींसे उसे निहार रहा था। उसके परिजन भी जैसे दर्शनके लोभवश दिव्य और अनिमिष नेत्र प्राप्त करके टकटकी लगाकर उसे देखते रहते थे। सब सुलक्षण भी जैसे आसक्त होकर उसके समस्त अङ्गोंमें आ विराजे थे। बाल्यावस्थाने जैसे कुछ पुण्य नहीं किया था, इसी कारण उसने उसको त्याग दिया था। जैसे कामदेवके आवेगसे विवश होकर यौवन बिना दानमें प्राप्त किये ही उसे अपनी बना चुका था। उसके पाँवोंमें विद्यमान स्थायी रंगकी प्रभा जैसे बाहर निकला करती थी। पैरोंमें लगी महावरके रंगसे रंगी हुई लावण्य-रूपी जलकी धारा नित्य बहा करती थी। जैसे देहपर पहने हुए लाल वस्त्रोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्तीभिरिव रुधिरधारावर्षमंगुलीभिरुपेताभ्यां क्षितितलतारागणमिव नखमणिमण्डलमुद्वहद्भ्यां विद्रुमरसनदीमिव चरणाभ्यां प्रवर्तयन्तीम्, नूपुरमणिकिरणचक्रवालेन गुरुनितम्बभरखिन्नोरुयुगलसहायतामिव कर्तुमुद्गच्छता स्पृश्यमानजघनभागाम्, प्रजापतिदृढनिष्पीडितमध्यभागगलितं जघनशिलातलप्रतिघाताल्लावण्यस्रोत इव द्विधागतमूरुद्वयं दधानाम्, सर्वतः प्रसारितदीर्घमयूखमण्डलेर्ष्यया परपुरुषदर्शनमिव रुन्धता कुतूहलेन विस्तारमिव तन्वता स्पर्शसुखेन रोमाञ्चमिव मुञ्चता काञ्चीदाम्ना नितम्बबिम्बस्य विरचितपरिवेषाम्, निपतितसकललोकहृदयभरेणेवातिगुरुनितम्बाम्, उन्नतकुचान्तरितमुखदर्शनदुःखेनेव क्षीयमाणमध्यभागाम्, प्रजापतेः स्पृशतोऽतिसौकुमार्यादंगुलिमुद्रामिव

किनारे लटक रहे हों, इस प्रकारके चरणाभूषणोंसे निकलती हुई रत्नोंकी दीप्तियोंका भ्रम उत्पन्न करती, अतिशय सुकुमार होनेके नाते जैसे नखछिद्रोंसे रक्तकी धारा बरसाती हुई उँगलियोंवाले तथा धरतीपर उतरे तारागणोंकी भाँति नखमणिमण्डलसे अलंकृत अपने चरणों द्वारा जैसे वह प्रवालमणिके रससे भरी नदी उत्पन्न कर रही थी। उसके मणिजटित नूपुरोंके मणियोंसे निकलनेवाली किरणें जैसे दोनों नितम्बोंके भारसे खिन्न जंघाओंकी सहायता करनेके निमित्त ही कुछ ऊपर उठकर जघनभागका स्पर्श कर रही थीं। उसका निर्माण करते समय विधाताने जैसे उसका मध्यभाग ज्यादा दबा दिया था। अतएव उस भागसे गलकर गिरे हुए जघनस्वरूप शिलातलकी टक्करसे दो भागोंमें विभक्त लावण्यस्रोतसदृश दोनों ऊरुओंको वह धारण किये हुए थी। सब ओर दूर-दूर तक किरणोंको फैलाकर जैसे डाहके कारण परपुरुषदर्शनका निवारण करती, कौतुकवश जैसे उसका अधिकाधिक विस्तार करती एवं स्पर्शसुखके द्वारा जैसे उन किरणोंमें रोमांचका भ्रम उत्पन्न करती हुई कई लरोंकी करधनीने उसके नितम्बबिम्बको चारों ओरसे घेर रक्खा था। उसकी ओर आकृष्ट होकर जिन बहुतेरे लोगोंके हृदय गिर पड़े थे, उनका भार ढोनेके कारण ही जैसे उसका नितम्ब बहुत भारी हो गया था। बीचमें पड़नेवाले दोनों उन्नत स्तनोंके कारण मुखका दर्शन न कर सकनेके दुःखसे ही गलकर जैसे उसकी कमर बहुत पतली हो गयी थी। उसका निर्माण करते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निमग्नां नाभिमण्डलीमावर्तिनीमुद्वहन्तीम्, त्रिभुवनविजयप्रशस्तिवर्णावलीमिव लिखितां मन्मथेन रोमराजिमञ्जरीं बिभ्राणाम्, अन्तःप्रविष्टकर्णपल्लवप्रतिबिम्बेनातिभरखिद्यमानहृदयकरतलप्रेर्यमाणेनेव निष्पतता मकरकेतुपादपीठेन स्तनभरेण भूषिताम्, अधोमुखकर्णाभरणमयूखाभ्यामिव प्रसृताभ्याममललावण्यजलमृणालकाण्डाभ्यां बाहुभ्यां नखकिरणविसरवर्षिणा च माणिक्यवलयगौरवश्रमवशात्स्वेदजलधाराजालकमिव मुञ्चता करयुगलेन समुद्भासिताम्, स्तनभारावनम्यमानमाननमिवोन्नमयता हारेणोच्चैः करैर्गृहीतचिबुकदेशाम्, अभिनवयौवनपवनक्षोभितस्य रागसागरस्य तरंगाभ्यामिवाद्भुताभ्यां विद्रुमलतालोहिताभ्यामधराभ्यां रक्तावदातस्वच्छकान्तिना च मदिरारसपूर्णमाणिक्यशुक्तिसंपुटच्छविना कपोलयुगलेन रतिपरिवादिनीरत्नकोणचारुणा

समय शरीर अत्यन्त कोमल होनेके कारण जैसे स्पर्श होते ही विधाताकी अंगुलियें भीतर धँस गयीं। अतएव नदीके जलावर्तकी नाईं उसकी गोल-गोल नाभि थी। जैसे कामदेवने अपनी त्रिभुवनविजयकी प्रशस्ति लिखी हो, उसकी वर्णमाला जैसी काली-काली उसकी रोमपंक्ति थी। कामदेवकी चरणचौकी सरीखे उसके दोनों सुन्दर स्तन भारके कारण मानो बाहर निकले पड़ते थे और उनपर उसके कर्णपल्लवका प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। उसे देखकर ऐसा लगता था कि जैसे वह प्रतिबिम्ब हृदय बनकर स्तनके भारसे दब जानेके भयवश अपने हाथसे उसे ऊपरकी ओर ढकेल रहा हो। उसकी दोनों भुजायें नीचेकी ओर फैलनेवाली कर्णभूषणकी किरणों तथा लावण्यरूपी स्वच्छ जलमें उगे मृणालदण्डकी भाँति शोभायमान लगती थीं। उसके नखोंसे जो किरणरूपी जलकी वर्षा हो रही थी, उससे उसके दोनों हाथ इस प्रकार दीखते थे जैसे कंकणके भारसे थककर वे पसीनेकी धारा बहा रहे हों। स्तनोंके भारसे नीचेकी ओर झुके मुखको जैसे ऊँचा करनेके निमित्त गलेके हारकी किरणें उसके चिबुकदेश (ठोढ़ी) का स्पर्श कर रही थीं। नवयौवनकी वायुके झोंकेसे क्षुब्ध रागरूपी सागरमें उठती हुई तरङ्गोंके सदृश उसके विद्रुम जैसे लाल-लाल होंठ थे। मदिरासे भरी माणिक्यशुक्तिके संपुट सरीखे स्वच्छ और गुलाबी रंगके कपोल थे। कामपत्नी रतिके वीणा बजानेकी रत्नजटित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नासावंशेन च विराजमानाम्, गतिप्रसरनिरोधिश्रवणकोपादिव किंचिदारक्तापाङ्गेन निजमुखलक्ष्मीनिवासदुग्धोदधिना लोचनयुगलेन लोचनमयमिव जीवलोकं कर्तुमुद्यताम्, उन्मदयौवनकुञ्जरमदराजिभ्यां भ्रूलताभ्यां मनःशिलापङ्कलिखितेन च रागाविष्टेन मन्मथहृदयेनेव वदनलग्नेन तिलकबिन्दुना विद्योतितललाटपट्टाम्, उत्कृष्टहेमतालीपट्टाभरणनयमामुक्तकर्णोत्पलच्युतमधुधारासंदेहकारिणं कर्णपाशं दोलायमानपत्रमरकतमाणिक्यकुण्डलं दधतीम्, पाटलीकृतललाटेन सीमन्तचुम्बिनश्चूडामणेः क्षरतांशुजालेन मदिरारसेनेव प्रक्षाल्यमानदीर्घकेशकलापाम्, देहार्धप्रविष्टहरगर्वितगौरीविजिगीषयेव सर्वाङ्गानुप्रविष्टमन्मथदर्शितसौभाग्यविशेषाम्, उरःसमारोपितलक्ष्मीमुदितनारायणावलेपहरणाय प्रतिबिम्बकैर्निजरूपतो लक्ष्मीशतानीव सृजन्ताम्, उत्तमाङ्गनिहितैः कच-

---

कोनावाली मिजराब जैसी सुन्दर उसकी नासिका थी। उसके दोनों नेत्र ही मुखरूपिणी लक्ष्मीके निवासके लिए नियत समुद्र थे। उन नेत्रोंके लाल-लाल कोने अपने प्रसारमें विघ्न डालनेवाले कानोंपर कुपित होकर जैसे सभी जीवोंको नेत्रमय बना डालनेके लिए उद्यत थे। मतवाले यौवनरूपी गजराजकी मद-रेखा सदृश उसकी दोनों भौंहोंके मध्यमें जैसे कामदेवका अनुरागसे भरा हृदय चिपका हो। इस प्रकार मैनसिलके रससे लिखित लाल तिलकबिन्दु उसके ललाटमें सुशोभित था। अपने कानोंमें उसने उत्कृष्ट सोनेके बने तालीपट्ट आभूषणमय कर्णपाश पहन रक्खे थे। जिनमें लगे हुए पत्ते झोंके खाकर हिल रहे थे। ऐसे मरकत तथा माणिक्यजटित कुण्डल उसके कानमें शोभित थे। उन्हें देखकर ऐसी शंका होती थी कि मानो उनमेंसे मधुकी धारा बह रही हो। मस्तकको गुलाबी रंगमें रंगती हुई सीमन्तमें विद्यमान चूडामणिसे निकलनेवाली किरणें पड़नेके कारण उसके लम्बे-लम्बे केश जैसे मदिराके रसमें धुले हुए दीख रहे थे। अपने आधे शरीरमें प्रविष्ट शंकर-जीसे गर्विता पार्वतीको परास्त करनेके लिए जैसे वह अपने अंग-प्रत्यंगमें प्रविष्ट मदनसे अपना अत्यधिक सौभाग्य प्रदर्शित कर रही थी। अपने हृदयमें केवल एक लक्ष्मी बसाकर प्रसन्न नारायणका गर्व दूर करनेके लिए वह अपने रूपके प्रतिबिम्बसे जैसे सैकड़ों लक्ष्मियोंका निर्माण कर रही थी। अपने मस्तकपर एक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्द्रविस्मितहराभिमाननाशाय विलासस्मितैश्चन्द्रसहस्राणीव दिक्षु क्षिपन्तीम्, निर्दयदग्धैकमन्मथप्रमथनाथरोषेणेव प्रतिहृदयं मन्मथायुतान्युत्पादयन्तीम्, रजनीजागरखिन्नस्य परिचितचक्रवाकमिथुनस्य स्वप्तुं क्रीडानदिकासु कमलधूलिवालुकाभिर्वालपुलिनानि कारयन्तीम्, 'परिजननूपुररवप्रस्थितं दुर्लभं च हंसमिथुनं मृणालनिगडकेन बद्ध्वानय' इति हंसपालीमादिशन्तीम्, आभरणमरकतमयूखाँल्लिहते हरिणशावकाय सखीश्रवणादपनीय यवाङ्कुरप्रसवं प्रयच्छन्तीम्, आत्मवर्धितलताकुसुमनिगर्मनिवेदनागतामुद्यानपालीमशेषाभरणदानेन संमानयन्तीम्, उपनीतविविधवनकुसुमफलपूर्णपत्रपुटामविज्ञायमानालापतया हासहेतुं पुनःपुनः क्रीडापर्वतपत्रशवरीमालपयन्तीम्, करतलविनिहितैर्मुहुर्मुहुरुत्पतद्भिश्च मुखपरिमलान्धैर्नीलकञ्चुकैरिव मधुकरैः क्रीडन्तीम्, पञ्जरहा-

---

चन्द्रमा रखकर गर्वीले शिवजीका अभिमान नष्ट करनेके लिए वह अपनी विलासमयी मुसकानसे जैसे हजारों चन्द्रमा बना-बनाकर दसों दिशाओंमें फेंक रही थी। शंकरजीने निर्दयतापूर्वक एक कामदेवको जलाकर भस्म कर दिया था। इसीसे कुपित होकर वह मानो प्रत्येक प्राणीके हृदयमें लाखों कामदेवोंको उत्पन्न कर रही थी। रातभर जागरण करनेसे खिन्न महलमें पले चकवा-चकवीके जोड़ेको सुलानेके लिए वह घरकी कृत्रिम नदियोंपर कमलकी रजरूपिणी बालुका डलवाकर छोटे-छोटे तट तैयार करा रही थी। परिचारिकाओंके नूपुरोंकी ध्वनि सुनकर दौड़ पड़नेवाले अपने प्रिय हंसके जोड़ेको मृणालकी रस्सीसे बाँध लानेके लिए हंसोंका पालन करनेवाली दासीको आदेश दे रही थी। गहनोंमें जड़े मरकतमणिकी किरणोंको तृणांकुर समझकर चाटनेवाली पालतू हिरनीके बच्चेको वह सखियोंके कानपरसे यवांकुर निकाल-निकालकर खिला रही थी। अपने हाथों सींचकर जिस लताको उसने बढ़ाया था, उसमें प्रथम पुष्प खिलनेका समाचार देनेवाली मालिनको समस्त आभूषण देकर सम्मानित कर रही थी। नानाप्रकारके वन्य पुष्पों तथा फलोंसे भरा दोना लेकर आयी हुई पत्रशबरी (भीलनी) की भाषा न समझ सकनेके कारण हँसकर बात करती थी। बार-बार हथेलीसे झटकारकर उड़ाये जानेपर भी उसके मुखसौरभके लोलुप नील-वस्त्र जैसे भौंरे पुनः पुनः उसके पास जाते थे और वह उनसे खेल रही थी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रीतकरुतश्रवणकृतदुष्टस्मितां चामरग्राहिणीं विहस्य लीलाकमलेन शिरसि विघट्टयन्तीम्, मुक्ताफलखचितचन्द्रलेखिकासंक्रान्तप्रतिमां स्वेदजलबिन्दुजालचितनखपदाभिप्रायेण ताम्बूलकरङ्कवाहिनीं पयोधरे पटवासमुष्टिना ताडयन्तीम्, रत्नकुण्डलप्रतिविम्वसान्द्रदत्तनवनखपदमण्डलाशङ्कया चामरग्राहिणीं विहस्य कपोले प्रसादव्याजेन दत्तेनात्मकर्णपूरपल्लवेनाच्छादयन्तीम्, पृथिवीमिव समुत्सारितमहाकुलभूभृद्व्यतिकरां शेषभोगनिषण्णाम्, मधुमासलक्ष्मीमिव षट्पदपटलापह्नियमाणकुसुमरजोधूसरपादपरागाम्, शरदमिवोत्पादितमानसजन्मपत्त्रिरवापनीतनीलकण्ठमदाम्, गौरीमिव श्वेतांशुकरचितोत्तमाङ्गाभरणाम्, उदधिवेलाघनलेखा-

---

पींजरेमें बैठे हारीतकी बोली सुनकर दूषित मुसकानसे मुसकाती हुई वह अपनी चमरधारिणीके माथेपर लीलाकमलसे मार रही थी। पानकी पेटारी सम्हालनेवाली दासीके स्तनोंपर उसकी मुक्ताखचित चन्द्रलेखाका प्रतिबिम्ब पड़नेपर उसे पसीनेकी बूँदोंसे भरा सुस्पष्ट नखचिह्न समझ मुट्ठी-मुट्ठी भर पटवास चूर्ण फेंककर उसको मार रही थी। चामरग्राहिणीके कपोलपर रत्नजटित कुंडलका प्रतिबिम्ब पड़नेपर उसे नायक द्वारा किया गया ताजा नखक्षत समझकर प्रसादके वहाने दिया हुआ अपना कर्णपल्लव रखकर ढाँक रही थी। जैसे पृथिवी बड़े-बड़े कुलपर्वतोंको साथ लेकर शेषनागके मस्तकपर रहती है। उसी प्रकार कुमारी कादम्बरी भी उच्चकुलके राजाओंका पाणिग्रहण अस्वीकार करके विवाहसम्बन्धी सुखके सिवाय और सभी सुख भोग रही थी। जैसे वसन्तऋतुमें वृक्षोंका रंग भौंरों द्वारा लाये फूलोंके परागसे धुँधला हो जाता है। उसी प्रकार कादम्बरीकी मालाओंसे भी भौंरे पुष्पपराग गिरा-गिराकर उसका रंग धुँधला किये दे रहे थे। जिस प्रकार शरत्काल मानसरोवरमें उत्पन्न पक्षियों (हंसों) के निनादसे नीलकंठ (मयूर) का अभिमान नष्ट कर देता है, उसी प्रकार कादम्बरीने मानसजन्मा अर्थात् कामदेवको पुनर्जन्म देकर नीलकण्ठ अर्थात् शंकरजीका अभिमान दूर कर दिया था। जिस प्रकार भगवती पार्वतीके उत्तम अंग अर्थात् मस्तकका आभूषण शिवजीके मस्तकपर विराजमान चन्द्रमाके प्रकाशसे चमकता है। उसी प्रकार कादम्बरीके भी मस्तकका आवरण स्वच्छ वस्त्रका था। जैसे समुद्री तट भौंरोंकी तरह श्याम तमाल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिव मधुकरकुलनीलतमालकाननाम्, इन्दुमूर्तिमिवोद्दाममन्मथविलास-गृहीतगुरुकलत्राम्, वनराजिमिव पाण्डुश्यामलवलीलतालंकृतमध्याम्, दिनमखमिव भास्वन्मुक्तांशुभिन्नपद्मरागप्रसाधनाम्, आकाशकमलिनी-मिव स्वच्छाम्बरदृश्यमानमृणालकोमलोरुमूलाम, मयूरावलीमिव नितम्बचुम्बिशिखण्डभारविस्फुरच्चन्द्रकान्ताम्, कल्पतरुलतामिव काम-फलप्रदाम्, पुरःसमीपे संमुखोपविष्टाम्, 'कोऽसौ, कस्य वापत्यम्, किम-भिधानो वा, कीदृशमस्य रूपम्, कियद्वा वयः, किमभिधत्ते, भवता किमभिहितः, कियच्चिरं दृष्टस्त्वया, कथं चास्य महाश्वेतया सह परि-चय उपजातः, किमयमत्रागमिष्यति' इति मुहुर्मुहुश्चन्द्रापीडसंबद्धमेवा-

---

वृक्षोंसे युक्त रहता है। उसी प्रकार कादम्बरीका भी केशकलाप भौंरोंकी नाईं श्यामवर्ण था और उससे वह बड़ी सुन्दर लग रही थी। जिस तरह चन्द्रमाने कामावेगवश गुरु बृहस्पतिकी पत्नी ताराका अपहरण किया था, उसी प्रकार कादम्बरीके स्थूल नितम्ब भी कामके वेगसे नहीं बच पाये थे। यानी उसके मोटे नितम्बको देखकर कामदेव उद्दीप्त हो उठता था। जैसे वनश्रेणीका भीतरी भाग श्याम और श्वेतवर्णकी लवलीलतासे शोभित रहता है, उसी प्रकार काद-म्बरीके शरीरका भी मध्यभाग श्वेत और श्यामवर्णकी त्रिवलियोंसे युक्त था। जैसे प्रभात सूर्यकी किरणों एवं विकसित कमलके फूलोंके रंगसे शोभित होता है, उसी प्रकार कादम्बरीका भी सारा अलंकार मोतियोंकी दीप्तिसे मिश्रित और पद्मरागमणिनिर्मित था। जैसे आकाशगंगासे जायमान मृणाल सदृश कोमल तथा विस्तृत मूलनक्षत्र निर्मल आकाशमण्डलमें दृष्टिगोचर होता है, उसी प्रकार कादम्बरीके भी मृणाल सदृश कोमल ऊरुयुगलोंका मूलभाग वस्त्रके भीतर दीख रहा था। जिस प्रकार मयूरोंकी शोभा नितम्बचुम्बी पुच्छप्रदेशमें विद्यमान चन्द्रकोंसे होती है, उसी प्रकार कादम्बरीकी मनोहर आकृति चन्द्रमा सरीखी सुन्दर थी और उसके केशकलाप नितम्बतक लटकते रहते थे। जैसे कल्पतरु-की लता इच्छित फल प्रदान करती है, उसी प्रकार कादम्बरी भी सबको काम-का फल देती थी। शय्याके पास ही सामने बैठे हुए केयूरकसे वह बार-बार चन्द्रापीडके बारेमें पूछ रही थी—'वह कौन है? तुमने कितनी देर उसे देखा था? महाश्वेतासे उसका परिचय कैसे हुआ? क्या वह यहाँ आयेगा?' वहाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लापं तद्रूपवर्णनामुखरं केयूरकं पृच्छन्तीं कादम्बरीं ददर्श।

तस्य तु दृष्टकादम्बरीवदनचन्द्रलेखालक्ष्मीकस्य सागरस्येवामृतमुल्ललास हृदयम्। आसीच्चास्य मनसि—'शेषेन्द्रियाण्यपि मे वेधसा किमिति लोचनमयान्येव न कृतानि। किं वानेन कृतमवदातं कर्म चक्षुषा, यदनिवारितमेनां पश्यति। अहो चित्रमेतदुत्पादितं वेधसा सर्वरमणीयानामेकं धाम। कुत एते रूपातिशयपरमाणवः समासादिताः। तन्नूनमेनामुत्पादयतो विधेः करतलपरामर्शक्लेशेन ये विगलिता लोचनयुगलादश्रुजलबिन्दवस्तेभ्य एतानि जगति कुमुदकमलकुवलयसौगन्धिकवनान्युत्पन्नानि' इत्येवं चिन्तयत एवास्य तस्या नयनयुगले निपपात चक्षुः। तदा तस्या अपि नूनमयं स केयूरकेणावेदित इति चिन्तयन्त्या रूपातिशयविलोकनविस्मयस्मेरं निश्चलनिबद्धलक्ष्यं चक्षुस्तस्मिन्सुचिरं पपात। लोचनप्रभाधवलितस्तु कादम्बरीदर्शनविह्वलोऽचल इव

पहुँचकर चंद्रापीडने कादम्बरीको बार-बार केयूरकसे इन्हीं प्रश्नोंको करते देखा।

इस प्रकार कादम्बरीकी मुखरूपिणी चन्द्रलेखाकी सुषमा देखते ही तरंगित समुद्रमें उछलनेवाली जलराशिकी भाँति उसका हृदय भी उछलने लगा। उसने सोचा कि 'विधाताने मेरी समस्त इन्द्रियोंको नेत्र ही क्यों नहीं बना दिया। अथवा मेरे नेत्रोंने ऐसा कौन-सा पुण्यकर्म किया था कि जिससे मैं इसे बेरोक-टोक देख रहा हूँ। अहो! विधाताने संसार भरकी सुन्दर वस्तुओंमें यह कैसी रमणीयताका कोष बनाकर तैयार कर दिया है। इतने उच्चकोटिके रूपके परमाणुओंको आखिर उसने कहाँसे प्राप्त किया होगा? मेरी तो ऐसी धारणा है कि इसे बना लेनेके पश्चात् ब्रह्माने परीक्षार्थ इसे हाथ लगाकर देखा, तैसे ही सुकुमारताके कारण इसके नेत्रोंसे आँसूकी बूँदें टपक पड़ीं। उन्हीं बूँदोंसे कुमुद, कमल, कुवलय और सौगन्धिक पुष्पोंकी उत्पत्ति हुई है।' वह ऐसा सोच ही रहा था कि उसकी दृष्टि कादम्बरीके नेत्रोंपर जा पड़ी। कादम्बरी भी चन्द्रापीडको देखकर केयूरककी बातोंका स्मरण करके सोचने लगी कि 'शायद ये वही राजकुमार हैं।' अब अत्यधिक रूपराशि एकत्र पाकर आश्चर्यसे विस्तृत उसकी आँखें वहीं टिक गयीं और निश्चल होकर बड़ी देरतक अपने लक्ष्यको निहारती रहीं। उधर चन्द्रापीड भी उसके नयनोंकी दीप्तिसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्क्षणमराजत चन्द्रापीडः। दृष्ट्वा च प्रथमं रोमोद्गमः, ततो भूषणरवः, तदनु कादम्बरी समुत्तस्थौ। अथ तस्याः कुसुमायुध एव स्वेदमजनयत्, ससंभ्रमोत्थानश्रमो व्यपदेशोऽभवत्। उरुकम्प एव गतिं रुरोध, नूपुररवाकृष्टहंसमण्डलमपयशो लेभे। निःश्वासप्रवृत्तिरेवांशुकं चलं चकार, चामरानिलो निमित्ततां ययौ। अन्तःप्रविष्टचन्द्रापीडस्पर्शलोभेनैव निपपात हृदये हस्तः, स एव करः स्तनावरणव्याजो बभूव। आनन्द एवाश्रुजलमपातयत्, चलितकर्णावतंसकुसुमरजो व्याजमासीत्। लज्जैव वक्तुं न ददौ, मुखकमलपरिमलागतालिवृन्दं द्वारतामगात्। मदनशरप्रथमप्रहारवेदनैव सीत्कारमकरोत्, कुसुमप्रकरकेतकीकण्टकक्षतिः साधारणतामवाप। वेपथुरेव करतलमकम्पयत्, निवेदनोद्यतप्रतीहारीनिवारणं

देदीप्यमान होता हुआ कादम्बरीको देखकर तत्काल विह्वल हो गया और पर्वतकी तरह अचल दीखने लगा। राजकुमारको देखकर कादम्बरीके शरीरमें पहले रोमांच हुआ, फिर आभूषणोंकी ध्वनि हुई और उसके बाद वह स्वयं उठकर खड़ी हुई। तदनन्तर वस्तुतः कामविकारसे ही उसको पसीना आ गया था, किन्तु उठकर खड़ी होनेका श्रम उसके लिए बहाना बन गया। वास्तवमें ऊरुकम्पने ही उसकी गति रोक दी थी। किन्तु उसका अपयश उस हंसमंडलीको मिला, जो उसके नूपुरोंकी ध्वनि सुनकर दौड़ पड़ी थी। वस्तुतः निःश्वासकी वायुसे ही उसके वस्त्र हिलने लगे थे, किन्तु चमरकी हवा ही उसका निमित्त मानी गयी। वास्तवमें अन्तःप्रविष्ट चन्द्रापीडका स्पर्श करनेके लोभसे ही हृदयपर उसका हाथ चला गया, किन्तु वह स्तनोंको ढकनेका बहाना बन गया। वास्तवमें आनन्दसे ही उसके नयनोंमें आँसू आ गये, किन्तु हिलते हुए कर्णपूरका कुसुमरज बहाना बन गया। वास्तवमें लज्जाने ही उसकी वाणी बन्द कर दी थी, मुखसौरभके लिए आते हुए भौंरे उसके कारण बन गये। वस्तुतः कामबाणोंके प्रथम प्रहारकी पीडासे ही सीत्कार निकल पड़ा, किन्तु फूलोंके ढेरमें विद्यमान केवड़ेका कण्टक विंधनेका कारण आ उपस्थित हुआ। वास्तवमें कम्पसे ही उसका हाथ काँपने लगा था, किन्तु प्रतिहारी कुछ कहना चाहती थी, सो उसने हाथ हिलाकर उसे रोक दिया। बस,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कपटमभूत्। तदा च कादम्बरीं विशतो मन्मथस्यापि मन्मथ इवाभूद्द्वितीयः, तया सह यो विवेश चन्द्रापीडहृदयम्। तथाहि असावपि तस्या रत्नाभरणद्युतिमपि तिरोधानममंस्त, हृदयप्रवेशमपि परिग्रहमगणयत, भूषणरवमपि संभाषणममन्यत, सर्वेन्द्रियाहरणमपि प्रसादमचिन्तयत्, देहप्रभासंपर्कमपि सुरतसमागमसुखमकल्पयत्।

कादम्बरी तु कृच्छ्रादिव दत्तकतिपयपदा महाश्वेतां स्नेहनिर्भरं चिरदर्शनजातोत्कण्ठं सोत्कण्ठं कण्ठे जग्राह। महाश्वेतापि दृढतरदत्तकण्ठग्रहा तामवादीत्—'सखि कादम्बरि, भारते वर्षे राजानेकवरतुरगखुरमुखोल्लेखदत्तचतुःसमुद्रो रक्षितप्रजापीडस्तारापीडो नाम। तस्यायं निजभुजशिलास्तम्भविश्रान्तविश्वविश्वंभरापीडश्चन्द्रापीडो नाम सूनुर्दिग्विजय-

---

यह रोकना ही उसके लिए कम्पका एक बहाना बन गया। उस समय कादम्बरीके हृदयमें प्रविष्ट होते हुए कामदेवके साथ ही जैसे एक दूसरा कामदेव उत्पन्न हो गया, जो कादम्बरी के साथ-साथ चंद्रापीडके भी हृदयमें जा बैठा। इससे वह भी अब कादम्बरीके रत्नमय आभूषणोंकी दीप्तिको तिरोधान (दृष्टिका बाधक अथवा विवाहमें वर-वधूके बीचका अन्तःपट) समझने लगा। अपने हृदयमें उसके प्रवेशको भी वह परिग्रह अर्थात् स्वीकार अथवा करग्रह समझने लग गया। उसके आभूषणोंकी ध्वनिको भी वह सम्भाषण मानने लगा। अपनी समस्त इन्द्रियोंके हरणको भी अब वह कृपा समझने लगा। उसके शरीरकी दीप्तिके सम्पर्कको भी अब वह सुरतसमागमका सुख मानने लगा।

तदनन्तर कादम्बरी बड़ी कठिनाईसे उठी और कुछ पग आगे बढ़कर चिरकालसे जिसे देखनेको उत्सुक थी, उस महाश्वेताको बड़े स्नेहसे गले लगा लिया। महाश्वेताने भी उसे दृढ़ कण्ठालिंगन देकर कहा—'सखी कादम्बरी! भारतवर्षमें प्रजाके रक्षक तारापीड नामके एक राजा हैं। उन्होंने उच्चकोटिके अपने अगणित घोड़ोंके खुरोंसे चारों समुद्रों तककी पृथ्वीपर मुहर लगाकर अपनी विजयपताका फहरायी है। ये उन्हींके पुत्र युवराज चन्द्रापीड हैं। इस समय इनके भुजारूपी शिलास्तम्भोंपर ही समस्त पृथिवीरूपी आभूषण सुखसे विराजमान है। दिग्विजय करते-करते ये इस प्रदेशमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रसंगेनानुगतो भूमिमिमाम् । एष च दर्शनात्प्रभृति प्रकृत्या मे निष्कारणबन्धुतां गतः। परित्यक्तसकलासङ्गनिष्ठुरामपि मे सविशेषस्व-भावसरलैर्गुणैराकृष्य चित्तवृत्तिं वर्तते । दुर्लभो हि दाक्षिण्यपरवशो निर्निमित्तमिमकृत्रिमहृदयो विदग्धजनः। यतो दृष्ट्वा चेममहमिव त्व-मपि निर्माणकौशलं प्रजापतेः, निःसपत्नतां च रूपस्य, स्थानाभिनिवे-शित्वं च लक्ष्म्याः, सद्वृत्तासुखं च पृथिव्याः, सुरलोकातिरिक्ततां च मर्त्यलोकस्य, सफलतां च मानुषीलोचनानाम्, एकस्थानसमागमं च सर्वकलानाम्, ऐश्वर्यं च सौभाग्यस्य, अग्राम्यतां च मनुष्याणां ज्ञास्य-सीति बलादानीतोऽयम् । कथिता चास्य मया बहुवारं प्रियसखी । तद-पूर्वदर्शनोऽयमिति विमुच्य लज्जाम्, अनुपजातपरिचय इत्युत्सृज्यावि-श्रम्भताम्, अविज्ञातशील इत्यपहाय शङ्कां यथा मयि तथात्रापि प्रवर्ति-तव्यम्। एष ते मित्रं च बान्धवश्च परिजनश्च' इत्यावेदिते तया चन्द्रा-

---

आ निकले हैं। प्रथम साक्षात्कार होते ही ये हमारे अकारण बन्धु बन गये हैं। यद्यपि सब संग त्यागकर सांसारिक दृष्टिसे मैं बड़ी निष्ठुर हो चुकी हूँ। फिर भी इन्होंने अपने सरल स्वभाव और असाधारण गुणोंसे मेरी चित्तवृत्तिको सर्वथा अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है । ऐसे शिष्टाचारसम्पन्न, शुद्धहृदय, चतुर और बिना कारण मैत्री स्थापित करनेवाले लोग बड़ी कठिनाईसे मिलते हैं। इसी कारण इन्हें मैं बरजोरी यहाँ ले आयी हूँ। क्योंकि इन्हें देखकर मेरे समान ही तुम भी विधाताका निर्माणकौशल, सौन्दर्यकी अतुलनीयता, राज-लक्ष्मीका उपयुक्त स्थानमें रहनेका आग्रह, उच्चश्रेणीका रक्षक पाकर प्रसन्न पृथिवीका सुख, स्वर्गलोककी अपेक्षा मृत्युलोकका उत्कर्ष, नारीजातिके नयनोंकी सार्थकता, समस्त कलाओंका एक ही स्थानपर सम्मिलन, सौभाग्यकी सम्पदा तथा मानवजातिकी भद्रता, इन सबको तुम सहजमें ही पा लोगी। तुम्हारे विषयमें मैंने अनेक प्रकारसे सब बातें इन्हें बता दी हैं । अतएव तुम भी इन्हें अदृष्टपूर्व तथा अपरिचित न समझकर अविश्वासकी भावना त्यागकर जैसा व्यवहार तुम मेरे साथ करती हो, वैसा ही इनके साथ भी करो । 'इनके स्वभावसे मैं अनभिज्ञ हूँ' ऐसा सोचकर किसी प्रकारकी शंका करना व्यर्थ है । ये तुम्हारे मित्र, बान्धव और परिजन सब कुछ हैं।' महाश्वेताके ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पीडः प्रणाममकरोत्। कृतप्रणामं च तं तदा कादम्बर्यास्तिर्यग्विलोकयन्त्याः सस्नेहमतिदीर्घलोचनयोरपाङ्गभागं गच्छतस्तारतारकस्य लोचनस्य श्रमसलिललवविसर इवानन्दबाष्पजलबिन्दुनिकरो निपपात। त्वरितमभिप्रस्थितस्य हृदयस्य धूलिरिव सुधाधवला स्मितज्योत्स्ना विससार। 'सम्मान्यतामयं हृदयरुचिरो जनः प्रतिप्रणामेने'ति शिरो वक्तुमिवैका भ्रूलता समुन्ननाम। अंगुलिविवरविनिःसृतमरकतांगुलीयकलेखो विभ्रमगृहीतताम्बूलवीटिका इव करो जृम्भारम्भमन्थरं मुखमुत्ससर्प। स्रवत्स्वेदजलधौतलावण्यनिर्मलेषु चास्याः स्तम्भसंक्रान्तप्रतिबिम्बतया संचरन्मूर्तिमकरकेतुरिवावयवेष्वदृश्यत चन्द्रापीडः। तथा हि। सिञ्जन्मणिनूपुरपुटेन भुवमालिखतांगुष्ठेनाहूत इव चरणनखेषु निपपात। दर्शनातिरभसप्रधावितेन गत्वा हृदयेनानीत इव स्तनाभ्यन्तरे समदृश्यत।

कहनेपर चन्द्रापीडने कादम्बरीको प्रणाम किया। इस प्रकार प्रणाम करते समय चन्द्रापीडको कादम्बरीने बड़े ही स्नेहके साथ देखा। उसके नयनोंकी पुतली नेत्रके एक कोनोंमें चली गयी। ऐसा करनेमें जो परिश्रम पड़ा, उससे जायमान पसीनेकी बूँदोंके समान आनन्दके अश्रुबिन्दु टपकने लगे। अतिशय द्रुतगतिसे आगे दौड़नेवाले हृदयके पीछे उड़ती हुई धूलके सदृश अमृतमयी मुसकानकी ज्योत्स्ना फैल गयी। 'हृदयको भानेवाले इस सुन्दर युवकको प्रति प्रणाम करके सम्मानित करो' इस हार्दिक भावनाको सार्थक करनेके लिए ही जैसे मस्तकको आदेश देती हुई उसकी एक भ्रूलता तनिक ऊँचे चढ़ गयी। उँगलियोंके छिद्रोंसे निकलनेवाली मरकतमणिजटित अंगूठियोंकी किरणें जैसे विलासपूर्वक पानका बीड़ा लिये हुए हाथ सरीखी बनकर जँभाई आ जानेके कारण अलसाये मुखकी ओर बढ़ गयीं। धीरे-धीरे पसीजकर आते हुए पसीनेसे सारा लावण्य धुल जानेके कारण उसके निर्मल अंगोंपर प्रतिबिम्ब पड़नेसे चंद्रापीड जैसे चलते-फिरते कामदेवके सदृश दिखायी देने लगा। रुनझुनकी झनकारसे युक्त उसके अंगूठेमें विद्यमान नूपुरोंने मणिमयी भूमिपर कुछ लिखकर जैसे उसे बुलाया हो। इस प्रकार चरणनखोंमें उसका प्रतिबिम्ब आ पड़ा। जैसे देखते ही हृदय दौड़कर ले आया हो, इस तरह उसके स्तनोंके बीचमें युवराज चन्द्रापीडका प्रतिबिम्ब दीख रहा था। प्रफुल्लित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विकचकुवलयदामदीर्घया च दृष्ट्या निपीत इव कपोलतले समलक्ष्यत। सर्वासामेव च तदा तासां कन्यकानां तिर्यक्पश्यन्तीनां तं कुतूहलापाङ्गचुम्बिन्या दृष्ट्या निर्गन्तुकामा इव कर्णपूरमधुकरैः समं बभ्रमुस्तरलास्तारकाः। कादम्बरी तु सविभ्रमकृतप्रणामा महाश्वेतया सह पर्यङ्के निषसाद।

ससंभ्रमं परिजनोपनीतायां च शयनशिरोभागनिवेशितायां धवलांशुकप्रच्छदपटायां हेमपादाङ्कितायां पीठिकायां चन्द्रापीडः समुपाविशत्। महाश्वेतानुरोधेन च विदितकादम्बरीचित्ताभिप्रायः संवृतमुखन्यस्तहस्तदत्तशब्दनिवारणसंज्ञाः प्रतीहार्यो वेणुरवान्वीणाघोषान्गीतध्वनीन्मागधीजयशब्दांश्च सर्वतो निवारयांचक्रुः। त्वरितपरिजनोपनीतेन च सलिलेन कादम्बरी स्वयमुत्थाय महाश्वेतायाश्चरणौ प्रक्षाल्योत्तरीयांशुकेनापमृज्य पुनः पर्यङ्कमारुरोह। चन्द्रापीडस्यापि कादम्बर्याः सखी रूपा-

---

विकसित कुवलयकी माला सरीखी उसकी विशाल आँखें जैसे उसे पी गयी हों, इस प्रकार कपोलोंपर वह प्रतिबिम्बित हो रहा था। उस समय वहाँपर जितनी भी कुमारियाँ उपस्थित थीं, वे सब बड़ी चावसे कटाक्षभरे नयनों द्वारा उसे निहार रही थीं। नयनके एक कोनेपर पहुँची हुई उनकी चंचल पुतलियाँ जैसे बाहर जानेकी आकांक्षावश कर्णपूरपर मँडरानेवाले भौंरोंके साथ इधर-उधर घूमने लगीं। अब कादम्बरी महाश्वेताको श्रद्धापूर्वक प्रणाम करके उसके साथ पलंगपर बैठ गयी।

हड़बड़ीमें जल्दीसे परिजनों द्वारा लायी हुई सोनेके पावोंकी बनी एक छोटीसी चौकी लाकर पलंगके सिरहानेकी ओर रख दी गयी। जिसपर श्वेत चादर बिछी थी। उसीपर चन्द्रापीड बैठा। महाश्वेताका अनुरोध तथा कादम्बरीके चित्तका अभिप्राय समझकर प्रतीहारियोंने मुँहपर हाथ रखकर सभी प्रकारके होनेवाले शब्दोंको बन्द कर देनेका संकेत करते हुए वेणु, वीणा, गीत तथा मागधजनोंके जयघोषको बन्द करा दिया। तदनन्तर एक दासी झपटकर जल ले आयी। तब कादम्बरीने स्वयं अपने हाथों महाश्वेताका चरण धोया और अपनी ओढ़नीसे उसे पोंछकर फिर पलंगपर जा बैठी। यद्यपि चन्द्रापीडकी ऐसी इच्छा नहीं थी, फिर भी कादम्बरीके समान ही रूपवती और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नुरूपा जीवितनिर्विशेषा सर्वविश्रम्भभूमिर्मदलेखेति नाम्ना बलादनिच्छतोऽपि प्रक्षालितवती चरणौ । महाश्वेता तु कर्णाभरणप्रभावर्षिण्यपाङ्गदेशे सप्रेम पाणिना स्पृशन्ती, मधुकरभरपर्यस्तं च कर्णावतंसं समुत्क्षेपयन्ती, चामरपवनविधूतिपर्यस्तालकवल्लरीमनुव्रजमाना कादम्बरीमनामयं पप्रच्छ । सा तु सखीप्रेम्णा गृहनिवासेन कृतापराधेवानामयेनैव लज्जमाना कृच्छ्रादिव कुशलमाचचक्षे । तदा समुपजातशोकापि च महाश्वेतामुखनिरीक्षणतत्परापि मुहुर्मुहुरपाङ्गविक्षेपप्रचलिततरलतरतारसारोदरं चक्षुर्मण्डलितचापेन भगवता कुसुमधन्वना बलान्नीयमानं चन्द्रापीडपीडनयेव न शशाक निवारयितुम् । तेनैव क्षणेन तेनासन्नसखीकपोलसंक्रान्तेनेर्ष्यया रोमाञ्चभिद्यमानकुचतटनश्यत्प्रतिबिम्बेन विरहव्यथास्वेदार्द्रवक्षःस्थलघटितशालभञ्जिकाप्रतिमेन सपत्नीरोषाग्निमिषता दौर्भाग्यशोकमानन्दजलतिरोहितेनान्धतादुःखमभजत सा । मुहू-

---

उसकी पूर्ण विश्वासपात्र प्राणप्रिय सखी मदलेखाने चंद्रापीडके पाँव पखारे । तत्पश्चात् कानके आभूषणोंकी दीप्तिसे जगमगाते हुए कादम्बरीके कंधेपर प्रेमपूर्वक हाथ फेरती, भौंरोंके भारसे विनम्र कर्णपल्लवको ऊपर उछालती और चमरकी वायुसे छितराये हुए केशोंकी लट सँवारती हुई महाश्वेताने कादम्बरीसे कुशल-क्षेम पूछा । किन्तु उसका गाढ़ प्रेम देख तथा स्वयं घरमें रहनेको जैसे एक बहुत बड़ा कसूर समझकर सलज्जभावसे बड़े कष्टके साथ कादम्बरीने अपना कुशलसमाचार बताया । यद्यपि वह उस समय स्वयं शोकातुर होकर महाश्वेताका मुख देख रही थी, फिर भी कनखियाँ फेंकनेके कारण चलित चपल पुतलियोंसे जिनका भीतरी हिस्सा एक विचित्र ढंगका दीख रहा था, उन नयनोंको जैसे धनुष तानकर खड़ा कामदेव बार-बार बरबस चंद्रापीडको सतानेके लिए उसीकी ओर ले जा रहा था और कादम्बरी उन्हें रोकनेमें अपनेको असमर्थ पा रही थी । उसी क्षण आस-पास बैठी हुई सहेलियोंके कपोलोंपर चन्द्रापीडका प्रतिबिम्ब पड़ते देखकर उसे जैसे डाह होने लगी । रोमांचके कारण स्तनोंपरसे उसका प्रतिबिम्ब लुप्त हो जानेपर वह विरहव्यथाका अनुभव करने लगी । पसीनेसे भींगे चन्द्रापीडके वक्षःस्थलपर पुत्तलिकाओंका प्रतिबिम्ब देखकर सौतको समक्ष देखनेके समान रोष आने लगा । बार-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तोपगमे च ताम्बूलदानोद्यतां महाश्वेता तामभाषत—'सखि कादम्बरि, संप्रतिपन्नमेव सर्वाभिरस्माभिरयमभिनवागतश्चन्द्रापीड आराधनीयः। तदस्मै तावद्दीयताम्' इत्युक्त्वा च किंचिद्विवर्तितावनमितमुखी शनैरव्यक्तमिव 'प्रियसखि, लज्जेऽहम्। अनुपजातपरिचयाप्रागल्भ्येनानेन। गृहाण त्वमेवास्मै प्रयच्छ' इत्युवाच सा ताम्। पुनपुनः रभिधीयमाना च तया कथमपि ग्राम्येव चिराद्दानाभिमुखं मनश्चके। महाश्वेतामुखादनाकर्षितदृष्टिरेव वेपमानाङ्गयष्टिः, आकुललोचना, स्थूलस्थूलं निःश्वसन्ती, निजशरप्रहारमूर्च्छिता मन्मथेन स्नपितेव स्वेदजलविसरैः, स्वेदजलविसरनिमज्जनभयेन च हस्तावलम्बनमिव याचमाना, साध्वसपरवशा पतामीति लगितुमिव कृतप्रयत्ना प्रसारयामास ताम्बूलगर्भं हस्तपल्लवम्। चन्द्रापीडस्तु जयकुञ्जरकुम्भस्थलास्फालनसंक्रान्तसिन्दूरमिव स्व-

---

बार पलकें उठने-गिरनेको वह दुर्भाग्यका सूचक समझ बैठी। जब आनन्दाश्रु भर जानेके कारण आँखोंसे देखनेमें असमर्थ हो गयी, तब उसे अन्धताका दुःख सताने लगा। कुछ देरके बाद जब वह पान देने लगी, तब महाश्वेता बोली—'सखी कादम्बरी! हम सबका यह कर्तव्य है कि सबसे पहले नये-नये आये हुए मेहमानका सत्कार करें। अतएव पहले उन्हींको पान दो।' उसके ऐसा कहनेपर कादम्बरी अपना मुख तनिक फेर और कुछ नीचे झुकाकर दबी जबानसे बोली—'प्रिय सखी! परिचय न होनेके कारण ऐसी ढिठाई करनेमें मुझे लाज लगती है। लो, तुम्हीं इन्हें दे दो।' इसके अनन्तर महाश्वेताके बार बार कहनेपर एक अल्हड़ लड़कीकी नाईं वह किसी-किसी प्रकार पान देनेको उद्यत हुई। किन्तु महाश्वेताके मुखपरसे बिना दृष्टि फेरे बहुत प्रयत्न करके ताम्बूल लिये हुए अपना हाथ चन्द्रापीडकी ओर बढ़ाया। वैसा करते समय उसके अङ्ग-अङ्ग काँपने लगे। आँखें अकुला गयीं। लम्बी-लम्बी साँसें चलने लगीं। जैसे अपने बाणोंकी मारसे मूर्छित देखकर कामदेवने उसे पसीनेके पानीसे नहला दिया हो। पसीनेके प्रवाहमें डूब जानेके भयवश जैसे वह किसीके हाथका सहारा माँग रही हो। भयके मारे 'मैं गिर रही हूँ' ऐसा कहकर मानो वह हाथ फैलाकर चन्द्रापीडके शरीरसे लिपट जानेका प्रयास कर रही हो। तब चन्द्रापीडने भी उधर हाथ बढ़ाया। उसका हाथ स्वभावतः गुलाबी था। उसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावपाटलम्, धनुर्गुणाकर्षणकृतकिणश्यामलम्, कचग्रहाकृष्टिरुदितारिलक्ष्मीलोचनपरामर्शनलग्नाञ्जनबिन्दुमिव विसर्पन्नखकिरणतयातिरभसेन प्रधाविताभिरिव विवर्धिताभिरिव प्रहसिताभिरिवांगुलीभिरुपेतम्, स्पर्शलोभाच्च तत्कालकृतसंनिवेशाः सरागाः पञ्चापीन्द्रियवृत्तीरपरांगुलीरुद्वहन्तं प्रसारितवान्पाणिम्। तत्र च सा तत्कालसुलभविलासदर्शनकुतूहलिभिरिव कुतोऽप्यागत्य सर्वरसैरधिष्ठिता, तेनानिबद्धलक्ष्यतया शून्यप्रसारितेन चन्द्रापीडहस्तान्वेषणायेव पुरः प्रवर्तितनखांशुनिवहेन वेपथुचलितवलयावलीवाचालेन संभाषणमिव कुर्वता हस्तेन स्वेदसलिलपातपूर्वकम् 'गृह्यतामयं मन्मथेन दत्तो दासजनः' इत्यात्मानमिव प्रतिग्राहयन्ती, 'अद्यप्रभृति भवतो हस्ते वर्तते' इति जीवितमिव स्थापयन्ती

देखकर ऐसा लगता था कि जैसे जयकुञ्जर (विजयी हाथी) के मस्तकपर हाथ फेरनेसे उसका सिन्दूर हाथमें लग गया हो। अनेकशः धनुषकी डोरी खींचनेके कारण घट्ठे पड़ जानेसे वह कुछ काला पड़ गया था। वह कालिमा देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो केश पकड़कर खींचते समय शत्रुओंकी राजलक्ष्मी रोने लगी थी और उसके आँसू पोंछनेके लिए हाथ बढ़ानेपर उसमें अंजन लग गया हो। नखकिरणोंके फैलनेसे ऐसा लगता था कि जैसे वे उँगलियाँ हँस रही हों, बड़े वेगसे आगे भाग रही हों और उन्हीं किरणोंके सहारे बढ़ रही हों। चन्द्रापीडका वह हाथ कादम्बरीके हाथोंको छूनेके लिए मानो उँगलियोंके साथ-साथ अनुरागपूर्ण पाँचों इन्द्रियोंकी वृत्तियोंसे सम्पन्न अन्य पाँच उँगलियें धारण किये हुए हो। उस समय जैसे कादम्बरीका विलास देखनेके लिए तत्काल सुलभ सभी रस न जाने कहाँ-कहाँसे आ-आकर उसके हृदयमें बैठ गये। कोई लक्ष्य न दीखनेके कारण कादम्बरीने जैसे शून्यमें अपना हाथ फैला रक्खा था। इससे ऐसा लगता था कि जैसे वह हाथ चन्द्रापीडको ढूँढ़नेके लिए अपनी नखकिरणोंकी रोशनी आगेकी ओर फेंक रहा था। इसके अतिरिक्त कम्पके कारण हिलते हुए कङ्कणके शब्द करके जैसे वह हाथ वार्तालाप कर रहा था। पसीनेका जल छोड़ती-छोड़ती 'कामदेवके द्वारा दी हुई इस दासीको स्वीकार करिए' यों कहती हुई वह जैसे अपने आपको उसके हाथमें सौंप रही थी। 'आजसे यह जीवन आपके हाथमें है' ऐसा कहती हुई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ताम्बूलमदात्। आकर्षन्ती च करकिसलयं भुजलतानुसारेण स्पर्शतृष्णागतमनङ्गशरभिन्नमध्यं हृदयमिव पतितमपि रत्नवलयं नाज्ञासीत्। गृहीत्वा चापरं ताम्बूलं महाश्वेतायै प्रायच्छत्।

अथ सहसैव त्वरितगतिः, त्रिवर्णरागमिन्द्रायुधमिव कुण्डलीकृतं कण्ठेन वहता विद्रुमाङ्कुरानुकारिणा चञ्चुपुटेन मरकतद्युतिपक्षतिना मन्थरगतेन शुकेनानुबध्यमाना, कुमुदकेसरपिञ्जरतया चरणयुगलस्य चम्पककलिकाकारतया च मुखस्य कुवलयदलनीलतया च पक्षद्युतीनां कुसुममयीवागत्य सारिका सक्रोधमवादीत्—'भर्तृदारिके कादम्बरि, कस्मान्न निवारयस्येनमलीकसुभगाभिमानिनं दुर्विनीतं मामनुबध्नन्तं विहङ्गापसदम्। यदि मामनेन परिभूयमानामुपेक्षसे, ततोऽहं नियतमात्मानमुत्सृजामि। सत्यं शपामि ते पादपङ्कजस्पर्शेन' इत्येवमभिहिता

जैसे वह अपना जीवन अर्पण कर रही थी। इस तरह उसने वह पानका बीड़ा चन्द्रापीडके हाथमें दिया। किन्तु हाथ लौटाते समय चन्द्रापीडका स्पर्श पानेके लोभवश भुजाके साथ ही आया एवं कामबाणसे बीचमें छिदा हुआ जैसे हृदय ही हो, ऐसा रत्नजटित कङ्कण निकलकर गिर गया और उसको इस बातकी सुधि ही नहीं रही। इसके बाद दूसरा बीड़ा लेकर उसने महाश्वेताको दिया।

उसी समय सहसा दौड़ती हुई एक मैना वहाँ आ पहुँची। कुमुदकी केसर-सदृश पीले-पीले उसके दोनों पैर थे। चम्पाकी कलीके समान पीला उसका मुख था और कुवलयके पत्ते सरीखे श्यामवर्ण उसके पंख थे। इस प्रकार वह जैसे पूर्ण पुष्पमयी थी। उसके पीछे-पीछे एक तोता भी उसे मनाता हुआ आया। उसके गलेमें इन्द्रधनुषके समान तीन रंगोंकी कुंडलाकार रेखा विद्यमान थी। प्रबाल (मूँगा) के अंकुरकी नाईं लाल-लाल उसकी चोंच थी और मरकतमणिकी तरह हरे-हरे उसके पंख थे। कादम्बरीके समक्ष पहुँचकर बड़े क्रोधभरे स्वरमें मैना बोली—'राजपुत्री कादम्बरी ! झूठ-मूठ अपने आपको बहुत सुन्दर समझनेवाले इस उजड्ड तोतेको आप क्यों नहीं रोकतीं ? यह अधम पंछी बराबर मेरे पीछे लगा रहता है। इसके द्वारा सतायी हुई मुझ दुखियाकी यदि आप उपेक्षा करेंगी तो मैं अपने प्राण दे दूँगी। आपके चरणकमलोंकी सौगंध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च तया कादम्बरी स्मितमकरोत्। अविदितवृत्तान्ता तु महाश्वेता 'किमियं वदति' इति मदलेखां पप्रच्छ। सा चाकथयत्—'एषा भर्तृदुहितुः कादम्बर्याः सखी कालिन्दीति नाम्ना सारिका, एतस्य परिहासनाम्नः शुकस्य भर्तृदारिकयैव पाणिग्रहणपूर्वकं जायापदं ग्राहिता। अद्य चायमनया प्रत्यूषसि कादम्बर्यास्ताम्बूलकरङ्कवाहिनीमिमां तमालिकामेकाकिनीं किमपि पाठयन्दृष्टो यतः ततः प्रभृति संजातेर्ष्या कोपपराङ्मुखी नैनमुपसर्पति, नालपति, न स्पृशति, न विलोकयति, सर्वाभिरस्माभिः प्रसाद्यमानापि न प्रसीदति' इत्येतदाकर्ण्य स्फुटस्फुरितकपोलोदरश्चन्द्रापीडो मन्दं मन्दं विहस्याब्रवीत्—'अस्त्येषा कथा श्रूयत एवैतद्राजकुले, कर्णपरम्परया परिजनोऽप्येवमामन्त्रयते, बहिरपि जनाः कथयन्त्येवम् , दिगन्तरेष्वप्ययमालापो वर्तत एव, अस्माभिरप्येतदाकर्णितमेव, यथा किल देव्याः कादम्बर्यास्ताम्बूलदायिनीं तमालिकां कामयमानः परिहासनामा शुको मदनपरवशो गतान्यपि दिनानि

खाकर मैं सच कह रही हूँ।' उसकी बात सुनकर कादम्बरी मुसकाने लगी। किन्तु यह वृत्तान्त न मालूम रहनेके कारण महाश्वेताने मदलेखासे पूछा कि 'यह क्या कह रही है?' मदलेखा बोली—'यह राजपुत्री कादम्बरीकी सखी कालिन्दी नामकी मैना है। उन्होंने ही इस परिहास नामक तोतेके साथ इसका ब्याह करा दिया था। किन्तु आज सवेरे कालिन्दीने राजपुत्रीकी ताम्बूलवाहिनी तमालिकाके साथ अकेलेमें इस तोतेको बात करते देख लिया। तभीसे यह ईर्ष्या करने लगी है और क्रोधवश इसने तोतेकी ओरसे मुँह मोड़ लिया है। अब यह न इसके पास जाती है, न बात करती है, न छूती है, न उसकी ओर निहारती है। हम लोगोंने इसे मनानेकी बड़ी कोशिश की, किन्तु यह मानती ही नहीं।' यह सुनकर मंद-मंद हँसता हुआ चन्द्रापीड बोला। उस समय उसके कपोलोंका बिचला हिस्सा साफ-साफ फड़कता दीख रहा था। उसने कहा—'यह बात सत्य है। कानोकान यह बात सारे राजकुलमें सुनी जाती है। सभी परिजन परस्पर ऐसी ही बातें करते रहते हैं। बाहरी लोग भी यही बात करते हैं। सारे दिगन्तरोंमें यही चर्चा चल रही है और मैंने भी सुना है कि 'देवी कादम्बरीकी ताम्बूलवाहिनी तमालिकापर आसक्त परिहास नामका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न वेत्तीति। तदयमास्तां तावद्ग्रामाचारः परित्यक्तनिजकलत्रो निरूपितोऽनया सह, देव्यास्तु कादम्बर्याः कथमेतद्युक्तं यन्न निवारयतीमां चपलां दुष्टदासीम्, अथवा देव्यापि कथितैवातिनिःस्नेहता प्रथममेव वराकीमिमां कालिन्दीमीदृशाय दुर्विनीताय विहङ्गाय प्रयच्छन्त्या। किमिदानीमियं करोतु, यदेतत्सापत्न्यकरणं नारीणां प्रधानं कोपकारणम्, अग्रणीर्विरागहेतुः, परं परिभवस्थानम्। इयमेव केवलमतिधीरा, यदनयानेन दौर्भाग्यगरिम्णा जातवैराग्यया विषं वा नास्वादितम्, अनलो वा नासादितः, अनशनं वा नाङ्गीकृतम्। नह्येवमपरमस्ति योषितां लघिम्नः कारणम्, यदि चेयमीदृशेऽप्यपराधेऽनुनीयमानानेन प्रत्यासत्तिमेष्यति तदा धिगिमाम्, अलमनया, दूरतो वर्जनीयेयमभिमवनिरस्या, क एनां पुनरालापयिष्यति, को वावलोकयिष्यति, को वास्या नाम ग्रहीष्यति' इत्येवमभिहितवति तस्मिन्सर्वास्ताः सह कादम्बर्या क्रीडालापभाषिता

तोता इतना कामातुर हो गया है कि वह बीते हुए दिनोंको भी नहीं जानता। अतएव यह चरित्रभ्रष्ट और निजकलत्रत्यागी निर्लज्ज तोता इस तमालिकाके ही साथ रहे। किन्तु देवी कादम्बरीके लिए क्या यह उचित है कि जो इस दुष्ट और चंचल दासीको कुपथपर जानेसे नहीं रोकतीं ? और फिर इन देवीजीने तो पहले ही इसपर अपने स्नेहका अभाव प्रकट कर दिया है। तभी तो इन्होंने बेचारी सारिका कालिन्दीको इस शठ पंछीके गले मढ़ दिया था। अब यह क्या करे ? सौतका होना नारिजातिके क्रोधका प्रधान कारण हुआ करता है। यही आगे चलकर विरागका प्रमुख हेतु बन जाता है। क्योंकि यह पराजयका सबसे बड़ा स्थान है। कालिन्दी बड़ी धैर्यशालिनी है। तभी तो इतने बड़े दुर्भाग्यके आनेपर भी इसने विरागवश न जहर खाया, न आगमें जल मरी, न अनशन किया। इससे बढ़कर नारीजातिके अपमानकी और कोई भी बात नहीं हो सकती। इस तोतेके इतना बड़ा अपराध करनेपर भी यदि यह अनुनय-विनयसे राजी होकर फिर इसके साथ रहे तो इसे धिक्कार है। सभी लोगोंको चाहिए कि ऐसी दशामें तिरस्कारपूर्वक इसको त्याग दें और इससे सदा दूर रहें। तब कौन कालिन्दीसे बात करेगा ? कौन इसकी ओर आँख उठाकर देखेगा और कौन इसका नाम लेगा ?' चंद्रापीडके ऐसा कहनेपर कादम्बरी तथा उसके साथकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जहसुरङ्गनाः । परिहासस्तु तस्य नर्मभाषितमाकर्ण्य जगाद—'धूर्त राजपुत्र, निपुणेयम् , न त्वयान्येन वा लोलापि प्रतारयितुं शक्यते । एषापि बुध्यत एवैतावतीर्वक्रोक्तीः । इयमपि जानात्येव परिहासजल्पितानि । अस्या अपि राजकुलसंपर्कचतुरा मतिः । विरम्यताम् । अभूमिरेषा भुजंगभङ्गिभाषितानाम् । इयमेव हि वेत्ति मञ्जुभाषिणी कालं च कारणं च प्रमाणं च विषयं च कोपप्रसादयोः' इति ।

अत्रान्तरे चागत्य कंचुकी महाश्वेतामवोचत्—'आयुष्मति, देवश्चित्ररथो देवी च मदिरा त्वां द्रष्टुमाह्वयते' इति । एवमभिहिता च गन्तुकामा 'सखि, चन्द्रापीडः क्वास्ताम्' इति कादम्बरीमपृच्छत् । असौ तु ननु पर्याप्तमेवानेकस्त्रीहृदयसहस्त्रावस्थानमनेनेति । मनसा विहस्य प्रकाशमवदत्—'सखि महाश्वेते, किं त्वमेवमभिदधासि । दर्शनादारभ्य शरीरस्याप्यहं न विभुः, किमुत भवनस्य परिजनस्य वा । यत्रासौ

सभी कुमारियाँ इस व्यंग्यभरे वचनका मर्म समझती हुई खिलखिलाकर हँस पड़ीं । किन्तु परिहास तोता चन्द्रापीडका व्यंग्यवचन सुनकर बोला—'अरे धूर्त राजपुत्र ! यह बड़ी चालाक है । चपल स्वभावकी होती हुई भी यह तेरी या किसीकी बातमें आकर ठगी नहीं जा सकती । यह व्यंग्योक्तियोंको भलीभाँति समझती है । परिहासभरे वचनोंका मर्म भी जानती है । राजकुलके सम्पर्कसे इसकी बुद्धि बहुत चतुर हो गयी है । अब तू चुप रह । तुझ जैसे नागरिकोंकी व्यंग्यभरी बातोंका इसपर कुछ भी असर नहीं होगा । मेरी मधुरभाषिणी सारिका काल, कारण, प्रमाण, विषय, कोप और प्रसन्नताके प्रस्ताव (अवसर) से पूर्ण परिचित है ।'

इसी बीच कञ्चुकीने आकर महाश्वेतासे कहा—'आयुष्मती ! महाराज चित्ररथ और महारानी मदिरा आपको देखनेके लिए बुला रही हैं ।' उसके वचन सुनकर जानेके लिए उद्यत महाश्वेताने कादम्बरीसे कहा—'सखी ! चन्द्रापीड कहाँ ठहरेंगे ?' कादम्बरीने हँसकर अपने मनमें कहा—'अनेक सहस्र स्त्रियोंके हृदय क्या इनके टिकनेको पर्याप्त नहीं होंगे ?' किन्तु प्रकटरूपमें बोली—'सखी महाश्वेते ! तुम ऐसा क्यों कह रही हो ? जबसे इनके दर्शन हुए हैं, तभीसे ये मेरे शरीरके प्रभु बन चुके हैं । तब भवन, विभव और परिजनके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोचते प्रियसखीहृदयाय वा तत्रायमास्ताम्' इति। तच्छ्रुत्वा महाश्वेतावदत्—'अत्रैव त्वत्प्रासादसमीपवर्तिनि प्रमदवने क्रीडापर्वतकमणिवेश्मन्यास्ताम्' इत्यभिधाय गन्धर्वराजं द्रष्टुं ययौ। चन्द्रापीडोऽपि तयैव सह निर्गत्य विनोदनार्थं वीणावादिनीभिश्च वेणुवाद्यनिपुणाभिश्च गीतकलाकुशलाभिश्च दुरोदरक्रीडारागिणीभिश्चाष्टापदपरिचयचतुराभिश्च चित्रकर्मकृतश्रमाभिश्च सुभाषितपाठिकाभिश्च कादम्बरीसमादिष्टप्रतीहारीप्रेषिताभिः कन्याभिरनुगम्यमानः पूर्वदृष्टेन केयूरकेणोपदिश्यमानमार्गः क्रीडापर्वतमणिमन्दिरमगात्। गते च तस्मिन्गन्धर्वराजपुत्री विसर्ज्य सकलसखीजनं च परिमितपरिचारिकाभिरनुगम्यमाना प्रासादमारुरोह। तत्र च शयनीये निपत्य दूरस्थिताभिर्विनयनिभृताभिः परिचारिकाभिर्विनोद्यमाना कुतोऽपि प्रत्यागतचेतना चैकाकिनी तस्मिन्काले 'चपले, किमिदमारब्धम्' इति निगृहीतेव लज्जया, 'गन्धर्वराज-

---

विषयमें प्रश्न ही क्या है ? ये जहाँ चाहें वहाँ अथवा आपको जो जगह पसंद हो, ये वहाँ ही सानन्द रह सकते हैं।' यह सुनकर महाश्वेता बोली—'तब तो ये तुम्हारे ही महलके समीप प्रमदवनके क्रीड़ापर्वतपर बने मणिमय भवनमें ठहर जायँ।' इतना कहकर वह गन्धर्वराज चित्ररथसे मिलनेको चली गयी। चन्द्रापीड भी उसके साथ ही चल पड़ा। उसका मनोरञ्जन करनेके लिए कादम्बरीके आदेशसे प्रतीहारियों द्वारा भेजी हुई बीणा बजानेमें निपुण, वंशी बजानेमें कुशल, गायनकलामें चतुर, द्यूतक्रीड़ामें रुचि रखनेवाली, शतरंजके खेलमें होशियार, चित्रकारीमें परिश्रम करनेवाली और सुभाषित कहनेमें निपुण कन्याओंके साथ पहले ही देखे हुए केयूरकके दिखाये मार्गसे क्रीडापर्वतकी मणिमयी कोठीमें चला गया। उसके चले जानेपर गन्धर्वराजपुत्री कादम्बरी भी समस्त सखियों तथा परिजनोंको विसर्जित करके केवल कतिपय दासियोंको साथ लेकर अपने भव्य प्रासादपर चढ़ गयी। वहाँ वह अपनी सेजपर लेट गयी और कुछ विनयशील परिचारिकायें चुपचाप दूर खड़ी होकर उसका मनोविनोद करने लगीं। कुछ देर बाद अकेलेमें जब उसे होश आया तो उस समय—'चंचले ! तूने यह क्या करना आरम्भ कर दिया है ?' ऐसा कहकर लज्जा जैसे उसको पकड़ने लेगी। 'गन्धर्वराजपुत्री ! तुम जो कर रही हो, वह क्या तुम्हारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुत्रि, कथमेतद्युक्तम्' इत्युपालब्धेव विनयेन, 'अयमसावव्युत्पन्नो बालभावः क्व गतः' इत्युपहसितेव मुग्धतया, 'स्वैरिणि, मा कुरु यथेष्टमेकाकिन्यविनयम्' इत्यामन्त्रितेव कुमारभावेन, 'भीरु, नायं कुलकन्यकानां क्रमः' इति गर्हितेव महत्त्वेन, 'दुर्विनीते, रक्षाविनयम्' इति तर्जितेवाचारेण, 'मूढे, मदनेन लघुतां नीतासि' इत्यनुशासितेवाभिजात्येन, 'कुतस्तवेयं तरलहृदयता' इति धिक्कृतेव धैर्येण, 'स्वच्छन्दचारिणि, अप्रमाणीकृताऽहं त्वया' इति निन्दितेव कुलस्थित्यातिगुर्वीं लज्जामुवाह।

समचिन्तयच्चैवम्—'अगणितसर्वशङ्कया तरलहृदयतां दर्शयन्त्याद्य मया किं कृतमिदं मोहान्धया। तथा हि। अदृष्टपूर्वोऽयमिति साहसिकतया मया न शङ्कितम्। लघुहृदयां मामयं कलयिष्यतीति निर्ह्रीकया नाकलितम्। कास्य चित्तवृत्तिरिति मया न परीक्षितम्। दर्शनानुकूला-

---

लिए उचित है?' ऐसा कहकर विनयभाव जैसे उसे उलाहना दे रहा था। 'श्रृंगाररससे अनभिज्ञ तेरा बालभाव कहाँ गया?' यह कहकर जैसे उसका भोलापन उसकी ठठोली उड़ा रहा था। 'अरी स्वेच्छाचारिणी! अकेली तू ऐसी मनमानी करनेकी मूर्खता न कर।' यों कहता हुआ बालभाव जैसे उसे धमका रहा था। 'अरी डरपोक! कुलवन्ती कन्याओंकी यह रीति नहीं है।' यह कहकर महत्त्व जैसे उसकी निन्दा कर रहा था। 'अरी दुर्विनीते! अशिष्टजनोचित कार्य मत कर।' यह कहकर आचार जैसे उसे डरा रहा था। 'अरी मूर्खे! कामदेवने तुझे तुच्छ बना दिया है' ऐसा कहकर कुलीनता जैसे उसे शिक्षा दे रही थी। 'तू इतनी चंचलहृदया हो गयी?' यों कहकर धैर्य जैसे उसे धिक्कार रहा था। 'अरी स्वच्छन्दचारिणी! तूने मुझे भी कुछ न समझा?' ऐसा कहकर कुलकी स्थिति जैसे उसकी निन्दा कर रही थी। ऐसी-ऐसी अनेक बातोंको सोचकर वह बहुत लज्जित हुई।

इसके बाद उसने सोचा—'सब भय त्याग तथा अज्ञानसे अन्धी बनकर अपने हृदयकी चंचलता प्रकट करती हुई आज मैंने क्या कर डाला? 'मेरा उनसे पहले कभी भी साक्षात्कार नहीं हुआ है।' यह शंकाभरी भावना भी मैंने अपनी साहसिकताके द्वारा ठुकरा दी। 'यह मुझे ओछे हृदयकी समझेंगे' इस बातको भी मुझ निर्लज्जाने कुछ नहीं समझा। 'उनकी चित्तवृत्ति कैसी है?'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इमस्य नेति वा तरलया न कृतो विचारक्रमः। प्रत्याख्यानवैलक्ष्यान्न भीतम्। गुरुजनान्न त्रस्तम्। लोकापवादान्नोद्विग्नम्। तथा च महाश्वेतातिदुःखितेति दाक्षिण्यया नापेक्षितम्। आसन्नवर्तिसखीजनोऽप्युपलक्षयतीति मन्दया न लक्षितम्। पार्श्वस्थितः परिजनः पश्यतीति नष्टचेतनया न दृष्टम्। स्थूलबुद्धयोऽपि तादृशीं विनयच्युतिं विभावयेयुः, किमुतानुभूतमदनवृत्तान्ता महाश्वेता सकलकलाकुशलाः सख्यो वा राजकुलसंचारचतुरो वा नित्यमिङ्गितज्ञः परिजनः। ईदृशेष्वतिनिपुणतरदृष्टयोऽन्तःपुरदास्यः। सर्वथा हताऽस्मि मन्दपुण्या। मरणं मेऽद्य श्रेयः, न लज्जाकरं जीवितम्। श्रुत्वैतद्वृत्तान्तं किं वक्ष्यत्यम्बा, तातो वा, गन्धर्वलोको वा। किं करोमि। कोऽत्र प्रतीकारः। केनोपायेन स्खलितमिदं प्रच्छादयामि। कस्य वा चापलमिदमेतेषां दुर्विनीतानामिन्द्रियाणां कथयामि। क्व वानेन दग्धहृदया पञ्चबाणेन गच्छामि। तथा

इस बातकी भी मैंने परीक्षा नहीं की। 'मैं उनके देखने योग्य हूँ या नहीं' मुझ चंचलाने इस बातपर भी विचार नहीं किया। यदि उन्होंने मेरे प्रेमको ठुकरा दिया तो क्या होगा?' इसका भी भय नहीं रह गया। लोकापवादसे भी मैं उद्विग्न नहीं हुई। 'महाश्वेता बड़े क्लेशमें है' इस बातपर भी मैंने कुछ ध्यान नहीं दिया। 'आस-पासकी सहेलियाँ मेरी चेष्टायें देख रही हैं' इस ओर भी मुझ मूर्खाने दृष्टिपात नहीं किया। 'आस-पासके परिजन देख रहे हैं' चेतना नष्ट हो जानेके कारण मैंने उधर भी ध्यान नहीं दिया। स्थूल बुद्धिवाले साधारण लोग भी मेरी बेहयाई भाँप सकते थे, फिर कामदेवके वृत्तान्तसे भली भाँति परिचित महाश्वेता, समस्त कलाओंमें पारङ्गत सखियाँ तथा राजकुलमें सदा संचरणशील होनेके कारण चतुर एवं चेष्टामात्रसे मनोगत अभिप्राय जान लेनेवाली दासियोंकी तो बात ही क्या है। ऐसी-ऐसी बातोंमें तो अन्तःपुरकी दासियोंकी दृष्टि और भी सूक्ष्म होती है। मुझ मन्दपुण्याका तो सर्वनाश हो गया। ऐसे लज्जित जीवनकी अपेक्षा तो मरण ही उत्तम है। यह वृत्तांत सुनकर मेरे पिता, माता तथा अन्यान्य गन्धर्वगण क्या कहेंगे? क्या करूँ? इसके प्रतीकारका क्या उपाय हो सकता है? किस प्रयत्नसे मैं अपने इस दोषको छिपाऊँ? अपनी उद्धत इन्द्रियोंकी चपलता मैं किसे बताऊँ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाश्वेताव्यतिकरेण प्रतिज्ञा कृता तथा प्रियसखीनां पुरो मन्त्रितम्, तथा च केयूरकस्य हस्ते संदिष्टम्, न खलु जानामि मन्दभागिनी शठविधिना वा, उत्सन्नमन्मथेन वा पूर्वकृतापुण्यसंचयेन वा, मृत्युहतकेन वा, अन्येन वा केनाप्ययमानीतो मम विप्रलम्भकश्चन्द्रापीडः। कोऽपि वा न कदाचिद्दृष्टः, नानुभूतः, न च श्रुतः, न चिन्तितः, नोत्प्रेक्षितः, मां विडम्बयितुमुपागतः। यस्य दर्शनमात्रेणैव संयम्य दत्तेव इन्द्रियैः, शरपञ्जरे निक्षिप्य समर्पितेव मन्मथेन, दासीकृत्योपनीतेव अनुरागेण, गृहीतमूल्येन गुणगणेन विक्रीतेव हृदयेनोपकरणीभूतास्मि। 'न मे कार्यं तेन चपलेन' इति क्षणमिव संकल्पमकरोत्। कृतसंकल्पा चान्तर्गतेन 'मिथ्याविनीते, यदि मया न कृत्यम्, एष गच्छामि' इति

कामदेवके द्वारा दग्धहृदया होकर मैं कहाँ जाऊँ? कुछ समझमें नही आता। महाश्वेताका वृत्तान्त सुनकर मैंने विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा की थी। अपनी प्रिय सखियोंके बीच इसी विषयमें मैंने मंत्रणा की थी और केयूरकके द्वारा महाश्वेताके पास सन्देश भेजा था। मैं मन्दभागिनी यह भी नहीं समझ पाती कि मुझे ठगनेवाले चन्द्रापीडको यहाँ शठ विधाता लाया, कामदेव लाया, मुई मौत इसे यहाँ लायी या और कोई ले आया। जिसको मैंने पहले कभी नहीं देखा था। जिसके विषयमें मुझे कुछ भी अनुभव नहीं था। पहले कभी मैंने जिसका नाम तक नहीं सुना था। जिसके विषयमें कुछ सोचा भी नहीं था। जिसके आनेकी कभी सम्भावना नहीं थी। वही आज इस प्रकार मेरी विडम्बना करनेके लिए यहाँ आ धमका है। जिसे देखते ही जैसे समग्र इन्द्रियोंने मुझे बाँधकर उसके हाथोंमें सौंप दिया है। मानो कामदेवने मुझे पींजरेमें डाल करके बन्द कर दिया है। अनुरागने जैसे मुझे दासी बनाकर उपहारमें दे दिया है। इस हृदयने जैसे गुणोंका दाम लेकर बेच डाला है। इस तरह मैं सर्वथा उसके लिए सेवाकी सामग्री बन गयी हूँ।' इसके बाद कादम्बरीने क्षणभरके लिए यह संकल्प किया कि 'उस चंचल व्यक्तिसे मेरा कोई सरोकार नहीं है।' उसके ऐसा संकल्प करते ही हृदयके भीतर बैठे चन्द्रापीडने कहा—'अरी मिथ्या बनी हुई सदाचारिणी! यदि मुझसे सरोकार नहीं है तो ले,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृदयोत्कम्पचलितेन परिहसितेव, चन्द्रापीडपरित्यागसंकल्पसमकालप्रस्थितेन कण्ठलग्नेन पृष्टेव जीवितेन 'अविशेषज्ञे, पुनरपि प्रक्षालितलोचनया दृश्यतामसौ जनः, प्रत्याख्यानयोग्यो न वा' इति तत्कालागतेनाभिहितेव बाष्पेण, अपनयामि ते सहासुभिर्धैर्यावलेपमिति निर्भर्त्सितेव मनोभुवा पुनरपि तथैव चन्द्रापीडाभिमुखहृदया बभूव। तदेवमस्तमितप्रतिसमाधानबलात्प्रेमावेशेनास्वतन्त्रीकृता परवशेवोत्थाय जालवातायनेन तमेव क्रीडापर्वतकमवलोकयन्त्यतिष्ठत्। तत्रस्था च सा तमानन्दजलव्यवधानोद्विग्नेव स्मृत्या ददर्श, न चक्षुषा। अंगुलीगलितस्वेदपरामर्शभीतेव चिन्तया लिलेख, न चित्रतूलिकया। रोमाञ्चतिरोधानशङ्कितेव हृदयेनालिलिङ्ग, न वक्षसा। तत्संगमकालातिपातासहेव मनो गमनाय नियुक्तवती, न परिजनम्।

मैं यह चला।' ऐसा कह और हृदयको झकझोरकर जैसे उसने कादम्बरीका उपहास किया। उसके परित्यागका संकल्प करते ही जैसे प्राणोंने बाहर निकल जानेके लिए कंठमें चले जानेकी आज्ञा माँगी। 'अरी नादान! एक बार फिर आँखें धोकर उसे देख और सोच कि वह त्यागने योग्य है या अपनाने लायक है।' उसी समय सहसा उमड़े हुए आँसुओंने जैसे आकर उससे कहा—'मैं तेरे धैर्य और प्राण दोनोंको अपने तीव्र प्रवाहमें बहा ले जाऊँगा।' ऐसा कहकर जैसे कामदेवने स्वयं धमकी दी। इन सब बातोंको सोचनेके बाद पहले ही की तरह उसका हृदय फिर चन्द्रापीडमें जा उलझा। इस प्रकार प्रतीकारके सारे उपाय व्यर्थ हो जानेसे प्रेमावेशवश अपनी स्वाधीनता गँवाकर पराधीनकी भाँति वह शय्यासे उठकर खड़ी हो गयी और खिड़कीपर जाकर उसी क्रीडापर्वतकी ओर एकटक निहारने लगी। वह बड़ी देरतक वहाँ खड़ी देखती रही, किन्तु सहसा आनन्दाश्रुओंकी बाढ़ आ गयी। जिससे अब नेत्रोंके बदले वह स्मृतियोंसे उसे देखने लगी। उँगलियोंमें पसीना आ जानेसे बिगड़ जानेके भयवश अब वह तूलिकाके बदले चिन्तन द्वारा उसका चित्र बनाने लगी। रोमाञ्चके कारण बाधा पड़ते देख अब वह छातीसे लगाकर लपटानेके बजाय हृदयसे उसका आलिंगन करने लगी। उसके मिलनमें विलम्बको असह्य समझकर किसी दासीके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रापीडोऽपि प्रविश्य स्वच्छन्दं कादम्बरीहृदयमिव द्वितीयं मणिगृहं शिलातलास्तीर्णायामुभयत उपर्युपरि निवेशितबहूपधानायां कुथायां निपत्य केयूरकेणोत्संगेन गृहीतचरणयुगलस्ताभिर्यथादिष्टेषु भूमिभागेषूपविष्टाभिः कन्यकाभिः परिवृतो दोलायमानेन चेतसा चिन्तां विवेश। किं तावदस्या गन्धर्वराजदुहितुः कादम्बर्याः सहभुव एते विलासा एवंदृशाः सकललोकहृदयहारिणः आहोस्विदनाराधितप्रसन्नेन भगवता मकरकेतुना मयि नियुक्ता, येन मां सास्रेण सरागेणाकूणितत्रिभागेण हृदयान्तःपतत्स्मरशरकुसुमरजोरूषितेनेव चक्षुषा तिर्यग्वलोकयति। मद्विलोकिता च धवलेन स्मितालोकेन दुकूलेनेव लज्जयात्मानमावृणोति। मल्लज्जाविवर्तमानवदना च प्रतिबिम्बप्रवेशलोभेनेव कपोलदर्पणमर्पयति मदवकाशदायिनो हृदयस्य प्रथमाविनयलेखामिव कररुहेण शयनाङ्के लिखति। मत्ताम्बूलवीटिकोपनयनखेदविधूतेन रक्तोत्पलभ्रमद्भ्रमरवृन्देन

द्वारा सन्देश भेजनेके बदले वह अपना मन ही उसके पास भेजने लगी।

उधर चंद्रापीड भी पूर्ण स्वच्छन्दतापूर्वक कादम्बरीके अन्य हृदयकी नाईं विशाल मणिगृहमें गया और एक शिलातलपर बिछे हुए गलीचेपर लेट गया। उसके दोनों तरफ नीचे-ऊपरके क्रमसे बहुतेरे तकिये रक्खे हुए थे। लेट जानेपर केयूरकने उसके पैर गोदमें ले लिये और वे कन्यायें अपनी-अपनी निर्दिष्ट जगहोंपर बैठ गयीं। अब वह अपने व्याकुल मनमें विचार करने लगा कि 'गंधर्वराजकी पुत्री कादम्बरीके ये सर्वलोकहृदयहारी विलास स्वाभाविक हैं या कि बिना आराधनाके ही प्रसन्न होकर भगवान् कामदेवने खास तौरसे मेरे लिए उससे करवाये हैं। जिससे कि वह मुझको आँसुओंसे भरी, अनुरागपूर्ण तथा हृदयके भीतर गिरते हुए कामबाणके पुष्पोंकी रजसे जैसे कुछ रूखी और तिरछी आँखोंसे देखती है। जब मैं उसकी ओर निहारता हूँ, तब वह लज्जित होकर स्वच्छ वस्त्रकी भाँति अपनी धवल मुसकानके आवरणमें अपने आपको छिपा लेती है। मुझसे लजाकर वह मुँह फेर लेती है और जैसे मेरा प्रतिबिम्ब प्रविष्ट करानेके लोभवश अपना कपोलरूपी दर्पण मेरी ओर कर देती है। मुझे अवकाश देनेवाले हृदयकी पहली अशिष्टताको जैसे वह लेटकर अपने नाखूनोंसे शय्यापर लिखती है। मुझे पानका बीड़ा देते समय खेदके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करतलेन स्विन्नं मुखमिव गृहीततमालपल्लवेनेव वीजयति। पुनश्चाचिन्तयत्—'प्रायेण मानुष्यकसुलभा लघुता मिथ्यासंकल्पसहस्रैरेवं मां विप्रलभते, लुप्तविवेको यौवनमदो मदयति, मदनो वा। यतस्तिमिरोपहतेव यूनां दृष्टिरल्पमपि कालुष्यं महत्पश्यति। स्नेहलवोऽपि वारिणेव यौवनमदेन दूरं विस्तीर्यते। स्वयमुत्पादितानेकचिन्ताशताकुला कविमतिरिव तरलता न किंचिन्नोत्प्रेक्षते। निपुणमदनगृहीता चित्रवर्तिकेव तरुणचित्तवृत्तिर्न किंचिन्नालिखति। संजातरूपाभिमाना लतेवात्मसंभावना न क्वचिन्नात्मानमर्पयति। स्वप्न इवाननुभूतमपि मनोरथो दर्शयति। इन्द्रजालपिच्छिकेवासंभाव्यमपि प्रत्याशा पुरः स्थापयति'।

कारण अपने काँपते हुए हाथसे जैसे तमालपल्लव लेकर मेरे खिन्न मुखपर पंखा कर रही थी। उसके सुन्दर हाथको लाल कमल समझकर भौंरोंके झुण्ड उसके ऊपर मँडरा रहे थे। उसने फिर सोचा कि 'प्रायः मानवजातिसुलभ लाघव ही ऐसे-ऐसे सहस्रों संकल्प उत्पन्न करके मेरे साथ छल कर रहा है। यह भी संभव है कि अविवेकमय यौवनमद तथा कामदेव ही मुझे ऐसा उन्मत्त बना रहा हो। क्योंकि जैसे नेत्ररोगसे पीड़ित नेत्र कभी-कभी एक वस्तुको दोके रूपमें देखते हैं, उसी प्रकार जवानीके अँधेरेसे अन्धी युवकोंकी दृष्टिको थोड़ा भी कलुष अर्थात् कामविकार बहुत होकर दीखता है। जैसे तनिक-सा तेल जलमें पड़कर शीघ्र फैल जाता है, उसी प्रकार थोड़ा-सा प्रेम पाकर भी युवकोंका यौवनोन्माद उसे बहुत अधिक समझ लेता है। स्वयं अपने द्वारा उत्पन्न की हुई अगणित चिन्तनाओंसे जैसे कविकी बुद्धि नाना प्रकारकी उत्प्रेक्षायें करने लगती है, उसी प्रकार युवकोंके मनकी चंचलता भी नाना प्रकारकी कल्पनायें कर-करके अपनी प्रेमिकाके विषयमें सब तरहकी संभावनायें देखने लग जाती है। जैसे चित्रकलामें निपुण कामदेव हाथमें कूँची लेकर सब प्रकारके चित्र बना सकता है, उसी प्रकार युवकोंकी चित्तवृत्ति भी कामदेवके अधीन होकर अपनी कल्पनासे सब कुछ कर लेती है। जैसे रूपगर्विता स्त्री सबके आगे आत्मसमर्पण करती रहती है, उसी प्रकार अपने आपको बड़ा समझनेवाले लोगोंका बड़प्पन सर्वत्र आत्मसमर्पण करता चलता है। मनुष्यकी अभिलाषायें अनुभवमें न आये हुए स्वप्नके सदृश पदार्थोंको भी सम्मुख लाकर उपस्थित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूयश्च चिन्तितवान्—'किमनेन वृथैव मनसा खेदितेन, यदि सत्यमेवेयं धवलेक्षणा मय्येवं जातचित्तवृत्तिस्तदा न चिरात्स एवैनामप्रार्थितानुकूलो मन्मथः प्रकटीकरिष्यति। स एवास्य संशयस्य छेत्ता भविष्यति।' इत्यवधार्योत्थायोपविश्य च ताभिः कन्यकाभिः सहाक्षैर्गेयैश्च विपञ्चीवाद्यैश्च पाणविकैश्च स्वरसंदेहविवादैश्च तैस्तैरालापैः सुकुमारैः कलाविलासैः क्रीडन्नासांचक्रे। मुहूर्तं च स्थित्वा निर्गम्योपवनावलोकनकुतूहलाक्षिप्तचित्तः क्रीडापर्वतशिखरमारुरोह।

कादम्बरी तु तं दृष्ट्वा चिरयतीति महाश्वेतायाः किल वर्त्मावलोकयितुं विमुच्यतां गवाक्षमित्युक्त्वानङ्गक्षिप्तचित्ता सौधस्योपरितनं शिखरमारुरोह। तत्र च विरलपरिजना, सकलशशिमण्डलपाण्डुरेणातपत्रेण हेमदण्डेन निवार्यमाणातपा, चतुर्भिर्वालव्यजनैश्च फेनशुचिभिरुद्धूयमानैरुपवीज्यमाना, शिरसि कुसुमगन्धलुब्धेन भ्रमता भ्रमरकुलेन दिवापि

कर देती हैं। मनुष्यकी प्रत्याशायें जादूगरके मोरछलकी भाँति असंभवको भी संभव कर दिखाती हैं।' इसके पश्चात् उसने फिर सोचा—'इस प्रकार व्यर्थ मनको खिन्न करनेकी क्या आवश्यकता? यदि वास्तवमें उस स्वच्छ नयनोंवाली सुन्दरीकी चित्तवृत्ति मेरी ओर आकृष्ट हो गयी है तो अविलम्ब कामदेव बिना प्रार्थनाके ही उसे मेरे अनुकूल करके सारा सन्देह निवृत्त कर देगा।' ऐसा विचार करके वह उठ गया और बैठकर उन कुमारी कन्याओंके साथ पासोंके खेल, वीणावाद्य ढोलकवादन, निषादादि स्वरोंके सम्बन्धमें शंकासमाधान, सुभाषितगोष्ठी, अन्यान्य वार्ताओं एवं कोमल कलाओंसे मनोविनोद करने लगा। इस प्रकार थोड़ी देर वह वहाँ रुककर उपवन देखनेके कुतूहलवश उस क्रीडापर्वतके शिखरपर चढ़ गया।

इधर कामातुरा कादम्बरी उसे पर्वतारूढ देखकर 'महाश्वेताको लौटनेमें विलम्ब क्यों हो रहा है' ऐसा सोच और परिजनोंको खिड़की खोलनेकी आज्ञा देकर मार्ग देखनेके बहाने अपने महलकी सबसे ऊँची अट्टालिकापर चढ़ गयी। उस समय उसके साथ बहुत थोड़ेसे परिजन थे। पूर्ण चन्द्रमण्डलकी भाँति शुभ्र तथा उज्ज्वल स्वर्णदण्डवाली छतरी धूप निवारणके लिए उसके ऊपर तनी हुई थी। फेन-सरीखे सफेद चार पंखे झलती हुई दासियाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नीलावगुण्ठनेनेव चन्द्रापीडाभिसरणवेषमभ्यस्यन्ती, मुहुश्चामरशिखां समासज्य मुहुश्छत्रदण्डमवलम्ब्य मुहुस्तमालिकास्कन्धे करौ विन्यस्य मुहुर्मदलेखां परिष्वज्य मुहुः परिजनान्तरितसकलदेहो नेत्रत्रिभागेणावलोक्य मुहुरावलितत्रिवलीवलया परिवृत्य मुहुः प्रतिहारीवेत्रलताशिखरे कपोलं निधाय मुहुर्निश्चलकरविधृतामधरपल्लवे वीटिकां निवेश्य मुहुरुद्गीर्णोत्पलप्रहारपलायमानपरिजनानुसरणदत्तकतिपयपदा विहस्य तं विलोकयन्ती, तेन च विलोक्यमाना, महान्तमपि कालमतिक्रान्तं नाज्ञासीत्। आरुह्य च प्रतीहार्या निवेदितमहाश्वेताप्रत्यागमना तस्मादवततार। स्नानादिषु मन्दादरापि महाश्वेतानुरोधेन दिवसव्यापारमकरोत्। चन्द्रापीडोऽपि तस्मादवतीर्य प्रथमविसर्जितेनैव कादम्बरीपरिजनेन निवर्तितस्नानविधिर्निरुपहतशिलाचिताभिमतदैवतः क्रीडापर्वतक एव

उसपर हवा कर रही थीं। उसके केशोंमें गुँथे फूलोंपर सुगंधिके लोभवश मँडराते हुए भौंरोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे दिनको ही वह सिरपर काला बुर्का डालकर चन्द्रापीडकी अभिसारिका बननेका अभ्यास कर रही हो। वहाँपर वह कभी बार-बार चमरके सिरेका सहारा लेकर, कभी बार-बार छत्रदण्ड पकड़कर, कभी बार-बार तमालिकाके कन्धेपर दोनों हाथ रखकर, कभी बार-बार मदलेखाको लपटाकर, कभी बार-बार परिजनोंके बीचमें अपनी देह छिपाकर, कभी नयनोंकी कोरसे निहारकर, कभी इस भावसे फिरती हुई कि जिससे माथेकी तीनों रेखायें दिख जायँ, कभी बार-बार प्रतीहारीकी छड़ीके सिरेपर कपोल रखकर, कभी बार-बार पानका बीड़ा अपने निश्चल हाथसे अधरोंपर धरकर और कभी बार-बार कमलपुष्पके प्रहारसे भागती हुई दासीका पीछा करती हुई कुछ पग चलकर हँसती हुई कादम्बरी चन्द्रापीडको देखती रही और चंद्रापीड कादम्बरीको देखता रहा। ऐसा करते हुए बहुत समय बीत गया, किन्तु उसे इसका ज्ञान ही नहीं रह गया था। वह तो जब प्रतीहारीने कोठेपर चढ़कर महाश्वेताके आनेकी खबर दी, तब वह वहाँसे नीचे उतरी। यद्यपि स्नानादि करनेकी इच्छा कम ही थी, तथापि महाश्वेताके अनुरोधसे उसने सब दैनिक कृत्य सम्पन्न किया। उसी समय चन्द्रापीड भी क्रीडापर्वतसे उतरा। वहाँपर कादम्बरी द्वारा पहलेसे ही भेजी हुई दासियोंने उसे नहलाया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वमाहारादिकमहःकर्म चक्रे। क्रमेण च कृताहारः क्रीडापर्वतकप्राग्भागभाजि, मनोहारिणि, हारीतहरिते, हरिणरोमन्थफेनशीकरासारे, सीरायुधहलभयनिश्चलकालिन्दीजलत्विषि, तरुणीचरणालक्तकरसशोणशोचिषि, कुसुमरजःसिकतिलतले, लतामण्डपोपगूढे, शिखण्डिताण्डवसंगीतगृहे, मरकतशिलातल उपविष्टो दृष्टवान्सहसैवातिबहलधाम्ना धवलेनालोकेन जलेनेव निर्वाप्यमाणं दिवसम्, मृणालवलयेनेव पीयमानमातपम्, क्षीरोदेनेव प्लाव्यमानां महीम्, चन्दनरसवर्षणेव सिच्यमानान्दिगन्तान्, सुधयेव विलिप्यमानमम्बरतलम्। आसोच्चास्य मनसि—'किमु खलु भगवानोषधिपतिरकाण्ड एव शीतांशुरुदितो भवेत्, उत यन्त्रविलेपविशीर्यमाणपाण्डुरधारासहस्राणि धारागृहाणि मुक्तानि, आहोस्विदनिलविकीर्यमाणसीकरधवलितभुवनाम्बरसिन्धुः

और उसने एक शिलातलपर बैठकर अपने इष्टदेवका पूजन करनेके पश्चात् उस क्रीडापर्वतपर ही आहारादि दैनिक कार्य पूर्ण किया। क्रमशः आहारादि कार्योंसे निवृत्त होकर चन्द्रापीड उसी क्रीडापर्वतके पूर्वी भागमें एक मनोहर तथा हारीत पक्षीकी भाँति हरे मरकतमणिकी शिलापर बैठ गया। हरिणियोंके पागुर करनेसे निकले फेनकी बूँदें वहाँ यत्र तत्र पड़ी थीं। बलदेवजीके हलसे भयभीत होकर निश्चलभावसे स्थित यमुनाजलकी भाँति उसकी दीप्ति थी। युवतियोंके पाँवोंकी महावर लगनेके कारण वह लाल हो गयी थी। उस मरकतशिलापर पुष्पोंकी रज बिखरी पड़ी थी। चारों ओर लसी लताओंसे वह ढँकी थी और नित्य मयूरोंके नाचते रहनेसे वह एक प्रकारकी संगीतशाला बन गयी थी। उसपर बैठकर उसने सहसा एक अत्यन्त तेजस्वी धवल प्रकाश देखा। वह प्रकाश जैसे जलकी तरह दिनको धो रहा था। मृणालवलयकी तरह जैसे वह सूर्यकी धूपको पी रहा था। क्षीरसमुद्रकी नाईं जैसे वह सारी पृथिवीको डुबाये दे रहा था। चन्दनरसकी वर्षाके समान जैसे वह समस्त दिशाओंको सींचे दे रहा था और जैसे अमृतके समान सारे गगनमण्डलको लीप रहा था। उसे देखकर युवराज चन्द्रापीडने सोचा कि 'क्या भगवान् चन्द्रमा असमयमें ही उदित हो गये हैं? या कि स्वच्छ जलके हजारों फोहारे एक साथ छूट पड़े हैं? अथवा वायुके झोंकेसे फैले हुए जलकणों द्वारा समस्त भुवनमण्डलको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुतूहलाद्धरातलमवतीर्णा' इति । आलोकानुसारप्रहितचक्षुरद्राक्षीदन-ल्पकन्यकाकदम्बपरिवृतां ध्रियमाणधवलातपत्रामुद्धूयमानचामरद्वयां कादम्बरीं प्रतीहार्या वामपाणिना वेत्रलतागर्भेणार्द्रवस्त्रशकलावच्छन्नमुखं चन्दनानुलेपनसनाथं नालिकेरसमुद्गकमुद्वहन्त्या दक्षिणकरेण दत्तहस्ता-वलम्बां केयूरकेण च निःश्वासहार्ये निर्मोकशुचिनी धौते कल्पलतादुकूले दधता निवेद्यमानमार्गाम्, मालतीकुसुमदामाधिष्ठितकरतलया च तमा-लिकयानुगम्यमानामागच्छन्तीं मदलेखाम्, तस्याश्च समीपे तरलिकाम्, तया च सितांशुकोपच्छदे पटलके गृहीतं धवलताकारणमिव क्षीरोदस्य सहभुवमिव चन्द्रमसो मृणालदण्डमिव नारायणनाभिपुण्डरीकस्य मन्द-रक्षोभविक्षिप्तमिवामृतफेनपिण्डनिकरं वासुकिनिर्मोकमिव मन्थनश्रमो-ज्झितं हासमिव कुलगृहवियोगगलितं मन्दरमथनविखण्डिताशेषशशि-कलाखण्डसंचयमिव संहृतं प्रतिमागततारागणमिव जलनिधिजलादु-

---

उज्ज्वल करती हुई आकाशगंगा मन्दाकिनी धरतीपर उतर आयी है !' कुतू-हलवश चन्द्रापीड़ उधर ही देखने लगा, जिधरसे वह प्रकाश आ रहा था। ज्यादा गौरसे देखनेपर उसे मदलेखा आती दिखायी दी। उसके साथ बहु-तेरी लड़कियाँ थीं। उसके सिरपर धवल छत्र तना था और दोनों बगल दो चमर झले जा रहे थे। कादम्बरीकी प्रतीहारी बायें हाथमें बेंतकी छड़ी तथा गीले कपड़ेके टुकड़ेसे आच्छादित चन्दनके लेपसे भरी नरियरी लिये हुए थी और दाहिने हाथसे मदलेखाको सहारा दे रही थी। फूँक लगनेसे उड़ जाने-वाले तथा साँपकी केंचुली सरीखे स्वच्छ एवं साफ धुले हुए वस्त्रका जोड़ा पहने केयूरक उसे रास्ता बताता चल रहा था। मालतीके पुष्पोंकी माला हथेलीमें लिये तमालिका उसके पीछे-पीछे चल रही थी। उसके हाथमें श्वेत वस्त्रसे ढँकी टोकरी थी, जिसमें एक अत्यन्त जगमगाता हार रक्खा हुआ था। वह हार भगवान् नारायणके नाभिकमलसे उत्पन्न कमलके मृणालकी भाँति, मन्दराचलके क्षोभसे उत्पन्न अमृतके फेनपिण्डके समान, मंथनश्रमके कारण वासुकी नाग द्वारा छोड़ी गयी केंचुलकी तरह, अपने कुल और घरके बिछोहसे त्यागे गये लक्ष्मीके हास्यकी नाईं, मन्दराचलके मंथनसे कुचली हुई चन्द्रकला-ओंके टुकड़ोंकी राशिके समान; समुद्रके जलसे छाने गये प्रतिबिम्बित नक्षत्रोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्धूतदिग्गजकरसीकरासारमिव पुञ्जीभूतं नक्षत्रमालाभरणमिव मदनद्विपस्य शरच्छकलैरिव कल्पितं कादम्बरीरूपवशीकृतमुनिजनहृदयैरिव निर्मितं गुरुमिव सर्वरत्नानां यशोराशिमिवैकत्र घटितं सर्वसागराणां प्रतिपक्षमिव चन्द्रमसो जीवितमिव ज्योत्स्निकाया लक्ष्मीहृदयमिव नलिनीदलगलज्जलबिन्दुविलासतरलमुत्कण्ठनमिव मृणालवलयधवलकरं शरच्छशिनमिव घनमुक्तांशुनिवहधवलितदिङ्मुखं मन्दाकिनीमिव सुरयुवतिकुचपरिमलवाहितं प्रभावर्षिणमतितारं हारम्।

दृष्ट्वा चायमस्य चन्द्रापीडश्चन्द्रातपद्युतिमुषो धवलिम्नः कारणमिति मनसा निश्चित्य दूरादेव प्रत्युत्थानादिना समुचितोपचारक्रमेण मदलेखामापतन्तीं जग्राह। सा तु तस्मिन्नेव मरकतग्रावणि मुहूर्तमुपविश्य

भाँति, दिग्गजोंकी सूँड़से उड़े जलकणोंकी राशि सदृश, कामरूपी गजराजके नक्षत्रमाला नामक आभूषणकी भाँति, जैसे शरत्कालके शुभ्र बादलोंके टुकड़ोंसे बना अथवा कादम्बरीके रूपपर मोहित मुनियोंके हृदयसे रचित, सभी रत्नोंका गुरु, जैसे समस्त सागरोंका एकत्रित किया हुआ यशसमूह, चन्द्रमाका प्रतिद्वन्दी और चन्द्रमाकी चाँदनीका तो वह जैसे प्राण ही था। जैसे लक्ष्मीका हृदय कमलपत्रपर पड़े जलबिन्दुके सदृश चंचल रहता है, उसी प्रकार उस हारके मध्यमें विद्यमान मणि उसी जलबिन्दुकी नाईं चंचल थी। जैसे कामातुर मनुष्यके हाथ मृणालनिर्मित कंकणसे उजले रहते हैं, वैसे ही उस हारकी दीप्ति मृणालवलयकी तरह उजली थी। जैसे शरत्कालका चन्द्रमा मेघमुक्त किरणों द्वारा प्रकाश फैलाकर सब दिशाओंको उज्ज्वल कर देता है, वैसे ही वह हार घने गुँथे मोतियोंकी प्रभासे सब दिशाओंको उज्ज्वल कर रहा था। जैसे मन्दाकिनीका बहाव देवाङ्गनाओंके कुचोंकी सुगन्धि लिये रहता है, वैसे ही वह हार भी देवाङ्गनाओंके कुचोंके लेपकी भाँति सुगन्धिसे युक्त था।

उस हारको देखकर चन्द्रापीडको ज्ञात हो गया कि 'चन्द्रमाकी चन्द्रिकाको भी परास्त करनेवाली धवलताका कारण यह हार ही है।' ऐसा निश्चय करके दूरसे ही चन्द्रापीडने प्रत्युत्थान आदि समुचित उपाचारोंकी विधिसे वहाँ ही आती हुई मदलेखाका स्वागत किया। वहाँ पहुँचकर मदलेखा तनिक देर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वयमुत्थाय तेन चन्दनाङ्गरागेणानुलिप्य ते च दुकूले परिधाप्य तैश्च मालतीकुसुमदामभिरारचितशेखरं कृत्वा तं हारमादाय चन्द्रापीडमुवाच—'कुमार, तवेयमपहसिताहंकारकान्ता पेशलता प्रीतिपरवशं जनं कमिव न कारयति। प्रश्रय एव ते ददात्यवकाशमेवंविधानाम्। अनया चाकृत्या कस्यासि न जीवितस्वामी। अनेन चाकारणाविष्कृतवात्सल्येन चरितेन कस्य न बन्धुत्वमध्यारोपयसि। एषा च ते प्रकृतिमधुरा व्यवहृतिः कस्य न वयस्यतामुत्पादयति। कस्य वा न समाश्वासयन्त्यमी स्वभावसुकुमारवृत्तयो भवद्गुणाः। त्वन्मूर्तिरेवात्रोपालम्भमर्हति, या प्रथमदर्शन एव विश्रम्भमुपजनयति। इतरथा हि त्वद्विधे सकलभुवनप्रथितमहिम्नि प्रयुज्यमानं सर्वमेवानुचितमिवाभाति। तथा हि। संभाषणमप्यधःकरणमिवापतति। आदरोऽपि प्रभुताभिमानमिवानुमापयति। स्तुतिरप्यात्मोत्सेकमिव सूचयति। उपचारोऽपि चपलतामिव

उसी मरकतके शिलातलपर बैठी। इसके बाद उसने उठकर अपने हाथों वह अङ्गराग चंद्रापीडके शरीर भरमें लगाकर दो वस्त्र पहनाये और मालतीके फूलोंका मुकुट बनाकर सिरपर पहना दिया। तदनन्तर वह हार हाथमें लेकर बोली—'राजपुत्र! आपका यह अहंकारहीन सौन्दर्य किस प्राणीको प्रीतिपरवश नहीं कर देता? आपका विनयभाव ही प्रेमियोंको आपके सम्मुख आनेका साहस प्रदान करता है। अपनी इस मनोहर आकृतिसे आप किसके स्वामी नहीं हैं? यह अकारण प्रकटित स्नेहमय व्यवहार देखकर कौन आपका बन्धु बननेको लालायित न हो उठेगा? स्वभावतः मधुर कार्यकलाप देखकर कौन आपका मित्र न बन जायगा? स्वभावसे ही कोमल व्यवहारमय आपके गुणगण किसको आश्वासन नहीं देते? सच पूछा जाय तो आपकी मुखाकृति ही ऐसी है कि प्रथम दर्शनमें ही विश्वास उत्पन्न करके दर्शकको ढीठ बना देती है। नहीं तो जिसकी महिमा त्रिभुवनमें विख्यात हो, ऐसे आप सरीखे पुरुषोंके साथ मनमाना बर्ताव करनेमें अनौचित्यका बोध होता है और संभाषण करनेमें भी जैसे हीनता प्रकट होती है। आदरमें भी जैसे प्रभुत्वकी गुरुता झलकती है। स्तुतिमें भी जैसे स्वाभिमान दीखता है। उपचार भी जैसे चपलता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रकाशयति। प्रीतिरप्यनात्मज्ञतामिव ज्ञापयति। विज्ञापनापि प्रागल्भ्यमिव जायते। सेवापि चापलमिव दृश्यते। दानमपि परिभव इव भवति। अपि च स्वयं गृहीतहृदयाय किं दीयते। जीवितेश्वराय किं प्रतिपाद्यते। प्रथमकृतागमनमहोपकारस्य का ते प्रत्युपक्रिया। दर्शनदत्तजीवितफलस्य सफलमागमनं केन ते क्रियते। प्रणयितां चानेन व्यपदेशेन दर्शयति कादम्बरी, न विभवम्। अप्रतिपाद्या हि परस्वता सज्जनविभवानाम्। आस्तां तावद्विभवः, भवादृशस्य दास्यमप्यङ्गीकुर्वाणा नाकार्यकारिणीति नियुज्यते। दत्त्वात्मानमपि वञ्चिता न भवति। जीवितमप्यर्पयित्वा न पश्चात्तप्यते। प्रणयिजनप्रत्याख्यानपराङ्मुखी च दाक्षिण्यपरवती महत्ता सताम्। न च तादृशी भवति याचमानानां यादृशी ददतां लज्जा। यत्तु सत्यममुना व्यतिकरेण कृतापराधमिव त्वय्यात्मानमवगच्छति कादम्बरी। तदयममृतमथनसमुद्भूतानां सर्वरत्ना-

---

दिखाता है। प्रीति भी जैसे आत्मज्ञानका अभाव सूचित करती है। विज्ञापना भी प्रगल्भताका रूप ले लेती है। सेवामें भी चञ्चलता दीखती है और दानसे जैसे ऐश्वर्यका अपमान होता है। और फिर जिसने हृदय ही ले लिया, उसको और क्या दिया जा सकता है ? जो जीवनका स्वामी बन चुका, उसे और क्या दिया जाय ? आपने यहाँ पधारकर पहले ही जो महान् उपकार किया है, उसका बदला कैसे चुकाया जा सकता है ? आपने तो दर्शन देकर हमारा जीवन सफल कर दिया। अब हम आपका आगमन कैसे सफल करें ? अतएव मेरी सखी कादम्बरी इस तुच्छ उपहारके बहाने अपना प्रेम प्रकट कर रही है। वह अपने वैभवका प्रदर्शन नहीं करती। सज्जनोंका वैभव तो सदा दूसरोंके लिए ही रहता है। अतएव उनका दान असंभव है। अच्छा, अब वैभवकी बात छोड़ दें। आप जैसे सज्जनकी दासी बनकर रहनेमें भी कोई हर्ज नहीं है। यदि अपनी आत्मा भी अर्पण कर दे, तो भी वह ठगी हुई नहीं कहलायेगी। जीवन अर्पण करके भी उसको पश्चात्ताप नहीं होगा। क्योंकि सज्जनोंकी महत्ता प्रेमीजनोंको त्यागनेसे विमुख और सदा उदास रहती है। हमें तो आपको कुछ देनेमें जितनी लाज लगती है, उतनी माँगनेमें भी न लगेगी। अतएव ऐसा करके कादम्बरी वस्तुतः अपने आपको अपराधिनी समझ रही है। मैं जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नामेकशेष इति शेषनामा हारोऽमुनैव बहुमतो भगवताम्भसांपत्या गृहमुपागताय प्रचेतसे दत्तः। पाशभृतापि गन्धर्वराजाय। गन्धर्वराजेनापि कादम्बर्यै तयापि त्वद्वपुरस्यानुरूपमाभरणस्येति विभावयन्त्या नभःस्थलमेवोचितं सुधास्तुतो धाम्नो न धरेत्यवधार्यानुप्रेषितः। यद्यपि गुणगणाभरणभूपिताङ्गयष्टयो भवादृशाः क्लेशहेतुमितरजनबहुमतमाभरणभारमंगेषु नारोपयन्ति, तथापि कादम्बरीप्रीतिरत्र कारणम्। किं न कृतमुरसि शिलाशकलं कौस्तुभाभिधानं लक्ष्म्याः सहजमिति बहुमानमाविष्कुर्वता भगवता शार्ङ्गपाणिना। न च नारायणोऽत्रभवन्तमतिरिच्यते। नापि कौस्तुकभमणिरणुनापि गुणलवेन शेषमतिशेते। न चापि कादम्बरीमाकारानुकृतिकलयाप्यल्पीयस्या लक्ष्मीरनुगन्तुमलम्। अतोऽर्हतीयमियं बहुमानं त्वत्तः। न चाभूमिरेषा प्रीतिप्रसरस्य। नियतं च

लायी हूँ। यह हार अमृतमन्थन करते समय निकले हुए सब रत्नोंके बाद निकला है। इसीलिए इसका नाम 'शेष' है। यह भगवान् समुद्रदेवताको बहुत प्रिय है। इसी कारण उन्होंने एक बार उनके घर गये हुए प्रचेता (वरुण) को इसे दे दिया। वरुणने यह हार गन्धर्वराज चित्ररथको दिया और गन्धर्वराजने कादम्बरीको दे डाला। अब उन्होंने यह आभूषण आपकी आकृतिके योग्य समझकर आपके पास भेजा है। क्योंकि उनका यह विचार है कि चन्द्रमाके लिए उचित स्थान आकाश ही हो सकता है—धरती नहीं। यद्यपि आपसरीखे सज्जन पुरुष गुणोंके आभूषणसे ही अपने शरीरको अलंकृत मानते हैं। जनसाधारणकी दृष्टिमें बहुत आदरणीय, किंतु वास्तवमें दुखदायी आभूषणोंको वे अपने तनपर नहीं धारण करते। तथापि इस उपहारके अर्पणमें कादम्बरीका प्रेम ही प्रमुख कारण है। क्या भगवान् नारायणने लक्ष्मीका सहोदर समझकर बड़े आदरपूर्वक कौस्तुभ नामके एक पत्थरके टुकड़ेको अपने वक्षस्थलपर नहीं धारण किया था? वे नारायण आपसे बढ़कर कदापि नहीं हैं। वह कौस्तुभ गुणमें इस शेषके बराबर नहीं हो सकता और लक्ष्मी भी आकारकी अनुकृतिमें कादम्बरीकी तनिक भी बराबरी नहीं कर सकतीं। अतएव वे आपसे प्रचुर सम्मान पानेकी अधिकारिणी हैं। उनसे प्रीति करना आपके लिए अनुचित न होगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भवता लग्नप्रणया महाश्वेतोपालम्भसहस्रैः स्वात्मानमुत्स्रक्ष्यति। अतएव महाश्वेता तरलिकामपीमं हारमादाय त्वत्सकाशं प्रेषितवती। तथापि कुमारस्य संदिष्टमेव—'न खलु महाभागेन मनसापि कार्यः कादम्बर्याः प्रथमप्रणयप्रसरभङ्गः' इत्युक्त्वा च ताराचक्रमिव चामीकराचलस्य तटे तं तस्य वक्षःस्थले बबन्ध।

चन्द्रापीडस्तु विस्मयमानः प्रत्यवादीत्—'मदलेखे, किमुच्यते। निपुणासि। जानासि ग्राहयितुम्। उत्तरावकाशमपहरन्त्या कृतं वचसि कौशलम्। अयि मुग्धे, के वयमात्मनः, के वा वयं ग्रहणाग्रहणस्य वा गता खल्वियमस्तं कथा। सौजन्यशालिनीभिर्भवतीभिरुपकरणीकृतोऽयं जनो यथेष्टमिष्टेष्वनिष्टेषु वा व्यापारेषु विनियुज्यताम्। अतिदक्षिणायाः खलु देव्याः कादम्बर्या निर्दाक्षिण्या गुणा न कञ्चिन्न दासीकुर्वन्ति' इत्युक्त्वा च कादम्बरीसंबद्धाभिरेव कथाभिः सुचिरं स्थित्वा विसर्ज-

---

यह निश्चित समझिए कि यदि आपने उनका प्रेम भङ्ग किया तो वे महाश्वेताको हजारों उलाहनोंसे खिन्न करके अपने प्राण त्याग देंगी। इसी कारण महाश्वेताने भी तरलिकाके हाथों यह हार भेजते हुए कहलाया है—'महाभाग! आप मनसे भी कादम्बरीके इस प्रथम प्रेमोपहारको त्यागनेका विचार न करिएगा।' ऐसा कहकर मदलेखाने सुमेरु पर्वतके तटपर तारिकाओंके समान सुन्दर वह अपूर्व हार चन्द्रापीडके वक्षःस्थलपर बाँध दिया।

चन्द्रापीडने विस्मित होकर कहा—'मदलेखे! क्या कहूँ, तुम बड़ी चतुर हो। तुम्हें उपहार स्वीकार करा लेनेकी कला आती है। मुझे कुछ भी उत्तर देनेका मौका न देकर तुमने अपना वाक्कौशल प्रदर्शित कर दिया। हे मुग्धे! मैं स्वतः कौन हूँ! कुछ लेने या न लेनेवाला मैं होता ही कौन हूँ? अच्छा, अब यह बात यहीं समाप्त कर दो। सच तो यह है कि तुम सभी सौजन्यशालिनी कुमारिकाओंने अपने सद्व्यवहारसे मुझे अपने अधीन कर लिया है। अतएव अब तुम लोग मुझे इष्ट या अनिष्ट सभी कामोंमें नियुक्त कर सकती हो। अतिशय उदार कादम्बरीके गुणगण किस अनुदार व्यक्तिको भी अपना दास नहीं बना लेते!' ऐसा कहकर चंद्रापीडने बड़ी देरतक कादम्बरीके ही संबंधमें तरह-तरहकी बातें कीं। इसके बाद मदलेखाको विदा कर दिया। वह थोड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यांबभूव मदलेखाम्। अनतिदूरं गतायां च तस्यां क्रीडापर्वतगतमुदयगिरिगतमिव चन्द्रमसं चन्दनदुकूलहारधवलं चन्द्रापीडं द्रष्टुं समुत्सारितवेत्रच्छत्रचामरचिह्ना निषिद्धाशेषपरिजना तमालिकाद्वितीया चित्ररथसुता पुनरपि तदेव सौधशिखरमारुरोह। तत्रस्था च पुनस्तथैव विविधविलासतरङ्गितैर्विकारविलोकितैर्जहारास्य मनः। तथाहि। मुहुर्मुहुर्नितम्बबिम्बन्यस्तवामहस्तपल्लवा प्रावृतांशुकानुसारप्रसारितदक्षिणकरा निश्चलतारका लिखितेव, मुहुर्जृम्भिकारम्भदत्तोत्तानकरतलतया तद्गोत्रस्खलनभिया निरुद्धवदनेव, मुहुरंशुकपल्लवताडितनिःश्वासामोदलुब्धमधुकरमुखरतया प्रस्तुताह्वानेव, मुहुरनिलगलितांशुकसंभ्रमद्विगुणीकृतभुजयुगलप्रावृतपयोधरतया दत्तालिङ्गनसंज्ञेव, मुहुः केशपाशाकृष्टकुसुमपूरिताञ्जलिसमाघ्राणलीलया कृतनमस्कारेव, मुहुरुभयतर्जनीभ्रमितमुक्ताप्रालम्बतया निवेदितहृदयोत्कलिकोद्गमेव, मुहुरुपहारकुसुमस्ख-

---

दूर गयी होगी कि इतनेमें उदयाचलकी भाँति क्रीडापर्वतपर विद्यमान चंद्रमा सदृश चन्दन, वस्त्र तथा हारसे शुभ्रवर्ण चन्द्रापीडको देखनेके लिए कादम्बरी फिर अपने प्रासादपर चढ़ी। इस समय उसने वेत्र-छत्र-चमर आदि सभी राजसी उपकरणों एवं सभी परिजनोंको त्यागकर केवल तमालिकाको साथ ले रक्खा था। वहाँ खड़ी होकर वह फिर उसी प्रकार विविध हावभावभरे कटाक्षोंसे निहारती हुई उसका मन मोहने लगी। जैसे—वह बार-बार अपना बायाँ हाथ नितम्बपर रखती, पहने हुए वस्त्रके छोर तक नीचे दाहिना हाथ लटकाती, गढ़ी हुई गुड़ियाकी तरह निश्चल खड़ी रहकर एकटक उसे निहारती और बार-बार आनेवाली जँभाईको रोकनेके लिए हथेली उतान करके मुखपर रखती थी। उस समय ऐसा लगता था कि जैसे चंद्रापीडका नाम ले लेनेके डरसे वह अपना मुँह बन्द कर रही थी। निःश्वाससुगन्धिके लोभसे मँडराते हुए भौंरोंको वह अपने वस्त्रके छोरसे झटकारकर उनकी गुञ्जारके बहाने जैसे चन्द्रापीडको पास बुला रही थी। बार-बार पवन द्वारा उड़ाये हुए छातीके वस्त्रको घबराहटके साथ सम्हालती और दोनों हाथ मोड़ तथा स्तनोंको ढाँककर जैसे आलिङ्गनका संकेत करती थी। बार-बार केशपाशसे फूल निकाल तथा अंजलीमें रखकर ऐसे हाव-भाव करके सूँघती थी कि मानों इसी बहाने उसको नमस्कार करती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लनविधुतकरतलतया कथितकुसुमायुधशरप्रहारवेदनेव, मुहुर्गलितरसनानिगडपतितचरणतया संयम्यार्पितेव मन्मथेन, मुहुश्चलितोरुविधृतशिथिलदुकूला, क्षितितलदोलायमानांशुकैकदेशाच्छादितकुचा, चकितपरिवर्तनत्रुट्यत्त्रिवलीलता, समस्तचिकुरकलापसंकलनाकुलकरतला, कटाक्षक्षेपधवलीकृतकर्णोत्पलं विलक्ष्यमाणस्मितसुधाधूलिधूसरितकपोलं साचीकृत्य वदनमनेकरसभङ्गिभंगुरं विलोकयन्ती, तावदवतस्थे यावदुपसंहृतालोको लोहितो दिवसो बभूव।

अथ हृदयस्थितकमलिनीरागेणेव रज्यमाने राजीवजीवितेश्वरे सकललोकचक्रवालचक्रवर्तिनि भगवति पूष्णि क्रमेण च दिनपरिलम्बनरोषरक्ताभिः कामिनीदृष्टिभिरिव संक्रामितशोणिम्नि व्योम्नि, संहृत-

---

हो बार-बार तर्जनी उँगलीमें मोतीका हार फँसाकर वह इस ढंगसे घुमाती थी कि जैसे अपनी हार्दिक संगमाभिलाषा प्रकट कर रही हो। बार-बार श्रृंगारके फूल खिसक जानेसे उसके हाथ ऐसे काँप जाते थे कि जैसे वह कामबाणके प्रहारकी वेदना प्रदर्शित कर रही हो। बार बार करधनीकी लड़ी खिसककर पैरोंतक आ जाती थी, जिसे देखकर ऐसा लगता था कि जैसे कामदेव पैर बाँधकर उसे किसीको अर्पित कर रहा हो। बार-बार ऊरुकम्प होनेके कारण उसके वस्त्र ढीले होकर खिसक जाते थे और भूमिपर लोटते हुए वस्त्रके एक छोरसे ही उसके स्तन ढँके रहते थे। बार-बार चक्राकर पीछेकी ओर मुड़नेके कारण उसके उदरकी त्रिवलीलता भग्न हो जाती थी। बार-बार उसके हाथ कन्धोंपर लटकते बालोंको एकत्र करके बाँधनेमें फँस जाया करते थे। बार-बार कटाक्ष फेंकनेसे उसका कर्णोत्पल धवलवर्ण हो जाता था। लज्जापूर्ण मुसकानरूपी अमृतकी रजसे उसका कपोल धुँधला हो गया था। इस प्रकार वह मुख मोड़-मोड़कर अनेक रसमयी भावभङ्गिमा दरसाती हुई तबतक खड़ी रही, जब तक कि दिनका उजाला समाप्त होनेकी वेला नहीं आ गयी।

जब हृदयमें विराजमान कमलिनीके राग (अर्थात् लाल रंग अथवा अनुराग) से समस्त भुवनमण्डलके चक्रवर्ती तथा कमलोंके जीवनेश्वर सूर्य भगवान् लाल हो चले। जब दिवस बड़ा लम्बा कर देनेसे कुपित कामिनियोंकी लाल-लाल आँखोंकी दीप्तिसे ही जैसे गगनमण्डल लाल होने लगा। जब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शोचिषि जाते जरठहारीतहरितवाजिनि, रविविरहमोलितसरोजसंहतिषु, हरितायमानेषु कमलवनेषु, श्वेतायमानेषु कुमुदखण्डेषु, लोहितायमानेषु दिङ्मुखेषु, नीलायमाने शर्वरीमुखे, शनैःशनैश्च पुनर्दिनश्रीसमागमाशाभिरिवानुरागिणीभिः सहैव दीधितिभिरदर्शनतामुपगते भगवति गभस्तिमालिनि, तत्कालविजृम्भितेन च कादम्बरीहृदयरागसागरेणेवापूरिते संध्यारागेण जीवलोके, कुसुमायुधानलदह्यमानहृदयसहस्रधूम इव जनितमानिनीनयनवारिणि विस्तीर्यमाणे तरुणतमालत्विषि तिमिरे, दिक्करिकरावकीर्णसीकरासार इव श्वेतायमानतारागणे गगने, जातायां चादर्शनक्षमायां वेलायां सौधशिखरादवततार कादम्बरी क्रीडापर्वतकनितम्बाच्च चन्द्रापीडः। ततोऽचिरादिव गृहीतपादः प्रसाद्यमान इव कुमुदिनीभिः कलुषमुखीः कुपिता इव प्रसादयन्नाशाः प्रबोधाशङ्कयेव परिहरन्सुप्ताः कमलिनीः, लाञ्छनच्छलेन निशामिव हृदयेन समुद्वहन्,

---

बूढ़े हारीत पक्षीकी भाँति हरे घोड़ोंवाले सूर्यनारायण अपना प्रकाश धीरे-धीरे समेटने लगे। जब सूर्यके वियोगसे कमलवन संपुटित होकर हरा दीखने लगा। जब कुमुदवन श्वेत होने लगे। जब सब दिशाओंके मुख लाल हो उठे। जब प्रदोषकाल काला पड़ने लगा। जब दिवसश्रीके साथ पुनः समागम होनेकी आशावश अनुरागमयी किरणोंको साथ लिये हुए भगवान् भास्कर अलक्षित हो गये। जब कादम्बरीके नवोदित हृदयरागरस-सागरकी नाईं सन्ध्याके रंगसे सारा संसार रँग गया। जब मदनाग्निसे जलते हुए सहस्रों चकवोंके हृदयसे निकलनेवाले धुएँकी भाँति मानिनियोंके नेत्रोंसे आँसूकी धारा बहाता हुआ तरुण तमालवृक्षकी नाईं काला-काला अन्धकार सर्वत्र फैलने लग गया। जब दिग्गजोंकी सूँड़से छिड़के जलकण सरीखे नक्षत्रमण्डलसे आकाश उज्ज्वल दिखायी देने लगा और जब अन्धकारके कारण कुछ भी देखना असंभव हो गया, तब कादम्बरी अपने प्रासादसे नीचे उतरी और उधर चन्द्रापीड भी क्रीडापर्वतसे उतर आया। उसके थोड़ी ही देर बाद जैसे कुमुदिनियों द्वारा पैर पकड़कर प्रसन्न किये जानेपर नेत्रोंको आनन्द देनेवाले भगवान् चंद्रदेव उदित हुए। उस समय वे मानो काले मुखवाली समस्त कुपित दिशाओंको प्रसन्न कर रहे थे। जाग जानेके डरसे वे सोयी हुई कमलिनियोंको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोहिणीचरणताडनलग्नमलक्तकरसमिवोदयरागं दधानः, तिमिरनीलाम्बरां दिवमभिसारिकामिवोपसर्पन्, अतिवल्लभतया विकिरन्निव सौभाग्यमुद्गाद्भगवानीक्षणोत्सवः सुधासूतिः। उच्छ्रिते च कुसुमायुधाधिराज्यैकातपत्रे कुमुदिनीवधूवरे विभावरीविलासदन्तपत्रे श्वेतभानौ, धवलितदिशि दन्तादिवोत्कीर्णे भुवने चन्द्रापीडश्चन्द्रातपनिरन्तरतयैव कुमुद इव गृहकुमुदिन्याः कल्लोलधौतसुधाधवलसोपाने तनुतरङ्गतालवृन्तवातवाहिनि सुप्तहंसमिथुने विरहवाचालचक्रवाकयुगले तीरे कुमुददलावलीभिः पर्यन्तलिखितपत्रलतमवदातसिन्दुवारदामोपहारं हरिचन्दनरसैः प्रक्षालितं कादम्बरीपरिजनोपदिष्टं मुक्ताशिलापट्टं चन्द्रशीतलमधिशिश्ये। तत्रस्थस्य चास्यागत्याकथयत्केयूरकः 'देवी कादम्बरी देवं द्रष्टुमागता' इति।

छोड़ते जा रहे थे। अपनी छातीमें विद्यमान लांछनके बहाने जैसे वे रात्रिको अपने हृदयमें समेटे हुए थे। देवी रोहिणीके चरणप्रहारसे लगे हुए महावरकी भाँति उदयकालीन लालिमाको वे धारण किये हुए थे। अन्धकाररूपी नील वस्त्र धारण करनेवाली अभिसारिकाकी भाँति दीखते हुए वे आकाशमें चढ़े जा रहे थे। उसपर अत्यधिक प्रेम होनेके कारण जैसे वे अपना सारा सौभाग्य विखेरे दे रहे थे। इस प्रकार जब कामदेवके साम्राज्यके एकमात्र छत्र, कुमदिनीरूपिणी वधूके पति और निशासुन्दरीके विलास-दन्तपत्रस्वरूप चन्द्रदेव समस्त दिशाओंको उज्ज्वल करते हुए उदित हो गये। जब सारा विश्व हाथीके दाँतपर उत्कीर्ण (खुदा हुआ) दीखने लगा, तब चन्द्रापीड निरन्तर चाँदनी पड़नेके कारण कुमुदमयी दीखनेवाली गृहकुमुदिनीके तटपर कादम्बरीके परिजनों द्वारा बनाये हुए एक चन्द्रमा सदृश शीतल मुक्ताशिलापट्टपर लेटा। उस कुमुदिनी (पोखरी) की सुधाधवल (चूने जैसी सफेद) सीढ़ियाँ उस पोखरीकी ऊँची-ऊँची तरंगोंसे धुलती रहती थीं। नन्हीं-नन्हीं तरंगरूपी पंखोंकी हवा चल रही थी। आस-पास हंसोंके जोड़े सोये हुए थे। कुमुददलोंकी कतारें जैसे उसके किनारे-किनारे दन्तपत्रकी लतायें अंकित कर रही थीं। बिछुड़े चक्रवाकके जोड़े करुण बोली बोल रहे थे। श्वेत सिंधुवार पुष्पोंके हार लटके थे। वह शिलापट्ट हरिचन्दनके रससे धुला हुआ था। वह अभी लेटा ही था कि इतनेमें केयूरक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ चन्द्रापीडःससंभ्रममुत्थायागच्छन्तीम्, अल्पसखीजनपरिवृताम्, अपनीताशेषराजचिह्नाम्, इतरामिवैकावलीमात्राभरणाम्, अच्छाच्छेन चन्दनरसेन धवलीकृततनुलताम्, एककर्णावसक्तदन्तपत्राम्, इन्दुकलाकलिकाकोमलं कर्णपूरीकृतं कुमुददलं दधानाम्, ज्योत्स्नाशुचिनी कल्पद्रुमदुकूले बिभ्रतीम्, तत्कालरमणीयेन वेषेण साक्षादिव चन्द्रोदयदेवताम्, मदलेखया दत्तहस्तावलम्बां कादम्बरीमपश्यत्। आगत्य च सा प्रतिपेशलतां दर्शयन्ती प्राकृते परिजनोचिते भूतले समुपाविशत्। चन्द्रापीडोऽपि 'कुमार, अध्यास्यतां शिलातलमेव' इत्यसकृदनुबध्यमानोऽपि मदलेखया भूमिमेवाभजत। सर्वासु चासीनासु तासु मुहूर्तमिव स्थित्वा वक्तुमुपचक्रमे चन्द्रापीडः—'देवि, दृष्टिमात्रप्रीते दासजने संभाषणादिकस्यापि प्रसादस्य नास्त्यवकाशः, किमुतैतावतोऽनुग्रहस्य। न खलु चिन्तयन्नपि निपुणं तमात्मनो गुणलवमव-

---

ने आकर खबर दी कि 'देवी कादम्बरी आपसे मिलनेके लिए आ रही हैं।'

यह सुनते ही चन्द्रापीड हड़बड़ाकर उठ बैठा। तभी उसने देखा कि थोड़ीसी सखियोंके साथ कादम्बरी मदलेखाके हाथका सहारा लिये चली आ रही है। उसने सभी राजसी ठाट त्याग दिये थे। उस समय वह साधारण स्त्रीके समान केवल एक लरकी माला पहने थी। श्वेतातिश्वेत चन्दनसे चर्चित करके उसने अपना शरीर उज्ज्वल कर लिया था। चन्द्रकलाकी कली सदृश कोमल कुमुदपत्रका कर्णपूर उसके कानोंमें शोभित था और चन्द्रमाकी चाँदनी जैसे शुभ्र केवल दो वस्त्र उसके तनपर थे। वह वेश उस समय इतना सुन्दर लगता था कि जिससे वह साक्षात् चन्द्रोदयकी देवता सरीखी दीख रही थी। वहाँ पहुँचकर कादम्बरी प्रेमका सौंदर्य बिखेरती हुई परिजनोंके बैठने योग्य भूमिमें एक साधारण स्त्रीके समान बैठ गयी। तब चन्द्रापीड भी शिलापट्टसे उतर आया। यद्यपि मदलेखाने अनुरोध करते हुए कहा था—'युवराज! आप शिलातलपर ही बैठे रहें।' फिर भी वह भूमिपर ही बैठा। जब सब कन्यकायें बैठ गयीं, तब तनिक देर ठहरकर चन्द्रापीडने कहा—'देवि! केवल दृष्टिपातसे सन्तुष्ट हो जानेवाले हम जैसे सेवकोंको तो संभाषण आदिका अवसर ही न मिलना चाहिए। तब फिर इतने बड़े अनुग्रहकी तो बात ही न्यारी है। भली भाँति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोकयामि, यस्यायमनुरूपोऽनुग्रहातिरेकः। अतिसरला तवेयमपगताभिमानमधुरा च सुजनता यदभिनवसेवकजनेऽप्येवमनुरुध्यते। प्रायेण मामुपचारहार्यमदक्षिणं देवी मन्यते। धन्यः खलु परिजनः, ते यस्योपरि नियन्त्रणा स्यात्। आज्ञासंविभागकरणोचिते भृत्यजने क इवादरः। परोपकारोपकरणं शरीरम्। तृणलवलघु च जीवितम्। अपत्रपे त्वत्प्रतिपत्तिभिरुपायनीकर्तुमागतायास्ते वयमेते शरीरमिदमेतज्जीवितमेतानीन्द्रियाणि एतेषामन्यतरदारोपय परिग्रहेण गरीयस्त्वम्' इति। अथैवंवादिनोऽस्य वचनमाक्षिप्य मदलेखा सस्मितमवादीत्—'कुमार, भवतु। अतियन्त्रणया खिद्यते खलु सखी कादम्बरी। किमर्थं चैवमुच्यते। सर्वमिदमन्तरेणापि वचनमनया परिगृहीतम्, किं पुनरमुनोपचारफल्गुना वचसा संदेहदोलामारोप्यते' इति स्थित्वा च कंचित्कालं

विचार करनेपर भी मैं अपनेमें लवमात्र कोई ऐसा गुण नहीं देखता कि जो इस कृपाके योग्य हो। अतिशय सरल एवं अभिमानशून्य आपकी मधुर सुजनता ही हम जैसे नवागंतुक सेवकोंपर भी इतनी असाधारण कृपा बरसाती है। मेरा जहाँ तक ख्याल है, आप मुझे एक अनुदार और असभ्य मनुष्य समझ रही हैं और अपने आदरकी कीमतपर खरीद लेना चाहती हैं। इसे भी मैं अपना अहोभाग्य समझता हूँ। वह सेवक धन्य है कि जिसपर आपका अधिकार हो। ऐसी स्थितिमें आज्ञा पालन करने योग्य मुझ जैसे सेवकका इतना आदर क्यों हो रहा है? यह शरीर तो परोपकारके लिए ही है और फिर जीवन अर्पण करनेमें भी मैं लज्जाका अनुभव करता हूँ। तथापि यह मैं बैठा हूँ, यह मेरा शरीर है, यह जीवन है और ये समस्त इन्द्रियाँ समक्ष उपस्थित हैं। इनमेंसे आपको जो रुचे, उसे स्वीकार करके मुझ जैसे सेवकका मान बढ़ाइए।' जब चंद्रापीड इस प्रकार कह रहा था, तभी तनिक हँसती हुई मदलेखाने बीचमें ही बात काटकर कहा—'युवराज! बस, अब बहुत अधिक प्रशंसा न करिए। ऐसी बातोंसे मेरी सखी कादम्बरीको कष्ट होता है। आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? आपके कहे बिना ही उन्होंने ये सभी बातें जान ली हैं। तब ऐसी अनौपचारिक बातोंसे आप इन्हें संशयाकुल क्यों कर रहे हैं?' यों कह तथा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृतप्रस्तावा 'कथं राजा तारापीडः, कथं देवी विलासवती, कथमार्यः शुकनासः, कीदृशी चोज्जयिनी, कियत्यध्वनि सा च, कीदृग्भारतं वर्षम्, रमणीयो वा मर्त्यलोकः' इत्यशेषं पप्रच्छ। एवंविधाभिश्च कथाभिः सुचिरं स्थित्वोत्थाय कादम्बरी केयूरकं चन्द्रापीडसमीपशायिनं समादिश्य परिजनं च शयनसौधशिखरमारुरोह। तत्र च सितदुकूलवितानतलास्तीर्णं शयनीयमलंचकार। चन्द्रापीडोऽपि तस्मिन्नेव शिलातले निरभिमानतामभिरूपतामतिगम्भीरतां च कादम्बर्याः, निष्कारणवत्सलतां च महाश्वेतायाः, सुजनतां च मदलेखायाः, महानुभावतां च परिजनस्य, अतिसमृद्धिं च गन्धर्वराजलोकस्य, रम्यतां च किंपुरुषदेशस्य मनसा भावयन्केयूरकेण संवाह्यमानचरणः क्षणादिव क्षणदां क्षपितवान्।

अथ क्रमेण कादम्बरीदर्शनजागरखिन्नः स्वप्तुमिव तालतमालतालीकदलीकन्दलिनीं प्रविरलकल्लोलानिलशीतलां वेलावनराजिमवततार

थोड़ी देर ठहरनेके बाद उसने अवसर पाकर पूछा—'महाराज तारापीड कैसे हैं ? महारानी विलासवती कैसी हैं ? आर्य शुकनास कैसे हैं ? उज्जयिनी नगरी कैसी है ? वह यहाँसे कितनी दूर है ? भारत कैसा देश है ? क्या मर्त्यलोक रमणीय लोक है ?' इन सभी बातोंकी एक साथ उसने पूछ लिया। ऐसी-ऐसी बातें करती हुई कादम्बरी बड़ी देरतक वहाँ रही। इसके बाद वह उठी और चंद्रापीडके पास सोनेवाले सेवकों तथा केयूरकको सजग रहनेका आदेश देकर अपने शयनागारके प्रासादपर चढ़ गयी। वहाँपर वह श्वेत वस्त्रके चँदोवेसे युक्त पलंगपर लेटी। इधर-चंद्रापीड भी उसी शिलातलपर लेटकर कादम्बरीकी निरभिमानिता, सौंदर्य तथा अतिशय गम्भीरता, महाश्वेताका अकारण वात्सल्य, मदलेखाका सौजन्य, परिजनोंका उदार स्वभाव, गंधर्वराज चित्ररथकी असाधारण समृद्धि और किन्नरदेशकी रमणीयताके विषयमें ही सोचता रहा। केयूरक उस समय पैर दाब रहा था। इतनेमें उसे नींद आ गयी और वह रात उसने जैसे क्षण भरमें व्यतीत कर दी।

तदनन्तर जैसे कादम्बरीका दर्शन करते हुए रातभर जागनेसे खिन्न चंद्रमा सोने जा रहा हो। इस तरह वह ताल, तमाल, ताली तथा कदलीके कन्दोंसे भरे,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तारापतिः । अभ्यर्णविरहविधुरस्य च कामिनीजनस्य निःश्वसितैरिवोष्णैर्म्लानिमनीयत चन्द्रिका । चन्द्रापीडविलोकनारूढमदनेव कुमुददलोदरनीतनिशा पङ्कजेषु निपपात लक्ष्मीः । क्षणदापगमे च स्मृत्वा कामिनीकर्णोत्पलप्रहारानुत्कण्ठितेष्विव क्षामतां व्रजत्सु पाण्डुतनुषु, गृहप्रदीपेषु अनवरतशरक्षेपखिन्नानङ्गनिःश्वासविभ्रमेषु, वहत्सु लताकुसुमपरिमलेषु प्रभातमातरिश्वसु सुमन्दरलतागृहगहनानि च भियेवाभजन्तीष्वरुणोदयोपप्लविनीषु तारकासु क्रमेण स समुद्गते चक्रवाकहृदयनिवासलग्नानुरागमिव लोहितं मण्डलमुद्वहति सवितरि शिलातलादुत्थाय चन्द्रापीडः प्रक्षालितमुखकमलः कृतसंध्यानमस्कृतिर्गृहीतताम्बूलः 'केयूरक, विलोकय देवीं कादम्बरीं प्रबुद्धा न वा, क्व वा तिष्ठति' इत्यवोचत् । गतप्रतिनिवृत्तेन च तेन 'देव, मन्दरप्रासादस्याधस्तादङ्गणसौधवेदिकायां महाश्वेतया सहावतिष्ठते' इत्यावेदिते गन्धर्वराजतनयामालोकयितुमाज-

---

कोमल जलतरंगोंकी वायुसे शीतल तटवर्ती वनावलीमें वह धीरे-धीरे उतर गया। पतियोंसे वियोगका समय निकट देखकर शोकातुर रमणियोंके गरम निःश्वाससे ही जैसे चंद्रमाकी चाँदनी धुँधली हो गयी। जैसे चन्द्रापीडको देखकर कामातुरा लक्ष्मी कुमुदपुष्पोंकी गोदमें रात बिताकर सवेरे कमलोंपर जा बैठी । रात्रि व्यतीत हो जानेपर शयनागारके दीपक मन्द पड़कर जैसे सुन्दरियोंके कर्णोत्पलप्रहारका स्मरण करके उत्कंठित होते हुए क्षीण हो गये । अनवरत बाणवर्षा करनेके कारण खिन्न कामदेवके निःश्वाससरीखी विलासमयी प्रभातकालकी वायु लताओंके पुष्पोंकी सुगंधि समेटकर मन्द-मन्द बहने लगी । अरुणोदय हो जानेके कारण निस्तेज तारे भयभीत हो-होकर मंदराचलके लतामंडपोंमें छिपने लगे और जैसे रातभर चकवेके हृदयमें निवास करनेके कारण अनुरागसे अत्यन्त रक्तवर्णका सूर्यमण्डल धीरे-धीरे उदित होने लगा। तब चन्द्रापीड शिलातलसे उठा। उसने हाथ-मुँह धोया, सन्ध्यावन्दन किया और पान खाकर कहा- 'केयूरक ! देखो तो देवी कादम्बरी जागीं या नहीं और वे इस समय कहाँ हैं ।' तदनुसार वह तुरंत गया और लौटकर कहा—'देव ! वे इस समय मंदरप्रासादके नीचे आँगनमें चबूतरेपर महाश्वेताके साथ बैठी हुई हैं ।' यह सुनकर वह तत्काल उनसे मिलनेके लिए चल पड़ा। वहाँ जाकर उसने सबसे पहले महा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गाम। ददर्श च धवलभस्मललाटिकाभिरक्षमालापरिवर्तनप्रचलकरतलाभिः पाशुपतव्रतधारिणीभिर्धातुरागारुणाम्बराभिश्च परिव्राजिकाभिः परिणततालफलवल्कललोहितवस्त्राभिश्च रक्तपटव्रतवाहिनीभिः सितवसननिविडनिबद्धस्तनपरिकराभिश्च श्वेतपटव्यजनाभिर्जटाजिनवल्कलाषाढधारिणीभिर्वर्णिचिह्नाभिस्तापसीभिः साक्षादिव मन्त्रदेवताभिः पठन्तीभिर्भगवतस्त्र्यम्बकस्याम्बिकया कार्तिकेयस्य विश्रवसः कृष्णस्यार्यविलोकितेश्वरस्यार्हतो विरिञ्चस्य पुण्याः स्तुतीरुपास्यमानामन्तःपुराभ्यर्हिताश्च सादरं नमस्कारैरभिभाषणैरभ्युत्थानैरासन्नवेत्रासनदानैश्च गन्धर्वराजवान्धववृद्धाः संमानयन्तीं महाश्वेताम्। पृष्ठतश्च समुपविष्टेन किंनरमिथुनेन मधुकरमधुराभ्यां वंशाभ्यां दत्ते ताने कलगिरा गायन्त्या नारददुहित्रा पठ्यमाने च सर्वमङ्गलमहीयसि महाभारते दत्तावधानां पुरो धृते च दर्पणे ताम्बूलरागबद्धकृष्णिकान्धकारिताभ्यन्तरं दशनज्यो-

---

श्वेताको देखा। जिसके मस्तकपर श्वेतभस्म लगी थी। माला फेरनेके कारण जिनके हाथ हिल रहे थे, ऐसी बहुतेरी शिवव्रतधारिणी महिलायें, गैरिक वस्त्रधारिणी संन्यासिनियाँ, पके तालफलके छिलकेके सदृश लाल कपड़े पहने रक्तपटव्रतधारिणी, श्वेत वस्त्रसे कसकर अपने स्तन तथा कमर बाँधे, सफेद कपड़ेका पंखा हाथमें लिये, जटा-मृगचर्म-मूँजकी मेखला, वल्कल, पालाशदंड धारण किये ब्रह्मचारिणीके वेशमें साक्षात् मंत्रदेवता सदृश दीखती, शिव-गौरी-कार्तिकेय-विष्णु, आर्य विलोकितेश्वर (बौद्ध), अर्हत (जैन तीर्थंकर) तथा ब्रह्माजीकी पावन स्तुतियाँ करती हुई उपासिकाओं एवं अन्तःपुरकी सम्माननीया तथा मिलनेको आयी हुई गंधर्वराजके कुलकी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियोंका सादर नमस्कार करके, बात करके, अभ्युत्थान देकर और बेंतका बना आसन अर्पित करके महाश्वेता सबका सम्मान कर रही थी। उसके पीछेकी ओर बैठा किन्नरोंका जोड़ा भौंरेकी गुञ्जार सदृश वंशीकी मधुर धुन छेड़े हुए था। नारदकी धर्मपुत्री भद्रा मंजुल स्वरमें गान करती हुई बड़ी ही तन्मयता और भक्तिके साथ समस्त मंगलकारी ग्रन्थोंमें सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ महाभारतकी कथा बाँचनेमें व्यस्त थी। स्वयं कादम्बरी अपने समक्ष रक्खे हुए दर्पणमें—नित्य पान खानेके कारण काली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्स्नासिक्तमुत्सृष्टमधूच्छिष्टपट्टपाण्डुरमधरं विलोकयन्तीं शैवलतृष्णया कर्णपूरशिरीषप्रेषितोत्तानविलोकनेन बद्धमण्डलं भ्रमता भवनकलहंसेन प्रभातशशिनेव क्रियमाणगमनप्रणामप्रदक्षिणां कादम्बरीं च समुपसृत्य कृतनमस्कारस्तस्यामेव वेदिकायां विन्यस्तमासनं भेजे। स्थित्वा च कंचित्कालं महाश्वेताया वदनं विलोक्य स्फुरितकपोलोदरं मन्दस्मितमकरोत्। असौ तु तावतैव विदिताभिप्रायां कादम्बरीमब्रवीत्—'सखि, भवत्या गुणैश्चन्द्रापीडश्चन्द्रकान्त इव चन्द्रमयूखैरार्द्रीकृतो न शक्नोति वक्तुम्। जिगमिषति खलु कुमारः। पृष्ठतो दुःखितमविदितवृत्तान्तं राजचक्रमास्ते। अपि च युवयोर्दूरस्थितयोरपि स्थितेयमिदानीं कमलिनीकमलबान्धवयोरिव कुमुदिनीकुमुदनाथयोरिव प्रीतिराप्रलयात्। अतोऽभ्यनुजानातु भवती' इति।

रेखा युक्त भीतरी भागवाले, दाँतोंकी दीप्तिसे जगमगाते और मधूच्छिष्ट (मोम) लगाकर साफ किये हुए वस्त्र सरीखे लाल अधरोंको देख रही थी। सेवारके लोभवश घरका पालतू कलहंस उसके कानमें खुँसे शिरीषपुष्पको आँखें उतान करके देखता हुआ चक्कर काट रहा था। जिसको देखकर ऐसा प्रतीत होता कि मानो प्रभातकालका चन्द्रमा जाते समय कादम्बरीको प्रणाम तथा प्रदक्षिणा कर रहा हो। तब चंद्रापीडने निकट जाकर गंधर्वराजकी पुत्रीको प्रणाम किया और उसी चूनापुती वेदीपर बिछे आसनपर बैठ गया। तनिक देर बाद महाश्वेताकी ओर निहारकर मुसकाया। ऐसा करनेसे उसके दोनों गाल फड़क उठे। इस मुसकानसे ही चंद्रापीडके मनोगत अभिप्राय समझ लेनेवाली कादम्बरीसे महाश्वेताने कहा—'सखी! तुम्हारे गुणोंपर रीझकर युवराज उसी तरह आर्द्र हो उठे हैं, जैसे चंद्रमाकी किरणोंसे चन्द्रकान्तमणि पसीजने लगता है। इसी कारण ये आपसे कुछ कह नहीं पाते। ये अब जाना चाहते हैं। क्योंकि इनके साथ राजकुमारोंकी एक बहुत बड़ी टोली आयी हुई है। वे सब इनका वृत्तान्त न जाननेके कारण बड़े क्लेशमें पड़े होंगे। अब कितना ही दूर रहनेपर भी तुम दोनोंकी प्रीति कमलिनी-सूर्य एवं चन्द्रमा-कुमुदके प्रेमकी भाँति प्रलयकाल पर्यन्त स्थायी बनी रहेगी। अतएव अब इन्हें जानेकी आज्ञा प्रदान करिए।'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ कादम्बरी 'सखि महाश्वेते, स्वाधीनोऽयं सपरिजनो जनः कुमारस्य स्व इवान्तरात्मा। क इवात्रानुरोधः' इत्यभिधाय गन्धर्वकुमारानाहूय 'प्रापयत कुमारं स्वां भूमिम्' इत्यादिदेश। चन्द्रापीडोऽप्युत्थाय प्रणम्य प्रथमं महाश्वेतां ततः कादम्बरीं तस्याश्च प्रेमस्निग्धेन चक्षुषा मनसा च गृह्यमाणः 'देवि, किं ब्रवीमि। बहुभाषिणे न श्रद्धाति लोकः। स्मर्तव्योऽस्मि परिजनकथासु' इत्यभिधाय कन्यकान्तःपुरान्निर्जगाम। कादम्बरीवर्जोऽशेषः कन्यकाजनो गुणगौरवाकृष्टः परवश इव तं व्रजन्तमाबहिस्तोरणादनुवव्राज। निवृत्ते च कन्यकाजने केयूरकेणोपनीतं वाजिनमारुह्य गन्धर्वकुमारकैस्तैरनुगम्यमानो हेमकूटात्प्रवृत्तो गन्तुम्। गच्छतश्चास्य चित्ररथतनया न केवलमन्तर्बहिरपि सैव सर्वाशानिबन्धनमासीत्। तथा हि। तन्मयेन मानसेनासह्यविरहदुःखा-

---

यह सुनकर कादम्बरीने कहा—'सखी महाश्वेते! जिस तरह इनकी अन्तरात्मा इनके अधीन है, उसी तरह समस्त परिजनोंके साथ-साथ मैं भी इनके अधीन हो चुकी हूँ। ऐसी परिस्थितिमें इन्हें कुछ अनुरोध करनेकी आवश्यकता ही क्या है?' इतना कहकर उसने गन्धर्वकुमारोंको बुलवाकर आज्ञा दी—'तुम लोग जाकर युवराजको सकुशल इनके स्थानपर पहुँच आओ।' तदनन्तर चन्द्रापीडने उठकर पहले महाश्वेताको और बादमें कादम्बरीको प्रणाम किया। उस समय कादम्बरीके स्नेहभरे नयनों तथा उमंगभरे हृदयकी ओर आकृष्ट होकर चन्द्रापीडने कहा—'देवि! मैं क्या कहूँ? ज्यादा बात करनेवाले व्यक्तिपर लोग विश्वास नहीं करते। इसी कारण विशेष न कहकर मैं इतना ही कहूँगा कि परिजनोंके साथ वार्तालापके प्रसंगमें कभी-कभी मेरा स्मरण भी कर लिया करिएगा।' इतना कहकर वह कन्याओंके अन्तःपुरसे बाहर निकल आया। उसके गुणोंपर मोहित होकर कादम्बरीके सिवाय मदलेखा प्रभृति अन्य सभी कुमारियाँ जैसे पराधीन होकर अन्तःपुरके बड़े फाटक तक पहुँचाने आयीं। जब वे पीछे लौट गयीं, तब केयूरक घोड़ा ले आया और उसपर सवार होकर पीछे-पीछे चलनेवाले गन्धर्वकुमारोंके साथ चन्द्रापीड हेमकूटसे चल पड़ा। वहाँसे चलते समय चित्ररथतनया कादम्बरी उसके हृदयमें ही नहीं; बल्कि बाहर भी दसों दिशाओंमें दीखने लगी। जैसे—मनके सर्वथा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नुशयलग्नामिव पृष्ठतः कृतमार्गगमननिरोधामिव पुरस्तात् वियोगाकुल-हृदयोत्कलिकावेशात्क्षिप्तामिव नभसि सम्यगालोकयितुं वदनं, विर-हातुरमानसामिवावस्थितामुरःस्थले तामेव ददर्श। क्रमेण च प्राप्य महाश्वेताश्रममच्छोदसरस्तीरे संनिविष्टमिन्द्रायुधखुरपुटानुसारेणैवाग-तमात्मस्कन्धावारमपश्यत्। निवर्तिताशेषगन्धर्वकुमारश्च सानन्देन सकुतूहलेन सविस्मयेन च स्कन्धावारवर्तिना जनेन प्रणम्यमानः स्व-भवनं विवेश। संमानिताशेषराजलोकश्च वैशम्पायनेन पत्रलेखया च सहैवं महाश्वेता, एवं कादम्बरी, एवं मदलेखा, एवं तमालिका, एवं केयूरकः, इत्यनयैव कथया प्रायो दिवसमनैषीत्। कादम्बरीरूपदर्शन-विद्विष्टेव नास्य पुरे प्रीतिमकरोद्राजलक्ष्मीः। तामेव च धवलेक्षणामाबद्ध-रणरणकेन चेतसा चिन्तयतो जाग्रत एवास्य जगाम रात्रिः। अपरेद्युश्च

तन्मय हो जानेके कारण विरहव्यथासे सन्तप्त होकर मानो वह उसके पीछे-पीछे दौड़ी आ रही थी। आगे आकर जैसे वह रास्ता रोक रही थी। वियोगसे व्याकुल हृदयमें उत्पन्न उत्कण्ठाओंने जैसे उसे आकाशमें उछाल दिया था। सदा चन्द्रापीडका मुख देखते रहनेके लिए जैसे वह विरहसे आतुर होकर उसके हृदयमें आ बैठी थी। इस प्रकार वह सब तरफ कादम्बरीको विद्यमान देखने लगा। इस तरह चलता-चलता वह कुछ ही देरमें महाश्वेताके आश्रम-पर आ पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि इन्द्रायुधके खुरोंका चिह्न देखती हुई उसकी सेना आकर अच्छोदसरोवरके तटपर छावनी डालकर पड़ी है। यहाँ पहुँच-कर उसने साथ आये हुए गन्धर्वकुमारोंको वापस लौटा दिया। उसकी सेनाके लोगोंने चन्द्रापीडको देखकर आनन्द, विस्मय तथा कुतूहलके साथ प्रणाम किया और वह अपने डेरेमें प्रविष्ट हुआ। वहाँ पहुँचकर उसने सभी राज-कुमारोंका सम्मान किया और दिनका अधिक भाग 'ऐसी महाश्वेता है, ऐसी कादम्बरी है, ऐसी मदलेखा है, इस प्रकारकी तमालिका है, इस तरहका केयूरक है' वैशम्पायन तथा पत्रलेखाको ये बातें बतानेमें ही बिताया। काद-म्बरीका सुन्दर रूप देख लेनेपर राजलक्ष्मीको जैसे चन्द्रापीडसे द्वेष हो गया था। अब वह उसको पहलेके समान प्रिय नहीं लग रहा था। इस प्रकार उत्कण्ठा-भरे हृदयमें उसी शुभ्रनयनी कादम्बरीका स्मरण करते-करते वह सारी रात

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समुत्थिते भगवति रवावास्थानमण्डपगतस्तद्गतेनैव मनसा सहसैव प्रतीहारेण सह संप्रविशन्तं केयूरकं ददर्श। दूरादेव च क्षितितलस्पर्शिना मौलिना कृतपादपतनम् 'एह्येहि' इत्युक्त्वा प्रथममपाङ्गविसर्पिणा चक्षुषा, ततो हृदयेन, ततो रोमोद्गमेन, पश्चाद्भुजाभ्यां प्रधावितः प्रथितमालिलिङ्ग गाढम्। उपवेशयच्चैनमात्मनः समीप एव। पप्रच्छ च स्मितसुधाधवलीकृताक्षरं त्वरत्प्रीतिद्रवमयमिव वचनमादृतः—'केयूरक, कथय कुशलिनी देवी ससखीजना सपरिजना कादम्बरी भगवती महाश्वेता च' इति। असौ तु तेन राजसूनोः प्रीतिप्रकर्षजन्मना स्मितनैव स्नपित इवानुलिप्त इव सद्य एवापगताध्वखेदः प्रणम्यादृततरमवोचत्—'अद्य कुशलिनी, यामेवं देवः पृच्छति।' इत्यभिधायापनीयार्द्रवस्त्रावगुण्ठितं बिससूत्रसंयतमुखमार्द्रचन्दनपङ्कन्यस्तबालमृणालवलयमुद्रं नलिनीपत्रपुटमदर्शयत। उद्घाट्य च तत्र कादम्बरीप्रहितान्यभिज्ञानान्य-

---

जागते ही बीती। प्रातःकाल सूर्योदय होते ही जब कि वह कादम्बरीका स्मरण करता हुआ सभामण्डपमें बैठा था, तभी सहसा प्रतीहारके साथ आते हुए केयूरकको देखा। केयूरकने दूरसे ही मस्तक झुकाकर भूमिका स्पर्श करते हुए प्रणाम किया। तभी 'आओ-आओ' कहता चन्द्रापीड उठ खड़ा हुआ और पहले हर्षविकसित नयनोंसे, फिर हृदयसे, फिर रोमांचसे और बादमें प्रत्यक्षरूपसे दोनों हाथ फैलाकर उसका गाढ़ आलिंगन किया और अपनी बगलमें बिठाला। तदनन्तर उमड़ते हुए प्रेमरससे सराबोर एवं मुसकानरूपी अमृतसे ओत-प्रोत शब्दोंमें बड़े आदरपूर्वक पूछा—'केयूरक! बताओ, अपनी सखियों और परिजनोंके साथ देवी कादम्बरी तथा भगवती महाश्वेता सकुशल हैं?' केयूरक तो युवराजके पूर्ण प्रेमभरे मुसकानसे ही जैसे नहा गया हो—सराबोर हो गया हो। इससे उसकी सारी थकावट दूर हो गयी। अब उसने प्रणाम करके बड़े आदरके साथ कहा—'आज वे कुशलिनी हुई। क्योंकि उनके विषयमें आप इस प्रकार प्रश्न कर रहे हैं।' ऐसा कहकर उसने गीले वस्त्रमें लपेटे, मुखपर मृणालसूत्रसे बँधे, ताजे चन्दनके लेपसे युक्त तथा ताजे मृणालवलयकी मुद्रासे मुद्रित कमलके पत्तोंकी एक पुड़िया निकाली और उसपरसे वस्त्र हटाकर उसमें रक्खे कादम्बरी द्वारा भेजे हुए बहुतेरे अभिज्ञान (सौगात) दिखाये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दर्शयत् । तद्यथा—मरकतहरिन्ति व्यपनीतत्वञ्चि चारुमञ्जरीभाञ्जि क्षीरीणि पूगीफलानि, शुककामिनीकपोलपाण्डूनि ताम्बूलीदलानि, हर-चन्द्रखण्डस्थूलशकलं च कर्पूरम्, अतिबहलमृगमदामोदमनोहरं च मल-यजविलेपनम् । अब्रवीच्च—'चूडामणिचुम्बिना कोमलांगुलिविनिर्गतलो-हितांशुजालेनाञ्जलिना देवमर्चयति देवी कादम्बरी, महाश्वेता च सक-ण्ठग्रहेण कुशलवचसा, पर्यस्तशिखण्डमाणिक्यज्योत्स्नास्नापितललाटेन च नमस्कारेण मदलेखा, क्षितितलघटितसीमन्तमकरिकाकोटिकोणेन सकलकन्यालोकश्च सचरणरजःस्पर्शेन च पादप्रणामेन तमालिका । सं-दिष्टं च तत्र महाश्वेतया—धन्या खलु ते येषां न गतोऽसि चक्षुषोरवि-षयम् । तथा नाम समक्षं भवतस्ते तुहिनशीतलाश्चन्द्रमया इव गुणा वि-रहे विवस्वन्मया इव वृत्ताः । स्पृहयन्ति खलु जनाः कथमपि देवोपपा-दितायामृतोत्पत्तिवासरायेवातीतदिवसाय । त्वया वियुक्तं निवृत्तमहो-

---

उनमें मरकत मणिके समान हरी, छिलका रहित, सुन्दर मंजरियों युक्त तथा दूधभरी सुपारियाँ थीं । शुककामिनीके गाल सरीखे पीले-पीले पान थे । शिवजीके मस्तकपर विद्यमान चन्द्रमाके बराबर कपूरका एक टुकड़ा था । प्रचुरमात्रामें कस्तूरी पड़ा हुआ अत्यन्त सुगन्धित चन्दनका लेप था । ये सभी चीजें दिखानेके बाद उसने कहा—'कोमल उँगलियोंके छिद्रसे निकलने-वाली लाल किरणों युक्त अंजली बाँधकर देवी कादम्बरी आपको प्रणाम कह रही हैं । भगवती महाश्वेता भी कंठालिंगन एवं कुशलप्रश्नपूर्वक प्रणाम कहती हैं । शिरोरत्नकी दीप्तिसे रंजित ललाट अवनत करके मदलेखा आपको प्रणाम करती है । सीमन्तकी मकरिकाका अग्रभाग पृथिवीको स्पर्श कराके तमालिका तथा अन्यान्य कन्यायें आपके चरणोंकी रज मस्तकपर चढ़ाती हुई प्रणाम कह रही हैं । भगवती महाश्वेताने आपको संदेश देते हुए कहा है—'वे लोग धन्य हैं, जिनके समक्ष आप नहीं पहुँचे हैं । क्योंकि सामने रहनेपर आपके जो गुण चंद्रमा सदृश शीतल लगते थे, वे ही अब आपके वियोगमें सूर्यमय बन गये हैं । यहाँके सब लोग किसी तरह दैवयोगसे प्राप्त पिछला दिन अमृतकी उत्पत्तिके दिनकी भाँति पुनः देखनेके लिए लालायित हैं । आपके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्सवालसमिव वर्तते गन्धर्वराजनगरम् । जानासि च मां कृतसकलपरित्यागाम्, तथाप्यकारणपक्षपातिनं भवन्तं द्रष्टुमिच्छत्यनिच्छन्त्या अपि मे बलादिव हृदयम् । अपि च बलवदस्वस्थशरीरा कादम्बरी । स्मरति च स्मेराननं स्मरकल्पं त्वाम् । अतः पुनरागमनगौरवेणार्हसीमां गुणवदभिमानिनीं कर्तुम् । उदारजनादरो हि बहुमानमारोपयत्यवश्यम् । सोढव्या चेयमस्मद्विधजनपरिचयकदर्थना कुमारेण । भवत्सुजनतैव जनयत्यनुचितसंदेशप्रागल्भ्यम् । एष देवस्य शयनीये विस्मृतः शेषो हारः' इत्युत्तरीयपटान्तसंयतं सूक्ष्मसूत्रविवरनिःसृतैरंशुसंतानैः संसूच्यमानं विमुच्य चामरग्राहिण्याः करे समर्पितवान् ।

अथ चन्द्रापीडः 'महाश्वेताचरणाराधनतपःफलमिदं यदेवं परिजनेऽप्यनुस्मरणादिकं प्रसादभारमतिमहान्तमारोपयति देवी कादम्बरी' इत्युक्त्वा तत्सर्वं शिरसि कृत्वा स्वयमेव जग्राह । तेन च कादम्बर्याः

बिछोहसे सारा गन्धर्वनगर उत्सवविहीन और म्लान जैसा दीख रहा है । यह तो आप जानते ही हैं कि मैंने सब कुछ त्याग दिया है । तथापि इच्छा न करनेपर भी मेरा हृदय हठपूर्वक आप जैसे अकारण मित्रको देखनेके लिए आकुल है । इधर कादम्बरीका भी शरीर अस्वस्थ हो गया है । कामदेव-सदृश सुंदर और मुसकानभरे आपके मुखका वह सदा स्मरण करती रहती है । अतएव आप एक बार फिर अपने आगमनके गौरवसे इसे गुणियोंको आदर-दानके अभिमानका अवसर दीजिए । क्योंकि उदार पुरुषोंका आदर करनेसे बहुत अधिक मान प्राप्त होता है । अब आपको हम जैसोंके परिचयकी यह संकोचमयी विडम्बना तो सहनी ही पड़ेगी। आपका सौजन्य ही हमें ऐसे अनुचित संदेश भेजनेकी धृष्टता प्रदान कर रहा है। अपने बिछौनेपर आप इस शेष नामके हारको भूल गये थे, उसे भेजती हूँ ।' ऐसा कहकर केयूरकने दुपट्टेकी छोरमें बँधे और सूक्ष्मतंतुछिद्रोंसे बाहर निकलनेवाली दीप्तिसे ही अपने अस्तित्वकी सूचना देनेवाले उस हारको खोलकर चामरग्राहिणीके हाथपर धर दिया ।

चन्द्रापीडने कहा—'यह भगवती महाश्वेताके चरणाराधनरूपी तपका ही फल है कि जो सेवकपर भी देवी कादम्बरी स्मरण आदिकी इतनी बड़ी अनुकम्पा करती हैं ।' ऐसा कहकर उसने स्वयं वह सब वस्तुयें लीं और माथे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कपोललावण्येनेव गलितेन, स्मितालोकेनेव रसतामुपनीतेन, हृदयेनेव द्रुतेन, गुणगणेनेव विस्पन्दितेन, स्पर्शवता ह्लादिना सुरभिणा च विलेपनेन विलिप्य तमेव कण्ठे हारमकरोत्। आगृहीतताम्बूलश्च मुहूर्तादिवोत्थाय वामबाहुना स्कन्धदेशेऽवलम्ब्य केयूरकमूर्ध्वस्थित एव कृतयथाक्रियमाणसम्मानमुदितं प्रधानराजलोकं विसृज्य शनैः शनैर्गन्धमादनं करिणं द्रष्टुमयासीत्। तत्र च स्थित्वा क्षणमिव तस्मै स्वयमेव निजनखांशुजालजटिलं समृणालमिव शष्पकवलमवकीर्य वल्लभतुरङ्गमन्दुराभिमुखः प्रतस्थे। गच्छंश्चोभयतः किंचित्किंचिदिव तिर्यग्वलितवदनः परिजनं विलोकयांबभूव। अथ चित्तज्ञैः प्रतीहारैः प्रतिषिद्धानुगमने निखिलेन समुत्सारिते केयूरकद्वितीय एव मन्दुरां प्रविवेश। उत्सारणभयसंभ्रान्तलोचनेषु प्रणम्यापसृतेषु मन्दुरापालेषु, इन्द्रायुधपृष्ठावगुण्ठनपटं किंचिदेकपार्श्वे गलितं समाकुर्वन्नुत्सारयंश्च कूणितनेत्रत्रिभागस्य

लगाया। तदनन्तर कादम्बरीके द्रवीभूत कपोलके लावण्यकी भाँति, रसरूपमें परिणत मुसकानकी दीप्तिके समान पिघले हुए हृदयकी भाँति, प्रस्रवित गुणगणके समान, शीतल स्पर्शयुक्त, मनोहारी एवं सुगन्धित वह लेप लेकर उसने अपने सारे शरीरमें लगाया और हार गलेमें पहन लिया। फिर पान खाया और तनिक देर बाद उठ तथा बायें हाथसे केयूरकके कंधेका सहारा लकर खड़ा हो गया। खड़े-खड़े ही उसने यथोचित सम्मान पाकर प्रसन्न प्रधान-प्रधान राजाओंको विदा किया और गंधमादन हाथीको देखनेके लिए चल पड़ा। वहाँ क्षणभर रुककर उसने नखकिरणोंके कारण जटिल एवं मृणालयुक्त दीखनेवाली थोड़ी-सी घास स्वयं उसके आगे डाली। वहाँसे वह अपने प्रिय घोड़ोंके अस्तबलकी ओर चला। वहाँ जाते समय राहमें दोनों ओर खड़े परिजनोंको तनिक तिरछा मुख करके देखा। इससे उसके मनोगत अभिप्राय जाननेवाले प्रतीहारोंने पीछे-पीछे चलनेवालोंको रोककर सब परिजनोंको वहाँसे हटा दिया। तब केवल केयूरकको साथ लिये हुए चंद्रापीड अश्वशालामें गया। निकाले जानेसे भयभीत एवं चकित नयनोंवाले साईस प्रणाम करके स्वयं वहाँसे हट गये। तब इन्द्रायुधके शरीरपर पड़े वस्त्रका कोना, जो एक ओर खिसक गया था, उसे सम किया और नेत्रपर लटके हुए केसर सदृश उसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दृष्टिनिरोधिनीं कुंकुमकपिलां केसरसटां खुरधोरणीविन्यस्तचरणो लीलामन्दं मन्दुरादारुदत्तदेहभरः सकुतूहलमुवाच—'केयूरक, कथय मन्निर्गमादारभ्य को वा वृत्तान्तो गन्धर्वराजकुले, केन वा व्यापारेणावसरमतिनीतवती गन्धर्वराजपुत्री, किं वाऽकरोन्महाश्वेता, किमभाषत वा मदलेखा, के वाभवन्नालापाः, परिजनस्य भवतो वा को व्यापार आसीत्, आसीद्वा काचिदस्मदाश्रयिणी कथा'। केयूरकस्तु सर्वमाचचक्षे—'देव, श्रूयताम्। निर्गते त्वयि हृदयसहस्रप्रयाणपटहकलकलमिव नुपूरचक्रक्वणितेन कन्यकान्तःपुरे कुर्वन्ती देवी कादम्बरी सपरिजना सौधशिखरमारुह्य तुरगधूलिरेखाधूसरं देवस्यैव गमनमार्गमालोकितवती। तिरोहितदर्शने च देवे मदलेखास्कन्धनिक्षिप्तमुखी प्रीत्या तं दिगन्तं दुग्धोदधिधवलैः प्लावयन्तीव दृष्टिपातैः सितातपत्रापदेशेन शशिनेवेर्ष्यया निवार्यमाणरविकिरणस्पर्शा सुचिरं तत्रैव स्थितवती। तस्माच्च कथमपि सखेदमवतीर्य क्षणमिवावस्थानमण्डपे स्थित्वोत्थाय स्खलनभि-

---

पीले बालोंको हटाया। इसके बाद खुर बाँधनेकी शंकुपर पैर रख और अश्वशालाके एक खम्भेके सहारे खड़ा होकर बड़े भावके साथ मन्द-मन्द स्वरमें कुतूहलपूर्वक बोला—'केयूरक! मेरे चले आनेके बाद गन्धर्वराजके कुलमें क्या-क्या हुआ, वह सारा वृत्तान्त मुझे बताओ। गन्धर्वराजकी पुत्री कादम्बरीने कौन-सा काम करके दिन काटा? महाश्वेताने क्या किया? मदलेखाने क्या कहा? और भी वहाँ क्या-क्या बातें हुईं? अन्यान्य परिजनों तथा तुमने क्या किया? क्या मेरे सम्बन्धमें भी कोई चर्चा चली थी?' इन सभी प्रश्नोंका उत्तर देता हुआ केयूरक बोला—'देव! सुनिए, वहाँसे आपके चलते ही कन्याओंके अन्तःपुरमें नूपुरोंकी ध्वनिसे जैसे हजारों हृदयोंकी प्रस्थानदुन्दुभी बज उठी। उसी समय देवी कादम्बरी अपने परिजनोंके साथ प्रासादपर चढ़ गयीं और घोड़ेकी खुरसे उड़नेवाली धूलके कारण धुँधले आपके मार्गकी ओर निहारने लगीं। देखते-देखते जब आप आँखोंसे ओझल हो गये, तब मदलेखाके कंधेपर माथा रखकर प्रेमपूर्वक अपने क्षीरसागर सदृश शुभ्रनयनोंसे जैसे उस भागको प्लावित करती हुई बड़ी देरतक वहाँ ही खड़ी रहीं। उस समय श्वेत छत्रके आकारमें जैसे स्वयं चन्द्रमा ही आकर ईर्ष्यासे सूर्यकी किरणोंका स्पर्श नहीं होने देता हो,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

येव निवेद्यमानोपहारकुसुमाशब्दायमानैर्मधुकरैः, जलधाराधवलनख-मयूखोन्मुखानामनुगलं गलद्भिर्वलयैः कण्ठबन्धानिवोपपादयन्ती केकार-वोद्विग्ना भवनशिखण्डिनाम्, पदे पदे च कुसुमधवलान्करेण लतापल्ल-वान्मनसा च देवस्य गुणगणानवलम्भमाना तमेव क्रीडापर्वतकमागत-वती यत्र स्थितवान्देवः। तमुपेत्य च 'देवेनात्र मरकतशिलामकरिकाप्र-णालप्रस्रवणसिच्यमानलतामण्डपे सीकरिणि शिलातले स्थितम्, अत्र गन्धोदकपरिमललीनालिजालजटिलप्रदेशे स्नातम्, अत्र कुसुमधूलिसि-कतिले गिरिनदिकातटे भगवानर्चितः शूलपाणिः, अत्र ह्लेपितशशधररो-चिषि स्फटिकशिलातले भुक्तम्, अत्र संक्रान्तचन्दनरसलाञ्छने मुक्ता-शैलाशिलापट्टे' इति परिजनेन पुनरुक्तं निवेद्यमानानि देवस्यैव स्थानचिह्नानि पश्यन्ती क्षपितवती दिवसम्। दिवसावसाने च कथ-

---

ऐसे भाव प्रकट कर रही थीं। अन्तमें वे बहुत खिन्न होकर प्रासादसे नीचे उतरीं और तनिक देर सभामण्डपमें बैठीं। तुरंत वहाँसे उठीं और कहीं उपहारके पुष्पोंपर फिसलकर न गिर जायँ, जैसे इसी डरसे गुञ्जार करते हुए भौंरे 'वहाँ फूल हैं' यह बताने लगे। जलकी धारा सदृश उज्ज्वल नखकिरणोंकी ओर निहारते हुए पालतू मयूरोंके शब्दसे त्रस्त होकर हाथमेंसे निकले कंकण द्वारा जैसे वे प्रत्येक मयूरके गलेमें गंडा बाँधने लगीं। तदनन्तर पग-पगपर पुष्पगुच्छसे उज्ज्वल लताओंकी पत्तियोंका हाथसे स्पर्श और मनसे आपके गुणोंका स्मरण करती हुई उस क्रीड़ापर्वतवाले भवनमें जा पहुँचीं, जहाँ आप ठहरे थे। वहाँ जानेपर परिजनगण उन्हें बताने लगे कि 'इस मरकतशिलाकी मकराकृति जलनालीकी धारासे सिंचे हुए हरे रंगके लतामंडपवाले एवं जल-कणसे आवृत शिलातलपर युवराज बैठे थे। गन्धोदककी मादक सुगन्धिसे व्याप्त तथा भौंरोंके झुण्डसे भरे इस शिलातलपर उन्होंने स्नान किया था। पुष्पोंके पराग-से रेतीली इस क्रीडापर्वतके नदीतटपर बैठकर उन्होंने शिवजीका पूजन किया था। अपनी दीप्तिसे चंद्रमाकी शोभाको भी लज्जित करनेवाली इस मनोहर स्फटिकशिलापर बैठकर उन्होंने भोजन किया था। जिसमें अबतक चंदनरस लगा हुआ है, इस मुक्ताजटित शैलशिलापट्टपर वे सोये थे।' इस प्रकार परिजनों द्वारा बार-बार बताये हुए आपके स्थानिक चिह्नोंको देख-देखकर उन्होंने पूरा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मपि महाश्वेताप्रयत्नादनभिमतमपि तस्मिन्नेव स्फटिकमणिशिलावेश्मन्याहारमकरोत्। अस्तमुपगते च भगवति रवावुदिते चन्द्रमसि तत्रैव कंचित्कालं स्थित्वा चन्द्रकान्तमयीव चन्द्रोदये प्रत्यार्द्रीकृततनुश्चन्द्रबिम्बप्रवेशभयेनेव करौ कपोलयोः कृत्वा किमपि चिन्तयन्ती मुकुलितेक्षणा क्षणमात्रं स्थित्वोत्थाय विमलनखनिपतितशशिप्रतिमाभरगुरूणीव कृच्छ्रादुत्क्षिपन्ती लीलामन्थरगमनपटूनि पदानि शय्यागृहमगात्। शयननिक्षिप्तगात्रयष्टिश्च ततःप्रभृति प्रबलया शिरोवेदनया विचेष्टमाना दारुणेन च दाहरूपिणा ज्वरेणाभिभूयमाना केनाप्याधिना मङ्गलप्रदीपैः कुमुदाकरैश्चक्रवाकैश्च सार्धमनिमीलितलोचना दुःखदुःखेन क्षणदामनैषीत्। उषसि च मामाहूय देवस्य वार्ताव्यतिकरोपालम्भाय सोपालम्भमादिष्टवती'।

चन्द्रापीडस्तदाकर्ण्य जिगमिषुः 'अश्वोऽश्वः' इति वदन्भवनान्निर्ययौ। आरोपितपर्याणं च त्वरिततुरगपरिचारकोपनीतमिन्द्रायुधमारुह्य,

---

दिन बिता दिया। दिन बीत जानेके बाद महाश्वेताके बहुत आग्रह करनेपर बिना इच्छाके उन्होंने उसी स्फटिकमणिके शिलागृहमें भोजन किया। सूर्यास्तके बाद जब चन्द्रोदय हुआ तो भी वे कुछ देर वहीं रुकीं। उसके बाद जैसे उनका शरीर चंद्रकान्तमणिका बना हुआ हो, इस प्रकार चंद्रोदयसे पसीजकर उनकी देह पानी-पानी हो गयी। उस समय जैसे चन्द्रबिम्ब प्रविष्ट हो जानेके भयसे कपोलपर हाथ रख और आँखें तनिक मूँदकर कुछ सोचती हुई क्षणभर वहाँ बैठीं। फिर वहाँसे उठकर निर्मल नखोंपर पड़ते हुए चन्द्रबिम्बको भार समझकर बड़े कष्टसे धीरे-धीरे पैर रखती हुई भावयुक्त मंद गतिसे चलकर अपने शयनागार गयीं और पलंगपर लेट गयीं। तभीसे उनके सिरमें बड़ी वेदना हो रही है, जिससे वे छटपटाती रहती हैं। अग्निदाहके सदृश दारुण ज्वर भी उन्हें बुरी तरह सता रहा है। इसके अतिरिक्त न जाने किस आधि (मनोव्यथा) से व्यथित होकर उन्होंने मंगलप्रदीप, कुमुदसमूह तथा चकवोंके साथ बिना आँख मूँदे बड़े कष्टसे सारी रात बितायी। जब सवेरा हुआ तो मुझे बुलाकर उलाहनेके साथ आपका समाचार जाननेके लिए भेजा।

यह वृत्तांत सुनकर चन्द्रापीड वहाँ जानेका निश्चय करके 'घोड़ा लाओ घोड़ा' यह आदेश देकर अश्वशालाके बाहर हो गया। साईस द्वारा तुरंत जीन कस-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पश्चादारोप्य पत्रलेखाम्, स्कन्धावारे संस्थापयित्वा वैशम्पायनम्, अशेषपरिजनं निवर्त्य च, अन्यतुरगारूढेनैव केयूरकेणानुगम्यमानो हेमकूटं ययौ। आसाद्य च कादम्बरीभवनद्वारमवततार। अवतीर्य द्वारपालार्पिततुरङ्गः कादम्बरीप्रथमदर्शनकुतूहलिन्या पत्रलेखया चानुगम्यमानः प्रविश्य 'क्व देवी कादम्बरी तिष्ठति' इति संमुखागतमन्यतमं वर्षधरमप्राक्षीत्। कृतप्रणामेन च तेन 'देव, मत्तमयूरस्य क्रीडापर्वतकस्याधस्तात्कमलवनदीर्घिकातीरे विरचितं हिमगृहमध्यास्ते' तेन इत्यावेदिते केयूरकेणोपदिश्यमानवर्त्मा प्रमदवनमध्येन गत्वा किंचिदध्वानं मरकतहरितानां कदलीवनानां प्रभया शष्पीकृतरविकिरणं हरितायमानं दिवसं ददर्श। तेषां च मध्ये निरन्तरनलिनीदलच्छन्नं हिमगृहमपश्यत्। तस्माच्च निष्पतन्तमार्द्रांशुकच्छलेनाच्छोदजलेनेव संवीतम्, बाहुलताविधृतैर्मृणालवलयैराभरणकैरिव धवलितावयवम्, आपा-

---

कर लाये गये इन्द्रायुधपर सवार हो तथा पीछे पत्रलेखाको बैठाकर उसने सेनाकी सम्हालका भार वैशम्पायनको सौंपा। सब परिजनोंको विदा कर दिया और दूसरे घोड़ेपर सवार केयूरकके साथ-साथ हेमकूटकी तरफ चल पड़ा। थोड़ी ही देरमें वह कादम्बरीके भवनद्वारपर जा पहुँचा और वहाँ उतरकर घोड़ा द्वारपालके हवाले कर दिया। कादम्बरीको पहले-पहल देखनेके लिए उत्सुक पत्रलेखा उसके पीछे-पीछे चल रही थी। अंदर पहुँचकर चन्द्रापीडने सामनेसे आते हुए एक नपुंसकसे पूछा—'इस समय देवी कादम्बरी कहाँ हैं?' तत्काल प्रणाम करके उसने कहा—'देव! वे इस समय मत्तमयूर नामक क्रीडापर्वतके नीचे कमलसरोवर-तटवर्ती हिमगृहमें विराजमान हैं।' यह जानकर वह केयूरकके बताये हुए मार्गसे प्रमदवनके भीतर होता हुआ कुछ ही दूर चला था कि इतनेमें उसने मरकतमणि सरीखे हरे केलेके पत्तोंकी आभासे हरी-हरी घासके सदृश सूर्यकी किरणोंसे सम्पन्न दिन उपस्थित देखा। उन्हीं कदलीवृक्षोंके बीचमें कमलपत्रोंसे आच्छादित हिमगृह दीखा। उसके भीतरसे आती हुई कादम्बरीकी कुछ ऐसी परिचारिकायें दिखायी पड़ीं, जो शिशिरोपचारमें पूर्ण कुशल थीं। उनके शरीरपर आभूषण नहीं थे। वे अपने गीले कपड़ोंके ब्याजसे मानो अच्छोदसरोवरके स्वच्छ जलकी धारासे आच्छादित थीं। उनकी भुजाओंमें विद्यमान मृणालके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ण्डुभिश्चैकश्रवणाश्रयैस्ताटङ्कीकृतैः केतकीगर्भदलैरुपहसितदन्तपत्रम्, आलिखितचन्दनललाटिकानि मुखारविन्दानि बद्धसौभाग्यपट्टानीव दधानम्, कृतचन्दनबिन्दुविशेषकांश्च दिवापि स्पर्शलोभस्थितेन्दुप्रतिबिम्बानिव कपोलानुद्वहन्तम्, अपहृताशेषशिरीषसौभाग्याभिः शैवलमञ्जरीभिः कृतकर्णपूरम्, कर्पूरधूलिधूसरेषु मलयजरसलवलुलितेषु बकुलावलीवलयेषु स्तनेषु न्यस्तनलिनीपत्रप्रावरणम्, अनवरतचन्दनचर्चाप्रणयनपाण्डुरैः संतापरोषमृदितारक्तचन्द्रकरैरिव करैः कल्पितमृणालदण्डानि बिसतन्तुमयानि चामराणि बिभ्राणम्, उन्नालैश्च कमलैः कुमुदैः कुवलयैः किसलयैः कदलीदलैः कमलिनीपलाशैः कुसुमस्तवकैश्चातपत्रीकृतैर्निवारितातपम्, जलदेवतानामिव समूहम्, वरुणश्रियामिव समागमम्, शरदामिव समाजम्, सरसीनामिव गोष्ठीबन्धम्, शिशिरोपचारनिपुणं कादम्बर्याः शरीरपरिचारकं शरीरप्रायं परिजनमद्राक्षीत्।

कंगन समस्त अंगोंमें पहने हुए आभूषण सरीखे श्वेत दीख रहे थे। उसके एक कानमें विद्यमान श्वेतवर्ण केतकीका गर्भपत्रनिर्मित ताटंक दन्तपत्रका मखौल कर रहा था। उनके ललाटपर लगा हुआ चन्दनतिलक सौभाग्यपट्टके समान लगता था। उनके कपोलोंपर चंदनबिंदुओंसे बनी फूल-पत्तियोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे दिनके समय भी स्पर्शके लोभवश चंद्रमाका प्रतिबिम्ब बैठा हुआ है। सिरीषका सौंदर्य अपहरण करनेवाली सेवारकी मंजरियोंका कर्णपूर उन्होंने पहन रक्खा था। कपूरकी धूलसे धूसरवर्ण तथा चन्दनके रससे चर्चित बकुलावलीके वलयसे अलंकृत स्तनोंपर जैसे उन्होंने कमलपत्रके वस्त्र रख लिये थे। पुनः पुनः चन्दनका लेप करनेसे श्वेत हाथोंको देखकर ऐसा लगता था कि जैसे सन्ताप तथा रोषके वशीभूत होकर उन्होंने चन्द्रमाकी किरणोंको अपने हाथोंसे मसल डाला है। उनके उन्हीं हाथोंमें मृणालदण्डके बिसतंतुतमय चमर विद्यमान थे। ऊँचे दण्डवाले कमल, कुमुद, कुवलय, कदलीपत्र, कमलिनीके पत्र तथा फूलोंके गुच्छोंकी छतरी बनाकर उसीसे वे छाया किये हुए थीं। इन उपकरणोंसे वे जलदेवताओंके समूह, वरुणश्रीकी मंडली, शरदृतुके समुदाय तथा छोटे-छोटे सरोवरोंकी गोष्ठीके सदृश दिखायी दे रही थीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेन च प्रणम्यमानः पादनखपतनभयादिव त्वरितापसृतेन दीयमानमार्गश्चन्दनपङ्ककृतवेदिकानां पुण्डरीककलिकाघटितघण्टिकानां विकसितसिन्दुवारकुसुममञ्जरीचामराणां लम्बितस्थूलमल्लिकामुकुलहाराणामाबद्धलवङ्गपल्लवचन्दनमालिकानां दोलायमानकुमुददामध्वजानां मृणालवेत्रहस्ताभिर्गृहीतरुचिरकुसुमाभरणाभिर्मधुलक्ष्मीप्रतिकृतिभिरिव द्वारपालिकाभिरधिष्ठितानां कदलीतोरणानां तलेन प्रविश्य सर्वतो निसृष्टदृष्टिर्दृष्ट्वान्क्वचिदुभयतटनिखाततमालपल्लवकृतवनलेखाः कुमुदधूलिवालुकापुलिनमालिनीश्चन्दनरसेन प्रवर्त्यमाना गृहनदिकाः क्वचिन्निचुलमञ्जरीरचितरक्तचामराणां जलार्द्रवितानकानां तलेषु सिन्दूरकुट्टिमेष्वास्तीर्यमाणालिरक्तपङ्कजशयनानि, क्वचिदेलारसेन सिच्यमानानि स्पर्शानुमेयरम्यभित्तीनि स्फटिकभवनानि, क्वचिच्छिरीषपद्मकृतशाद्व-

---

चंद्रापीडको देखकर उन परिजनोंने प्रणाम किया और इस भयसे हटकर तुरन्त रास्ता दे दिया कि कहीं अपने पाँवोंके नखोंपर उनका प्रतिबिम्ब न पड़ जाय। वहाँसे चलकर वह उस स्थानपर पहुँचा कि जहाँ कदलीके तोरणोंका घर बना हुआ था। वहाँ यत्र-तत्र चंदनके पंककी वेदियाँ बनी थीं। श्वेत कमलकी कलियोंसे बनी घण्टिकायें लटकी थीं। प्रफुल्लित सिन्दुवार-कुसुमकी मंजरियोंके चमर चल रहे थे। मल्लिकाकी मोटी-मोटी कलियोंसे बने बड़े-बड़े हार लटके हुए थे। लवङ्गके पत्तोंको मिलाकर चंदनपत्रकी मालायें बँधी थीं। कुमुदपुष्पोंके हारोंकी ध्वजायें फहरा रही थीं। हाथमें मृणालकी छड़ी लिये और फूलोंके बने सुन्दर आभूषण पहने वसंतलक्ष्मीकी प्रतिमा जैसी दीखती हुई बहुतेरी द्वारपालिकायें द्वारपर खड़ी थीं। उस कदली-तोरणतलसे आगे बढ़ा तो उसने देखा कि कहीं दोनों तटोंपर तमालपत्रसे बनी वनराजि तथा कुमुदरजरूपी रेत बिछे तटवाली ऐसी नदियाँ विद्यमान हैं कि जिनमें चंदनरसकी धारा बहा करती है। कहीं बेंतकी मञ्जरीके बने लाल चमरयुक्त एवं जलसे आर्द्र चँदोवेके नीचे सिंदूरसे रंगी हुई जमीनपर रक्तकमलकी शय्या बिछी हुई है। कहीं-पर केवल स्पर्शसे ही अनुमान करने योग्य स्फटिकमणिनिर्मित दीवारोंवाले घरमें इलायचीके रसका छिड़काव हो रहा है। कहीं सिरीषकी केसरयुक्त नयी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लानां मृणालधारागृहाणां शिखरमारोप्यमाणानां धाराकदम्बधूलिधूसरितानि यन्त्रमयूरकाणां कादम्बकानि, क्वचित्सहकाररससिक्तैर्जम्बूपल्लवैराच्छाद्यमानाभ्यन्तराः पर्णशालाः, क्वचित्क्रीडितकृत्रिमकरिकलभयूथकाकुलीक्रियमाणाः काञ्चनकमलिनीकाः, क्वचिद्गन्धोदककूपेषु बद्धकांचनसुधापङ्कामपीठेषु स्थूलबिसलतादण्डघटिततारकाणि क्तकेतकदलद्रोणिकानि कुवलयावलीरज्जुभिर्ग्रथ्यमानानि पत्रपुटघटीयन्त्रकाणि, क्वचित्स्फटिकबलाकावलीवान्तवारिधारा लिखितेन्द्रायुधाः संचार्यमाणमायामेघमालाः, क्वचिदुपान्तरूढयवांकुरासु तरत्तरुणमालतीकुड्मलदन्तुरिततरङ्गासु हरिचन्दनद्रववापिकासु शिशिरीक्रियमाणा हारयष्टीः, क्वचिन्मुक्ताफलक्षोदरचितालवालकाननवरतस्थूलजलविन्दुदुर्दिनमुत्सृजतो यन्त्रवृक्षकान्, क्वचिद्विधुतपक्षनिक्षिप्तसीकरानीतनीहारा भ्रमन्तीर्यन्त्रमयीः पत्रशकुनिश्रेणीः, क्वचिन्मधुकरकिङ्किणीपंक्तिपटुतरावध्य-

---

घासोंकी भूमि तथा मृणालनिर्मित फोहारोंके सिरेपर विद्यमान जलधाराओंकी फूहियोंसे धुँधले यंत्रनिर्मित मयूरोंका समूह खड़ा है। कहीं आमके रसमें तर करके जामुनके पत्तोंसे ढँके भीतरी भागवाली पर्णशालायें विद्यमान हैं। कहीं यंत्रनिर्मित कृत्रिम (बनावटी) हाथीके बच्चे खेलवाड़ करके स्वर्णकमलिनियोंको व्याकुल कर रहे हैं। कहीं सोनेके चूनेसे बने चौतरेवाले तथा सुगन्धित जलसे भरे कुओंपर पत्रपुटके रहट लगे हैं। उन रहटोंके अरे मोटे-मोटे मृणालदण्डके हैं, डोलें केतकीकी पत्तियोंकी हैं और वें कुवलयावलीकी रस्सियोंसे बँधी हैं। कहीं स्फटिक मणिके बने बगुलेके मुखसे जलकी धारायें निकलती हैं और वे इन्द्रधनुषसे चित्रित कृत्रिम मेघमालाओंके रूपमें परिणत होकर मँडराने लगती हैं। कहीं जिनके किनारोंपर श्वेतयवांकुर उगे थे और तरंगें मालतीकी नूतन कलिकाओंके कारण ऊँची-नीची दीखती थीं, इस तरहकी हरिचन्दनके रससे भरी बावलियोंमें परिचारिकायें हाररूपिणी लतायें ठंढी कर रही थीं और कहीं बनावटी पेड़ सरीखे फोहारे लगे थे। कहीं मोतियोंके चूर्णसे वृक्षोंके थाले बने थे और उन वृक्षोंसे निरन्तर जलकी बड़ी-बड़ी बूँदें टपक-टपककर सदा बरसात बनाये रहती थीं। कहीं फड़फड़ाते हुए पखनों द्वारा उड़ी हुई जलबिन्दुओंसे ओस उत्पन्न करके घूमते हुए यंत्रनिर्मित पक्षियोंकी पंक्ति विद्यमान थी। कहीं फूलोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मानाः कुसुमदामदोलाः, क्वचिदुदरारूढनिर्गतोत्तालनलिनीछदाच्छादितमुखान्प्रवेश्यमानाञ्शातकुम्भान् क्वचिद्घटितकदलीगर्भस्तम्भदण्डानि बध्यमानानि चारुवंशाकृतीनि कुसुमस्तबकातपत्राणि, क्वचित्करमृदितकर्पूरपल्लवरसेनाधिवास्यमानानि बिसतन्तुमयान्यंशुकानि, क्वचिल्लवलीफलद्रवेणार्द्रीक्रियमाणांस्तृणशूकमञ्जरीकर्णपूरान्, क्वचिदम्भोजिनीदलव्यजनैर्वीज्यमानानुपलभाजनभाजः शीतौषधिरसानन्यांश्चैवंप्रकाराञ्शिशिरोपचारोपकरणकल्पनाव्यापारान्परिजनेन कृतान्क्रियमाणांश्च वीक्षमाणो हिमगृहकस्य मध्यभागं हृदयमिव हिमवतः, जलक्रीडागृहमिव प्रचेतसः, जन्मभूमिमिव सर्वचन्द्रकलानाम्, कुलगृहमिव सर्वचन्दनवनदेवतानाम्, प्रभवमिव सर्वचन्द्रमणीनाम्, निवासमिव सर्वमाघमासयामिनीनाम्, संकेतसदनमिव सर्वप्रावृषाम्, ग्रीष्मोष्मापनोदोद्देशमिव सर्वनिम्नगानाम्, वडवानलसंतापापनोदननिवासमिव

बने ऐसे झूले पड़े थे कि जिनपर गुंजार करता हुआ भौंरोंका झुण्ड उस झूलेकी घटियोंकी जैसा दीख रहा था। कहीं कुछ व्यक्ति ऐसे सुवर्णघट लिये हुए चले जा रहे थे कि जिनके मुख भीतर उगकर बाहर निकले उच्च दण्डवाले कमलपत्रोंसे आच्छादित थे। कहीं केलेके खम्भेके भीतरी भागसे निर्मित बाँस जैसे खम्भोंपर फूलोंकी छतरियाँ बँधी थीं। कहीं हाथसे मलकर निचोड़े हुए कर्पूरपल्लवके रससे मृणालतन्तुके बने वस्त्र सुगन्धित किये जा रहे थे। कहीं लवलीफलके रसमें मल्लिकाकी मंजरीके बने कर्णपूर भिगोये जा रहे थे। कहीं कमलिनीके पत्तोंके पंखेसे पत्थरके बर्तनमें भरे शीतल औषधिरसपर हवाकी जा रही थी। इसी तरह अनेकानेक शीतोपचारके उपकरण तैयार करनेमें परिजनगण व्यस्त थे। उनमें बहुतेरी सामग्रियाँ तैयार हो चुकी थीं और बहुत-सी तैयार हो रही थीं। उनको देखता हुआ चन्द्रापीड उस हिमगृहमें जा पहुँचा, जहाँका बिचला भाग जैसे साक्षात् हिमालयका हृदय था। जैसे वह वरुणका जलक्रीडाघर था। जैसे वह चन्द्रमाकी समस्त कलाओंका जन्मस्थान था। जैसे वह समग्र चन्दनवनके देवताओंका कुलभवन था। जैसे समस्त चन्द्रमणियोंका उद्भवस्थल था। जैसे माघमासकी समस्त रात्रियोंका निवासस्थान था। वह जैसे समस्त वर्षाऋतुओंका संकेतस्थान था। जैसे समस्त नदियोंका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वसागराणाम्, वैद्युतदहनदाहप्रतीकारस्थानमिव सर्वजलधराणाम्, इन्दुविरहदुःसहदिवसातिवाहनस्थानमिव कुमुदिनीनाम्, हरहुताशननिर्वाणक्षेत्रमिव मकरध्वजस्य, दिनकरकरैरपि सर्वतो जलयन्त्रधारासहस्रसमुत्सारितैरतिशीतस्पर्शभयनिवृत्तैरिव परिहृतम्, अनिलैरपि कदम्बकेसरोत्करवाहिभिः कण्टकितैरिवानुगतम्, कदलीवनैरपि पवनचलितदलैर्जाड्यजनितवेपथुभिरिव परिवारितम्, अलिभिरपि कुसुमामोदमदमुखरैरावद्धदन्तवीणैरिव वाचालितम्, लताभिरपि मधुकरपटलजटिलाभिर्गृहीतनीलप्रावरणकाभिरिव विराजितमाससाद। क्रमेण च तत्रान्तर्बहिश्चातिवहलेन पिण्डहार्येणेवोपलिप्यमानोऽतिशीतलेन स्पर्शेनात्मन्यतात्मनो मनश्चन्द्रमयं कुमुदमयानीन्द्रियाणि ज्योत्स्नामयान्यङ्गानि मृणालिकामयीं धियम्। अगणयच्च हारमयानर्ककिरणांश्चन्दनमयमातपं कर्पूरमयं पवनमुदकमयं कालं तुषारमयं त्रिभुवनम्।

ग्रीष्मकालीन ताप नष्ट करनेका स्थान था। जैसे वह सभी समुद्रों तथा वडवानलकी गर्मी निवारण करनेके लिए निश्चित आवास था। जैसे वह बिजलीकी आगसे जलते हुए मेघोंकी दाह दूर करनेका स्थान था। जैसे वह हिमगृह चन्द्रविरहके दुःसह दिवस बितानेके निमित्त कुमुदिनीका शान्तिप्रद स्थल था और जैसे शंकरजीकी नेत्राग्निसे जलते हुए कामदेवके तनमें लगी आग बुझानेका केन्द्र था। चारों ओर नित्य हजारों फोहारे चलते रहनेके कारण उस अत्यन्त ठंढी जगहपर जानेमें जैसे शीत लग जानेके भयवश सूर्यकी किरणें भी उससे दूर ही रहती थीं। कदम्बकी केसरराशिका वहन करनेवाली वायु भी जैसे वहाँ पहुँचकर शीतके कारण रोमांचित हो जाती थी। चारों ओर लगे कदलीवनके पत्ते जब वायुके झोंकेसे हिलने लगते थे, तब ऐसा लगता था कि जैसे वे जाड़ेसे काँप रहे हों। फूलोंका सुगन्धित रस पीकर मतवाले भौंरे भी जैसे गुंजारके बहाने जाड़ेसे दाँत कटकटाते थे। सर्वदा मँडराते हुए भौंरोंके झुण्डके बहाने वहाँकी लतायें भी जैसे ठंढकसे बचनेके लिए काले कंबल ओढ़े रहती थीं। इस तरह वहाँ पहुँचकर चन्द्रापीड बाहर-भीतरसे उस पिण्डीभूत अत्यधिक शीतल संस्पर्शसे अनुलिप्त होकर अपने मनको चन्द्रमय, अपनी इन्द्रियोंको कुमुदमय, अङ्गोंको ज्योत्स्नामय, बुद्धिको मृणालमय, सूर्यकी किरणोंको हारमय, उसकी धूपको चन्दनमय, वायु-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवंविधस्य च तस्यैकदेशे सखीकदम्बकपरिवृताम्, अशेषसरित्परिवारामिव भगवतीं गङ्गां हिमवतो गुहातलगताम्, कुल्याभ्रमिभ्रमितेन कर्पूररसस्रोतसा कृतपरिवेषाया मृणालदण्डमण्डपिकायास्तले कुसुमशयनमधिशयानाम्, हाराङ्गदवलयरसनानूपुरैर्मृणालमयैर्निगडैरिव संयतामीर्ष्यया मन्मथेन, चन्दनधवले स्पृष्टामिव ललाटे शशलाञ्छनेन, बाष्पवारिवाहिनि चुम्बितामिव चक्षुषि वरुणेन, वर्धितनिःश्वासमरुति दष्टामिव मुखे मातरिश्वना, संतापप्रतप्तेष्वध्यासितामिवाङ्गेष्वनङ्गेन, कंदर्पदाहदीपिते गृहीतामिव हृदये हुतभुजा, स्वेदिनि परिष्वक्तामिव वपुषि जलेन, दैवतैरपि विलुप्यमानसौभाग्यामिव सर्वशः, हृदयेन सह प्रियतमसमीपमिवोपगतैरङ्गैरुपजनितदौर्बल्याम्, आश्यानचन्द-

---

को कर्पूरमय, कालको जलमय तथा समस्त त्रिलोकीको तुषारमय मानने लगा।

इस प्रकारके उस हिमगृहके एक भागमें चन्द्रापीडने सखियोंके समुदायसे घिरी हुई कादम्बरीको देखा। उस समय वह ऐसी लग रही थी कि जैसे सारी नदियोंका परिवार लेकर भगवती गंगा हिमालयके ऊपरसे उतरकर नीचेकी कन्दरामें चली आयी हों। उस स्थानपर एक मृणालदण्डनिर्मित मण्डपिका थी। उसीमें पुष्पोंकी शय्यापर वह लेटी हुई थी। मण्डपिकाके चारों ओर एक छोटीसी कृत्रिम नदीकी तरह कपूरके रसका प्रवाह बह रहा था। हार, अंगद (बाजूबन्द), कंकण करधनी और नूपूरके ब्याजसे जैसे कामदेवने ईर्ष्यावश उसे मृणालकी शृंखलासे जकड़ लिया था। उसके चंदनचर्चित धवल मस्तकका जैसे चन्द्रमा स्पर्श कर रहा था। निरंतर आँसू बहानेवाले उसके नेत्रोंका जैसे स्वयं वरुणदेव चुम्बन कर रहे थे। उत्तरोत्तर बढ़ते हुए निःश्वासयुक्त उसके मुखपर जैसे वायुने दन्तक्षत किया था। संतापसे तप्त उसके अंगोंपर जैसे सूर्यने अड्डा जमा रक्खा था। कामाग्निसे धधकते हुए उसके हृदयमें जैसे अग्निदेव प्रविष्ट हो चुके थे। उसके पसीनाभरे शरीरको जैसे जल आलिंगित किये हुए था। इस प्रकार जैसे देवताओंने ही उसका सौभाग्य सर्वथा अपहृत कर लिया था। जैसे हृदयके साथ-साथ उसके सब अंग भी प्रियतमके पास चले गये थे और इसी कारण वह बहुत दुर्बल हो गयी थी। तनिक सूखे चंदनके लेपसे श्वेतताको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नपाण्डुरं च रोमाञ्चमनवरतहारस्पर्शलग्नं मुक्ताफलकिरणपुञ्जमिवोद्वहन्तीं स्वेदसीकरिणीं च कपोलपालीम्, पक्षपवनेन वीजयद्भिरनुकम्प्यमानामिवावतंसमधुकरैः अवतंसमधुकररवदहनदग्धमिव श्रोत्रमपाङ्गनिर्गतेनाश्रुस्रोतसा सिञ्चन्तीम्, अतिप्रवृत्तस्य चाश्रुणो निर्वाहप्रणालिकामिव कर्पूरकेतकीकलिकां कर्णे कलयन्तीम्, आयतश्वासविधुतितरलितेन च संतापभयपलायमानेन देहप्रभावितानेनेवांशुकेन विमुच्यमानकुचकलशाम्, आपत्प्रचलचामरप्रतिबिम्बं च कुचकलशयुगलं प्रियान्तिकगमनौत्सुक्यकृतपक्षमिव करतलेन निरुन्धन्तीम्, मुहुर्मुहुर्भुजलतया तुषारशिलाशालभञ्जिकामालिङ्गन्तीम्, मुहुः कपोलफलकेन कर्पूरपुत्रिकामाश्लिष्यन्तीम्, मुहुश्चरणारविन्देन चन्दनपङ्कप्रतियातनामामृशन्तीम्, स्तनसंक्रान्तेनात्ममुखेनापि कुतूहलिनेव परिवृत्य विलोक्यमानाम्, कर्णपूरपल्लवेनापि स्वप्रतिबिम्बशायिना सोत्कण्ठेव चुम्ब्यमा-

---

प्राप्त उसके रोमांचसे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे निरंतर मुक्ताहारके संस्पर्शसे उनमें मोतियोंकी दीप्ति चिपक गयी हो। कानोंमें पहने गये पुष्पनिर्मित आभूषणोंपर मँडरानेवाले भौंरे जैसे अपने पंखसे हवा करके उसके पसीनेसे तर कपोलको आराम देनेकी कृपा कर रहे थे। पुष्पमय कर्णाभूषणोंपर आकृष्ट भौंरोंकी गुंजाररूपी आगसे जैसे उसका कान जला जा रहा था। अतएव वह आँखके कोनेसे निकलते आँसूकी धारा द्वारा सिंचित करके उसे ठंढा कर रही थी। आँखोंमें अत्यधिक बहते हुए आँसुओंको बहानेकी नाली बनानेके लिए ही जैसे उसने अपने कानोंमें सफेद केतकीकी कली पहन रक्खी थी। अत्यधिक संतापके भयसे जैसे उसकी देहप्रभाका पुंज भाग रहा हो, इस प्रकार लंबी साँसोंसे काँपनेके कारण उसके वस्त्र चंचल होकर बार-बार स्तनकलशसे खिसक जाया करते थे। हिलनेवाले चमरके प्रतिबिम्बके बहाने उसके स्तनकलश जैसे पंख लगाकर प्रियतमके पास उड़ जानेको उत्सुक हो रहे थे। इसीलिए उसने उन दोनोंको हाथसे पकड़कर दबा रक्खा था। वह वह बार-बार तुषारशिला (बर्फ) की बनी पुतलियोंका आलिंगन कर रही थी। बार-बार वह अपने कपोलोंपर कपूरकी पुतलियोंका स्पर्श कराती थी। अपने चरणकमलोंसे वह बार-बार चंदनपंककी बनी प्रतिमाका स्पर्श करती थी। स्तनपर प्रतिबिम्बित अपना मुख भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नकपोलफलकाम्, हारैरपि मुक्तात्मभिर्मदनपरवशैरिव प्रसारितकरैरा- लिङ्ग्यमानाम्, मणिदर्पणमुरसि निहितं नोदितव्यमेतदिति जीवि- तस्पर्शमयं शपथं शशिनमिव कारयन्तीम्, करिणीमिव संमुखागतप्रम- दवनगन्धवारणप्रसारितकराम्, प्रस्थितामिवानभीष्टदक्षिणवातमृगाग- मनाम्, मदनाभिषेकवेदिकामिव कमलावृतचन्दनधवलपयोधरकलशा- वष्टब्धपार्श्वाम्, आकाशकमलिनीमिव स्वच्छाम्बरतलदृश्यमानमृणाल- कोमलोरुमूलाम्, कुसुमचापलेखामिव मदनारोपितगुणकोटिकान्तन- राम्, मधुमासदेवतामिव शिशिरहारिणीम्, मधुकरीमिव कुसुममार्ग-

---

जैसे कुतूहलपूर्ण होकर बार-बार उसको देखता था। उसके कर्णपूरका पल्लव भी जैसे उत्कंठित हो और अपने प्रतिबिम्बरूपी पल्लवमें बैठकर उसके कपोल- फलकका चुम्बन कर रहा था। मोतियोंका हार भी जैसे कामातुर होकर अपना कर (किरण अथवा हाथ) फैलाकर उसका आलिंगन करता था। वह अपनी छातीपर मणिदर्पण रख और आकृतिसमताके कारण उसको चन्द्रमा मानकर उसे अपने जीवनकी शपथ दिलाती थी कि आज तुम मत उदित होना। जैसे हथिनी मतवाले वनैले हाथीको देखकर अपनी सूँड़ फैला देती है, उसी प्रकार कादम्बरीने सामनेसे आती हुई प्रमदवनकी सुगन्धिको रोकनेकी इच्छासे अपने हाथ फैला रक्खे थे। जैसे यात्राको प्रस्थित यात्रीके लिए दक्षिण ओरसे आनेवाला वातप्रमी नामका मृग हितकर नहीं होता, उसी प्रकार कादम्बरी- को दक्षिणी वायु नहीं भाती थी। जैसे कामदेवके स्नान करनेकी चौकीपर चंदनघुले सफेद पानीसे भरे कलश रक्खे हुए हों, उसी प्रकार कादम्बरीके कलशसदृश सुन्दर स्तनपर चन्दन लगा हुआ था। जैसे निर्मल आकाशमें आकाशगंगासे उत्पन्न कमलिनीके कोमल मृणाल दिखायी देते हैं, उसी प्रकार कादम्बरीके निर्मल वस्त्रके नीचे मृणाल सदृश कोमल ऊरुमूल दिखायी दे रहे थे। जैसे कामदेव द्वारा डोरी चढ़ायी जानेपर धनुषका अग्रभाग बड़ा सुन्दर लगता है, उसी प्रकार कादम्बरी भी अपने युवावस्थादि बहुतेरे गुणोंके कारण बड़ी सुन्दर दीख रही थी। जैसे वसन्तकी देवी शिशिर ऋतुका अप- हरण कर लेती है, उसी प्रकार कादम्बरी शीतल हार धारण किये हुए थी। जैसे भ्रमरी फूलोंकी खोजमें व्यग्र रहती है, उसी प्रकार कादम्बरी भी कामदेवके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णाकुलाम्, चन्दनविलेपनामनङ्गरागिणीं च बालां मन्मथजननीं च मृणालिनीमभ्यर्थिततुषारस्पर्शां च कादम्बरी व्यलोकयत्।

अथ सा यथादर्शनमागत्यागत्य चन्द्रापीडागमनमावेदयन्तं परिजनमुत्तरलतारकेण चक्षुषा विलोक्य 'कथय। किं सत्यमागतो दृष्टस्त्वया। कियत्यध्वनि क्वासौ' इति प्रतिमुखं निक्षिप्तनामाक्षरं पप्रच्छ। प्रवर्धमानधवलिम्ना चक्षुषा दृष्ट्वा च संमुखमापतन्तं दूरादेव वरारोहा, नवग्रहा करिणीवोरुस्तम्भविधृता, विचेष्टमानाङ्गी, कुसुमशयनपरिमलोपगतैः परवशा मुखरैर्मधुकरकुलैरिवाच्छाद्यमाना, संभ्रमच्युतोत्तरीयका हारकिरणानुरसि कर्तुमिच्छन्ती, मणिकुट्टिमनिहितेन वामकरतलेन हस्तावलम्बनं निजप्रतिमामिव याचमाना, स्रस्तकेश-

---

बाणोंकी मारसे व्यग्र थी। भली भाँति अंगराग (चंदनलेप) से युक्त होनेपर भी वह अनंगरागिणी (चन्दनके लेपसे विहीन अथवा अनंगरागिणी अर्थात् कामदेवसे प्रीति करनेवाली) थी। बाला (कन्या) होनेपर भी मन्मथ (कामविकार) की जननी थी। मृणालधारिणी होती हुई भी वह तुषारस्पर्श सदृश शीतलता चाहती थी। इस प्रकारकी कादम्बरीको चंद्रापीडने हिमगृहमें देखा।

तदनन्तर एकके बाद एक परिजन चंद्रापीडके आगमनकी सूचना देनेके लिए ज्यों ज्यों उसके सामने जाते, त्यों त्यों वह हर एकके मुखपर पड़नेवाले चपल पुतलीयुक्त नेत्रसे ही बिना बोले मूक प्रश्न करती थी—'कहो, क्या सचमुच वे आ गये? तुमने उनको देखा है? अभी कितनी दूर हैं?' किन्तु उसी समय जब उसने अपने अत्यधिक धवल नेत्रोंसे उसे स्वयं सम्मुख आते देखा तो जैसे उसकी आँखें उसके मुखपर जाकर सँट गयीं। ऐसी आँखोंमें आकृष्यमाण होती हुई वह वरारोहा पुष्पशय्यासे उठ बैठी। जैसे तत्काल पकड़ी हुई हथिनी विशाल स्तम्भमें बँधकर छटपटाती है, उसी प्रकार कादम्बरी अपने विशाल नितम्बभारसे चलनेमें असमर्थ होकर केवल अंगोंका संचालन करती थी। पुष्पशय्याकी सुगन्धिके लिए आये हुए गुञ्जार करनेवाले भौंरोंने जैसे उसे बरबस घेर लिया था। घबराहटमें गिरी हुई ओढ़नीके बदले वह हारकी किरणोंसे अपनी छाती ढाँकनेका प्रयास कर रही थी। मणिजटित फर्शपर रक्खी बायीं हथेलीको फैलाकर जैसे वह अपनी प्रतिमासे सहारा देनेकी प्रार्थना कर रही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलापसंयमनश्रमितेन गलत्स्वेदसलिलेन दक्षिणकरेण समभ्युक्ष्येवा-त्मानमर्पयन्ती, चलितत्रिकताम्रत्रिवलीतरङ्गितरोमराजितया निष्पीड्य-मानेव सर्वरसाननङ्गेन, अन्तःप्रविष्टललाटिकाचन्दनरसमिश्रमिव चक्षुषा क्षरन्ती शिशिरमानन्दजलम्, आनन्दवारिबिन्दुवेणिकया चलि-तावतंसधूलिधूसरं प्रियप्रतिमाप्रवेशलोभेनेव कपोलफलकं प्रक्षालयन्ती, ललाटिकाचन्दनभरेणेव किंचिदधोमुखीं तत्क्षणमपाङ्गभागयुञ्जिततार-कया तन्मुखलग्नयेव दीर्घया दृष्ट्याकृष्यमाणा कुसुमशयनादुत्तस्थौ ।

चन्द्रापीडस्तु समुपसृत्य पूर्ववदेव तां महाश्वेताप्रणामपुरःसरं दर्शितविनयः प्रणनाम । कृतप्रतिप्रणामायां च तस्यां पुनस्तस्मिन्नेव कुसुमशयने उपविष्टायां प्रतीहार्योपनीतां जांबूनदमयीमासन्दिकां रोचि-ष्णुरत्नप्रत्युप्तपादां पादेनैवोत्सार्य क्षितावेवोपाविशत् । अथ केयूरकः 'देवि, देवस्य चन्द्रापीडस्य प्रसादभूमिरेषा पत्रलेखा नाम ताम्बूलकर-

---

थी । बार-बार खुल जानेवाले केशोंको बाँधनेके परिश्रमसे थके हुए दाहिने हाथसे टपकते हुए पसीने द्वारा प्रोक्षण करके जैसे वह आत्मदान कर रही थी। पीठकी रीढ़ मोड़नेपर त्रिवली सिकुड़ने और लोमसमूहके तरंगित हो जानेपर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे कामदेव उसकी देहका सारा रस निचोड़े ले रहा था । ललाटमें लगे चन्दनका रस नेत्रोंके भीतर जाकर आँसुओंमें मिलता था और आँखोंकी राह आनंदाश्रु बनकर बाहर निकल रहा था । आनंदाश्रुकी बूँदोंके बहावसे वह जैसे चञ्चल कर्णपूरकी रज पड़नेके कारण धुँधले कपोलको प्रणयीका प्रतिबिम्ब भली भाँति प्रविष्ट होने देनेके लोभवश धोकर साफ कर रही थी।मस्तकपर लगे चन्दनतिलकके भारसे जैसे उसका मुख कुछ नीचे हो गया था । अतएव वह अपने नेत्रोंकी पुतलियोंको आँखके एक कोनेमें करके चन्द्रापीडको निहारती हुई पुष्पशय्यासे उठ बैठी ।

अब चन्द्रापीडने आगे बढ़कर पहले ही की तरह सर्वप्रथम भगवती महा-श्वेताको और उसके बाद कादम्बरीको सविनय प्रणाम किया । जब कादम्बरी भी प्रतिप्रणाम करके उसी पुष्पशय्यापर बैठ गयी, तभी प्रतीहारी दौड़कर एक सुनहली कुर्सी उठा लायी । उसके पावोंमें चमकीले रत्न जड़े थे । किन्तु उसे पैरसे हटाकर वह भूमिपर ही बैठा।तभी केयूरकने कादम्बरीसे कहा—'देवि !

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ङ्कवाहिनी' इत्यभिधाय पत्रलेखामदर्शयत्। अथ कादम्बरी दृष्ट्वा ताम् 'अहो, मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः' इति चिन्तयाम्बभूव। कृतप्रणामां च तां सादरम् 'एह्येहि' इत्यभिधायात्मनः समीपे सकुतूहलपरिजन-दृश्यमानां पृष्ठतः समुपावेशयत्। दर्शनादेवोपारूढप्रीत्यतिशया च मुहुर्मुहुरेनां सोपग्रहं करकिसलयेन पस्पर्श। चन्द्रापीडस्तु सपदि कृत-सकलागमनोचितोपचारस्तदवस्थां चित्ररथतनयामालोक्याचिन्तयत्—'अतिदुर्विदग्धं हि मे हृदयमद्यापि न श्रद्दधाति। भवतु। पृच्छामि तावदेनाम्' इति निपुणालापेनातिप्रकाशमब्रवीत्—'देवि, जानामि काम-रतिं निमित्तीकृत्य प्रवृत्तोऽयमविचलसंतापतन्त्रो व्याधिः। सुतनु, सत्यं न तथा त्वामेष व्यथयति यथास्मान्। इच्छामि देहदानेनापि स्वस्था-मत्रभवतीं कर्तुम्। उत्कम्पिनीमनुकम्पमानस्य कुसुमेषुपीडया पतिताम-

---

यह पत्रलेखा युवराज चन्द्रापीडकी प्रेमपात्री ताम्बूलवाहिनी है।' ऐसा कहकर उसने पत्रलेखाको दिखाया। उसे देखकर कादम्बरीने सोचा—'अहो! मानव-जातिकी नारियोंपर विधाताका इतना बड़ा पक्षपात!' जब पत्रलेखाने प्रणाम किया, तब बड़े आदरके साथ 'आओ-आओ' कहकर उसे अपने पास पीछेकी ओर बैठा लिया। यह देखकर अन्यान्य दासियाँ चकरा गयीं। किन्तु देखते ही अत्यधिक प्रीति हो जानेके कारण वह बार-बार बड़े प्रेम और आग्रहके साथ उसके शरीरपर अपना हाथ फेरने लगी। इस प्रकार जब आगमनोपयोगी सब उपचार सम्पन्न हो गये। तब चन्द्रापीड कादम्बरीकी यह दशा देखकर सोचने लगा—'मेरा अतिशय मूर्ख मन अब भी इसके प्रेमपर विश्वास नहीं करता। अच्छा, लाओ युक्तिपूर्वक इसीसे पूछूँ।' यह सोचकर वह बड़ी निपु-णतापूर्वक बोला—'देवि! मैं जानता हूँ कि आपमें किस अकथनीय वस्तुके अभाव (अर्थान्तर—कामरति अर्थात् कामजनित अनुराग) वश यह व्याधि उत्पन्न हुई है और जिसके कारण आपका सन्ताप उग्र हो उठा है। हे सुतनु! आप सच मानिए। यह आपको उतना दुःख नहीं देता, जितना कि हमें सताता है। अतएव मैं अपने शरीरका दान करके भी आपको स्वस्थ करना चाहता हूँ। आपको काँपती देखकर मुझे भी अनुकम्पन (कम्प अथवा कृपा) होने लगता है। कुसुमोंकी शय्यापर कामबाणसे पीडित (कामसे पीडित)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेक्षमाणस्य पततीव मे हृदयम्। अनङ्गदे तनुभूते ते भुजलते गाढसन्तापतया च दृष्टया वहसि स्थलकमलिनीमिव रक्ततामरसाम्। दुःखितायां च त्वयि परिजनोऽपि चानवरतकृताश्रुबिन्दुपातेन वर्तते। मुक्ताभरणतां गृहाण। स्वयं वरार्हाणि प्रसाधनानि। कुसुमशिलीमुखान्तर्हिता शोभते यथा लता' इति। अथ कादम्बरी बालतया स्वभावमुग्धापि कंदर्पेणोपदिष्टयेव प्रज्ञया तमशेषमस्याव्यक्तव्याहारसूचितमर्थं मनसा जग्राह। मनोरथानां तु तावतीं भूमिमसंभावयन्ती शालीनतां चावलम्बमाना तूष्णीमेवासीत्। केवलमुत्पादितान्यव्यपदेशा तत्क्षणं तमाननामोदमधुकरपटलान्धकारितं मुखं द्रष्टुमिव स्मितालोकमकरोत्।

ततो मदलेखा प्रत्यवादीत्—'कुमार, किं कथयामि दारुणोऽयमकथनीयः खलु संतापः। अपि च कुमारभावोपेतायाः किमिवास्या

आपको देखकर जैसे मेरा हृदय बाहर निकला पड़ता है। आपके अनंगद (बिना बाजूबन्दके अथवा मदजनक) हाथ बहुत ही कृश हो गये हैं। अतिशय तीव्र सन्तापसे संतप्त आपकी आँखे जैसे रक्ततामरस (लाल कमल अथवा नीरस प्रेम) युक्त स्थलकमलिनीका अनुकरण कर रही हैं। अब आप प्रसन्न मनसे मोतियोंके आभूषण धारण करें। स्वयं वरके (अपनी पसन्दके आभूषण अथवा अपने पतिको लुभानेके) योग्य करिए। क्योंकि लता पुष्पों तथा भ्रमरोंसे ही शोभित होती है। यद्यपि कादम्बरी कुमारी कन्या होनेके नाते मुग्धा थी। फिर भी जैसे कामदेवने उसे सिखा दिया हो, इस प्रकार राजकुमारके ढँपे अर्थ युक्त वचनोंका मतलब समझ गयी। किन्तु अपनी कामनापूर्तिकी विशेष संभावनाको असम्भव जानकर लज्जित भावसे चुप रह गयी। उस समय किसी दूसरे बहानेसे वह मुखसुगन्धिकी ओर आकृष्ट होकर मँडराते हुए भौरोंसे ढँके हुए चन्द्रापीडका मुख देखनेके लिए मन्द-मन्द मुसकाने लगी।

तनिक देर बाद मदलेखा बोली—'राजकुमार! मैं क्या बताऊँ, इनका संताप बड़ा दारुण और अनिर्वचनीय है। और फिर ये अति कुमारभावयुक्त (पापी कामदेवकी भावनायुक्त अथवा आपमें तन्मय) हैं। तब इन्हें कौन-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यन्न संतापाय। तथा हि। मृणालिन्याः शिशिरकिसलयमपि हुताशनायते। ज्योत्स्नाप्यातपायते। ननु किसलयतालवृन्तवातैर्मनसि जायमानं किं न पश्यसि खेदम्। धीरत्वमेव प्राणसंधारणहेतुरस्याः' इति। कादम्बरी तु हृदयेन तमेव मदलेखालापमस्य प्रत्युत्तरीचकार। चन्द्रापीडोऽप्युभयथा घटमानार्थतया संदेहदोलारूढेनैव चेतसा महाश्वेतया सह प्रीत्युपचयचतुराभिः कथाभिर्महान्तं कालं स्थित्वा तथैव महता यत्नेन मोचयित्वात्मानं स्कन्धावारगमनाय कादम्बरीभवनान्निर्ययौ। निर्गतं च तुरङ्गममारुरुक्षन्तं पश्चादागत्य केयूरकोऽभिहितवान्—'देव, मदलेखा विज्ञापयति—'देवी कादम्बरी खलु प्रथमदर्शनजनितप्रीतिः पत्रलेखां न निवर्त्यमानामिच्छति, पश्चाद्यास्यति' इति श्रुत्वा देवः प्रमाणम्।' इत्याकर्ण्य चन्द्रापीडः 'केयूरक, धन्या स्पृहणीया च पत्रलेखा यामेवमनुबध्नाति दुर्लभो देवीप्रसादः। प्रवेश्यताम्।' इत्य-

---

सी वस्तु संतप्त नहीं कर सकती? जैसे—कमलका शीतल पत्ता भी इन्हें आगके समान गरम लगता है। चन्द्रमाकी चाँदनी भी इनको धूपकी तरह कष्ट देती है। नवपल्लवोंका पंखा करनेसे भी इन्हें कितनी पीडा होती है, इसे क्या आप नहीं देखते? एकमात्र धैर्य ही किसी तरह इनके प्राणोंकी रक्षा कर रहा है।' यह कहकर मदलेखा तो चुप हो गयी, किन्तु कादम्बरीने अपने हृदयसे उसके कथनका समर्थन किया। मदलेखाकी बातें द्व्यर्थक थीं। अतएव चन्द्रापीडका मन सन्देहमें पड़ गया। फिर भी वह बड़ी देरतक महाश्वेताके साथ प्रेमपूर्वक बातें करता हुआ वहाँ रहा। इसके बाद बड़े प्रयत्नपूर्वक किसी तरह पीछा छुड़ाकर वह अपने शिविरको लौटनेके लिए कादम्बरीके भवनसे बाहर निकला। जब वह घोड़ेपर सवार हो रहा था, उसी समय केयूरकने आकर कहा—'देव! मदलेखा कहती है कि देवी कादम्बरी पहली ही बार पत्रलेखाको देखकर उससे स्नेह करने लगी हैं। अतएव वे चाहती हैं कि आप उसे यहीं छोड़ जायँ, वह बादमें जायगी। 'इसे सुनकर' उनकी जैसी इच्छा हो, वैसा करें।' चन्द्रापीडने कहा—'केयूरक! पत्रलेखा धन्य और स्पृहणीय है। क्योंकि उसे देवी कादम्बरीकी दुर्लभ कृपा प्राप्त हुई है। अतएव इसे भीतर ले जाओ।' इतना कहकर वह चल पड़ा और अपने शिविरमें जा पहुँचा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिधाय पुनः स्कन्धावारमेवाजगाम। प्रविशन्नेव पितुः समीपादागतमभिज्ञाततरमालेखहारकमद्राक्षीत्। धृततुरङ्गमश्च प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा दूरादेवापृच्छत्—'अङ्ग, कच्चित्कुशली तातः सह सर्वेण परिजनेनाम्बा च सर्वान्तःपुरैः' इति। अथासावुपसृत्य प्रणामानन्तरम् 'देव, यथाज्ञापयसि' इत्यभिधाय लेखद्वितयमर्पयांबभूव। युवराजस्तु शिरसि कृत्वा स्वयमेव च तदुन्मुच्य क्रमशः पपाठ—'स्वस्त्युज्जयिनीतः सकलराजन्यशिखण्डशेखरीकृतचरणारविन्दः परममाहेश्वरो महाराजाधिराजो देवस्तारापीडः सर्वसंपदामायतनं चन्द्रापीडमुदञ्चच्चारुचूडामणिमरीचिचक्रचुम्बिन्युत्तमाङ्गे चुम्बन्नन्दयति। कुशलिन्यः प्रजाः। किं नु कियानपि कालो भवतो दृष्टस्य गतः। बलवदुत्कण्ठितं नो हृदयम्। देवी च सहान्तःपुरैर्ग्लानिमुपनीता। अतो लेखवाचनविरतिरेव प्रयाणकारणता नेतव्या' इति। शुकनासप्रेषिते द्वितीयेऽप्यमुमेवार्थं लिखितमवाचयत्। अस्मिन्नेवावसरे समुपसृत्य वैशम्पायनोऽपि लेखद्वितयमपर-

---

वहाँ पहुँचते ही उसने पिताके पाससे आये एक सुपरिचित हरकारेको उपस्थित देखा। तत्काल घोड़ा रोक तथा प्रेमप्रफुल्लित नयनोंसे निहारकर दूरसे ही पूछा—'कहो भाई! पिताजी तथा समस्त परिजनोंके साथ माताजी सकुशल हैं?' यह सुनकर दूतने युवराजको प्रणाम करके कहा—'देव! आप जैसा कह रहे हैं, सभी लोग सकुशल हैं।' यह कहकर उसने दो पत्र दिये। चन्द्रापीडने पत्रोंको माथे लगाकर अपने हाथों खोला और पढ़ने लगा। उसमें लिखा था—'स्वस्तिश्री उज्जयिनीसे समस्त राजाओंके मुकुटोंको अपनी चरणचौकी बनानेवाले, परम शैव, महाराजाधिराज देव तारापीड सर्वसम्पत्तिनिधान चन्द्रापीडके मस्तकपर फैलते हुए अपनी चूडामणिके किरणों द्वारा चुम्बित मस्तकको चुम्बनसे अभिनन्दित करके लिख रहे हैं—'पुत्र! प्रजा सर्वथा सकुशल है। तुम्हें देखे बिना बहुत दिन बीत गये। इस कारण हमारा हृदय बहुत ही उत्कण्ठित है। अन्तःपुरकी अन्यान्य महिलाओंके साथ महारानी भी बराबर खिन्न रहती हैं। अतएव यह पत्र पढ़ते ही तुम चल दो।' तदनंतर महामंत्री शुकनासका लिखा दूसरा पत्र खोलकर पढ़ा। उसमें भी वही बात लिखी थी। उसी समय वैशम्पायन भी उसके समीप जाकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मात्मीयमस्मादभिन्नार्थमेवादर्शयत्। अथ 'यथाज्ञापयति तातः' इत्युक्त्वा तथैव च तुरगाधिरूढः प्रयाणपटहमदापयत्। समीपे स्थितं च महताऽश्वीयेन परिवृतं महाबलाधिकृतं बलाहकपुत्रं मेघनादनामानमादिदेश—'भवता पत्रलेखया सहागन्तव्यम्। नियतं च केयूरकस्तामादायैतावतीं भूमिभागमिष्यतीति तन्मुखेन विज्ञाप्या प्रणम्य देवी कादम्बरी। नन्वियं सा त्रिभुवननिन्दनीया निरनुरोधा निष्परिचया दुर्ग्रहा प्रकृतिर्मर्त्यानां येषामकाण्डविसंवादिन्यः प्रीतयो न गणयन्ति निष्कारणवत्सलताम्। एवं गच्छता मयात्मनो नीतः स्नेहः कपटकूटजालिकताम्, प्रापिता भक्तिरलीककाकुकरणकुशलताम्, पातितमुपचारमात्रमधुरं धूर्ततयामात्मार्पणम्, प्रकटितं वाङ्मनसोर्भिन्नार्थत्वम्। आस्तां तावदात्मा। अस्थानाहितप्रसादा दिव्ययोग्या देव्यपि वक्तव्यतां नीता। जनयन्ति हि पश्चाद्वैलक्ष्यमभूमिपातिता व्यर्थाः प्रसादामृतदृष्टयो महताम्। न

अपना पत्र दिखाया। उसके पत्रका भी वही अर्थ था। तदनंतर 'जैसी पिताजीकी आज्ञा' यों कहकर उस घोड़ेपर बैठे ही बैठे उसने प्रस्थानकी दुंदुभी बजवा दी। पास ही महती अश्वसेनाके मध्यमें खड़े बलाहकतनय मेघनाद नामके एक बड़े सैनिक अधिकारीको आज्ञा दी—'आप पत्रलेखाको साथ लेकर लौटिएगा। केयूरक उसे यहाँ पहुँचानेके लिए अवश्य आयेगा। उसकी जबानी देवी कादम्बरीके लिए यह संदेश भेज दीजिएगा—'वस्तुतः तीनों लोकोंमें निंदनीय, अनुरोधशून्य, परिचयसे अपरिचित एवं दुर्ज्ञेय मानवी प्रकृति ही ऐसी होती है कि सहसा अकारण उत्पन्न स्नेहको भी कुछ न समझती हुई उसकी प्रीति एकाएक छिन्न-भिन्न हो जाती है। इस प्रकार एकाएक यहाँसे मेरे चले जानेपर मेरा प्रेम आपको कपटका जाल प्रतीत होगा। श्रद्धा झूठी वक्रोक्तियें कहनेकी कुशलता मान ली जायगी। मेरे आत्मसमर्पणकी बात केवल ऊपर ही ऊपर विनय एवं माधुर्य प्रकट करनेवाली धूर्तता गिनी जायगी और मेरी बात तथा हृदयमें भिन्न अर्थ दिखायी देगा। अच्छा, अब जाने दीजिये मेरी बात। एक अनधिकारी व्यक्तिपर कृपा कराके मैंने उस दिव्य तथा योग्य देवीको भी निन्दास्पद बनाया है। क्योंकि बड़ोंकी प्रसादस्वरूपा अमृतमयी दृष्टियाँ यदि अयोग्य स्थानपर पड़कर व्यर्थ हो जाती हैं तो वे उन महानुभावोंको लज्जित ही करती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

खलु तथा देवीं प्रति प्रवलज्जातिभारमन्थरं मे हृदयं यथा महाश्वेतां प्रति। नियतमेनामलीकाध्यारोपणवर्गितास्मद्गुणसंभारामस्थानपक्षपातिनोमसकृदुपालप्स्यते देवी। तत्किं करोमि। गरीयसी गुरोराज्ञा प्रभवति देहमात्रकस्य। हृदयेन हेमकूटनिवासव्यसनिना लिखितं जन्मान्तरसहस्रस्य दास्यपत्रं देव्या हस्ते न दत्तमस्याः। दैविकगौल्मिकेनेव देवीप्रसादेन गन्तुं सर्वथा गतोऽस्मि पितुरादेशादुज्जयिनीम्। प्रसङ्गतो जनकथाकीर्तनेषु स्मर्तव्यः खलु चन्द्रापीडः। चण्डालो मा चैवं मंस्थाः, यथा जीवन्पुनर्देवीचरणारविन्दवन्दनानन्दमननुभूय स्थास्यति चन्द्रापीड इति। महाश्वेतायाश्च सप्रदक्षिणं शिरसा पादौ वन्दनीयौ। मदलेखायाश्च कथनीयः प्रणामपूर्वमशिथिलः कण्ठग्रहः। गाढमालिङ्गनीया च तमालिका। अस्मद्वचनादशेषः प्रष्टव्यः कुशलं कादम्बरीपरिजनः। रचिताञ्जलिना च भगवानामन्त्रणीयो हेमकूटः' इति। एवमादिश्य तम्—

हैं। देवी कादम्बरीके प्रति मेरा हृदय लज्जाके उतने भारका अनुभव नहीं करता, जितना कि भगवती महाश्वेताके प्रति। इसका कारण यह है कि जो गुण मुझमें नहीं थे, उनको भी आरोपित करके उन्होंने मेरी प्रशंसा की थी। इस प्रकार एक अयोग्य व्यक्तिके प्रति किये गये पक्षपातके कारण देवी कादम्बरी महाश्वेताको बार-बार उलाहना देंगी। लेकिन अब मैं क्या करूँ? पिताकी महती आज्ञा शरीरपर अपनी पूर्ण प्रभुता रख सकती है। जैसे किसी लुटेरे वनचरोंके झुण्डमें पड़कर कोई अकेला व्यक्ति निकलकर भाग नहीं सकता, उसी प्रकार देवीका अनुग्रह मेरे हृदयको हटने नहीं देता। किन्तु पिताजीके आदेशानुसार मुझे उज्जयिनी जाना पड़ रहा है। अब आपसे यही अनुरोध है कि जब कभी सेवकोंकी चर्चा छिड़े तो मुझ चन्द्रापीडका भी स्मरण कर लिया करेंगी। मेरी कृतघ्नता देखकर मुझे चाण्डाल न समझ बैठें। इस बातको मनपर कदापि न लाइएगा। यदि जीवित रहा तो चन्द्रापीड देवीके चरणोंकी वन्दनाका आनन्द लिये बिना न रह सकेगा। भगवती महाश्वेताको प्रदक्षिणापूर्वक नतमस्तक चरणवन्दना कह देना। मदलेखाको प्रणामपूर्वक गाढ़ आलिंगन एवं तरलिकाको भी कसकर आलिंगनका सन्देश कहना। मेरी ओरसे कादम्बरीके समस्त परिजनोंका कुशल पूछना और हाथ जोड़कर भगवान् हेम-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'सुहृदादिसाधनमक्लेशयता शनैर्गतव्यम्' इत्युक्त्वा वैशम्पायनं स्कन्धावारभरे न्ययुंक्त। स्वयमपि च तथारूढ एव गमनहेलाहर्षहेषारवकम्पितकैलासेन खुरताण्डवखण्डितभुवा कान्तकुन्तलतावनवाहिना तरुणतुरगप्रायेणाश्वसैन्येनानुगम्यमानस्तमेव लेखहारकं पर्याणलग्नमभिनवकादम्बरीवियोगशून्येनापि हृदयेनोज्जयिनीमार्गं पृच्छन्प्रतस्थे। क्रमेण चातिप्रवृद्धप्रकाण्डपादपप्रायया, मालतीलतामण्डपैर्मण्डलिततरुखण्डया वनगजपतिपातितपादपपरिहारवक्रीकृतमार्गया, जनजनिततृणपर्णकाष्ठकोटिकूटप्रकटितवीरपुरुषघातस्थानया, महापादपमूलोत्कीर्णकान्तारदुर्गया, तृषितपथिकखण्डितदलोज्झितामलकीफलनिकरया, विकसितकरञ्जमञ्जरीरजोविच्छुरिततटैस्तटतरुबद्धपटच्चरकर्पटध्वजचिह्नैररिष्टिकास्थि—

कूटसे विदाईकी अनुमति माँगना।' उस सैन्याधिकारीको ऐसा आदेश देकर चन्द्रापीडने वैशम्पायनसे कहा—'सखे! तुम मेरे चले जानेके बाद इस प्रकार सावधानीसे धीरे-धीरे आओ कि जिससे मेरे मित्रराजाओंको कोई कष्ट न होने पाये।' ऐसा कहकर उसने सेनाका सारा भार वैशम्पायनपर डाल दिया। फिर स्वयं उसी तरह घोड़ेपर बैठा ही बैठा कादम्बरीके नववियोगसे शून्य-हृदय होता हुआ भी अपने साथ चलनेवाले पत्रवाहकसे उज्जयिनीका मार्ग पूछता हुआ चल पड़ा। प्रस्थानवेलाके हर्षसे हिनहिनाकर कैलास पर्वतको कँपाती, अपने खुरोंके निर्दय प्रहारसे धरतीको क्षत-विक्षत करती, चमचमाते भालोंकी वनलताको अपने साथ खींचती एवं बहुतेरे जवान घोड़ों युक्त अश्वसेना उसके पीछे-पीछे चल रही थी। जाते-जाते उसे रास्तेमें एक शून्य वन मिला। उसमें बहुत बड़े-बड़े और मोटे तनोंवाले वृक्ष थे। उन वृक्षोंके बीच-बीच मालतीलताके स्वाभाविक मण्डप बन गये थे। वनैले हाथियों द्वारा बड़े-बड़े वृक्ष गिरा दिये जानेके कारण रास्ता टेढ़ा-मेढ़ा हो गया था। यत्र-तत्र मनुष्योंने बहुतेरी घासों, पत्तियों तथा लकड़ियोंके ढेर लगा रक्खे थे। जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि वहाँ वीर पुरुषोंकी हत्या की जाती होगी। एक बहुत बड़े वृक्षके तनेमें वनदुर्गाकी मूर्ति उत्कीर्ण की हुई थी। प्यासे पथिकोंने आँवलेके फलका गूदा खा-खाकर जो गुठलियाँ फेंकी थीं, उनका ढेर लगा था। मार्गमें कितने ही पुरातन कुएँ दीख रखे थे। उनके किनारोंपर कंजोंकी खिली हुई मंजरीकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तशुष्कपल्लवविष्टरानुमितपथिकविश्रामैर्विश्रांतकार्पटिकस्फोटितधूलिधूसरकिसलयलांछितोपकण्ठैः पत्रसंकरासुरभीकृताशिशिरपङ्किलविवर्णास्वादुजलैर्व्रततिग्रंथितपर्णपुटतृणपूलीचिह्नानुमेयैर्जरत्कान्तारकूपैरसुलभसलिलतयानभिलषितोद्देशया, मधुबिन्दुस्यन्दिसिन्दुवारवनराजिरजोधूसरितत्तीराभिश्च कुञ्जकलताजालकैर्जटिलीकृतसैकताभिरध्वगोत्खातवालुकाकूपकोपलभ्यमानकलुषस्वल्पसलिलाभिः शुष्कगिरिनदिकाभिर्विषमीकृतान्तरालया, कुक्कुटकुलकौलेयकरटितानुमीयमानगुल्मगहनग्रामटिकया, शून्यया दिवसमटव्या गत्वा परिणतरविबिम्बे बिम्बारुणातपविसरे वासरे निःशाखीकृतकदम्बशाल्मलीपलाशबहुलैः शिखरशेषैकपल्लवविड-

---

रज बिखरी पड़ी थी। उनके आस-पासवाले वृक्षोंपर चोरों द्वारा कपड़ोंके चीथड़े ध्वजचिह्नके रूपमें बाँधे हुए थे। उनकी ईंटोंपर सूखे पत्तोंके बिछौने देखकर यह अनुमान होता था कि वहाँ बटोहियोंने विश्राम किया होगा। उन कुओंके आस-पासकी जगहें वहाँ विश्रामके लिए उतरे रक्ताम्बरधारी यात्रियोंके पाँवोंकी धूल उड़नेके कारण मलिन तरुपल्लवोंसे लांछित दीख रही थीं। विविध प्रकारकी पत्तियोंके सड़नेसे उनका पानी दुर्गन्धित, गरम, कीचड़भरा, गन्दा और स्वादहीन हो गया था। लताओंकी गाँठें दे-देकर बनाये गये पत्तोंके पात्र तथा घासोंके पूले देखकर वहाँ कूपके अस्तित्वकी पहचान हो जाती थी। किन्तु अच्छा पानी न मिलनेके कारण वह प्रदेश किसीको नहीं भाता था। बहुत-सी सूखी नदियोंके कारण उस वनका भीतरी भाग ऊँचा-नीचा हो गया था। नदियोंके पुलिन मधुबिन्दु बरसानेवाले सिन्दुवारवनकी श्रेणी द्वारा उड़ी हुई रजसे धुँधले हो गये थे। वनकी कुंजलतायें उन नदियोंकी रेती तक फैली हुई थीं। पथिकोंने उन रेतियोंमें जहाँ-तहाँ हाथसे नन्हें-नन्हें कुएँ खोदे थे। जिनमें थोड़ा-थोड़ा गन्दा पानी दीख रहा था। कहीं-कहीं मुर्गों और कुत्तोंके शब्द सुनकर अनुमान होता था कि आस-पासकी झाड़ियोंमें कहीं छोटा-मोटा गाँव है। दिनभर उस सूने जंगलमें चलते-चलते जब सूर्यमण्डल अस्तोन्मुख हो चला और दिवस रविबिम्बकी लाल धूपसे लाल हो गया, तब उसने दूरसे ही एक लाल ध्वजा फहराती देखी। उन वन्य प्रदेशमें बहुतेरे शाखाविहीन कदम्ब, सेमर एवं पलाशके वृक्ष उगे हुए थे। चोटीपर केवल एक पत्ता रहने-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

म्बितातपत्रैः पादपैरूर्ध्वस्थितप्ररोहस्थूलस्थाणुमूलग्रन्थिजटिलैश्च हरिता-लकपिलपक्ववेणुविटपरचितवृतिभिर्मृगभयकृततृणपुरुषकैर्विपाकपाण्डुभिः फलिनैः प्रियङ्गुप्रायैरटवीक्षेत्रैर्विरलीकृतवनप्रदेशे चिरप्ररूढस्य रक्तचन्द-नतरोरुपरि बद्धम्, सरसपिशितपिण्डनिभैरलक्तकैरभिनवशोणितारुणेन चार्द्रम्, जिह्वालतालोहिनीभी रक्तपताकाभिः केशकलापकान्तिना च कृष्णचामरावचूलेन प्रत्यग्रविशसितानां जीवानामिवावयवैरुपचितदण्ड-मण्डनम्, परिणतवराटकघटितबुद्बुदार्धचन्द्रखण्डचितम्, सुतमहि-परक्षणावतीर्णदिनकरावतारितशशिनेव विराजितशिखरम्, दोलायित-शृङ्गसङ्गिलोहशृङ्खलावलम्बमानघर्घररवघोरघण्टया च घटितकेसरिस-टारुचिरचामरया काञ्चनत्रिशूलिकया लिखितनभस्तलम्, इतस्ततः

के कारण वे जैसे छत्रकी विडम्बना कर रहे थे। उनमें नयी-नयी कोपलें निकल-कर ऊपरकी ओर चढ़ गयी थीं। मोटे तनोंकी जड़ोंसे वह भरा पड़ा था। हर-ताल सरीखे पीले और पके बाँसके वृक्षोंका बाड़ा बना हुआ था। मृगोंको डरानेके लिए तिनकोंके बने हुए पुतले खड़े थे। कितने ही पके, पीले और फलवान् प्रियंगुके वृक्षोंसे भरे वनक्षेत्रके कारण वह बहुत संकुचित हो गया था। एक पुराने लाल चन्दनके वृक्षपर वह ध्वजा बँधी थी। ताजे मांसपिण्ड तथा महावर सदृश गीले लाल चन्दनके लेपसे वह ध्वजा गीली हो रही थी। उस ध्वजाके दण्डपर जीभ जैसी लाल-लाल अनेक पताकायें बँधी थीं और केश-की भाँति काले बालोंवाले चमर नीचे मुख करके लटके हुए थे। उन्हें देखकर ऐसा लगता था कि जैसे अभी ही मारे हुए जीवोंके अंगोंको लटकाकर उस ध्वजदण्डकी सजावट की गयी थी। उस ध्वजापर पुरानी कौड़ियाँ चिपकाकर कितने ही चन्द्राकार गोल-गोल बिन्दु थे। उन्हें देखकर ऐसा लगता था कि जैसे अपने पुत्र यमराजके वाहन भैंसेकी रक्षा करनेके निमित्त उस ध्वजाकी चोटीपर उतरे हुए सूर्यने चन्द्रमाको भी उतार लिया है। उसके ऊपर जैसे आकाशका संस्पर्श करनेवाला एक सुवर्णका त्रिशूल लगा हुआ था। उस त्रिशूलकी सींगोंमें बँधी लोहशृंखलाओंमें घंटियें लटकी हुई थीं। वायुका झोंका लगनेपर उसमें घर्घर शब्द होने लगता था और सिंहकी सटाके बालका बना बड़ा सुन्दर चमर उसमें बँधा हुआ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पथिकपुरुषोपहारमार्गमिवावलोकयन्तम्, महान्तं रक्तध्वजं दूरत एव ददर्श। तदभिमुखश्च किंचिदध्वानं गत्वा केतकीसूचिखण्डपाण्डुरेण वनद्विरददन्तकवाटेन परिवृताम्, लौहतोरणेन नवारक्तचामरावलिपरिकरां कालायसदर्पणमण्डलमालां शबरमुखमालामिव कपिलकेशभीषणां बिभ्राणेन सनाथीकृतद्वारदेशाम्, अभिमुखप्रतिष्ठितेन च विनिहितरक्तचन्दनहस्तकतया रुचिरारुणयमकरतलास्फालितेनेव शोणितलवलोभलोलशिवाविलिह्यमानलोहितलोचनेन लोहमहिषेणाध्यासिताञ्जनाशलावेदिकाम्, क्वचिद्रक्तोत्पलैः शबरनिपातितानां वनमहिषाणामिव लोचनैः क्वचिदगस्तिकुड्मलैः केसरिणामिव करजैः क्वचित्किंशुककुसुमाकुड्मलैः शार्दूलानामिव सरुधिरैर्नखरैः कृतपुण्यपुष्पप्रकराम्, अन्यत्राङ्कुरितामिव कुटिलहरिणविषाणकोटिकूटैः पल्लवितामिव सरसजिह्वा-

---

था। वह ध्वज जैसे इधर-उधर चलनेवाले बटोहियोंके बलिदानका मार्ग देख रहा था। उस ध्वजाकी ओर कुछ दूर आगे चलनेपर चन्द्रापीडने केतकीके फूलवाली बालसदृश श्वेत हाथीके दाँतकी बनी किवाड़वाले एक मन्दिरमें भगवती चंडिका देवीको विराजमान देखा। उस मन्दिरके द्वारपर लौहमय तोरण विद्यमान था। उस तोरणके बीच-बीचमें लाल चमर लटक रहे थे और काले लोहेके दर्पणोंकी बन्दनवार बँधी थी। उन्हें देखनेसे ऐसा लगता था कि जैसे पीले-पीले बालोंके कारण भयंकर आकृतिवाले भीलोंके मुखकी मालायें लटक रही हों। चण्डिका देवीके समक्ष एक काले पत्थरके चौतरेपर लोहेका बना भैंसा बैठा था। उसकी देहपर जगह-जगह लाल चन्दनके थापे लगे थे। उन थापोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे स्वयं यमराजने उसके ऊपर अपनी रुधिर सरीखी लाल हथेलियाँ फेरी हों। रुधिरके बूँदोंकी लोभिन एक शृगाली अपनी चंचल जीभसे उस भैंसेकी लाल आँखोंको चाट रही थी। किसी जगह शबरों द्वारा मारे गये बनैले भैंसोंके नेत्रों सदृश कमलके लाल फूलोंसे, कहीं सिंहोंके पंजों जैसी अगस्त्यके फूलकी कलियोंसे और कहीं रुधिरमें सने बाघके नाखूनोंकी तरह पलाशपुष्पकी लाल कलियों द्वारा भगवतीके निमित्त अर्पित किये गये पुष्पोपहार दीख रहे थे। मन्दिरके अहातेमें एक तरफ की गयी पशुओंकी हिंसा ऐसी दीख रही थी, जैसे हिरनोंकी टेढ़ी सींगोंकी नोकसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च्छेदशतैः कुसुमितामिव रक्तनयनसहस्रैः फलितामिव मुण्डमण्डलैः उपहारहिंसां दर्शयन्तीम्, शाखान्तरालनिलीनरक्तकुक्कुटकुलैः श्वभयादकालदर्शितकुसुमस्तबकैरिव रक्ताशोकविटपैर्विभूषिताङ्गणाम्, बलिरुधिरपानतृष्णया समागतैश्च वेतालैरिव तालैर्दीयमानफलमुण्डोपहाराम्, शङ्काज्वरकंपितैरिव कदलिकावनैर्भयोत्कण्टकितैरिव श्रीफलतरुखण्डैस्त्रासोर्ध्वकेशैरिव खर्जूरवनैः समन्ताद्गहनीकृताम्, वनकरिकुम्भविदलितरक्तमुक्ताफलानि रुधिरारुणानि बलिसिक्थलुब्धकृकवाकुग्रस्तमुक्तानि विकिरद्भिरम्बिकापरिग्रहदुर्ललितैः क्रीडद्भिः केसरिकिशोरकैरशून्योद्देशाम्, प्रभूतरुधिरदर्शनोद्भूतमूर्च्छापतितेनेव प्रतिबिम्बितेनास्तताम्रेण सवित्रान्तरीकृतैः क्षतजप्रवाहैः पिच्छिलीकृताजिराम, अवलम्बमानदीपधूमर-

---

वह अंकुरित हो उठी हो। सैकड़ों कटी हुई आर्द्र जिह्वाओंसे पल्लवित हो गयी हो और हजारों लाल नेत्रोंसे कुसुमित तथा मुण्डमण्डलसे फलित हो गयी हो। उस मन्दिरके आँगनमें अनेक लाल अशोकवृक्ष लगे हुए थे। उनकी शाखाओंपर कुत्तोंसे डरकर बहुतेरे लाल मुर्गे बैठे हुए थे। जिन्हें देखनेसे ऐसा लगता था कि जैसे असमयमें ही वे अशोक पुष्पित होकर वह भाग सुशोभित कर रहे हों। अहातेमें होनेवाले बलिदानका रुधिर पान करनेके लिए आये हुए वैतालोंकी भाँति ऊँचे-ऊँचे तालके वृक्ष जैसे देवीको अपने फलरूपी मुण्डोंका उपहार अर्पण कर रहे थे। पशुओंकी भीषण हत्या होते देखकर शंकाज्वरसे काँपनेवाले कदलीवृक्ष, भयसे रोमांचित नारियलके पेड़ और त्रासवश ऊँचे केशोंवाले खजूरके पेड़ उस स्थानको गहन वनके रूपमें परिणत किये हुए थे। भगवती चण्डिकाके द्वारा बड़े प्यारसे पले हुए मनमाने तौरसे विचरनेवाले सिंहशावकोंके हाथों विदारित हाथियोंके मस्तकसे निकलकर बिखरे रक्ताक्त मोतियोंके दानोंको वहाँके मुर्गे ताजे रुधिरमें रंगे चावल समझकर लोभवश मुँहमें रखते थे, किन्तु उन्हें फिर उगल देते थे। इस प्रकार उन मोतियोंके बिखरनेका खेल चलता ही रहता था। अत्यधिक रुधिर देखनेके कारण जैसे मूर्छित होकर गिरे हुए अस्तकालीन सूर्यके लाल प्रतिबिम्ब पड़नेसे और भी ज्यादा लाल दीखनेवाले रक्तरूपी जलके प्रवाहसे मन्दिरके आँगनमें फिसलन पैदा हो गयी थी। उस मन्दिरके भीतर लटकनेवाले दीपकोंके धुएँसे भीतरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्तांशुकेन ग्रथितशिखिगलवलयावलिना पिष्टपाण्डुरितघनघण्टामालाधारिणा त्रापुषसिंहमुखमध्यस्थितस्थूललोहकण्टकं दत्तदन्तदण्डार्गलं गलत्पीतनीललोहितदर्पणस्फुरितबुद्बुदमालं कपाटपटद्वयं दधानेन गर्भगृहद्वारदेशेन दीप्यमानाम्, अन्तःपिण्डिकापीठपातिभिश्च सर्वपशुजीवितैरिव शरणमुपागतैरलक्तकपटैरविरहितचरणमूलाम्, पतितकृष्णचामरप्रतिबिम्बानां च शिरश्छेदलग्नकेशजालकानामिव परशुपट्टिशप्रभृतीनां जीवविशसनशस्त्राणां प्रभाभिर्वृद्धबहलान्धकारतया पातालगृहवासिनीमिवोपलक्ष्यमाणाम्, रक्तचन्दनखचितस्फुरत्फलपल्लवकलितैश्च बिल्वपत्रदामभिर्बालकमुण्डप्रालम्बैरिव कृतमण्डनाम्, शोणितताम्रकदम्बस्तबकक्रूराचनैश्च पशूपहारपटपटुरटितरसोल्लसितरोमाञ्चैरिवाङ्गैः क्रूरता-

---

कपड़े रंगीन दीखने लगे थे। मोरोंके गलेकी बनी माला लटकी हुई थी। पीठीसे साफ किये हुए बहुतेरे घण्टोंका भारी हार अलग लटक रहा था। लाखके बने सिंहके मुखमें लोहेके कंटक गड़े थे। हाथीदाँतका अर्गलदण्ड लगा हुआ था। नीले, पीले और लाल रंगके दर्पणोंमें कीलोंका प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। मन्दिरके गर्भगृहमें दो द्वार थे और उन दोनोंमें दो-दो किवाड़ लगे थे। मन्दिरके भीतर जहाँ कि भगवतीकी मूर्ति स्थापित थी, उस सिंहासनपर दुर्गाके चरणोंमें सभी मरे हुए पशुओंके जीवोंकी भाँति महावरके लाल रंगमें रंगे हुए वस्त्र बिछे रहते थे। उस मन्दिरमें फरसे-भाले आदि बहुतेरे शस्त्र जीवोंका वध करनेके लिए विद्यमान थे। उन शस्त्रोंपर जब काले चमरोंकी परछाहीं पड़ती थी तो ऐसा लगता था कि मानो वध करते समय उनमें पशुओंके बाल चिपक गये हों। जिससे अंधकार छा जानेके कारण ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो वे भगवती चंडिका पाताललोकमें निवास कर रही थीं। देवीजी लाल चंदन लगे और अनेक फलों-पल्लवोंसे युक्त बिल्वपत्रका हार पहने हुए थीं। वह हार बालकोंके मुण्डोंकी तरह दीख रहा था। रुधिराक्त कदम्बपुष्पों द्वारा पूजित पशुओंका वध करनेके समय बजनेवाले दुन्दुभीके कर्कश शब्दजनित आनन्दसे आनन्दित चण्डिका जैसे पुलकित हो उठती थीं। इस प्रकारकी आकृतिसे जैसे वे अपनी क्रूरता प्रकट कर रही थीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुद्वहन्तीम्, चारुचामीकरपट्टप्रावृतेन च ललाटेन शबरसुन्दरीरचितसिन्दूरतिलकविन्दुना दाडिमकुसुमकर्णपूरप्रभासेकलोहितायमानकपोलभित्तिना रुधिरताम्बूलारुणिताधरपुटेन भृकुटिकुटिलवभ्रुणा रक्तनयनेन मुखेन कुसुम्भपाटलितदुकूलकलितया च देहलतया महाकालाभिसारिकावेषविभ्रमं विभ्रतीम्, संपिण्डितनीलगुग्गुलधूपधूमारुणीकृताभिश्च प्रचलन्तीभिर्गर्भगृहदीपिकालताभिरंगुलीभिरिव महिषासुरशोणितलवालोहिनीभिः स्कन्धपीठकण्डूयनचलितत्रिशूलदण्डकृतापराधं वनमहिषमिव तर्जयन्तीम्, प्रबलकूर्चधरैश्छागैरपि धृतव्रतैरिव स्फुरदधरपुटैराखुभिरपि जपपरैरिव कृष्णाजिनप्रावृताङ्गैः कुरंगैरपि प्रतिशयनैरिव ज्वलितलोहितमूर्धरत्नरश्मिभिः कृष्णसर्पैरपि शिरोधृतमणिदीपकैरिवाराध्यमानाम्, सर्वतः कठोरवायसगणेन च रटता स्तुतिपरेणेव

सुन्दर सुनहले वस्त्रसे आच्छादित एवं भीलनियों द्वारा रचित सिन्दूरके तिलक युक्त ललाटसे, वे जो अनारके फूलका कर्णपूर अपने कानोंमें पहने थीं, उन फूलोंकी दीप्तिके संस्पर्शसे, लाल कपोलोंसे, रुधिरसदृश ताम्बूलयुक्त लाल होठोंसे, लाल नेत्रों तथा मस्तक संकुचित करनेके कारण टेढ़ी भृकुटीयुक्त भौंहोंवाले मुखसे और कुसुम्भपुष्पसे लाल रंगमें रंगे हुए वस्त्रोंसे जैसे भगवती चण्डिकाने भगवान् महाकालके पास जानेके लिए अभिसारिकाका वेष बना रक्खा था। काली गूगुलके लहराते हुए धुयेंसे मंडपके भीतरी भागमें जलते दीपकोंकी लपटें लाल होकर ऐसी दीख रही थीं, जैसे महिषासुरके रक्तसे भीगी लाल उँगलियों द्वारा कन्धेका पिछला भाग खुजलाते समय त्रिशूलका दण्ड हिला देनेका अपराध करनेवाले वनमहिषको डाँट-फटकार रही हों। भगवतीके उस मन्दिरमें जैसे बकरे भी दाढ़ी बढ़ाकर व्रत कर रहे थे। वहाँके चूहे भी जैसे अपने होंठ हिला-हिलाकर जप कर रहे थे। काले मृगचर्म ओढ़कर वहाँके मृग भी मानो धरना देते हुए भूमिपर शयन करते थे और वहाँके काले नाग भी मानो अपने मस्तकपर चमकनेवाले लाल मणियोंके प्रभारूपी मणिदीपक रखकर भगवतीकी आराधना कर रहे थे। वहाँ रहनेवाले कौए भी जैसे अपनी कर्कश वाणीसे काँव-काँव करके उनकी स्तुति किया करते थे। उसी मन्दिरमें एक बूढ़ा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्तूयमानाम्, स्थूलस्थूलैः शिराजालकैर्गोधागोलिकाकृकलासकुलैरिव दग्धस्थाणवाशङ्कया समारुढैर्गवाक्षितेन, अलक्ष्मीसमुत्खातलक्षणस्थानै-रिव विस्फोटकव्रणबिन्दुभिः कल्माषितसकलशरीरेण, कर्णावतंससंस्था-पितया च चूडया रुद्राक्षमालिकामिव दधानेन, अम्बिकापादपतनश्याम-ललाटवर्धमानबुद्बुदेन, कुवादिदत्तसिद्धाञ्जनदानस्फाटितैकलोचनतया त्रिकालमितरलोचनाञ्जनदानादरश्लक्ष्णीकृतदारुशलाकेन, प्रत्यहं कटु-कालाबुस्वेदप्रारब्धदंतुरताप्रतीकारेण, कथंचिदस्थानदत्तेष्टकाप्रहारतया शुष्कैकभुजोपशान्तमर्दनव्यसनेन, उपर्युपर्यविश्रान्तकटुवर्तिप्रयोगवर्धित-तिमिरेण, अश्मभेदसंगृहीतवराहदंष्ट्रेण, इंगुदीकोषकृतौपधाञ्जनसंग्रहेण, सूचीस्यूतशिरासंकोचितवामकरांगुलिना, कौशेयककोशावरणक्षतिव्रणि-

---

धर्मात्मा द्रविड़ रहता था। बुढ़ापेके कारण शरीर भरमें फैली उसकी मोटी-मोटी नसोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जसे उसे जले हुए वृक्षका ठूँठ समझकर तमाम गोह, छिपकली और गिरगिट उसके तनपर लसे हुए थे। उसके विचित्र शरीर भरमें बड़े-बड़े फोड़ोंके दाग इस प्रकार दीखते थे, जैसे अभाग्यने उसके तनपरसे एक-एक करके सभी शुभ लक्षण खुरचकर निकाल लिये थे, जिससे गड्ढे पड़ गये थे। कानमें पहने जानेवाले कुण्डलके स्थानपर झूलती हुई शिखा एक नन्हींसी रुद्राक्षकी माला जैसी लग रही थी। बार-बार भगवतीके चरणोंमें गिरनेके कारण मस्तकमें काली-काली बतौरी-सी निकल आयी थी। किसी धूर्तका दिया हुआ सिद्धाञ्जन लगानेसे उसकी एक आँख फूट चुकी थी। अतएव अब वह दूसरी आँखमें त्रिकाल अंजन लगानेके लिए सदा काठकी एक सलाई चिकनी करता रहता था। उसके दाँत बाहर निकल आये थे। उनके प्रतीकारार्थ वह नित्य कड़ुई लौकीका पानी लगाया करता था। कहीं अचानक ईंटसे चोट लग जानेके कारण उसका हाथ सूख गया था। अतएव अब मालिश करनेकी आदत छूट गयी थी। निरन्तर पुनः पुनः आँखोंमें कटुकवर्ती लगानेके कारण उसका तिमिरान्धरोग बढ़ गया था। पत्थरोंको काटनेके लिए उसने बहुतेरे सुअरके दाँत जुटा रक्खे थे। इंगुदीफलकी खोलमें उसने नेत्रमें लगानेवाला अंजन संगृहीत कर रक्खा था। उसने अपने प्रकोष्ठकी एक नसको सुईसे सी लिया था, जिससे उसके बायें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तच्चरणांगुष्ठकेन, असम्यक्कृतरसायनानीताकालज्वरेण, जरां गतेनापि दक्षिणापथाधिराज्यवरप्रार्थनाकदर्थितदुर्गेण, दुःशिक्षितश्रवणादिष्टतिलकवद्धत्रिभवप्रत्याशेन, हरितपत्ररसाङ्गारमषीमलिनशम्बूकवाहिना, पट्टिकालिखितदुर्गास्तोत्रेण, धूमरक्तालक्तकाक्षरतालपत्रकुहकतंत्रमंत्रपुस्तिकासंग्राहिणा, जीर्णपाशुपतोपदेशलिखितमहाकालमतेन, आविर्भूतनिधिवादव्याधिना, संजातधातुवादवायुना, लग्नासुरविवरप्रवेशपिशाचेन, प्रवृत्तयक्षकन्यकाकामित्वमनोरथव्यामोहेन, वर्धितान्तर्धानमंत्रसंग्रहेण, श्रीपर्वताश्चर्यवार्तासहस्राभिज्ञेन, असकृदभिमंत्रितसिद्धार्थका-

---

हाथकी उँगलियाँ सिकुड़कर कुछ छोटी हो गयी थीं। उसके पैरोंका रेशमी मोजा फट गया था। जिससे उसके पैरका अंगूठा फटकर उसमें जगह-जगह घाव हो गया था। भली भाँति सिद्ध हुए बिना कच्चे रसायनका सेवन करनेके कारण उसे असमयमें ही ज्वर चढ़ आता था। इस बुढ़ापेमें भी दक्षिण देशका राज्य प्रदान करनेकी प्रार्थना कर-करके वह भगवती चण्डिकाको भी कष्ट देता था। किसी दुःशिक्षित भिक्षुकके मुखसे उसने सुन रक्खा था कि अमुक स्थानपर जिसके तिल रहता है, वह राजा होता है। बस, इसी बातपर वह धनी होनेकी आशा लगाये हुए था। हरे-हरे पत्तोंके रसमें जलाकर बने कोयलेकी स्याही पोतकर काली की हुई एक सीप उसके पास थी। एक तख्तीपर उसने दुर्गास्तोत्र लिखकर रख छोड़ा था। तालपत्रपर काजल तथा महावरकी स्याहीसे उसने कुहक (ऐन्द्रजालिक जादू-टोना), तंत्र (औषधिप्रयोग) और मंत्र (शाबरतंत्रादिके मंत्र) की छोटी-छोटी पुस्तिकायें लिखकर संगृहीत कर रक्खी थीं। प्राचीन पाशुपतमतानुयायी उपदेशकोंसे सुनकर महाकालमत लिख लिया था। किस-किस उपायसे गड़ा धन मिल सकता है, यह सोचते-सोचते उसे निधिवादकी व्याधि लग गयी थी। किन-किन उपायोंको करनेसे ताँबेका सोना बन सकता है, इन बातोंका सतत चिन्तन करनेसे उसे धातुवादकी हवा लग गयी थी। असुरोंके पाताललोकमें जा पहुँचनेका विचाररूपी पिशाच उसका पीछा कर रहा था। यक्षोंकी कन्याओंके साथ भोग करनेकी अभिलाषाने उसकी बुद्धिमें भ्रम उत्पन्न कर दिया था। देखते-देखते गायब हो जानेके बहुतेरे मंत्रोंका उसने संग्रह कर रक्खा था। श्रीपर्वतकी हजारों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृतिधावितैः पिशाचगृहीतकैः करतलताडननिबिडीकृतश्रवणपुटेन, अवमुक्तशैवाभिमानेन, दुर्गृहीतालाबुवीणावादनोद्वेजितपथिकपरिहृतेन, दिवसमेव मशकक्वणितानुकारि किमपि कम्पितोत्तमाङ्गं गायता, स्वदेशभाषानिबद्धभागीरथीभक्तिस्तोत्रनर्तकेन, गृहीततुरगब्रह्मचर्यतयान्यदेशागतोपितासु जरत्प्रव्रजितासु बहुकृत्वः संप्रयुक्तस्त्रीवशीकरणचूर्णेन, अतिरोपणतया कदाचिद्दुर्न्यस्ताष्टपुष्पिकापातोत्पादितक्रोधेन, चण्डिकामपि मुखभङ्गिविकारैर्भृशमुपहसता, कदाचिन्निवार्यमाणाध्वगरुषिताध्वगारब्धबहुबाहुयुद्धपातभग्नपृष्ठकेन, कदाचित्कृतापराधबालकपलायनामर्षपश्चात्प्रधावितस्खलिताधोमुखनिपातोपलस्फुटितशिरःकपालभुग्नग्रीवेण, कदाचिज्जनपदकृतनवागतपरमधार्मिकादरमत्सरोद्बद्धात्मना, निःसंस्कार-

---

आश्चर्यजनक वार्ताओंका वह जानकार था। बारम्बार मंत्रसे अभिमंत्रित करके फेंकी गयी सरसोंसे दौड़कर आनेवाले पिशाचोंकी सवारीसे आवेशमें आये हुए मनुष्योंने थप्पड़ मार-मारकर उसके कान चपटे कर दिये थे। अपनेको शैव माननेका उसे अभिमान था। लौकीकी बनी वीणाको उलटे-पुलटे ढंगसे बजाते देखकर उद्वेगवश कोई भी पथिक उसके पास नहीं फटकता था। दिनके समय भी वह मच्छड़ोंकी तरह भुनभुनाता और सिर हिलाता हुआ कुछ गाता रहता था। अपने देशकी भाषामें रचित भागीरथी (गंगा) का भक्तिमय स्तोत्र गा-गाकर वह नाचता रहता था। स्त्रीप्राप्तिके अभाववश उसने घोड़ोंसरीखा ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर रक्खा था। इसी कारण जब कभी भी परदेशी और बूढ़ी संन्यासिनियाँ उस मन्दिरमें आकर टिकी थीं तो उनपर उसने वशीकरण चूर्णका प्रयोग किया था। अतिक्रोधी स्वभाव होनेके कारण जब कभी उसकी अष्टपुष्पिका अर्थात् आठ फूलोंको एकत्रित करके बनी ताबीज इधर-उधर कहीं खो जाती थी तो वह बहुत क्रुद्ध हो उठता था। तरह-तरहसे मुँह बिचकाकर वह चण्डिकाका भी उपहास किया करता था। कभी किसी पथिकको वहाँ टिकनेकी मनाही करते समय हाथापाई करते-करते वह गिर पड़ता था और उसकी पीठ टूट जाती थी। कभी-कभी भागते हुए अपराधी बालकोंका पीछा करता हुआ वह ठोकर खाकर पत्थरकी चट्टानपर मुँहके बल गिर पड़ता था, जिससे उसका कपार फूट जाता था और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तया यत्किंचनकारिणा, खञ्जतया मन्दं मन्दं संचारिणा, बधिरतया संज्ञाव्यवहारिणा, रात्र्यन्धतया दिवाविहारिणा, लम्बोदरतया प्रभूताहारिणा, अनेकशः फलपातनकुपितवानरनखोल्लेखच्छिद्रितनासापुटेन, बहुशः कुसुमावचयचलितभ्रमरसहस्रदंशशीर्णीकृतशरीरेण, सहस्रशः शयनीकृतासंस्कृतशून्यदेवकुलकालसर्पदष्टेन, शतशः श्रीफलतरुशिखरच्युतिचूर्णितोत्तमाङ्गेन असकृदुत्सन्नदेवमातृगृहवास्यृक्षनखजर्जरितकपोलेन, सर्वदा वसन्तक्रीडिना जनेनोत्क्षिप्तखण्डखट्वारोपितवृद्धादासीविवाहप्राप्तविडम्बनेन, अनेकायतनप्रतिशयितनिष्फलात्थानेन, दौःस्थित्यमपि विविधव्याधिपरिवृतं स्वकुटुम्बमिवोद्वहता, मूर्खतामपि बहुव्य-

---

गर्दन मुरक जाती थी। यदि कभी वहाँ आये हुए किसी बहुत बड़े धर्मात्माका लोग आदर करने लगते थे, तब वह मारे ईर्ष्याके आत्मघात करनेके लिए अपने गलेमें फँसरी लगा लेता था। किसी विशेष संस्कारके न होनेसे वह जो मनमें आता, वही करने लगता था। पैरोंसे लँगड़ा होनेके कारण वह बहुत धीरे-धीरे चलता था। कानोंसे बहरा होनेके कारण वह इशारेसे बात करता था। उसे रतौंधीकी बीमारी थी। इस कारण वह दिनमें ही अपना सब काम निबटा लिया करता था। उसका पेट बहुत लम्बा था। इससे वह बहुत ज्यादा खाता था। अनेक उपायों द्वारा फल गिरानेके कारण कुपित वानरोंने अपने नखोंसे नोच-नोचकर उसकी नाकमें छेद कर दिये थे। बहुत बार पुष्पचयन करते समय उड़ते हुए हजारों भौंरोंने काट-काटकर उसके शरीरको जर्जर कर डाला था। अनेक बार बिना साफ किये बिछौनेपर सो जानेके कारण उसे देवमन्दिरका कालानाग डस चुका था। बहुत बार श्रीफल (नारियल) के वृक्षपरसे गिर जानेके कारण उसकी खोपड़ी चूर-चूर हो चुकी थी। अनेक बार उस मन्दिरके निवासी रीछोंने क्रुद्ध होकर अपने पंजों द्वारा उसके कपोल नोच डाले थे। प्रतिवर्ष होली खेलनेवाले लोग एक टूटी खाटपर किसी बुढ़िया दासीको बिठालकर लाते और उसका उसीके साथ विवाह करनेका स्वाँग रचा करते थे। अनेकानेक देवमन्दिरोंमें अपनी अभीष्टसिद्धिके लिए धरना देकर सोनेपर भी वह कुछ नहीं प्राप्त कर सका था। विविध व्याधियोंसे घिरी हुई अपनी दुःस्थितिका भी वह कुटुम्बीकी भाँति पालन-पोषण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सनानुगतां प्रसूतानेकापत्यामिव दर्शयता, क्रोधमप्यनेकदण्डाभिघातनिर्मितबहुगात्रगण्डूकं फलितमिव प्रकाशयता, क्लेशमपि सर्वाङ्गयवज्वलितदीपिकादाहव्रणविभावितं वहुमुखमिव प्रकटयता, परिभवमपि निष्कारणाकृष्टजनपददत्तपदाकृष्टशतं प्रवाहमिव दधानेन, शुष्कवनलताविनिर्मितबृहत्कुसुमकरण्डकेन, वेणुलताचितपुष्पपातनाङ्कुशिकेन, क्षणमप्यमुक्तकालकम्बलखण्डखोलेन जरद्द्रविडधार्मिकेणाधिष्ठितां चण्डिकामपश्यत्। तस्यामेव चावासमरचयत्।

अथावतीर्य तुरगात्प्रविश्य भक्तिप्रवणेन चेतसा तां प्रणनाम। कृतप्रदक्षिणश्च पुनः प्रणम्य प्रशान्तोद्देशदर्शनकुतूहलेन परिभ्रमन्नुच्चैरारटन्तमाक्रोशन्तं च कुपितं द्रविडधार्मिकमेकदेशे ददर्श। दृष्ट्वा च कादम्बरीविरहोत्कण्ठोद्वेगदूयमानोऽपि सुचिरं जहास। न्यवारयच्च तेन सार्धं

करता जा रहा था। अनेकानेक व्यसनोंसे सम्पन्न अपनी मूर्खताको भी वह इस प्रकार प्रदर्शित करता था कि जैसे उसकी बहुत-सी सन्ततियाँ उत्पन्न हो गयी हों। अनेकशः डंडोंकी मार खानेपर शरीरमें निकलनेवाले गुल्मों द्वारा प्रतिफलित क्रोधको भी वह दिखाता ही रहता था। उसके शरीरमें दीपकसे जल जानेपर पड़े हुए फफोलोंकी नाईं उभड़े हुए घावोंको देखकर ऐसा लगता कि जैसे वह अनेक मुखवाले अपने क्लेशोंका प्रदर्शन कर रहा था। बहुत बार उस प्रदेशके लोग उसे अकारण बुलाते और पैर पकड़कर घसीटते थे। किन्तु वह इस अपमानको भी जैसे चालू व्यवहार समझकर सहता जा रहा था। उसने फूल रखनेकी एक टोकरी तथा फूल तोड़नेके लिए बाँसका अँकुरा बना लिया था। काले कम्बलके टुकड़ेकी टोपीको वह क्षणभरके लिए भी नहीं छोड़ता था। ऐसे बूढ़े धार्मिक द्रविड़से अधिष्ठित चण्डिकामन्दिरको चन्द्रापीडने देखा और वहाँ ही उसने डेरा डाल दिया।

घोड़ेसे उतरकर वह मन्दिरमें गया और बड़ी श्रद्धाके साथ देवी चण्डिकाको प्रणाम तथा प्रदक्षिणा करके उस परम शान्त प्रदेशको देखनेकी उमंगवश वह इधर-उधर घूमने लगा। सहसा उसने देखा कि वह वृद्ध धार्मिक द्रविड मारे क्रोधके बड़े जोर-जोरसे चिल्लाकर रो रहा है। उस समय कादम्बरीके वियोगजनित व्यथासे व्यथित होनेपर भी चन्द्रापीड बहुत देर तक हँसता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रारब्धकलहानुपहसतः स्वसैनिकान्। उपासान्त्वनैश्च कथमपि प्रियालापशतानुनयैः प्रशममुपनीय क्रमेण जन्मभूमिं जातिं विद्यां च कलत्रमपत्यानि विभवं वयःप्रमाणं प्रव्रज्यायाश्च कारणं स्वयमेव पप्रच्छ। पृष्टश्चासाववर्णयदात्मानम्। अतीतस्वशौर्यरूपविभववर्णनवाचालेन तेन सुतरामरज्यत राजपुत्रः। विरहातुरहृदयस्य विनोदतामिवागात्। उपजातपरिचयश्चास्मै ताम्बूलमदापयत्। अस्तमुपगते च भगवति सप्तसप्तौ, आवासितेषु यथासंपन्नपादपतलेषु राजसूनुषु, शाखावसक्ततपनीयपर्याणेषु, क्षितितललुण्ठनपांसुलसटावधूननानुमितोत्साहेषु गृहीतकतिपयशष्पकवलेषु पीतोदकेषु स्नानार्द्रपृष्ठतया विगतश्रमेषु पुरोनिखातकुन्तयष्टिषु संयतेषु वाजिषु, वाजिसमीपविरचितपर्णसंस्तरे च दिवसगमनखिन्नपरिकल्पितयामिके सुषुप्सति सैनिकजने, कृतबहुपावकप्रभापीततमसि दिवस

रहा। उसके साथवाले जो सैनिक वृद्धकी ठठोली करते हुए झगड़ रहे थे, उन्हें उसने मना किया और स्वयं मीठी-मीठी बातोंसे शान्त करके उसकी जन्मभूमि, जाति, विद्या, स्त्री, सन्तति, वैभव, अवस्था और संन्यासका कारण आदि पूछा। इस प्रकार पूछनेपर द्रविडने अपनी सारी गाथा कह सुनायी। बीते दिनोंके शौर्य, रूप, वैभव आदिका बकवासभरा वृत्तान्त सुनकर युवराज बहुत आनन्दित हुआ। सो सुनकर उसके विरहाकुल हृदयको कुछ विनोदका साधन मिल गया। इस प्रकार परिचय हो जानेपर उसने वृद्धको पान दिलवाया। जब कि सात घोड़ोंके रथपर सवार भगवान् सूर्य अस्त हो गये। साथके सभी राजकुमारोंने जब अपनी-अपनी सुविधानुसार वृक्षोंके नीचे डेरा डाल दिया। जब घोड़ोंकी सुनहली जीनें वृक्षोंपर टाँग दी गयीं। जब जमीनपर लोटकर शरीरकी धूल झाड़ते और गर्दनके बाल झटकारते हुए घोड़े उत्साह प्रदर्शित करने लगे। जब उन्होंने कुछ-कुछ घासें खाकर जल पी लिया। स्नानसे गीली पीठ हो जानेके कारण जब उनकी थकावट दूर हो गयी और उन्हें सामने गड़ी हुई भालोंकी लाठियोंमें बाँध दिया गया। दिनभर चलनेके कारण थके हुए सैनिक जब घोड़ोंके पास ही बिछे पत्तोंके बिछौनोंपर सोनेकी तैयारी करने लगे। जब परस्पर पहरेकी तैनातीका प्रहरविभाजन कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्र विराजमाने सेनानिवेशे चन्द्रापीडः परिजनेनैकदेशे संयतस्येन्द्रायुधस्य पुरः परिकल्पितं प्रतीहारनिवेदितं शयनीयमगात्। निषण्णस्य चास्य तत्क्षणमेव पस्पर्श दुःखासिका हृदयम्। अरतिगृहीतश्च विसर्जयांबभूव राजलोकम्। अतिवल्लभानपि नाललाप पार्श्वस्थान्। निमीलितलोचनो मुहुर्मुहुर्मनसा जगाम किंपुरुषविषयम्। अनन्यचेताः सस्मार हेमकूटस्य। निष्कारणबान्धवतामचिन्तयन्महाश्वेतापादानाम्। जीवितफलमभिललाष पुनः पुनः कादम्बरीदर्शनम्। अपगताभिमानपेशलाय नितरामस्पृहयन्मदलेखापरिचयाय। तमालिकां द्रष्टुमाचकाङ्क्ष। केयूरकागमनमुत्प्रैक्षत। हिमगृहकमपश्यत्। उष्णमायतं पुनरुक्तं निशश्वास। बबन्ध बान्धवेभ्यश्चाधिकां प्रीतिं शेषहारे। पश्चात्स्थितां पुण्यभागिनीममन्यत पत्रलेखाम्। एवं चानुपजातनिद्र एव तामनयन्नि-

---

चुके। जब चारों ओर बड़े-बड़े अलाव जलनेके कारण उनका पीला प्रकाश फैलकर अन्धकारको नष्ट करता हुआ सारी छावनीमें दिनके समान उजाला करने लगा, तब प्रतीहारोंके बतानेपर परिजनों द्वारा एक ओर बँधे इन्द्रायुधके समक्ष गड़े तम्बूमें चन्द्रापीड सोनेके लिए नियत शय्यापर गया। वहाँ बैठते ही उसके हृदयमें जैसे व्याकुलताकी वेदना उभड़ आयी। जब दुःख बढ़ गया, तब उसने राजकुमारोंको विदा कर दिया। उस समय अपने परम प्रिय पार्श्ववर्तियोंसे भी वह कुछ नहीं बोल रहा था। बार-बार आँखें मूँदकर वह मन द्वारा गन्धर्वदेशमें जाने लगा। और कुछ भी न सोचकर वह एकाग्र मन करके केवल हेमकूटका स्मरण करता था। रह-रहकर उसे देवी महाश्वेताके अकारण स्नेहकी भी याद आ जाती थी। अपने जीवनका फल समझकर वह बार-बार कादम्बरीके दर्शनोंकी अभिलाषा कर रहा था। अभिमानशून्य होनेके कारण मनोरम लगनेवाले मदलेखाके परिचयको वह बार-बार याद करने लगा। तमालिकाको देखनेकी इच्छा होने लगी। केयूरकके आगमनकी कल्पना करने लगा। मनकी आँखोंसे हिमगृह देखने लगा। बार-बार गरम और लम्बी-लम्बी साँसें छोड़ने लगा। अपने बान्धवोंसे भी अधिक प्रिय उस शेष हारको मानने लगा। कादम्बरीके पास रुकी हुई पत्रलेखाको अपनेसे अधिक भाग्यशालिनी समझने लगा। इस प्रकार उसने वह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शाम्। उषसि चोत्थाय तस्य जरद्द्रविडधार्मिकस्येच्छया निसृष्टधनविसरैः पूरयित्वा मनोरथमभिमतमभिरमणीयेषु प्रदेशेषु निवसन्नल्पैरेवाहोभिरुज्जयिनीमाजगाम।

आकस्मिकागमनप्रहृष्टसंभ्रान्तानां पौराणामर्धकमलानीव नमस्काराञ्जलिसहस्राणि प्रतीच्छन्नतर्कित एव विवेश नगरीम्। अहमहमिकया च प्रधावितानतिरभसहर्षविह्वलान्परिजनान् 'देव, द्वारि चन्द्रापीडो वर्तते' इत्युपलभ्यास्य पिता निर्भरानन्दमन्दगमनो मन्दर इव क्षीरोदजलमुत्तरीयांशुकममलमागलितमाकर्षन्प्रहर्षनेत्रजलबिन्दुवर्षी मुक्तमुक्ताफलासार इव कल्पपादपः प्रत्यासन्नवर्तिभिर्जरापाण्डुमौलिभिश्चन्दनविलेपनैरनुपहतक्षौमधारिभिः केयूरिभिरुष्णीषिभिः किरीटिभिः शेखरिभि-

---

सारी रात बिना सोये ही बिता दी। सवेरे शय्यासे उठकर उसने उस वृद्ध धार्मिक द्रविड़के इच्छानुसार धन देकर उसकी कामना पूर्ण की और वहाँसे चलकर इच्छानुसार विविध रमणीक प्रदेशोंमें टिकता हुआ थोड़े ही दिनों बाद अपनी राजधानी उज्जयिनीमें आ गया।

एकाएक युवराजको आया देखकर प्रसन्न राजधानीके निवासी अर्धकमलाकार हजारों अंजलियाँ उठाकर अभिवादन करने लगे। उन्हें स्वीकार करता हुआ चन्द्रापीड अतर्कितभावसे सहसा नगरीमें प्रविष्ट हुआ। 'पहले मैं ही खबर दूँ' इस आकांक्षासे दौड़ते हुए परिजनोंने राजा तारापीडसे कहा— 'हे महाराज! युवराज चन्द्रापीड आकर द्वारपर खड़े हैं।' यह सुनकर कंधेसे खिसके दुपट्टेको जमीनमें घसीटता और आनन्दातिरेकसे धीरे-धीरे चलता हुआ उसका पिता ऐसा दीख रहा था, मानो मंदराचल क्षीरसागरके जलको खींचता हुआ चल रहा हो। उस समय कल्पवृक्षसे झरते हुए मोतियोंकी तरह उसके नेत्रोंसे आनन्दके आँसू बरस रहे थे। इस प्रकार वह पैदल ही चलकर द्वारपर अपने प्यारे पुत्रसे मिलने चला। उसके पीछे-पीछे हजारों राजे चल रहे थे। उनमें कितने ऐसे थे कि बुढ़ापेके कारण जिनके केश श्वेत हो गये थे। उनके मस्तकपर चन्दन लगा था। नवीन रेशमी वस्त्र उनके बदनपर थे। वे भुजाओंमें बाजूबन्द तथा सिरपर पगड़ी, किरीट और मुकुट धारण किये हुए थे। वे राजे उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बहुकैलासामिव बहुक्षीरोदामिव क्षितिं दर्शयद्भिः प्रतिपन्नासिवेत्रच्छत्र-केतुचामरैरनुगम्यमानो राजसहस्रैश्चरणाभ्यामेव प्रत्युज्जगाम। दृष्ट्वा च पितरं दूरादेवावतीर्य वाजिनश्चूडामणिमरीचिमालिना मौलिना महीमगच्छत्। अथ प्रसारितभुजेन 'एह्येहि' इत्याहूय पित्रा गाढमुपगूढः सुचिरं परिष्वज्य तत्कालसंनिहितानां च माननीयानां कृतनमस्कारः करे गृहीत्वा विलासवतीभवनमनीयत राज्ञा। तयापि तथैव सर्वान्तः-पुरपरिवारया प्रत्युद्गम्याभिनन्दितागमनः कृतागमनमङ्गलाचारो दिग्विजयसंबद्धाभिरेव कथाभिः कंचित्कालं स्थित्वा शुकनासं द्रष्टुमाययौ। तत्राप्यमुनैव क्रमेण सुचिरं स्थित्वा निवेद्य वैशम्पायनं स्कन्धावारवर्तिनं कुशलिनमालोक्य च मनोरमामागत्य विलासवतीभवन एव सर्वाः स्नानादिकाः परवश इव क्रिया निरवर्तयत। अपराह्णे निजमेव भवनमयासीत्। तत्र च रणरणकखिद्यमानमानसः कादम्बर्या विना

समय पृथिवीको बहुतेरे कैलास युक्त तथा अनेक क्षीरसागरमयी बनाये दे रहे थे। उनके हाथोंमें तलवार, छड़ी, ध्वजा और चमर आदि विद्यमान थे। चन्द्रापीड पिताजीको आते देख तुरन्त घोड़ेपरसे उतर पड़ा और चूड़ामणिकी जगमगाती किरणों युक्त मस्तक धरतीतक झुकाकर प्रणाम किया। तत्काल भुजायें पसारकर पिताने 'आओ-आओ पुत्र!' कहते हुए छातीसे लगा लिया। उस समय आसपास खड़े माननीय लोगोंकी बन्दना करनेके पश्चात् राजा तारापीड उसका हाथ पकड़कर महारानी विलासवतीके महलमें ले गया। रानीने भी उसी तरह अपने समस्त अन्तःपुरके परिवारको साथ ले तथा कुछ आगे बढ़कर उसका अभिनन्दन किया और पुत्रागमनके उपलक्ष्यमें की जानेवाली समस्त मांगलिक क्रियायें सम्पन्न कीं। कुछ देर वहाँ रुककर चन्द्रापीड दिग्विजयसम्बन्धी बातें करता रहा। फिर महामात्य शुकनाससे मिलनेको चल पड़ा। उसी प्रकार वहाँ भी थोड़ी देर रुक तथा सेनाके साथ विद्यमान वैशम्पायनका कुशल-क्षेम बताकर मनोरमासे मिला और वहाँसे फिर माता विलासवतीके महलोंमें आकर परवशकी नाईं स्नानादि दैनिक क्रियायें सम्पन्न कीं। सायंकालके समय वह अपने महलमें गया। किन्तु उत्कण्ठावश उसका मन खिन्न हो उठा। अतएव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न केवलमात्मानं स्वभवनमवन्तीनगरं वा सकलमेव महीमण्डलं शून्यममन्यत । ततो गन्धर्वराजपुत्रीवार्ताश्रवणोत्सुकश्च महोत्सवमिवेप्सितवरप्राप्तिकालमिवामृतोत्पत्तिसमयमिव पत्रलेखागमनं प्रत्यपालयत् ।

ततः कतिपयदिवसापगमे मेघनादः पत्रलेखामादायागच्छत् । उपानयच्चैनाम् । कृतनमस्कारां च दूरादेव स्मितेन प्रकाशितप्रीतिश्चन्द्रापीडः प्रकृतिवल्लभामपि कादम्बरीसकाशात्प्रसादलब्धापरसौभाग्यामिव वल्लभतरतामुपागतामुत्थायातिशयदर्शितादरमालिलिङ्ग पत्रलेखाम् । मेघनादं च प्रणतं पृष्ठे करकिसलयेन पस्पर्श । समुपविष्टश्चाब्रवीत्—'पत्रलेखे, कथय तत्रभवत्या महाश्वेतायाः समदलेखाया देव्याः कादम्बर्याश्च कुशलम् । कुशली वा सकलस्तमालिकाकेयूरकादिपरिजनः' इति । साब्रवीत्—'देव, यथाज्ञापयसि भद्रम् । त्वामर्चयति शेखरीकृताञ्जलिना ससखीजना सपरिजना देवी कादम्बरी' इति । एवमुक्त-

---

अब वह कादम्बरीके बिना अपनेको, सारे महलको और उज्जयिनी नगरीको ही नहीं, प्रत्युत समस्त भूमण्डलको शून्य मानने लग गया । इसके बाद वह गन्धर्वराजकी पुत्रीका समाचार जाननेके लिए उत्सुक होकर पत्रलेखाके आगमनको महान् उत्सव, वरदान पानेका सुअवसर तथा अमृतकी उत्पत्तिके दिवसकी नाईं महत्त्वपूर्ण समझकर उसकी प्रतीक्षा करने लगा ।

कुछ दिन बीतनेके बाद मेघनाद पत्रलेखाको लेकर लौटा और उसे चन्द्रापीडके पास पहुँचा दिया । पत्रलेखाने सम्मुख पहुँचकर प्रणाम किया, तैसे ही अपनी मुसकानसे प्रेम प्रदर्शित करता हुआ वह उठ खड़ा हुआ । यद्यपि वह उसे स्वभावतः प्रिय थी, फिर भी इस समय जैसे कादम्बरीकी कृपासे प्राप्त सौभाग्य लेकर लौटी हो । इस भावनासे उसे अत्यधिक प्रिय समझ और बहुत ज्यादा आदर दिखाते हुए आलिंगन किया । उसी समय प्रणाम करते हुए मेघनादके शरीरपर प्रेमभरा हाथ फेरा और अपने आसनपर बैठकर कहा—'पत्रलेखे ! बताओ, भगवती महाश्वेता, मदलेखा और कादम्बरीका क्या हाल है ? उनके तमालिका-केयूरक आदि सब परिजन तो सकुशल हैं न ?' पत्रलेखा बोली—'देव ! जैसा आप कहते हैं, सब लोग सानन्द हैं। अपनी समस्त सखियों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वतीं पत्रलेखामादाय मन्दिराभ्यन्तरं विसर्जितराजलोको विवेश । तत्र चोत्ताम्यता मनसा धारयितुमपारयन्कुतूहलमतिप्रीत्या दूरमुत्सारितपरिजनः प्रविश्यागारमचिरप्ररूढायाः स्थलकमलिन्याः पृथुभिरुन्नालैः पलाशैर्विरचितातपत्रकृत्यस्य अध्यास्य मध्यभागमन्यतरस्य मरकतपताकायमानस्य पत्रमण्डपस्य तले चरणारविन्देन समुत्सार्य सुखप्रसुप्तं हंसमिथुनमुपविश्याप्राक्षीत्—'पत्रलेखे, कथय कथमसि स्थिता । कियन्ति वा दिनानि । कीदृशो वा देवीप्रसादः । का वा गोष्ठ्यः समभवन् । कीदृश्यो वा कथाः समजायन्त । को वातिशयेनास्मान्स्मरति । कस्य वा गरीयसी प्रीतिः' इति । एवं पृष्टा च व्यजिज्ञपत्—'देव, दत्तावधानेन श्रूयताम्, यथा स्थिताऽस्मि, यावन्ति वा दिनानि, यादृशो वा देवीप्रसादः, यथा वा गोष्ठ्यः समभवन्, यादृश्यश्च कथाः समजायन्त । ततः खल्वागते देवे केयूरकेण सह प्रतिनिवृत्त्याहं तथैव कुसुम-

---

और परिजनोंके साथ देवी कादम्बरी मस्तकपर अंजली रखकर आपकी वन्दना करती हैं ।' इसके बाद चन्द्रापीडने सब राजाओंको विदा कर दिया और पत्रलेखाको साथ लेकर अपने महलमें चला गया। वहां अत्यन्त विरहातुर अपने मनका आवेग रोकनेमें असमर्थ होनेके कारण उसने सब परिजनोंको हटा दिया । फिर भवनके भीतरी भागमें जाकर ताजे कमलपत्रसे आच्छादित पण्डपमें जा पहुँचा। वहाँ कमलके बड़े ऊँचे डण्डेवाले पत्ते छत्रका काम कर रहे थे । सानन्द सोये हुए हंसमिथुनको पैरसे हटाकर मरकतमणिनिर्मित पताकाकी भाँति सुन्दर एक अन्य पत्रमण्डपके नीचे जाकर बैठ गया और पत्रलेखासे कहा-'हाँ, अब यह बताओ कि तुम कितने दिन वहाँ रहीं और कैसे रहीं ? देवी कादम्बरीकी मेरे ऊपर कैसी कृपा है ? वहाँ किस प्रकारकी बातें होती रहीं ? इमें सबसे अधिक कौन याद करता है ? और कौन अधिक प्रेम करता है ?' चन्द्रापीडके प्रश्न सुनकर पत्रलेखा बोली—'आप स्वस्थ मनसे सुनें कि मैं किस तरह वहाँ रही, कितने दिन रही, आपपर देवी कादम्बरीकी कैसी कृपा है, किस ढंगकी बातें हुई और किस प्रकारका कथाप्रसंग चला, सो सब बताती हूँ । जब आप वहाँसे चले आये, तब मैं केयूरकके साथ लौटकर फिर देवी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शयनीयसमीपे समुपाविशम् । अतिष्ठं च सुखं नवनवाननुभवन्ती देवीप्रसादान् । किं बहुना प्रायेण मम चक्षुषि चक्षुः, वपुषि वपुः, करे करपल्लवम्, नामाक्षरेषु वाणीं, प्रीतौ हृदयं देव्याः सकलमेव तं दिवसमभवत् । अपराह्णे च मामेवावलम्ब्य निष्क्रम्य हिमगृहकात्संचरन्ती यदृच्छया निषिद्धपरिजना वल्लभबालोद्यानं जगाम । तत्र च सुधाधवलां कालिन्दीजलतरङ्गमय्येव मरकतसोपानमालया प्रमदवनवेदिकामध्यारोहत् । तस्यां च मणिस्तम्भावष्टम्भस्थिता स्थित्वा च मुहूर्तमिव हृदयेन सह दीर्घकालमवधार्य किमपि व्याहर्तुमिच्छन्ती निश्चलधृततारकेण निष्पन्दपक्ष्मणा चक्षुषा मुखं मे सुचिरं व्यलोकयत् । विलोकयन्त्येव च कृतसंकल्पा मदनाग्निं प्रवेष्टुमिच्छन्ती सस्नाविव स्वेदाम्भःस्रोतसि । स्रोतसेव तरलीकृता समकम्पत । कम्पिताङ्गी च पतनभियेवागृह्यत विषादेन ।

कादम्बरीके उस पुष्पमय बिछौनेके पास जा बैठी और वहाँ नित्य नये-नये सुखका अनुभव करती हुई रहने लगी । और मैं कहाँ तक कहूँ, वे प्रायः मेरी आँखों में आँखें, शरीरमें शरीर और हाथमें हाथ डालकर प्रत्येक बातमें मेरे नामाक्षरका प्रयोग करती रहीं । सारे दिन उनका हृदय मेरे प्रेममें ही डूबा रहा । सायंकालके समय वे मेरा ही सहारा लेकर उठीं और उस हिमगृहसे निकलकर सभी परिजनोंका आगमन निषिद्ध करके स्वेच्छया धीरे-धीरे टहलती हुई अपने प्रिय बालोद्यानमें जा पहुचीं । वहाँपर यमुनाकी तरंग-सी दीखती मरकतमणिमयी सीढ़ियोंपर होती हुई प्रमदवनमें चूनेसे पुता होनेके कारण धवलवर्णके चौतरेपर चढ़ गयीं । उसपर एक मणिस्तम्भके सहारे खड़ी होकर कुछ क्षण अपने मनमें न जाने क्या सोचती तथा जैसे कुछ निश्चय करके बोलनेकी इच्छा करती हुई नेत्रोंकी पुतलियाँ स्थिर करके निर्निमेष दृष्टिसे बड़ी देरतक मेरा मुख देखती रहीं । देखते-देखते जैसे वे कामाग्निमें कूद पड़नेका दृढ़ संकल्प कर चुकी हों, इस विचारको सार्थक करनेके लिए जैसे पहले उन्होंने पसीनेके पानीमें स्नान किया । तदनन्तर जैसे उस स्वेदजलसे भींगकर काँपने लगीं । इस प्रकार काँपते समय गिरनेसे डरकर जैसे विषादने उन्हें सम्हाल लिया ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ मया विदिताभिप्रायया तन्मुखविनिवेशितनिष्कम्पनयनदत्तावधानया 'आज्ञापय' इति विज्ञापिते निजावयवैरपि वेपथुमद्भिर्निवार्यमाणेव रहस्यश्रवणलज्जयात्मप्रतिमामपि लिखितमणिकुट्टिमेन चरणांगुष्ठेनापक्रमायेवास्पृशन्ती भवनकलहंसान्कुट्टिमोल्लेखमुखरितनूपुरेण चरणारविन्देन विसर्जयन्ती, कर्णोत्पलमधुकरानपि स्विद्यद्वदनव्यजनीकृतेनांशुकपल्लवेनोत्सारयन्ती, ताम्बूलवीटिकाशकलमुत्कोचमिव दन्तखण्डितं शिखण्डिने ददती, वनदेवताश्रवणशङ्कितेव मुहुर्मुहुरितस्ततो विलोकयन्ती, वक्तुकामापि न शक्नोति स्म किंचिदपि लज्जाकलितगद्गदा गदितुं प्रयत्नतोऽपि च सा निःशेषम् । ज्वलता मदनानलेनेव दग्धा अजस्रं प्रवहता नयनोदकेनेवोढ़ा, प्रविशद्भिर्दुःखैरिवाक्रान्ता, पतद्भिः कुसुमचापशरैरिव शकलीकृता, निष्पतद्भिः श्वसितैरिव निर्वासिता, हृद-

---

इन लक्षणोंको देखकर मैंने उनका अभिप्राय समझ लिया और अपने निष्कम्प नयनोंको बड़ी सावधानीसे उनके मुखपर लगाकर कहा—'देवि ! आज्ञा दीजिए ।' मेरी इस बातपर जैसे उनके अंग भी काँपकर कुछ कहनेसे रोकने लगे । अब तो जैसे रहस्यकी बात सुन लेनेकी लज्जावश वे अपने शरीरको भी समाप्त कर देनेके विचारसे पैरके अंगूठेको उसी मणिमयी भूमिपर घिसने लगीं । इस प्रकार अंगूठा रगड़ते समय नूपुरोंकी रुनझुन ध्वनि करके वे जैसे वहाँके पालतू कलहंसोंको भगाने लगीं । कर्णोत्पलपर मँडराते हुए उनके पसीनेसे गीले मुखपर अपने पंख द्वारा हवा करनेवाले भौंरोंको भी वे वस्त्रके पल्ले झटकारकर उड़ाने लगीं । बोलते हुए मोरोंको जैसे अपने मुखके पानकी सीठोंका घूस देकर रोकने लगीं । 'कहीं मेरी बात वनदेवता न सुन लें' इस आशंकासे वे चौकन्नी होकर इधर-उधर ताकने लगीं । बोलनेकी इच्छा रखती हुई भी वे लज्जाके कारण कंठ गद्गद हो जानेसे नहीं बोल पा रही थीं । जैसे धधकती कामाग्निने उनकी सभी बातोंको जला दिया हो, सदा बहते हुए आँसू जैसे उन्हें बहा ले गये हों, हृदयमें घुसे दुःखोंने उन्हें दबा दिया हो, जैसे निरंतर बरसते हुए मदनबाणोंने उन बातोंके टुकड़े-टुकड़े कर दिये हों, चलनेवाले श्वासोंने जैसे उन्हें बाहर निकाल फेंका हो, हृदयमें विद्यमान सैकड़ों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यवर्तिभिश्चिन्ताशतैरिव विधृता, निःश्वासपायिभिर्मधुकरकुलैरिव- निपीता न प्रावर्तत वाणी। केवलं दुःखसहस्रगणनाय मुक्ताक्षमालिकामिव कल्पयन्ती गलद्भिरस्पृष्टकपोलस्थलैः शुचिभिरधोमुखी नयनजलबिन्दुभिर्दुर्दिनमदर्शयत्। तदा च तस्याः सकाशादशिक्षतेव लज्जापि लज्जालालाम्, विनयोऽपि विनयातिशयम्, मुग्धतापि मुग्धताम्, वैदग्ध्यमपि वैदग्ध्यम्, भयमपि भीरुताम्, विभ्रमोऽपि विभ्रमिताम्, विषादोऽपि विषादिताम्, विलासोऽपि विलासम्। तथाभूता च 'देवि, किमिदम्' इति विज्ञापिता मया प्रमृज्य लोहितायमानादरे लोचने दुःखप्रकर्षणात्मनः समुद्बन्धनायेव मृणालकोमलया बाहुलतया वेदिकाकुसुमपालिकाग्रथितकुसुममालामवलम्ब्य समुन्नतैकभ्रूलता मृत्युमार्गमिवावलोकयन्ती दीर्घमुष्णं च निःश्वसितवती। तद्दुःखकारणमुत्प्रेक्षमाणया च कथनाय पुनःपुनरनुबध्यमाना मया व्रीडया नखमुखविलिखि-

---

चिन्ताओंने जैसे उन्हें पकड़ रक्खा हो अथवा जैसे उनका निःश्वास पीनेवाले भौंरोंने उन्हें पी लिया हो, इस प्रकार चाहनेपर भी वे बोल नहीं सकीं। वे जैसे केवल हजारों दुःखोंकी गणना करनेके लिए मोतीके दानोंकी माला पोह रही थीं। इस तरह मुँह नीचे करके कपोलोंका स्पर्श करनेवाले निर्मल अश्रुबिन्दु बरसाने लगीं। उस समय जैसे सदाकी अशिक्षित लज्जाने भी उनसे लज्जा सीख ली, विनयने भी अत्यन्त विनय सीख लिया, मुग्धताने भी मुग्धता सीख ली, चतुराईने चतुराई सीख ली, भयने भीरुता सीख ली और विभ्रमने विभ्रमिता सीख ली। विषादने विषादिता और विलासने विलासिता सीख ली। उनकी वह दशा देखकर मैंने कहा—'देवि! यह क्या?' मेरी बात सुनकर उन्होंने अपनी लाल-लाल आँखें पोंछ लीं। तदनन्तर जैसे अत्यन्त दुःखसे फाँसी लगानेके लिए अपनी मृणाल सरीखी कोमल भुजारूपिणी लतासे उस वेदीपर मालिनकी गूँथी एक पुष्पमालाको पकड़कर जैसे मृत्युका मार्ग देखती-देखती एक भौं तनिक ऊँचे चढ़ाकर वे बहुत गरम तथा लम्बी-लम्बी साँसें छोड़ने लगीं। उनके असाधारण दुःखकी कल्पना करके मैंने उनसे बार-बार कहनेका अनुरोध किया, किन्तु लज्जावश जैसे वे लिखकर अपना मंतव्य बताना चाहती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तकेतकीदलानि लिखित्वेव वक्तव्यमर्पयन्ती विवक्षास्फुरिताधरा निःश्वासमधुकरानिवोपांशु संदिशन्ती क्षितितलनिहितनिश्चलनयना सुचिरमतिष्ठत्।

क्रमेण च भूयो मन्मुखे निधाय दृष्टिं पुनःपुनरथापूर्यमाणलोचनच्युतैर्मदनानलधूमधूसरां वाचमिव क्षालयन्ती बाष्पजलबिन्दुभिर्बाष्पजलबिन्दुव्याजेन च विलक्षस्मितस्फुरितैर्दशनांशुभिः साध्वसविस्मृतानपूर्वानभिधेयवर्णानिव ग्रथ्नती कथमपि व्याहाराभिमुखमात्मानमकरोत्। अब्रवीच्च माम्--'पत्रलेखे, वल्लभतया तस्मिन्स्थाने न तातो नाम्बा न महाश्वेता न मदलेखा न जीवितम्, यत्र मे भवती दर्शनात्प्रभृति प्रियासि। जाने, केनापि कारणेनापहस्तितसकलसखीजनं त्वयि विश्वसिति मे हृदयम्। कमपरमुपालभे। कस्य वान्यस्य कथयामि परिभवम्। केन वान्येन सह साधारणीकरोमि दुःखम्। दुःखभारमिममसह्यं निवेद्य भवत्यास्त्यक्ष्यामि जीवितम्। जीवितेनैव

हों, इस प्रकार केतकीके पत्रपर नाखूनसे कुछ लिखने लगीं। उस समय बोलनेके लिए उनके होंठ फड़कने लगे। निःश्वाससे आकृष्ट भौरोंके कानमें जैसे कोई संदेश देतीं तथा जमीनपर अपनी निश्चल दृष्टि जमाकर वे चुपचाप बड़ी देर तक खड़ी रहीं।

तदनंतर धीरे-धीरे मेरे मुँहकी ओर अपनी आँखें करके कामाग्निके धुएँसे धुँधली वाणीको बार बार आँसुओंके जलसे धोती तथा उन्हीं अश्रुबिंदुओंके बहाने जैसे घबराहटके कारण भूले हुए अपूर्व वाक्योंके अक्षरोंको लज्जाभरी मन्द मुसकानमयी दंतकिरणोंसे गूँथती हुई देवी कादम्बरीने किसी-किसी तरह बोलनेका साहस करके कहा—'पत्रलेखा! प्रेमातिरेकताके नाते जिस स्थानपर तुम हो, वहाँ न माता हैं, न पिता हैं, न महाश्वेता हैं, न मदलेखा है और न मेरा निजी जीवन है। पहली नजर पड़ते ही तुम मुझे बहुत प्रिय हो गयी हो। न जाने क्यों और किस कारण अपनी सब सखियोंसे हटकर तुम्हारे ऊपर मेरा हृदय अधिक विश्वास करता है। दूसरे किस व्यक्तिको मैं उलाहना दूँ? किसे मैं अपनी पराजयकी बात सुनाऊँ? दूसरे किस व्यक्तिसे मैं अपना दुःख बँटानेको कहूँ? मैं यह असह्य दुःखभार तुम्हें सौंपकर अपने प्राण त्याग दूँगी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शपामि ते। स्वहृदयेनापि विदितवृत्तान्तेनामुना जिह्रेमि, किमुतापरहृदयेन। कथमिव मादृशी रजनिकरकिरणावदातं कौलीनेन कुलं कलङ्कयिष्यति। कुलक्रमागतां च लज्जां परित्यक्ष्यति। अकन्यकोचिते वा चापले चेतः प्रवर्तयिष्यति। साहं न संकल्पिता पित्रा, न दत्ता मात्रा, नानुमोदिता गुरुभिः, न किंचित्संदिशामि, न किंचित्प्रेषयामि, नाकारं दर्शयामि। कातरा चानाथेव बलादवलिप्तेन गुरुगर्हणीयतां नीता कुमारेण चन्द्रापीडेन। कथय महतां किमयमाचारः, किं परिचयस्येदं फलम्, यदेवमभिनवबिसकिसलयतन्तुसुकुमारं मे मनः परिभूयते। अपरिभवनीयो हि कुमारिकाजनो यूनाम्। प्रायेण प्रथमं मदनानलो लज्जां दहति, ततो हृदयम्। आदौ विनयादिकं कुसुमेषुशराः खण्डयन्ति, पश्चान्मर्माणि। तदामन्त्रये भवतीं पुनर्जन्मान्तरसमागमाय। न हि मे त्वत्तोऽन्या प्रियतरा। प्राणपरित्यागप्रायश्चित्ताचरणेन प्रक्षालयाम्यात्मनः

यह बात मैं अपने जीवनकी शपथ खाकर कहती हूँ। यह वृत्तांत जाननेवाले अपने हृदयसे भी मैं लजा रही हूँ, तब औरोंकी बात ही क्या है। मुझ जैसी कुलीन कन्या चंद्रमाकी किरणों जैसे शुभ्र कुलको कैसे कलंकित करेगी ? वह अपनी कुलपराम्परागत लज्जाको कैसे त्यागेगी ? कन्यओंके लिए अनुचित चंचलतामें अपने चित्तको कैसे प्रवृत्त करेगी ? पिताजीने मेरा संकल्प नहीं किया, माताजीने दान नहीं दिया, गुरुजनोंने अनुमोदन नहीं किया। अतएव न मैं कोई संदेश भेज सकती हूँ, न कुछ कह सकती हूँ और न चेहरा ही दिखा सकती हूँ। मुझे उन गर्वीले राजकुमार चन्द्रापीडने एक दीन तथा अनाथकी भाँति बड़े-बूढ़ोंकी दृष्टिमें निंदनीय बना दिया है। अब तुम्हीं बताओ कि यह क्या बड़ोंका आचार है ? क्या परिचयका यही फल है कि जो वे मेरे नवमृणालतंतु सदृश सुकुमार मनको इस प्रकार पीड़ा पहुँचा रहे हैं ? युवकोंका तो यह कर्तव्य होता है कि कुमारी कन्याओंका दिल न दुखायें। कामाग्नि सर्वप्रथम लज्जाको और उसके बाद हृदयको जलाती है। कामदेवके बाण पहले विनयादि गुणोंको और उसके बाद मर्मस्थानोंको विदीर्ण करते हैं। अतएव मैं अब तुम्हें दूसरे जन्ममें मिलनेका न्योता देती हूँ। क्योंकि तुमसे बढ़कर प्रिय मेरा और कोई नहीं है। अब मैं प्राणपरित्यागरूपी प्रायश्चित्त करके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलङ्कम् ।' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत्।

अहं तु यत्सत्यमविदितवृत्तान्ततया ह्रीतेव भीतेव विलक्षेव विसंज्ञेव सविषादं विज्ञापितवती—'देवि, श्रोतुमिच्छामि। आज्ञापय किं कृतं देवेन चन्द्रापीडेन। को वापराधः समजनि। केन वा खल्वविनयेन खेदितमखेदनीयं देव्याः कुमुदकोमलं मनः। श्रुत्वा प्रथममुत्सृष्टजीवितायां मयि पश्चात्समुत्स्रक्ष्यति जीवितं देवी' इति। एवमभिहिता च पुनरवदत्—'आवेदयामि ते। अवहिता शृणु। स्वप्नेषु प्रतिदिवसमागत्यागत्य मे रहस्यसंदेशेषु निपुणधूर्तः पञ्जरशुकसारिका दूतीः करोति। सुप्तायाः श्रवणदन्तपत्रोदरेषु व्यर्थमनोरथमोहितमानसः संकेतस्थानानि लिखति। स्वेदप्रक्षालिताक्षरानपि निपतितसाञ्जनाश्रुबिन्दुपंक्तिकथितात्मावस्थानान्मनोहरान्संमोहाशानुवर्तिनो मदनलेखान्प्रेषयति। निजानुरागेण बलादरञ्जयदलक्तकरसेनेव चरणौ। अविनयनिश्चेतनो नख-

---

अपने कलंकको धो डालूँगी।' ऐसा कहकर वे चुप हो गयीं।

मैं तो उनका मनोभाव जानकर जैसे लजा गयी, डर गयी, घबरा गयी, अचेत हो गयी। बड़े ही दुःखके साथ मैंने कहा—'देवि! मैं यह जानना चाहती हूँ कि युवराज चन्द्रापीडने क्या किया? उनसे कौन-सा अपराध हो गया? उन्होंने कौनसा ऐसा अशिष्ट व्यवहार किया कि जिससे आपका न खिन्न करने योग्य मकुद सदृश कोमल मन खिन्न हो उठा? उसे सुनकर पहले मैं अपना तन त्यागूँगी, तब आप त्यागिएगा।' मेरे ऐसा कहनेपर वे पुनः बोलीं—'मैं कह रही हूँ। तुम सावधान मनसे सुनो। रातको जब मैं सो जाती हूँ, तब वह धूर्त प्रतिदिन आ-आकर पींजरेके सुग्गों और मैनाओंको रहस्यकी बातें बताकर अपनी दूती बना जाता है। मैं सोयी रहती हूँ, तभी वह व्यर्थकी अभिलाषाओं द्वारा मोहकर मेरे कानोंके दंतपत्रोंमें संकेतका स्थान लिख जाता है। मुझपर मोहित होनेके कारण मिलनकी आशावश वह बहुतेरे ऐसे मदनलेख (प्रेमपत्र) भेजता है कि जिनके अक्षर पसीनेके कारण बिगड़े होते हैं, किंतु उसपर टपके अंजनमिश्रित अश्रुबिन्दुओंकी पंक्तिको ही देखकर मैं समझ लेती हूँ कि उसकी क्या स्थिति है। वह बरियाई मेरे पाँवोंको अपने गाढ़ अनुरागसे इस तरह रँग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रतिबिम्बितमात्मानं बहु मन्यते। उपवनेष्वेकाकिन्या ग्रहणभयपलायमानायाः पल्लवलग्नांशुकदशाप्रतिहतगमनया गृहीत्वेव सखीभिरर्पिताया मिथ्याप्रगल्भः पराङ्मुखायाः परिष्वङ्गमाचरति। स्तनस्थले मे लिखन्पत्रलेखां कुटिलतामिवानृजुप्रकृतिः प्रकृतिमुग्धं मनः शिक्षयति। हृदयोत्कलिकातरंगवातैरिव शीतलैर्मुखमरुद्भिः श्रमजलशीकरतारकितावलीकचाटुकारः कपोलौ वीजयति। स्वेदसलिलशिथिलितग्रहणगलितोत्पलशून्येनापि करेण यवाङ्कुरानिव नखकिरणाञ्शुद्धान्दुर्विदग्धः कर्णपूरीकरोति। वल्लभतरबालबकुलसेककालकवलीकृतान्सुरागण्डूषान्सकचग्रहमसकृद्धृष्टो मां पाययति। भवनाशोकताडनोद्यतान्पादप्रहारान्दुर्बुद्धिविडम्बितः शिरसा प्रतीच्छति। मन्मथमूढमानसश्च कथय हे पत्रलेखे, केन प्रकारेण निश्चेतनो निषिध्यते। प्रत्याख्यानमपीर्ष्यां संभावयति।

जाता है, जैसे महावरसे रँगा हुआ हो। मुझसे बातें करके चुपकेसे चला गया, इस अशिष्ट व्यवहारसे अचेत होकर वह मेरे नखपर पड़ी अपनी परछाईंको भी धन्य मानता है। उपवनमें उसके हाथों पकड़ी जानेके भयसे जब मैं अकेली भागती हूँ और पल्लवोंमें साड़ीका पल्ला फँस जानेसे रुक जाना पड़ता है, तब वे लतारूपिणी सखियाँ मुझे उसके हवाले कर देती हैं। उस समय जब मैं मुँह फेर लेती हूँ, तब वह झूठा और ढीठ पीछेसे आकर मेरा आलिंगन कर लेता है। मेरे स्तनोंपर पत्तियाँ और लतायें लिखकर वह कुटिल मेरे स्वभावसे ही भोले-भाले मनको कुटिलताकी सीख देता है। झूठी चापलूसी करनेवाला वह धूर्त श्रमजलकी नन्हीं-नन्हीं बूँदोंकी तारिकाओं भरे मेरे कपोलोंपर जैसे हृदयकी उत्कण्ठारूपी तरङ्गोंपरसे होकर जानेवाली शीतल मुखवायुसे पंखा किया करता है। वह दुर्विदग्ध पसीनेके पानीसे गीला होनेके कारण कमलपुष्पके गिर जानेपर भी अपने खाली हाथसे ही यवांकुर सरीखी अपनी विशुद्ध नखकिरणोंका कर्णपूर मेरे कानोंमें पहनाता है। जब कि मैं अपने प्रिय मौलसिरीके पौधोंको सींचती रहती हूँ, उसी समय मेरे केश पकड़कर वह ढीठ अपने मुखमें भरी हुई मदिराकी घूटोंको मुझे पिला दिया करता है। जब मैं अपने महलमें विद्यमान अशोक वृक्षपर चरणप्रहार करने लगती हूँ, तब उस प्रहारको वह छलिया अपने मस्तकपर ले लेता है। पत्रलेखा! अब तुम्हीं बताओ कि कामवश मूढ मन होनेके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आक्रोशमपि परिहासमाकलयति । असंभाषणमपि मानं मन्यते । दोषसंकीर्तनमपि स्मरणोपायमवगच्छति । अवज्ञानमप्यनियन्त्रणं प्रणयमुत्प्रेक्षते । लोकापवादमपि यशो गणयति' इति । तामेवंवादिनीमाकर्ण्य प्रहर्षरसनिर्भरा मनस्यकरवम्—'अहो! चन्द्रापीडमुद्दिश्य सुदूरमाकृष्टा खल्वियं मकरकेतुना । यदि च सत्यमेव कादम्बरीव्याजेन साक्षान्मनोभवचित्तवृत्तिः प्रसन्ना देवस्य, ततः सहजैः सादरं संवर्धितैः प्रत्युपकृतमस्य गुणैः, यशसा धवलिताः ककुभः, यौवनेन रतिरससागरतरंगैः पातिता रत्नवृष्टिः, यौवनविलासंलिखितं नाम शशिनि, सौभाग्येन प्रकाशिता निजश्रीः, लावण्येनैन्दवीभिरिव वृष्टममृतं कलाभिः । तथा च चिराल्लब्धः कालो मलयानिलेन, समासादितोऽवसरश्चन्द्रोदयेन, प्राप्तमनुरूपं फलं मधुमासकुसुमसमृद्ध्या, गतो मदिरारसदोषो गुणताम्, दर्शितं मुखं मन्मथयुगावतारेण' इति । अथाहं प्रकाशं विहस्याब्रवम्—

कारण अचेत उस धूर्तको मैं किस तरह रोकूँ ? वह प्रेमभंगको ईर्ष्या समझता है। डाँट-फटकारको परिहास, असंभाषणको सम्मान और दोषदर्शनको वह स्मरणका उपाय मानता है अपमानको भी वह उद्दाम प्रेम मानता है और जगहँसाईको भी वह अपनी कीर्ति समझता है।' उनकी ऐसी बातें सुनकर मुझे असीम प्रसन्नता हुई और मैं अपने मनमें सोचने लगी—'अहो! कामदेव इस बेचारीको चंद्रापीडकी ओर बहुत दूर तक खींच ले गया है। यदि वास्तवमें कादम्बरीके बहाने साक्षात् भगवान् कामदेवकी चित्तवृत्ति ही युवराजपर प्रसन्न हो गयी है। तब तो उनके स्वाभाविक और सावधानीके साथ संवर्धित गुणोंने संसारका बहुत बड़ा उपकार किया। उनके यशने दसों दिशाओंको उज्ज्वल कर दिया। उनके यौवनने रतिरसरूपी महासमुद्रकी तरङ्गों जैसे रत्नोंकी वृष्टि कर दी। यौवनविलासोंने मानो चन्द्रमाके मुखमें अपना नाम लिख दिया। उनके सौभाग्यने अपनी शोभा प्रकाशित कर दी। उनके लावण्यने जैसे चन्द्रमाकी कलाओंसे अमृतकी वर्षा कर दी। इसी प्रकार मलयवायुको बहुत समय बाद अब अवसर मिला, चन्द्रोदयने अब मौका पाया, वसन्तकालीन कुसुमसम्पदाने अपने अनुरूप फल प्राप्त किया, मदिराके दोष गुणरूपमें परिणत हो गये और मन्मथयुगके अवतारने अपना मुख दिखलाया।' तदनंतर प्रकट-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देवि, यद्येवमुत्सृज कोपम् । प्रसीद । नार्हसि कामापराधैर्देवं दूषयितुम् । एतानि खलु कुसुमचापस्य चापलानि शठस्य, न देवस्य' इत्येवमुक्तवतीं मां पुनः सकुतूहला सा प्रत्यभाषत—'योऽयं कामः कोऽपि वा, कथय कानि कान्यस्य रूपाणि' इति । तामहं व्यजिज्ञपम्—'देवि, कुतोऽस्य रूपम् । अतनुरेष हुताशनः । तथा हि अप्रकाशयञ्ज्वालावलीः संतापं जनयति, अप्रकटयन्धूमपटलमश्रु पातयति, अदर्शयन्भस्मरजोनिकरं पाण्डुतामाविर्भावयति । न च तद्भूतमेतावति त्रिभुवनेऽस्य शरशरव्यतां यन्न यातं याति यास्यति वा । को वास्मान्न त्रस्यति । गृहीतकुसुमकार्मुको बाणैर्बलवन्तमपि विध्यति । अपि चानेनाधिष्ठितानां कामिनीनां पश्यतीनां चिन्ताप्रियमुखसहस्रसंकटमम्बरतलम्, लिखन्तीनां दयिताकारानविस्तीर्णं महीमण्डलम् , गणयन्तीनां वल्लभगुणानसंख्यान् , शृण्वन्तीनां प्रियतमकथामबहुभाषिणीं सरस्वतीम् , ध्याय-

---

रूपमें मैंने हँसकर कहा—'देवि ! यदि ऐसी बात है तो आप कोप त्यागकर प्रसन्न हो जायँ। कामदेवके दोषको युवराजपर मढ़ना आपके लिए उचित नहीं है। यह सब तो उस शठ मदनकी चञ्चलता है । उसमें युवराजका क्या कुसूर है ?' मेरे यह कहनेपर बड़े कुतूहलके साथ वे बोलीं—'यह काम है या और कोई, तुम मुझे यह बताओ कि इसका रूप कौन-कौनसा है ?' मैंने कहा—'देवि ! इसके रूप कहाँ है ? यह तो अशरीरी आग है। क्योंकि यह कामदेव अपनी लपटोंका प्रकाश फैलाये बिना ही दाह उत्पन्न कर देता है। धुआँ प्रकट किये बिना ही यह आँखोंसे आँसू बहा देता है और भस्मराशि प्रकट किये बिना ही यह शरीरपर पांडुता ला देता है । संसारमें कोई भी ऐसा प्राणी नहीं है कि जिसपर इसके बाणोंका असर न हुआ हो, न हो रहा हो अथवा न होनेवाला हो । इससे कौन नहीं डरता ? यह कुसुमधनुष लेकर अपने बाणोंसे बड़े-बड़ोंको भी बींध डालता है । इसके वशीभूत होकर जो नारियाँ कल्पना कर करके अपने प्रियतमका हजारों चन्द्रमुख देखती हैं, उनको आकाश भी छोटा लगता है। जो अपने प्रियतमका चित्र बनाती हैं, उनको सारी पृथिवी छोटी दीखती है। जो अपने नायकके गुण गिनती हैं, उनको संख्या ही नहीं मिलती । जो अपने प्रियतमके सम्बन्धकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्तीनां प्राणसमसमागमसुखानि ह्रसीयान्कालो हृदयस्यापतति' इति।

एतदाकर्ण्य च क्षणं विचिन्त्य प्रत्यवादीत्—'पत्रलेखे, यथा कथयसि तथा जनोऽयं कारितः कुमारे पक्षपातं पञ्चेषुणा। यान्यस्यैतानि रूपाणि समधिकानि वा तानि मयि वर्तन्ते। हृदयादव्यतिरिक्तासीदानीं भवतीमेव पृच्छामि। उपदिश त्वं यदत्र मे सांप्रतम्। एवंविधानां वृत्तान्तानामनभिज्ञास्मि। अपि च मे गुरुजनवक्तव्यतां नीताया नितरां लज्जिताया जीवितान्मरणमेव श्रेयः पश्यति हृदयम्' इति। एवंवादिनीं भूयस्तामहमेवमवोचम्—'अलमलमिदानीं देवि, किमनेनाकारणमरणानुबन्धेन। वरोरु, अनाराधितप्रसन्नेन कुसुमशरेण भगवता ते वरो दत्तः। का वात्र गुरुजनवक्तव्यता यदा खलु कन्यकां गुरुरिव पञ्चशरः संकल्पयति, मातेवानुमोदते, पितेव ददाति, सखीवोत्कण्ठां जनयति,

---

असंख्य बातें सुनती हैं, उनको सरस्वती भी स्वल्पभाषिणी प्रतीत होती है और जो अपने प्राण जैसे प्रणयीके मिलन-सुखका ध्यान करती हैं, उनके मनको काल भी बहुत ही स्वल्प प्रतीत होता है।'

मेरी इन बातोंको सुना तो क्षणभर सोचकर देवी कादम्बरी पुनः बोलीं—'पत्रलेखे! जैसा तुम कहती हो, ठीक उसी तरह मदनने मुझे राजकुमार चन्द्रापीडका पक्षपाती बना दिया है। उसके जितने रूप हैं या हो सकते हैं, उनसे बहुत अधिक रूप मुझमें विद्यमान हैं। तुम मेरे हृदयसे दूर नहीं हो, इसलिए मैं तुम्हींसे पूछती हूँ। अब मुझे ऐसी सलाह दो कि जो मेरे लिए उपयोगी हो। क्योंकि मैं ऐसी-ऐसी बातोंसे अनभिज्ञ हूँ। और फिर मेरा हृदय तो यही कहता है कि अब गुरुजनोंमें मेरी निन्दा होगी और मुझे लज्जित होना पड़ेगा। इसलिए मर जाना ही अच्छा है।' इन बातोंको कहती हुई देवी कादम्बरीसे मैं फिर बोली—'देवी! बस-बस, अब बहुत हो गया। इस प्रकार निष्प्रयोजन बार-बार मरनेका निश्चय करनेसे क्या लाभ? हे सुजंघे! भगवान कामदेवने बिना आराधनाके ही प्रसन्न होकर आपको वरदान दिया है। इसके सिवाय जब कि भगवान् मदन स्वयं गुरुकी भाँति संकल्प करते हैं, माताकी तरह अनुमोदन करते हैं, पिताकी तरह दान देते हैं, सखीकी नाईं उत्सुकता जाग्रत करते हैं और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धात्रीव तरुणतायां रत्युपचारं शिक्षयति। किमिव कथयामि ते याः स्वयं वृतवत्यः पतीन्। यदि च नैवमनर्थक एव तर्हि धर्मशास्त्रोपदिष्टः स्वयंवरविधिः। तत्प्रसीद देवि, अलममुना मरणानुबन्धेन। शपे ते पादपङ्कजस्पर्शेन। संदिश। प्रेषय माम्। यामि। आनयामि देवि, ते हृदयदयितम्' इत्येवमुक्ते मया प्रीतिद्रवार्द्रया दृष्ट्या पिबन्तीव मां निरुध्यमानैरपि मकरकेतुशरजर्जरितां भित्त्वेव लज्जां लब्धान्तरैर्निष्पतद्भिरनुरागविभ्रमैराकुलीक्रियमाणा प्रियवचनश्रवणप्रीत्या च खेदाश्लिष्टमुत्क्षिप्य रोमाञ्चजालकेन दधतीवोत्तरीयांशुकं प्रेङ्खत्कुण्डलमाणिक्यपत्रमकरकोटिलग्नं च शशिकिरणमयं मरणपाशमिव मकरकेतुना निहितं कण्ठे हारमुन्मोचयन्ती प्रहर्षविह्वलान्तःकरणापि कन्यकाजनसहजां लज्जामिवालम्ब्य शनैः शनैरवदत्—'जानामि ते गरीयसीं प्रीतिम्।

धायकी तरह जवानीमें रतिके उपचारकी सीख देते हैं, तब गुरुजनों द्वारा निन्दित होनेकी बात ही क्या है? और अधिक मैं कहाँ तक कहूँ, इन भगवान्‌की कृपासे बहुतेरी कुमारियोंने स्वयं अपना पति चुन लिया है। यदि ऐसा न होता तो धर्मशास्त्रविहित स्वयंवरकी विधि ही व्यर्थ हो जाती। अतएव हे देवि! आप प्रसन्न हों और बार-बार मरनेकी बात करना छोड़ दें। मैं आपके चरणोंकी शपथ खाकर कहती हूँ। आप मुझे सन्देश देकर भेजिए। मैं जाकर आपके प्राणवल्लभको यहाँ लाकर उपस्थित कर दूँगी।' मेरे ऐसा कहनेपर वे अपने प्रेमरस भरे नयनोंसे इस तरह निहारने लगीं कि जैसे मुझे पी जायँगी। रोकनेपर भी मदनबाणके प्रहारसे छिन्न-भिन्न होती हुई लज्जाको भेद एवं प्रशस्त करके बाहर निकल पड़नेवाले अनुरागविलाससे जैसे घबराती हुई तथा मीठी बातें सुनकर उभड़ी एवं पसीनेसे चिपकी ओढ़नीको जैसे रोमांचके बहाने तनिक ऊपर उठाकर पुनः ओढ़ती तथा झूलनेवाले कुण्डलों एवं माणिक्यपत्ररचित मकरके अग्रभागमें फँसे हारको जैसे कामदेव द्वारा कंठमें डाले हुए चन्द्रकिरणमय मरणपाशकी भाँति खोजती तथा हर्षातिरेकके कारण विकलमनस्क होती हुई भी कुमारिकाजनसुलभ लज्जाका अवलम्बन करती हुई धीरेसे बोलीं—'पत्रलेखा! मैं जानती हूँ कि तुम्हारा अत्यधिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केवलमकठोरशिरीषपुष्पमृदुप्रकृतेः कुतः प्रागल्भ्यमेतावन्नारीजनस्य, विशेषतो बालभावभाजः कुमारीलोकस्य साहसकारण्यस्ता याः स्वयं संदिशन्ति, समुपसर्पन्ति वा स्वयम्, साहसं संदिशन्ति। बाला जिह्रेमि। किं वा संदिशामि ? अतिप्रियोऽसीति पौनरुक्त्यम्, न तवाहं प्रियात्मेति जडप्रश्नः, त्वयि गरीयाननुराग इति वेश्यालापः, त्वया विना न जीवामीत्यनुभवविरोधः, परिभवति मामनङ्ग इत्यात्मदोषोपालम्भः मनोभवेनाहं भवते दत्तेत्युपसर्पणोपायः, बलाद्धृतोऽसि मयेति बन्धकीधाष्टर्यम्, अवश्यमागन्तव्यमिति सौभाग्यगर्वः, स्वयमागच्छामीति स्त्रीचापलम्, अनन्यरक्तोऽयं परिजन इति स्वभक्तिनिवेदनलाघ-

---

प्रेम मेरे ऊपर है। किन्तु सिरीषकुसुम सदृश कोमल एवं सुकुमार स्वभाववाली नारीजाति और विशेष करके बाल्यभावसम्पन्न कुमारी कन्याओंमें इस प्रकारका साहस भला कैसे आ सकता है। और फिर जो कुमारियाँ स्वतः सन्देश भेजती हैं या कि अपने मनसे प्रणयीके पास चली जाती हैं, वे साहसकारिणी कहलाती हैं। बाला होनेके कारण सन्देश भेजनेमें मुझे लाज लगती है है। और फिर भेजूँ भी तो क्या सन्देश भेजूँ ? यदि कहूँ कि 'तुम मुझे बहुत प्रिय हो' तो यह पुनरुक्ति होगी। यदि कहूँ कि 'क्या मैं तुम्हारी प्राणप्यारी नहीं हूँ ?' तो यह प्रश्न ही मूर्खतापूर्ण होगा। यदि कहूँ कि 'तुम्हारे ऊपर मेरा प्रबल अनुराग है' तो यह वेश्याओंकी कही हुई बात होगी। यदि कहूँ कि 'मैं तुम्हारे बिना मर रही हूँ' तो यह अनुभवविरुद्ध बात होगी। यदि कहूँ कि 'मुझे कामदेव सताता है' तो यह अपने ही दोषका उलाहना देना होगा। यदि कहूँ कि 'कामदेवने मुझे तुम्हारे हवाले कर दिया है' तो यह स्वेच्छासे भाग जानेका एक उपाय माना जायगा। यदि कहूँ कि 'मैंने बलपूर्वक आपका पल्ला पकड़ लिया है' तो यह एक कुलटाकी धृष्टताभरी वाणी होगी। यदि कहूँ कि 'आप अवश्य आइए' तो यह अपनी सुन्दरतापर गर्व करनेकी बात होगी। यदि कहूँ कि 'मैं स्वयं आपके पास आती हूँ' तो यह नारीजातिकी चंचलता होगी। यदि कहूँ कि 'यह दासी आपके सिवाय और किसीसे प्रेम नहीं करती' तो यह भक्तिप्रदर्शनका एक ओछा उपाय माना जायगा। यदि कहूँ कि 'ठुकरानेके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वम्, प्रत्याख्यानशङ्कया न संदिशामीत्यप्रबुद्धबोधनम् , अनपेक्षिता-नुजीवितदुःखदारुणा स्यामित्यतिप्रणयिता, ज्ञास्यसि मरणेन प्रीतिमि-त्यसंभाव्यम्' इति ।

इति श्रीबाणभट्टप्रणीतः कादम्बरीपूर्वभागः समाप्तः ।

भयसे मैं सन्देश नही भेजती' तो यह एक अनजानी बातको प्रकट करना होगा । यदि कहूँ कि 'तुम्हारे विरहमें मुझे जीवन बोझ लगता है और असह्य दुःख हो रहा है' तो यह अत्यधिक प्रेमका प्रदर्शन होगा । यदि कहूँ कि 'जब मैं मर जाऊँगी तब मेरे प्रेमको जानिएगा' तो यह बात असम्भव है ।

इति श्रीपाण्डेय-रामतेजशास्त्रिप्रणीतायां 'अर्चना'ऽभिधायां हिन्दी-टीकायां श्रीबाणभट्टकृतायाः कादम्बर्याः पूर्वभागः समाप्तः ।

समाप्तोऽयं पूर्वभागः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
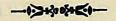
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

महाकवि-बाणभट्टतनयपुलिनभट्टप्रणीता–

कादम्बरी

'अर्चना'ऽऽह्वया हिन्दीटीकयोपेता ।
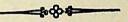
उत्तरभागः

देहद्वयार्धघटनारचितं शरीरमेकं ययोरनुपलक्षितसंधिभेदम् ।
वन्दे सुदुर्घटकथापरिशेषसिद्ध्यै स्रष्टेर्गुरू गिरिसुतापरमेश्वरौ तौ ॥१॥
व्याधूतकेसरसटाविकरालवक्त्रं हस्ताग्रविस्फुरितशङ्खगदासिचक्रम् ।
आविष्कृतं सपदि येन नृसिंहरूपं नारायणं तमपि विश्वसृजं नमामि ॥२॥

मैं पुलिनभट्ट अत्यन्त कठिनाईसे रची जानेवाली कादम्बरीकी शेष कथा पूर्ण करनेके लिए उन हिमालयतनया भगवती पार्वती तथा भगवान् शंकरके अर्धनारीश्वर-स्वरूपको प्रणाम करता हूँ कि जिसमें कहींसे भी संधिका जोड़ नहीं दिखायी देता । जिन दोनोंका आधा-आधा शरीर जुटकर एक बना है और जो समस्त संसारके माता-पिता हैं ॥१॥ तदनन्तर मैं उन विश्वस्रष्टा नारायणके नृसिंहस्वरूपको प्रणाम करता हूँ कि फरफराती हुई केसरसटा (गर्दनके बाल) के कारण जिनका मुख बड़ा भयंकर दीखता है, जिनके चारों हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और खड्ग विद्यमान है और जिन्होंने अपने भक्तकी रक्षाके लिए नृसिंहरूप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आर्यं यमर्चति गृहे गृह एव लोकः पुण्यैः कृतस्य यत एव ममात्मलाभः ।
सृष्टैव येन च कथेयमनन्यशक्या वागीश्वरं पितरमेव तमानतोऽस्मि ॥ ३ ॥
याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्धं विच्छेदमाप भुवि यस्तु कथाप्रबन्धः ।
दुःखं सतां तदसमाप्तिकृतं विलोक्य प्रारब्ध एव स मया न कवित्वदर्पात् ४
गद्ये कृतेऽपि गुरुणा तु तथाक्षराणि यन्निर्गतानि पितुरेव स मेऽनुभावः ।
एकः प्लवोऽमृतरसास्पदचन्द्रपादसंपर्क एव हि मृगाङ्कमणेर्द्रवाय ॥ ५ ॥
गङ्गां प्रविश्य भुवि तन्मयतामुपेत्य स्फीताः समुद्रमितरा अपि यान्ति नद्यः ।
आसिन्धुगामिनि पितुर्वचनप्रवाहे क्षिप्ता कथानुघटनाय मयापि वाणी ६
कादम्बरीरसभरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयते जनोऽयम् ।
भीतोऽस्मि यन्न रसवर्णविवर्जितेन तच्छेषमात्मवचसाप्यनुसंदधानः ॥७॥

धारण किया था ॥ २ ॥ उनके बाद मैं अपने उन सर्वश्रेष्ठ पिताजीकी वन्दना करता हूँ कि जिनकी लोग घर-घर पूजा करते हैं । अनेक पुराकृत पुण्योंसे मैं जिनकी पुत्र हुआ हूँ । जिन्होंने ऐसे अद्भुत ग्रन्थकी रचना की, जैसा दूसरा कोई नहीं कर सकता था और जो वाणी (सरस्वती)के ईश्वर थे ॥३॥ उन पिताजीके स्वर्ग चले जानेपर उनकी वाणीके साथ ही साथ संसारमें जो कथाप्रबंध विच्छिन्न हो गया था । उसकी अपूर्णतासे सज्जनोंको दुखी देखकर ही मैं इसे पूर्ण करनेका कार्य आरम्भ कर रहा हूँ । इसमें मेरा कुछ कवित्वगर्व नहीं है ॥४॥ मेरे पिताजीने यद्यपि गद्यमें इस ग्रन्थकी रचना की थी । फिर भी उनकी लेखनीसे जैसे अक्षर निकले थे, वह उन्हींकी महिमा थी । तथापि मैं यह सोचकर इसे पूर्ण करनेको सन्नद्ध हुआ हूँ कि एक धारारूपमें बहनेवाले अमृतरसके अधिष्ठानस्वरूप चन्द्रमाकी किरणोंका सम्पर्क ही चन्द्रकान्तमणिको द्रवीभूत कर देनेके लिए पर्याप्त होता है । तात्पर्य यह कि जैसे चन्द्रकिरणोंके सम्पर्कसे चन्द्रकान्तमणि आर्द्र होकर जल बहाने लगता है, उसी प्रकार मेरी वाणीका प्रवाह भी पिताजीकी वाणीके प्रवाहमें मिलकर अमृतकी वर्षा करने लगेगा ॥५॥ जैसे पृथिवीतलकी छोटी-छोटी नदियाँ गंगाजीमें मिल तथा तन्मय होकर अनायास समुद्रमें मिल जाती हैं । उसी प्रकार मैं भी समुद्रपर्यन्त पहुँचनेवाली अपने पिताजीकी वाणीके प्रवाहमें मिलाते हुए इस कथाप्रबन्धको पूर्ण करनेके लिए अपनी वाणीका उपयोग कर रहा हूँ ॥ ६ ॥ जिस प्रकार लोग मद्य पीकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बीजानि गर्भितफलानि विकाशभाञ्जि वप्त्रैव यान्युचितकर्मबलात्कृतानि।
उत्कृष्टभूमिविततानि च यान्ति पुष्टिं तान्येव तस्य तनयेन तु संहृतानि ८

अपि चेदानीमानीतस्यापि कुमारस्य न ददाति तरलतालज्जिता लज्जैव दर्शनम्। मनोभवविकारवेदनाविलक्षं वैलक्ष्यमेव न पुरस्तिष्ठति। अप्रतिपत्तिसाध्वसजडा जडतैव नोपसर्पति। स्वयमुपसर्पणलघुलाघवमेव तत्प्रतिपत्तिस्थैर्यं नावलम्बते। बलात्तदानयनापराधभीता भीतिरेव न संमुखीभवति। अथ कथंचिद्गुरुजनत्रपया वा, राजकार्यानुरोधेन वा, चिरावलोकितसहसंवर्धितबन्धुजनोत्कण्ठया वा, सुहृन्मुखकमल-

---

मत्त हो जाते हैं और उन्हें सुधि-बुद्धि नहीं रहती, उसी प्रकार इस कादम्बरीका रस पीकर मस्त बने हुए लोग गुणदोषकी विवेचना करना भूल जाते हैं। अतएव रसवर्णविहीन वाक्योंका प्रयोग करते हुए इस अधूरे ग्रन्थको पूरा करनेमें मुझे भय नहीं लगता ॥ ७ ॥ जिन बीजोंमें फलोत्पादनकी शक्ति निहित है, जिन्हें स्वयं बोनेवालेने उपजाऊ जमीनमें बोया है, आवश्यक श्रम करके जिनकी सम्हाल की गयी है, जिनमें अंकुर निकलकर विकसित हो रहे हैं और प्रचुर फल लगने ही वाले हैं। उन्हीं बीजोंको उनका पुत्र मैं एकत्रित कर रहा हूँ। तात्पर्य यह कि पिताजीने जिन तत्त्वोंको चुनकर यह ग्रन्थ लिखना आरम्भ किया था, उन्हींका संकलन करके मैं इस ग्रन्थकी पूर्तिका कार्य आरम्भ करता हूँ ॥ ८ ॥

यदि तुम किसी तरह उन्हें यहाँ ले भी आओ तो चंचलताजनित लज्जा ही मुझे उनके दर्शनसे वंचित कर देगी। कामजनित विकारसे जायमान वेदना ही मुझे उनके समक्ष न टिकने देगी। कर्तव्यनिर्धारणकी असमर्थतासे जड़ बनी हुई मेरी जड़ता (सात्त्विकता) ही मुझे उनके पास न जाने देगी। स्वयं उनके समीप जानेकी लघुत्वभावनाके कारण मैं उनका कोई सत्कार न कर सकूँगी। उनको बलपूर्वक बुलानेकी बातको मैं अपराध समझती हूँ और उस अपराधके भयवश मैं उनके समक्ष न जा पाऊँगी। तथापि यदि किसी प्रकार गुरुजनोंसे लजाकर, राज्यकार्य आ पड़नेपर, चिरपरिचित तथा साथ-साथ खेले-खाये हुए बन्धुओंका सहवाससुख न छोड़ सकनेके कारण,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दर्शनेन वा, पुनरागमनखेदपरिजिहीर्षया वा, निजगृहावस्थानरुच्या वा, जन्मभूमिस्नेहेन वा, अनिच्छया वास्य जनस्योपरि पादपतनेनापि नानेतुमेव पारितो यदा मयि स्नेहात्कृतयत्नयापि प्रियसख्या पत्रलेखया तदा सुतरामेव न किंचित्। किं चाधुनाप्यधिकमुपजातम्। सैवाहं कादम्बरी यानेन कुमारेण मत्तमदमुखरमधुकरकुलकलकोलाहलाकुलिते कोककामिनीकरुणकूजिते विरहिजनमनोदुःखे, विकचदलारविन्दनिस्यन्दसुगन्धमन्दगन्धवाहानन्दितदशदिशि प्रदोषसमये, विकसितकुसुमामोदमुकुलितमानिनीमानग्रहोन्मोचनहस्ते कुसुमायुधे, कर्पूरविशदकरनिर्भरावर्जितज्योत्स्नाजलासारवर्षिणि चन्द्रमसि, दूरविक्षिप्तदलनिवहकुमुदकाननामोदवासितदिगन्तायाः कुमुदिन्यास्तटे, चन्द्रकरस्पर्शप्रवृत्तशशिमणिशिखरनिर्झरझंकारिणि क्रीडापर्वतनितम्बके, हृद्यहरिचन्दनरसकणिकाजालकच्छलेन तरलतलस्पर्शसुखसंभवस्वेदजलनिवहमिव व-

---

मित्रोंके मुखकमल सदा देखते रहनेकी उत्कण्ठावश, फिर इतनी दूर आनेके कष्टसे बचनेके लिए, अपने घरपर ही रहनेकी इच्छावश, जन्मभूमिके स्नेहवश अथवा मेरी चाह न रहनेके कारण यदि मेरी प्यारी सखी होनेके नाते अपार स्नेह रखती हुई भी तुम पैरों पड़ करके भी उन्हें यहाँ लानेमें असफल रहीं, तब तो सब बात ही समाप्त हो जायगी। और फिर पहलेसे अब अधिक क्या हो गया है? मैं वही कादम्बरी अब भी हूँ; जिसे राजकुमार चन्द्रापीडने हिमगृहमें पुष्पशय्यापर पड़ी देखा था। उस प्रदोषके समय मधु पीकर मस्त भौंरोंकी गुञ्जारके मीठे कोलाहलसे व्याकुल चकवीके करुण शब्द सुनकर विरही जन मन ही मन दुखी हो रहे थे। प्रफुल्लित कमलसे निकलनेवाली सुगन्धि लेकर वायु धीरे-धीरे चलती हुई दसों दिशाओंको आनन्दित कर रही थी। कामदेव विकसित पुष्पोंकी सुगन्धिसे बढ़े मानवाली मानिनियोंका मान छुड़ानेके काममें हाथ लगाये हुए था। चन्द्रमा अपनी कपूरकी तरह शुभ्र किरणराशिसे ज्योत्स्नारूपी जलकी वर्षा कर रहा था। तभी खिले हुए कुमुदवनकी मादक सुगन्धिसे सुवासित दिगन्तमयी कुमुदिनीके तटपर, चन्द्रमाकी किरणोंके स्पर्शसे चन्द्रकान्तमणिके शिखरसे झंकारपूर्वक बहते हुए झरनोंयुक्त क्रीडापर्वतपर, मनोहर हरिचन्दनके रसकी कणिकाओंके बहाने करतलस्पर्शके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इति तत्कालहारिणि मुक्तशिलापट्टशयने, कुसुमामोदसुरभितदशदिशि तुषारकणनिकरहारिण्यपि बहिरेव देहदाहमात्रकापहारिणि सर्वरम-णीयानां संदोहभूते हिमगृहे कुसुमस्रस्तरावलम्बिनी वीक्षिता। ममापि चापुनरुक्ततद्दर्शनस्पृहे ते एवैते लोचने, ययोरालोकनपथमसौ यातः। तदेव चेदमप्रतिपत्तिशून्यं हतहृदयम्, येनान्तः प्रविष्टोऽपि न पारितो धारयितुम्। तदेव चैतच्छरीरम्, येन तत्समीपे चिरमुदासीनेन स्थि-तम्। स एव चायं पाणिः, योऽलीकगुरुजनापेक्षो नात्मानं परिग्राहि-तवान्। अनपेक्षितपरपीडश्चन्द्रापीडोऽपि स एव योऽत्र वारद्वयमागत्य प्रतिगतः। मय्येवोपक्षीणमार्गणया वाऽकिंचित्करोऽन्यत्र पञ्चशरोऽपि स एव, यस्त्वयावेदितो मे।

प्रतिज्ञातं च मया महाश्वेतायाः—'त्वयि दुःखितायां नाहमात्मनः पाणिं ग्राहयिष्यामि' इति। तामहं पुनः पुनरप्यवदम्। सा तु 'देवि, मैवं

सुखसे उत्पन्न पसीनेके प्रवाह सदृश बहनेके कारण बहुत ही सुन्दर लगनेवाले मुक्ताशिलापट्टपर, जब कि पुष्पोंकी सुगन्धिसे दसों दिशायें गमक रही थीं और तुषारकणोंके इकट्ठे हो जानेसे सुन्दर लगनेपर भी केवल बाहर ही बाहर देहको शान्ति प्रदान करनेवाले समस्त रमणीय वस्तुओंकी राशिसदृश सुन्दर उस हिमगृहमें उन्होंने मुझे देखा था। बार-बार उनके दर्शनोंको लोलुप मेरे वे ही नेत्र हैं कि जिन्होंने उनको देखा था। वही मेरा ज्ञानहीन एवं मार खाया हुआ हृदय है। जो अन्तःकरणमें प्रविष्ट होकर भी उनको रोक नहीं सका। मेरा अब भी वही शरीर है कि जो उनके समक्ष बड़ी देरतक उदासीन बैठा रहा। अब भी वही मेरा हाथ है कि जिसने व्यर्थ गुरुजनोंकी अपेक्षा करके तत्काल अपनेको उनके हाथोंमें सौंपकर पाणिग्रहणकी रस्म नहीं पूर्ण कर ली। औरोंके क्लेशकी बातपर ध्यान न देनेवाले वे ही चन्द्रापीड हैं, जो दो-दो बार यहाँ आकर लौट चुके हैं और मुझे ही मार-मारकर अपने समस्त बाणोंको समाप्त करके अन्यत्र कुछ करनेमें असमर्थ कामदेव भी वही है, जिसके विषयमें तुमने बताया था।

उस समय मैंने महाश्वेताके समक्ष प्रतिज्ञा की थी कि 'जब तक तुम दुःखिनी रहोगी, तब तक मैं अपना पाणिग्रहण नहीं होने दूँगी।' यह बात मैंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्म मनस्यकरोः। कुमतिरियम्। अतिदारुणोऽयं पापकारी मकरकेतुः। कदाचिददृश्यमाने प्रियजने जनितहृदयानुरागाज्जीवितमप्यपहरति' इत्यब्रवीत्। तदपि नास्त्येव मे। मदनेन वा, दैवेन वा, विरहेण वा, यौवनेन वा, अनुरागेण वा, मदेन वा, हृदयेन वा, अन्येन वा केनापि दत्तः संकल्पमयः कुमारो जनसंनिधावपि केनचिदविभाव्यमानः सिद्ध इव सर्वदा मे ददाति दर्शनम। अपि चासाविव नायमकाण्डपरित्यागनिष्ठुरहृदयः। अयमेवास्माद्विरहकातरः। नायं नक्तंदिवं लक्ष्म्या समाकुलः। न पृथिव्याः पतिः। न सरस्वतीमपेक्षते। न कीर्तिशब्दं वर्धयति। पश्यामि चाहर्निशमासीनोत्थिता भ्राम्यन्ती शयाना जाग्रती निमीलितलोचना चलन्ती स्वप्नायमाना शयने श्रीमण्डपे गृहकमलिनीषूद्यानेषु लीलादीर्घिकासु क्रीडापर्वतके बालगिरिनदिकासु च यथा तमज्ञजनविडम्बनैकहेतुं विप्रलम्भकं कुमारं ते तथा कथितमेव मया।

उनसे कई बार कही थी। तब उन्होंने कहा—यह बात मनसे भी न सोचना। यह कुमति है। पापी कामदेव बड़ा दारुण है। यदि प्रेमीका दर्शन न हो तो यह हृदयमें अनुराग उत्पन्न करके प्राणीके प्राणतक ले लेता है।' किन्तु मुझमें यह बात नहीं है। कामदेवने, दैवने, विछोहने, यौवनने, अनुरागने, मदने, हृदयने अथवा अन्य किसीने मुझे एक संकल्पमय राजकुमार दे दिया है। वह लोगोंके बीच रहता हुआ भी किसीके द्वारा नहीं देखा जाता और सिद्ध पुरुषके समान मुझे नित्य दर्शन देता रहता है। वह तुम्हारे चन्द्रापीड जैसा निष्ठुरहृदय नहीं है कि मुझे अकारण त्याग दे। यह बेचारा तो मेरे ही वियोगसे डरा करता है। यह दिन-रात लक्ष्मीकी प्राप्तिके लिए व्याकुल नहीं रहता। यह कहींका पृथिवीपति नहीं है। यह सरस्वतीकी अपेक्षा नहीं करता। यह अपनी कीर्तिकी दुन्दुभी नहीं बजाता। मैं इसे रात-दिन बैठते, उठते, घूमते, सोते, जागते, आँखें मूँदे, चलते-फिरते, शय्यापर, श्रीमण्डपमें, गृहकमलिनीमें, उद्यानोंमें, वावलियोंमें, क्रीडापर्वतपर और पहाड़ोंकी छोटी-छोटी नदियोंमें देखती हूँ। उस भोली-भाली कन्याओंको ठगनेके मूल कारण तुम्हारे वंचक कुमारको जिस तरह देखती हूँ सो तो बता ही दिया। अतएव अब उन्हें यहाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तदलमनया तदानयनकथया' इत्यभिदधानाऽतर्कितागतमूर्च्छेव निमीलिताक्षी पक्ष्माग्रसंपिण्डितनयनजलवर्षिणी विलीयमानेवोत्पीड्यमानेवान्तर्जातमन्युवेगेन तथैव वेदिकाविताननाभिदामांशुकावलम्बिन्यां बाहुलतिकायामच्छसलिलप्रसूतायां मृणालिकायामिव जलाहतिश्यामारुणतामरसमिवाननमुपावेश्य तूष्णीमुत्कीर्णेव तस्थौ।

अहं तु तच्छ्रुत्वा समचिन्तयम्—सत्यमेव गरीयः खलु जीवितालम्बनमिदं वियोगिनीनाम्, यदुक्तं संकल्पमयः प्रियो नितरां कुलाङ्गनानां विशेषतः कुमारीणाम्। तथा हि। अनेन सार्धमकृतदूतिकापादपतनदैन्यान्यन्यानि च प्रतिक्षणं समागमशतान्यकालरमणीयानि स्वेच्छाभिसरणसौख्यान्यत्यन्तादूषितकन्यकाभावानि सुरतानि, सुरतेषु चाकृतस्तनव्यवधानदुःखान्यालिङ्गनानि, अजनितव्रणदर्शनव्रीडानि नखदन्तपदानि, अनाकुलितकेशपाशाः कचग्रहमहोत्सवाः, शब्दविही-

---

लानेकी बात छोड़ दो।' यह कहते-कहते जैसे एकाएक उनको बेहोशी आगयी हो, इस तरह नेत्र मूँदकर पलकोंमें एकत्रित किया हुआ अश्रुजल बरसाने लगीं। उस समय जैसे वे अपने आपमें गली जा रही थीं और भीतरी सन्तापके कारण बहुत पीड़ित हो रही थीं। अब भी वे उसी चौतरेके चँदवेसे लटकती डोरीमें बँधे कपड़ेका सहारा लिये और अपनी भुजारूपिणी लतापर मुख रखकर चिन्तितकी नाईं खामोश खड़ी थीं। उस समय उनका मुँह ऐसा दीख रहा था, जैसे निर्मल जलके प्रवाहमें उत्पन्न मृणालिकापर पानीका थपेड़ लगनेके कारण काला पड़ा हुआ लाल कमलपुष्प हो।

उनकी बात सुनकर मैं सोचने लगी—'यह सच है कि कल्पनामय प्रियतम कुलीन विरहिणी स्त्रियों और विशेष करके कुमारियोंके जीवनका तो बहुत बड़ा सहारा होता है। जैसे कि दूतियोंके पैरों पड़कर दैन्य प्रदर्शन किये बिना ही इसके साथ प्रतिक्षण शतशः समागमका सुख लूटा जा सकता है। कोई समय निश्चित न होनेके कारण जब चाहे तब अभिसारका आनन्द मिल जाता है। फिर इसके साथ ऐसा रमण होता है कि जिससे कुमारीत्वपर किसी प्रकारकी आँच नहीं आती। रतिके अवसरपर आलिंगन करते समय स्तनोंका व्यवधान बाधक नहीं होता। लज्जाजनक व्रणका दर्शन हुए बिना ही नखक्षत तथा दन्तक्षतका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नानि निधुवनानि, अनुत्पादितगुरुजनविभावितक्षतवैलक्ष्याण्यधरखण्डनविलसितानि। नैनमन्धकारराशिरन्तरयति, न जलधरधारापातः स्थगयति, न नीहारनिकरस्तिरोदधाति' इत्येवं चिन्तयन्त्या एव मेऽनुरागकथारसप्लवेनेव रक्ततामगाहिवसः। तत्क्षणं प्रकटितरागं हृदयमिव कादम्बर्यास्त्रपया पलायमानमदृश्यत रविमण्डलम्। पल्लवशयनमिव संध्यारागमरचयद्यामिनी। परिचारक इव चन्द्रमणिशिलाततलतल्पमकल्पयत्प्रदोषः। अत्रान्तरे चागत्य स्वं स्वं नियोगमशून्यं कुर्वाणा दूरतो दीपिकाधारिण्यो गन्धतैलावसिक्तसुरभिगन्धोद्गारिणीभिर्दीपिकाभिर्विरचितचक्रवालिका बालिकाः पर्यवारयन्। अथ निर्मललावण्यलक्षितानि दीपिकाप्रतिबिम्बानि ज्वलितानि मदनसायकस्य शल्यकानीवाङ्गलग्नानि समुद्वहन्तीं नवनिरन्तरकलिकाचितां चम्पकलतामिव तथास्थितां तां पुनर्व्यजिज्ञपम्—'देवि, प्रसीद। नार्हस्यखेदार्हा हृदयखेदका-

---

आनन्द प्राप्त हो जाता है। केशपाश खुले विना ही कचग्रहका महान् उत्सव सम्पन्न होता है। विना किसी प्रकारका शब्द हुए रतिक्रिया पूरी हो जाती है। क्षतव्रणपर गुरुजनोंकी दृष्टि पड़नेसे होनेवाली परेशानीके बिना ही अधरखण्डनके विलासका सुख मिल जाया करता है। अन्धकारराशि इसे छिपा नहीं पाती, मेघकी वर्षा इसे रोक नहीं सकती और तुषारका समूह इसको ढाँक नहीं पाता।' इन्हीं बातोंको मैं सोच रही थी कि इतनेमें जैसे इस अनुरागमयी कथाके रसमें सराबोर होकर दिन एकदम लाल हो गया। उसी समय अपनी लालिमा प्रदर्शित करता हुआ रविमण्डल लज्जावश कादम्बरीके हृदयकी भाँति भागता हुआ दीखने लगा। तत्काल निशासुन्दरीने पल्लवशय्याकी नाईं सन्ध्यारागकी रचना कर दी। प्रदोषकालने एक परिचारककी तरह चन्द्रकान्त मणिके शिलातलका बिछौना तैयार कर दिया। तदनन्तर अपने-अपने काममें संलग्न दीपकधारिणी बालिकायें आयीं और सुगन्धित तेलकी सुगन्धि फैलानेवाले दीपकोंका मण्डल जैसा बनाकर चारों ओर रख गयीं। उन निर्मल लावण्यमय दीपकोंके प्रतिबिम्ब पड़नेपर देवी कादम्बरी इस तरह दीखने लगीं, जैसे उनके शरीरभरमें कामबाणकी नोकें चुभी हुई हों। तदनन्तर नूतन कलिकाओंसे बोझिल चम्पक-लताकी नाईं शोभित उन देवीसे विनयपूर्वक मैंने फिर कहा—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिणं संतापमङ्गीकर्तुम्। संहर मन्युवेगम्। एषाहमादाय चन्द्रापीडमागतैव' इति। अथानेन देवनामग्रहणगर्भेण मद्वचसा विषापहरमन्त्रेण विषमूर्च्छितेव झटित्युन्मील्य नयने सस्पृहं मामवलोक्य 'कः प्रदेशेऽस्मिन्' इति परिजनमपृच्छत्।

अथ धवलवसनोल्लासितगात्रयष्टयः, द्वारप्रदेशसंपिण्डिताङ्गयः, परशुरामशरविवरविनिर्गता इव राजहंसपंक्तयः, कलहंसकलालापमधुररवैः प्रतिवाचमिव प्रयच्छद्भिर्नूपुरैः पतत्कर्णपूरपल्लवोल्लासितैश्चाज्ञाश्रवणाय धावद्भिरिव श्रवणैर्मौक्तिककुंडलांशुजालकानि स्कन्धदेशनिक्षिप्तानि चामरणीव वहन्त्यः, समाहतकपोलस्थलैः कुण्डलैर्बलादिव वाह्यमानाः, वाचालैः कर्णोत्पलमधुकरैः 'समाज्ञापय' इति व्याहरन्त्यः कन्यकाः समधावन्। आज्ञाप्रतीक्षासु च मुखकमलावलोकिनीषु च

'देवि! अब प्रसन्न हों। इस प्रकार खेदके अयोग्य आप अपने हृदयको दुखानेवाला खेद करके सन्तप्त न हों। इस शोकके आवेगको शान्त करिए। अब यह समझ लीजिए कि मैं चन्द्रापीडको लेकर आ गयी।' श्रीमान्के नामसे युक्त मेरी बात सुनकर वे इस प्रकार सचेत हो गयीं, जैसे कोई विषसे मूर्छित मनुष्य मंत्रप्रयोग द्वारा विष अपहृत कर लेनेपर स्वस्थ हो जाय। तुरन्त आँखें खोलकर उन्होंने मेरी ओर निहारा और 'यहाँ कौन है?' यों कहकर परिजनोंको बुलाया।

उनकी आवाज सुनकर कितनी ही कुमारिकायें दौड़ पड़ीं। उनका शरीर श्वेत वस्त्रसे सुशोभित था। उस सँकरे द्वारमें घुसनेके समय उन्होंने अपने अंग सिकोड़ लिये थे। अतः वे परशुरामके बाण द्वारा छिद्रित क्रौंच पर्वतसे निकली हंसपंक्तियों सरीखी दीख रही थीं। कलहंसोंसदृश मधुर ध्वनि करनेवाली उनकी पायलें जैसे कादम्बरीके प्रश्नका उत्तर दे रही थीं। उनके झूलते हुए कर्णपूरके पल्लवोंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे आज्ञा सुननेके लिए उनके कान आगे-आगे भागे जा रहे हैं। उनके मुक्तामय कुंडलोंका दीप्तिसमूह चमर जैसा दीखता था। उनके कपोलोंपर बार-बार टकरानेवाले कुण्डल जैसे उन्हें मार-मारकर बरबस आगे बढ़ा रहे थे। उनके कर्णकमलपर मँडरानेवाले भौंरे अपनी गुंजारके स्वरोंमें जैसे 'आज्ञा दीजिए' ऐसा कह रहे थे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तास्‌ क्रमेण दृष्टिं पातयन्ती मरकतशिलातले न्यषीदत्, अब्रवीच्च-'पत्रलेखे, न खलु प्रियमिति ब्रवीमि। त्वामेव पश्यन्ती संधारयाम्येव जीवितमहम्। तथापि यद्ययं ते ग्रहस्तत्साधय समीहितम्' इत्यभिधायाङ्गास्पृष्टनिवसनाभरणताम्बूलप्रदानप्रदर्शितप्रसादातिशयां मां व्यसर्जयत्।

इत्यावेद्य च किंचिदिव नमितमुखी शनैः पुनर्व्यजिज्ञपत्—'देव, प्रत्यग्रदेवीप्रसादातिशयाहितप्रागल्भ्या दुःखिता च विज्ञापयामि। देवेनाप्येतदवस्थां देवीं दूरीकुर्वता किमिदमापन्नवत्सलायाः स्वप्रकृतेरनुरूपं कृतम्' इति। चन्द्रापीडस्तु तथोपालम्भगर्भं विज्ञप्तः पत्रलेखया तं च कादम्बर्याः स्नेहोक्तिपुरःसरम्, गम्भीरं च, सतापं च, सपरिहासं च, साभ्यर्थनं च, साभिमानं च, सावहेलं च, सप्रसादं च, सनिर्वेदं च, सानुरागं च, सकोपं च, सनिर्विशेषं च, सावष्टम्भं च, सात्मार्पणं च, सोत्प्रासं च, सोपालम्भं च, सानुक्रोशं च, सस्पृहं च, सावधारणं

वहाँ पहुँचकर आज्ञाकी प्रतीक्षा करती और उनके मुखकी ओर निहारती हुई वे खड़ी हो गयीं। अब उन सबके ऊपर एक बार दृष्टिपात करके देवी उसी मरकतशिलापर बैठ गयीं और बोलीं—'पत्रलेखे! यह बात मैं तुम्हें खुश करनेके लिए नहीं कह रही हूँ। सच तो यह है कि तुम्हें देखकर ही मैं जीवित हूँ। फिर भी यदि तुम्हारा यही आग्रह है तो तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो।' ऐसा कहकर उन्होंने नवीन वस्त्र-आभूषण तथा ताम्बूल प्रदानपूर्वक अपनी अतिशय कृपा प्रदर्शित करके मुझे अपने यहाँसे विदा किया।

यह वृत्तान्त सुननेके बाद पत्रलेखाने अपना मुख तनिक नीचे करके चन्द्रापीडसे कहा—'देव! देवी कादम्बरीकी नूतन और अत्यधिक कृपा प्राप्त करके ढीठ बनी हुई मैं बड़े दुखके साथ आपसे पूछना चाहती हूँ कि ऐसी विषम अवस्थामें पहुँची हुई देवी कादम्बरीको छोड़कर क्या आपने अपनी वत्सलताके अनुरूप कार्य किया है?' इस प्रकार उलाहनापूर्ण पत्रलेखाका वचन सुन तथा कादम्बरीके स्नेह भरे, गम्भीर, सन्तापपूर्ण, परिहासयुक्त, प्रार्थनापूर्ण, अभिमानभरा, सरस, प्रसन्नतापूर्ण, वेदनासम्पन्न, अनुरागमय, गुस्सेके साथ, विशेषतायुक्त, साश्चर्य, आत्मसमर्पणपूर्वक, उत्कण्ठापूर्ण, उलाहनाभरा, निन्दायुक्त, स्पृहासम्पन्न, विचारयुक्त और मधुर होता हुआ भी कष्ट के साथ सुनने योग्य,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च, मधुरमपि दुःश्रवम्, सरसमपि शोषहेतुम्, कोमलमपि कठोरम्, नम्रमप्युन्नतम, पेशलमप्यहंकृतम, ललितमपि प्रौढमालापमाकर्ण्योत्प्रेक्ष्योत्प्रेक्ष्य च स्तिमितपक्ष्मतया दुर्विषहदुःखबाष्पोपप्लुतायतचक्षु तन्मुखं स्वभावधीरप्रकृतिरपि नितरां पर्याकुलोऽभवत्।

अथ कादम्बरीशरीरादिवालापपदैरेव सहागत्य युगपद्गृहीतो हृदये मन्युना, कण्ठे जीवितेन, अधरपल्लवे वेपथुना, मुखे श्वसितेन, नासाग्रे स्फुरितेन, चक्षुषि बाष्पेण तुल्यवृत्तिर्भूत्वा कादम्बर्याः धारद्बाष्पविक्षेपपर्याकुलादुच्चैः प्रत्युवाच—'पत्रलेखे, किं करोमि। अनेन दुःशिक्षितेन ज्ञानाभिमानिना पण्डितंमन्येन दुर्विदग्धेन दुर्बुद्धिनालीकधीरेण स्वयंकृतं मिथ्याविकल्पशतसहस्रभरितेनाश्रद्दधानेन मूढहृदयेन यद्यदेवानेकप्रकारं श्रृंगारनृत्ताचार्येण भगवता मनोभवेनान्तर्गतविकारावेदनाय मामुद्दिश्य बाला बलात्कार्यते, तत्तदेवादृष्टपूर्वत्वाद्धि दिव्यकन्यकानां

सरस होता हुआ भी शोषका कारण, कोमल होता हुआ भी कठोर, नम्र होता हुआ भी उद्धत, मधुर होता हुआ भी अहङ्कारपूर्ण और ललित होता हुआ भी प्रौढ़ कादम्बरीका कथन सुनकर चन्द्रापीडकी पलकें निश्चल हो गयीं और कठिनाईसे सहने योग्य दुःखके कारण उमड़े आँसुओंसे भरी बड़ी-बड़ी आँखोंवाले कादम्बरीके मुखकी उत्प्रेक्षा करता हुआ चन्द्रापीड स्वभावतः धीर प्रकृति होनेपर भी बहुत विह्वल हो उठा।

तदनन्तर पत्रलेखाके कहे हुए शब्दोंके साथ ही जैसे कादम्बरीके शरीरसे आकर शोकने हृदयपर, जीवनने कण्ठपर, कम्पने अधरोंपर, श्वासने मुखपर, फड़कनने नासिकाके अग्रभागपर और आँसुओंने आँखोंपर अधिकार कर लिया और वे सब एकाकार हो गये। अब ठीक कादम्बरीकी दशाको प्राप्त करके चन्द्रापीड आँसुओंकी धारा बहाता हुआ गद्गद वाणीसे बड़े ही उच्च स्वरमें बोला—'पत्रलेखा! मैं क्या करूँ? श्रृंगार तथा नृत्यके आचार्य भगवान् कामदेव जैसे अन्तःकरणका विकार प्रदर्शित करनेके लिए ही मेरे विषयमें सोचनेको विवश करके उस भोली-भाली कुमारीसे हठपूर्वक जो कुछ करा रहे हैं, वह सब अनोखा होनेके कारण उसके समान दिव्य कन्यकाओंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रूपानुरूपलीलासंभावनया च तावतो मनोरथानप्यात्मन उपर्यसंभावना च सर्वं सहजमेवैतदस्या इति विकल्पसंशयदोलाधिरूढं मां ग्राहयतैव-मीदृशस्य देव्या दुःखस्य तव चोपालम्भस्य हेतुतां नीतोऽस्मि। मन्ये च ममापि मनोव्यामोहकारी कोऽपि शाप एवायम्। अन्यथाऽप्रबुद्धबुद्धेरपि येषु न संदेह उपपद्यते, तेष्वपि स्फुटेषु मदनचिह्नेषु कथं मे धीर्व्यामु-ह्येत। तिष्ठन्त्वेव तावदतिसूक्ष्मतया दुर्विभाववृत्तीनि तानि स्मितावलो-कितकथितविहृतलीलालज्जायितानि, यान्यन्यथापि संभवन्ति। चिरा-नुभूतात्मकण्ठसंसर्गसुभगं हारमिममकृतपुण्यस्य मे तत्क्षणमेव कण्ठे कारयन्त्या किमिव नावेदितम्। अपि च हिमगृहकवृत्तान्तस्तु तवापि प्रत्यक्ष एव। तत्किमत्र प्रणयकोपाक्षिप्तयाप्यन्यथा व्याहृतं देव्या। सर्वं

रूपके अनुरूप कार्यकलाप समझ तथा अपने साथ ऐसी कामनाका होना असंभव मानकर मैंने सोच लिया कि यह सब कार्य करना उसका स्वभाव ही बन गया है। इसी कारण मुझ दुःशिक्षित, ज्ञानके अभिमानी, अपनेको विद्वान् समझनेवाले, दुर्विदग्ध, मिथ्या धैर्यधारी, स्वयं किये हुए सैकड़ों और हजारों झूठे सन्देहोंसे पूर्ण तथा अविश्वास्य मेरे मूर्ख हृदयने मुझे नाना प्रकारकी कल्पनाओं तथा संशयोंमें डालकर देवी कादम्बरीके ऐसे भीषण दुःख तथा तुम्हारे उलाहनेका कारण बना दिया है। मेरा तो ऐसा ख्याल है कि मुझे कोई ऐसा शाप लगा हुआ है, जो मेरे मनको मोहमें डाल रहा है। यदि यह बात न होती तो जिसे नासमझ व्यक्ति भी समझ सकता है, ऐसे कामदेवके सुस्पष्ट चिह्नोंको देख करके भी मुझे इस तरहका बुद्धिविभ्रम क्यों होता? बहुत सूक्ष्म होनेसे जो बातें कठिनाईसे समझी जा सकती हैं, जैसे मुसकाकर देखना, अटपटी बात कहना, तरह-तरहके हावभाव दिखाना और देखकर लजाना आदि कार्योंको छोड़ दो। क्योंकि ऐसे कार्य अन्य विचारसे भी हो सकते हैं। किन्तु बहुत समयतक अपने गलेमें पहने हुए इस शेष हारको तत्काल जब देवी कादम्बरीने मेरे गलेमें पहना दिया, तब उन्होंने अपना मनोभाव व्यक्त करनेमें क्या बाकी रक्खा? हिमगृहमें जो कुछ हुआ, वह तो तुमने भी प्रत्यक्ष देखा था। ऐसी परिस्थितिमें प्रणयकोप करके उन्होंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवायं विपर्ययान्मम दोषः। तदधुना प्राणैरप्युपयुज्यमानस्तथा करोमि यथा नेदृशमेकान्तनिष्ठुरहृदयं जानाति मां देवी' इत्येवं वदत्येव चन्द्रापीडेऽश्राविंतैव प्रविश्य वेत्रहस्ता प्रतीहारी कृतप्रणामा व्यज्ञापयत्—'युवराज, एवं समादिशति देवी विलासवती, कृतजल्पात्परिजनतः श्रुतं मया, यथा किल पृष्ठतः स्थिताद्य पत्रलेखाऽत्र पुनः परागता' इति। 'न च मे त्वय्यस्यां च कश्चिदपि स्नेहस्य विशेषो विलसतीति मयैवेयं संवर्धिता। अपि च तवापि कापि महती वेळा वर्तते दृष्टस्य। तदनया सहित एवागच्छ। मनोरथशतलब्धमतिदुर्लभं ते मुखकमलावलोकनम्' इति।

चन्द्रापीडस्तु तदाकर्ण्य चेतस्यकरोत्—'अहो! संदेहदोलाधिरूढं मे जीवितम्। एवमम्बा निमेषमपि मामपश्यन्ती दुःखमास्ते। पत्रलेखामुखेन चैवमाज्ञापितमागमनाय मे निष्कारणवत्सलेन देवीप्रसादेन। आजन्मक्रमाहितो बलवाञ्जननीस्नेहः, वाञ्छाव्याकुलं हृदयम्, अमो-

---

जो भी कहा, उसमें असत्य क्या है? अज्ञानवश किया हुआ सारा कसूर मेरा ही है। अतएव अब मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर भी ऐसा कुछ करूँगा कि जिससे वे मुझे निपट निष्ठुर न समझें।' जब चन्द्रापीड यह कह ही रहा था, तभी बिना पूर्वसूचनाके वेत्रहस्ता प्रतीहारीने आकर कहा—'युवराज! महारानी विलासवतीका कहना है कि 'वार्तालापके प्रसगमें मैंने परिजनों द्वारा सुना है कि पीछे रुकी हुई पत्रलेखा आ गयी है। बचपनसे मैंने उसे पाला है। इसलिए तुम्हारे तथा पत्रलेखाके ऊपर मेरा समान स्नेह है। तुम्हें भी देखे बड़ी देर हो गयी है। अतएव तुम उसे साथ लेकर शीघ्र यहाँ आ जाओ। सैकड़ों मनौतियोंसे तुम मुझे मिले हो, तुम्हारे मुखकमलका दर्शन मेरे लिए अतिदुर्लभ वस्तु है।'

माताका यह आदेश सुनकर चन्द्रापीडने मनमें सोचा—'अहो! मेरा जीवन संशयके झूलेपर झूला झूल रहा है। माताजी इस प्रकार पलभर भी मुझे देखे बिना विकल हो जाती हैं। उधर अकारण कृपालु देवी कादम्बरीने पत्रलेखाकी जबानी हेमकूट आनेकी आज्ञा भेजी है। एक तरफ जन्मसे ही बढ़ा हुआ बलवान् मातृस्नेह है और दूसरी ओर देवीको देखनेके लिए व्याकुल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च्यं तातचरणशुश्रूषासुखम्। प्रमाथी मन्मथहतकः, हारिणी गुरुजनलालना, दुःसहान्युत्कण्ठितानि, अनुबन्धिनी बान्धवप्रीतिः, कुतूहलिन्यभिनवप्रार्थना, मुखावलोकनः कुलक्रमागता राजानः, जीवितफलं प्रियतमामुखावलोकनम्, अनुरक्ताः प्रजाः, गरीयान्गन्धर्वराजसुतानुरागः, दुस्त्यजा जन्मभूमिः, परिग्राह्या देवी कादम्बरी, कालातिपातासहं मनः, विप्रकृष्टमन्तरं हेमकूटविन्ध्याचलयोः' इत्येवं चिन्तयन्नेव प्रतीहार्योपदिश्यमानमार्गः पत्रलेखाकरावलम्बी जननीसमीपमगात्। तत्रैव च तमनेकप्रकारजननीलालनसुखाचिन्तितदुर्विषहहृदयोत्कण्ठं दिवसमनयत्।

उपनतायां चात्मचिन्तायामिवान्धकारितदशदिशि शर्वर्याम्, अनिवार्यविरहवेदनोन्मथ्यमानमानसाकुलेषु कलकरुणमुच्चैर्व्याहरत्सु

हृदय है। एक तरफ पिताजीकी चरणसेवाका अत्याज्य सुख है और दूसरी ओर पापी कामदेव हृदयको झकझोर रहा है। एक ओर गुरुजनोंका मनोहारी प्यार है तो दूसरी तरफ विविध उत्कण्ठायें दुःसह दुःख दे रही है। एक तरफ बन्धुजनोंकी प्रीति वहाँ जानेमें बाधक हो रही है तो दूसरी ओर देवीकी नयी प्रार्थना कुतूहलको बढ़ावा दे रही है। एक तरफ अगणित कुलक्रमागत राजे मेरा मुँह जोहते हैं तो दूसरी ओर प्रियतमाका मुख देखकर जीवन सफल करनेका अवसर है। एक तरफ अपनी प्रजाका अनुराग है तो दूसरी ओर गन्धर्वराजकी पुत्रीका प्रबल प्रेम है। एक तरफ कठिनाईसे त्यागने योग्य जन्मभूमि है तो दूसरी ओर कादम्बरीको अपनाना भी आवश्यक है। एक तरफ विलम्ब सहनेमें असमर्थ उतावला मन है तो दूसरी ओर विन्ध्य और हेमकूटकी असाधारण दूरी है।' इन्हीं बातोंको सोचता हुआ चन्द्रापीड पत्रलेखाका हाथ पकड़े प्रतीहारीके बताये मार्गसे माताके पास गया। वहाँ माताके दुलारका विविध आनन्द लेते हुए उसने हृदयकी सारी उत्कण्ठा भूलकर पूरा दिन बिताया।

तदनन्तर आत्माकी चिन्ताके समान जब दसों दिशाओंमें अन्धकार फैलानेवाली रात आयी और अनिवार्य वियोगकी पीडासे विकल होकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चक्रवाकयुगलेषु, उत्तेजितस्मरशरं समुत्सर्पमाणेषु चन्द्रमसोऽङ्कोलधूलिधूसरालोकेष्वग्रमयूखेषु, विजृम्भमाणकुमुदिनीश्वासपरिमलग्राहिणि मन्दमावातुमारब्धे प्रदोपानिले च, शयनवर्ती निमीलितलोचनोऽप्यप्राप्तनिद्राविनोदो हेमकूटागमनखेदान्निपत्य विश्रान्तेनेव पादपल्लवच्छायायाम्, जंघानुरोधरोहिणा लग्नेनेव नाभिमुद्रायाम्, उल्लिखितेनेव विस्तारिणि नितम्बफलके, मग्नेनेव नाभिमुद्रायाम्, उल्लसितेनेव रोमराज्याम्, आरूढेनेव त्रिवलिसोपानहारिणि मध्यभागे, कृतपदेनेवोन्नतिविस्तारशालिनि स्तनतटे, मुक्तात्मनेव बाह्वोः कृतावलम्बनेनेव हस्तयोः, आलिष्टेनेव कण्ठे, प्रविष्टेनेव कपोलयोः, उत्कीर्णनेवाधरपुटे, ग्रथितेनेव नासिकासूत्रे, समुन्मीलितेनेव लोचनयोः, स्थितेनेव ललाटशालायाम्, अन्वितेनेव चिकुरभारान्धकारे, प्लवमानेनेव सर्वदिक्पथप्ला-

---

चकवा-चकईका जोड़ा उच्चस्वरसे करुण क्रन्दन करने लगा। जब अंकोलके रजकी भाँति धूमिल प्रकाशमयी चन्द्रमाकी अग्रगामिनी किरणें कामदेवके बाणोंको तीक्ष्ण करती हुई सब ओर फैलने लगीं और जब सायंकालीन वायु प्रफुल्लित कुमुदिनीके श्वासकी मादक सुगन्धि लेकर मन्द-मन्द बहने लगी, तब जाकर चन्द्रापीड अपनी शय्यापर लेटा। किन्तु आँखें मूँद लेनेपर भी उसे निद्राका सुख नहीं मिल सका। अब वह मन ही मन जैसे हेमकूटसे लौटनेकी थकावट दूर करनेके लिए कादम्बरीके चरणपल्लवकी छायामें पड़कर सुस्ताने लगा। वह जैसे उसकी पिंडलियोंपर चढ़कर सँटी हुई जघाओंमें जा चिपका। जैसे उसके चौड़े नितम्बपर जाकर चित्रित हो गया। उसकी नाभिमुद्रामें जाकर जैसे डूब गया। जैसे-उसकी रोमराजिमें पहुँचकर उल्लसित हो उठा। जैसे उसकी त्रिवलियों (पेटमें पड़नेवाली तीनों सिलवटों) की सीढ़ीकी सहायतासे उसके मनोहर मध्यभागपर चढ़ गया। जैसे वह कादम्बरीके ऊँचे और चौड़े स्तन तटपर जा बैठा। जैसे उसकी प्यारसे फैला हुई भुजाओंमें जाकर खो गया। जैसे उसके गलेसे चिपट गया। जैसे उसके कपोलोंमें समा गया। जैसे उसके अधरोंमें जैसे उत्कीर्ण हो उठा। जैसे उसके नासिकासूत्रमें पिरो गया। जैसे उसके नेत्रोंमें जाकर खिल उठा। जैसे उसके चौड़े ललाटपट्टपर आसन लगाकर बैठ गया। जैसे उसके केशकलापके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विनि लावण्यपूरप्लवे मनसा स स्मरायतनभूतस्य कादम्बरीरूपस्य।

उत्पन्नात्मीयबुद्धिश्च निर्भरस्नेहार्द्रचेतास्तत एव वासरादारभ्य तां प्रति गृहीतरक्षापरिकर इव यतो यत एव मण्डलितकुसुमकार्मुकं मकरध्वजमस्यां प्रहरन्तमालोकितवान्, ततस्तत एवात्मानमन्तरेऽर्पितवान्। 'एवमम्लानमालतीकुसुमकोमलतनौ निर्घृणं प्रहरन्न लज्जसे?' इत्युपालभमान इव दिवसमुत्तरलतारयान्तर्बाष्पया दृष्ट्या कुसुमचापम्, पुनः स्मरशरप्रहारमूच्छितां संज्ञामिव लम्भयितुं तामवयवैरुवाह स्वेदजललवानुत्ससर्ज च दीर्घदीर्घान्निःश्वासमारुतान्। तच्चेतनालम्भमुदित इव च सर्वाङ्गीणं क्षणमपि न मुमोच रोमाञ्चम्। सह्यते हृदयेन वेदना न वेति तद्वार्तां प्रष्टुमिव नियुक्तेन मनसा शून्यतामधार्षीत्। तत्प्रतिवार्ताकर्णनायैव च गृहीतमौनः सर्वदैवातिष्ठत्। तदाननालोकनान्तरितमिव

अँधेरेमें अटक गया और जैसे उसके सभी दिशाओंमें बहनेवाले लावण्यके प्रबल प्रवाहमें तैरने लगा। इस प्रकार वह कामदेवके मन्दिर सदृश कादम्बरीके सुन्दर रूपका स्मरण करने लगा।

जब उसे चेतना आयी, तब स्नेहाधिक्यसे आर्द्रहृदय हो उसी दिनसे जैसे कमर कसकर उसकी रक्षाके लिए सन्नद्ध हो गया। अब वह जहाँ कहीं भी पुष्पमय धनुष लेकर कामदेवको उसपर प्रहार करते देखता, वहीं बीचमें कूद पड़ता था। 'चमेलीके फूल जैसी कोमल देहपर इस तरह निर्मम प्रहार करते तुम्हें लज्जा नहीं आती?' इस प्रकार कहता हुआ वह अपने चंचल पुतलियोंवाले नयनोंमें आँसू भरके दिनभर कामदेवको लताड़ा करता था। तदनन्तर जैसे कामदेवके बाणोंके प्रहारसे मूर्छित कादम्बरीको सचेत करनेके लिए ही वह अपने सारे शरीरमें पसीनेकी बूँदें धारण करके लम्बी साँसोंको छोड़ता हुआ उसपर हवा करने लगता था। उसको होश आनेपर वह प्रसन्न हो जाता और अपने सर्वाङ्गमें व्याप्त रोमांचको क्षणभरके लिए भी नहीं दूर होने देता था। 'अब वेदना सह्य हो रही है?' यह पूछनेके लिए ही मानो वह अपना मन कादम्बरीके पास भेज देता था और स्वयं शून्यहृदय होकर बैठा रहता था। उत्तर सुननेके लिए ही जैसे वह मौनावलम्बन करके सदा चुप रहा करता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वमेव नाद्राक्षीत् । चन्द्रबिम्बेऽपि नास्य दृष्टिररमत । तदालापपूरितश्रोत्रेन्द्रिय इव न किंचिदपरमन्तःकर्णे कृतवान् । वीणाध्वनयोऽप्यस्य बहिरेवासन् । सुभाषितान्यपि न प्रवेशमलभन्त । सुहृद्वाचोऽपि परुष इवाभवन् । बान्धवजनजल्पितान्यपि नासुखायन्त । भावावगमभीत्येव यथापूर्वं न कस्यचिद्दर्शनमदात् । अनवरतमुक्तज्वालेन मदनहुतभुजान्तर्दह्यमानोऽपि गुरुजनत्रपया न सद्यःसमुद्धृतार्द्रारविन्दशयनमभजत । न सरसबिसलताजालकानि गात्रेष्वकरोत् । न जललवमौक्तिकक्षोदतारकितान्यजरठपद्मिनीपत्राणि पार्श्वेऽप्यकारयत् । न कुसुमपल्लवस्रस्तररचनामादिदेश । नानवरतधारानिपातोल्लसितशिशिरसीकराबद्धदुर्दिनं ददर्शापि धारागृहम् । न मकरन्दसंततसंपातशीतलाभ्यन्तराणि हर्म्योद्यानलताभवनान्यप्यसेवत, न मलयजजललुलितपृष्ठेषु मणिकुट्टिमेष्व-

---

था। एक बार कादम्बरीका मुख देख लेनेपर अब जैसे उसे सब कुछ फीका लगता था। इसी कारण वह किसी भी वस्तुकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता था। चन्द्रमण्डलसे भी उसकी आँखोंको सुख नहीं मिलता था। जैसे उसकी बात सुन लेनेसे कान भर गये थे, इसीसे उसे कुछ भी नहीं सुनायी देता था। बीणाकी ध्वनि भी सुनायी न देकर बाहर ही रह जाती थी। सुभाषित भी उसके हृदयमें नहीं प्रविष्ट हो पाते थे। मित्रोंकी वाणी भी उसे कर्कश लगती थी। बान्धवोंके वचन भी उसे सुख नहीं देते थे। 'कोई मेरे मनोभावको भाँप न ले' इसी भयसे वह पहलेके समान किसीके समक्ष नहीं जाता था। अनवरत धधकती ज्वालायुक्त कामाग्निसे भीतर ही भीतर जलते रहनेपर भी वह गुरुजनोंकी लज्जासे तत्काल उत्पाटित गीले कमलपत्रकी शय्यापर नहीं सोता था। सरस मृणालकी लताओंको भी अपने अंगोंपर नहीं रखता था। जलकी नन्हीं-नन्हीं बिन्दुरूपी मोतियोंसे भरे ताजे कमलपत्रोंको भी वह बगलमें नहीं रखता था। सेवकोंको फूलों-पत्तियोंका बिछौना बिछानेका आदेश नहीं देता था। नित्य चलते हुए फौवारोंसे उड़नेवाले जलकणोंके कारण जहाँ सदा बरसात बनी रहती थी, उन धारागृहोंको भी उसने नहीं देखा। जिनके भीतर निरन्तर फूलोंका रस टपकते रहनेके कारण नित्य ठंढक बनी रहती थी, महलके उद्यानोंमें बने उन लताभवनोंका भी वह सेवन नहीं करता था। चन्दन-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यलुठदिच्छया। न तुहिनकरकरनिकरसंक्रान्तिहृद्येषु ललनाकरकलित-चन्द्रकान्तमणिदर्पणेष्वप्यसंक्रामयदात्मसंपातम्। किं बहुना नाश्यानहरिचन्दनरसचर्चामप्याचरणाददापयत्।

एवमेव केवलं रात्रौ दिवा चाकृतनिर्धृतिराज्वलताप्यदहनात्मकेन दहताप्यहृतस्नेहेन्धनेन दुःखानुभवनायैव भस्मसादकुर्वता मदनदहनेनान्तर्बहिश्च क्वाथ्यमानदेहः शोषमगात्, आर्द्रतां पुनः प्रतिक्षणाधीयमानवृद्धिं नात्याक्षीत्। एवं च निष्प्रतिक्रियतया दुस्त्यजतया वातिविसंस्थुलेनोपास्यमानोऽपि मनसिजेनाकारमेव लोकलोचनेभ्योऽरक्षत्, न कुसुमशरसायकेभ्यो जीवितम्। तनोरेव तानवमङ्गीचकार, न लज्जायाः। शरीरस्थितावेवानादरं कृतवान्, न कुलस्थितौ। प्रजा एवान्वरुध्यत न, मन्मथोत्कलिकाः। सुखमेवावधीरयामास, न धैर्यम्। एवं

मिश्रित जलसे धुली मणिभूमिपर भी वह लटनेकी इच्छा नहीं करता था। चन्द्रमाकी किरणें, पड़नेके कारण मनोरम ललनाओंके हाथोंमें विद्यमान तथा चन्द्रकान्तमणिनिर्मित दर्पणोंमें भी वह अपना प्रतिबिम्ब नहीं पड़ने देता था। और कहाँ तक कहा जाय, वह हरिचन्दनके गाढ़े रसका लेप भी चरणसे लेकर शरीर भरमें नहीं करने देता था।

इस तरह अपने स्वास्थ्यकी ओर तनिक भी ध्यान न देता हुआ चन्द्रापीड ज्वलनशक्तिसंपन्न होते हुए भी दाहकताविहीन, स्नेह (तेल अथवा अनुराग) रूपी ईंधनको जलाये बिना ही धधकती तथा दुःखका अनुभव करानेके लिए ही जैसे सर्वथा भस्म न कर देनेवाली कामाग्निके द्वारा बाहर-भीतरसे उबलता हुआ धीरे-धीरे अहर्निश सूखता रहा। तथापि उसने प्रतिक्षण बढ़नेवाली स्वेदजनित आर्द्रता नहीं त्यागी। इस प्रकार जिसका प्रतीकार नहीं किया जा सकता था और त्याग भी दुष्कर था, उस अत्यन्त कुटिल कामदेवकी दी हुई वेदनाको सहते हुए उसने लोगोंकी दृष्टिसे अपने आकारको ही बचाया, कामदेवके बाणोंसे जीवन बचानेकी चेष्टा नहीं की। उसने शरीरमें आनेवाली कृशताको स्वीकार कर लिया, किन्तु लज्जामें कृशता नहीं आने दी। शारीरिक स्थितिके प्रति उसने अनादरकी भावना अपनायी, किन्तु कुलीनतापर आँच नहीं आने दी। उसने प्रजाका आदर किया, किन्तु कामजनित आकां-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चास्य पुरः कादम्बरीरूपगुणावष्टम्भाहितप्राणेन बलवतानुरागेणाकृष्यमाणस्य, पश्चाद्गुरुजनप्रतिबन्धदृढतरेण महीयसा स्नेहेन च वार्यमाणस्य, गम्भीरप्रकृतेः सरित्पतेरिव चन्द्रमसा सुदूरमुल्लास्यमानस्यापि मर्यादावशादात्मानं स्तम्भयतः कथंकथमपि कतिपयेष्वपि सहस्रसंख्यायमानेष्वतिक्रान्तेषु वासरेषु, एकदा रणरणकसकाशादिवान्तरलब्धावस्थानो निर्गत्य बहिर्नगर्यास्तरङ्गसङ्गशीतशीकरासारमरुन्ति कलक्वणितकलहंससचक्रवाकचक्रवालाक्रान्तसरससुकुमारसैकतानि सिप्रातटान्यनुसरन्, युज्यमानांश्च विरलीभवतश्च संघट्टमानांश्च विश्लिष्यतश्चोत्सहमानांश्च लम्बमानांश्च परापततश्च विच्छिन्नपंक्तयवस्थानात्स्खलतोऽपि पततोऽ-

---

क्षाओंको रौंद डाला। उसने सुखका अनादर किया, किन्तु धैर्य बनाये रक्खा। इस तरह कादम्बरीके रूप और गुणको उसके प्राणोंका आधार बनानेवाला प्रबल अनुराग उसे आगेकी ओर खींचता था, किंतु गुरुजनोंके प्रतिबन्धवश अत्यधिक गाढ़ स्नेह उसको पीछे घसीटकर रोक रहा था। उसकी प्रकृति बहुत गंभीर थी। अतएव चन्द्रमाको देखकर उमड़ते हुए समुद्रकी भाँति वह अत्यन्त उल्लसित होती हुई भी अपनी आत्माको मर्यादाकी परिधिमें रोके हुए था। इस प्रकार किसी-किसी तरह थोड़े होते हुए भी हजारों दिनोंके समान लम्बे कुछ दिन बीते। एक रोज वह बार् बार उठती उत्कण्ठाओंसे ऊबकर नगरीसे बाहर सिप्रा नदीके तटपर जा पहुँचा और उसके किनारे पैदल ही टहलता-टहलता बड़ी दूर तक चला गया। उस समय तरंगोंके संपर्कसे शीतल ज़लकण उड़ानेवाली मन्द-मन्द बयार बह रही थी और कलहंसों तथा चकवोंके झुण्ड उस नदीकी सरस और सुकुमार रेतीमें बड़ी ही मधुर बोली बोल रहे थे। इस प्रकार घूमता-फिरता वह एक स्थानपर तनिक रुका, तभी उसने दूरसे इधर ही आते हुए बहुतसे घोड़ोंको देखा। दौड़ते-दौड़ते वे कभी परस्पर एकमें सट जाते और कभी अलग हो जाते थे। कभी अगल-बगलमें हो जाते और कभी विलग हो जाते थे। वे कभी उत्साहपूर्वक भागते थे और कभी पिछड़ जाते थे। कभी कतारमें चलते थे और कभी विशृंखलित हो जाते थे। फिसल जानेपर, गिर पड़नेपर अथवा थक जानेपर सवार लोग यथाशक्ति उन्हें बढ़ावा देते थे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यवसीदतोऽपि च यथाशक्ति सादिभिरुत्पीडितान्निःसहतया दूरागमनखेदमतित्वरया चागमनकार्यगौरवमावेदयतो दूरादेवातिबहूनिव तुरंगमानद्राक्षीत्।

दृष्ट्वा चोत्पन्नकुतूहलस्तेषां परिज्ञानायान्यतमं पुरुषं प्राहिणोत्। आत्मनाप्यूरुदघ्नेन पयसोत्तीर्य सिप्रां तस्मिन्नेव भगवतः कार्तिकेयस्यायतने तत्प्रतिवार्तां प्रतिपालयन्नतिष्ठत्। तत्रस्थश्च कुतूहलात्तस्मिन्नेव वाजिवृन्दे निक्षिप्तदृष्टिः पार्श्वस्थितां हस्तेनाकृष्य पत्रलेखामवादीत्—'पत्रलेखे, पश्य। य एष पुर एवार्ककिरणनिवारणोल्लासितया प्रेङ्खदालोलम्बशिखया मयूरपिच्छमय्या वंक्रिकया दुर्विभाव्यवदनोऽश्ववारो ज्ञायते, केयूरकोऽयम्' इति। यावत्तया सहैवं निरूपयत्येव, तावत्तस्मात्प्रहितपुरुषादुपलब्धात्मावस्थानं दृष्टिपथ एवावतीर्य तुरंगमादापतन्तं दूराद्द्रुतागमनधूलिधूसरश्यामीकृतशरीरं परिवर्तितमिवेतराकारो-

---

कभी-कभी वे सवारोंकी चाबुकसे मार खा करके भी ज्यादा दूर चलनेमें जैसे अपनी असमर्थता प्रकट कर रहे थे। फिर भी उनकी द्रुतगति ही इस बातकी सूचना दे रही थी कि वे किसी बहुत बड़े कामसे चले हैं।

उन्हें देखकर चन्द्रापीडका कुतूहल बढ़ा और उसने उनका परिचय पानेके एक मनुष्यको उनके पास भेजा। तदनन्तर स्वयं घुटने तक सिप्राके पानीमें हिलकर समीपवर्ती भगवान् कार्तिकेयके मंदिरमें जाकर खड़ा हो गया और प्रत्युत्तरकी प्रतीक्षा करने लगा। वहाँ खड़े-खड़े उत्सुकतावश उन्हीं घोड़ोंपर दृष्टि लगाये हुए उसने पास ही खड़ी पत्रलेखाको हाथसे अपनी ओर खींचकर कहा—'पत्रलेखा! देखो, यह जो सबसे आगेका सवार दिखायी दे रहा है, उसके सिरपर सूर्यकी धूप रोकनेके लिए फैली तथा झूलनेवाली, लम्बी और चंचल चुंडोकी मयूरपङ्खनिर्मित छतरी लगी है। इसी कारण ठीकसे उसका मुंह नहीं दीखता। किन्तु मेरा ऐसा अनुमान है कि यह केयूरक होगा।' इस प्रकार चन्द्रापीड उसके साथ निरूपण कर ही रहा था कि इतनेमें भेजे गये आदमीके द्वारा युवराजके यहाँ ही विद्यमान होनेकी खबर पाकर वह इधर बढ़ा और दृष्टि पड़ते ही केयूरक घोड़ेसे उतर पड़ा। तभी चन्द्रापीडने उसे देख लिया। बड़ी दूरसे शीघ्रतापूर्वक आनेके कारण धूलसे उसका शरीर मलीन, और काला हो गया था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ज्झिताङ्गरागसंस्कारमलिनेन वपुषा विषादशून्येन च मुखेनान्तर्दुःखसंभारपिशुनया च दृष्ट्या दूरत एवापृष्टामपि कष्टां कादम्बरीसमामवस्थामनक्षरमावेदयन्तं केयूरकमद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च दर्शितप्रीतिरेह्येहीत्याहूय ससंभ्रमप्रणतोपसृतमतिदूरप्रसारिताभ्यां दोर्भ्यां पर्यष्वजत तम्। अपसृत्य पुनः कृतनमस्कारे तस्मिन्ननामयप्रश्नवचसा संवर्ध्य सर्वानेव तत्सहायान्पुरःस्थितं पुनः पुनः सस्पृहमालोक्य केयूरकमवादीत्—'केयूरक, त्वद्दर्शनेनैव भद्रं देव्याः सपरिवारायाः कादम्बर्या इत्येतदावेदितम्। आगमनकारणमपि विश्रान्तः सुखितः कथयिष्यसि' इत्युक्त्वा संभ्रान्तागतारोहकढौकितां करिणीमारुह्य 'कुतोऽस्य जनस्य सुखिता' इत्यभिदधानमेव केयूरकं पृष्ठतः कृत्वा पत्रलेखां चारोप्य स्वभवनमयासीत्। तत्र च निषिद्धाशेषराजलोकप्रवेशः प्रविश्य वल्लभोद्यानं सपरिवारेण केयूरकेण सहोत्तास्यता चेतसा चेतितमेव दिवसकरणीयं निर्वर्तयामास।

इससे ऐसा लगता था कि जैसे उसकी आकृति ही बदल गयी हो। अंगराग तथा संस्कारविहीन अपने मलिन शरीरसे, विषादके कारण सूखे-सूखे मुखसे और अन्तरात्माके दुःखका भार प्रदर्शित करती हुई आँखोंसे दूरसे ही बिना पूछे और बिना बोले वह कादम्बरीकी दुरवस्था बता रहा था। उसे देखते ही चंद्रापीडने प्रेम प्रकट करते हुए 'आओ-आओ' कहकर आदरपूर्वक प्रणाम करके समीप पहुँचे हुए केयूरकका दोनों हाथ फैलाकर आलिंगन किया। तदनन्तर जब तनिक हटकर उसने पुनः युवराजको प्रणाम किया, तब चन्द्रापीडने उसके साथियोंको कुशल-प्रश्नके द्वारा सम्मानित करके सामने खड़े केयूरकको बड़े स्नेहके साथ देखकर कहा—'केयूरक! तुम्हें देखकर ही ज्ञात हो गया कि सपरिवार देवी कादम्बरी सकुशल हैं। अब विश्राम करके सुखी हो लो। फिर अपने आनेका कारण बतलाना।' ऐसा कहकर शीघ्रतापूर्वक लायी गयी हथिनी पर 'मुझ जैसे व्यक्तिको सुख कहाँ बदा है।' यह कहते हुए केयूरक तथा पत्रलेखाको साथ लिये चंद्रापीड उसपर सवार होकर अपने घर गया। अपन महलसे सीधे वल्लभोद्यानमें जा पहुँचा और वहाँ सभी राजाओंका प्रवेश निषिद्ध करके सपरिवार केयूरकके साथ बड़े उत्सुक मनसे अनजाने ही सारा दैनिक कृत्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निर्वर्त्य च पत्रलेखाद्वितीयः सुदूरोत्सारितपरिजना केयूरकमाहूयाब्रवीत्—'केयूरक, कथय देव्याः कादम्बर्याः समदलेखाया महाश्वेतायाश्च संदेशम्' इत्यभिहितवति चन्द्रापीडे पुरः सप्रश्रयमुपविश्य केयूरकोऽप्यवादीत्—'देव, किं विज्ञापयामि। नास्ति मयि संदेशलवोऽपि देव्याः कादम्बर्याः समदलेखाया महाश्वेताया वा। यदैवं पत्रलेखां मेघनादाय समर्प्य प्रतिनिवृत्य मयायं देवस्योज्जयिनीगमनवृत्तान्तो निवेदितः, तदैवोर्ध्वं विलोक्य दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य सनिर्वेदम् 'एवमेतत्' इत्युक्त्वोत्थाय महाश्वेता पुनस्तपसे स्वमेवाश्रमपदमाजगाम। देव्यपि कादम्बरी झटिति हृदये द्रुघणेनेवाभिहता, ह्यतर्कितापतिताशनिनेव मूर्ध्नि ताडिता, अन्तःपीडाकूणननिमीलितेन चक्षुषा मूर्च्छितेव, मुषितेव परिभूतेव, वञ्चितेव, चोन्मुक्तेव चान्तःकरणेन, अविदितमहाश्वेतागमनवृत्तान्ता, चिरमिव स्थित्वोन्मील्य नयने, विलक्षेव, लज्जि-

---

सम्पन्न किया। तदनन्तर उसने सब परिजनोंको वहाँसे दूर हटा दिया और केवल पत्रलेखाको साथ रखकर केयूरकसे कहा—'केयूरक! अब तुम देवी कादम्बरी, महाश्वेता और मदलेखाका सन्देश सुनाओ।' चन्द्रापीडके यह कहनेपर बड़े विनीत भावसे सामने बैठकर केयूरक बोला—'देव! मैं क्या कहूँ! देवी कादम्बरी, महाश्वेता एवं मदलेखाका मेरे पास कोई भी संदेश नहीं है। जब मैं पत्रलेखाको मेघनादके हाथों सौंपकर हेमकूट लौटा और आपके उज्जयिनी चले आनेका समाचार सुनाया। तैसे ही आकाशकी ओर निहार तथा लम्बी और गरम साँस लेकर बड़े दुःखके साथ 'यह बात है' यह कहती हुई भगवती महाश्वेता उठ खड़ी हुई और तपस्या करनेके लिए अपने आश्रमपर चली आयीं। देवी कादम्बरीको तो जब यह बात मालूम हुई तो जैसे हृदयपर हथौड़ेकी चोट पड़ी हो अथवा मस्तकपर एकाएक वज्रपात हो गया हो, ऐसे मानसिक कष्टसे उनकी आँखें मुँद गयीं। अब जैसे वे मूर्छित हो गयी हों, परास्त हो गयीं हों, ठगी गयी हों अथवा अपने मन द्वारा त्याग दी गयी हों, इस प्रकार भगवती महाश्वेताके चली जानेका भी हाल न जानती हुई बड़ी देर तक वहीं रुकी रहीं। तदनन्तर आँखें खोलकर जैसे घबड़ायी हुई हों, लज्जित हो गयी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेव, विस्मृतेव, विस्मयस्तब्धदृष्टिः 'महाश्वेतायाः कथय' इति सासूयमिव मामादिश्य मदलेखायां पुनर्वलितमुखी सविलक्षस्मितम। 'मदलेखे, अस्ति न क्वचिदपरेणैतत्कृतं करिष्यते वा यत्कृतं कुमारेण चन्द्रापीडेन' इत्येवमभिदधत्युत्थाय निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा शयनीये निपत्योत्तरवाससात्तमाङ्गमवगुण्ठ्य निर्विशेषहृदयवेदनां मदलेखामप्यनालपन्ती सकलमेव तं दिवसमस्थात्।

परेद्युश्च प्रातरेवोपसृतं माम् 'एवं दृढतरशरीरेषु म्रियमाणेष्विव भवत्स्वहमीदृशीमवस्थामनुभवामि' इत्युपालभमानेव, 'न मे भवद्भिः पार्श्ववर्तिभिः कार्यम्' इति निर्भर्त्सयन्तीव 'किं मे पुरतस्तिष्ठसि' इत्यन्तर्मन्युवेगेन तर्जयन्तीव च बाष्पपूरोद्रेकोत्कम्पपर्याकुलया दृष्ट्या चिरमालोकितवती। तथा दृष्टश्च तया दुःखितया देव्यादिष्टमेव गमनायात्मानं मन्यमानोऽहमनिवेद्यैव देव्यै देवपादमूलमुपागतोऽस्मि। यच्च देवैकशर-

---

हों तथा भूल गयी हों, इस तरह आश्चर्यसे नेत्र स्थिर करके 'यह बात महाश्वेतासे कहो' इस प्रकार जैसे ईर्ष्याके साथ उन्होंने मुझसे कहा। तत्पश्चात् मदलेखाकी ओर मुड़कर विस्मययुक्त मुसकान करती हुई वे कहने लगीं—'मदलेखे! जैसा कि कुमार चन्द्रापीडने किया है, वैसा और कभी किसीने किया है या करेगा?' ऐसा कहती हुई वे उठ खड़ी हुई और सभी परिजनोंके आनेकी मनाही करके शय्यापर जा पड़ीं। उसके बाद चादरसे मुँह ढाँककर अपनी हृदयवेदनासे भलीभाँति परिचित मदलेखासे भी कुछ न बोलती हुई सारे दिन वैसे ही पड़ी रहीं।

अगले दिन सवेरे जब मैं उनके पास पहुँचा तो 'तुम जैसे मोटे-ताजे और मजबूत देहवाले लोगोंके रहते हुए भी मैं ऐसी दुर्दशा भोग रही हूँ। इसलिए मेरी दृष्टिमें तुम सब मुर्दे हो।' यह कहकर जैसे मुझे उलाहना दे रही हों। 'तुम्हें अब मेरे पास रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है' यों कहकर जैसे कोस रही हों। 'अब मेरे आगे क्यों खड़े हो?' ऐसा कहकर जैसे आन्तरिक वेदनावश मुझे डाँट रही हों। इस तरह अश्रुप्रवाहके कारण कंपित नयनोंसे वे मुझे बड़ी देरतक देखती रहीं। ऐसी दृष्टिसे देखे जानेपर मैंने यही समझा कि वे मुझे आपके पास आनेका आदेश दे रही हैं। अतएव देवीसे बिना कुछ कहे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णजनजीवितपरित्राणाकुलमनेः केयूरकस्य विज्ञापनाकर्णनावधानदानेन प्रसादं कर्तुमर्हसि। देव, श्रूयताम्। यदैव ते प्रथमागमनेनामोदिना मलयानिलेनेव चलितं समस्तमेव तत्कन्यकालतावनम्, तदैव सकलभुवनमनोभिरामं भवन्तमालोक्य वसन्तमिव रक्ताशोकतरुलतामिवारूढवान्मकरकेतनस्ताम्। इदानीं तु महान्तमायासमनुभवति त्वदर्थे कादम्बरी। तस्या हि दिनकरोदयादारभ्य दिवसकरकान्तोपलानलस्येव निःशब्दस्यापवनेरितस्याधूमस्याभस्मनः प्रज्वलतो मकरध्वजहुतभुजो न परिजनकरकमलकलितकोमलपल्लवलास्यलीलया प्रसरभङ्गः। नानुत्तालतालवृन्तवान्तजलजडकणिकासारसेकेन निर्वृतिः। न सरसहरिचन्दनपङ्कच्छटाच्छुरणेन छेदः। न विदलितमुक्ताफलवालुकापटलोद्धूलनेन व्युपरमः। नोत्कीलितयन्त्रमयकलहंसपंक्तिमुक्ताम्बुधारेण धारागृहेण प्रशमः। यथा यथा चलितजलयन्त्रविगलिताभिरतिशिशिर-

---

ही मैं आपके पास दौड़ा आया हूँ। ऐसी परिस्थितिमें जब कि एकमात्र आप ही उनका जीवन बचा सकते हैं। तब उनकी रक्षाके लिए व्यग्र केयूरककी बात आपको ध्यान देकर सुननी चाहिए। देव! सुनिए, सुरभित मलयानिलकी भाँति श्रीमान्‌के प्रथम आगमनसे जब सारा कन्यारूपिणी लताओंका वन चंचल हो उठा था, उसी समय समस्त भुवनोंको भानेवाले वसंतसदृश आपको देखते ही लाल अशोककी लता सरीखे कोमल देवीके अंतःकरणपर कामदेवने चढ़ाई कर दी थी। अब तो वे आपके लिए बड़ा दुःख झेल रही हैं। सवेरे सूर्योदयसे ही सूर्यकांतमणिसे निकलनेवाली आगकी नाईं निःशब्द, प्रेरणाविहीन, धूमरहित, भस्महीन एवं नित्य धधकती हुई कामाग्नि परिजनोंके हाथ ताजे पत्तोंकी वायु करनेसे भी नहीं बुझ पाती। बड़े-बड़े ताड़के पत्तों द्वारा महीन-महीन बूँदें उड़ानेवाली वायुसे सिंचन करनेपर भी वह नहीं शान्त होने आती। गीले हरिचंदनका लेप लगानेसे भी दाह नष्ट नहीं होती। मोतियोंको पीसकर तैयार की गयी धूल झोंकनेसे भी वह नहीं बुझती। कीलें ठोककर जड़े यंत्रमय कलहंसोंकी पंक्तिसे निकलनेवाली जलधारासे युक्त धारागृहोंमें भी वह आग नहीं बुझ पाती। चलते हुए फोहारोंसे निकलनेवाले अतिशय ठण्डे जलकणोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

शीकरनिकरतारकिताभिरम्बुधाराभिराहन्यते तथा तथा वैद्युतानलसहोदर इव स्फुरति मदनपावकः। सुतरां च शिशिरः कुन्दकलिकाकलापमञ्जरीमिव विकासयति स्वेदजललवजालकसंततिमुपचारः। चित्रं चेदम्। मकरकेतुहुतभुजा दह्यमानमप्यग्निशौचमंशुकमिव नितरां निर्मलीभवति लावण्यम्। मन्ये च मृदुस्वभावमपि जलमिव मुक्ताफलतामुपगतं कठिनीभवत्युत्कण्ठितं हृदयमबलाजनस्य, तत्तादृशेनातिसंतापेनापि न विलीयते। बलवती खलु वल्लभजनसंगमाशा, यत्तथाविधमप्यनुभववेदनाविह्वलितप्राणमतिकष्टं प्राण्यते। किं करोमि, कथय कथं कथ्यते, कया वृत्त्या वर्ण्यते, कीदृशेनोपायेन प्रदर्श्यते, केन प्रकारेणावेद्यते, कया युक्त्या प्रकाश्यते, कतमया वेदनयोपनीयते। तदुत्कण्ठास्वप्नेषु विगलितवेदनाः स्फुटं प्राणिनः, प्रतिदिवसं दृश्यमानोऽपि यश्च

उड़ती हुई जलधारायें जैसे जैसे उनपर पड़ती हैं, तैसे-तैसे बिजलीकी आगके सदृश मदनाग्नि और भी बढ़ती जा रही है। यदि शीतोपचार किया जाता है तो कुन्दकलिकाओंकी मञ्जरी जैसी पसीनेकी बूँदोंका वेग और भी बढ़ जाता है। विस्मयकी बात तो यह है कि इस प्रकार नित्य कामाग्निमें जलते रहनेपर भी तापनिरोधक वस्त्रकी भाँति उनका लावण्य उत्तरोत्तर और निखरता जाता है। मेरा तो ख्याल है कि स्वभावतः मृदु होता हुआ भी जल जैसे मोती बन जाता है, उसी प्रकार नारियोंका कोमल हृदय भी उत्कण्ठित होकर कठोर हो जाता होगा। तभी तो कामाग्निकी इतनी अधिक दाह सहकर भी वह नष्ट नहीं होने आता। अपने प्रेमीके मिलनकी आशा बड़ी प्रबल होती है। क्योंकि ऐसे भीषण सन्तापोंकी पीड़ासे विकल होते हुए भी वे प्रेमी बड़ी कठिनाईसे जीवित रहते हैं। मैं क्या करूँ? आप ही बतायें कि मैं उनकी दशाका वर्णन कैसे करूँ? कैसे कहूँ? वह कौन सा उपाय है कि जिसके सहारे उनका दुःख आपके समक्ष प्रदर्शित करूँ? मैं किस तरह समझाऊँ? किस प्रकार प्रकाशित करूँ और किस युक्तिसे भली भाँति उनके कष्टोंका ज्ञान कराऊँ? यह निश्चित है कि स्वप्नके समय प्राणियोंमें विषय ग्रहण करनेकी शक्ति नहीं रह जाती। तभी तो प्रतिदिन स्वप्नमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पश्यसि तामीदृशीमवस्थाम्। प्रचण्डकिरणसहस्रातपसहानि कमलानि शयनीकृतानि म्लानिमुपनयन्त्या दिवसकरमूर्तिरपि निर्जिता तया निजोष्मणा। निष्करुणेन चाकारणवामेन कामेन मथ्यमानास्तास्ताश्चेष्टाः करोति। तथा हि। 'सासोढमदनवेदने, त्वमतिकठिने मनसि निवससि' इति मृदुनि कुसुमशयने कथमपि सखीजनेन पात्यते। कुसुमशयनगता च संतापगलितचरणतलालक्तकलवपाटलितैश्च शय्याकुसुमैः कुसुमशरेण शरतामुपनीतैः सरुधिरैरिव हृदयात्पतितैर्भयमुपजनयति। सर्वाङ्गीणमनङ्गशरनिवारणाय कवचमिव भवदनुस्मरणरोमाञ्चमुद्वहति। रोमाञ्चिनि कुचयुगले श्वासगलितमंशुकं निदधाना त्वत्पाणिग्रहणतृष्णया कण्टकशयनव्रतलीलामिव दक्षिणकरकमलमनुभावयति। वामं तु वामकपोलभरजडांगुलिमुल्लसत्पद्मरागवलयप्रभांशुरज्यमानं ज्वलितमदनहु-

———————

उन्हें देखते हुए भी आप उनकी यह दशा नहीं देख पाते। सूर्य भगवान्के सहस्रों प्रचंड किरणोंका ताप सहनेवाले कमल उनके बिछौना बननेपर कुम्हला जाते हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपनी शारीरिक उष्णतासे सूर्यकी मूर्तिको भी परास्त कर दिया है। निर्दयी और अकारण कुपित कामदेवके द्वारा सतायी जानेपर वे विविध प्रकारकी चेष्टायें करती हैं। 'हे कामदेवकी प्रबल वेदना सहन करनेवाली देवी! बहुत कठोर मनमें आप बसती हैं'। यह कहकर कोमल पुष्पशय्यापर सहेलियाँ बड़ी कठिनाईसे उन्हें सुलाती हैं। जब वे फूलोंके बिस्तरपर लेट जाती हैं, तब अत्यधिक दाहसे उनके पाँवोंकी महावर पिघलकर बिछौनेके फूलोंको गुलाबी कर देती है। उन फूलोंको देखकर ऐसा भय लगता है कि जैसे वे फूल नहीं हैं, बल्कि रुधिरमें सराबोर कामदेवके बाण हैं। कामबाणोंका निवारण करनेके लिए वे आपका स्मरण करती हुई सारे शरीरमें रोमांच पैदा करके उससे कवचका काम लेती हैं। अपने रोमांचित कुचोंसे वायु द्वारा सरकाये हुए वस्त्रको जब वे दाहिने हाथसे सम्हालने लगती हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे आपके पाणिग्रहणकी लालसा उस हाथको कंटकशयनव्रतके कष्टका अनुभव करा रही हैं। बायें कपोलके भारसे जड़ उँगलियोंयुक्त एवं चमकीले पद्मरागमणिजटित कङ्कनसे रङ्गीन तथा प्रज्वलित कामाग्नि-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ताशनविप्लुष्यमानमिव हस्तकमलं विधुनोति। नलिनीदलव्यजनपावन-विक्षिप्यमाणकर्णकुवलयं वदनमजस्रस्रवदश्रुभयपलायमानलोललोचन-मिव बिभर्ति। प्रतिक्षणं क्षामतां व्रजन्ती न केवलं मङ्गलवलयं पतनभ-येन दोलायमानं हृदयमपि मुहुर्मुहुः पाणिपल्लवेनारुणद्धि। शिशिरवारि-क्षोदक्षरिण्या लीलाकमलमालिकयैव वपुषि निहितया सखीजनहस्तपर-म्परया परिक्लाम्यति। तथा च चरणयुगलेन रसनाकलापम्, नितम्ब-विस्तारेण मध्यम्, संगमाशया हृदयम, हृदयेन भवन्तम्, उरसा बिसिनीपलाशप्रावरणम्, कण्ठेन जीवितम्, करकमलेन कपोलपा-लीम्, त्वदालापेनाश्रुपातम्, ललाटफलकेन चन्दनलेखिकाम्, अंसेन वेणीमधुना धारयति। त्वद्दिदृक्षया विघटमानं हृदयमभिवाञ्छति। गोत्रस्खलनेनेव जीवितेन लज्जते। प्रियसख्येव मूर्च्छया मनसि मुहुर्मुहुः स्पृश्यते। परिजनेनेव च रणरणकेन वदनपरवशा कुसुमशयनादुत्था-

---

में झुलसते हुए अपने बायें हाथको वे बराबर हिलाती रहती हैं। जब कमलके पत्तोंसे उनके ऊपर हवा की जाती है, तब कानोंमें विद्यमान कमलदल हिलने लगते हैं। जिससे ऐसा लगता है कि बराबर बहनेवाले आँसुओंसे डरकर उनकी चपल आँखें भागी जा रही हैं। प्रतिक्षण दुर्बल होती हुई वे गिर जानेके भयसे केवल मंगलवलय (कङ्कण) को ही नहीं सम्हालतीं, बल्कि अपने दोलायमान हृदयको भी करकमलोंसे सम्हालती रहती हैं। निरन्तर शीतल जलकी बूँदें टपकानेवाली सखियोंकी लीलाकमलकी माला सरीखी भुजाओंको शरीरपर रक्खे जानेसे वे जैसे थकानका अनुभव करती हैं। अब वे अपने दोनों पाँवोंसे करधनीको, अपने विस्तृत नितम्बसे शरीरके मध्यभागको, मिलन-की आशासे हृदयको, हृदयसे आपको, छातीसे कमलके पत्तों द्वारा निर्मित आवरणको, गलेसे जीवनको, करकमलसे कपोलोंको, आपसे सम्बन्ध रखने-वाली बातोंसे आँसुओंको, विस्तृत ललाटसे चन्दनलेखाको और कन्धोंसे बालोंकी वेणीको धारण किये रहती हैं। आपका दर्शन पानेके लिए वे चाहती हैं कि हृदय फट जाय और उसमें बसे हुए आप नेत्रोंके सम्मुख आ जायँ। भ्रम-वश कहीं प्रियतमका नाम मुँहसे न निकल जाय, इस प्रकार वे अपने जीवनसे लज्जित होती हैं। एक प्रिय सखीकी नाईं मूर्छा बारबार उनके मनका स्पर्श

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यते। परिचारिकयेवार्त्या स्रस्ताङ्गी संचार्यते। मुहुः पवनप्रेङ्खोलित-मुत्कण्ठाव्यजनपल्लवभङ्गभयकम्पितमिव लतामण्डपमधिवसति। मुहुः सत्कोशकलिकं बिसवलयसंरक्षणरचिताञ्जलिपुटमिव स्थलकमलिनी-वनमधिशेते। मुहुरुद्बन्धनभयादिव निरन्तरकिसलयाच्छादितलतापाश-मुद्यानमासेवते। मुहुर्निष्पतदविरतरोदनाताम्रनयनप्रतिबिम्बं सूस्तरा-स्तरणत्रासनिमज्जत्कमलमिवोपवनसरोजलमवगाहते। तस्मादुत्थाय तमालवीथीमुपैति। तस्यां शाखावलम्बोर्ध्वभुजलतानिहितनिमीलितलो-चनवदना चम्पकदलमालिकोद्बद्धदेहाशङ्कामुत्पादयन्ती मुहूर्तं विश्रम्य संगीतगृहमाविशति। ततो मधुरमुरजवलयललितलास्यलीलयोद्वेज्य-माना मयूरीव मुक्तधारं धारागृहमभिपतति। ततोऽपि घनजलधारासी-करपुलकितका सा कदम्बकलिकेव कम्पमाना शुद्धान्तकमलिनीतीरमप-

---

करती रहती है। सेविकाकी नाईं उत्कण्ठा उस कामदेवके अधीन कुमारीको पुष्पशय्यासे उठाती है। परिचारिकाके समान कामवेदना उस शिथिलांगीको टहलाती है। उत्कण्ठाजनित सन्तापकी शान्तिके निमित्त पुनः पुनः पंखा बन-कर चलनेसे पल्लव टूट जानेके भयवश वे काँपते रहनेवाले लतामण्डपोंमें रहती हैं। सुन्दर कोशयुक्त कलियोंवाले मृणालवलयको बचानेके लिए जैसे वे नित्य अंजलि बाँधकर स्थलकमलिनीके वनमें ही बार बार शयन करती हैं। फँसरी लगानेके डरसे ही जैसे वे सघन पल्लवोंसे आच्छादित लतापाशयुक्त उद्यानोंमें पुनः पुनः जाया करती हैं। बार बार रोते रहनेसे लाल-लाल नेत्रोंके प्रतिबिम्ब-स्वरूप तथा बिछौनेपर बिछाये जानेके डरसे ही जैसे डूबते हुए कमलोंवाले उपवनके तड़ागोंके जलमें बारम्बार स्नान करती है। उनमेंसे निकलकर वे तमालवृक्षोंके कुञ्जोंमें जाती हैं। वहाँ किसी वृक्षकी शाखाको अपनी ऊँची उठी भुजलताओंसे थाम्ह तथा उसीपर अपना मुख रखकर जब वे आँखें मूँद लेती हैं, तब ऐसा लगने लगता है कि जैसे वे चम्पाके फूलकी मालाको फाँसी बनाकर अपने गलेमें दाबे हुए हैं। वहाँ तनिक देर विश्राम करनेके बाद सङ्गीतशालामें प्रविष्ट होती हैं। वहाँ मृदङ्गकी मधुर ध्वनिके तालपर होनेवाले सुन्दर नृत्यसे भी उद्विग्न होकर मयूरीके समान अनवरत उछलती जलधारासे सम्पन्न धारागृहमें जा पहुँचती हैं। वहाँ वे मेघसदृश बरसती फुहारोंसे रोमां-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्पति। तस्माच्च भवनकलहंसरवमसहमाना प्रस्थिता तत्कालावतारित-नूपुरयुगला निपुणप्रेक्षामिव क्षामताभिनन्दति। वलयरचनाम्लायित-मृणालकुपितैरिव भवनवापीचक्रवाकमिथुनैः कूजितेन खेद्यते। शय्या-विलासमृदितकुसुमसंचयामर्षितैरिव प्रमदवनमधुकरैर्विरुतेनोद्वेज्यते। निर्भरोत्कण्ठागीतनिर्जितरवरोपितैरिवाङ्गणसहकारपिकवृन्दैः कलकले-नाकुलीक्रियते। मदनपाण्डुगण्डपरिभूतगर्भपत्रकान्तिभिर्विद्वेवोद्यानकेतकी-सूचिभिरुद्भूतवेदना भवति। एवंप्रायैश्च मदनदुश्चेष्टितायासैः पारणाम-मुपैति दिवसः।

चन्द्रोदये चास्यास्तिमिरमयीवापैति धृतिः, कमलमयमिव दूयते हृदयम्, कुमुदमय इव विजृम्भते मकरकेतनः, चन्द्रकान्तमयामिव

चित होकर कदम्बकी कलीके समान थरथर काँपती हुई महलोंमें बनी कमलिनी (पोखरी) के तटपर जली जाती हैं। वहाँपर विद्यमान कलहंसोंका शब्द सहनेमें असमर्थ होकर तुरन्त चल पड़ती हैं और पाँवोंकी पायलें निकल जानेपर कृशताको समझदार समझकर उसकी प्रशंसा करने लगती हैं। सो इसलिए कि यदि पायल रहती तो उसका शब्द सुनकर हंसोंका झुंड दौड़ पड़ता, जिससे उनकी वेदना बढ़ जाती। नित्य वलयनिर्माण होनेसे मृणालोंके कम हो जानेके कारण जैसे रुष्ट गृहसरोवरके चक्रवाकयुगल अपनी बोलीसे हल्ला मचाकर उन्हें खिन्न कर देते हैं। शय्याके उपयोगमें आनेवाले फूलोंको मसला हुआ देखकर कुपित प्रमदवनके भौंरे गुञ्जार द्वारा उन्हें उद्विग्न किया करते हैं। प्रबल उत्कण्ठाके समय मन बहलानेके लिए किये जानेवाले सगीतसे परास्त हो जानेके कारण क्षुब्ध कोयलोंका समुदाय आँगनके आम्रवृक्षोंपर बोल-बोलकर उन्हें विकल कर देता है। कामपीडासे पीले कपोलको देखकर अपने भीतरी पत्तोंकी दीप्तिका पराजय मानती हुई जैसे उद्यानकी केतकीने काँटे चुभा दिये हों, इस प्रकारके कष्ट सहती हैं। इसी प्रकारकी बहुतेरी कामपीडाकी दुःखदायिनी चेष्टायें करती-करतो वे सारा दिन बिता देती हैं।

शामको जब चन्द्रोदय होता है, उस समय उनका धैर्य इस तरह भागता है, जैसे वह एकदम अन्धकारमय हो। उनका हृदय इस प्रकार खिन्न हो जाता है, जैसे वह कमलमय हो। कामदेव उस समय इस तरह प्रफुल्लित हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रस्त्ररति नयनयुगलम्, उदधिजलमयानीव प्रवर्धन्ते श्वसितानि, चक्रवाकमया इव विघटन्ते मनोरथाः, शीतज्वरातुरेव मणिकुट्टिमोदरसंक्रान्तस्य तुषारकिरणमण्डलस्योपरि वेपथुलुलिततरलांगुलिनिकरं करयुगलं प्रसारयन्ती शशिसंतापमनक्षरं कथयति। सीत्कारेषु दशनांशुव्याजेन मन्मथशरजर्जरितहृदयप्रविष्टानिन्दुकिरणानिवोद्गिरति। वेपथुषु व्यजनीकृतकदलीदलकम्पोपदेशमिव गृह्णाति। विजृम्भिकासु कण्ठागतजीवितनिर्गममार्गमिवोपदिशति। गोत्रस्खलितविलक्षस्मितेषु हृदयनिपतितमदनशरपुष्परज इव वमति। बाष्पमोक्षेषु स्थूलाश्रुसंतानवेणिकावाहिनी विलीयत इव। शशिमणिदर्पणेषु विस्फुरितानेकप्रतिबिम्बनिभेन शतधेव विदलति। कुसुमशयनेषु परिमललालसागतालिमालाकुलिता धूमायत इव।

जाता है, जैसे कुमुदमय हो। उनके नेत्र उस समय इस प्रकार आँसू बहाने लगते हैं, जैसे वे चन्द्रकान्तमणिमय हों। श्वासकी गति इस प्रकार बढ़ जाती है, जैसे वह समुद्रजलमय हो और उनके सब मनोरथ इस तरह विघटित हो जाते हैं, जैसे चक्रवाकमय हों। शीतज्वरसे पीडित व्यक्तिकी भाँति मणिमयी भूमिमें प्रतिबिम्बित चन्द्रमाके प्रतिबिम्बपर अपने कम्पित उंगलियोंवाले हाथोंको फैलाकर वे बिना बोले शशिसन्तापका वर्णन करती हैं। कामदेवके बाणोंसे जर्जरित हृदयमें घुसी हुई चन्द्रमाकी किरणोंको जैसे वे सी-सी करती हुई दन्तकिरणोंके बहाने बाहर निकालती हैं। जब उन्हें कँपकँपी आती है तो पंखेके उपयोगमें आनेवाले केलेके पत्तोंसे उपदेश ग्रहण करती हैं। जँभाई आती है, तब वे जैसे कण्ठतक आये हुए प्राणोंको निकलनेकी राह बताती हैं। भ्रमवश प्रेमीका नाम ले लेनेपर असाधारण मुसकान करते समय वे जैसे हृदयमें लगे हुए कामबाणोंके फूलोंका रज बाहर निकालने लगती हैं। रोते समय जब बड़ी-बड़ी बूँदोंके आँसू बहाने लगती हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे वे स्वयं गल-गलकर बही जा रही हैं। चन्द्रकान्तमणिके दर्पणोंमें उनके अनेक प्रतिबिम्ब दिखायी देते हैं, तब ऐसा लगता है कि मानो उनके शरीरके कई टुकड़े हो गये हैं। पुष्पशय्यापर जब लेटती हैं और फूलोंकी सुगन्धिकी लालसासे भौंरे मँडराने लगते हैं, तब ऐसा मालूम पड़ता है कि मानो वे स्वयं धुआँ बनकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अमलकमलस्रस्तरेषु किञ्जल्करजःपुञ्जपिञ्जरिता ज्वलतीव। स्वेदप्रतीकारेषु विशदकर्पूरक्षोदधूलिधवलिता भस्मीभवतीव। न विज्ञायते किं मुग्धतया, किं विलासेन, किमुन्मादेन, संगीतमृदङ्गध्वनितेषु केकाशङ्कया धारागृहमरकतमणिमयूरमुखानि स्थगयति। दिवसावसानेषु विश्लेषभीता मृणालसूत्रैश्चित्रभित्तिविलिखितानि चक्रवाकमिथुनानि संघटयति। चिन्तारतारम्भेषु मणिप्रदीपानवतंसोत्पलैस्ताडयति। उत्कण्ठालेखेषु संकल्पसमागमाभिज्ञानानि लिखति। दूतीसंप्रेषणेषु स्वप्नापराधोपालम्भान्संदिशति।

अपि च तस्याश्चन्दनपरिमल इव दक्षिणानिलेन सह समागच्छति मोहः। चक्राह्वशाप इव निशाया सहापतति प्रजागरत्रासः। प्रतिरुतानीव वलभीकपोतकूजितैः सहाविर्भवन्ति दुःखानि। मधुकर इवोपवनकुसुमामोदेन सहोपसर्पति मरणाभिलाषः। तथा च जलकणिकेव पद्मि-

---

उड़ी जा रही हैं। वे जब निर्मल कमलके बिछौनेपर लेटती हैं और कमलपुष्पोंकी रज लगकर देह पीली पड़ जाती है, तब जान पड़ता है कि मानो वे जली जा रही हैं। जब पसीना सुखानेके लिए कपूरका श्वेत चूर्ण मला जाता है, तब वे भस्म सरीखी दीखने लगती हैं। न जाने भोलेपनके कारण, विलासवश, उन्मादसे अथवा मृदङ्गकी ध्वनि सुनकर वे बोलीके भयसे धारागृहमें विद्यमान मरकतमणिके मोरोंका मुँह बन्द कर देती हैं। सायंकालके समय वियोगके भयसे वे दीवारोंपर चित्रित चकवा-चकईके जोड़ेको मृणालकी तन्तुओंसे बाँध देती हैं। काल्पनिक मैथुनके समय वे अपने कर्णकमलोंसे मणिदीपकोंको बुझानेके लिए मारती हैं। उत्कण्ठावश जब वे पत्र लिखने लगती हैं, तब उसमें कितने ही कल्पित समागमके अभिज्ञान (विश्वासोत्पादक चिह्न) लिख डालती हैं। दूती भेजते समय व स्वप्नमें किये हुए अपराधोंका उलाहना दिलानेको भेजती हैं।

और फिर चन्दनकी सुगन्धिसे मिश्रित दक्षिणी वायु लगते ही उन्हें मूर्छा आ जाती है। रात्रिके आगमनके साथ ही चक्रवाकीके शापकी भाँति उन्हें जागरणका भय घेर लेता है। झरोखोंमें बैठे कबूतरोंकी एक-एक वाणीके साथ अनेक दुःख उत्पन्न होने लगते हैं। उपवनके फूलोंकी सुगन्धिपर आनेवाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

-नीपलाशस्थिता कम्पते। प्रतिच्छायेव स्फटिकोपलसलिलमणिदर्पणमणि-कुट्टिमतलेषु दृश्यते। नलिनीव शशिकरस्पर्शेन ग्लायति। हंसीव सरस-मृणालिकाहारव्यतिकरेण जीवति। शरदिव कुमुदकुवलयसंपर्कमनोहरग-न्धवहा सकुसुमबाणा च विजृम्भते। चन्द्रमूर्तिरिव कमलप्रकरस्खलित-पादपल्लवा संचरन्ती निशां नयति। कुमुदिनीव रजनिकरकिरणकृतजा-गरा दिवसमलीकनिद्रयातिवाहयति। मुररिपुजलशयनलीलेव मन्दो-च्छ्वसितशेषा निमीलितलोचना किमपि चिन्तयति। मलयनिम्नगेव सर-सहरिचन्दनकिसलयलाञ्छितेषु शिलातलेष्वभिपतति। कुन्दकलिकेव तुषारसिक्तपल्लववर्तिनी वनानिलेनायास्यते। भुजंगीवासह्यसंतापालि-ङ्गितचन्दना शिखिकुलकोलाहलेन तास्यति। हरिणीव केसरिकाननं

भ्रमरोंकी भाँति उन्हें मरणकी अभिलाषा होने लग जाती है। कमलके पत्तोंपर लुढ़कनेवाले जलकणोंके सदृश वे काँपने लगती हैं। अत्यन्त कृश हो जानेके कारण वे स्फटिक मणिमें, जलमें, मणिमय दर्पणमें तथा मणिमयी भूमिमें पर-छाईंके सदृश दिखायी देती हैं। चन्द्रमाकी किरणोंसे कमलकी भाँति वे म्लान हो जाती हैं। जैसे हंस मृणालका आहार करके जीवित रहते हैं, उसी तरह वे मृणालका हार पहनकर जीवित हैं। शरद्ऋतुके सदृश वे कुमुद, कुवलय तथा कमलके संस्पर्शसे मनोहारिणी सुगन्धि धारण करके पुष्पोंके बाणकी नाईं फूलती हैं। चंद्रमाकी मूर्तिके सदृश वे कमलके पुष्पसमूहपर पैर (किरण) फिसलाकर विचरती हुई रात बिताती हैं। कुमुदिनीकी भाँति वे चन्द्रमाकी किरणोंके साथ जागरण करके सारा दिन बनावटी निद्रामें गुजारती हैं। जैसे विष्णुके जलशयनकी लीलामें शेषनाग धीरे-धीरे साँस लेते हैं और भगवान् योगनिद्रामें सोते हैं। उसी प्रकार जिनके शरीरमें श्वासमात्र शेष रह गया है, वे देवी कादम्बरी भी आँखे मूँदकर पड़ी-पड़ी कुछ सोचती रहती हैं। मलय-पर्वतकी नदीकी नाईं वे सरस चन्दनवृक्षकी कोमल पत्तियोंसे आच्छादित शिलातलोंपर पड़ जाती हैं। कुन्दकी कलीके सदृश तुषार (ओस अथवा बरफ) से सिंचित पत्तोंपर रहती हुई भी वे वनवायुसे क्लेशका अनुभव करती हैं। असह्य दाहसे सन्तप्त सर्पिणीके समान वे चन्दनका आलिङ्गन अथवा लेप करते हुए भी मयूरोंके कोलाहलसे खिन्न हो जाती हैं। मृगीके समान वे केसरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिहरति। कुसुमघटितशिलीमुखमनोहरान्मदनचापादिव प्रमदवनात्त्रस्यति। जानकीव पीतरक्तेभ्यो रजनिचरेभ्य इव चम्पकाशोकेभ्यो बिभेति। उषेव स्वप्नसमागमेनापि कृतार्थतामेति। ग्रीष्मलक्ष्मीरिवानुदिनमतिक्षामा श्यामा भवति। सर्वथा तस्याः कंदर्पवेदनयाङ्गानि, दिवसैर्जीवितसंधारणवस्तूनि, वलयरचनया गृहकमलिनीमृणालानि, उपदेशैः सखीजनवचनानि, शय्यापरिकल्पनेनोपवनकुसुमानि, अनवरतमोक्षेण मदनायुधानि निःशेषं क्षीणानि। किं बहुना संप्रति तस्यास्त्वन्नामा सर्वः सखीजनः, त्वत्संबद्धानि सर्वरहस्यानि, त्वत्समागमोपायान्वेषिणः सर्वसमवायाः, त्वद्वार्तोपलंभनपराः सर्वप्रश्नाः, त्वद्वृत्तान्तमुखरः परिजनः, त्वदालापनिर्मिताः सर्वविनोदाः, त्वदाकारमयश्चित्रकलाभ्यासः, त्वदुपालम्भगर्भा मागधीमङ्गलगीतयः, त्वद्दर्शनपुनरुक्ताः स्वप्नाः,

---

(सिंह अथवा वकुलवृक्ष) के वनसे दूर भागती हैं। कुसुमघटित शिलीमुखों (फूलोंमें लिपटे भ्रमरों अथवा फूलोंसे बने बाणों) से मनोहर लगनेवाले धनुषकी भाँति वे प्रमदवनसे डरती हैं। बाणासुरतनया ऊषाके सदृश वे स्वप्नके मिलनसे ही अपनेको कृतकृत्य समझ लेती हैं। सीताकी नाईं पीतरक्त (पीले-लाल अथवा रक्तपान किये हुए) निशाचरोंकी भाँति समझकर चम्पक तथा अशोकसे डरती हैं। ग्रीष्मश्रीकी तरह वे दिनो-दिन क्षीण और श्याम होती जा रही हैं। कामजनित पीडासे उनके अङ्ग, दिवसोंसे जीवनधारणकी सामग्रियाँ, नित्य वलयनिर्माणसे घरके तालाबके मृणाल, उपदेशोंसे सखियोंके वाक्य, नित्य पुष्पशय्या बनाते-बनाते उपवनके फूल और अनवरत छोड़ते रहनेके कारण कामदेवके बाण एकदम चुक गये हैं। और कहाँ तक कहें, अब तो आपका ही नाम लेकर वे सब सखियोंको बुलाती हैं। वहाँ आपके सम्बन्धका ही समस्त रहस्य होता है। आपसे मिलनेका उपाय खोजनेके लिए ही सब जमावड़े होते हैं। आपका हाल जाननेके लिए ही सारे प्रश्न होते हैं। आपके ही सम्बन्धमें सब परिजन वार्तालाप करते हैं। आपसे सम्बद्ध बातें करनेमें ही लोगोंका मनोरंजन होता है। चित्रकलाका अभ्यास करते समय आपके ही चित्र बनाये जाते हैं। सब मागधियोंके मंगलगीत आपके लिए उलाहनेसे ही भरे हुए होते हैं। उन्हें पुनः पुनः आपके दर्शनोंसे ओत-प्रोत स्वप्न दिखायी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वत्परिहासप्राया मदनज्वरदाहविप्रलापाः, त्वन्नामग्रहणैकोपायगम्यप्रबोधा मोहमहावेगाः' इत्यावेदयन्तं च केयूरकम्। भवतु, संप्रति न शक्नोम्यतः परं श्रोतुम्' इत्यामीलनदत्तसंज्ञेव कादम्बरीव्यथाश्रवणवेदनासंभवानुकम्पयेव चन्द्रापीडमाक्रमन्ती मूर्च्छा न्यवारयत, न तु पुनरवस्थानिवेदनपरिसमाप्तिः।

तथा मूर्च्छानिमीलितश्च तामेवानुध्यायन्निव ससंभ्रमप्रतिपन्नशरीरेण केयूरकेण संभाविततालवृन्तया च पत्रलेखयानुभाव्यार्थसज्जया च नियत्या संज्ञां लम्भितश्चन्द्रापीडः स्वकृतपीडापराधेन भीतमिव लज्जितमिव विलक्षमिव निभृतस्थितं केयूरकमन्तर्बाष्पोपरुध्यमानकण्ठः कथमपि स्खलिताक्षरं प्रत्युवाच—'केयूरक! येन प्रकारेणैवमेकान्तनिष्ठुरहृदयमात्मन्यनुत्पन्नरागमेव मां संभाव्य देव्या कादम्बर्या दूरीकृतपुनर्मदागमनसंभावनया न त्वदा-

---

देते हैं। कामज्वरजन्य दाहके सभी प्रलाप आपके परिहाससे ही भरे होते हैं। एकमात्र आपका नाम लेनेसे ही उन्हें जिससे चेतनता प्राप्त हो सकती है, ऐसी बेहोशीके दौरे बराबर आते ही रहते हैं।' जब केयूरक इस प्रकार कादम्बरीका हाल बता रहा था, तभी चन्द्रापीड कहने लगा—'अच्छा, अब रहने दो। इस समय मैं इससे अधिक और कुछ नहीं सुन सकता।' इस प्रकार जैसे नेत्र मूँदकर संकेत करते हुए चन्द्रापीडको कादम्बरीकी भीषण वेदनाका समाचार सुनकर उत्पन्न व्यथासे ही आनेवाली बेहोशीने केयूरकको आगे कुछ कहनेसे रोक दिया, वस्तुतः वह दुःखमयी गाथा पूर्ण होनेसे नहीं रुका था।

इस तरह जब बराबर कादम्बरीका ही चिन्तन करते-करते चन्द्रापीडको मूर्छा आजानेके कारण होश नहीं रहा। तब घबराकर केयूरकने उसे सम्हाला और पत्रलेखाने पंखा झला। इन कारणोंसे या कि होनीका दिग्दर्शन करानेमें निपुण दैवकी प्रेरणासे वह तुरन्त सचेत हो गया। तदनन्तर स्वयं अपने द्वारा पहुँचायी हुई वेदनाके अपराधसे जैसे डरा हुआ हो या एकाएक घबरा उठा हो, इस प्रकार पास ही चुपचाप खड़े केयूरकसे भीतरी आँसुओंके वेगसे रुद्धकण्ठ होकर चन्द्रापीड अटपटे वाक्योंमें बहुत कष्टके साथ बोला—'केयूरक! जिस तरह मुझे निपट निष्ठुरहृदय और अपनेपर प्रेम न करनेवाला अनाड़ी जान तथा मेरे पुनरागमनकी संभावनाको दूर रखकर देवी कादम्बरीने तुमको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गमनायादिष्टः, न संदिष्टं वा किंचिन्महाश्वेतया समुपहृतानुबन्धया मदलेखया वा त्वन्मुखेन नोपालब्धोऽस्मि। तथा मयि पत्रलेखया सर्वमाख्यातम्, तदभिजाततया महानुभावत्वादुदारतया समानशीलतया दक्षिणतया चैकान्तपेशलतया च स्वभावस्यात्मानमात्मना न कलयति देवी कादम्बरी। चन्द्रमूर्तेरालोकेनैव निश्चेतनस्य चन्द्रकान्ताख्यस्य पाषाणखण्डस्याद्रभावोपगमनमेवायत्तम्, न पुनस्तत्कराकर्षणम्। नितरां पक्षपातिनोऽपि च मधुकरस्याभिगमनमेवाधीनम्। मकरन्दलाभे तु कलिकाप्रणयी जृम्भैव प्रभवति। दिवससंतापक्लान्तेन चोन्मुखता कुमुदाकरेण करणीया, विकासयति पुनस्तं ज्योत्स्नाभिरामा रजन्येव। निर्भरमन्तःसरसतायां सत्यामपि मधुमासलक्ष्मीपरिग्रहाद्विना पल्लवानुरागदर्शनस्य कृते किं करोतु पादपः। तत्र देव्याः कादम्बर्या एवाज्ञापराधिनी, ययाधरस्पन्दितमात्रप्रतीक्षे पुरःस्थायिनि दासजने निष्करुणतयात्मानमव्यापारयन्त्या सुखप्रतिपन्थिनी दुःखदानैकनिपुणा परहृदय-

---

यहाँ आनेकी अनुमति नहीं दी, भगवती महाश्वेताने कोई सन्देश नहीं दिया और मुझपर अपार अनुराग रखनेवाली मदलेखाने भी कुछ नहीं कहलाया। इसका कारण पत्रलेखा मुझे बता चुकी है। तुम्हारी देवी कादम्बरी उच्चकुल, महान् प्रभाव, औदार्य, समशीलत्व, दाक्षिण्य तथा अत्यन्त कोमल प्रकृति होनेके कारण अपने आपको भी नहीं समझ सकी हैं। चन्द्रमण्डलको देखते ही अचेतन चन्द्रकान्त पाषाण स्वयं आर्द्र हो सकता है, किन्तु वह चन्द्रमाकी किरणोंको खींच नहीं सकता। अत्यधिक लोभी भौंरा पुष्पके पास जा ही सकता है, किन्तु सुगन्धिलाभ तो कलियोंके ही अधीन रहता है। दिनके सन्तापसे म्लान कुमुदसमूह चन्द्रमाके सम्मुख होता है, किन्तु उसका विकास तो चाँदनीसे मनोहर लगनेवाली रात्रिसे ही होता है। भीतरसे पर्याप्त सरसता रहनेपर भी वसन्तश्रीकी कृपाके बिना वृक्ष लाल रंगके पत्ते लानेका कौनसा उपाय कर सकता है? अतएव मुख्यरूपसे अपराधिनी देवी कादम्बरीकी आज्ञा है। जिसने होंठ हिलानेमात्रकी प्रतीक्षा करनेवाले अगणित सेवकोंके रहनेपर भी स्वभावतः निष्ठुर होनेके कारण उनके द्वारा अपना (आज्ञाका) उपयोग नहीं होने दिया। उसने सुखकी शत्रु, एकमात्र कष्ट देनेमें निपुण एवं पराये हृदय-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पीडनापेक्षिणी लज्जापेक्षिता, न जीवितसंदेहदायिनी देव्याः समाचष्ट। अथवा देव्याः परिजनस्यापि कोऽयमेवंविधो व्यामोहः, यदनिच्छन्त्यपि बलादसौ न व्यापारिता। कीदृशी चरणतलप्रतिबद्धस्य दासजनस्योपरि लज्जा, कीदृशं वा गौरवम्, को वानुरोधः, अविश्वस्तचित्तता वा केयमीदृशी, यदेयमात्मनः शिरीषपुष्पकोमलस्येयमतिदारुणा पीडाङ्गीकृता, न कृतार्थितो मे मनोरथः। अथवा क्रमागतमन्तर्धानं वामलोचनानां विशेषतोऽपरित्यक्तनिःशेषबालभावानामनतिप्रबुद्धसुग्धमनसिशयानां कन्यकानां लज्जा न पारिता नामास्मिञ्जने स्वयं परित्यक्तुं देव्या। मदलेखा तु द्वितीयं हृदयमस्याः। तया किमेवमहार्यसंयमधनैर्मुनिभिरप्यरक्षितहृदयापहारेणानिग्राह्यचौरेण शुचिभिरप्यपरिहार्यस्पर्शेनाबहिष्का-

---

की सुधि न लेनेवाली लज्जाको तो प्रश्रय दिया, किन्तु जीवनको ही संशयमें डाल देनेवाली देवीकी दशापर दृष्टिपात नहीं किया। अथवा देवीके परिजन भी कैसे मूढ़ थे कि जिन्होंने देवीकी इच्छा न होनेपर भी उन्हें हठात् आज्ञा देनेके लिए प्रोत्साहित क्यों नहीं किया। मुझ जैसे चरणोंमें संलग्न दाससे कैसी लज्जा? कैसा गौरव और कैसा अनुरोध! और चित्तके प्रति ऐसी अविश्वस्त भावना किस कामकी कि जिससे उन्होंने शिरीष कुसुमसदृश कोमल अपनी आत्माको इतनी भीषण वेदना प्रदान की, किन्तु मेरी आकांक्षा पूरी नहीं होने दी। अथवा मनोभाव छिपाना नारीजातिकी परम्पराकी बात है। विशेष करके वे रमणियाँ ऐसा अवश्य करती हैं कि जिनका बचपन दूर नहीं हुआ रहता तथा कामदेव पूर्णरूपसे जाग्रत नहीं होता। मैंने माना कि देवी मेरे समक्ष लज्जा नहीं त्याग सकी थीं, किन्तु मदलेखा तो उनका दूसरा हृदय थी। तब उसने क्यों दुष्ट कामदेव द्वारा सतायी जाती हुई अपनी सखीके शरीरकी उपेक्षा की? यह स्वतः उत्पन्न होनेवाला कामदेव इतना प्रबल होता है कि संयमस्वरूप अनपहार्य धनके धनी बड़े-बड़े मुनि भी उसके द्वारा अपहृत हृदयकी रक्षा नहीं कर पाते। क्योंकि यह ऐसा चोर है कि इसे पकड़कर दण्ड भी नहीं दिया जा सकता। पवित्र प्राणी भी इसके संसर्गसे नहीं बच पाते। यह ऐसा चांडाल है कि इसका बहिष्कार नहीं किया जा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यंचाण्डालेन भस्मीकृतापर्यवसानप्राणिसहस्रेणानिर्वाप्यश्मशानाग्निना सर्वदोषाश्रयेणाशरीरव्याधिना रूपापहारिणाऽकाण्डव्याधेन मर्मभेदिनाऽलीकधनुर्धरेण सद्यःप्राणापहारक्षमेणाकालमृत्युनाऽनिरूपितस्थानास्थानप्रवर्तिना परापकारकृतार्थेन हृदयवासिनाऽपरप्रत्ययेन स्वयोनिना कामेन दुरात्मनायास्यमानं देवीशरीरमुपेक्षितम् । किमिति तत्रस्थस्यैव मे कर्णे नावेदितम् । अधुना श्रुत्वापि दिवसक्रमगम्येऽध्वनि किं करोमि । मलयानिलाहतलताकुसुमपातस्याप्यसहं देवीशरीरम् । वज्रसारकठिनहृदयैरस्मद्विधैरपि दुर्विषहाः स्मरेषवः । न ज्ञायते निमेषमात्रेणैव किं वा भवतीति प्रायेण च देव्याप्यनुभवनीय एवायमर्थः । यथा चास्य दुःखैकदानव्यसनिनो दुर्घटघटनापण्डितस्य यत्किंचनकारिणो निष्कारणकुपितस्य हतविधेः सर्वतो विसंस्थुलं समारम्भं पश्यामि, तथा जानामि नैतावता स्थास्यतीति । अन्यथा क निष्प्रयोजनाश्वमुखानुसरणेनामानु-

---

सकता । इसने हजारों लोगोंको जलाकर खाक कर दिया है। यह न बुझाई जा सकनेवाली श्मशानकी आग है । इसमें सब दोष भरे हैं। यह अशरीरी रोग है। यह बाण मारकर रूपका अपहरण कर लेनेवाला बहेलिया है । मर्मको छिन्न-भिन्न कर देनेवाला यह झूठा धनुर्धारी है। यह तत्काल प्राण ले लेनेवाला अकाल मृत्यु है । यह योग्य-अयोग्य स्थान देखे बिना ही प्रवृत्त हो जाता है। यह औरोंका अपकार करके अपनेको कृतकृत्य मानता है । यह हृदयमें बसता है और किसीपर विश्वास नहीं करता। जब मैं वहाँपर था, तभी यह बात मेरे कानमें क्यों नहीं डाल दी गयी ? अब मैं जान करके भी क्या कर लूँगा ? क्योंकि कई दिनोंमें तै करने योग्य रास्ता है । उधर देवीका शरीर इतना कामल है कि वे मलयवायु द्वारा हिलायी हुई लतासे गिरे फूलोंकी चोट भी नहीं सह सकतीं । मुझ जैसे वज्रहृदयवाले लोग भी कामबाणका प्रहार बड़ी कठिनाईसे सह पाते हैं। सो न जाने पलभरमें क्या हो जाय । प्रायः देवी कादम्बरी इन बातोंको सोचती होंगी । और फिर केवल दुःख देनेका व्यसनी, दुर्घट घटनाओंके निर्माणका पंडित, स्वेच्छित कार्य करनेवाला और अकारण कुपित मुए दैवका सारा कार्यकलाप जब विपरीत देखता हूँ तो यह धारणा होती है कि यह इतना करके ही शान्त न बैठेगा । नहीं तो कहाँ निष्प्रयोजन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

षभूमिगमनम्, क्व च तत्र तृषितस्याच्छोददर्शनम्, क्व तत्र तीरे विश्रान्तस्यामानुषगीतध्वनेराकर्णनम्, क्व तज्जिज्ञासागतस्य महाश्वेतावलोकनम्, क्व तत्र तरलिकया सह तवाभिगमनेन मद्गमनप्रस्तावः, क्व महाश्वेतया सह हेमकूटगमनम्, क्व तत्र देवीवदनदर्शनम्, क्व रागोत्पत्तिरस्मिञ्जने देव्याः, क्व वाऽपरिपूर्णमनोरथस्य मे पितुरलङ्घनीयागमनाज्ञा। तत्सुदूरमारोप्य पातिता वयं खल्वनेनाकार्यकारिणास्मत्कर्मवलनियोगदक्षेण दग्धवेधसा। तथापि देवीं संभावयितुं प्रयतामहे।' इत्यभिदधत्येव चन्द्रापीडे 'नितरामयमनेनैव कादम्बरीवृत्तान्तेन संतापितः तत्किमपरमहमेनमात्मतेजसा संतापयामि' इत्युत्पन्नदय इव भगवांस्तिग्मदीधितिरुत्तप्तकनकद्रवस्फुलिङ्गपिङ्गलद्युति दिग्विकीर्णधूर्जटिजटामण्डलानुकारि संजहार करसहस्रम्। अस्तानुसारेण च रवेर्वासरोऽपि यथोच्छ्रिततरुशिखरावलम्बिनो रक्तातपच्छेदानाकर्षन्नपससार। क्रमेणैव

किन्नरमिथुनका पीछा करते हुए मानवविहीन भूमिमें पहुँचना, कहाँ प्यास लगनेपर अच्छोद सरोवरका दर्शन, कहाँ उसके तटपर विश्राम करते समय अमानवी गीतध्वनि सुनना, कहाँ उसकी जिज्ञासासे प्रेरित होकर पहुँचनेपर महाश्वेताका दर्शन, कहाँ तरलिकाके साथ तुम्हारे आनेपर मेरे चलनेका प्रस्ताव, कहाँ महाश्वेताके साथ हेमकूटकी यात्रा, कहाँ वहाँपर कादम्बरीके मुखका दर्शन, कहाँ इस सेवकपर देवीके अनुरागकी उत्पत्ति और कहाँ जब कि मेरी आकांक्षा पूर्ण नहीं हुई थी, तभी वहाँसे लौटनेके लिए पिताजीकी अलंघ्य आज्ञा प्राप्त होना। अतएव अनपेक्षित कार्य करनेवाले एवं हम सबके कर्मानुसार नियुक्ति करनेमें कुशल इस जले विधाताने हमें बहुत ऊँचे ले जाकर गिराया है। तथापि मैं देवी कादम्बरीके आश्वासनका प्रयास करूँगा। जब कि चन्द्रापीड बात कर ही रहा था, तभी वह सोचकर कि 'जब चन्द्रापीड कादम्बरीका वृत्तान्त सुनकर ही सन्तप्त हो गया है, तब मैं भी अपने तेजसे इसे और सन्ताप क्यों दूँ।' इस प्रकार दया करके ही जैसे सूर्यभगवान्ने तपाये हुए सुवर्णके द्रवसदृश पीतवर्णका प्रकाश पसारतीं तथा दसों दिशाओंमें फैले शंकरजीके जटामंडलका अनुकरण करनेवाली अपनी हजारों किरणोंको समेट लिया। सूर्यास्तके बाद ही ऊँचे वृक्षोंकी चोटियोंपर पड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संजातकरुणानुबन्धयेव संध्ययाप्युपरि जलार्द्रपट इव प्रसार्यमाणे स्वरागपटले, निशागमेनाप्येवमस्य शून्यताविक्लवस्य मा भूद्दर्शनमित्याप्तेनेव सर्वतो नीलीपरिलम्बमानायामिव भ्राम्यमाणायां तिमिरलेखायाम्, कमलेष्वपि दुःसहत्वाच्छोषकारिणः संतापस्य तल्पकल्पनाभीतेष्विव संकुचत्सु कुमुदेष्वपि शुचिस्वभावतयार्द्रार्द्रेषु शयनसंपादनायेवाहमहमिकयोद्दलत्सु, चक्रवाकेष्वपि सहचरीविरहविधुरेषु, कादम्बरीसमीपगमनोपदेशदानायेव कलकरुणमुच्चैर्मुहुर्मुहुर्व्याहरत्सु, चन्द्रमस्यपि भगवति सकलभुवनैकातपत्रे सुधारजतकलशे पूर्वदिग्वधूवदनचन्दनतिलके गगनगतलक्ष्मीलावण्यमहाह्रदे सकललोकाह्लादकारिणि सुधालिप्तैः करैरिव स्प्रष्टुम्, उच्छ्वासहेतुना तं ज्योत्स्नाजलेन च सेक्तुम्, उदयगिरिशिखरमारूढे प्रौढे प्रदोषसमये चन्द्रापीडस्तस्मिन्नेव वल्लभोद्याने, चन्द्रातपस्पर्शदर्शितविशदजललवोद्भेदहारिणि चन्द्रमणिशिलातले विमु-

---

धूपके लाल-लाल टुकड़ोंको समेटता हुआ दिन भी भाग गया । तदनन्तर जैसे करुणासे पूर्ण होकर सन्ध्या आर्द्र वस्त्रकी नाईं अपना रंग फैलाने लगी । विमनस्कतासे व्याकुल युवराजका दर्शन न हो, यह सोचकर जब एक विश्वस्त मित्रकी भाँति निशागमनकालने भी सेवारके समान अन्धकारराशि फैला दी, सततशोषणकारी सन्तापको दुःसह समझते हुए शय्याके उपयोगमें आनेके डरसे जब कमल भी संपुटित होने लगे, सीधा-सादा स्वभाव होनेके कारण अतिशय आर्द्र कुमुद जब किसीका बिछौना बननेके लिए अहमहमिकतापूर्वक जल्दी-जल्दी प्रफुल्लित होने लगे, अपनी प्रियतमाके वियोगसे दुखी चक्रवाकगण शीघ्र कादम्बरीके पास पहुँचनेका परामर्श देते हुए जब उच्च स्वरसे करुणापूर्वक बार-बार बोलने लगे, सारे संसारके एकमात्र छत्र, अमृतसे भरे चाँदीके कलश, पूर्वदिशासुन्दरीके तिलक, आकाशसौन्दर्यके महान् सरोवर और सबको आनन्दित करनेवाले भगवान् चन्द्रमा भी जब अपनी अमृतमयी किरणों द्वारा आदरपूर्वक चन्द्रापीडका स्पर्श करके चाँदनीस्वरूप जल छिड़कनेके लिए उदयाचलकी चोटीपर चढ़ गये और प्रदोषकाल प्रौढ़ हो गया । तब चन्द्रापीड उसी वल्लभोद्यानमें चन्द्रमाकी किरणोंके संस्पर्श द्वारा उत्पन्न जलकणोंसे रम्य दीखनेवाले एक चन्द्रकान्तमणिकी चट्टानपर लेट गया और पैर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च्याङ्गानि चरणसंवाहनोपसृतं केयूरकमवादीत्—'केयूरक, किमाकलयसि। यावद्वयं परापतामस्तावत्प्राणान्धारयिष्यति देवी कादम्बरी। पारयिष्यति वा तां विनोदयितुं मदलेखा। आगमिष्यति वा पुनस्तत्समाश्वासनाय महाश्वेता। मत्परिचयोद्वेजिता प्रतिपत्स्यते वा शरीरस्थितये तयोरभ्यर्थनाम्। द्रक्ष्यामि वा पुनस्तस्याः स्मेरसृक्कोपान्तसालोलतारकमुत्त्रस्तहरिणशावकायतेक्षणं सुखम्' इति। स तु व्यज्ञपयत—'देव, धैर्यमवलम्ब्य गमनाय यत्नः क्रियताम्। तिष्ठतु तावदासन्नवर्ती सखीजनः परिजनो वा। तस्या हि त्वदालोकनेच्छैव स्वेच्छया निमेषितुमपि न ददाति। समागमाशयैवावष्टब्धं हृदयम्। श्वसितमेव मुखेऽवहितम्। रोमाञ्च एव क्षणमपि शरीरं न मुञ्चति। दिवानिशं वाष्प एव लोचनपथस्थायी। प्रजागर एव रात्रावपि दत्तदृष्टिः। अरतिरेव नैकाकिन्याः क्षाम्यत्यवस्थानम्। जीवितमेव कण्ठस्थानान्नापसरति' एवं वदन्तं तमादिदेश विश्रान्तये केयूरकम्। आत्मनापि गमनचिन्तां प्राविशत्।

दबानेके लिए आये हुए केयूरकसे बोला—'तुम्हारा क्या ख्याल है जबतक हमलोग वहाँ पहुँचेंगे, तबतक देवी कादम्बरी जीवित रह सकेंगी? उतने समय तक मदलेखा क्या उनका मन बहला लेगी? उनको आश्वासन देनेके लिए महाश्वेता क्या फिर जा पहुँचेंगी? मेरे परिचयसे उद्विग्न कादम्बरी मदलेखा तथा महाश्वेताकी अभ्यर्थना मानकर क्या तबतक अपनी शारीरिक स्थिति बनाये रहेंगी? क्या मैं उनका मन्द मुसकान युक्त, चंचल पुतलियों तथा भयभीत मृगशावककी नाईं बड़ी-बड़ी आँखोंवाला उनका मुख फिर देखूँगा?' केयूरकने कहा—'देव! आप धैर्य धारण करके चलनेका प्रयत्न करिए। उनके समीप रहनेवाली सखियों और परिजनोंको छोड़िए। आपके दर्शनकी अभिलाषा ही देवीको आँख नहीं मूँदने देती। आपके मिलनकी आशा ही उनके हृदयको बचाये रहती है। श्वास उनके मुखमें टिका हुआ है। रोमांच क्षणभरके लिए भी उनका शरीर नहीं छोड़ता। आँसू दिन-रात उनकी आँखोंमें डेरा डाले रहते हैं। रात्रिके समय भी जागरण उनपर दृष्टि रखता है। बेचैनी कभी भी उन्हें अकेली नहीं छोड़ती और जीवन कण्ठस्थानसे नहीं खिसकता।' ऐसा कहते हुए केयूरकको चन्द्रापीडने आराम करनेकी छुट्टी दे दी और स्वयं हेमकूट

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि तावदकथयित्वानभिपत्य चरणयोरनाघ्रातः शिरस्यगृहीताशीः सहसानुत्संकलित इव तातेनाम्बयोक्तमपक्रम्य गच्छामि। ततो गतस्यापि मम कुतः सुखम्, कुतः श्रेयः, कुतो वोच्चफलावाप्तिः, कीदृशी वा हृदयनिर्वृतिः। अथवा तिष्ठतु तावदियमुत्तरकालागामिनी चिन्ता। अपक्रम्य गत एव कथमहं यत्तातेन दुस्तराहवार्णवोत्तरणमहासेतुबन्धादवन्ध्यवाञ्छितफलप्रदानकल्पद्रुमादहितविक्रान्तियशोनिष्क्रान्तिद्वारार्गलदण्डादशेषभुवनभवनोत्तम्भनस्तम्भात्स्वभुजादवारोप्य मय्येव राज्यभार आरोपितः, तदनाख्याय पदमपि निर्याते मय्यवश्यमपरिमितकरितुरगरथगमनसंक्षोभितधरातलैरालोलकदलिकाननाकुलीकृतभास्वद्भस्तिभिरूर्ध्वं ध्रियमाणधवलातपत्रमण्डलच्छायान्तरितवासरव्यतिकरैः, अतिबहलरेणूद्गमाविच्छेदापूरितभुवनकुहरैः, पुरः प्रसृतजवनवाजिभिः अनुसंतानलग्नवेतण्डप्रायसाधनैः, श्रान्तैरपि बुभुक्षितैरप्यकृतगतिवि-

---

जानेकी बात सोचने लगा—'यदि माता-पितासे कहे बिना और उनके चरणोंमें पड़कर मस्तक सुँघाते हुए आशीर्वाद प्राप्त किये बिना सहसा चल दूँ तो वहाँ जाकर भी मुझे कौनसा सुख मिलेगा? कौनसा कल्याण होगा? किस उच्च फलकी प्राप्ति होगी? हृदयको कौनसी शान्ति प्राप्त हो जायगी? अथवा भविष्यकी बातें सोचनेसे क्या लाभ? यदि मैं यहाँसे किसी तरह निकलूँ भी तो जाऊँगा कैसे? मेरे पिताजीका भुजदंड दुस्तर संग्रामरूपी समुद्रको पार करनेके लिए महान् सेतुबन्ध है। वह नित्य अभीष्ट फल देनेवाला कल्पवृक्ष है। रिपुओंके बलकी कीर्ति निकलनेके मुख्य द्वारका अर्गलादण्ड है। समग्र भुवनरूपी भवनको सम्हालनेवाला आधारस्तम्भ है। अपनी उस भुजाका सारा राज्यभार उतारकर उन्होंने मेरे ऊपर रख दिया है। ऐसी परिस्थितिमें यदि मैं उनसे कहे बिना एक पैर भी आगे बढ़ाऊँगा तो अपरिमित हाथी-घोड़े तथा रथ दौड़ाकर धरातलको क्षुब्ध करते हुए, फहरानेवाली पताकाओंके जंगलसे सूर्यकी रश्मियोंको भी व्याकुल करते हुए, ऊपर तने श्वेत छत्रोंके समुदायकी छायासे दिवसके आतपको रोकते हुए, अत्यधिक उड़नेवाली धूलसे सारे भुवनविवरको भरते हुए, आगे-आगे द्रुतगामी घोड़ों और उनके पीछे पङ्क्तिबद्ध होकर चलनेवाली गजसेनासे सम्पन्न राजे थके तथा भूखे रहनेपर भी चलनेमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लम्बैरापयोधेरष्टाभ्यो दिग्भ्यो राजभिरनुधावितव्यम् । तिष्ठन्तु तावत्सेवापरा राजानः । सुखपरिभुक्ताः प्रजा अपि तातस्नेहात्परित्यक्तपुत्रदाराः पृष्ठतो लगिष्यन्तीति मे चेतसि । अपि च तातस्यापि कोऽपरोऽस्ति यस्मिन्मदीयं स्नेहं संक्रमय्य मय्यपक्रान्ते यातु किमनेन गतेनागतेन वेत्यविनयकोपितोऽवष्टम्भं कृत्वा स्थास्यति । कस्य चापरस्य मुखमालोकयन्ती सुखायमानहृदया मत्प्रत्यानयनाय कृतार्तप्रलापा न तातमेवाकुलीकरोत्यम्बा । ताते च पृष्ठतो लग्नेऽष्टादशद्वीपमालिनी मेदिन्येव लग्ना भवतीति । तदा मया क्व गतम्, क्व स्थितम्, क्व विश्रान्तम्, क्व यातम्, क्व भुक्तम्, क्वापसृतम, क्वात्मा मया गोपायितव्यः, समासादितेन चात्र कथं मया वदनं दर्शयितव्यम्, पृष्टेन वा किमुत्तरं दातव्यम् । अथापि कथंचिद्दैवनियोगान्निःसृतोऽस्मि, तथाप्यनायासनीयं तातमेवं महीयस्यायासे तातप्रसादाददृष्टदुःखामम्बां वा निजापक्रमण-

---

तनिक भी विलम्ब न करके समुद्र पर्यन्त आठों दिशाओंमें मेरे पीछे दौड़ पड़ेंगे । यदि उन सेवापरायण राजाओंकी बात छोड़ भी दी जाय तो सुखमें पली हुई प्रजा ही पिताजीके स्नेहवश अपने स्त्री-पुत्रोंको त्यागकर मेरा पीछा करने लगेगी । फिर पिताजीके पास और कौन है कि जिसपर मेरा प्रेम स्थापित करके मेरे चले जानेपर 'उँह ! जाता है तो जाय, उसके जाने या रहनेसे क्या होना है ?' ऐसा सोचकर मेरे उजड्डपनसे कुपित होते हुए भी धैर्य धारण करके रह सकेंगे । दूसरा कौन ऐसा है कि जिसका मुँह देखकर सुखसे रहती हुई माताजी मुझे लौटा लानेके लिए चीत्कार करके पिताजीको विकल न कर देंगी । कदाचित् पिताजी स्वयं मेरे पीछे चल पड़े, तब तो अष्टादश द्वीपोंकी माला धारण करनेवाली सारी पृथिवी ही मेरा पीछा करने लगेगी । तब मैं कहाँ जाऊँगा ? कहाँ रहूँगा ? कहाँ विश्राम करूँगा ? कहाँ चलूँगा ? कहाँ खाऊँगा ? कहाँ भागूँगा ? कहाँ अपनेको छिपाऊँगा ? और यदि पकड़ गया तो फिर मैं यहाँ कैसे अपना मुँह दिखाऊँगा ? और जब लोग पूछेंगे तो क्या उत्तर दूँगा ? यदि किसी प्रकार दैवयोगसे निकल भागा तो कष्टके अयोग्य पिताजीको इतने बड़े दुःखमें डाल तथा पिताजीकी कृपासे जिसे कभी कोई दुःख नहीं देखना पड़ा है, उन माताजीको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शोकार्णवे पातयता किं कृतं भवत्यपुण्यवता। अपि च सुबहुदिवसप्रवासोपतप्तः स्कन्धावारोऽपि मेऽद्यापि न परापतति, तेनापरसंविधानादर्धपथादेव निवृत्य पुनः प्रधावितव्यम्। अथावेद्य तातस्याम्बायाश्च ताभ्यां च विसर्जितः संविधानेन गच्छामि, तत्रापि किमिति कथयामि। मम स्नेहदुःखिता गन्धर्वराजपुत्री कादम्बरी मामुद्दिश्य मकरकेतुनायास्यमाना दुःखं तिष्ठतीति। किं वा बलवान्मे तस्यामनुरागः। न तया विनाहं प्राणान्संधारयामीति। किं तस्या मम च द्वयोरपि जीवितनिबन्धनहेतुभूतया महाश्वेतया तत्परिणयनाय मे संदिष्टमिति। किं वा तद्दुःखमपारयन्सोढुमयं केयूरकस्तद्भक्तथा मामानेतुमागत इति। अपरोऽपि वा कश्चिद्व्यपदेशो न शक्यत एव पुनर्गमनाय कर्तुम्। संप्रत्येव समधिकाद्वर्षत्रयात्प्रसाध्य वसुधां प्रत्यागतोऽस्मि। अद्यापि साधनमेव न परापतति। अकथयित्वा च गमनकारणं कथमात्मानं मोचयामि। कथं वा मुञ्चतु तातोऽम्बा वा। तत्सुहृत्साध्येऽस्मिन्नर्थेऽनर्थपतितः किं करोम्ये-

---

अपने पलायनका महान् कष्ट देकर क्या मैं बहुत बड़े पापका भागी न बनूँगा? और फिर बहुत दिनोंके प्रवाससे सन्तप्त मेरी सेना भी अभी नहीं लौटी है। मेरे भागनेकी बात सुनकर आधी राहसे लौटकर उसे फिर दौड़ना पड़ेगा। यदि माता-पितासे कह और उनसे अनुमति लेकर विधिवत् यात्रा करूँ तो आखिर मैं उनसे कहूँ क्या? क्या कह दूँ कि 'विरहसे व्यथित गन्धर्वराजकी पुत्री कादम्बरी मेरे निमित्त कामपीड़ा भोगती हुई बड़े संकटमें है?' अथवा यह कहूँ कि 'कादम्बरीपर मेरा प्रबल अनुराग है। मैं उसके बिना जीवित नहीं रह सकता।' या यह कहूँ कि 'हम दोनोंके जीवनको एक डोरमें बाँधनेवाली महाश्वेताने विवाहके लिए मुझे बुलवाया है।' अथवा कहूँ कि 'कादम्बरीका असह्य दुःख देखनेमें असमर्थ होकर उनकी भक्तिवश केयूरक मुझे बुलाने आया है?' नहीं तो फिर मेरे बाहर जानेका कोई बहाना नहीं रह गया है। क्योंकि अभी ही मैं सारी पृथिवी जीतकर तीन वर्षों बाद लौटा हूँ। अबतक मेरी सेना भी लौटकर नहीं आयी है। अतएव कोई विशेष कारण बताये बिना मैं कैसे अपना पीछा छुड़ा सकता हूँ? और फिर माता-पिता मुझे जाने ही क्यों देंगे? यह कार्य मित्रके द्वारा ही साध्य हो सकता है। तब मैं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

काकी। वैशम्पायनोऽप्यसंनिहितः पार्श्वे मे। कं पृच्छामि। केन सह निरूपयामि। को मे समुपदिशतु। को वापरो मे निश्चयाधानं करोतु। कस्यापरस्य वा विवेकिनी प्रज्ञा। कस्य वान्यस्य श्रुतं श्रोतव्यम्। को वापरो वेत्ति वक्तुम्। कस्य वापरस्य मय्यसाधारणस्नेहः। केन वापरेण सह समानदुःखो भवामि। को वापरो मयि दुःखिते दुःखी, सुखिते सुखी। को वापरो रहस्यावेदनस्थानम्। कस्यापरस्योपरि कर्तव्यभारमवक्षिप्य निर्वृतात्मा तिष्ठामि। कस्य वापरस्य मत्कार्ये पर्याकुलता। को वापरो मया कोपितं तातमम्बां च परिबोध्य मामानेतुं समर्थः' इत्येवं चिन्तयत एवास्य सा क्षपा दुःखदीर्घापि क्षयमगमत्।

प्रातरेव च किंवदन्तीं शुश्राव, यथा किल दशपुरं यावत्परागतः स्कन्धावार इति। तां च श्रुत्वा समुच्छ्वसितचेताश्चकार चेतसि—'अहो धन्योऽस्मि। अहो, विधेर्भगवतोऽनुग्राह्योऽस्मि यस्य मेऽनुध्यानानन्तरमेव परागतो द्वितीयं हृदयं वैशम्पायनः' इति। प्रहर्षपरवशश्च प्रविशन्त-

---

अकेला बहुत हाथ-पैर मार करके भी क्या कर सकता हूँ? वैशम्पायन भी इस समय मेरे समीप नहीं है। तब मैं किससे पूछूँ? किसके साथ विचार-विमर्श करूँ? कौन मुझे सही-सही सलाह देगा? कौन इस समस्याका निबटारा करेगा? किसकी बुद्धि विवेकसम्पन्न है? किनका शास्त्रज्ञान श्रवण करने योग्य है? किसे यथार्थ बात कहनेका ढङ्ग मालूम है? किसका मेरे ऊपर असाधारण स्नेह है? किसके साथ मैं समान दुखी हो सकता हूँ? कौन मेरे दुखमें दुखी और सुखसे सुखी होगा? कौन रहस्यकी बात बतानेका उपयुक्त पात्र हो सकता है? किसके ऊपर अपने कर्तव्यका भार डालकर मैं निश्चिन्त हो सकता हूँ? किसे मेरा कार्य सिद्ध करनेके लिए व्याकुलता होगी? कौन मेरे कुपित माता-पिताको समझा-बुझाकर मुझे पुनः उसके समक्ष उपस्थित कर सकता है?' इन्हीं बातोंको सोचते-सोचते दुःखकी भी वह लम्बी रात बीत गयी।

सवेरे उठते ही उसने यह समाचार सुना कि सेना दशपुर तक आ पहुँची है। यह सुना तो मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न होकर सोचने लगा—'अहो! मैं धन्य हूँ। अहो! भगवान् विधाताने मुझपर कृपा की। क्योंकि मैं जिसके विषयमें सोच रहा था, वह मेरे दूसरे हृदयके समान प्रिय मित्र वैशम्पायन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मालोक्य दूरत एव कृतप्रणामं केयूरकमवादीत्—'केयूरक, करतलवर्तिनीं सिद्धिमधुनावधारय। प्राप्तो वैशम्पायनः' इति। स तु तदाकर्ण्य गमनपरिलम्बकृतया चिन्तयाऽन्तःशून्य एव 'भद्रकमापतितम्, महती हृदयनिर्वृतिर्देवस्य जाता' इत्यभिदधदेवोपसृत्यापविश्य पार्श्वे वैशम्पायनागमनालापमेवानुबध्य मुहूर्तमिव संज्ञोत्सारितसमस्तपरिजनं चन्द्रापीडं व्यज्ञपयत्—'देव, सर्वतो विस्फुरन्तो तडिदिव वलाहकोद्गमम्, उपारूढश्यामिका मेघलेखेव सलिलागमनम्, उपदर्शितपाण्डुच्छविः प्राचीव चन्द्रोदयम्, परिमलग्राहिणी मलयानिलागतिरिव वसन्तमासावतारम्, समुच्छ्वसितमकरध्वजा मधुमासलक्ष्मीरिव पल्लवोद्भेदम्, उल्लसितरागा पल्लवोद्गतिरिव कुसुमनिगमम्, विकसितकाशकुसुममञ्जरीव शरदारम्भम्, अवस्थेयमावेदयति निःसंशयं देवस्य गमनम्। अवश्यं च देवस्य देवीप्राप्त्या भवितव्यम्। केन कदा वावलोकितो ज्योत्स्नारहितश्चन्द्रमाः, कमलाकरो वा मृणालिकया विना, उद्यान-

---

आ गया। जब वह हर्षविभोर था, उसी समय केयूरकको आते और दूरही से प्रणाम करते देखकर कहा—'केयूरक! अब यह समझो कि अपनी कार्यसिद्धि हथेलीपर आ गयी है। क्योंकि वैशम्पायन आ गया है।' यह सुना तो जानेमें अभी भी विलम्ब होते देखकर शून्यहृदय होते हुए केयूरकने कहा—'बहुत ही अच्छा हुआ। उनके आगमनसे श्रीमान्‌के हृदयको बड़ा ढाढ़स बँधेगा' इस प्रकार कहता हुआ वह तनिक पास सरक गया और संकेतमें सब परिजनोंको वहाँसे हटाकर वैशम्पायनसम्बन्धी बातचीतके प्रसङ्गमें ही केयूरकने कहा—'देव! जैसे चारों ओर चमकनेवाली बिजली बादलोंके आगमनको, काली घटा बरसातको, उज्ज्वल आभा बिखेरती हुई पूर्वदिशा चन्द्रोदयको, सुगन्धित मलयवायु वसन्तऋतुके आगमनको, कामवासना बढ़ानेवाली वसन्तकी शोभा नये पत्ते निकलनेको, चमकाली पत्तियाँ निकल आनेपर फूल निकलनेको और विकसित कासकुसुमकी मञ्जरी शरदृतुके आरम्भको सूचित करती है, वैसे ही यह अवस्था बताती है कि आपकी यात्रा अवश्य होगी। श्रीमान्‌को देवी कादम्बरी निःसन्देह प्राप्त होंगी। क्या कभी किसीने बिना चाँदनीका चन्द्रमा, मृणालशून्य सरोवर अथवा लताविहीन उद्यान देखा है? सभी लोगोंको सुन्दर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भागो वा लताशून्यः। अपि च न राजत एव सहकारकुसुममञ्जरीपरिग्रहमन्तरेण सर्वजनसुभगोऽपि कुसुममासः, असंभावितदानलेखालक्ष्मीकं वा वदनं यूथाधिपतेः। किंतु यावद्वैशम्पायनः परापतति, यावच्चैतेन सह गमनसंविधानं निरूपयति देवः, तावदवश्यं कालक्षेपेण भाव्यम्। यादृशी चाकालक्षमा देव्याः शरीरावस्था तादृशी निवेदितैव मया। सर्वोऽपि प्रत्याशया धार्यते। देव्यास्तु पुनर्देवदर्शनेनाद्ययावन्निष्प्रत्याशमेव हृदयं केनाश्वासनेन वर्तताम्। मद्वार्तोपालम्भादेतदुपपत्स्यते चेतसि, यथास्ति कार्यं मे जीवितेन, दुःखान्यपि सहन्ती धारयाम्येतदिति। अतो विज्ञापयामि, चेतसा त्वग्रतो गत एव देवः, शरीरेणाप्यनुपदमुच्चलित एव। किमपरं मयात्र स्थितेन साधनीयम्। तद्देवागमनोत्सवावेदनाय गमनानुज्ञया प्रसादं क्रियमाणमिच्छति मे प्रणयप्रसाददुर्ललितं हृदयमिदानीमेव' इति विज्ञापिते केयूरकेणान्तःपरितोषविकासतया विकचनीलोत्पलपुञ्जमालिकयेव दृष्ट्या दर्शितप्रसादश्चन्द्रा-

---

लगनेवाला वसन्त भी आम्रकुसुममञ्जरीके बिना अच्छा नहीं लगता। गजराज भी मुखपर मदकी रेखाके बिना नहीं सोहता। किन्तु जबतक वैशम्पायन आयेंगे और आप उनके साथ विचार-विमर्श करेंगे, तबतक बहुत विलम्ब हो जायगा। इसके विपरीत देवी कादम्बरीकी जैसी विलम्ब सहनेमें असमर्थ अवस्था है, वह मैं आपको बता ही चुका हूँ। संसारके सभी प्राणी आशापर जीते हैं, किंतु देवीके हृदयको तो आपके दर्शन मिलनेकी कोई आशा ही नहीं है। तब वे किस आश्वासनपर टिक सकेंगी? यदि वहाँ पहुँचकर मैं यहाँका हाल-चाल बताऊँगा तो उन्हें यह ख्याल होगा कि 'मुझे अपने जीवनसे प्रयोजन है, उसे अनेक कष्टोंको सहकर भी मैं बचाऊँगी।' अतएव मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि आप हृदयसे तो आगे जा चुके हैं और शरीरसे भी मेरे पीछे पीछे आयेंगे ही। तब मैं यहाँ रहकर क्या करूँगा? अतएव आपके आगमनरूपी महोत्सवका वृत्तान्त बतानेके लिए आप मुझे जानेकी अनुमति देनेकी कृपा करिए। आपकी प्रीति प्राप्त करनेसे ही मेरा हृदय अभी प्रस्थान कर देनेका आग्रह कर रहा है।' केयूरकके यह कहनेपर अन्तरात्माके सन्तोषसे प्रसन्न एवं विकसित नीलकमलकी माला सदृश नेत्रोंसे हर्ष प्रकट करते हुए चन्द्रापीडने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पीडः प्रत्युवाच—'किमुच्यते । कस्यापरस्येदृशोऽस्मद्दुःखासहिष्णुरनपेक्षितस्त्रशरीरशक्तिरुत्साहः । कस्यापरस्येदृशी देशकालज्ञता । को वापरोऽस्मास्वेवं निर्व्याजभक्तिः । तत्साधु चिन्तितम् । गम्यतां देव्याः प्राणसंधारणाय ममागमनप्रत्ययार्थं च पत्रलेखाप्यग्रतस्त्वयैव सह यातु देवीपादमूलम् । इयमपि प्रसादभूमिरेव देव्याः । इमामप्यालोक्य कियत्यपि धृतिरवश्यमुत्पद्यत इति मे चेतसि । अपि चास्या अपि देव्यामस्त्येव स्नेहो भक्तिश्च' इत्यभिधाय पृष्ठत उपविष्टामेव तां पत्रलेखामद्राक्षीत् । सा तु किंचिदवनतमुखी 'निजाज्ञाक्षराणि प्रयच्छतु देवः' इति व्यज्ञपयत् । कृतप्रस्थितिनिश्चयायां च तस्यां मेघनादाह्वानाय प्रतीहारीमादिदेश । आदेशानन्तरमेव चागतं दूरतः प्रणतमाज्ञाप्रतीक्षं स्वयमेवाहूय सोपग्रहमादिदेश—'मेघनाद, यस्यां भूमौ पत्रलेखानयनाय मया त्वं प्रस्थापितस्तां भूमिमेव पत्रलेखामादाय केयूरकेण सहाग्रतो गच्छ । अहमपि वैशम्पायनमालोक्यानुपदमेव तं तुरङ्गमैः परागतः' इत्या-

---

कहा—'मैं क्या कहूँ ? मेरा दुःख न सह सकने और मेरे लिए अपने शरीरकी भी चिन्ता न करनेवाला इतना प्रबल उत्साह और किसे होगा ? इस प्रकार देश और कालका ज्ञान किसे है ? मेरे ऊपर ऐसी विशुद्ध भक्ति और किसकी है ? अतएव तुमने जो सोचा है, वह ठीक है। देवीके प्राणोंकी रक्षाके लिए तुम जाओ। मेरे आगमनका विश्वास दिलानेके लिए पत्रलेखा भी तुम्हारे साथ ही देवीके चरणोंमें जायगी। इसके ऊपर भी उनकी कृपा रहती है। मुझे यह विश्वास है कि इसको देखकर भी अवश्य उन्हें कुछ धैर्य होगा। इसकी भी देवीपर अपार प्रीति और भक्ति है।' केयूरकसे ऐसा कहकर चन्द्रापीडने पीछे बैठी हुई पत्रलेखासे कहा—'क्यों मेरा कहना ठीक है न ?' यह बात सुनी तो तनिक माथा झुकाकर उसने कहा—'महाराज ! आप आज्ञा दें।' इस प्रकार प्रस्थानका निश्चय हो जानेपर चन्द्रापीडने मेघनादको बुलानेके लिए प्रतीहारीको आदेश दिया। आदेशके बाद वह आ उपस्थित हुआ और दूर ही विनम्रभावसे खड़े मेघनादको पास बुलाकर बड़े आग्रहके साथ कहा—'मेघनाद ! जहाँ मैंने पत्रलेखाको लानेके लिए तुम्हें छोड़ा था, वहाँ ही तुम पत्रलेखाको लेकर केयूरकके साथ आगे चलो। मैं भी वैशम्पायनसे मिलकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिश्य, 'यथाज्ञापयति देवः' इति कृतनमस्कृतौ त्वरितगमनसंविधानाय निष्क्रान्ते मेघनादे 'देव, किमतः परं विलम्बेन' इत्यभिधाय, मेघनाद-निर्गमानन्तरं गमनप्रणामोत्थितं केयूरकं सस्नेहमाहूय, सबाष्पया दृष्ट्या पुनःपुनरालोक्य, परिष्वज्य च सपुलकाभ्यां दोर्भ्याम् , आत्मकर्णादप-नीयानेकवर्णरुचिरं संदेशमिव कर्णाभरणमस्य कर्णे कृत्वा कण्ठागतबा-ष्पगद्गदिकागृह्यमाणाक्षरमवादीत्—'केयूरक, त्वया तु मे देवीसंदेशो नानीत एव। तत्किं तव हस्ते तदनुरूपं संदिशाम्यपूर्वम्। विज्ञापयि-तव्या देवी। तत्रापि किमलीकलज्जाजालभारोद्वहनेन त्वामायासयामि। यात्येव पत्रलेखा देवीपादमूलम्। इयं विज्ञापयिष्यति' इत्यभिदधदेवा-तर्कितोपनतात्मविरहपीडाम्, अमङ्गलशङ्कया कृतयत्नापि बाष्पवेगमपा-रयन्तीं संधारयितुम्, उत्प्लुतावद्धलक्ष्यशून्यदृष्टिसञ्चारणां चरणपाता-भिमुखीं पत्रलेखां प्रणयेनाभिमुखो भूत्वा बद्धाञ्जलिरभाषत—'पत्रलेखे,

———————

तुम्हारे पीछे ही अश्वसेनाके साथ आ रहा हूँ।' यह सुनकर 'जैसी महाराजकी आज्ञा' यह कह और नमस्कार करके शीघ्र तैयारी करनेके लिए मेघनादके चले जानेपर केयूरक बोला—'देव ! अब विलम्बकी क्या आवश्यकता ?' ऐसा कह-कर वह भी मेघनादके पीछे ही जानेके लिए उद्यत होकर विदाईका प्रणाम करनेके निमित्त खड़ा हो गया। उसे बड़े स्नेहके साथ पास बुलाकर युव-राजने आँसूभरी आँखोंसे बार-बार निहारा और पुलकित बाहुओंसे गले लगाया। तदनन्तर अपने कानसे विविध वर्णों अर्थात् अक्षरों अथवा रंगोंसे युक्त संदेशके सदृश कर्णभूषण उतारकर केयूरकके कानमें पहनाते हुए आँसुओंके आवेगसे कण्ठ रुँध जानेके कारण गद्गद वाणीमें चन्द्रापीडने कहा—'केयूरक ! तुम तो देवीका कोई संदेश मेरे लिए नहीं लाये, तब मैं तुम्हारे हाथों उनके लिए कौन-अपूर्व संदेश भेजूँ ? और फिर उनके लिए कोई संदेश देकर तुम्हारे ऊपर व्यर्थ लज्जाका भार लादकर तुम्हें क्यों कष्ट दूँ ? पत्रलेखा उनके चरणोंमें जा ही रही है। यह उन्हें सब कुछ बता देगी।' वह ऐसा कह ही रहा था कि इतनेमें सहसा प्राप्त युवराजके वियोगसे दुःखिनी, अमङ्गलकी आशङ्कासे प्रयत्न करनेपर भी छलकते हुए आँसुओंका वेग रोकनेमें असमर्थ होती हुई लक्ष्यशून्य नयनोंसे इधर-उधर ताकती पत्रलेखा जब चंद्रापीडको प्रणाम करनेके लिए सम्मुख आयी,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साञ्जलिबन्धेन शिरसा प्रणम्य मदीयेन विज्ञाप्या देवी कादम्बरी, येन सर्वखलानां धुरि लेखनीयेन तथा प्रथमदर्शनेऽपि वत्सलत्वात्स्वभावस्य दर्शितप्रसादातिशयां देवीं प्रणामेनाप्यसंभाव्य गच्छता प्रज्ञा जडतया, ज्ञानं मौढ्येन, धीरता तरलत्वेन, स्नेहलता रौक्ष्येण, गौरवं लघुतया, प्रियंवदता पारुष्येण, मृदुहृदयता नैष्ठुर्येण, स्थैर्यं चञ्चलतया, दयालुता निस्त्रिंशत्वेन, आर्जवं मायाजालेन, सत्यवादितालीककाकुसंपादनेन, दृढभक्तिताऽवज्ञानेन, पेशलता कौटिल्येन, लज्जा धाष्टर्येन, औदार्यं क्षुद्रतया, दाक्षिण्यममहानुभावतया, प्रश्रयोऽभिमानेन, कृतज्ञता कृतघ्नतया, शीलं पौरोभाग्यतया, सर्वगुणा एव दोषैः परिवृत्ताः । स कमिवापरं गुणमवलम्ब्य पुनः परिग्रहाय विज्ञापयतु । केन चाङ्गीकरोतु देवी । किमुपदर्शितालीकात्मार्पणेन न प्रतारितं देव्या हृदयमिति, किं प्रकृतिपेशलं हृदयमपहृत्य नापक्रान्तोऽस्मीति, किमियं प्राणसंदेहका-

---

तब चन्द्रापीडने हाथ जोड़कर कहा—'पत्रलेखे ! इसी प्रकार माथेपर अंजली बाँधकर मेरी जबानी देवी कादम्बरीको प्रणाम करके कहना—'पहली बारके साक्षात्कारमें ही अपनी स्वाभाविक वत्सलताके कारण जिस देवीने अत्यन्त हर्ष प्रदर्शित किया, तब भी संसारके सब खलोंमें प्रथम लिखे जानेके योग्य मैंने चलते समय करनेका भी सत्कार न करके अपने सभी गुणोंको दोषके रूपमें परिणत कर दिया । मैंने अपनी प्रतिभाको मूर्खता, ज्ञानको मूढ़ता, धैर्यको चंचलता, स्निग्धताको रूक्षता, गौरवको लघुता, प्रियभाषिताको परुषता, कोमलहृदयताको निष्ठुरता, स्थिरताको चपलता, दयालुताको क्रूरता, कोमलताको मायाजाल, सत्यवादिताको असत्य एवं वक्र भाषण, दृढभक्तिको अवज्ञा, मनोज्ञभावको कुटिलता, लज्जाको ढिठाई, उदारताको क्षुद्रता, सरलताको माहात्म्यहीनता, विनयको अभिमान, कृतज्ञताको कृतघ्नता और आचारको दोषदर्शिताके रूपमें बदल दिया । ऐसा व्यक्ति किस गुणके आधारपर पुनः परिग्रह (स्वीकृति) के लिए सन्देश भेजे । और फिर देवी कादम्बरी भी कौन-सा गुण देखकर उसका कहा मानें । क्या झूठ-मूठ आत्म-समर्पणका भाव दिखलाकर मैंने उनके हृदयको धोखा नहीं दिया ? उनके स्वभावतः कोमल हृदयको चुराकर क्या मैं नहीं भागा ? क्या इस प्रकार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिणी निष्करुणेन शरीरावस्था नोपेक्षितेति, किमहमस्या न कारणमित्येतत्सर्वदोषाश्रयेणाप्यनुवृत्त्या चरणावाराधिताविति वा। तदेवमात्मना सर्वगुणहीनस्यापि मे देवीगुणा एवावलम्बनम्। इयमेव ते स्वभावसरसा दूरस्थमपि मदनहुतभुजा दह्यमानं रक्षत्येव सरलता। मुहुर्मुहुराह्वयत्येव स्नेहलता, आनयत्येव स्थिरप्रतिज्ञता, ढौकयत्येव दक्षिणता, अभिपद्यत एव वत्सलता, चरणपतितं न निर्भर्त्सयत्येव मृदुहृदयता, उत्थाप्य संभावयत्येव महानुभावता, आलपत्येव प्रियवादिता, ददात्येव हृदयेऽवकाशमत्युदारता। यच्च तथापि गत्वा निर्लज्जहृदयः पुनर्वदनदर्शनदानसाहसमङ्गीकरोमि। अत्रापि सत्प्रकृतयो देवीप्रसादा एव कारणम्। एते हि विशदत्वादुदारभावात्संगतत्वाच्च क्षणपरिचिता अपि समारोपितजीवितप्रत्याशा न किंचिन्न कारय-

---

प्राणोंको संशयमें डाल देनेवाली अवस्थाकी मुझ निष्ठुरने उपेक्षा नहीं की? क्या उनकी इस दुर्दशाका कारण मैं नहीं हूँ? अस्तु, इन सभी अवगुणोंका पात्र होते हुए भी मैंने उन्हींकी इच्छानुसार उनके चरणोंकी आराधना की है। अतएव समस्त गुणोंसे हीन हो करके मुझे अब एकमात्र देवी कादम्बरीके गुणोंका ही भरोसा रह गया है। उनकी स्वाभाविक एवं सरस सरलता ही इतनी दूरीपर भी मुझे मदनाग्निसे बचाती है। उनकी स्नेहलता मुझे बार-बार वहाँ बुलाती है। उनकी स्थिरप्रज्ञता मुझे उन्हींकी ओर खींचती है। उनकी दक्षिणता (चतुराई) उधर ही जानेकी प्रेरणा देती है। उनकी वत्सलता (कल्याणकारिणी भावना) मुझे अंगीकार करती है। उनका हार्दिक मृदुस्वभाव चरणोंमें पड़नेपर मुझे कोसता नहीं। उनका बड़प्पन उठाकर मेरा दुलार करता है। उनकी प्रियवादिता मेरे साथ वार्तालाप करती है और उनकी अतिशय उदारता अपने हृदयमें अब भी मुझे अवकाश देती है। यह सब होते हुए भी जो मैं निर्लज्ज होकर फिर उन्हें अपना मुख दिखानेका साहस कर रहा हूँ, उसमें भी उन देवीका सुस्वभाव तथा प्रसन्नता ही हेतु है। क्षणभरका परिचय होनेपर भी जीवित रहनेकी प्रत्याशा दिलानेवाली उनकी प्रसादस्वरूपा निःस्वार्थता, उदारता तथा संगतिके कारणरूपी गुण ऐसे नहीं हैं कि ये कुछ नहीं कराते। प्रत्युत ये ही मुझे उनकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्ति। स्मारयन्ति सेव्यताम्, देव्याश्चरणपरिचर्यायै समुत्साहयन्ति, शिक्षयन्ति सेवाचातुर्यम्, उपदिशन्त्याराधनोपायान्, चाटुकारो भवेत्यसकृदाज्ञापयन्ति, एवं स्थीयतामिति स्वयमेवोपदर्शयन्ति, मुखावलोकिनामकालोपसर्पणकोपेऽनुनयन्ति, परितोषावसरेऽनुगृह्णन्ति गुणानुवादेन, लज्जापसृतं हठादाकृष्योपसर्पयन्ति, नान्यत्र क्षणमपि ददत्यवस्थातुम्। अपि चैतेऽनुग्राहकत्वादेवापरित्याज्याः, गुरुत्वादेव कृतावष्टम्भाः, विस्तीर्णत्वादेवालङ्घनीयाः, प्रभूतत्वादेवापरिहार्याः। तदेभिरहं विनाप्यागमनाज्ञया सुदूरमपक्रान्तोऽपि बलादेवाकृष्य देवीपादमूलमानीये' इति। यया वानपेक्षितगमनाज्ञया नियन्त्रणत्वाद्गतोऽहमिति विज्ञप्तम्, सैव वाणी विज्ञापयति। यथा च मे न निष्फलमागमनं भवति, जगद्वा शून्यम्, तथा देव्यात्मसंधारणायात्मनैव यत्नः कार्यः' इति संदिश्य पुनराह—'पत्रलेखे, त्वयापि यान्त्याऽ-

---

सेवा करनेका स्मरण दिलाते हैं। देवीकी चरणोपासनाके लिए उत्साहित करते हैं। सेवासम्बन्धी कौशलकी शिक्षा देते हैं। आराधनाके उपाय बताते हैं। बार-बार मुझे मधुरभाषी बननेकी आज्ञा देते हैं। 'इस प्रकार रहना चाहिए' इस बातको वे स्वतः बताते हैं। यदि असमयमें कोई मेरा मुँह देखने आ धमकता है और मैं कुपित हो जाता हूँ, तब वे ही मुझे शान्त करते हैं। जब मैं सन्तुष्ट रहता हूँ, उस अवसरपर वे मेरे गुण गानेकी कृपा करते हैं। लज्जासे भागते हुए मुझको जबर्दस्ती खींचकर सम्मुख उपस्थित करते हैं। वे मुझे क्षण भर भी अन्यत्र नहीं टिकने देते। देवीके वे प्रसाद अनुग्राहिका शक्तिसे पूर्ण होनेके कारण सर्वथा अपरित्याज्य हैं। गुरुत्वके कारण ही वे मेरे आधार हैं। विस्तृत होनेके कारण ही वे अनुल्लंघनीय हैं और प्रचुरमात्रामें होनेके कारण ही अपरिहार्य हैं। अतएव उनसे बहुत दूर भाग आये हुए मुझ सेवकको आज्ञाके बिना भी वे जबर्दस्ती देवीके चरणोंमें खींचे लिये जा रहे हैं। एक समय जिस वाणीने जानेकी आज्ञा प्राप्त होनेको अपेक्षा नहीं की थी और स्वेच्छासे 'मैं जा रहा हूँ' ऐसा कहा था, वही वाणी अब यह कह रही है कि 'जिस तरह मेरा आना निष्फल न हो और संसार सूना न हो जाय, इस प्रकारके सभी प्रयत्नों द्वारा देवीके जीवनकी रक्षा की जानी चाहिए।' इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ध्वनि न मद्विरहपीडा भावनीया, न शरीरसंस्कारेऽनादरः करणीयः, नाहारवेलातिक्रमणीया, न येनकेनचिदज्ञातेन पथा यातव्यम्, न यत्र-तत्रैवानिरूप्यावस्थातव्यम्, उषितव्यं वा। न यस्यकस्यचिदपरिज्ञाय-मानस्यान्तरं दातव्यम्। सर्वदा शरीरेऽप्रमादिन्या भाव्यम्। किं करोमि। त्वत्तोऽपि मे वल्लभतरा देवीप्राणाः, येनैवमेकाकिनी तेषां संधा-रणाय विसर्जितासि। अपि च, मम जीवितमपि तवैव हस्ते वर्तते। तन्नियतं त्वयात्मा यत्नेन परिरक्षणीयः' इत्युक्त्वा सस्नेहं परिष्वज्य केयूरकं पुनस्तदवधानदानाय संनिधाय 'महाश्वेताश्रमं यावत्पुनस्त्वयैव सहानया मन्नयनायागन्तव्यम्' इत्यादिश्य व्यसर्जयत्। निर्गतायां च केयूरकेण सह पत्रलेखायाम् 'किं शीघ्रमेते यास्यन्ति न वेति, अन्तरा वा गच्छतां विलम्ब उत्पत्स्यते न वेति, कियद्भिर्वा दिवसैः परापतिष्य-न्ति' इत्यनयैव चिन्तया शून्यहृदयः क्षणमिव स्थित्वा स्कन्धावारवार्ता-

---

तरहके अनेक सन्देश देनेके बाद चन्द्रापीडने फिर कहा—'पत्रलेखे! जाते समय मार्गमें मेरे वियोगसे होनेवाले कष्टकी बात मनपर न लाना। शारीरिक श्रृंगार आदि संस्कारोंसे विरत न होना। ठीक समयपर भोजन करना। किसी अनजानी राहपर न चल देना। बिना समझे-बूझे जहाँ जी चाहे वहाँ न टिक जाना। किसी ऐरे-गैरे मनुष्यको रहस्यकी बात न बताना। अपने शारीरिक स्वास्थ्यपर सदा चौकसी रखना। क्या करूँ पत्रलेखा! मुझे तुमसे भी अधिक प्रिय देवी कादम्बरीके प्राण हैं। अतएव उनकी रक्षा करनेके लिए ही मैं तुम्हें अकेली भेज रहा हूँ। इसके सिवाय मेरा जीवन भी तुम्हारे ही हाथमें है। इसलिए तुम पूर्ण प्रयत्नके साथ अपनी सम्हाल करना।' यह कह और स्नेहपूर्वक आलिंगन करके पत्रलेखाको आश्वस्त करनेके लिए केयूरकसे फिर कहा—'केयूरक! महाश्वेताके आश्रमतक तुम पत्रलेखाके साथ मुझे लेने आना।' ऐसा आदेश देकर उन्हें विदा कर दिया। जब केयूरकके साथ पत्रलेखा चली गयी, तब चन्द्रापीड सोचने लगा—'क्या ये लोग शीघ्र जायँगे या नहीं। मार्गमें ये लोग देरी तो न करेंगे? कितने दिनोंमें ये वहाँ पहुँच सकेंगे? इसी प्रकारकी चिन्ताओंसे शून्यहृदय होता हुआ वह क्षण भर वहीं रुका रहा। इसके बाद वापस आनेवाली सेनाका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्फुटीकरणाय वार्ताहरं विसर्ज्य बहुदिवसान्तरितदर्शनस्य वैशम्पायनस्य प्रत्युद्गमनायात्मनं मोचयितुं पितुः पादमूलमयात्। तत्र चोभयतः ससंभ्रमापसृतप्रतीहारमण्डलविस्तीर्णालोकनमार्गो दूरादेवापसव्यानुकरतलावलम्बितविमलमणिकुट्टिमोदरसंक्रान्तप्रतिमो द्विगुणायमानायतकुन्तलकलापः पितुः प्रणाममकरोत्।

अथ तारापीडस्तथा दूरत एव कृतप्रणामं चन्द्रापीडमालोक्य निर्भरस्नेहगर्भेण सलिलभरमन्थरेणेव जलधरध्वाननिभेन स्वरेण सधीरम् 'एह्येहि' इत्याहूय ससंभ्रमप्रधावितमपि संभावितशुकनासप्रणाममुपसृत्य पार्श्वे भूमावुपविशन्तमाकृष्य हठात्पादपीठे समुपवेश्यापरिसमाप्तावलोकनस्पृहेण चक्षुपा सुचिरमालोक्यास्योपारूढयौवनभराभिरामतराण्यङ्गप्रत्यङ्गानि पाणिना स्पृष्ट्वा दर्शयञ्शुकनासमवादीत्—'शुकनास, पश्येयमायुष्मतश्चन्द्रापीडस्योत्सर्पिणी महानीलमणिप्रभेव कनकशिख-

---

सही-सही हाल जाननेके लिए उसने एक हरकारा भेज दिया और स्वयं जिसको बहुत समयसे नहीं देखा था, उस वैशम्पायनकी अगवानी करनेकी आज्ञा प्राप्त करनेके निमित्त अपने पिताजीके पास जा पहुँचा। वहाँ उसे देखकर सभी प्रतीहार हट गये। तब वह विस्तृत मार्गसे आगे बढ़ा और दूरसे दाहिना घुटना टेक तथा हथेलियोंसे मणिभूमिका अवलम्बन करनेके कारण उसकी परछाहीं उसपर पड़ी, उस प्रतिबिम्बसे जैसे द्विगुणित केशकलाप युक्त होकर उसने पिताको प्रणाम किया।

तदनन्तर महाराज तारापीड चन्द्रापीडको दूरसे ही प्रणाम करते देखकर प्रगाढ़ स्नेहसे पूर्ण हो जलके भारसे लदे मेघकी ध्वनि सदृश गम्भीर स्वरमें 'आओ-आओ' कहते हुए बुलाया। उसके इस प्रकार बुलानेपर शीघ्रतापूर्वक जाते हुए भी चन्द्रापीडने महामात्य शुकनासको प्रणाम किया और जमीनपर ही बैठने लगा। किन्तु उसे हठात् खींचकर महाराजने एक कुर्सीपर बिठाला और बारम्बार देखनेपर भी तृप्त न होनेवले नेत्रोंसे बड़ी देरतक निहारकर पूर्ण यौवनके कारण अत्यन्त सुन्दर दीखनेवाले उसके प्रत्येक अंगपर हाथ फेरते हुए राजा तारापीडने मंत्री शुकनासको दिखाकर कहा—'शुकनास! तनिक देखो तो सही, चिरंजीवी युवराज चन्द्रापीडके मुखपर दाढ़ी-मूछके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिणः, गण्डमण्डलोद्भासिनी मदलेखेव गन्धद्विपस्य, उपहितकान्तिपतिपरभागा लक्ष्मच्छायेव चन्द्रमसः, विकासशोभापेक्षिणी मधुकरावलीव कमलाकरस्य, रूपालेख्योन्मीलनकालाञ्जनवर्तिका, तारुण्यभरजलधरोत्तानश्यामिका उज्ज्वलत्कन्दर्पदीपकज्जलशिखा, स्फुरत्प्रतापानलधूमराजी, मकरध्वजोपवनतमालवल्ली, मनोभवदोषारम्भबालतिमिरोद्गतिः, उद्वाहमङ्गलभ्रूसंज्ञा श्मश्रुराजिलेखा समन्तात्समुद्भिन्ना। विवाहमङ्गलयोग्यां दशामारूढोऽयम्। तद्देव्या विलासवत्या सह समेत्याभिजनरूपा निरूप्यतां काचिज्जगति राजकन्यका। दृष्टं हि दुर्लभदर्शनं वत्सस्य वदनम्। संप्रति वधूमुखकमलदर्शनेनानन्दयाम आत्मानम्' इत्युक्तवति तारापीडे शुकनासः प्रत्युवाच--'साधु चिन्तितं देवेन। अनेन तु सहृदयेन हृदये समारोपिता एव सर्वविद्याः, संभाविता एव सर्वाः कलाः,

---

रोयें निकलने लग गये हैं। ये रोयें सुवर्णगिरिसे निकलनेवाली महानीलमणिकी दीप्तिके सदृश, मदवाही गजराजके गंडस्थलपर शोभित होनेवाली मदलेखाकी भाँति, चन्द्रमामें दीखनेवाले कलंककी छायाकी नाईं, कमलवनमें विकासके सौन्दर्यकी प्रतीक्षा करनेवाली भ्रमरपंक्तिके समान, सुन्दरताका चित्रण करनेवाली काले रंगकी कूँचीके समान, तरुणाईके भारसे लदे मेघकी श्यामताके सदृश, प्रज्वलित कामदेवरूपी दीपककी काजलभरी लौके समान, देदीप्यमान प्रतापरूपी अग्निकी धूमराशिके समान, कामरूपी उद्यानकी तमाललताके समान, कामरूपी दोषागम (रात्रि अथवा अवगुणका आगमन) तथा बालतिमिरोद्गति अर्थात् अपरिपक्व अन्धकारका उदय जैसे अब विवाहरूपी मंगलमय कार्य सम्पादन करनेके लिए भृकुटीका संकेत कर रहा है। अब यह विवाहके योग्य अवस्थामें पहुँच गया है। अतएव महारानी विलासवतीसे परामर्श करके संसार भरमें अपने कुलके अनुरूप किसी राजकन्याकी तजवीज करो। जिसका दर्शन दुर्लभ होता है, मैंने उस पुत्रका मुख देख लिया है। अब मेरी यह इच्छा है कि पुत्रवधूका भी मुख देखकर आनन्द लाभ करूँ।' राजा तारापीडके ऐसा कहनेपर शुकनासने उत्तर दिया—'महाराजका विचार बहुत अच्छा है। क्योंकि सहृदय युवराजने अपने हृदयमें सभी विद्याओंको स्थापित कर लिया है। सब कलाओंकी शिक्षा प्राप्त कर ली है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वीकृता एव सर्वप्रजाः, गृहीता एव सर्वदिग्वधूनां कराः, स्थापितैव निश्चला कुटुम्बिनीपदे राजलक्ष्मीः, ऊढैव चतुरुदधिमेखलाकलापभूषणा भूः। किमतः परमवशिष्यते, येनानेन न परिणीयते' इत्यभिहितवति शुकनासे लज्जावनम्रवदनश्चन्द्रापीडश्चकार चेतसि—'अहो संवादः, येन मे कादम्बरीसमागमोपायचिन्तासमकालमेवेदृशी तातस्य बुद्धिरुत्पन्ना। तद्यदुच्यते—'अन्धकारे प्रविष्टस्यालोकः, वनगहनप्रविष्टस्य देशिकदर्शनम्, महार्णवपतितस्य यानपात्राभ्यागमनम्, म्रियमाणस्योपर्यमृतवृष्टिरिति, तदेतदापतितं मयि। सर्वथा वैशम्पायनदर्शनमात्रकान्तरिता वर्तते मे कादम्बरीप्राप्तिः' इत्येवं चिन्तयत्येव चन्द्रापीडे क्षितिपतिरुत्तस्थौ। उत्थाय च तमेव विनयावनतपूर्वकायं समवलम्ब्यांसदेशे सकलमेदिनीभारोद्वहनगुरुणा दोर्दण्डेन शनैः शनैः संचरञ्शुकनासेनानुगम्यमानो विलासवतीभवनमगमत्। गत्वा च ससंभ्रमकृताभ्युत्था-

---

राज्यकी सारी प्रजा इन्हें स्वीकार कर चुकी है। ये समस्त दिग्वधुओंका पाणिग्रहण कर चुके हैं। राज्यलक्ष्मीको स्थिर करके इन्होंने स्थायी रूपसे अपनी कुटुम्बिनी बना ली है। चारों समुद्ररूपी मेखला (करधनी) से विभूषित पृथिवीका वरण कर चुके हैं, तब बाकी ही क्या रह गया है कि जिससे इनका विवाह न किया जा सके।' मंत्री शुकनासकी बातोंसे लज्जित हो और माथा नीचा करके चन्द्रापीड मन ही मन सोचने लगा—'अहो! कैसा संयोग है। जब मैं कादम्बरीसे मिलनेका उपाय सोच रहा था, उसी समय पिताजीके मनमें यह बात आयी। यह तो वैसा ही हुआ, जैसा कि कहा जाता है—अँधेरेमें भटकनेवालेको प्रकाश, घने जंगलमें पथप्रदर्शक, समुद्रमें गिरे हुए यात्रीको जहाज और मरणासन्न रोगीको अमृतकी वर्षा प्राप्त होनेपर जो सुख मिल सकता है, वही सुख मुझे अनायास प्राप्त हो गया। अब केवल वैशम्पायनका दर्शन होना ही कादम्बरीकी प्राप्तिमें न्यूनता है।' वह इस बातको सोच ही रहा था कि इतनेमें राजा सिंहासनसे उठ खड़ा हुआ। उठकर विनयसे अवनत शरीरके पूर्वभागवाले चन्द्रापीडके कन्धेपर समस्त पृथिवीका भार वहन करनेवाला अपना भारी भुजदंड रखकर मन्दगतिसे टहलता-टहलता विलासवतीके महलकी ओर चला। मंत्री शुकनास उसके पीछे-पीछे चल रहा था। वहाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नामिन्दूदयावलोकनविलोलामिव समुद्रवेलां विलासवतीमूर्ध्वस्थित एवावादीत्—'देवि, पश्यैषा त्वमपि च वधूमुखावलोकनसुखस्य कृते न ताम्यसीत्युपालभमानेव देवीं वत्सस्य यौवनारम्भसूत्रपातरेखा, आवयोस्तारुण्यदुर्विलसितनिवर्तनाज्ञा, विजृम्भमाणा श्मश्रुरागशोभा विवाहमङ्गलसंपादनायादिशति। त्वमपरं किमादिशसीति प्रष्टव्या। तदादिशतु देवी। कथ्यमानेऽपि किमपरम्। अद्याप्यपहरसि वदनमन्यतो व्रीडया। पृष्टा वा कर्तव्यं नाज्ञापयसि। वरमातासि संवृत्ता। जानामि चन्द्रापीडस्योपर्यप्रीतिरेषा, यदेवमेतत्कार्येष्वनादरोऽवधीरणा च' इत्येवंविधैर्नर्मप्रायैरालापैः सुखायमानचेताश्चिरमिव स्थित्वा शरीरस्थितिसंपादनाय निरगमत्। चन्द्रापीडोऽपि शुनकासमुखेनैव वैशम्पायनप्रत्युद्गमनायात्मानं मोचयित्वा जननीभवन एव निर्वर्तितशरीरस्थितिर्वैश-

---

पहुँचनेपर हड़बड़ीमें जल्दीसे उठकर स्वागत करनेके कारण चन्द्रोदयके समय चंचल समुद्रतटकी भाँति विद्यमान रानी विलासवतीसे खड़े ही खड़े राजा तारापीडने कहा—'देवि! इधर देखो, तुम भी पुत्रवधूका मुख देखनेके सुखकी अभिलाषा प्रकट करती हुई कभी मुझे उलाहना नहीं देतीं। अतएव अब पुत्र चन्द्रापीडके मुखपर उभड़ती हुई यौवनारम्भके सूत्रपातकी रेखा इस प्रकार दीख रही है, जैसे तरुणताकी उच्छृंखलताको रोकनेके लिए हम दोनोंकी आज्ञा मूर्तरूपमें विद्यमान हो। इस प्रकार निकलती हुई इसकी मूँछका सौन्दर्य जैसे हमें इसके विवाहकार्यकी तैयारीमें लग जानेको कह रहा है। अब हमें यह पूछना है कि इस विषयमें तुम्हारा क्या आदेश है। जो कहना हो सो कहो। क्योंकि तुम वरकी माता हो। ऐं! तुम तो अब भी लज्जासे अपना मुँह फेर रही हो। पूछनेपर भी हमें क्या करना चाहिए सो नहीं बतातीं। मैं जानता हूँ कि तुम चन्द्रापीडसे कुछ दुराव रखती हो। तभी तो इस महान् उत्सवसम्बन्धी कार्यमें भी अनादरका भाव प्रकट कर रही हो और इसकी कुछ चिन्ता नहीं करतीं।' ऐसी-ऐसी बहुतेरी हँसीकी बातें करके आनन्द लेता हुआ वह बहुत देर तक वहाँ रहा। फिर भोजनके निमित्त वहाँसे बाहर निकला। चंद्रापीडने भी शुकनासके मुखसे ही वैशम्पायनको लिवा लानेकी अनुमति लेकर माताके महलमें ही स्नान-भोजनादि करके वैशम्पायनसे मिलनेके मंसूबे बाँधते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्पायनप्रत्युद्गमनसंविधानविनोदेनैव तं दिवसमनयत। अवतीर्णायां च तस्यां यामिन्यां सुहृद्दर्शनौत्सुक्येन शयनतोऽपि जाग्रदेव समधिकमिव यामद्वयं स्थित्वा परिवर्तयद्भिरिव स्वकान्त्या नीलिमानमम्बरतलस्य, अपहरद्भिरिव हरिततां तरुगहनानाम्, अधस्तादपि छिद्रयित्वेव प्रविशद्भिर्निर्वासयद्भिरिव तरुतलच्छायाम्, दरीकुहरकुञ्जादरेष्वपि निलीनं तिमिरमत्यान्त्येव प्रविश्योत्पाटयद्भिः, विवरप्रवेशव्याजेन च रसातलमिव प्रवेष्टुमारब्धैः, अन्यथा पुनर्धवलयद्भिरिव धवलतां सौधानाम्, उद्धूलयद्भिरिव कर्पूररेणुना दिङ्मुखानि, लिम्पद्भिरिव सान्द्रचन्दनद्रवेण यामिनीम्, उन्नामयद्भिरिव मेदिनीम्, उपनयद्भिरिव द्याम्, संक्षिपद्भिरिव तारकाग्रहनक्षत्रमण्डलानि, विस्तारयद्भिरिव सरित्पुलिनानि, पृथक्पृथक्कमलवनान्युत्पीड्येव धारयद्भिः, उद्दलितदलविकासानेकीकुर्वद्भिरिव कुमुदाकरान्, अपि च पर्यस्तैरिव शिखरिशेखरेषु, आवर्जितैरिव प्रासादमूर्धसु, तरद्भिरिव जलतरंगेषु, पिण्डीभूय

एक दिन बिताया। रातके समय भी वह मित्रदर्शनकी उत्सुकतावश बारबार उन्हीं बातोंकी उधेड़-बुनमें पड़ा हुआ दो पहरसे भी ज्यादा बीती रात्रि तक नहीं सो सका। पिछले पहरकी रात्रिमें जब चन्द्रमाकी किरणें अपनी दीप्तिसे गगनमण्डलकी नीलिमाको बदलने लगीं, सघन वृक्षोंकी हरियालीका अपहरण करने लगीं, जैसे धरतीके नीचे भी छेद करके घुसने लगीं, वृक्षोंकी छायाको भी निकाल बाहर करने लगीं, कन्दराओंके कोटरों तथा कुञ्जोंमें भी घुसकर छिपे हुए अन्धकारको निर्दयतापूर्वक निर्मूल करने लगीं, छिद्रोंमें घुसनेके बहाने जैसे वे रसातलमें घुसना आरम्भ करने लगीं। वे किरणें चूनाकारीसे पहले ही उज्ज्वल प्रासादोंको जैसे फिरसे रँगकर उज्ज्वल करने लगीं, सब दिशाओंके मुखपर जैसे कपूरका रज मलने लगीं, गाढ़े चन्दनके रससे जैसे रात्रिको लीपने लगीं, पृथिवीको जैसे उन्नत करने लगीं, जैसे गगनमण्डलको नीचे उतारने लगीं, तारिकाओं-ग्रहों तथा नक्षत्रमण्डलको जैसे संक्षिप्त करने लगीं, नदियोंके तटोंको विस्तृत करने लगीं, कमलवनोंको जैसे दाब-दाबकर धारण करने लगीं, प्रफुल्लित पखुड़ीके कुमुदपुष्पोंको जैसे एकत्रित करने लगीं और पर्वतशिखरोंपर जैसे बिछ गयीं, प्रासादोंके ऊपर जैसे बिखर गयीं, जलकी तरङ्गोंपर जैसे तैरने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वहद्भिरिव, रथ्यामुखेषु प्रसारितैरिव सैकतस्थलेषु, हंससार्थैः सहैकीभूतैरिव, संविभक्तैरिव चन्द्राशयप्रसुप्तकामिनीकपोललावण्येन, क्षालितैरिव चन्द्रकान्तच्युतजलधारासहस्रैः। तथा च गर्भगृहेष्वप्यविहतप्रवेशैः, दन्तवलभीभ्योऽपि लब्धपरभागैः, पद्मिनीपत्रखण्डेष्वप्यखण्डितधवलिमभिः, आरामेष्वपि दिवसबुद्धिमुत्पादयद्भिः, परस्परोद्भिन्नक्रमेणोद्गिरद्भिरिव, आवर्जयद्भिरिव, विक्षिपद्भिरिव, विस्तारयद्भिरिव, वर्षद्भिरिव सर्वतो ज्योत्स्नाप्रवाहम्, कादम्बरीसमागमत्वरादानाय स्मरसर्वास्त्रमोक्षमिव कुर्वद्भिश्चन्द्रपादैर्द्विगुणीकृतमन्मथोत्साहो गमनसंज्ञाशङ्खनादायादिदेश।

अथ गगनतललब्धविस्तारः, विजृम्भमाण इव दिक्कुञ्जेषु, आवर्तमान इवाभ्रंलिहनगरीप्राकारमण्डलाभ्यन्तरे, समारोहन्निवोत्तुङ्गगोपुराट्टालकशिखराणि, चलन्निव हर्म्यान्तरालेषु, विकसन्निव चतुष्कचत्वरेषु,

---

लगीं, सड़कोंके मुखपर जैसे सिमटकर बहने लगीं, हंसोंके झुण्डोंमें जैसे एकाकार हो गयीं, रेतीली जमीनपर जैसे फैल गयीं, छतोंपर चाँदनी रातमें सोती हुई सुन्दरियोंके कपोलोंकी सुघराईसे जैसे होड़ करने लगीं, चन्द्रकान्तमणिसे बहती सहस्रों धाराओंमें जैसे घुल गयीं और घरोंके भीतर भी जैसे वे घुसने लगीं, हाथीदाँतके बने झरोखोंमें भी अपनी उत्कृष्ट सुन्दरता प्रदर्शित करने लगीं, कमलकी संपुटित पंखुड़ियोंपर भी अपनी पूरी छटा फैलाने लगीं, उपवनोंमें भी दिन जैसा उजाला करने लगीं, परस्पर मिलकर वे किरणें जैसे चारों ओर प्रकाशके प्रवाहका वमन करने लगीं, प्रकाशको ऊपरसे नीचे फेंकने लगीं, चारों ओर बिछाने लगीं, प्रसार करने लगीं, बरसाने लगीं और कादम्बरीसे मिलनेके लिए कामदेवके सभी बाणोंको एक साथ छोड़ने लगीं। इस प्रकार उन चन्द्रकिरणोंने जब कामजनित उत्साहको द्विगुणित कर दिया, तब चन्द्रापीडने यात्रासूचक शंख बजानेका आदेश दिया।

युवराजके आदेशानुसार बजनेवाले शंखकी बड़ी तेज ध्वनि गूँज उठी। वह सारे आकाशमें फैल गयी। जैसे समस्त दिशारूपी कुञ्जोंमें भर गयी। आकाशको चूमनेवाले नगरीके प्राकारमण्डलमें जैसे चारों ओर घूमने लगी। बड़े ऊँचे-ऊँचे गोपुरोंकी चोटियोंपर जैसे वह शंखध्वनि चढ़ने लगी। बड़े-बड़े

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रसरन्निव राजमार्गेषु, परिभ्रमन्निव भवनसंकटेषु, प्रविशन्निवोद्यानन-गवनगह्वरेषु, संमूर्च्छन्निव प्रासादकुक्षिषु, तत्क्षणप्रतिबोधितानां गृहस-रोजिनीसारसानामनुवर्त्यमान इव तारतरदीर्घेण रणितेन, विच्छिद्य-मान इव मुहुर्मुहुः स्वभावगद्गदेन भवनकलहंसानां कलरवेण, निर्धार्यमाण इव च श्रोत्रप्रवेशिना गमनवेलाप्रणामसंभ्रान्तस्य वाराङ्गनाजनस्य चल-वलयनूपुररसनाकलकलेन तारदीर्घतरः शङ्खध्वनिरुदतिष्ठत्। अनन्तरं चोत्थाप्यमानैश्चोत्थितैश्चाकृष्यमाणैश्चाकृष्टैश्चारोप्यमाणपर्याणैश्च पर्याणि-तैश्च नीयमानैश्चानीयमानैश्च विलस्यमानैश्चाच्छिद्यमानैश्चागच्छद्भिश्चा-गतैश्च पूज्यमानैश्च पूजितैश्च पंक्तिस्थितैश्च वाह्यमानैश्च तिष्ठद्भिश्च प्रति-पालयद्भिश्च अपर्याप्तराजद्वाराङ्गणैरप्रभूतचत्वरैर्निस्तुषितसकलरथ्यान्त-

---

महलोंके बीचमें जैसे चलने लगी। चौराहोंके चबूतरोंपर जैसे विकसित होने लगी। बड़ी-बड़ी सड़कोंपर वह ध्वनि जैसे फैलने लगी। सँकरे मकानोंमें जैसे भटकने लगी। उपवनोंके बने बनावटी पर्वतोंकी कन्दराओंमें घुसने लगी। अट्टालिकाओंके कोने-कोनेमें फैलने लगी। तत्काल जागे हुए घरेलू पोखरोंके सारसोंका बहुत ही तीखा और ऊँचा शब्द उस शंखध्वनिका पीछा करने लगा। घरोंमें पले हुए कलहंसोंका स्वभावतः गद्गद एवं मधुर निनाद उस ध्वनिके प्रवाहमें बारबार बाधा डालने लगा। यात्राके समय प्रणाम करनेकी हड़बड़ीमें वेश्याओंके हिलनेवाले कङ्कणों, पायलों एवं करधनियोंका कलकल निनाद जैसे निर्धारित किया जाने लगा। तदनन्तर सहस्रों घोड़े वहाँ आ पहुँचे। उन घोड़ोंमें बहुतेरे खड़े थे और बहुतेरे खड़े किये जा रहे थे। कितने खींचे जा रहे थे और कितने खींचे जा चुके थे। बहुतोंपर जीन कसी जा रही थी और बहुतोंपर कस दी गयी थी। कितने लाये जा रहे थे और कितने लाये जा चुके थे। बहुतेरे लोगोंको दिये जा रहे थे और बहुतेरे दिये गये थे। बहुतसे आ गये थे और बहुतसे आ रहे थे। बहुतेरे पूजित हो रहे थे और बहुतेरे पूजित हो चुके थे। कितने पंक्तिमें खड़े हो चुके थे और कितने खड़े किये जा रहे थे। कितनोंपर सवारी की जा रही थी। कितने खड़े थे। कितने प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके लिए राजद्वारका विशाल प्रांगण पर्याप्त नहीं था। चौराहे छोटे पड़ रहे थे। सारी सड़क भर जानेसे वे भीतर और बाहर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रतयान्तर्बहिश्च संकटायमाननगरीविस्तारैस्तुरङ्गमसहस्रैस्तत्क्षणं कुन्तवनमयमिवान्तरिक्षम्, खुररवमयीव मेदिनी, हेषारवमयानीव श्रोत्रविवराणि, फेनपिण्डस्तबकमयमिव युवराजभवनद्वाराङ्गणम्, खलीनरवमध्य इव दशदिशः, अश्वालंकाररत्नप्रभामया इवाभवञ्शशाङ्करश्मयः। अचिराच्च गृहीतसमायोगोऽङ्गणात्तमिन्द्रायुधमारुह्य पुरस्ताच्चलितेनालोकहेतोर्द्वितीयचन्द्रमण्डलेनेव हंसधाम्ना मङ्गलातपत्रेणावेद्यमाननिर्गमो यथादर्शनमितस्ततः तुरङ्गमगतैरेव प्रणम्यमानो राजपुत्रसहस्रैः प्रसुप्तपुरजनतयाऽसंबाधेनापि राजवर्त्मना बहुत्वात्तुरङ्गमबलस्य कृच्छ्रलब्धसंचारः कथंकथमपि निर्जगाम नगर्याः। निर्गत्य चादूरत एव निर्भरत्वाज्ज्योत्स्नापूरस्याच्छतया च दुर्विभाव्यपानीयामुपरि कलकूजितानुमीयमानोत्त्रस्तहंससार्थोत्पतनव्यतिकराङ्गुलिना नीयमानामिव सर्वतो जड-

---

फैलकर नगरीके विस्तारको ही संकुचित किये दे रहे थे। उन हजारों घोड़ोंके जमावड़ेसे आकाश जैसे भालोंका जङ्गल बन गया। पृथिवी उन घोड़ोंके खुरोंके शब्दसे जैसे खुरशब्दमयी हो गयी। उनकी हिनहिनाटसे सब लोगोंके कान भर गये। युवराजके भवनका द्वारवर्ती आँगन फेनपिंडके गुच्छोंसे भर गया। दसों दिशायें जैसे घोड़ोंकी लगामकी खनखनाहटसे भर गयीं और चंद्रमाकी किरणें जैसे घोड़ोंके आभूषणजटित रत्नोंकी दीप्तिसे रत्नकान्तिमयी हो गयीं। थोड़ी ही देर बाद भली भाँति सजकर आये इन्द्रायुधपर चन्द्रापीड सवार हो गया। उनके ऊपर तना हुआ हंस सदृश श्वेत मंगलछत्र ऐसा लगता था कि जैसे प्रकाश देनेके लिए चन्द्रमण्डल ही उतर आया हो। उस यात्रासूचक छत्रको देखते ही इधर-उधरसे हजारों घोड़ोंपर सवार राजपुत्र जुट गये और प्रणाम करने लगे। यद्यपि उस समय सभी नागरिक सोये हुए थे, इस कारण सड़कपर उनकी भीड़ नहीं थी। किन्तु घोड़ोंकी ही अपार सेनाके बीचसे किसी-किसी तरह राह निकालकर चन्द्रापीड नगरीसे बाहर निकला। वहाँसे चलकर वह पास ही विद्यमान शिप्रा नदीके तटपर जा पहुँचा। चाँदनीके प्रचुर प्रकाश तथा विशेष स्वच्छताके कारण उसके पानीकी थाह पाना कठिन था। भयभीत हंसोंके झुण्ड उसपर उड़ रहे थे। उनकी मधुर ध्वनिसे ही उनके अस्तित्वका अनुमान होता था। हंसोंका वह झुण्ड उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तरतरङ्गानिलस्पर्शमात्रोपलक्ष्यसलिलसंनिधिमुत्तीर्य शिप्रामतिप्रहतत्वाद्-सङ्कटत्वाच्च वर्धयतेव गमनोत्साहमतिविस्तीर्णेनापि पुरोविस्तारितेनेव चन्द्रपादैर्दशपुरगामिना मार्गेण प्रावर्तत गन्तुम् ।

अथोह्यमानैरिव रयवाहिना सकलदिङ्मुखप्रसृतेन ज्योत्स्नाजलस्रोतसा वैशम्पायनालोकनत्वरितस्य चन्द्रापीडमनस इव तुल्यं वहता जङ्घानिलेनेन्द्रायुधस्याकृष्यमाणैरिव वाजिभिस्तावत्येवापररात्रवेलया योजनत्रितयमेवालङ्घ्यत । अथाध्वश्रमापहरणायेव प्रवृत्ते वातुमाह्लादकारिणि निर्भरज्योत्स्नाजलावगाहादार्द्रार्द्रस्पर्शेऽवश्यायशीकरावर्षिणि रजोलुलितविविधवनपल्लवानिलव जिते विनिद्रकुमुदिनीपरिमिलनलग्नपरिमले परिमलाहितजडिम्नि रजनीविरामपिशुने मातरिश्वनि, क्रमेण चापरदिग्वधूवदनचुम्बिनि तदाकल्पकाले च दुर्विषहशर्वरीविरहचिन्तयेवासन्नदि-

---

समय शिप्राकी उँगलियों जैसा प्रतीत होता था । चारों ओर अतिशय शीतल वायु बहनेसे ही जाना जाता था कि जल पास ही है । कुछ क्षणोंमें शिप्राको पार करके वह दशपुर जानेवाले मार्गपर चला । क्योंकि वह मार्ग भली भाँति कंकड़ कूटकर बना था और कोई बाधा नहीं रहती थी, इससे उसपर चलनेवालोंका उत्साह बढ़ता था । यद्यपि वह स्वतः बहुत चौड़ा मार्ग था, तिसपर चाँदनी रात होनेके कारण जैसे और भी चौड़ा दीख रहा था ।

तदनन्तर सभी दिशाओंमें फैले तथा बड़े वेगसे बहनेवाले उस चाँदनी-स्वरूप जलप्रवाहके साथ बहते और वैशम्पायनको देखनेके लिए उतावले चंद्रापीडके मनकी तरह वेगसे दौड़नेवाले इन्द्रायुधकी जाँघोंसे उत्पन्न वायुसे खिंचे हुए अन्यान्य घोड़ोंके साथ उस पिछली रातमें ही उसने तीन योजनका रास्ता तै कर लिया । अब जैसे मार्गमें चलनेकी थकावट दूर करनेके लिए आनन्ददायिनी वायु चलने लगी। वह वायु चन्द्रमाकी चाँदनीरूपी जलमें भरपूर स्नान कर लेनेसे और स्पर्शमें अत्यन्त शीतल होनेके कारण ओसकी बूँदोंको भली भाँति बरसा रही थी। विकसित कुमुदिनीकी सुगन्धि तथा अनेकानेक वन-पुष्पों-पल्लवोंकी मिली-जुली रज भी वह उड़ाये लाती थी। परिमलसे जड़ बनकर वह वायु रात्रि बीत जानेकी सूचना दे रही थी। जैसे रात्रिके दुःसह वियोगकी चिन्तासे, तुरन्त होनेवाले सूर्योदयके दुःखसे, सायंकालसे लेकर अबतक मुख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नकरोदयविषादेनेवाप्रदोषादुत्तानितमुखैः कुमुदराशिभिः पीयमानस्य धाम्नः परिक्षयेणेव सर्वाम्बरसरःपयःपायिपयोदविभ्रमाश्वरजःसंघातोपघातेनेव पाण्डुतां गतवति चन्द्रबिम्बे, प्रत्यग्रगगनलक्ष्मीवियोगसंतापोज्झिते धवलोत्तरीयांशुक इव शशाङ्कलग्ने गलति चन्द्रिकालोके, अपरजलधिपातिना ज्योत्स्नाजलप्रवाहेणेव सहसा फेनबुद्बुदावलीष्विव नश्यंतीषु तारकापंक्तिषु गलदवश्यायक्षालनादिव शनैः शनैर्दलितमुक्तागौरज्योत्स्नानुभावमुत्सृजन्तीष्वाशासु, पुनर्विभाव्यमानसहजश्यामकान्तिषु सलिलादिवोन्मज्जत्सु तरुलताविटपेषु, समुल्लसति पूर्वदिग्वधूकर्णपूररक्ताशोकपल्लवेऽम्बरसरस्तामरसे दिवसमुखकरिकुम्भसिन्दूररेणौ तरणिरथरक्तध्वजांशुके संध्यारागे, सन्ध्यातपचरितान्तेष्वालग्नदावानलेष्विव वयःसंघातैर्जनिताशिवमुत्सृज्यमानेषु निवासपादपेषु, सशेषनिद्रालसै-

---

ऊपर करके कुमुदों द्वारा पिये गये अपने तेजके क्षयसे और समस्त आकाशरूपी सरोवरका जल पी लेनेके लिए आये हुए बादलों सदृश घोड़ों द्वारा उड़ाये गये रजसमूहसे क्रमशः पश्चिमदिशारूपिणी वधूटीका मुँह चूमता हुआ चन्द्रमण्डल जब पीला हो चला और धीरे-धीरे प्रभात होने लगा। गगनश्रीके नूतन विरहजनित सन्तापसे त्यागे गये उज्ज्वल चादरकी तरह जब चन्द्रमासे संलग्न चाँदनीका उजाला नष्ट होने लगा। जब ज्योत्स्नास्वरूप जलप्रवाहके पश्चिमी समुद्रमें जा गिरनेके कारण फेनके बुलबुलोंकी पंक्तिसदृश तारिकाओंकी राशि नष्ट होने लगी। निरन्तर पड़नेवाली ओसके जलसे धुल जानेके कारण सब दिशायें क्रमशः जब पिसे हुए मोतियोंकी धूलकी भाँति श्वेत चाँदनीके लेपका परित्याग करने लगीं। जब अपनी स्वाभाविक श्यामता प्रदर्शित करती हुई वृक्ष, लता तथा शाखायें जैसे जलसे बाहर निकलने लगीं। पूर्वदिशास्वरूपिणी सुन्दरीके कानमें विद्यमान लाल अशोकपत्रके सदृश, आकाशसरोवरके लाल कमलकी भाँति, दिवसरूपी गजराजके मस्तकपर शोभित सिन्दूररेणुके सदृश एवं सूर्यनारायणके रथकी ध्वजाके लाल वस्त्र सदृश जब प्रभातकालीन सन्ध्याकी लालिमा दीखने लगी। जब प्रातःसन्ध्याका प्रकाश सब ओर फैल जानेके कारण दानावल लग जानेके समान दीखनेवाले अपने-अपने नीडवृक्षोंसे पक्षियोंका समुदाय उड़ने लगा। नींद शेष रहनेके कारण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्चिरप्रसारणाविशदजङ्घांघ्रिभिर्हठाकृष्टदीर्घपदसञ्चारिभिर्मृगकदम्बकैरु-न्मुच्यमानासूषरशय्यासु, इच्छावखण्डितोत्खातपल्वलोपान्तरूढमुस्ताग्र-ग्रन्थिष्वरण्यगह्वराभिमुखेषु वराहयूथेषु, निशावसानप्रचारनिर्गतैर्गोधने-रितस्ततो धवलायमानासु ग्रामसीमान्तारण्यस्थलीषु, आलोक्यमानजन-पदविनिर्गमेषु प्रसूयमानेष्विव ग्रामेषु, यथार्ककिरणावलोकोद्गमं चोन्ना-म्यमान इव पूर्वदिग्भागे समुत्सार्यमाणास्विवाशासु, अपसर्पत्स्विवा-रण्येषु विस्तार्यमाणास्विव ग्रामसीमासु, उत्तानीभवत्स्विव सलिलाशयेषु, अवच्छिद्यमानेष्विव शिखरिषु, उद्ध्रियमाणायामिव मेदिन्यामदृश्यता-मिव यान्तीषु कुमुदिनीषु, तिरोधानकारिणीं नीलतिरस्कारिणीमिव करै-रुत्सार्य तिमिरमालाम्, विरहविधुरां कमलिनीमिवालोकयितुमुदयगि-रिशिखरमारूढे भगवति सप्तलोकैकचक्षुषि सप्तवाहे, विहायस्तलमुद्भास्य

अलसाये हुए मृगगण बड़ी देरतक फैला रखनेसे अकड़ी हुई जाँघों एवं टाँगोंको तानकर सीधी करते तथा लम्बे-लम्बे पैर बढ़ाते हुए जब तृणविहीन ऊसर धरतीपर दौड़ने लगे। छोटे-छोटे तालावोंके तटपर उगे मोथोंकी गाँठें उखाड़ते और काटते हुए वाराहगण जब जंगलकी कन्दराओंकी तरफ चल पड़े। रात्रि बीत जानेपर सवेरे जब गौओंका जत्था चरनेके लिए चल पड़ा और उससे ग्रामसीमाके अन्तकी वनस्थली उज्ज्वल दीखने लगी। जब कुछ लोग गाँवोंसे निकलकर इधर-उधर चलने लगे तो उन्हें देखकर ऐसा लगा कि मानो उन ग्रामोंका नवीन जन्म हुआ है। जैसे-जैसे सूर्यकी किरणें फैलने लगीं, तैसे-तैसे पूर्वदिशाका भाग जैसे ऊँचा होता गया और अन्य दिशायें जैसे आगे बढ़ने लगीं। जंगल जैसे आगेकी ओर सरकने लगे और गाँवोंकी सीमायें विस्तृत होने लगीं। सरोवर विशालरूपमें दीखने लगे। पर्वत अब अलग-अलग दिखायी पड़ने लगे। पृथिवी जैसे ऊँची होने लगी और कुमुदि-नियाँ अलक्षित होने लगीं। अदृश्य करनेवाले नीले परदेके समान अन्धकार-राशिको जब अपनी किरणरूपी हाथोंसे हटाकर जैसे वियोगसे व्याकुल कम-लिनीको देखनेके लिए सातों लोकोंके एकमात्र नेत्र एवं सात घोड़ोंके रथपर सवारी करनेवाले सूर्यभगवान् उदयाचलकी चोटीपर चढ़ गये। जब आकाश-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिगन्तराण्युद्भासयन्तीषु सकलजगद्दीपिकासु दिवसकरदीधितिषु, दृष्टिप्रसरक्षमाया वेलायाः सहसैवाग्रतोऽर्धगव्यूतिमात्र इव रात्रिप्रयाणकायातम्, अन्तःक्षोभभीतेन रसातलेनेवोद्गीर्यमाणम्, असोढसंघातभरया मेदिन्येव विक्षिप्यमाणम्, अपर्याप्तप्रमाणाभिर्दिग्भिरिव संह्रियमाणम्, अपरिमाणरजोनिरोधाशङ्कितेन गीर्वाणवर्त्मनेवावकीर्यमाणम्, अर्कावलोकेनेव सह विस्तीर्यमाणम्, आयासितायततरदृष्टिभिरप्यदृष्टपर्यन्तम्, अनुजीविभूभृच्छतसहस्रकल्पितावष्टम्भम्, सञ्चारिणं द्वितीयमिव मेदिनीसन्निवेशम्, अजलवाहिनीप्रवेशगम्भीरं प्राणिमयमपरपारमष्टममिव महासमुद्रम्, उद्रिक्तरजःसन्ततिदूरतया चापरिस्फुटविभाव्यसर्ववृत्तांतमपीस्ततो वलितधवलकदलिकोद्भासितानेककरिघटासहस्रसङ्कु-

---

मण्डलको प्रकाशित करके समस्त विश्वको उजाला देनेवाली सूर्यकी किरणें सभी दिशाओंको देदीप्यमान करने लगीं। जब जगत्‌की सभी वस्तुयें भली भाँति दीखने लगीं। तब युवराज चन्द्रापीडने पड़ावपर पड़ी अपनी विशाल वाहिनी देखी। वहाँसे वह लगभग आधे कोसकी दूरीपर थी और रातोरात चलकर आयी थी। भीतरसे क्षुब्ध होनेके कारण भयभीत रसातल जैसे उस सेनाका वमन कर रहा था। एक जगह उसका बोझ असह्य समझकर धरती जैसे उसे इधर-उधर बिखेर रही थी। जगहकी कमीके कारण दिशायें जैसे उसे समेट रही थीं। अत्यधिक धूलसे ढँक जानेके भयवश आकाश जैसे उसको दूर फेंक रहा था। वह सेना जैसे-जैसे सूर्यको ऊपर चढ़ता देखती थी, तैसे-तैसे विस्तृत होती जा रही थी। आँखें खूब फैलाकर बड़ी मेहनतसे देखनेपर भी कहीं उसका अन्त नहीं दीखता था। सैकड़ों और हजारों अधीन राजाओं (अथवा पर्वतों) के सहारे चलती-फिरती जैसे वह दूसरी पृथिवी ही थी। नदियोंका प्रवेश न होते हुए भी गम्भीर, विविध जन्तुओंसे भरे और ओर-छोरसे रहित अष्टम समुद्रके समान वह सेना दीख रही थी। ऊपरकी ओर अत्यधिक धूल उड़नेके कारण उस सेनाका कार्यकलाप भली भाँति नहीं देखा जा सकता था। फिर भी इधर-उधर फहराती हुई श्वेत ध्वजाओंको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि उस सेनामें हाथियोंके हजारों झुण्ड होंगे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लम्, अविरलबलाकावलीविभ्राजिताम्भोदसङ्घातं मूर्तिमन्तमिव मेघसमयारम्भम्, आवासभूमिग्रहणसम्भ्रमाभिप्रधावितासंख्यकरितुरगनरपरम्परोर्मिसम्बाधतया मन्दमन्दरास्फालनलुलितकल्लोलजालाकुलस्य महाजलधेर्लीलया निविशमानं स्कन्धावारमद्राक्षीत्। दृष्ट्वा चाकरोच्चेतसि—'अहो भद्रकं भवति, यद्यचिन्तितागमन एव प्रविश्य वैशम्पायनं पश्यामि' इति। एवं चिन्तयित्वा छत्रचामरादिभिः स्वचिह्नैः सह निवारिताशेषराजपुत्रलोको जवविशेषग्राहिभिस्त्रिचतुरैस्तुरङ्गमैरनुगम्यमानो मूर्धानमावृत्योत्तरीयेण रयविशेषग्राहिणेन्द्रायुधेन नानाव्यापारव्यग्रसकललोकमचिन्तित एव स्कन्धावारमाससाद। प्रविशंश्च प्रत्यावासकं वहन्नेव 'कस्मिन्प्रदेशे वैशम्पायनावासः' इति पप्रच्छ। ततस्तत्सन्निहिताभिः स्त्रीभिरितरत्वादप्रत्यभिज्ञाय यथारब्धकर्मव्यग्राभिरेवोद्बाष्पशून्यवदनाभिः 'भद्र, किं पृच्छसि। कुतोऽत्र वैशम्पायनः' इत्यावेद्यमाने 'आः पापाः, किमेवमसम्बद्धं प्रलपथ' इति शून्यहृदय एव ताः प्रतारय-

---

जिससे ऐसी छटा छायी हुई थी कि जैसे अगणित बगुलियोंके समूहसे सुशोभित मेघघटाओंवाली बरसातके समयका मूर्तिमान् आरम्भ हो। आवासभूमिकी खोजमें दौड़ते-भागते अपरिमित हाथी-घोड़ोंके सवारोंकी तरंगोंके समान पारस्परिक टक्करसे ऐसा लगता था कि जैसे मन्दराचलके आघातसे छलकनेवाले महासागरकी लहरियाँ विश्राम करना चाहती हों, उसी प्रकार वह सेना अपना पड़ाव डाल रही थी। उसे देखकर चन्द्रापीडने मनमें सोचा—'यदि मैं जाकर वैशम्पायनसे अचानक मिलूँ तो अच्छा हो।' ऐसा सोचकर उसने छत्र-चमर आदि राजसी चिह्नोंके साथ सभी राजपुत्रोंको छोड़ दिया और विशेष वेगसे चलनेवाले केवल तीन-चार घोड़सवारोंको साथ लेकर उसने दुपट्टेसे माथा ढाँक लिया। फिर अत्यन्त द्रुतगामी इन्द्रायुधपर सवार होकर जब कि सेनाके लोग नाना प्रकारके कार्योंमें व्यस्त थे, तभी वह एकाएक शिविरमें जा पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही वह प्रत्येक डेरेमें जा-जाकर 'वैशम्पायनका डेरा कहाँपर है?' यह पूछने लगा। शिविरके आस-पासकी स्त्रियोंने उसे साधारण मनुष्य जानकर पहचान नहीं पाया। वे जिन कामोंमें लगी थीं, उनमें लगी ही लगी अश्रुवेगसे शून्यमुख होकर बोलीं—'भद्र! तुम क्या पूछ रहे हो?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्नन्तर्भिन्नहृदयत्वान्नापराः पृच्छन्नेवोत्त्रस्त इव हरिणशावकः, यूथपरिभ्रंशविलोल इव करिकलभः, धेनुविरहादुत्कर्ण इव तर्णकः, न किंचिद्वदन्, न किंचिन्निरूपयन्, न क्वचित्तिष्ठन्, न कंचिदाह्वयन्, क्वागतोऽस्मि, किमर्थमागतोऽस्मि, क्व चलितोऽस्मि, क्व गच्छामि, किं पश्यामि, किमारब्धं मया, किं वा करोमि, इति सर्वमेवाचेतयमानोऽन्ध इव, बधिर इव, मूक इव, जड इव, आविष्ट इव, कटकमध्यदेशं यावत्तादृशेनैव वेगेनावहत्।

अथेन्द्रायुधप्रत्यभिज्ञानाद्वार्तयैवानुप्रधावितराजपुत्रदर्शनाच्च देवश्चन्द्रापीड इति समन्तात्ससंभ्रमप्रधावितानामचेतितोत्तरीयस्खलनानामुद्बाष्पशून्यदृष्टीनां दूरादेव लज्जया प्रणामक्रियया च सममेवावनमतां राजन्यसहस्राणां मुखान्यवलोक्य 'क्व वैशम्पायनः' इत्यपृच्छत्। ततश्च

यहाँ वैशम्पायन कहाँ है ?' यह सुना तो 'ओ पापिनियों ! ऐसी असम्बद्ध बात तुमने क्यों कही?' यह कह और शून्यहृदय होता हुआ वह उन सबको धोखेमें रखकर हृदय विदीर्ण हो जानेके कारण किसीसे कुछ न पूछे बिना ज्योंका त्यों भयभीत मृगशावककी भाँति, अपने झुण्डसे बिछुड़कर विकल हाथीके बच्चेकी भाँति और गायसे वियुक्त होकर कान खड़ा करके दौड़ते हुए बछड़ेकी भाँति वह बिना कुछ बोले, बिना कुछ सुने, बिना कहीं ठहरे, बिना किसीको बुलाये, मैं कहाँ आया हूँ, किस लिए आया हूँ, कहाँ आ पहुँचा हूँ, कहाँ जा रहा हूँ, क्या देखता हूँ, मैंने क्या आरम्भ किया है और क्या कर रहा हूँ। इन बातोंकी जैसे कुछ सुधि ही न हो, जैसे वह अन्धा हो, बहरा हो, जड़ हो, आवेशमें हो, इस तरह जिस प्रकार वह शिविरमें घुसा था उसी तरह वेगके साथ घोड़ेको शिविरके मध्यतक ले गया।

उसी समय इन्द्रायुधको पहचान तथा चन्द्रापीडके आगमनकी खबर पाकर ही बहुतेरे राजपुत्र चारों ओरसे उसकी तरफ दौड़ पड़े। हड़बड़ीमें दौड़नेके कारण उनके दुपट्टे गिर गये, किन्तु उधर उनका ध्यान नहीं गया। आँसुओंके बहावसे उनकी दृष्टि शून्य हो रही थी। दूरसे ही लज्जापूर्वक प्रणाम करते हुए एक साथ अवनत उन हजारों राजाओंका मुख देखकर चन्द्रापीडने कहा—'वैशम्पायन कहाँ है ?' यह यह सुनकर वे सब एक साथ बोल पड़े—'देव ! आप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ते सर्वे सममेव 'अस्मिंस्तरुतलेऽवतरतु तावद्देवः। ततो यथावस्थितं विज्ञापयामः' इति न्यवेदयन्। चन्द्रापीडस्य तेन तेषां स्फुटाख्यानादपि कष्टतरेण वचसान्तःशल्यगर्भं स्फुटितमिव हृदयमासीत्। केवलं तत्कालप्रणयिनी मूर्च्छा सा धारणमकरोत्। तुरगादवतारितं च कुथोपविष्टं च पितुः समवयोभिरनतिक्रमणीयैर्मूर्धाभिषिक्तपार्थिवैर्धृतमात्मानं न वेदितवान्। उपलब्धसंज्ञोऽपि च वैशम्पायनस्यादर्शनात् 'किमेतत्। क्वाहं वर्ते। किं वा मयैतच्चरितम्' इति भ्रमारूढ इव मुह्यद्भिरिवेन्द्रियैः सर्वमेवानुत्प्रेक्षमाणः केवलं स्कन्धावारागमनेनैव तस्याभावादन्यदसंभावयन्, दुर्विषहपीडाभिहतेनेव चेतसा 'किमारटामि, किं हृदयमवष्टभ्य तूष्णीमासे, किमात्मानमाहत्य हृदयात्प्राणैर्वियोजयामि, किमेकाकी कांचिद्दिशं गृहीत्वा प्रव्रजामि' इति कर्तव्यमेव नाध्यगच्छत्। अन्तर्द्रवन्निव दह्यमान इव स्फुटन्निव सहस्रधा दुःखेन चकार चेतसि—'अहो, रम्योऽप्यरमणीयः संवृत्तो जीवलोकः। वसन्त्यपि शून्यीभूता

इस वृक्षकी छायामें बैठ जाइए। तब हम सारी बातें आपको बता देंगे।' साफ-साफ कही हुई बातकी अपेक्षा कहीं अधिक कष्ट देनेवाली उनकी इस बातसे चन्द्रापीडका हृदय इस तरह विदीर्ण हो गया, जैसे बाण भीतर चुभकर घुस गया हो। उस समयकी प्रेमिका मूर्छाने ही उसे सम्हाला। तब घोड़ेसे उतारके उन पितातुल्य अवस्थावाले तथा आदरणीय राजाओंने सहारा देकर उसे गलीचेपर बिठाला। किन्तु इन सब बातोंकी उसे कुछ भी जानकारी नहीं हुई। कुछ देर बाद सचेत हो जानेपर भी वैशम्पायनको न देखकर 'यह क्या हुआ? मैं कहाँ हूँ? मैंने क्या किया?' इस प्रकार सोचता हुआ वह जैसे भ्रममें पड़ गया। उसकी इन्द्रियाँ जवाब देने लगीं। उसे कुछ भी नहीं दिखायी दे रहा था। वैशम्पायनविहीन सेना देखकर दुःसह पीडासे भरे चित्त द्वारा वह सोचने लगा—'मैं रोऊँ? या हृदयको थाम्हकर चुपचाप यों ही बैठा रहूँ? या आत्महत्या करके प्राणोंका अन्त कर दूँ? या अकेले ही कहीं भाग जाऊँ?' किन्तु बहुत विचार करके भी वह कोई निर्णय नहीं कर सका। दुःखसे भीतर ही भीतर जलता और हजारों टुकड़ोंमें विभक्त होता हुआ वह फिर सोचने लगा—'अहो! यह सुंदर संसार भी मेरे लिए असुन्दर हो गया। बसी हुई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृथिवी। सचक्षुषोऽप्यन्धाः ककुभो जाताः। सुनिष्पन्नमपि हतं जन्म। सुरक्षितमपि मुषितं जीवितफलम्। कं परं पश्यामि। कमालपामि। कस्मै विश्रम्भं कथयामि। केन सह सुखमासे। किमद्यापि मे जीवितेन कादम्बर्यापि च। वैशम्पायनस्य कृते क्व कं पृच्छामि। कमभ्यर्थये। को मे ददातु पुनस्तादृशं मित्ररत्नम्। कथं मया तातस्य शुकनासस्य चात्मा वैशम्पायनेन बिना दर्शयितव्यः। किमभिधाय च तनयशोकविह्वलाम्बा मनोरमा वा संस्थापयितव्या। किं भूमिः काचिदसिद्धा तां साधयितुं पश्चात्स्थितः। उत नरपतिः कश्चिदसंघटितस्तत्संघटनाय पश्चात्परिलम्बितः। आहोस्वित्काचिद्विद्याऽगृहीता तां ग्रहीतुं मयोत्संकलितः' इत्येतानि चान्यानि चान्तरात्मना चिरमधोमुख एव विकल्प्य हृदयास्फुटनाद्विलक्षमिवापराधिनमिव महापातकिनमिवात्मानं मन्यमानो वदनमदर्शयञ्शनैः शनैः कृच्छ्रादिव तानप्राक्षीत—'मय्यागते किं कश्चिदेवंविधोऽन्तरे संग्राम उत्पन्नः, व्याधिर्वा कश्चिदाशुकार्य-

---

भी सारी पृथिवी मेरे लिए सूनी हो गयी। दृष्टिसम्पन्न होते हुए भी मेरे लिए सब दिशायें अन्धी हो गयीं। सर्वथा पूर्णकाम होता हुआ भी मेरा जीवन नष्ट हो गया। मैं किसे देखूँ ? किसके साथ बातें करूँ ? किसको मनकी बात बताऊँ ? किसके साथ सानन्द बैठूँ ? अब मेरे अथवा कादम्बरीके ही जीवनसे क्या लाभ ? वैशम्पायनके विषयमें किससे पूछूँ ? किससे अभ्यर्थना करूँ ? वैसा मित्ररत्न मुझे कौन देगा ? वैशम्पायनके बिना अपने पिताजी तथा महामंत्री शुकनासके समक्ष मैं कैसे जाऊँगा ? शोकसे व्याकुल मनोरमाको मैं क्या कहकर धीरज धराऊँगा ? क्या उससे यह कह दूँगा कि 'कुछ भूमि जीतनेको बाकी रह गयी थी। उसीको जीतनेके लिए वह पीछे रुक गया है।' अथवा कह दूँगा कि 'एक राजाके साथ संधि नहीं हो सकी थी, वही काम पूरा करनेके लिए ठहर गया है'। अथवा 'एक विद्या वह नहीं सीखे हुए था, उसीको सीखनेके लिए मैंने आज्ञा दे दी है।' मुँह नीचे करके इन्हें तथा ऐसी-ऐसी अनेक बातें मन ही मन बड़ी देरतक सोचकर हृदय न फट जानेसे अपनेको पागल, अपराधी तथा महापापी समझता हुआ मुँह ऊपर उठाये बिना ही बड़े कष्टके साथ धीरे-धीरे उन राजाओंसे बोला—'मेरे चले आनेपर क्या कोई ऐसा युद्ध छिड़

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साध्यरूपः समुपजातः, येनैतदतर्कितमेव महावज्रपतनमुपनतम्' इति। ते त्वेवं पृष्टाः सर्वे सममेव करद्वयापिहितश्रुतयो व्यज्ञपयन्—'देव, शान्तं पापम्। देवशरीरमिव साग्रं वर्षशतं ध्रियते वैशम्पायनः' इत्येतदाकर्ण्य चोज्जीवित इवानन्दबाष्पनिर्भरः संभाव्य तान्सर्वानेव कण्ठग्रहेणावादीत्—'जीवतो वैशम्पायनस्यान्यत्र क्षणमप्यवस्थानमसंभावयता मयैवं पृष्टा भवन्तस्तज्जीवतीत्येतानि तु तावत्कर्णे कृतान्यक्षराणि। अधुना किं वृत्तमस्य, येनासौ नागतः, क्व वा स्थितः, केन वा प्रसङ्गेन, कथं वा तमेकाकिनमुत्सृज्यायाता भवन्तः, कथं वा भवद्भिर्बलादपि नानीतोऽसावित्येतदवगन्तुमुत्ताम्यति मे हृदयम्' इति।

ते चैवं पृष्टा व्यज्ञपयन्—'देव, श्रूयतां यथावृत्तम्। पृष्ठतः स्कन्धावारमनुपालयद्भिः शनैः शनैर्वैशम्पायनेन सह भवद्भिरागन्तव्यमित्यादिश्य गतवति देवे तस्मिन्दिवसे सुगृहीतत्वाद्घासेन्धनादिकस्योपकरण-

---

गया था अथवा कोई ऐसा असाध्य रोग हो गया था कि जिसकी तत्काल चिकित्सा असम्भव थी, जिससे सहसा ऐसा वज्रपात हो गया ?' युवराजका यह प्रश्न सुनकर सब राजे एक साथ कानपर हाथ रखकर बोल पड़े—'देव ! ऐसा कोई अनर्थ नहीं हुआ। श्रीमान्के शरीर सदृश ही वैशम्पायन अभी सैकड़ों वर्ष जियेंगे।' यह सुना तो जैसे गये हुए प्राण लौट आये हों, इस प्रकार आनन्दके आँसू बहाता हुआ वह उन सबको सादर गले लगकर मिला और कहने लगा—'जीवित वैशम्पायनका क्षणभर भी अन्यत्र ठहरना असंभव समझकर ही आपसे मैंने ऐसा प्रश्न किया था। इस प्रश्नपर 'वह अभी जीवित है' यह वाक्य मेरे कानोंमें पड़ा। अब उसका क्या हाल है ? वह क्यों नहीं आया ? कहाँ है ? किस कार्यके प्रसंगवश वह पीछे रुक गया है ? आप लोग उसे अकेला छोड़कर क्यों चले आये ? उसे बरियाई पकड़कर क्यों नहीं ले आये ? यह जाननेके लिए मेरा हृदय उतावला हो रहा है।'

इन प्रश्नोंको सुनकर वे राजे बोले—'देव ! अब वस्तुस्थिति सुनिए। 'पीछे टिकी हुई सेनाकी देख-भाल करते हुए आप लोग वैशम्पायनके साथ धीरे-धीरे आइएगा।' यह आदेश देकर आप जब चले आये तो घास-इंधन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जातस्य न दत्तमेव प्रयाणं स्कन्धावारेण। अन्यस्मिन्नहन्याहतायां प्रयाणभेर्यां सज्जीक्रियमाणे साधने प्रातरेवास्मान्वैशम्पायनोऽभ्यधात्। अतिपुण्यं ह्यच्छोदाख्यं सरः पुराणे श्रूयते। तदस्मिन्स्नात्वा प्रणम्य चास्यैव तीरभाजि सिद्धायतने भगवन्तं भवानीप्रभुं महेश्वरं शशाङ्कशकलशेखरं व्रजामः। दिव्यजनसेविता केन कदा पुनः स्वप्नेऽपि भूमिरियमालोकिता' इत्यभिधाय चरणाभ्यामेवाच्छोदसरस्तीरमयासीत्। तत्र चातिरम्यतयैव सर्वतो दत्तदृष्टिः संचरन्नमरकामिनीश्रोत्रशिखरारोहणप्रणयोचितैस्तरंगानिलाहतिविलोलवृत्तिभिः किसलयैरविरलकुसुममकरन्दलोभपुञ्जितानां च मत्तमधुलिहां मञ्जुना सिञ्जितरवेण दूरादाह्वयन्तमिव, मरकतमणिश्यामया प्रभयानुलिम्पन्तमिव समं दशदिग्भागान्, अदत्तदिवसकरकिरणप्रवेशतया दिवाप्यन्तर्निशीथिनीमिव बिभ्राणम्, चिरपरिचितैरपि मेघोद्गमाशङ्कया मुहुर्मुहुरुन्मुक्तमधुरकेकारवैर्व-

---

आदि सामग्रियें जुटानेमें व्यस्त रहनेके कारण सेना उस रोज डेरा कूच नहीं कर सकी। दूसरे दिन जब यात्राकी दुन्दुभी बजी और सेना तैयार हो गयी तो बड़े सवेरे ही वैशम्पायनने हम लोगोंसे कहा—'पुराणोंमें मैंने सुना है कि अच्छोद सरोवर बड़ा ही पवित्र तीर्थ है। सो इसमें स्नान करके समीपवर्ती सिद्धपीठमें विद्यमान उमापति महेश्वर भगवान् चन्द्रशेखरको प्रणाम करनेके बाद ही हम यहाँसे चलेंगे। दिव्यजनोंसे सेवित इस पुनीत स्थानको फिर क्या कोई स्वप्नमें भी देख सकेगा?' यह कहकर वे पैदल ही अच्छोद सरोवरकी ओर चल पड़े। वहाँ पहुँचे तो उस रमणीक स्थानको चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर देखने लगे। कुछ ही क्षणों बाद उन्होंने वहाँ एक लतामण्डप देखा। देवियोंके कानोंपर रक्खे जाने योग्य तथा अच्छोद सरोवरकी लहरियोंसे टकराकर आनेवाली वायुके लगनेसे वहाँके नवकिसलय चंचल हो रहे थे। मधुके लोभी भौंरोंके मधुर गुंजार द्वारा वह लतामण्डप जैसे दूर ही से उन्हें अपने समीप बुला रहा था। मरकतमणिकी भाँति अपनी श्यामल कान्तिके द्वारा जैसे वह सभी दिशाओंके भागोंपर अपनी हरीतिमाका लेप चढ़ा रहा था। कभी भी सूर्यकी किरणोंका प्रवेश न होनेके कारण वहाँ दिनमें भी रात बनी रहती थी। चिरपरिचित होनेपर भी वहाँके मयूर उस लतामण्डपको मेघ समझकर जोर-जोरसे बोलते हुए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नशिखण्डिभिरुत्कंधरैरवलोक्यमानं पदमिव जलदकालस्य, प्रतिपक्षमिव सर्वसंतापानाम्, निजावासमिव जडिम्नः, निर्गममार्गमिव सुरभिमासस्य, आश्रयमिव मकरध्वजस्य, उत्कण्ठाविनोदस्थानमिव रतेः, आस्पदमिव सर्वरमणीयानाम्, अनवरतवलितसुरभिशीतलाच्छोदसरस्तरंगमारुताभिवीजिताभ्यन्तरशिलातलमन्यतमं तटलतामण्डपमद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च तमतिचिरान्तरितदर्शनं भ्रातरमिव तनयमिव सुहृदमिव चानन्यदृष्टिर्विस्मृतनिमेषेण चक्षुषा विलोकयन्स्तम्भित इव, चित्रित इव, उत्कीर्ण इव, पुस्तकमय इव, मूर्च्छयोन्मुच्यमान इवेन्द्रियैः, झटित्युन्मुक्ताङ्गः समुपविश्य भूमौ किमप्यन्तरात्मना स्मरन्निवानुध्यायन्निव निर्विकारवदनो गलितलोचनपयोधारासंतानस्तूष्णीमधोमुखस्तस्थौ। तथावस्थितं तमवलोक्यास्माकमुदपादि चेतसि चिन्ता, येन केनचिदपह्रियन्त एव रसिकहृदयाः परिणामधीरमतयोऽपि, किं पुनः कुतूहलास्पदे प्रथमे वयसि वर्तमानाः। तस्मा-

---

गर्दन उठा-उठाकर निहारा करते थे। जैसे वह सभी सन्तापोंका शत्रु था। शीतलताका तो वह जैसे निवासस्थान ही था। वसन्त ऋतुका जैसे उद्गमस्थल था। वह जैसे समस्त रमणीय वस्तुओंका प्रतिष्ठान था। कामपत्नी रतिकी वह विनोदस्थली थी। कामदेवका आश्रयस्थान था। सर्वदा बहनेवाली, सुरभित तथा शीतल अच्छोद सरोवरकी तरंगोंसे टकराकर आनेवाली वायुसे उस मण्डपके भीतरवाले सभी शिलातल शीतल हो गये थे। उसे देखते ही वैशम्पायन जैसे बहुत दिनोंसे न दीखनेवाले भ्राताको, पुत्रको या मित्रको देख रहे हों, इस प्रकार अनन्य दृष्टि तथा निर्निमेष नयनोंसे बारम्बार निहारकर स्तम्भित हो गये, चित्रित हो गये, उत्कीर्ण हो गये अथवा पुस्तकमय हो गये। 'इस तरह वे वहाँ बड़ी देर तक चुपचाप खड़े रहे, जैसे अंगोंको धारण करनेमें असमर्थ हों और जैसे उनकी इन्द्रियोंपर मूर्छाने अधिकार कर लिया हो। इस प्रकार तुरन्त मस्तक झुकाकर उसी भूमिपर चुपचाप खड़े हो गये और जैसे अपनी अन्तरात्मासे कुछ सोचने और ध्यान करने लगे। उनके मुखपर कोई विकार नहीं था, किन्तु नेत्रोंसे बराबर आँसुओंकी झड़ी लगी हुई थी। उनकी यह दशा देखकर हम सबने सोचा कि 'वृद्धावस्थाके कारण जिनकी बुद्धि परिपक्व हुई रहती है, किन्तु हृदय रसिक रहता है तो वे भी कोई मनोज्ञ वस्तु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्नियतमियमस्येमामतिमनोहरां भूमिमालोक्य भावयतो हृदयविकृति- रीदृशी जातेति। न चिराच्च तमेवमवदाम वयम्। दृष्टा दर्शनीयानाम- वधिरेषा। तदुत्तिष्ठ। संप्रति निवर्तयामः स्नानविधिम्—'अतिमहती वेला। सज्जीभूतं साधनम्। प्रयाणाभिमुखः सकलः स्कन्धावारस्त्वां प्रतिपालयन्नास्ते। किमद्यापि विलम्बितेन' इति। स त्वेवमुक्तोऽप्यस्मा- भिरश्रुतास्मदीयालाप इव, जड इव, मूक इव, अशिक्षित इव वक्तुं न किंचिदपि प्रत्युत्तरमदात्। तमेव केवलमनिमेषपक्ष्मणा निश्चलस्तब्धता- रकेण संतताश्रुस्रोतसा लिखितेनेव चक्षुषा लतामण्डपमालोकितवान्। पुनः पुनश्चास्माभिरागमनायानुरुध्यमानस्तद्ग्रथितदृष्टिरेवास्मान्परिच्छे- दनिष्ठुरमाह—'मया तु न यातव्यमस्मात्प्रदेशात्। गच्छन्तु भवन्तः स्कन्धावारमादाय। न युक्तं भवतां चन्द्रापीडभुजबलपरिरक्षितं गते तस्मिन्महासाधनं गृहीत्वास्यां भूमौ क्षणमप्यवस्थानं कर्तुम्।' इत्युक्त-

---

देखकर उधर आकृष्ट हो ही जाते हैं। फिर जो कुतूहलमयी यौवनावस्थामें पहुँचा हुआ हो, उसका क्या कहना? अतएव यह निश्चित है कि यहाँकी इस अतिशय मनोहारिणी भूमिको देखकर कोई भावना जाग गयी है, इसीसे इनमें इस प्रकारका मनोविकार जायमान हुआ है।' तनिक देर बाद हमने उनसे कहा—'दर्शनीय वस्तुओंकी परमावधिस्वरूपा इस स्थलीको आपने देख लिया। अब उठिए। चलकर स्नान किया जाय। बड़ी देर हो गयी। सेना तैयार होकर खड़ी है। समस्त सैन्यसमुदाय चलनेकी तैयारी करके आपकी प्रतीक्षा करता हुआ खड़ा है। अब और देर करनेसे क्या लाभ?' हम लोगोंके यह कहनेपर भी जैसे उन्होंने कुछ सुना ही न हो, जड़ हों, गूँगे हों, अशिक्षित हों अथवा बोलना ही न जानते हों। इस प्रकार उन्होंने कुछ भी जवाब नहीं दिया। वे एकमात्र उसी लतामण्डपको अपनी निर्निमेष, निश्चल, स्तब्ध पुतली- वाली, आँसू बरसानेवाली तथा चित्रलिखित सरीखी आँखोंसे देखते रहे। बार बार जब हमने चलनेके लिए उनसे अनुरोध किया, तब अपनी दृष्टिको उधर ही जमाये हुए अपने निश्चयपर दृढ़ रहकर निष्ठुर वाक्योंमें हम लोगोंसे उन्होंने कहा—'मैं यहाँसे न जाऊँगा। आप लोग सेना लेकर चले जायँ। चन्द्रापीडके भुजबलसे सुरक्षित इस महती सेनाको लेकर आप लोग अब क्षण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वन्तं च तमकस्मान्नाम किंचिदस्य दैवादेव वैराग्यकारणमुत्पन्नमित्याशङ्क्य सानुनयमागमनाय पुनः पुनः प्रतिबोध्य तादृशासंबद्धानुष्ठानेन जातपीडा निष्ठुरमप्यभिहितवन्तो वयम्। एवं न युक्तमस्माकं स्थातुम्। भवतः पुनर्देवस्य तारापीडस्यानन्तरादार्यशुकनासाल्लब्धजन्मनो देव्या विलासवत्या अङ्कलालितस्य देवेन चन्द्रापीडेन सहैकत्र संवृद्धस्य तथा विद्यागृहे महता यत्नेनैव शिक्षितस्य किं युक्तमिदम्, यज्ज्येष्ठे भ्रातरि सुहृदि वत्सले भर्तरि जगन्नाथे च गुणवति च भवति सर्वमर्पयित्वा गते तत्परित्यागेनात्रावस्थानं कस्यापरस्येदृशो युक्तायुक्तपरिच्छेदः। तिष्ठतु तावदस्माकं तवोपरि स्नेहो भक्तिर्वा। अस्मिंस्तु शून्यारण्ये भवन्तमेकाकिनमुत्सृज्य गताः सन्तो देवेन चन्द्रापीडेनैव किं वक्तव्या वयम्। किमन्यो देवश्चन्द्रापीडोऽन्यो वा भवान्। तदुन्मुच्यतामयं संमोहः। गमनाय धीराधीयताम्' इत्यभिहितोऽस्माभिरीषदिव विलक्षहसितेन

भर भी यहाँ न रुकें। जब वे स्वयं चले गये, तब सेना क्यों रुके?' उनके वचन सुनकर हमें यह शंका हुई कि 'इनके हृदयमें दैवयोगसे सहसा इस प्रकार वैराग्य उत्पन्न हो गया है।' यह सोचकर हमने फिर बड़े ही अनुनयपूर्वक आनेके लिए आग्रह किया और उनके इस अटपटे व्यवहारसे क्षुब्ध होकर कुछ कठोर शब्द भी कहे। जैसे—'इस तरह आपको यहाँ नहीं रुकना चाहिए। तनिक सोचिए तो सही, आप महाराज तारापीडके सदृश महामंत्री शुकनासके पुत्र हैं। देवी विलासवतीकी गोदमें देव चन्द्रपीडके साथ ही पले हैं। विद्यालयमें बड़े यत्नपूर्वक उनके साथ ही आप शिक्षित हुए हैं। ऐसी स्थितिमें क्या आपके लिए यह उचित है कि आपके बड़े भाई, मित्र, वत्सल, स्वामी, जगत्पति और गुणवान् चन्द्रापीड जब आपपर सेनाका सब भार डालकर चले गये। तब आप कर्तव्यसे मुँह मोड़कर यहाँ रुक जायँ? इस बातको आपकी तरह अन्य कौन व्यक्ति सोचेगा? यदि आपपर हमारे स्नेह और भक्तिको छोड़ भी दिया जाय, तथापि इस सूने वनमें आपको अकेले छोड़कर जब हम लौटेंगे तो चन्द्रमाके सदृश शीतलप्रकृति चन्द्रापीड हमसे क्या कहेंगे? क्या चन्द्रापीड दूसरे हैं और आप दूसरे? अतएव यह अज्ञान त्यागकर चलनेका निश्चय करिए।' हम लोगोंके यह कहनेपर तनिक अनोखी हँसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वचनेनास्मानवादीत्—'किमहमेतावदपि न वेद्मि, यद्गमनाय मां भवन्तः प्रबोधयन्ति। अपि च चन्द्रापीडेन विना क्षणमप्यहमन्यत्र न पारयामि स्थातुम्। एषैव मे गरीयसी परिबोधना। तथापि किं करोमि। अनेनैव क्षणेन सर्वत्र विगलितं मे प्रभुत्वम्। तथाहि। स्मरन्निव किमपि मनो नान्यत्र प्रवर्तते, पश्यन्तीव किमपि न दृष्टिरन्यतो वलति, आसक्तमिव क्वापि हृदयं किमपि न जानाति, निगडिताविव पदमपि दातुं न चरणावुत्सहेते। कीलितेव चास्मिन्नेव स्थाने तनुः। तदात्मना त्वहमसमर्थो यातुम्। अथ बलाद्भवन्तो मां निनीषवः, तत्रापि चलितस्यास्मात्प्रदेशादात्मनो जीवितधारणं न संभावयामि। अत्र तु पुनस्तिष्ठतो यदेतदन्तर्हृदये किमप्यनवसीयमानं विपरिवर्तते मे। येनैव विधृतोऽस्मि तेनैवावश्यं धार्यन्ते प्राणा इति चेतसि मे। तदलं निर्बन्धेन। गच्छन्तु भवन्तः। भवतु यावज्जीवमातृप्तेश्चन्द्रापीडदर्शनसुखम्। अल्पपुण्यस्य तु तन्मे प्राप्तमपि करतलादेवैवमाच्छिद्य दैवेन नीतम्' इत्यभि-

---

मुखपर लाकर उन्होंने कहा—'क्या मैं इतना भी नहीं जानता, जो चलनेके लिए आप मुझे इस तरह समझा रहे हैं? और फिर चन्द्रापीडके विना क्षणभर भी मैं अन्यत्र नहीं रुक सकता। यह मैं भली-भाँति जानता हूँ। तथापि क्या करूँ? इस समय सर्वत्र मेरा प्रभुत्व लुप्त हो गया है। जैसे मेरा मन यहाँ किसी बीती बातका स्मरण कर रहा है और वह कहीं भी अन्यत्र नहीं लगता। आँखें जैसे कुछ देख रही हैं और वे अन्यत्र नहीं जाना चाहतीं। मेरा हृदय जैसे आसक्त हो गया है और वह कुछ भी अन्य बात नहीं सोच पाता। पैरोंमें जैसे जंजीर पड़ गयी है, जिससे वे एक पग भी आगे नहीं बढ़ना चाहते। यह शरीर तो जैसे इसी जगह कीलसे जड़ दिया गया है। अतएव मैं यहाँसे जानेमें असमर्थ हूँ। यदि आप लोग मुझे हठात् यहाँसे ले जायँगे तो मैं जीवित न रह सकूँगा। यदि यहाँ रहूँगा तो मेरे हृदयमें जो कोई अज्ञात भावना छिपी बैठी है और जिसने मुझे अपनी मुट्ठीमें कर लिया है, वही मेरे प्राणोंकी रक्षा करेगी। ऐसा मेरा विचार है। अतएव विशेष आग्रह न करके आप लोग जायँ और यावज्जीवन जी भरके चन्द्रापीडके दर्शनका आनन्द लूटें। मुझ अभागेके तो हाथमें आये हुए भी उस सुखको बरबस दैवने छीन लिया है।' उनके यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दधानश्च कौतुकात् 'किमेतत्, येनैवं भाषसे। नायासि देवस्य चन्द्रापीडस्य समीपम्' इत्यस्माभिः पुनःपुनः पृष्टोऽप्यभ्यधात्—'लज्जेऽहमेवं वक्तुम्। तथापि शपामि वयस्यचन्द्रापीडस्यैव जीवितेन, यदि किंचिदपि जानामि यत्केन कारणेन न शक्नोम्यतो गन्तुमिति। अपि च भवतामपि प्रत्यक्ष एवायं वृत्तान्तः। तद्व्रजन्तु भवन्तः' इत्युक्त्वा तूष्णीमभूत्।

मुहूर्तादिव चोत्थाय तेषु तेषु रम्यतरेषु तरुतलेषु सरस्तीरेषु तस्मिंश्च देवायतने किमपि नष्टमिवान्विष्यन्ननन्यदृष्टिर्बभ्राम। भ्रान्त्वा च चिरमिव खिन्नान्तरात्मा सनिर्वेदमूर्ध्वं निःश्वस्य तस्मिंल्लतागहने पुनरुपविश्य तस्थौ। वयमपि कृतवीरुत्संनिधानास्तत्प्रतिबोधनप्रत्याशया स्थिता एव। गतवति समधिक इव यामद्वये शरीरस्थितिकरणायास्माभिरभ्यर्थितः प्रत्युवाच—'वयस्यचन्द्रापीठस्य खल्वमी स्वजीवितादपि वल्लभतराः प्राणाः। तद्यदि बलादपि परित्यज्य मां गच्छन्ति;

कहनेपर कौतूहलवश हमने बार बार कहा—'ऐसी क्या बात है कि जिससे आप यह कह रहे हैं? आप देव चन्द्रापीडके पास क्यों नहीं चलना चाहते?' उन्होंने कहा—'यह कहनेमें मुझे लाज लगती है। फिर भी मैं अपने मित्र चन्द्रापीडके ही जीवनकी शपथ खाकर कहता हूँ कि मुझे कुछ भी नहीं मालूम कि मैं यहाँसे जानेमें क्यों अपनेको असमर्थ पाता हूँ। इस बातको तो आप लोग भी जानते ही हैं। इसीलिए अब आप लोग जायँ।' ऐसा कहकर वे चुप हो गये।

कुछ ही देर बाद वे उठ खड़े हुए और वहाँके परम रमणीय तरुतलोंमें, लताकुंजोंमें, सरोवरतटपर और देवमन्दिरमें जैसे किसी खोयी हुई वस्तुको ढूँढते हुए एकाग्र दृष्टि करके निहारने लगे। बड़ी देरतक घूमनेके बाद मनमें खिन्न होते हुए बड़े विषादके साथ ऊँची साँस लेकर फिर उसी लतामंडपमें जा बैठे। हमलोग भी उन्हें मना लेनेकी आशासे लताओंके बीचमें छिपे खड़े रहे। जब दो पहरसे भी अधिक समय बीत गया, तब स्नान-भोजनादिके निमित्त हम लोगोंने उनसे कहा। तब वैशम्पायनने जवाब दिया—'मित्र चन्द्रापीडको अपने जीवनसे भी अधिक प्रिय मेरे प्राण हैं। अतएव ये यदि हठात् मुझे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथाप्येषां संधारणे मया यत्नः कार्यः। किं पुनरगच्छतामेव। चन्द्रापीडदर्शनैव चाहमर्थी। न मृत्युना। तदभ्यर्थनैवात्र निष्फला' इत्यभिधायोत्थाय स्नात्वा कन्दमूलफलैर्वनवासोचितां शरीरस्थितिमकरोत्। निर्वर्तितशरीरस्थितौ तस्मिन्वयमपि कृतवन्तः। अनेनैव च क्रमेण विस्मितान्तरात्मानो रात्रौ च दिवा च किमेतदिति तद्वृत्तान्तमेवानुभावयन्तो दिनत्रयं स्थित्वा निष्प्रत्याशास्तदागमनानयनयोः सुकृतशम्बलसंविधानं तत्परिकरं तत्र स्थापयित्वा चागता वयम्। यच्चाग्रतो न प्रेषितः संवादकस्तदेकं तावदन्तरा गच्छतो देवस्यासौ न परापतत्येव। अपरमपि चिरात्प्रविष्टमात्रस्यैव देवस्य मा पुनरागमनक्लेशोऽभूत्' इति। चन्द्रापीडस्य तु तं स्वप्नेऽप्यनुत्प्रेक्षणीयं वैशम्पायनवृत्तान्तमाकर्ण्य युगपदुद्वेगविस्मयाभ्यामाक्रान्तहृदयस्योदपादि चेतसि—'किं नु खलु ईदृशस्य सर्वपरित्यागकारिणो वनवासैकशरणस्य वैराग्यस्य कारणं

छोड़ना चाहें तो भी मेरा कर्तव्य है कि मैं इन्हें बनाये रखनेका प्रयत्न करूँ, किन्तु ये जाते ही कहाँ हैं ? मैं तो चंद्रापीडके दर्शनोंका इच्छुक हूँ, मृत्युका अभिलाषी नहीं हूँ। अतएव अब प्रार्थनाकी कोई आवश्यकता नहीं है।' ऐसा कहकर उन्होंने नहाया और वनवासियोंके योग्य कन्द-मूल-फलका भोजन किया। उनके भोजनोपरान्त हम सबने भी आहार किया। इस प्रकार हम लोग बड़े विस्मित भावसे 'यह क्या बात है' इसी बातको सोचते हुए तीन दिन वहाँ पड़े रहे। इसके बाद जब उनके आने या ले आनेकी कुछ भी आशा शेष नहीं रह गयी, तब उनके भोजनादिका सुचारु रूपसे प्रबन्ध करके और परिजनोंको सेवाके लिए नियुक्त करनेके बाद हम लोग चले आये। हमने जो आपके पास यह समाचार नहीं भेजा, उसका कारण यह था कि उस समय आप रास्तेमें ही रहे होंगे। अतएव दूत आपके पास न पहुँच पाता। यदि वह नगरीमें आपके पहुँचनेपर जाकर यह खबर देता तो बहुत समय बाद लौटे हुए आपको फिर दौड़नेका कष्ट उठाना पड़ जाता।' जो स्वप्नमें भी नहीं सोची जा सकती थी, वैशम्पायनकी वह बात और अद्भुत वृत्तान्त सुनकर चन्द्रापीडके मनमें उद्वेग तथा विस्मय दोनों एक साथ उत्पन्न हो गये। उसने सोचा—'इस तरह सर्वस्व त्यागकर वनवास करनेका क्या कारण हो सकता है ? मैं अपनी तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भवेत्। स्वीयं च न पश्यामि किंचित्स्खलितम्। तातप्रसादात्तु मामिव तमपि चरणतललुलितचूडामणयोऽर्चयन्त्येव राजानः। ममेव तस्यापि चेच्छाधिकेषु सर्वोपभोगेषु न किंचिदपि हीयते। ममेव तस्याप्याज्ञा न विहन्यत एव। अहमिव सोऽपि प्रसादान्करोत्येव। मत्त इव तस्मादपि बिभेत्येवापराधिजनः। मयीव तस्मिन्नपि सर्वाः संपदः। तमप्यालोक्य मामिवोत्पद्यते स्पृहा लोकस्य। अथागच्छंस्तातेनाम्बया वाऽऽर्यशुकनासेन मनोरमया च तनयस्नेहोचितेन सौहार्देन न संभावितः। विनयाधिक्येच्छुना तातेन शुकनासेन वा किंचित्पीडाकरमभिहितम्। ताडितो वा। तत्रापि नैवासावेव स्नेहतः पिशुनस्वभावो वा, गुरुजनाभक्तो वा, गुणोपादानविमुखो वा, तरलचित्तो वा। यत्किञ्चनकारी यःकश्चिदिव क्षुद्रप्रकृतिराढ्यपुत्रतागर्वितो दुःशिक्षितो दुर्विनीतो वा, पुत्रैकतादुर्ललितो वा। यो जन्मनः प्रभृति सर्वप्रकारोपकारिणो गुरु-

---

कोई गलती नहीं देखता। पिताजीकी कृपासे मेरी तरह उसे भी सब राजे चरणोंमें अपनी चूडामणिका स्पर्श कराके पूजते हैं। मेरे ही समान उसे भी इच्छासे अधिक समस्त उपभोगोंकी कमी नहीं रहा करती। मेरी ही तरह उसकी भी आज्ञाका उल्लंघन नहीं होता। मेरे समान वह भी सबपर कृपा करता है। अपराधी लोग जैसे मुझसे डरते हैं, उसी प्रकार उससे भी डरते हैं। मेरी ही तरह उसके पास भी सब सम्पदायें हैं। मेरे ही समान उसको भी देखकर लोगोंके मनमें स्पृहा होती है। आते समय मेरे पिताजीने, माताजीने और आर्य शुकनासने क्या पुत्रस्नेहोचित सौहार्द्रके साथ उसका सम्मान नहीं किया था? अधिक विनीत भावके ईच्छुक मेरे पिताजी अथवा आर्य शुकनासने उसके हृदयपर चोट पहुँचानेवाली कोई बात तो नहीं कही थी? उसे उनसे ताड़ना तो नहीं मिली थी? कदाचित् ऐसा हुआ भी हो तो वैशम्पायन ऐसा निःस्नेह, खलप्रकृति, गुरुजनोंकी भक्तिसे हीन, गुणग्राहकतासे विमुख, चंचलचित्त, मनमानी करनेवाला, साधारण लोगोंकी तरह ओछे स्वभावका, धनाढ्य पिताका पुत्र होनेके नाते अभिमानी, दुःशिक्षित, दुर्विनीत अथवा माता-पिताकी एकमात्र सन्तति होनेके कारण दुलारसे उद्धत तो नहीं ही है कि वह जन्म-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनस्योपरि खेदमेवं कुर्यादनुबन्धाद्विरमेद्वा। प्रशमस्यापीदृशस्य नैष कालः। अद्याप्यसौ विद्वज्जनोचिते गार्हस्थ्य एव न निवेशितः, देवपितृमनुष्याणामानृण्यमेव नोपगतः, अगत्वा चानृण्यमृणत्रयेण बद्धः क्व गतः। न तेन पुत्रपौत्रसंतत्या वंशः प्रतिष्ठां नीतः। नानन्तदक्षिणैर्महाक्रतुभिरिष्टम्। न सत्रकूपप्रपाप्रासादतटाकारामादिभिः कीर्तनैरलंकृता मेदिनी। नाकल्पस्थायि दिशोयायि यशो विप्रकीर्णम्। न गुरवोऽनुवृत्त्या सुखं स्थापिताः। न स्निग्धबन्धूनामुपकृतम्। न प्रणयिनो निर्विशेषविभवतां नीताः। न साधवः परिवर्धिताः। नानुजीविनः संविभक्ताः। न दृष्टाः श्रुता वाङ्गनाः। न जातेन जीवलोकसुखान्यनुभूतानि। न तेन पुरुषार्थसाधनानां धर्मार्थकामानामेकोऽपि हि प्राप्तः। किमेतत्तेन कृतम्' इत्याक्षिप्तचेताश्चिन्तयंश्चिरमिव तस्मिन्नेव तरुतले

से लेकर अबतक सब प्रकारका उपकार करनेमें तत्पर गुरुजनोंको ऐसा कष्ट दे और उनसे सर्वथा नाता ही तोड़ ले। और फिर वैराग्य उत्पन्न होनेका अभी समय ही नहीं है। अभी तो वह विद्वानोंके लिए उचित गृहस्थाश्रममें भी नहीं प्रविष्ट हुआ है। अभी उसने देवताओं, पितरों तथा मनुष्यसमाजका ऋण भी नहीं चुकाया है। इन तीनों ऋणोंसे उऋण हुए विना ऋणबद्ध होकर वह कहाँ गया? अभी उसने पुत्र-पौत्र आदि सन्तति उत्पन्न करके अपने वंशकी प्रतिष्ठा भी नहीं की है। अपरिमित दक्षिणायें देकर उसने यज्ञ भी नहीं किये हैं और न अन्नक्षेत्र (सदाबर्त), कूप, पौसरा, धर्मशाला, तालाब तथा बाग आदिका निर्माण कराके उसने अपनी स्थायी कीर्ति ही स्थापित की है। उसने अभी कल्पपर्यन्त स्थिर और दसों दिशाओंमें व्याप्त हो जानेवाला यश भी नहीं अर्जित किया है। उसने अपनी सेवासे अभी गुरुजनोंको कोई सुख भी नहीं पहुँचाया है। अपने स्नेही बान्धवोंका कोई उपकार भी अभी नहीं किया है। अपने प्रेमियोंको धनी भी नहीं बनाया है। अभी न उसने साधुजनोंकी प्रतिष्ठा की, न अनुचरोंको कुछ देकर सन्तुष्ट किया, न अभ्यागतोंको तृप्त किया, न न स्त्रियोंको देखा-सुना और न पुरुषार्थके मुख्य साधनोंमेंसे धर्म-अर्थ-कामका ही सम्पादन किया। इन सबमेंसे कुछ न करके उसने यह क्या कर डाला?' इस प्रकार व्याकुल हृदयसे बड़ी देरतक इन्हीं बातोंको सोचता हुआ वह उसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्थित्वा शून्यहृदयोऽपि यथाक्रियमाणप्रसादसम्मानसंभावनासंभावितं विससर्ज सकलमेव राजकम्। उत्थाय तत्क्षणकृतमुक्तस्थिततुङ्गतरतोरणावद्धचन्दनमालमुभयपार्श्वस्थापितोत्पल्लवमुखपूर्णहेमकलशम्, द्वाराप्रभृति सिक्तमृष्टभूमिभागम्, अन्तर्बहिश्च प्रकीर्णसुरभिकुसुमप्रकरम्, इतस्ततः संचरता कर्मान्तिकलोकेन गृहीतविविधभृङ्गारम्, मणिचामरतालवृन्तरत्नपादुकाद्युपकरणपाणिभिर्वारवनिताभिश्चाकीर्णम्, वितानतलवर्तिना मदामोदाधिवासितदिगाननेन राजहस्तिना गन्धमादनेन सनाथीकृतैकपार्श्वम्, अपरपार्श्वेऽपि कल्पितेन्द्रायुधावस्थानमुपवाह्याकरेणुकाक्रान्तबाह्याङ्गणम्, अशेषद्वारावहितबहुवेत्रलोकम्, महत्त्वाद्गम्भीरतयानेकसत्त्वशरणतया च महाजलनिधिमनुकुर्वाणम्। तथा हि सवेलावनमिव यामावस्थितानेककरिघटापरिकरेण, अन्तःप्रविष्टमहाशैलमिव गन्धमादनेन, सकल्लोलमिव संचरत्संभ्रान्तकर्मान्तिकलोकोर्मिपरम्परा-

---

वृक्षके नीचे बैठकर शून्यहृदय होते हुए भी चंद्रापीडने यथायोग्य कृपा तथा आदरदानसे सम्मानित करके उन सब राजाओंको विदा कर दिया। इसके बाद वह उठा और तत्काल खड़े किये गये डेरेमें चल गया। उस डेरेमें बड़े ऊँचे द्वारपर वंदनवार बँधे थे। द्वारके दोनों ओर जलसे भरे कलश रक्खे थे। जिनके मुखपर बड़े-बड़े पल्लव धरे थे। उसके आस-पासकी भूमिपर जलका छिड़काव किया हुआ था। उस डेरेके बाहर और भीतर सुगंधित फूलके ढेर बिखरे हुए थे। विविध प्रकारकी झारियाँ हाथमें लिये भृत्यगण इधर-उधर दौड़ रहे थे। अगणित सेविकायें मणिजटित चमर, पंखे और रत्नजटित खड़ाऊँ आदि उपकरण हाथमें लेकर खड़ी थीं। अपनी अनुपम सुगंधिसे दसों दिशाओंको सुरभित करता हुआ राजहस्ती गंधमादन एक ओर शामियानेके नीचे खड़ा था। दूसरी ओर इंद्रायुधके लिए स्थान बना हुआ था। उसके बाहरका आँगन सवारी देनेवाली हाथिनियोंसे भरा था। सभी द्वारोंपर द्वारपाल हाथमें छड़ी ले-लेकर खड़े थे। वह डेरा अपने महत्त्व, गाम्भीर्य तथा बहुतेरे लोगोंके एकत्र होनेके कारण महासमुद्र सरीखा दीख रहा था। उस डेरेमें प्रत्येक द्वारपर खड़े हाथियोंका झुण्ड समुद्रतटवर्ती जंगल जैसा लग रहा था। गजराज गंधमादन समुद्रके मध्यमें महान् पर्वतके समान सुशोभित हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिः, सावर्तमिव प्राहरिकजनमण्डलास्थानैः, सलक्ष्मीकमिव वाराङ्गनाभिः, सरत्नमिव महापुरुषैः, सहंसमालमिव सितपताकाभिः, सफेनपटलमिव कुसुमप्रकरैः, हरिमिवानन्तभोगपरिकरं कायमानमविशत्। प्रविश्य चागृहीतप्रक्रमतया मलिनवेशाभिरुद्विग्नदीनमुखीभिरितस्ततो वाराङ्गनाभिर्यामिकलोकेन कर्मान्तिकैश्च प्रणम्यमानस्तूष्णीमिवालोककारकेणेव मदामोदेनावेदिते निसृष्टशून्यदृष्टिर्गन्धमादने शनैःशनैर्वासभवनमयासीत्। तत्र चापनीतसमायोगो विमुच्यांगानि शयनीये तरुतालवृन्तानिलेन सवीज्यमानोऽङ्गसंवाहकारिभिश्च शनैःशनैरपनीयमानागमनखेदः सकलरजनीप्रजागरखिन्नोऽपि चाप्राप्तनिद्रासुखो दुःखासिकया पुनरपि दुःखान्तरहेतुं चिन्तामेवाविशत्—'यदि तावदप्रतिमुक्तस्तातेनाम्बया वा महति शोकार्णवे निक्षिप्य तौ तनयविरहशोकविक्लवं तातं शुकनासमम्बां च मनोरमामनाश्वास्यास्मादेव प्रदेशागद्गच्छामि, तदा मयापि

रहा था। हड़बड़ीमें जल्दी-जल्दी चलनेवाले लोगोंकी भीड़ समुद्रकी तरंग जैसी लग रही थी। पहरेदारोंका जत्था समुद्रके भँवर सदृश दीख रहा था। उसमें विद्यमान बहुतेरी सुन्दरियाँ लक्ष्मी सदृश थीं। बड़े-बड़े महापुरुष उस समुद्रके रत्न थे। उज्ज्वल ध्वज उस समुद्रके हंस थे। यत्र तत्र पड़े फूलोंके ढेर उस समुद्रके फेन जैसे थे। इस प्रकार वह विष्णुभगवान्‌के सदृश चंद्रापीड अनंत भोगों (विलासकी सामग्री अथवा सर्पका फन) से युक्त डेरेमें प्रविष्ट हुआ। उसके भीतर घुसते ही शरीरकी सफाईपर ध्यान न देनेसे मलिन वेश तथा उद्वेगयुक्त मुखवाली नारियाँ, पहरेदार, सेवक आदि चारों ओरसे लोग उसे प्रणाम करने लगे। किन्तु वह एक पथप्रदर्शक सेवककी नाईं सुगंधिसे ही अपनी स्थितिको सूचना देनेवाले गंधमादनको शून्यदृष्टिसे निहारता हुआ अपने खेमेमें चला गया। वहाँ पहुँचकर उसने कपड़े उतार दिये और एक पलंगपर लेट गया। मालिश करनेवालोंने आकर मालिश किया और पंखेवालोंने पंखेकी हवा की, तब जाकर कहीं यात्राकी थकावट दूर हुई। किंतु रात भर जागरण किये रहनेपर भी उसे नींदका सुख नहीं मिला। वह एकके बाद दूसरा दुःख देनेवाली चिंताओंसे घिरकर फिर सोचने लगा—'यदि शोकाकुल मातापिताकी अनुमति लिये बिना उन्हें महान् शोकके समुद्रमें डाल तथा पुत्रके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वैशम्पायनस्यानुक्तं भवति। निवृत्य पुनर्गमने चामुक्तिपक्षमाशङ्कते मे हृदयम्। तत्किं करोमि। अस्थाने एवाप्रतिमुक्तिशङ्का मे प्रियसुहृदात्मानं मां च परित्यजताप्यपरेण प्रकारेण गमनमुत्पादयता कादम्बरीसमीपगमनोपायचिन्तापर्याकुलमतेरुपकृतमेव। तदधुना वैशम्पायनप्रत्यानयनाय यान्तं न तातो नाम्बापि नार्यशुकनासोऽपि निवारयितुं शक्नोति माम्। गतश्च वैशम्पायनसहितस्तेनैव पार्श्वेन पुरस्ताद्गमिष्यामि।' इति निश्चित्य तत्कालकृतं वैशम्पायनवियोगदुःखं परिणामसुखमौषधमिव बहु मन्यमानो मुहूर्तमिव स्थित्वा विश्रान्तः सुखितैरङ्गैरापूरिते तृतीयार्धयामशङ्खे शरीरस्थितिकरणायोदतिष्ठत्।

उत्थाय च यत्रैव कादम्बरी तत्रैव वैशम्पायन इति स्वधैर्यावष्टम्भेनैव संस्तभ्य हृदयं शून्यान्तरात्मा पुनरेव संवर्जिताशेषराजलोकः शरीरस्थितिमकरोत्। कृताहारश्चान्तर्ज्वलतो मदनानलस्य वैशम्पायनविर-

---

विरहसे दुःखी तात शुकनास एवं माता मनोरमाको आश्वस्त किये बिना मैं यहाँसे ही चल दूँ तो मेरा काम भी वैशम्पायनके ही समान होगा। यदि यहाँसे अपनी नगरीको लौटता हूँ तो वहाँसे मुझे फिर जानेकी आज्ञा मिलनेमें सन्देह है। तब आखिर क्या किया जाय? अथवा पुनः आज्ञा न मिलनेका संशय निराधार है। मेरे प्रिय मित्र वैशम्पायनने वहाँ रुककर एक प्रकारसे मेरा और अपना बहुत बड़ा उपकार किया है। क्योंकि कादम्बरीके पास पहुँचनेका उपाय सोचते-सोचते मैं व्याकुल था। सो उसके लिए यह सहज राह निकल आयी। वैशम्पायनको लौटा लानेके लिए जाते समय पिता, माता तथा आर्य शुकनास इनमेंसे कोई भी मुझे नहीं रोकेगा। वहाँ पहुँचते ही वैशम्पायनको साथ लेकर मैं आगे बढ़ जाऊँगा।' ऐसा निश्चय करके तत्काल प्राप्त वैशम्पायनके वियोगजनित क्लेशको परिणाममें सुखदायिनी औषधि मानकर उसने क्षण भर विश्राम किया और कुछ शारीरिक सुख लाभ करके तृतीय अर्धयामकी शंखध्वनि होते ही स्नान-भोजन आदि करनेके लिए उठ गया।

पलंगसे उठकर 'जहाँ वैशम्पायन है, वहाँ ही कादम्बरी है।' ऐसा सोच हृदयको ढाढ़स बँधाते हुए उसने शून्य मनसे सभी राजाओंको बुलवाकर उनके साथ भोजन किया। भोजनके पश्चात् भीतर धधकती कामाग्नि तथा वैशम्पा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इशोकाग्नेश्च बहिरपि संतापदानाय साहाय्यकमिव कर्तुमुपरिस्थितश्चातिकष्टमष्टास्वपि दिक्षु युगपत्प्रसारितकरः करोम्ययत्नेनैव संतापमित्याकलय्येव गगनतलमध्यमारूढे सवितरि आतपव्याजेन रजतद्रवमिवोत्तप्तमुद्गिरति रश्मिजाले, निर्भिद्य विशन्तीष्विव शरीरमातपकणिकापुञ्जमानप्राणिसंघातासु लताप्रवेशात्संकटायमानासु पादपच्छायासु, बहिरालोकयितुं चाप्यपारयन्तीषु दृष्टिषु, ज्वलत्स्विव दिङ्मुखेषु दुःस्पर्शासु भूमिषु, निःसंचारेषु पथिषु, संकटप्रपाकुटीरोदरोदपीतिपुञ्जितेष्वध्वन्येषु, नाडिन्धमश्वासातुरेषु स्वनीडावस्थायिषु पत्ररथेषु, पल्वलान्तर्जलप्रवेशितेषु महिषवृन्देषु, अरविन्ददलशकलकिंजल्कविच्छुरितसिच्छाविलोडतोत्त्रुटितविसकाण्डच्छेददन्तुरं निपानसरःपङ्कमारोहत्सु करियूथेषु, रक्ततामरसकान्तिषु, ललनाकपोलोपान्तेषु, दलितमुक्ताक्षोदानुकारिणीषु विराजमानासु घर्मजलकणिकावलीषु, स्मर्यमाणायां ज्योत्स्नायां, गृह्यमाणेषु

यनके वियोगजनित शोकाग्निकी सहायता करनेके लिए ही जैसे आकाशमें स्थित सूर्य आठों दिशाओंमें अपनी प्रखर किरणें फैलाकर 'मैं अनायास अत्यधिक कष्टदायक सन्ताप उत्पन्न करूँगा।' मानो ऐसा निश्चय करके आकाशके मध्यमें आ गया। जब उसकी किरणें आतपके बहाने पिघली हुई चाँदीकी गरम धारा उगलने लगीं। धूपकी कणिकायें जब शरीरको भेदकर भीतर घुसने लगीं। वृक्षतले एकत्र प्रणियोंसमेत वृक्षोंकी छाया सिकुड़कर जैसे अपने आपमें समाने लगी। आँखें जब बाहरकी ओर ताकनेमें भी असमर्थ हो गयीं। सभी दिशायें जलने लगीं। भूमिका स्पर्श जब कठिन हो गया। राहें सूनी हो गयीं। पथिकजन जब पौसरेकी सँकरी कुटियाओंमें जल पीनेके लिए भीड़ करने लगे। जब गर्मीसे हाँफते हुए पक्षी अपने-अपने घोसलोंमें छिप गये। भैंसोंके झुण्ड जब व्याकुल होकर छोटे-छोटे गड़होंके पानीमें घुस गये। जब कमलके पत्तों एवं रजोंसे चितकबरे तथा यथेच्छ हिलोरनेके कारण उखड़े मृणालदंडोंके टुकड़ोंसे ऊँचे-नीचे सरोवरके कीचड़में हाथियोंके झुण्ड लोटने लगे। जब स्त्रियोंके कपोल रक्तकमलके समान लाल हो गये। जब पसीनेकी छहरी हुई नन्हीं-नन्हीं बूँदें मोतीके पिसे हुए चूर्ण सदृश उज्ज्वल दीखने लगीं। जब चाँदनीकी याद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तुषारगुणेषु, वाञ्छयमाने पयोदकालाभ्यागमे, अभ्यर्थ्यमाने दिवसपरिणामे, प्रदोषदर्शनाकांक्षिषु हृदयेषु, उत्थाय सरस्तीरकल्पितमनवरतापतज्जलासारसेकनिवारितोष्णकरकिरणसंतापम्, एकसन्तानावलीधारावर्षवेगवाहिन्या निर्झरिण्येव कुल्यया परिक्षिप्तम्, अन्तरालम्बितजलजम्बूप्रवालाहितान्धकारम्, आमुक्तकुसुमपल्लवलतावृताखिलस्तम्भसञ्चयम्, आमोदमानसरसस्फुटितारविन्दराशिदत्तप्रकरम्, आकीर्णसरसबिसकाण्डम्, अकाण्डकल्पितप्रावृट्कालमितस्ततो वर्षन्तीभिः शैवलप्रवालमञ्जरीभिः, जलदेवताभिरिव सद्यःस्नानार्द्रचिकुरहस्ताभिरुपगृहीतसुरभिकोमलजलार्द्रकाभिरनाश्यानचन्दनाङ्गरागहारिणीभिर्हारवलयमात्राभरणाभिरवतंसितबालशैवलप्रवालाभिर्मृणाललतालवृन्तकर्पूरपटवासहरिचन्दनचन्द्रकान्तमणिदर्पणाद्युपकरणपाणिभिर्वह्वीभिर्वाराङ्गना-

---

आने लगी और बरफका गुण गाया जाने लगा। जब वर्षाकालके आगमनकी इच्छा की जाने लगी। जब लोग शीघ्र दिन बीतनेकी आकांक्षा करने लगे। जब सबके हृदय सायंकालको देखनेके लिए व्यग्र हो उठे। तब चन्द्रापीड भी वहाँसे उठकर एक सरोवरके तटपर बने हुए जलमण्डपमें जा पहुँचा। वहाँपर निरन्तर जलधारायें गिरती रहनेके कारण सूर्यकी किरणोंसे जायमान सन्ताप दूर हो गया था। उसके चारों ओर एक धारामें वर्षाके सदृश वेगसे बहनेवाली नदीकी नाईं नहर थी। उसके भीतरकी ओर लटकनेवाले जलजामुनके पत्तोंभरी डालोंसे जैसे सदा अंधकार छाया रहता था। मंडपके सभी स्तम्भोंपर फूलों और पत्तियों युक्त लतायें लटकी हुई थीं। खिले हुए, सुगन्धित एवं सरस कमलपुष्पोंकी राशि बिखरी हुई थी। गीले-गीले मृणालदण्ड छितराये हुए थे। सेवारकी पत्तियों और मंजरियोंसे गिरती हुई जलबिन्दुओंसे वहाँ असमयमें ही वर्षाकाल उपस्थित दीख रहा था। उसी समय स्नान करके अपने भीगे केशपाश हाथोंमें थाम्हकर खड़ी कितनी ही वारवनितायें जलदेवियोंकी भाँति दीख रही थीं। आर्द्र और सुगन्धित चन्दनका लेप किये रहनेसे वे बड़ी सुन्दर लग रही थीं। उनके तनपर केवल कंकण और हारका ही आभूषण था। सेवारकी कोमल कलियाँ उनके कानोंपर विराज रही थीं। मृणाल, ताड़के पंखे, कपूरका पटवास, हरिचन्दनका लेप, चन्द्रकान्तमणिका दर्पण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिरुपेतम्, परिभवस्थानमिव निदाघसमयस्य, निदानमिव शीतकालस्य, निवेशमिव वारिवाहानाम्, तिरस्कारमिव रविकिरणानाम्, हृदयमिव सरसः, सहायमिव हिमगिरेः, स्वरूपमिव जडिम्नः, आवासमिव विभावरीणाम्, प्रत्याघातमिव दिवसस्य जलमण्डपमयासीत्। तत्र चातिरम्यतया क्षुभितमकरध्वजोत्कलिकासहस्रविषमं जलासारशिशिरतया संधुक्षितसुहृद्वियोगानलं महासमुद्रमिव गम्भीरं तं दिवसमेकाकी कथंकथमपि स्वधैर्ययानपात्रेणालङ्घयत्। लोहितायमानातपे च सायाह्ने निर्गत्य बहुलगोमयोपलेपहरिते मन्दमन्दमारुताहतोत्तरलायमानधवलकुसुमप्रकरशोभिनि वासभवनाङ्गणे क्षणमिवास्थाने समासन्नपार्थिवैः सह वैशम्पायनालापेनैव स्थित्वा 'द्वितीय एव यामे चलितव्यम्। सज्जीकुरुत साधनम्' इत्यादिश्य बलाध्यक्षमृक्षोदय एव विसर्जिताशेषराजलोको वासभवनमध्यवसत्। अथातिचिरान्तरितोज्जयि-

---

आदि उपकरण उनके हाथोंमें थे। वह मण्डप गर्मी ऋतुके लिए पराजयका स्थान था। शीतकालका तो जैसे उद्गमस्थल था। वर्षाकालीन बादलोंका वह जैसे निवासस्थान था। सूर्यकी किरणोंका वह तिरस्कारस्थल था। सरोवरका जैसे वह हृदय था। हिमालयका जैसे सगा भाई था। जडिमा (शीतलता) का वह जैसे मूर्त रूप था। समस्त रात्रियोंका वह जैसे आवासस्थल था और दिनपर तो वह जैसे प्रबल चोट पहुँचानेवाला शत्रु था। उस स्थानकी अतिशय रमणीयताके कारण क्षुब्ध कामदेवकी सहस्रों उत्कण्ठाओंसे भीषण तथा जलधारा गिरनेकी ठंढकसे सुलगनेवाली मित्रविरहरूपी आगसे युक्त महासागरकी भाँति गम्भीर वह सारा दिन उसने एकाकी रहकर किसी-किसी तरह बड़ी कठिनाईसे अपने धैर्यरूपी नावसे पार किया। जब सायंकालके समय धूप लाल हो गयी, तब वह उस जलमंडपसे बाहर निकला। तदनन्तर मोटे गोबरसे लीपे जानेके कारण हरितवर्ण दीखनेवाले, मन्द-मन्द बहनेवाली वायुसे चञ्चल एवं श्वेत पुष्पराशिसे सुशोभित अपने डेरेके आँगनमें आ बैठा। वहाँपर उसने उन राजाओंके साथ क्षणभर वैशम्पायनके सम्बन्धमें बात की और 'रात्रिके दूसरे पहरमें ही चलना है। अतएव सेनाको तैयार करो।' सेनापतिको ऐसा आदेश देकर गगनमण्डलमें नक्षत्रोंके उदित होते ही वह सब राजाओं-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नीदर्शनोत्सुको विनापि प्रयाणनान्द्या सकल एव कटकलोकः संवृत्य प्रावर्तत गन्तुम् । आत्मनाऽप्यलब्धनिद्राविनोदोऽवतरत्येव तृतीये यामे तुरगकरिणीप्रायवाहनेनानतिबहुना राजलोकेन सह विरलकटकसंमर्दन वर्त्मनाऽवहत् । अथाध्वनैव सह क्षीणायां यामवत्यां रसातलोद्विवोन्मज्जत्सु सर्वभावेषु, उन्मीलन्तीष्विव दृष्टिषु, पुनरिवान्यथा सृज्यमाने जीवलोके, विभज्यमानेषु निम्नोन्नतेषु, विरलायमानेष्विव वनगहनेषु, संकुचत्स्विव तरुलतागुल्मेषु, गगनतलमारोहन्त्याः पदे इव बहुललाक्षारसालोहिते दिवसश्रियः, अवश्यायसेकाम्रपल्लव इवोद्भिद्यमाने पूर्वाशालतायाः, कमलिनीरागदायिनि दिवसकरबिम्बे विस्पष्टे प्रभातसमये कटकलोकेनैव सह परापतितवानुज्जयिनीम् ।

अथ दूरत एव प्रसृतिद्वन्द्वसंस्थितैश्च पुञ्ज्यमानैश्च पुञ्जितैश्चाबद्ध-

---

को विदा करके अपने डेरेमें चला गया । उधर बहुत दिनोंसे दूर रहनेके कारण उज्जयिनीको देखनेके लिए उतावले सैनिक प्रयाणदुन्दुभी बजनेके पहले ही चल देनेको उद्यत हो गये । तब चन्द्रापीड स्वयं भी बिना नींदका सुख प्राप्त किये रातका तीसरा पहर आरम्भ होते ही घोड़ों और हाथियोंकी एक छोटी-सी टुकड़ी साथ लेकर उन राजाओंके साथ ऐसी राहसे चला, जिसपर अधिक भीड़-भाड़ नहीं थी । तदनन्तर जब मार्गके साथ ही रात्रि भी क्षीण हो चली तो संसारकी सभी वस्तुयें जैसे रसातलसे उभर-उभरकर बाहर आने लगीं । आँखें जैसे विस्तार पाने लग गयीं । सांसारिक जीव जैसे अन्य प्रकारसे तैयार होने लगे । ऊबड़-खाबड़ प्रदेश अलग-अलग दिखायी देने लगे । सघन वन विरल दीखने लगे । वृक्षों और लताओंकी झाड़ियाँ जैसे सिमटने लगीं । जैसे आकाशपर चढ़ती हुई दिवसलक्ष्मीके लाक्षारससे लाल चरणसदृश एवं पालेसे सिंचित होनेके कारण पूर्वदिशास्वरूपिणी लतामें निकलनेवाले नूतन पत्तोंके समान कमलिनीको रंग देनेवाले सूर्यनारायणका बिम्ब स्पष्टरूपसे दीखने लगा और प्रातःकाल प्रकट हो गया, तभी चन्द्रापीड अपने सैनिकोंके साथ उज्जयिनी नगरीमें जा पहुँचा ।

वहाँ दूरसे ही अञ्जली बाँधकर एकत्रित तथा एकत्रित होते हुए, संघबद्ध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मण्डलैश्चोपविष्टैः वलितैश्च दत्तकतिपयशून्यपदैश्च निवर्त्यमानैश्चागच्छ-द्भिश्चोन्मुखैश्चोद्बाष्पदृष्टिभिश्च विवर्णदीनवदनैश्च महाकष्टशब्दमुखरैश्च दुःखाधिक्याहितमौनैश्च मुनिभिरपि मुमुक्षुभिरपि वीतरागैरपि निःस्पृहै-रप्युदासीनैरपि दुर्जनैरपि स्नेहपरवशैः पितृभिरिव सुहृद्भिरिव स्निग्ध-बन्धुभिरिव च नगरीनिर्गतैरार्त्याऽपृच्छ्यमानं कथ्यमानं च विचार्य-माणं चानुभाव्यमानं च वैशम्पायनवृत्तान्तमेव समन्ताच्छुश्राव। शृ-ण्वंश्च चकार चेतसि—'बाह्यस्य तावज्जनस्येयमीदृशी समवस्था किं पुन-र्येनासावङ्केन लालितः संवर्धितो वा बालचाटवोऽस्यानुभूताः। तदति-कष्टं मे वैशम्पायनेन विना तातस्य शुकनासस्याम्बाया मनोरमाया वा दर्शनम्' इत्येवं चिन्तयन्नासानिहितोद्बाष्पदृष्टसर्ववृत्तान्त एव विवेशोज्ज-यिनीम्। अवतीर्य च स राजकुलद्वारि प्रविशन्नेवार्यशुकनासभवनं सह देव्या विलासवत्या गतो राजेति शुश्राव। श्रुत्वा च निवर्त्य तत्रैव

होकर बैठे, मुड़ते, बहुतेरे शून्य पाँवोंको धरते, पीछे लौटते, आते, ऊँचा तथा नीचे मुख किये, आँखोंमें आँसू भरे, विवर्ण, दीनमुख, 'महाकष्ट' शब्द-का उच्चारण करते, दुःखाधिक्यके कारण चुप, उस नगरीमें आये हुए मुनियों, मुमुक्षुओं, वैरागियों, निःस्पृहों, उदासीनों तथा दुर्जनों तकको स्नेहपरवश होकर पिताके समान, मित्रके समान तथा स्नेही बान्धवके समान समझकर सब लोग बड़े दुःखके साथ वैशम्पायनके ही समाचार पूछते, कहते, विचार करते और चिंतन करते हुए ही उसने सब ओर सुना। सो सुनकर चन्द्रापीडने सोचा—'जब बाहरके लोगोंकी यह दशा है, तब जिसने उसको गोदमें खेलाया, पाल-पोसकर बड़ा किया और बचपनकी तोतली बोली सुनी है, उसका क्या हाल होगा? ऐसी स्थितिमें वैशम्पायनके बिना अकेले मेरा तात शुकनास तथा माता मनो-रमासे मिलना बड़ा दुखदायी होगा।' ऐसा सोचता हुआ चन्द्रापीड आँखोंमें आँसू भरे और दृष्टिको नासिकाके अग्रभागपर स्थापित करके कुछ भी नहीं देखता हुआ उज्जयिनीमें प्रविष्ट हुआ। राजद्वारपर उतरते ही उसने सुना कि महाराज महारानीके साथ आर्य शुकनासके यहाँ गये हुए हैं। यह सुनकर वह भी मुड़कर वहीं जा पहुँचा। समीप पहुँचनेपर उसने यह विलाप सुना—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगाम। गच्छंश्च समीपवर्ती 'हा वत्स वैशम्पायन, अद्यापि मदङ्कलालनोचितो बाल एवासि। कथं त्वमेकाकी व्यालशतसहस्रभीषणे निर्मानुषे तस्मिञ्शून्यारण्ये स्थितः। केन तत्रापि सर्वसत्त्वव्याघातकारिणी शरीररक्षा कृता। केन वैषम्यप्रतिपन्थिनी शरीरस्थितिः संपादिता। केन निद्रासुखदायि शयनीयमुपकल्पितम्। कस्त्वयि बुभुक्षिते तृषिते सुषुप्सति वा दुःखितो ममोत्सङ्गमुत्सृज्य। समानसुखदुःखा वधूरपि न पुत्रक, त्वयोपात्ता। आगतमात्रस्यैव ते पितरमनुज्ञाप्यात्यर्थं वधूसुखमालोकयिष्यामीति यन्मया चिन्तितं केवलं तन्मे मन्दपुण्याया न संपन्नम्। अपरं तवापि दर्शनं दुर्लभं भूतम्। वत्स, यत्र तेऽवस्थातुमभिरुचितं नयस्व तत्रैव मामपि पितरं विज्ञाप्य। त्वामपश्यन्ती न जीवामि। तात, त्वयाहं शैशवेऽपि नावमानिता, कुतस्तवेयमकपद एवेदृशी निष्ठुरता जाता। आजन्मनः प्रभृति न दृष्टमेव यस्य कुपितमाननम्, तस्य ते कुतोऽयमेवंविधो मय्यकस्मादेव कोपो यदेवं परित्यज्य स्थितोऽसि।

'हा वत्स वैशम्पायन! अभी भी तू मेरी गोदमें खेलने योग्य बालक है। किस तरह तू सैकड़ों और हजारों सर्पोंसे भरे उस मानवविहीन तथा सुनसान वनमें अकेला पड़ा होगा? वहाँपर समस्त हिंसक जन्तुओंपर अंकुश रखकर किसने तेरे प्राणोंकी रक्षा की होगी? किसने शीत-वातादि दुःखोंसे बचाते हुए तेरे शरीरको सम्हाला होगा? किसने सोनेके समय तेरे लिए सुखदायक बिछौना बिछाया होगा? मेरी गोदके सिवाय तेरे भूखे, प्यासे या निद्राकुल होनेपर कौन खिन्न होता होगा? पुत्र! सुख-दुखमें समानरूपसे साथ देनेवाली बहू भी तो तुझे अभी नहीं मिल सकी है। मैंने सोचा था कि जैसे ही तू आयेगा, तैसे ही मैं तेरे पितासे कहकर शीघ्र तेरी बहूका मुँह देखूँगी। किन्तु मुझ अभागिनीकी वह साध तो पूरी हुई ही नहीं, प्रत्युत अब तेरा ही मुँह देखना दूभर हो गया। बेटे! जहाँ तुझे रहना भाये, अपने पितासे पूछकर मुझे भी वहीं ले चल। क्योंकि तुझे देखे बिना मैं नहीं जी सकूँगी। पुत्र! बचपनमें भी कभी तूने मेरा अपमान नहीं किया था। तब इस समय एकाएक तू इतना निष्ठुर क्यों हो गया? जन्मसे लेकर मैंने कभी तेरा कुपित मुख नहीं देखा था। फिर अब तू इस तरह मुझसे रुष्ट हो तथा मुझे त्यागकर जङ्गलमें क्यों जा बैठा है?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गतोऽप्यागच्छ। शिरसा प्रसादयामि त्वाम्। कोऽपरोऽस्ति मे। देशान्तरपरिचयान्मुक्तो नामास्मासु स्नेहः। क्षणमप्यनन्तरितदर्शनस्य चन्द्रापीडस्योपरि कथं तवेदृशी निःस्नेहता जाता। तात! न भद्रकं त आपतितम्। सर्व एव सुखं स्थापनीयो गुरुजनो दुःखं स्थापितः। न जानाम्येवं कृत्वा किं त्वया प्राप्तव्यम्।' एतानि चान्यानि चान्तर्भवनगतां प्रत्यग्रतनयविरहविह्वलां स्वयं देव्या विलासवत्या संस्थाप्यमानामपि मनोरमां विप्रलपन्तीमश्रौषीत्। तेन चातिकरुणेन तत्प्रलापविषेण विह्वल इव निद्रागमेनेव घूर्णमानो निश्चेतनतामनीयत। कथंकथमपि सहजसत्त्वावष्टम्भेनैव संस्तम्भितात्मा प्रविश्य पितुरपि लज्जमानो वदनमुपदर्शयितुमधोमुख एव निस्पन्दसर्वांगेण मन्दराद्रिणेव शुकनासेन सह मथनावसानरतिमितमिव महार्णवं प्रणम्य पितरं दूरत एवोपाविशत्। उपविष्टं च तं क्षणमिव दृष्ट्वा राजाऽन्तर्बाष्पभरगद्गदेन ध्वनिनाभ्यर्णवर्ष इव

गया ही है तो अब आ जा। मैं माथा झुकाकर विनती करती हूँ। तेरे सिवाय मेरा और कौन है? ज्ञात होता है कि देशांतरका परिचय प्राप्त करके तेरा हमसे स्नेह नहीं रह गया। जिसे देखे विना तू क्षणभर भी नहीं रह सकता था, उस चंद्रापीडके लिए तू ऐसा निःस्नेही कैसे बन गया? मेरे लाल! ऐसा करके तूने ठीक नहीं किया। जिन गुरुजनोंको तुझे सुख देना चाहिए, उन्हें दुःखमें डाल दिया? मुझे नहीं मालूम कि ऐसा करके तू क्या पायेगा।' इस प्रकारकी बहुतेरी बातें कहकर अपने भवनमें विद्यमान मनोरमा पुत्रके नये वियोगसे आर्त होनेके कारण महारानी विलासवती द्वारा आश्वस्त किये जानेपर भी विलाप कर रही थी। उस परम करुणापूर्ण विलापको चंद्रापीडने सुना तो जैसे कोई विषसे विह्वल हो जाय, उसी प्रकार विह्वल होकर निद्रित व्यक्तिके समान चक्कर खाता हुआ अचेत हो गया। किंतु अपने सहज आत्मबलसे किसी तरह प्रकृतिस्थ होकर भीतर गया। वहाँ वह लज्जाके मारे पिताको भी अपना मुख नहीं दिखा पा रहा था। समस्त अवयवोंके शिथिल हो जानेके कारण वह मंदरपर्वतके सदृश शोभित शुकनासके साथ मंथनके बाद शांत क्षीरसागरके समान बैठे हुए पिताजीको प्रणाम करके थोड़ी दूरपर जा बैठा। उसके बैठ जानेपर क्षणभर उसकी ओर निहारकर आँसू उमड़ आनेके कारण गद्गद स्वरमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जलधरोऽभ्यधात्—'वत्स चन्द्रापीड, जानामि ते स्वजीवितादपि समभ्यधिकां भ्रातुरुपरि प्रीतिम् । पीडा च सुखैकहेतोर्वल्लभजनादेवासंभाव्यायासमुत्पद्यते । तथैव हि न किंचिन क्रियते । तज्जन्मनः स्नेहस्य वयसः शीलस्य श्रुतस्य गुरुजनानुशासनस्य विनयाधानस्य च सर्वस्यैवानुचितमिमं भ्रातुः सुहृदश्च ते वृत्तान्तमाकर्ण्य त्वद्दोषमाशङ्कते मे हृदयम् ।'

इत्येवंवादिनो नरपतेर्वचनमाक्षिप्य युगपच्छोकामर्षाभ्यामन्धकारिताननः प्रावृडारम्भ इव तडिल्लतादुष्प्रेक्ष्यो विस्फूर्जितेनेव स्फुरिताधरेण शुकनासोऽब्रवीत्—'देव, यदि चन्द्रमस्यूष्मा, दहने चातिशीतलत्वम्, अंशुमालिनि वा तमः, तमस्विन्यां वा दिवसः, महोदधौ वा शोषः, क्षितेरधारणं वा शेषे, परार्थानुद्यमो वा साधोः, अप्रियवचननिर्गमो वा स्वजनमुखात्संभाव्यते, ततो युवराजेऽपि दोषः । तत्किमेवमे-

---

बरसनेको उद्यत मेघके समान राजा तारापीड बोला—'वत्स चन्द्रापीड ! मैं जानता हूँ कि अपने भाई वैशम्पायनको तुम प्राणोंसे भी अधिक प्यार करते हो । किन्तु जिससे एकमात्र सुख मिलनेकी आशा हो, ऐसे प्रियजन द्वारा एकाएक यदि असम्भावित कष्ट पहुँच जाय तो बहुत दुःख होता है । ऐसी अवस्थामें प्राणी क्या नहीं कर सकता ? अतएव तुम्हारे भाई तथा मित्रके जन्म, स्नेह, अवस्था, शील, ज्ञान तथा विनयके विपरीत इस समाचारको सुनकर मुझे यह संशय होता है कि इस विषयमें तुम्हारा कोई दोष है ।'

ऐसा कहते हुए महाराजकी बातको बीच ही में काटकर शोक और क्रोध दोनोंसे एक साथ आक्रान्त होनेके कारण जिसके मुखपर अँधेरा छा गया था, ऐसा महामन्त्री शुकनास बिजलीके कारण न देखे जा सकनेवाले वर्षारम्भके समान अधरोंको कँपाता हुआ गर्जनके स्वरमें बोला—'महाराज ! यदि चन्द्रमामें गर्मी आ जाय, अग्निमें शीलता आ जाय, सूर्यमण्डलमें अन्धकार प्रविष्ट हो जाय, रात्रिमें दिन हो जाय, महासागर सूख जाय, शेषनागमें धरतीको धारण करनेकी शक्ति न रह जाय, साधु पुरुषोंमें औरोंके लिए उद्यमका अभाव हो जाय और सज्जनोंके मुखसे अप्रिय वाणी निकलने लगे, तब ऐसा हो सकता है कि युवराजमें भी कोई दोष आ जाय । सो बिना सोचे-विचारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वानिरूप्य तस्यामात्मजस्य मूढप्रकृतेर्दुर्जातस्य राजापथ्यकारिणो मातृपितृघातिनो मित्रद्रुहः कृतघ्नस्य कर्मचण्डालस्य महापातकिनः कृते कृतयुगावतारयोग्यमात्मनोऽपि गुणवन्तमत्युदारचरितं चन्द्रापीडमेवं संभावयति देवः। न ह्यतः परमपरं कष्टतमं किंचिदपि पीडाकारणम्, यद्गुणेषु वर्तमानो दोषेषु संभाव्यत इतरजनेनापि। किं पुनर्गुरुजनेन। यो गुणी गुणैरेवाराधनीयः। कस्यापरस्यात्मा गुणवाननेन ज्ञापनीयः। अपि च जन्मनः प्रभृति देवस्य देव्या विलासवत्याश्चाङ्कलालनया यो न गृहीतस्तस्य मरुत इव दुर्ग्रहप्रकृतेश्चन्द्रापीडोऽपि किं करोतु। स्वयमेवोत्पद्यन्त एवंविधाः शरीरसंभवा महाकृमयः, सर्वदोषाश्रया महाव्याधयः, अन्तर्विषा महाव्यालाः, विनाशहेतवो महोत्पाताः, भुजङ्गवृत्तयो महावातिकाः, वक्रचारिणो महाग्रहाः, तमोमयाः प्रदोषाः, मलिना-

---

उस सुकृत-दुष्कृतसे अनभिज्ञ, मूढ़ प्रकृति, दुष्ट, राजाका अहित करनेवाले, मातृपितृघाती, मित्रद्रोही, कृतघ्न, कर्मसे चाण्डाल तथा महापापी वैशम्पायनके कारण सत्ययुगमें जन्म पाने योग्य, गुणी एवं उदारचरित चन्द्रापीडके विषयमें आप ऐसी आशंका क्यों करते हैं ? यदि कोई साधारण व्यक्ति भी किसी गुणी पुरुषमें ऐसा दोष देखे तो इससे बढ़कर कष्टदायक और कोई बात नहीं हो सकती। तब यदि गुरुजन ऐसी शंका करें तो कहना ही क्या है। जो गुणी पुरुष हो, उसके गुणकी प्रशंसा करके उसे प्रसन्न करना चाहिए। वह अपनी गुणसम्पन्न आत्मा अन्य किस व्यक्तिको दिखलायेगा ? इसके अतिरिक्त जो जन्मसे महारानी विलासवती और आपकी गोदमें खेलाये जानेपर भी काबूमें नहीं आ सका, उस वायुसदृश चंचल स्वभाववाले वैशम्पायनके लिए बेचारा चन्द्रापीड कर ही क्या सकता है ? इस प्रकार शरीरसे उत्पन्न होनेवाले महाकृमि, समस्त दोषों अथवा वात-पित्तादिके प्रकोपसे भरी हुई महाव्याधियाँ, अन्दर विषसे भरे महासर्प, सर्वनाश उपस्थित करनेवाले महान् उत्पात, भुजंग (कामी अथवा टेढ़ी चाल चलनेवाला), महावातिक (पागल अथवा तेज आँधी), वक्रचारी (कुटिल चाल-चलनके अथवा अपने कक्षमें घूमनेवाले) महाग्रह (दुराग्रही अथवा आकाशचारी ग्रह) तमोमय (तमोगुणी अथवा अन्धकारमय) सन्ध्याकाल, मलिन स्वभावके कुलांगार, स्नेह (तेल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्मकाः कुलपांसवः, निःस्नेहाः खलाः, निर्लज्जाः कृपणकाः, निःसंज्ञाः पशवोऽपि च, अकाष्ठा दहनाः, निर्गुणा जालिनः, अतीर्था जलाशयाः, निर्गौरवाः खरप्रकृतयः, अशिवमूर्तयो महाविनायकाधिष्ठिताः, ये सकलङ्काः कृपाणा इव स्नेहनैव पारुष्यं लभन्ते। मलिनस्वभावाः करिकपोला इव दानेनैव मलिनतरतामापद्यन्ते। निर्वर्तयो मणिप्रदीपा इव प्रसादेनैव ज्वलन्ति। अङ्गलग्ना भुजङ्गा इव दाक्षिण्यपरिग्रहेणैवेतरे वामाः संजायन्ते। गुणमुक्ताः सायका इव सपक्षाश्रयेण फलेनैव दूरं विक्षिप्यन्ते। सरागाः पल्लवा इव दिवसारूढ्यैवापरज्यन्ते। भूतिपरामृष्टा दर्पणा इवाभिमुख्येन सर्वं प्रतीपं गृह्णन्ति। अन्तरस्वच्छवृत्तयः सलिलाशया इव गाढावगाहनेनैव कालुष्यमुपयान्ति। ये च स्निग्धेष्वपि रुक्षाः,

---

अथवा प्रेम) से हीन, खल, निर्लज्ज, कृपण, पशुकी भाँति संज्ञाशून्य, काष्ठ-विहीन अग्नि, गुण (उदारता आदि गुण अथवा रस्सी) से हीन जाल, तीर्थ (शास्त्र अथवा सीढ़ी) से हीन सरोवर, महत्त्वहीन, कर्कश स्वभाववाले, महाविनायकसे अधिष्ठित रहते हुए भी अशिवमूर्तिस्वरूप प्राणी अपने आप उत्पन्न होते हैं। वे सकलंक (बदनामीसे भरे अथवा मलयुक्त) तलवारके समान स्नेह (तेल अथवा प्रेम) से ही कठोर होते हैं। स्वभावतः मलिन गजराजके गण्डस्थलके समान दान (त्याग तथा गजमद) से वे और भी अधिक मलिन हो जाते हैं। बिना बत्तीके प्रज्वलित मणिदीपकी नाईं वे कृपासे ही प्रज्वलित होते हैं। वे शरीरमें लिपटे हुए साँपकी तरह विनीत आचरण करनेपर वाम (कुटिल) हो जाते हैं। तात्पर्य यह कि जैसे शरीरमें संलग्न एक भुजा दाहिनी होनेके कारण दूसरी स्वतः बायीं कहलाने लगती है। उसी प्रकार ये दुष्ट संपर्क रखने तथा सदाचारका बर्ताव करनेसे ही कुटिल हो जाते हैं। जैसे गुणमुक्त (प्रत्यंचासे छूटे) बाण पंखयुक्त होनेके कारण दूर चले जाते हैं। उसी प्रकार ये दुष्ट अपने पक्षवाले स्वजनोंके सहयोगसे जब अपना काम बना लेते हैं, तब उनसे दूर हो जाते हैं। लाल रंगवाले नवीन पत्तोंके समान ये दुष्ट दिन बीतनेपर बदरंग हो जाते हैं। भूतिपरामृष्ट (धनमदसे पूर्ण अथवा धूल लगे) दर्पणके समान वे समक्ष आयी हुई सभी बातोंको उलटे ही रूपमें ग्रहण करते हैं। भीतरसे गन्दे जलवाले जलाशयके सदृश ये गाढ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऋजुष्वपि वक्राः, साधुष्वप्यसाधवः, गुणवत्स्वपि दुष्टप्रकृतयः, भर्तर्यं-प्यभृत्यात्मानः रागिष्वपि क्रुद्धाः, निरीहादप्यादित्सवः, मित्रेष्वपि द्रोहिणः, विश्वस्तानामपि घातकाः, भीतेष्वपि प्रहारिणः, प्रीतिपरेष्वपि द्वेषिणः, विनीतेष्वप्युद्धताः, दयापरेष्वपि निर्दयाः, स्त्रीष्वपि शूराः, भृत्येष्वपि क्रूराः, दीनेष्वपि दारुणाः। येषां च विपरीतानां गुरव एव लघवः, नीचा एवोच्चैः, अगम्या एव गम्याः, कुदृष्टिरेव सद्दर्शनम्, अकार्यमेव कार्यम्, अन्याय एव न्यायः, अस्थितिरेव स्थितिः, अनाचार एवाचारः, अयुक्तमेव युक्तम्, अविद्यैव विद्या, अविनय एव विनयः, दौःशील्यमेव सुशीलता, अधर्म एव धर्मः, अनृतमेव सत्यम्।

येषां च क्षुद्राणां प्रज्ञा पराभिसंधानाय न ज्ञानाय, श्रुतं मायाजा-

---

अवगाहन अर्थात् ज्यादा हिलोरने अथवा अधिक परिचयसे गँदले हो जाते हैं और अपने हृदयकी कालिमा प्रकट कर देते हैं। ये लोग स्नेहियोंके साथ भी रूखा व्यवहार करते हैं। सीधे-सादे लोगोंसे भी कुटिलताका बर्ताव करते हैं। सज्जनोंके प्रति भी असज्जनता दिखाते हैं। गुणियोंको भी अपनी दुष्ट प्रकृतिका परिचय देते हैं। स्वामीके प्रति भी सेवाभावका प्रदर्शन नहीं करते। प्रेमियोंके समक्ष ये क्रुद्ध भाव प्रकट करते हैं। निरीह प्राणियोंसे भी ये कुछ पानेकी इच्छा रखते हैं। मित्रोंके साथ भी द्रोहभाव रखते हैं। विश्वासी लोगोंके साथ भी विश्वासघात करते हैं। डरे हुए लोगोंपर भी प्रहार कर देते हैं। जो इनपर प्रीति रखता है, उससे भी ये द्वेष करते हैं। विनीत व्यवहार करनेवालेके साथ भी ये उद्धत बर्ताव करते हैं। दयालुके साथ भी निर्दयताका व्यवहार करते हैं। स्त्रियोंपर ये अपनी वीरता प्रकट करते हैं। सेवकोंसे ये दुष्ट क्रूरताका व्यवहार करते हैं और गरीबोंके साथ भी कठोरताका बर्ताव करते हैं। ऐसी उलटी बुद्धिवाले लोगोंको गुरुजन ही छोटे, नीच ही ऊँचे, अगम्य ही गम्य, कुदृष्टि ही सद्दर्शन, अकार्य ही कार्य, अन्याय ही न्याय, अस्थिति ही स्थिति, अनाचार ही आचार, अयोग्य ही योग्य, अविद्या ही विद्या, अविनय ही विनय, दुःशीलता ही सुशीलता, अधर्म ही धर्म और झूठा ही सत्यके रूपमें दिखायी देता है।

ऐसे क्षुद्र लोगोंकी बुद्धि औरोंको धोखा देनेके लिए ही होती है, ज्ञाना-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लाय, पराक्रमः प्राणिनोमुपघाताय नोपकाराय, उत्साहो धनार्जनाय न यशसे, स्थैर्यं व्यसनासङ्गाय न चिरसंगताय, धनपरित्यागः कामाय न धर्माय। किं बहुना सर्वमेव येषां दोषाय न गुणाय। तदसावपीदृश एव कोऽप्यपुण्यवानुत्पन्नो यस्यैवं कुर्वतो मित्रमहं चन्द्रापीडस्य कथं तस्य द्रोहमाचरामीति नोत्पन्नं चेतसि। एवं कृते चलितवृत्तानां शासितावश्यं तारापीडो देवः पीडितान्तरात्मा मयि कोपं करिष्यतीत्येवमपि नाशङ्कितं मनसा। मातुरहमेवैको जीवितनिबन्धनम्, कथं मया विना वर्तिष्यत इत्येतस्य नृशंसस्य हृदये नापतितम्। पिण्डप्रदो वंशसंतानार्थमहमुत्पादितः पित्रा कथमनुज्ञातस्तेन सर्वपरित्यागं करोमीत्येतदपि यथाजातस्य न बुद्धौ संजातम्। तदेवमसत्पथप्रवृत्तेन नष्टात्मना सुदूरमुद्भ्रान्तेन दुर्दर्शमदृष्टं तावन्न नाम कुदृष्टिना दृष्टम्। दृष्टमपि येन न दृष्टं

र्जनके लिए नहीं। उनका शास्त्रज्ञान मायाजालके लिए होता है। पराक्रम प्राणियोंको कष्ट देनेके लिए होता है, न कि परोपकारके लिए। उनका उत्साह धनार्जनके लिए होता है, न कि यशके लिए। उनका स्थैर्य व्यसनोंमें आसक्तिके लिए होता है, न कि चिरकालकी मैत्रीके लिए। उनका धनदान इच्छापूर्तिके लिए होता है, न कि धर्मके लिए। और अधिक कहाँ तक कहा जाय, उनके सारे काम दोषवृद्धिके लिए ही होते हैं, न कि गुणसंवर्धनके लिए। उसी प्रकार यह भी कोई अपुण्यात्मा प्राणी वैशम्पायनके रूपमें मेरे घर जनमा है। जिसको ऐसा करते समय यह भी ध्यान नहीं रहा कि चन्द्रापीड मेरा मित्र है, तब मैं उसके साथ इस तरह द्रोहमय व्यवहार क्यों करता हूँ। उसे यह भी नहीं सूझा कि आचारभ्रष्ट लोगोंके लिए कठोर शासक महाराज तारापीड इस समाचारसे दुखी होकर नाराज हो जायँगे। उस क्रूरके मनमें यह विचार भी नहीं आया कि अपनी माताके जीवनका आधार एकमात्र मैं ही हूँ, मेरे बिना उसकी क्या दशा होगी। उस मूर्खकी बुद्धिमें यह बात भी नहीं आयी कि पिंडदान अथवा वंशवृद्धिके लिए जिन पिताजीने मुझे उत्पन्न किया है, उनकी अनुमति लिए बिना मैं सर्वस्वका त्याग क्यों कर रहा हूँ? सो इस प्रकार कुमार्गपर चलते हुए उस नष्टहृदय तथा कुत्सित दृष्टिवाले मूर्खने ऐसे दुर्दर्श अनिष्टकी ओर दृष्टि उठाकर देखा ही नहीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्याज्ञानतिमिरान्धस्य किं क्रियताम्। अपरमसौ तिर्यङ्महता यत्नेन शुक इव पाठितः पुष्टश्च देवेन। अथवा विनोददानात्तिरश्चामपि सफल एव शिक्षणायासो भवति। तेऽपि पोषिताः पोषितरि स्नेहमाबध्नन्ति। तेऽपि कृतं जानन्ति। तेऽपि परिचयमनुवर्तन्ते। तेषामपि सहजस्नेहो मातापित्रोरुपरि दृश्यत एव। न पुनरस्य नष्टोभयलोकस्य पापकारिणो दुर्जातस्य यस्य सर्वमेवाधस्ताद्गतम्। अपि चेदृशाचरितेन तेनाप्यवश्यमेव कस्यांचित्तिर्यग्योनौ पतितव्यं येन तावद्दुरात्मना जातेन केवलं सुखं न स्थापिताः सर्व एव वयम्। अपरमेवं दुःखार्णवे निपातिताः। सर्व एव ह्यनाक्षिप्तचेताः प्रवर्तते स्वहिताय परहिताय च। तस्य तु पुनरस्मानेवं दुःखं स्थापयतो न स्वहितं नापि च परहितम्। किमनेनैवमात्मद्रुहा कृतमिति मतिरेतावन्न बोधपदवीमवतरति। सर्वथा दुःखायैवास्माकं तस्य पापकर्मणो ग्रहोपसृष्टस्य जन्म।' इत्युक्त्वा हेमन्तकालोत्पलिनीमि-

---

सब कुछ देखकर भी जो नहीं देखता, उस अज्ञानान्धकारसे अन्धे व्यक्तिके लिए किया ही क्या जा सकता है ? और फिर उस पशुको श्रीमान्ने सुग्गेकी तरह बड़े यत्नके साथ पढ़ाया और पाला-पोसा था। भविष्यमें मन बहलाकर पक्षी भी अपने शिक्षकका परिश्रम सफल कर देते हैं। पालने-पोसनेसे वे अपने पोषणकर्तापर स्नेह भी रखते हैं। वे उपकारको समझते हैं। परिचय बढ़ जानेपर पोषकके पीछे-पीछे दौड़ते हैं। वे अपने माता-पितापर स्वाभाविक स्नेह भी करते हैं। किन्तु इहलोक तथा परलोक दोनोंको नष्ट कर देनेवाले पापी और दुर्जात वैशम्पायनमें इन गुणोंमेंसे कोई भी गुण नहीं रह गया है। और फिर जिस दुरात्माने जन्म लेकर हम सबको केवल दुःख ही दिया, ऐसे दुराचारके कारण उसे अवश्य किसी पशु-पक्षीकी योनिमें जन्म लेना पड़ेगा। क्योंकि उसने हमें महान् दुःखके समुद्रमें ढकेला है। जिसका चित्त प्रकृतिस्थ होता है, वह अपने और पराये दोनोंके हितका ध्यान रखता है। किन्तु उसने हम सबको दुःख देकर न अपना और न परायेका ही हित किया है। मेरी बुद्धि तो यही नहीं सोच पा रही है कि उस आत्मद्रोहीने यह क्या कर डाला। वह पापी और ग्रहगृहीत व्यक्ति हम सबको सर्वथा दुःख देनेके लिए ही जनमा है।' ऐसा कहकर हेमन्तकालीन कमलिनीकी भाँति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बोह्लाष्पां दृष्टिमुद्वहन्, उद्वेपिताधरश्च बहिरलब्धनिर्गमेन स्फुटन्निवान्तर्मन्युपूरेण निःश्वसन्नेवावतस्थौ।

तदवस्थं च तं तारापीडः प्रत्युवाच—'एतत्खलु प्रदीपेनाग्नेः प्रकाशनम्, वासरालोकेन भास्वतः समुद्भासनम्, अवश्यायलेशैराह्लादनममृतांशोः, मेघाम्बुबिन्दुभिरापूरणं पयोधेः, व्यजनानिलैरतिवर्धनं प्रभञ्जनस्य, यदस्मद्विधैः परिबोधनमार्यस्य। तथापि प्राज्ञस्यापि बहुश्रुतस्यापि विवेकिनोऽपि धीरस्यापि सत्त्ववतोऽप्यवश्यं दुःखातिपातेन विशुद्धमपि वर्षसलिलेन सर इव मानसं कलुषीक्रियते सर्वस्य। कलुषीकृते च मानसे किमिदमिति सर्वमेव दर्शनं नश्यति। न चित्तमालोचयति। न बुद्धिर्बुध्यते। न विवेकोऽपि निर्विनक्ति। येन ब्रवीत्यदः। मत्तो लोकवृत्तमार्य एव सुतरां वेत्ति। किमस्ति कश्चिदसावियति लोके, यस्य निर्विकारं यौवनमतिक्रान्तम्। यौवनावतारे हि शैशवेनैव सह गलति गुरु-

---

आँसूभरी आँख, क्रोधके कारण काँपते होंठ तथा बाहर निकलनेमें असमर्थ होनेपर जैसे फाड़कर निकलनेको उद्यत और क्रोधके वेगसे लम्बी-लम्बी साँसें छोड़ता हुआ शुकनास चुप हो गया।

उसकी यह अवस्था देखकर राजा तारापीडने कहा—'आप हम सबको वैसे ही समझा रहे हैं, जैसे कोई दीपकसे आगको प्रकाश प्रदान करे, प्रभातके प्रकाशसे सूर्यको दीप्तिदान दे, ओसकी कनीसे चन्द्रमाको आनन्दित करे, मेघके जलबिन्दुओंसे समुद्रको भरनेका प्रयास करे अथवा पंखेकी हवासे वायुका वेग बढ़ानेकी चेष्टा करे। बड़े-बड़े विद्वान्, बहुश्रुत, ज्ञानी, धैर्यशाली और बलवान् मनुष्यका विशुद्ध मन भी सहसा बड़ा भारी दुःख आ पड़नेपर उसी प्रकार कलुषित हो जाता है, जैसे बरसातमें सरोवरका जल मटमैला बन जाता है। मनके कलुषित हो जानेपर 'यह क्या है' यह सोचने-समझनेकी सामर्थ्य लुप्त हो जाती है। क्योंकि उस समय चित्त आलोचना नहीं करता, बुद्धिको बोध नहीं होता और विवेक विवेचना नहीं कर पाता। इसी कारण मुझे यह कहना पड़ रहा है। वैसे तो लोकाचार मेरी अपेक्षा आप कहीं अधिक जानते हैं। इस संसारमें क्या कोई ऐसा प्राणी है, जिसका यौवनकाल बिना विकारके बीता हो। यौवन आनेके समय प्राणीका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनस्नेहः। वयसैव सहारोहत्यभिनवा प्रीतिः। वक्षसैव सह विस्तीर्यते वाञ्छा। बलेनैव सहोपचीयते मदः। दोर्द्वयेनैव सह स्थूलतामापद्यते धीः। मध्येनैव सह कार्श्यमुपयाति श्रुतम्। ऊरुयुगलेनैव सहोपचीयतेऽविनयः। श्मश्रुभिरेव सहोज्जृम्भते मलिनताहेतुर्मोहः। आकारेणैव सहाविर्भवन्ति हृदयाद्विकाराः। तद्यथा धवलमपि सरागं सर्वथा दीर्घीभवदपि न दीर्घं पश्यति चक्षुः। अनुपहतेऽपि न प्रविशति गुरूपदेशः श्रोत्रे। स्त्रीरागिण्यपि न विद्याऽन्तरं विन्दति हृदये। न स्थैर्यमस्थिरप्रकृतौ तरलतायाम्। परित्याज्येषु व्यसनेष्वासङ्गेषु विकाराणां च कारणं प्रायः सरसता। सा च सर्वमेव जलप्रायं कुर्वाणा वर्षातिवृद्ध्य चोपजायते। अपि च दिवसो दोषागमाय, दोषा-

---

बाल्यभावके साथ ही गुरुजनोंपर रहनेवाला स्नेह भी चला जाता है। तरुणाईके साथ ही नयी-नयी प्रीति उत्पन्न होती है। ज्यों-ज्यों वक्षःस्थल फैलता है, त्यों-त्यों कामनायें बढ़ती हैं। ज्यों-ज्यों बल बढ़ता है, त्यों-त्यों मद बढ़ता जाता है। जैसे-जैसे भुजायें बढ़ती हैं, तैसे ही तैसे बुद्धि मोटी होती जाती है। ज्यों-ज्यों शरीरका मध्यभाग स्थूल होता है, त्यों-त्यों शास्त्रज्ञान दुर्बल होता जाता है। जैसे-जैसे जाँघें मोटी होती हैं, वैसे ही वैसे हृदयमें उजड्डता बढ़ती जाती है। मूँछोंकी बढ़तीके साथ ही मलिनताका मुख्य हेतु मोह भी बढ़ने लगता है। आकारके साथ ही हृदयमें विकार उत्पन्न हो जाते हैं। उन विकारोंसे नेत्र धवल होते हुए भी सराग (रंगीन अथवा प्रेमपूर्ण) हो जाते हैं। बड़े-बड़े नेत्र होते हुए भी वे दूर तक नहीं देख पाते। कानोंके निर्विकार रहनेपर भी उनमें गुरुजनोंका उपदेश नहीं प्रविष्ट होता। हृदय स्त्रीके अनुरागसे पूर्ण होनेपर भी उसमें विद्यारूपिणी स्त्रीके लिए अवकाश नहीं रहता। चंचल प्रकृतिकी चंचलतामें ही स्थिरता दीखती है। परित्याग करने योग्य व्यसनोंमें ही आसक्ति बढ़ती है। उस विकारोंका कारण प्रायः सरसता होती है। वह सरसता सब कुछ जलप्राय (ज्ञानशून्य अथवा जलमय) करती हुई वर्षातिवृद्धि (ज्यादा उम्र अथवा ज्यादा बरसात) से जायमान होती है। फिर दिनका आगमन होता है और उस दिनसे दोषागम (रात्रिका आगमन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गमोऽनालोकाय, अनालोकोऽप्रदर्शनार्थम्, असद्दर्शनमविवेकाय, अविवेकोऽसन्मार्गप्रवृत्तये, असन्मार्गप्रवृत्तं च मोहान्धं चेतो भ्राम्यद्वश्यमेव स्खलति। चेतसि तल्लग्ना पतत्येव लज्जा। त्रपावरणशून्ये च हृदि प्रविश्य पदं कुर्वन्केन वा विनिवारितो दुर्निवारः सर्वाविनयहेतुः कुसुमधन्वा। विलसति च कुसुममार्गणे केन कार्येण छिद्रसहस्राणि न भवन्ति, यैः सत्त्वमेवाधस्ताद्व्रजति। सत्त्वे चाधो गते किमाश्रित्य न गलति शीलम्। किमवलम्बनं विनयस्य किं करोत्वनाधारं धैर्यम्। क्व पदमाधत्तां धीः। क्व समाधानमाबध्नात्ववष्टम्भः। केन वावष्टभ्य बलान्निश्चलीकृतं मनः। विप्रतिपद्यमानानि केन नियन्त्रितानीन्द्रियाणि। जगन्निन्द्यानि केन निवारितानि दुश्चरितानि। केन वालोकभूतेन तमोभिवृद्धिहेतुरुत्सारितो दोषाभिषङ्गो दृष्टेरुपहन्ता। किं वा दृश्यतामसति बहुदर्शित्वे। बहुदर्शित्वं च तावतः कालस्यैवासंभवात्कुतो भवतु, प्रथमे

या दोषवृद्धि) तथा दोषागमसे दृष्टिकी दर्शनशक्ति लुप्त हो जाती है। वैसी स्थितिमें असद्दर्शन, असद्दर्शनसे अविवेक, अविवेकसे असत् मार्गमें प्रवृत्ति और असन्मार्गमें प्रवृत्त होनेसे मोहान्धचित्त होकर प्राणी अपने लक्ष्यसे भ्रष्ट हो जाता है। चित्तके भ्रष्ट हो जानेपर उसके साथ रहनेवाली लज्जा भाग जाती है। इस प्रकार लज्जाका परदा हट जानेपर सूने हृदयमें दुर्निवार एवं सभी अविनयोंके हेतुस्वरूप कामदेवको पैर जमानेसे कौन रोक सकता है। जब कामदेव हृदयमें डेरा डाल देता है, तब कौन-सा ऐसा काम होता है कि जिसमें हजारों छिद्र (बिल अथवा दोष) न हों। उन छिद्रोंकी राह सत्त्व नीचे गिर जाता है। जब सत्त्व नहीं रहा तो शील किसके सहारे टिककर न गिरे? जब शील चला गया, तब विनय किसके सहारे रहे और निराधार धैर्य ही क्या करे? बुद्धि कहाँ ठहरे? धैर्यावलम्बनका क्या समाधान हो? बलपूर्वक रोककर मनको कौन निश्चल कर सका है? कुराहपर दौड़ती हुई इन्द्रियोंको अपने नियंत्रणमें कौन रख सका है? संसारमें निन्दनीय दुराचारोंको कौन रोक सका है? तम (अन्धकार अथवा विवेकहीनता) की वृद्धि तथा दृष्टि (ज्ञानशक्ति अथवा आँख) नष्ट करनेवाले दोषाभिभंग (व्यसनासक्ति अथवा रात्रिसम्बन्ध) को किसने प्रकटरूपमें दूर किया है? बहुदर्शिता-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वयसि येनान्वयव्यतिरेकाभ्यां निश्चित्य वर्जयति मलिनताम्। अपि च परिणामेऽपि पुण्यवतां केषांचिदेव हि केशैः सह धवलिमानमापद्यन्ते चरितानि। तन्मोहविषयमहाहौ मदविकारगन्धमातङ्गे दुर्विलसितैकराज्ये रतिनिद्रावेश्मनि नवरागपल्लवोद्गमलीलान्तरविशेषदुश्चरितचक्रवर्तिनि तारुण्यावतारे सर्वस्यैव विषमतरविषयमार्गपतितस्य स्खलितमापतति। किमेवमार्येण लालनीयस्य पालनीयस्य शिशुजनस्योपर्यावेशो गरीयान्गृहीतः, यदनुचितमपत्यस्नेहस्याक्रोशगर्भमेवमुक्तम्। स्वप्नायमानानामपि यद्गुरूणां मुखेभ्यो निष्क्रामति शुभमशुभं वा शिशुषु तदवश्यं फलति। गुरवो हि दैवतं बालानाम्। यथैवाशिषो गुरुजनवितीर्णा वरतामापद्यन्ते, तथैवाक्रोशाः शापताम्। तद्वैशम्पायनमुद्दिश्य कोपावेशादेव सति परुषमभिदधत्यार्ये महती मे चेतसः पीडा समुत्पन्ना।

रूपी गुणके अभावमें उसको क्या दिखायी देगा? यौवनकालमें बहुदर्शित्व गुणका रहना ही असंभव है और उसके न रहनेपर अन्वय (अर्थात् एक वस्तुकी सत्तासे दूसरी वस्तुकी सत्ताको सिद्ध करना) और व्यतिरेक (अर्थात् एक वस्तुके अभावसे अन्य वस्तुका अभाव सिद्ध करना) से यह दोष है, यह नहीं है। ऐसा निर्णय करके उसका त्याग किया जाय। और फिर वृद्धावस्थामें भी कुछ ही ऐसे पुण्यात्मा हैं, जिनके केशोंकी उज्ज्वलताके साथ चरित्र भी उज्ज्वल होते हैं। सो मोहरूपी महासर्पसे पूर्ण, मन्दविकाररूपी गन्धगजयुक्त, दुराचारके साम्राज्य, रति तथा निद्राकी अभिलाषाके घर और नित्य नये अनुरागोंकी उत्पत्तिसे विलासके अन्तमें होनेवाले बड़ेसे बड़े दुराचारोंके चक्रवर्ती यौवनके आनेपर अतिशय भीषण विषयके मार्गपर उतरे हुए मनुष्य अपने लक्ष्यसे फिसल ही जाते हैं। तब लालन-पालन करने योग्य पुत्रपर आप इतने क्रुद्ध क्यों हो गये? इस प्रकार पुत्रस्नेहके विपरीत आक्रोशभरी बात आपने क्यों कही? नींदमें स्वप्नके समय भी बड़ोंके मुखसे जो भली या बुरी बात निकलती है, वह बच्चोंको अवश्य फलती है। क्योंकि गुरुजन ही बालकोंके देवता होते हैं। जैसे गुरुजनोंके दिये हुए आशीर्वाद वरदान बनते हैं, वैसे ही उनके आक्रोश शापका रूप धारण कर लिया करते हैं। अतएव वैशम्पायनके उद्देश्यसे जो अत्यन्त कठोर बातें आपने अभी कही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वयमारोपितेषु तरुषु यावदुत्पद्यते स्नेहः, किं पुनरङ्गसंभवेष्वपत्येषु। तदुत्सृज्यतामयममर्षवेगो वैशम्पायनस्योपरि। विरूपकं तु तेन न किंचिदप्याचरितम्। सर्वपरित्यागं कृत्वा स्थित इत्येदपि कारणमविज्ञाय किमेवं दोषपक्षे निक्षिपामः। कदाचिद्गुणो भवत्येवमयमविनयनिष्पन्नो दोष एव। आनीयतां तावदसौ। बुध्यामहे किमर्थमयमेवंविधस्तस्य वयसोऽनुचितोऽपि संवेग उत्पन्नः। ततो यथायुक्तं विधास्यामः।'

इत्युक्तवति तारापीडे पुनः शुकनासोऽभ्यधात्—'अत्युदारतया वत्सलत्वाच्चैवमादिशति देवः। अन्यदतः परं किमिवास्य विरूपकं भवेत्, यद्युवराजमुत्सृज्य क्षणमप्यन्यत्रावस्थानमात्मेच्छया चेष्टितम्।' इत्युक्तवति शुकनासे कशयेवान्तस्ताडितो दोषसंभावनयानया पितुरुद्वाष्पदृष्टिरुपविष्ट एवोपसृत्य चन्द्रापीडः शनैः शनैः शुकनासमवादीत्—'आर्य, यद्यपि निरुक्तितो वेद्मि न मदीयेन दोषेण नागतो वैशम्पायन

हैं, उनसे मेरे हृदयको बड़ा कष्ट हुआ है। जब अपने हाथसे लगाये गये वृक्षपर भी स्नेह होता है, तब अपने तनसे उत्पन्न पुत्रके विषयमें क्या कहना है ? इस कारण अब आप वैशम्पायनके ऊपर उपजे क्रोधको त्याग दें। उसने कोई विपरीत आचरण नहीं किया है। वह जो सर्वस्व त्याग बैठा है, इस बातका कारण समझे बिना उसे दोषी ही कैसे मान लिया जाय ? कभी-कभी अविनयसे जायमान दोष भी गुण बन जाता है। उसको यहाँ बुलाकर जाना जाय कि इस अवस्थाके लिए अनुचित ऐसा वैराग्य उसके हृदयमें क्यों उपजा। तदनन्तर जो उचित जँचेगा सो किया जायगा।

राजा तारापीडके ऐसा कहनेपर शुकनास फिर बोला—'महाराज ! अत्यधिक उदारता तथा वत्सलताके कारण ही आप ऐसा कह रहे हैं। युवराजको छोड़कर क्षणभर भी स्वेच्छया अन्यत्र रहनेसे बढ़कर और भला कौनसा विपरीत आचरण हो सकता है ?' मंत्री शुकनासकी यह बात सुन तथा पिताको अपनेपर ऐसा दोष मढ़ते देखकर जैसे हृदयपर चाबुककी मार पड़ी हो, इस प्रकार तलमलाता हुआ चन्द्रापीड आँखोंमें आँसू भरे बैठे ही बैठे तनिक आगे सरककर धीरे-धीरे शुकनाससे कहने लगा—'आर्य ! यद्यपि आपकी बातसे तो यही ज्ञात होता है कि वैशम्पायन मेरे दोषसे नहीं आया है, सो बात नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इति। तथापि तातेन संभावितमेव कस्य वापरस्य संभावना नोत्पन्ना। मिथ्यापि तत्तथा यथा गृहीतं लोकेन, विशेषतो गुरुणा। प्रसिद्धिरत्रायशसे यशसे वा दोषगुणाश्रया वाऽफलवती परत्र फलदायी कुत्रोपयुज्यते परमार्थः। तदस्या दोषसंभावनायाः प्रायश्चित्तमार्यो दापयतु मे वैशम्पायनानयनाय गमनाभ्यनुज्ञां तातेन। नान्यथा मे दोषशुद्धिर्भवति। किं कारणम्। अनागते तु वैशम्पायने तातस्यानया संभावनया नापगन्तव्यम्। अपगते च मयि वैशम्पायनेनागन्तव्यम्। यद्यसावन्येनानेतुमेव पार्येत तदा तातस्याप्यनुल्लङ्घनीयवचनैरवनिपतिसहस्रैरानीत एव स्यात्। तदार्यः कारयतु मे गमनानुज्ञया प्रसादम्। न तुरंगसैर्गच्छतो मे दृष्टायां भूमौ स्वल्पोऽपि गमनपरिक्लेशः। वैशम्पायनमादायागतमेव मामवधारयत्वार्यः। अपि च बाह्यखेदादसह्योऽन्तःखेद एवैतद्वियोगजन्मा। अनुपदमेव स्कन्धावारमादायागच्छतीत्यमुना हेतुना विना

है। तथापि पिताजीने जैसा समझा है, वैसा ही और लोगोंने भी तो समझा होगा। यद्यपि यह सच नहीं है, तो भी जो बात लोगोंने और विशेष करके गुरुजनोंने समझ रक्खी है, वही ठीक मानी जायगी। दोष या गुण ही लोकमतका आधार होता है। वस्तुतः उसीसे संसारमें भलाई या बुराईका जन्म होता है। परलोकमें फल देनेवाले परमार्थपर ध्यान ही कौन देता है। अतएव दोषकी संभावनाका प्रायश्चित्त करनेके लिए आप मुझे वैशम्पायनको ले आनेके निमित्त पिताजीसे आज्ञा दिला दीजिए। और किसी भी तरह मेरे दोषकी शुद्धि नहीं हो सकेगी। क्योंकि जबतक वैशम्पायन नहीं आयेगा, तबतक पिताजीकी आशंका नहीं दूर होगी और मेरे गये बिना वैशम्पायन नहीं आयेगा। यदि वह दूसरोंके कहनेसे आ सकता तो पिताजी भी जिनकी बात नहीं टालते, वे हजारों राजे ही उसे अपने साथ ले आये होते। अतएव आप मुझे आज्ञा दिलानेकी कृपा करिए। देखी-समझी भूमि होनेके कारण घोड़ोंकी टुकड़ीके साथ वहाँ जानेमें मुझे कुछ भी कष्ट न होगा। अतएव मेरे जाते ही आप वैशम्पायनको आया समझ लीजिए। और फिर बाहरी कष्टकी अपेक्षा उसके वियोगका मुझको असह्य आन्तरिक कष्ट हो रहा है। वह सेना लेकर मेरे पीछे ही पीछे चलकर आजायगा, यही सोचकर मैं उसको छोड़ आया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेनागतोऽहम्। अन्यथा जन्मना प्रभृति कदा मया गतं स्थितं क्रीडितं हसितं पीतमशितं सुप्तं प्रबुद्धमुच्छ्वसितं वा विना वैशम्पायनेन। यच्च श्रुत्वा तस्मादेव प्रदेशान्न गतोऽस्मि, तन्मा तैनैव तुल्योऽभूवमिति। तदप्रतिगमनदोषाद्रक्षन्तु मामार्याः।' इत्यभिहितवति चन्द्रापीडेऽन्तःपीडोपरागरक्ते रक्ततामरसानुकारिणि मुखे सपक्षपातां षट्पदावलीमिव दृष्टिं निवेश्यैवं गमनाय विज्ञापयति युवराजः। 'किमाज्ञापयति देवः' इति शनैः शनैः शुकनासो राजानमप्राक्षीत्। तथा पृष्टश्च शुकनासेन किंचिदिव ध्यात्वा तारापीडः प्रत्यवादीत्—'आर्य, मया ज्ञातमेतेष्वेव दिवसेषु संपूर्णमण्डलस्येन्दोर्ज्योत्स्नामिव करावलम्बिनीं वत्सस्य वधूं द्रक्ष्यामीति यावदयमपरोऽन्तर्हिताशापथो जलदकाल इव प्रत्यूहकारी वैशम्पायनवृत्तान्तो विलोमप्रकृतिना विधात्रान्तरा पातितः। यथा चायुष्मताऽभिहितमेवैतत्। न तमन्यः शक्नोत्यानेतुम्। न च तेन विना-

---

था। अन्यथा जन्मसे लेकर अबतक मैं उसके बिना कब कहाँ गया हूँ, कहाँ रहा हूँ, कहाँ खेला हूँ, हँसा हूँ या अकेले मैंने कहाँ कब खाया-पिया है? वैशम्पायनके बिना मैं कब कहाँ सोया हूँ, कहाँ जागा हूँ और कब मैंने अकेले साँस लिया है। उसके वैराग्यका समाचार सुनकर जो वहाँसे ही नहीं चला गया, उसका कारण यही था कि मैं भी कहीं उसीके समान न समझ लिया जाऊँ। सो आप बड़े लोग तत्काल वहाँ न जानेके दोषसे मेरी रक्षा कीजिए।' चन्द्रापीडके ऐसा कहनेपर शुकनासने आन्तरिक कष्टसे उत्पन्न लालिमाके कारण लाल कमलसरीखे दीखनेवाले मुखपर भ्रमरावलीसदृश पक्षपातपूर्ण दृष्टि करके धीरेसे कहा—'इस प्रकार युवराज जानेकी अनुमति माँग रहे हैं। महाराजकी क्या आज्ञा होती है?' शुकनासका प्रश्न सुनकर राजा तारापीडने तनिक सोचकर कहा—'आर्य! मेरी तो यह कामना थी कि इन्हीं दिनोंमें मैं पूर्णमण्डल चन्द्रमाकी चाँदनीके सदृश पुत्र चन्द्रापीडका हाथ थाम्हे पुत्रवधूका मुख देखूँगा, किन्तु मार्गको रोकनेवाली वर्षाऋतुकी भाँति कामनापूर्तिके विघ्नस्वरूप यह वैशम्पायनका समाचार प्रतिकूल प्रकृतिवाले विधाताने लाकर बीचमें डाल दिया। जैसे कि चिरंजीवी युवराजने कहा है, वह ठीक ही है। वैशम्पायनको दूसरा कोई नहीं ला सकता और यह भी उसके बिना यहाँ नहीं रह सकता।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यमत्र स्थातुम्। तदवश्यमेव तावन्निस्तरितव्यो व्यसनार्णवोऽमुना पोतेन वैशम्पायनप्रत्यानयनाय चावश्यं देव्यपि विलासवती विसर्जयिष्यत्येवैनमिति निश्चयो मे। तद्यातु। किंत्वतिदूरं वत्सेन गन्तव्यम्। तद्गणकैः सहादरादार्यो दिवसं लग्नं च गमनायास्य निरूपयतु, संविधानं च कारयतु' इत्येतदभिधाय शुकनासमुद्बाष्पलोचनश्चिरमिव चन्द्रापीडमालोक्याहूय च विनयावनम्रमंसदेशे शिरसि बाह्वोश्च पाणिना स्पृशन्नादिशत् –'वत्स, गच्छ त्वमेव प्रविश्याभ्यन्तरं मनोरमासहिताया मातुरावेदयात्मगमनवृत्तान्तम्।' इत्यादिश्य चन्द्रापीडमात्मना शुकनासमादाय स्वभवनमयासीत।

चन्द्रापीडस्तु तामक्लिष्टवर्णां कादम्बरीसंवरणस्रजमिव गमनाभ्यनुज्ञां हृदयेनोद्वहन्प्रहृष्टान्तरात्माप्यपहर्षदृष्टिः प्रविश्य कृतनमस्कारो मातुःसमीपे समुपविश्यात्मदर्शनद्विगुणीभूतवैशम्पायनविरहशोकविह्वलां मनोरमामाश्वास्यावादीत—'अम्ब, समाश्वसिहि। वैशम्पायनानयनाय

अतएव यह दुःखरूपी महासागर युवराजको ही जहाज बनाकर पार करना उचित है। देवी विलासवती भी इसे ही भेजना चाहेंगी। ऐसा मेरा निश्चय है। अतएव यह वहाँ जाय। किन्तु बच्चेको बहुत दूर जाना है, इसलिए ज्योतिषियोंसे आदरपूर्वक इसकी यात्राके लिए दिन-लग्न आदिका निरूपण करके तैयारी कराइए।' शुकनाससे ऐसा कहकर राजाने अश्रुपूर्ण नयनोंसे बड़ी देर तक चन्द्रापीडका मुख देख और विनयसे माथा झुकाकर खड़े युवराजको पास बुलाकर उसके कंधे, मस्तक तथा भुजाओंपर सस्नेह हाथ फेरते हुए राजा तारापीडने कहा—'वत्स! तू ही भीतर जाकर मनोरमासमेत अपनी माताको यात्राकी बात बता दे।' चन्द्रापीडको ऐसा आदेश दे तथा शुकनासको साथ लेकर राजा तारापीड अपने महलको चला गया।

चंद्रापीड पिताकी कोमलशब्दमयी आज्ञाको कादम्बरीकी पहनायी वरमालाके समान हृदयमें धारण करके प्रसन्नताके साथ भीतर जाते हुए भी ऊपरसे खिन्नदृष्टि ही थी। भीतर पहुँचकर उसने प्रणाम किया और मनोरमाके समीप बैठ गया। उसे देखकर मनोरमाका शोक जैसे दूना हो गया। तब वैशम्पायनके वियोगसे व्याकुल मनोरमाको आश्वासन देते हुए उसने कहा—'माताजी! आप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तातेन मे गमनमादिष्टम्। तत्कतिपयदिवसान्तरितं वैशम्पायनानन-दर्शनोत्सवमविकल्पं त्वं मामेव विसर्जय। सा त्वेवमभिहिता प्रत्युवाच—'तात, किमात्मगमनवचसा मां समाश्वासयसि। कः खलु मे त्वयि तस्मिंश्च विशेषः। तदेकधा तमेकं न पश्यामि कठिनहृदया। त्वयि पुनर्गते च दयितस्यादर्शने जीवितप्रतिबन्धहेतुभूतं त्वद्दर्शनं तदपि दूरीभवति। तन्न गन्तव्यम्। वत्स, एकेनापि हि युवयोरावां पुत्रवत्यौ द्वे अपि। नागतो नामासौ निष्ठुरात्मा' इत्युक्तवत्यां मनोरमायां विलासवती धीरमुवाच—'प्रियसखि, तत्र मम चैवमेतद्यथा त्वया प्रोक्तम्। अयं पुनर्वैशम्पायनेन विना कं पश्यतु। तदास्ताम्। किमेनं निवारयसि। वारितेनाप्यनेन नैव स्थातव्यम्। मन्ये च पित्राप्ययमेतदेवाकलय्य गमनायानुमोदितः। तद्यातु। वरमावाभ्यां कतिपयदिवसाननयोरप्यदर्शनकृतान्क्लेशाननुभूतान्न पुनरस्य वैशम्पायनानवलोकनदुःखदीनं दिने दिने वदनमीक्षितुम्। तदुत्तिष्ठ। 'गच्छावो गम-

---

धैर्य धारण करें। पिताजीने मुझे वैशम्पायनको ले आनेकी आज्ञा दे दी है। सो कुछ ही दिनोंमें होनेवाले वैशम्पायनका मुख दर्शन करनेके लिए उत्सुक मुझको आप भी सहर्ष विदा दे दें। यह सुनकर मनोरमा बोली—'वत्स! तुम अपने जानेकी बात बताकर मुझे क्यों आश्वस्त करना चाहते हो? तुममें और उसमें अन्तर ही क्या है? तुम दोनोंमेंसे एक भी रहे तो हम दोनों पुत्रवती हैं। किन्तु अभी तो वही निष्ठुर हृदय हमारे समक्ष नहीं है। तुम चले जाओगे तो तुम्हारा भी दर्शन न मिलेगा। उसके न रहनेपर तुम्हीं मेरे जीवनके सहारा हो। अतएव वत्स! तुम मत जाओ। यह भी तो हो सकता है कि तुम्हारे जानेपर भी वह निष्ठुर न आये।' मनोरमाके यह कहनेपर बड़े धैर्यके साथ विलासवतीने कहा—'प्रिय सखी! अपने और मेरे विषयमें तुमने जो कहा, वह यथार्थ है। किन्तु वैशम्पायनके अभावमें यह किसको देखे? अतएव इसे रोकनेका विचार त्याग दो। मुझे मालूम है कि रोकनेपर भी यह नहीं रुकेगा। इसके पिताने भी यही बात सोचकर जानेकी अनुमति दी होगी। अतएव इसे जाने दो। कुछ दिन हमें यदि इन दोनोंके अदर्शनका दुःख सहना पड़ जाय तो वह ठीक है, किन्तु वैशम्पायनके बिछोहमें कुम्हालाया हुआ इसका मुख सदा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नसंविधानाय वत्सस्य चन्द्रापीडस्य।' इत्यभिदधत्येव मनोरमां हस्ते गृहीत्वोत्थाय चन्द्रापीडेनानुगम्यमाना निजावासमयासीत्। चन्द्रापीडोऽपि मातुः समीपे गमनालापेनैव क्षणमिव स्थित्वा गृहमगात्। तत्र चापनीतसमायोगो गमनायोत्ताम्यता हृदयेन गणकानाहूय रहस्याज्ञापितवान्—'यथा विना परिलम्बेन मे गमनं भवति, तथा भवद्भिरार्यशुकनासाय पृच्छते ताताय वा दिनमावेदनीयम्' इति। एवमादिष्टास्ते व्यज्ञापयन्—'देव, यथा सर्व एव ग्रहाः स्थिताः, तथास्मन्मतेन देवस्य गमनमेव वर्तमाने न शस्यते। अपरमपि कर्मानुरोधाद्राजेच्छैव कालः। तत्रापि न कार्यमेवाहर्निरूपणया। राजा कालस्य कारणम्। यस्यामेव वेलायां चित्तवृत्तिः सैव वेला सर्वकार्येषु' इति विज्ञापिते मौहूर्तिकैः पुनस्तानब्रवीत्—'तातेनैवमादिष्टमिति ब्रवीमि। अन्यदत्यन्तिकेषु कार्येषु कार्यपराणां प्रतिक्षणोत्पादिषु च दिवसनिरू-

---

देखना ठीक न होगा। सो अब उठो और चलो, हम दोनों इसकी यात्रासम्बन्धी तैयारी करें।' ऐसा कहती हुई महारानी विलासवतीने मनोरमाका हाथ पकड़कर उठाया और पीछे-पीछे आते हुए चंद्रापीडके साथ अपने महलोंको चली गयी। चन्द्रापीड भी कुछ देर माताके साथ यात्रासम्बन्धी वार्तालाप करके अपने महल चला गया। वहाँ वस्त्र उतरकर यात्राके लिये उत्सुक हृदयसे उसने ज्योतिषियोंको बुलाकर एकान्तमें कहा—'आर्य शुकनास अथवा पिताजी पूछें तो आप लोग ऐसा मुहूर्त बतायें कि जिससे मेरी यात्रामें विलम्ब न हो।' ज्योतिषियोंने उत्तर दिया—'देव! इस समय जिस प्रकार आपके ग्रहोंकी स्थिति है, उसपर यदि विचार किया जाय तो हम यही परामर्श देंगे कि आपका इस समय जाना उचित नहीं है। किन्तु यदि कोई अत्यावश्यक काम आ पड़े तो राजाकी इच्छा ही शुभ मुहूर्त बन जाती है। तब कुछ देखने या पूछनेकी जरूरत ही नहीं रह जाती। क्योंकि राजा ही कालका कारण होता है। जिस समय राजाकी चित्तवृत्ति अनुकूल हो, वह समय ही सबसे उत्तम मुहूर्त होता है।' ज्योतिषियोंके यह कहनेपर उनसे चंद्रापीडने फिर कहा—'पिताजीने ही मुहूर्त पूछनेकी आज्ञा दी थी, तभी मैंने आपसे ऐसा कहा। नहीं तो प्रतिक्षण बड़े बड़े आवश्यक कार्य समक्ष आते रहनेपर कर्मठ लोगोंको मुहूर्त देखने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पणैव कीदृशी। तत्तथा कथयिष्यत तथा श्व एव मे गमनं भवेत्' इति। 'देवः प्रमाणम्' इत्यभिधाय गतेषु च तेषु शरीरस्थितिकरणायोदतिष्ठत्। निर्वर्तितशरीरस्थितिं च मौहूर्तिकास्ते पुनः प्रविश्य शनैर्न्यवेदयन्— 'कृतोऽस्माभिर्देवादेशः सिद्धश्च तनयविरहविक्लवतयार्यशुकनासस्य। तदतिक्रान्ते श्वस्तनेऽहनि रात्रावितः प्रस्थातव्यं देवेन' इत्यावेदिते तैः 'साधु कृतम्' इति मुदितचेतास्तानभिष्टुत्य दृष्टिविषयवर्तिनीमेव कादम्बरीं च वैशम्पायनं च मन्यमानोऽप्रविष्टायामेव पत्रलेखायां परापतामीत्यग्रप्रधावितेनावधारयंश्चेतसा चतुःसमुद्रसारभूतानिद्रायुधरयानुगामिनस्तुरंगमानगणेयानवगणिततुरंगमगमनखेदानुत्साहिनो राजपुत्रांश्च निरूपयन्ननन्यकर्मा तं दिवसमेकां च यामिनीं कथं कथमप्यस्थात्।

अथानुरक्तकमलिनीसमागमाप्राप्तिसंतापादिव सम दिवसेनास्त-

या दिखानेका अवसर ही कहाँ मिलता है? अतएव आप उनसे ऐसा कुछ कहिएगा कि जिससे कल ही मेरी यात्रा हो जाय।' यह सुनकर 'जैसी श्रीमान् की आज्ञा' ऐसा कहते हुए वे चले गये। उनके चले जानेपर चन्द्रापीड स्नान-भोजन आदि करनेके लिए उठा। उन कामोंसे वह ज्योंही निवृत्त हुआ, त्योंही ज्योतिषियोंने फिर आकर कहा—'हम लोगोंने आपकी आज्ञाका पालन कर दिया। पुत्रविरहसे व्याकुल आर्य शुकनासने आपकी इच्छा पूर्ण कर दी है। अतएव कल ही रात्रिके समय आप प्रस्थान कर देंगे।' यह सुनकर 'आपने बहुत अच्छा किया' ऐसा कहते हुए सहर्ष उसने उनकी प्रशंसा करके विदा किया। तदनन्तर कादम्बरी तथा वैशम्पायनको जैसे अपनी आँखोंके समक्ष उपस्थित मानता हुआ वह पत्रलेखाके पहुँचनेसे पहले ही वहाँ पहुँच जानेके लिए आकुल चित्तसे विचार करने लगा। फिर चारों समुद्रोंके सारस्वरूप इन्द्रायुधके समान वेगसे चलनेवाले घोड़ों तथा घोड़सवारीकी थकावटसे खिन्न न होनेवाले उत्साही अगणित राजपुत्रोंका निर्वाचन करता हुआ और कोई काम न होनेके कारण वह दिन एवं एक रात किसी-किसी तरह वहाँ रहा।

तदनंतर जैसे अनुरागिणी कमलिनीका मिलन न होनेसे सन्तप्त होकर दिन-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुपगतवति तेजसां पतौ, तेजःपतिपतनाच्चितानलमिव संध्यारागमपराशया सह विशति पश्चिमे गगनभागे, संध्यानलस्फुलिङ्गनिकर इव स्फुरति तारागणे, दिवसविरामान्मूर्च्छागमेनेव तमसा निमील्यमानेषु दिङ्मुखेषु, दिवसाभिमुखमुखरेषु वियद्वियोगदुःखादिव कृतान्तप्रलापेषु वयःसमूहेषु, जनितप्रकाशं जन्मैवालोक्य दोषागमं निरालोकं गर्भमिव तमःप्रविष्टे पुनर्जीवलोके, निजालोकाद्विकाशितपूर्वदिग्वधूवदने जन्मान्तरागत इवोदयगिरिवर्तिनि नक्षत्रसमागमसुखमनुभवति भगवति भूयो भूयः स्वकान्तिनिर्भराग्निष्कलङ्क इव नक्षत्रनाथे, विस्पष्टायां निशीथिन्यां प्रस्थानमङ्गले प्रणामायोपगतं चन्द्रापीडं पीडयान्तर्विलीयमानेव वाष्पोत्पीडमपारयन्ती निवारयितुमत्यायताभ्यामपि नेत्राभ्यां कृतप्रयत्नाप्यमङ्गलशङ्कया विलासवती तं मन्युरागावेगगद्गदिकोपरुध्यमानाक्षरमवादीत्—'तात, युज्यते ह्यङ्कलालितस्य गर्भरूपस्य प्रथमगमने

के साथ-साथ सूर्य अस्त हो गया। दिवापतिके पतनसे चिताकी आगके सदृश संध्याकालकी लाल पश्चिम दिशामें जब पश्चिमी आकाशका अवशिष्ट भाग भी प्रविष्ट हो गया। संध्यारूपी अग्निकी चिनगारियोंके समान जब तारे उदित होने लगे। दिनका अन्त हो जानेपर मूर्छाके आगमनकी भाँति जब अन्धकारसे सभी दिशाओंके मुख काले हो चले। जब अपने-अपने कोटरोंकी ओर जानेवाले पक्षी जैसे दिवसके वियोगसे दुखी होकर चिचियाने लगे। प्रकाश उत्पन्न करनेवाले जन्मकी भाँति संध्याकालको देखकर संसारी जीव जब प्रकाशविहीन गर्भकी तरह अन्धकारमें प्रविष्ट हो गये। जैसे जन्मान्तरमें उत्पन्न उदयाचलवर्ती चन्द्रमा अपनी असाधारण दीप्तिसे कलंकहीन सरीखा दीखता हुआ जब अपनी चाँदनीसे पूर्वदिशारूपिणी वधूका मुख प्रकाशित करके नक्षत्रोंके मिलनका सुख भोगने लगा और आधी रातका समय हुआ, तब यात्राकालीन मांगलिक प्रणाम करनेके लिए चन्द्रापीड माताके पास पहुँचा। उसे देखकर पीडासे जैसे अपने आपमें समायी जाती हो, इस प्रकार महारानी विलासवती अमङ्गलकी आशंकावश बहुत प्रयत्न करके भी विशाल नयनोंमें उमड़े हुए आँसुओंका वेग रोकनेमें असमर्थ होती हुई शोक एवं स्नेहके आवेगसे पूर्ण गद्गद कंठसे अटपटे शब्दोंमें बोली—'बेटे! गोदमें खेलाये तथा गर्भमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गरीयसी हृदयपीडा, यस्मिन्प्रथममेवाङ्कादपैति। मम पुनर्नेदृशी प्रथमगमनेऽपि ते पीडा समुत्पन्ना, यादृशी तव गमनेनाधुना। दीर्यत इव मे हृदयम्। समुत्पाट्यन्त इव मर्माणि। उत्क्वथ्यत इव शरीरम्। उत्प्लवत इव चेतः। विघटन्त इव संधिबन्धनानि। निर्यान्तीव प्राणाः। न किंचित्समादधाति धीः। सर्वमेव शून्यं पश्यामि। न पारयाम्यात्मानमिव हृदयं धारयितुम्। धृतोऽपि बलादागच्छति मे बाष्पोत्पीडो मुहुर्मुहुः। समाहितापि मङ्गलसंपादनाय ते चलति मतिः। न जानाम्येव किमुत्पश्यामीति। किंनिमित्तं चेयमीदृशी मे हृदयपीडेत्येतदपि न वेद्मि। किं बहुभ्यो दिवसेभ्यः, कथमप्यागतो मे वत्सो झटित्येव पुनर्गच्छतीति। किं वैशम्पायनवियोगादुद्विग्नस्य गमनमेकाकिनस्ते समुत्प्रेक्ष्येति। न पुनर्वैशम्पायनवृत्तान्तादात्मन एव दुःखिततयेति। न चैवंविधया पीडया वैशम्पायनानयनाय गच्छतस्ते गमनं निनिवा-

---

धारण किये हुए पुत्रकी प्रथम यात्राके समय माताके हृदयमें दारुण पीडाका होना स्वाभाविक है। किन्तु इस समय तुम्हारे जानेसे जो कष्ट हो रहा है, वैसा पहली यात्राके अवसरपर भी नहीं हुआ था। हृदय जैसे फटा जा रहा है। शरीरके मर्मस्थल जैसे किसीके द्वारा नोचे लिये जले जा रहे हैं। शरीर जैसे उबला जा रहा है। मन जैसे छलांग मारकर भाग रहा है। सन्धिबन्धन जैसे टूटे जा रहे हैं। प्राण निकले जाते हैं। बुद्धि कुछ भी समाधान नहीं कर पा रही है। मुझे सब कुछ सूना दिखायी देता है। अपने ही समान हृदयको भी सम्हालनेमें मैं असमर्थ हो रही हूँ। रोकनेपर भी बरबस आँसू उमड़े आते हैं। तुम्हारा मंगलकार्य सम्पन्न करनेके लिए बार बार स्थिर करनेपर भी मेरी बुद्धि चंचल हो उठती है। नहीं मालूम कि मैं क्या देख रही हूँ। मुझे क्यों ऐसी पीडा हो रही है, यह भी नहीं समझ पाती। बहुत समय बाद विदेशसे लौटा हुआ मेरा लाल फिर तुरन्त ही जा रहा है, यह देखकर अथवा वैशम्पायनके बिछोहसे दुखी होकर तू अकेला जा रहा है, इससे या कि वैशम्पायनका हाल सुनकर मैं स्वयं भी दुःखित हूँ, इस कारण ऐसी पीडा हो रही है। कुछ समझमें नहीं आता। ऐसी अपार पीडा होते हुए भी वैशम्पायनको लाने-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रयितुं पारयति वाणी। हृदयं पुनर्नेच्छत्येव त्वदीयं गमनम्। तदीदृशीं मे पीडां विभाव्य यथा पुरा स्थितं न तथा क्वचिदासंगमावध्यतिदीर्घ-कालमायुष्मता स्थातव्यम्। अस्य चार्थस्य कृते साञ्जलिबन्धेन शिरसाभ्यर्थये वत्सम्' इत्यादिशन्तीं स्वमातरं सुदूरं प्रसारितावनम्रमूर्तिश्चन्द्रापीडो व्यजिज्ञपत्—'अम्ब, तदा दिग्विजयप्रसङ्गात्स्थितम्। अधुना पुनरयमेव कालक्षेपो यावत्तमुद्देशं परापतामि। तत्पुनश्चिरागमकृता न भावनीया मनागपि हृदये पीडा त्वया' इत्येवं विज्ञप्ता चन्द्रापीडेन संनिरुध्योद्बाष्पवेगात्कथं कथमपि संस्तभ्यात्मानं निर्वर्तितगमनमङ्गला गलता प्रस्रवेण सिञ्चन्ती शिरसि चोपाघ्राय गाढं सुचिरमालिङ्ग्य गच्छद्भिरिव प्राणैः कृच्छ्रान्मुमोच तं माता। मुक्तश्च मात्रा पितुः प्रणतये वासभवनमगमत्। तत्र च 'देव, गमनाय नमस्करोति युवराजः' इत्यावेदिते द्वाररक्षिणा प्रविश्य क्षोणीतलनिवेशितशिरसा शयनव-

---

के लिए जाते समय तुझे रोकनेमें मेरी वाणी समर्थ नहीं हो रही है। किन्तु हृदय तुझे नहीं जाने देना चाहता। मेरी इस दारुण वेदनाको ध्यानमें रखते हुए पहलेके समान वैशम्पायनकी खोजमें ज्यादा दिन न रुक जाना। वत्स! इसके लिए मैं हाथ जोड़ तथा मस्तक नवाकर प्रार्थना कर रही हूँ।' ऐसा कहती हुई मातासे चन्द्रापीडने भलीभाँति झुककर कहा—'माँ, उस समय तो मैं दिग्विजयके कार्यसे गया था। किन्तु अब मुझे वहाँ पहुँचने भरकी देर है। अतएव अबकी बार भी मुझे आनेमें वैसी ही देर लगेगी, यह सोचकर आप तनिक भी दुःख न करिएगा।' पुत्रके ऐसा कहनेपर माताने उमड़ते आँसुओं तथा हृदयके आवेगको किसी-किसी तरह रोककर यात्राकालीन सभी मांगलिक कार्य सम्पन्न किये। तदनन्तर स्तनोंसे निकलनेवाले दूधसे अभिषेक करके उसका माथा सूँघा, बड़ी देरतक छातीसे लगाकर आलिंगन किया और जैसे शरीरसे निकले जाते हुए प्राणोंके साथ बड़ी कठिनाईसे उसे विदा किया। इस प्रकार मातासे छुटकारा पाकर पिताको प्रणाम करनेके लिए वह उसके महलोंमें गया। वहाँ 'महाराज! यात्राके लिए तैयार युवराज आपको प्रणाम कर रहे हैं।' यह बात जब द्वारपालने महाराजको बतायी, तब चंद्रापीड भीतर गया और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

र्तिनो ननाम दूरस्थित एव पितुः पादौ । अथ तथा प्रणतमालोक्य किंचिदुन्नमितपूर्वकायः शयनगत एवाहूय तं पिता चक्षुषा पिबन्निव प्रेम्णा परिष्वज्य गाढमिव सहसोद्गताविरलबाष्परयपर्याकुलाक्षोऽन्तःक्षोभावेगश्लिष्टाक्षरमवादीत्—'वत्स, पित्राहं दोषेषु संभावित इत्येषा मनागपि मनसि वत्सेन दुःखासिका न कार्या । विनयाधानात्प्रभृति सम्यक्परोक्षितोऽस्यस्माभिः । परीक्ष्य च गुणगणैरेवाधिगम्यो राज्यभारस्त्वय्यारोपितो न तनयस्नेहादेव । राज्यं हि नामैतत्पृथ्वीभारेणैवातिदुरुद्वहम् , महीभृत्संबाधतयैवातिसंकटम् , कुटिलनीतिप्रचारेणैवातिदुःसंचारम् , चतुःसमुद्रव्याप्त्यैवातिमहत् , महासाधनप्रसाध्यतयैवातिदुःसाध्यम् , अपर्यवसानकार्यतन्त्रजालेनैवातिगहनम्, उत्तुङ्गवंशप्रतिष्ठिततयैवातिदुरारोहम् , अहितसहस्रोद्धरणेनैवातिदुरुद्धरम् , अपि च समवृत्तितयैवातिविषमम् ,

---

दूर ही से धरतीपर माथा टेककर पिताके चरणोंकी वन्दना की। इस प्रकार उसे प्रणाम करते देख बिछौनेपर ही अपने शरीरका ऊपरी भाग ऊँचा करके पास बुलाया। फिर जैसे आँखोंसे उसे पीते हुए राजाने बड़े प्रेमसे लपटाकर गाढ़ आलिंगन किया और सहसा उमड़े अविरल आँसुओंके वेगसे व्याकुल आँखों तथा आन्तरिक क्षोभसे गला रुँध जानेके कारण लटपटाती वाणीमें कहा—'वत्स ! इस पिताने तुममें दोष देखा है, यह सोचकर मनमें तनिक भी दुःख न मानना। जब तुम्हारी शिक्षा पूरी हुई, तभीसे मैंने तुम्हारी भलीभाँति परीक्षा कर ली है। परीक्षा करके ही केवल गुणगणोंसे प्राप्य राज्यका भार मैंने तुम्हारे ऊपर रक्खा है। केवल पुत्रके स्नेहवश ऐसा नहीं किया है। राज्य पृथिवीके भारसे ही बड़ी कठिनाईसे ढोया जानेवाला बोझा है। राजाओं अथवा पर्वतोंकी संकीर्णताके कारण इसमें बड़े-बड़े संकट हैं। चारों ओर कुटिल नीतिका संचार होनेके कारण बड़े कष्टसे इसका व्यवहार चलता हैं। चारों समुद्रों तक व्याप्त होनेसे राज्य बहुत विस्तृत दीखता है। इसके रक्षार्थ बड़ी-बड़ी सेनाको वशमें रखना पड़ता है, जो बड़ा कठिन काम है। कभी भी समाप्त न होनेवाले कामोंकी चिन्ताका जाल बड़ा गहन होता है। बड़े उच्च वंश (खानदान तथा बाँस) में प्रतिष्ठित होनेसे यह अतिशय दुरारोह होता है। हजारों शत्रुओंका उन्मूलन करना ही बड़ा दुर्धर्ष काम है। समवृत्तिता अर्थात् सबके साथ समान व्यवहार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनेकतीर्थकल्पनयैव दुरवतारम्, कण्टकशोधनेनैव दुर्ग्रहम्, अखिलप्रजापालनव्यवहारेणैव दुष्पालम्, नाविक्रान्ते नामहोत्साहे नाप्रियवादिनि नासत्यसंधे नाप्राज्ञे नाविवेकिनि नाकृतज्ञे नानुदारव्यवहृतौ नासंविभागशीले नान्यायवर्तिनि नाधर्मरुचौ नाशास्त्रव्यवहारिणि नाशरण्ये नाब्रह्मण्ये नाकृपालौ नामित्रवत्सले नावश्यात्मनि नानिर्जितेन्द्रिये नासेवके पदमेवादधाति। यः खलु समग्रैर्गुणैराकृष्य बलात्प्रतिबन्धमस्य चञ्चलप्रकृतेः कर्तुं समर्थः, तत्रास्ते। गुरवोऽप्यपगतस्खलितभीतयस्तत्रैव समारोपयन्त्येतदालोचितपरावराः। तदनेनैव बोद्धव्यमिदं वत्सेन नास्ति मयि दोष इति। अपि च संप्रति कस्मिन्भारसवद्विष्याणुमपि दोषमाचरसि। त्वयैव सकललोकानुरञ्जने यतितव्यम्। गतः खलु कालोऽस्माकम्। अस्माभिरस्खलितैश्चिरं पदे स्थितम्। न पीडिताः

करना हीं बड़ा भीषण कार्य है। अनेक तीर्थों (सीढ़ियों अथवा उपायों) की कल्पनासे उसमें उतरना बड़ा कठिन काम होता है। कण्टकों (शत्रुओं अथवा काँटों) को साफ करना ही दुर्ग्रह काम है। समग्र प्रजाके पालनरूपी व्यवहारसे उस राज्यकी रक्षा करना ही कठिन काम है। समस्त आशाओंकी पूर्ति ही दुष्प्राप्य होती है। असाधारण बलसे हीन, चंचल प्रकृति, महान् उत्साहसे रहित, अप्रियभाषी, असत्यसन्ध, बुद्धिहीन, अविवेकी, अकृतज्ञ, उदारताविहीन, जो अधिकारियोंको समय-समयपर उचित पुरस्कार न देता हो, अन्यायी, धर्मसे विमुख, शास्त्रोक्त व्यवहारसे हीन, शरणदानसे पराङ्मुख, भक्तिहीन, कृपासे विहीन, मित्रवात्सल्यसे रहित, अपने आपको काबूमें न रखनेवाला, अजितेन्द्रिय और सेवाभावसे हीन व्यक्तिके पास राज्य किसी प्रकार नहीं रहता। जो उपर्युक्त सभी गुणोंके द्वारा बलपूर्वक खींचकर इस चंचल प्रकृतिवाले राज्यपर नियंत्रण रखने समर्थ होता है, उसीके पास यह टिकता है। गुरुजन भी पूर्वापरसम्बन्धका विचार करके पतनके भयसे निर्भीक होकर इन गुणोंसे सम्पन्न व्यक्तिको ही यह भार सौंपते हैं। अतएव हे वत्स! तुम्हें यह सोचना चाहिए कि मेरेमें कोई ऐब नहीं है। और फिर अब तुम किसपर यह भार डालकर अणु बराबर भी दोष करोगे? अब तुम्हें ऐसा कुछ करना चाहिए कि जिससे सब लोग प्रसन्न रहें। हमारा जमाना तो बीत गया। हम तो बिना अपने धर्मसे डग-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रजा लोभेन। नोद्वेजिता गुरवोऽमानेन। न विमुखिताः सन्तो मदेन। नोत्त्रासिताः प्राणिनः क्रोधेन। न हासित आत्मा हर्षेण। न हतः परलोकः कामेन। न राजधर्मोऽनिरुद्धः स्वरुच्या। वृद्धाः समासेविता न व्यसनानि। सतां चरितान्यनुवर्तितानि नेन्द्रियाणि। धनुरवनामितं न मनः। वृत्तं रक्षितं न शरीरम्। वाक्याद्भीतं न मरणात्। उपभुक्तानि सुरलोकदुर्लभानि सर्वविषयोपभोगसुखानि यौवनेच्छया पर्याप्तमकार्यपरिहारात्। कार्यानुष्ठानाच्चोपार्जितः परोऽपि लोकः। चेतसि मे त्वज्जन्मना च कृतार्थ एवास्मि। तदयमेव मे मनोरथः। दारपरिग्रहात्प्रतिष्ठिते त्वयि सकलमेव मे राज्यभारमारोप्य जन्मनिर्वाहलघुना हृदयेन पूर्वराजर्षिगतं पन्थानमनुयास्यामिति। अस्य च मेऽतर्कितमेवायमग्रतः प्रतिरोधको वैशम्पायनवृत्तान्तः स्थितः। मन्ये च न संपत्तव्यमेवानेन। अन्यथा क्व वैशम्पा-

---

मगाये बहुत समय तक राज्यको सम्हाले रहे। हमने कभी लोभवश प्रजाको नहीं सताया। अपमान करके गुरुजनोंको कभी उद्विग्न नहीं किया। अभिमानसे सज्जनोंको विमुख नहीं किया। क्रोधसे प्राणियोंको त्रास नहीं दिया। हर्षातिरेकसे मैंने जगहँसाई नहीं होने दी। कामनाकी पूर्तिके लिए मैंने अपना परलोक नहीं बिगाड़ा। सदा राजधर्मका सम्मान करते हुए अपनी रुचिकी उपेक्षा की। सदा वृद्धजनोंकी सेवा की। व्यसनोंको प्रश्रय नहीं दिया। सदा सज्जनोंके चरित्रका अनुसरण किया, इन्द्रियोंका नहीं। डोरी चढ़ानेके लिए धनुषको ही झुकाया, मनको नहीं। सदा सदाचारकी रक्षा की, शरीरकी नहीं। सदा बदनामीसे डरा, मरणसे नहीं। देवताओंके लिए भी दुर्लभ भोगोंको भोगा। कुकृत्योंको त्याग तथा यौवनका सुख भोगकर आत्माको तृप्त किया। अपने कर्तव्यका पालन करके अपना परलोक भी बनाया। तुम्हारे जन्मसे ही मैं अपनेको कृतार्थ समझता हूँ। अब एकमात्र यही अभिलाषा रह गयी थी कि तुम्हारा विवाह हो जाय और मैं राज्यका सारा भार तुम्हें सौंप तथा जीवनका कर्तव्य पूर्ण कर लेनेके कारण हल्के हृदयसे अपने पूर्वज राजर्षियोंके मार्गका अनुसरण करूँ। किन्तु सहसा यह वैशम्पायनका वृत्तान्त विघ्न बनकर आगे आ उपस्थित हुआ। इससे ज्ञात होता है कि मेरी अन्तिम इच्छा न पूर्ण होगी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यनः क्व चैवंविधमस्य स्वप्नेऽप्यसंभावनीयं समाचेष्टितम्। तद्गतेनापि तथा कर्तव्यं वत्सेन, यथा न चिरकालमेव मे मनोरथोऽन्तर्हृदय एव विपरिवर्तेत' इत्यभिधाय किंचिदुत्तानितेन मुखेनैव संपीडितं हृदयमिव ताम्बूलमर्पयित्वा व्यसर्जयत्।

चन्द्रापीडस्तु तया पितुः संभावनया सुदूरमुन्नमितोऽप्यवनम्रतरमूर्तिरुपसृत्य पुनः प्रणामेनोन्नमितात्मा निर्ययौ निर्गत्य च शुकनासभवनमयासीत्। तत्र च तनयचिन्तापरीतमुन्मुक्तमिवेन्द्रियैः शून्यशरीरं शुकनासमवारिताश्रुपातोपहतमुखीं च मनोरमां प्रणम्य तादृशाभ्यामेव ताभ्यां संभाव्याशिषा समारोपयद्भ्यामिव स्वदुःखभारमनुगतो निवर्तनाय तयोर्निवर्तिताननो मुहुर्मुहुर्द्वारनिर्गतं गत्वाऽग्रतो ढौकितमपि कृतापसर्पणमकृतहर्षहेषारवमनुत्कर्णकोषमसुखस्वनसमनस्कमनाविष्कृतगमनोत्साहं दीनमिन्द्रायुधमालोक्यापि पुनर्निवारणाशङ्कया वैशम्पायनावलो-

---

नहीं तो कहाँ वैशम्पायन और कहाँ उसका यह स्वप्नमें भी असम्भव कार्य। अतएव वत्स! वहाँ जाकर भी ऐसा कुछ करना कि जिससे मेरी कामना मेरे मनमें ही चक्कर न काटती रहे।' ऐसा कह और मुँह ऊपर उठाये ही लपेटे हुए हृदयके समान पानका बीड़ा देकर उसे विदा किया।

अपने पिताके द्वारा ऐसा सम्मान पाकर स्वतः उन्नत होता हुआ भी चंद्रापीड पुनः प्रणाम करनेसे उन्नततर होकर निकला। वहाँसे वह सीधे शुकनासकी कोठीपर गया। वहाँ पुत्रकी चिन्तासे विकल, जैसे समस्त इन्द्रियोंसे उन्मुक्त एवं उत्साहहीन शरीरवाले मंत्री शुकनास तथा सतत अश्रुपातसे उदासमुखी मनोरमाको उसने प्रणाम किया। उन दोनोंके द्वारा भी उसी तरह आशीष तथा सम्मानके साथ उनके दुःखका भार भी प्राप्त करके बाहर निकला। वे दोनों द्वारतक उसे पहुँचाने आये। उनको लौटानेके निमित्त बार बार मुँह फेरकर वह आगे बढ़ गया। वहाँ खींचकर आगे लानेपर भी दीनमुख इन्द्रायुध पीछेकी ओर सरका जाता था। वह बार बार हिनहिनाता हुआ कान ऊपर नहीं करता था। उसके मुँहसे निकलनेवाले शब्द अच्छे नहीं थे। विमनस्कभावसे वह एक-एक पग आगे बढ़ाता था। इस प्रकार यात्राके प्रति तनिक भी उत्साह न दिखानेवाले म्लानमुख इन्द्रायुधको देखकर भी कहीं कोई जानेसे फिर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कनत्वरया कादम्बरीसमागमौत्सुक्येन चाकृतपरिलम्बो मनागप्यारुह्य रथेनैव निरगान्नगर्याः । निर्गत्य च सिप्राप्रटे तत्प्रस्थानमङ्गलावस्थानायोपकल्पितं कायमानमप्रविश्य 'बहिरेव गता युवराज' इति जनितकलकलेनातर्किततत्कालगमनसंभ्रान्तेन परिजनेन राजपुत्रलोकेन चेतस्ततो धावताऽनुगम्यमानो गव्यूतित्रितयमिव गत्वा सुलभपयोयवसे प्रदेशे निवासमकल्पयत् । उत्ताम्यता हृदयेनाप्रभातायामेव यामिन्यामुत्थाय पुनरवहन् । वहंश्च तस्मादेव वासरादारभ्यैवमचेतित एव परापत्य कृतापक्रान्तेस्त्रपया पृष्ठतोऽनुगस्य बलाद्दत्तकण्ठग्रहः 'क्व परं पलाय्यत' इति वैशम्पायनस्य वैलक्ष्यमपयामि, एवं तत्समागमसुखमनुभूय निष्कारणप्रसन्नमनघामतर्कितोपनतमद्वलोकनोपजातहर्षविशेषां पुरस्ताद्गमनसिद्धये पुनर्महाश्वेतां पश्यामि, एवं महाश्वेताश्रमसमीपे पुनः स्थापिताशेषतुरगसैन्यस्तया सहैव हेमकूटं गच्छामि, एवं तत्र मत्प्रत्य-

---

न रोक दे, इस आशंकासे और वैशम्पायनको शीघ्र देखने तथा कादम्बरीसे मिलनेकी उत्सुकताके कारण तनिक भी देर किये बिना वह घोड़ेपर सवार होकर तुरन्त नगरीके बाहर हो गया। वहाँसे चलकर सिप्रा नदीके तटपर प्रास्थानिक मंगलमय कार्य सम्पन्न करनेके निमित्त लगाये गये खेमेमें प्रवेश किये बिना ही वह आगे बढ़ गया। तब 'बाहर ही बाहर युवराज आगे बढ़ गये' कहकर कोलाहल करते हुए इस प्रकार अतर्कित भावसे उसके चले जानेके कारण चकित परिजन तथा अन्यान्य राजपुत्र भी इधर-उधरसे दौड़कर उसके साथ हो लिये। इस तरह उस स्थानसे तीन कोस आगे जाकर जहाँ घास और पानीका सुपास था, ऐसी जगह पड़ाव डाला । हार्दिक उतावलेपनके कारण वह काफी रात रहते ही उठकर फिर चल पड़ा । चलते-चलते मार्गमें वह सोचने लगा—'मैं वहाँ अचानक पहुँचकर लज्जासे भागते हुए वैशम्पायनको पीछेसे पकड़ तथा छातीसे लगाकर कहूँगा कि 'अब भागकर कहाँ जाओगे ?'। इसके बाद उसकी व्यग्रता दूर करके उसके समागमका आनन्द लूँगा । तदनन्तर अकारण प्रसन्न निष्कल्मषमयी तथा सहसा मेरे पहुँच जानेसे प्रसन्न महाश्वेतासे फिर मिलूँगा कि जिससे आगे जानेका मार्ग प्रशस्त हो । तब महाश्वेताके आश्रमपर सारी सेना और घोड़ोंको छोड़कर उसीके साथ हेमकूट जाऊँगा । वहाँ पहुँचूँगा तो मुझे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिज्ञानसंभ्रमप्रधावितेनेतस्ततः कादम्बरीपरिजनेन प्रणम्यमानः प्रविश्य मदागमननिवेदनोत्फुल्लनयनेन सखीजनेनापह्रियमाणपूर्णपात्राम् 'क्वासौ, केन कथितम्, कियद्दूरे वर्तते' इति मत्प्रश्नोन्मुखीम्, तत्क्षणोत्पन्नया तापोपशान्त्या त्रपया च युगपदुरसि निहितं पद्मिनीपत्रमपनीयोत्तरीयांशुकाञ्चलं कुचावरणतामुपनयन्तीम्, आभरणतां नीतानि कमलिनीमृणालान्यपास्य भूषणेभ्योऽधिकां स्वशरीरशोभामेव सर्वाभरणस्थानेषु धारयन्तीम्, तापोपशमार्पितहारमात्राभरणाम्, अत्युल्बणहरिचन्दनचर्चान्तरितलावण्यशोभीन्यङ्गानि करपरामर्शप्रयत्नेन दर्शनीयततरतां नयन्तीम्, अङ्गलग्नानि शयनीयकृतकमलकुमुदकुवलयकिञ्जल्कशकलानि पुलकोद्गमेनैवापास्यन्तीम्, कपोलसङ्गिनीं च मणिदर्पणे विलोक्यायथास्थितां करेण कवरीमंसदेशे निवेशयन्तीम्, आनन्दजन्मना नेत्रपुटावर्जितेन बाष्पसलिलेनैव मकरध्वजानलसंतापाय जलाञ्जलिमिव प्रयच्छन्तीम्, उत्सृष्टशेषेणाश्यानमलयजरसेनैवाङ्गलग्नेन भस्मनेव

पहचानकर इधर-उधरसे दौड़ी तथा घबड़ायी हुई कादम्बरीकी सखियाँ प्रणाम करेंगी। तब मैं महलके भीतर जाऊँगा और उसकी सखियाँ विकसित नयनों से मेरे आगमनको सूचना देकर इनाम लेंगी। फिर 'वे कहाँ हैं ? किसने कहा ? अभी कितनी दूरीपर हैं ?' इस प्रकारके अनेक प्रश्न एक साथ करती हुई वे उस समय उत्पन्न तापशान्तिसे लज्जावश छातीपर रक्खा कमलपत्र हटाकर दुपट्टेसे अपने स्तन ढँकने लगेंगी। गहनोंकी जगह विद्यमान मृणाल हटाकर आभूषणोंसे भी ज्यादा अपने शरीरकी स्वाभाविक शोभाको ही सब अलंकारोंके रूपमें धारण कर लेंगी। तापशान्तिके लिए वे केवल एक हार पहने रहेंगी। गहरा गाढ़ा हरिचन्दन लगाये रहनेसे उनके शरीरकी कान्ति फीकी पड़ गयी होगी। अतएव उसे अपने हाथसे मलकर छुड़ाती हुई वे अपनी दीप्ति निखारती रहेंगी। शय्यापर बिछे कमल, कुमुद और कुवलयके पत्ते तथा अंगमें चिपटे केसरके टुकड़ोंको वे अपनी पुलकावलीसे ही दूर करती रहेंगी। कपोलपर छितराये हुए केशोंको दर्पणमें देखकर वे अपने हाथों कंधेपर रखती रहेंगी। मिलनके आनन्दसे जायमान आँसुओंको वे पलकोंमें संचित करके उसी जलसे कामाग्निके सन्तापको जैसे जलाञ्जलि देती रहेंगी। छुड़ानेपर भी बाकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मदनहुतभुजो निवृत्तिमावेदयन्तीम्, अभ्युत्थानप्रसङ्गेनैव कुसुमशय्यां दूरीकुर्वन्तीं कादम्बरीमालोकयन्दर्शनीयावलोकनफलेन चक्षुषी कृतार्थतां नयामि, एवं मदलेखां साञ्जलिप्रणामेन कण्ठग्रहेण संभाव्य चरणपतितां पत्रलेखामुत्थाप्य केयूरकं पुनः पुनः परिष्वज्य निर्भरमेवं महाश्वेतोपपादितोद्वाहमङ्गलत्वरितसखीवृन्दनिर्वर्तितवैवाहिकस्नानमङ्गलविधिर्भुव इव वर्षाभिषिक्तायाः करग्रहणं देव्या निर्वर्तयामि, एवमतिबहलकुङ्कुमकुसुमधूपानुलेपनामोदोद्दीपितहृदयजन्मनि वासभवने शयनवर्तिनो मम समीपमुपविश्य क्षणमपि कृतनर्मालापायां निर्गतायां मदलेखायां त्रपावनम्रमुखीमनिच्छन्तीं किल बलाद्दोर्भ्यामादाय शयनीयं शयनीयादङ्कमङ्काच्च हृदयं देवीं कादम्बरीमारोपयामि, एवमुद्धतनीवीग्रन्थिदृढतरार्पितपाणिद्वयायास्त्रपानिमीलितलोचने चुम्बनवञ्चितात्माऽचिराद्भवामि, एवं सुरैरपि दुर्लभं तदधरामृतमातृप्तेर्निपीयं सुजीवितमात्मानं करोमि,

---

बचे शरीरमें भस्मसदृश लगे चन्दनसे ही वे कामाग्निके बुझ जानेकी सूचना देती रहेंगी। उठकर मेरा स्वागत करनेके बहाने देवी कादम्बरीको शय्या छोड़ती देखकर मैं सभी दर्शनीय वस्तुओंके दर्शनका फल देकर इन नयनोंको कृतकृत्य कर दूँगा। तदनन्तर प्रणाम तथा कंठग्रहणपूर्वक आलिंगनसे सम्मानित करके चरणोंमें गिरी पत्रलेखाको उठाऊँगा। तत्पश्चात् केयूरकको गले लगाकर पुनः पुन गाढ़ आलिंगन करूँगा। तबतक महाश्वेता मेरे विवाहकी सारी मांगलिक क्रिया पूर्ण कर लेगी और अन्यान्य सखियाँ वैवाहिक स्नानका मंगलकार्य संपन्न करेंगी। तदनन्तर मैं वर्षासे भींगी धरतीकी भाँति देवी कादम्बरीका पाणिग्रहण करूँगा। इसके बाद अत्यधिक केसर, पुष्प, धूप तथा उबटनकी सुगन्धिसे सुगन्धित एवं कामोद्दीपक महलमें सुंदर शय्यापर बैठूँगा। उस समय मदलेखा मेरे पास क्षणभर बैठकर हँसी-मजाककी बात करेगी और फिर उठकर अपने आप चली जायगी। तदनन्तर लज्जासे मुँह झुकाकर बैठी कादम्बरीको उसकी इच्छा न होनेपर भी मैं दोनों भुजाओंमें कसकर पलंगपर ले जाऊँगा। फिर शय्यासे गोद और गोदसे उठाकर उसे मैं अपने हृदयके पास ले आऊँगा। तब खूब कसकर बँधी नीविग्रंथिको अपने मजबूत हाथोंसे खोल डालूँगा। तदनन्तर देवताओंको भी दुर्लभ उसका अधरामृत खूब जीभर पीकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवमतिकोमलतयान्तर्विलीय विशन्त्या इवाङ्गं गाढालिङ्गनसुखरसभरेण मकरध्वजानलदग्धशेषं निर्वापयामि शरीरम्. एवं परवत्यपि स्वेच्छा-प्रवृत्तयेव निष्प्रयत्नयाप्यभियुञ्जानयेवापसर्पन्त्यापि कृतात्मार्पणयेव सङ्गोपितसर्वाङ्ग्याप्युपदर्शितभावयेव देव्या कादम्बर्या सह तत् न किमपि सर्वजनसुलभमपि योगैकगम्यम्, स्पर्शविषयमपि हृदयग्राहि, मोहनमपि प्रसादनमिन्द्रियाणाम्, उद्दीपनमपि मदनहुतभुजो निर्वृति-करम्, उपाहितसर्वाङ्गस्वेदमप्याह्लादकरम्, उपजनितविषमोच्छ्वासश्र-मस्वेदमपि ससीत्कारपुलकजननम्, अनुभूयमानमप्युत्पादितानुभूय-मानस्पृहम्, सहस्रवारानुभूतमप्यपुनरुक्तम्, अतिस्पष्टमप्यनिर्दिश्य-स्वरूपम्, अचिन्त्यमसमासङ्गमतुलस्पर्शमनुपमरसमनाख्येयप्रीतिकरं परमध्यानसहस्राधिगतं निर्वाणमिवापरप्रकारं सुरताख्यं सुखान्तरमनु-

---

मैं अपना जीवन सफल कर लूँगा। अतिशय कोमलताके कारण जैसे अपने आपमें समायी जा रही हो, ऐसी अपनी प्रियतमाके कामानलमें जलनेसे अव-शिष्ट शरीरको गाढ़ आलिंगनके सुखरूपी रससे सींचकर शांत करूँगा। इस प्रकार पराधीन होती हुई भी जैसे स्वेच्छानुसार सब काम कर रही हो। किसी तरहका यत्न न करती हुई भी जैसे प्रयत्न कर रही हो। पीछेकी ओर सरकती हुई भी मानो आगे बढ़ रही हो। अपने समस्त अंगोंको समेटती हुई भी जसे इसी बहाने अपना अभिप्राय प्रकट कर रही हो। इस प्रकारकी कादम्बरीके साथ मैं सर्वजनसुलभ होनेपर भी केवल योग अर्थात् संयोग अथवा चित्तवृत्तिके निरोधसे प्राप्त होने योग्य, एकमात्र स्पर्शका विषय होनेपर भी हृदयग्राही, मोहित करने-वाला होता हुआ भी इन्द्रियोंको आनंददायक, कामाग्निका उद्दीपक होता हुआ भी निवृत्तिकारक, सब अङ्गोंमें पसीना लाता हुआ भी सुखदायी, भीषण उच्छ्वासके श्रमसे पसीना उत्पन्न करता हुआ भी सीत्कारके साथ रोमांचकारी, पुनः पुनः अनुभवमें आता हुआ भी फिर फिर अनुभवकी आकांक्षाको जाग्रत करनेवाला, सहस्रों बार अनुभूत होनेपर भी सदा नवीन जँचनेवाला, अतिशय स्पष्ट होते हुए भी अवर्णनीय रूप-रेखायुक्त, अचिन्त्य, सम्बन्धहीन, अनुपम स्पर्शयुक्त, सर्वश्रेष्ठ रस, अवर्णनीय प्रीति उत्पन्न करनेवाला, हजारों परम ध्यान अर्थात् उत्कट लालसा अथवा ईश्वरचिंतनसे प्राप्य तथा एक अन्य प्रकारके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूय निमेषमप्यकृतविरहस्तया सह तेषु तेषु रम्येषूद्देशेषु रममाणः स्वभावरम्यमपि रमणीयतरतां यौवनमुपनयामि, एवमुत्पन्नविश्रम्भां देवीमेवाभ्यर्थ्य वैशम्पायनस्यापि मदलेखया सह घटनां कारयामि' इत्येतानि चान्यानि च चिन्तयन्नचेतितक्षुत्पिपासातपश्रमोज्जागरव्यथो दिवारात्रौ चावहत्।

एवं च वहतोऽप्यस्य दवीयस्तयाध्वनोऽर्धपथ एव कालसर्पो वर्त्मनः, प्रबलपङ्को ग्रीष्मस्य, निशागमो गभस्तिमतः, स्वर्भानुरमृतदीधितेः, धूमोद्गमो वज्रानलस्फुरितानाम्, मदागमो मकरध्वजकुञ्जरस्य, मरणान्धतमसप्रवेशो विरहातुराणाम्, अमोघकालपाशवागुरोत्कण्ठितकामिहरिणानाम्, अभेद्यलोहार्गलदण्डो दिग्वारणानाम्, अच्छेद्यहिञ्जीरश्च-

---

मोक्षसुखस्वरूप सुरतका सुख भोगूँगा। उसके बाद पलभरके लिए भी उनसे अलग न होता हुआ उन्हींके साथ विविध रमणीक स्थानोंमें विहार करके अपने स्वभावतः सुन्दर यौवनको और भी सुन्दर बनाऊँगा। इस प्रकार देवी कादम्बरीका पूर्ण विश्वास प्राप्त करनेके बाद उन्हींसे कहकर वैशम्पायनका मदलेखाके साथ विवाह करा दूँगा।' इन्हें तथा ऐसी-ऐसी बहुतेरी बातें सोचता हुआ चन्द्रापीड भूख, प्यास, धूप तथा जागरणकी व्यथा तकको भी कुछ नहीं समझता हुआ रात-दिन बराबर चलता ही रहा।

इस तरह बराबर चलते रहनेपर भी मार्ग बहुत लम्बा होनेके कारण वह आधा रास्ता पार कर सका था कि इतनेमें बरसात आ गयी, जो उसकी द्रुतगतिमें बाधक सिद्ध हुई। जैसे काला सर्प मार्ग रोक ले, उसी तरह वर्षाकालने रास्ता रोककर उसे आगे बढ़नेसे रोक दिया। वह वर्षाकाल प्रबल पंककी तरह ग्रीष्मऋतुको नष्ट कर देता है। वह निशाके आगमनकी भाँति सूर्यको अलक्षित कर देता है। चन्द्रमाको वह राहुकी तरह ग्रस लेता है। वज्रपातकी अग्निकी चमक तथा धुएँके सदृश वह उत्पातसूचक होता है। हाथीके मदकी तरह उसके द्वारा कामदेवकी वृद्धि होती है। विरही लोग वर्षाके आ जानेपर मृत्युरूपी घोर अन्धकारमें प्रविष्ट होने लग जाते हैं। जैसे मृग जालमें फँसकर मर जाते हैं, उसी प्रकार उसके उत्कण्ठारूपी अमोघ कालपाशमें जकड़कर कामी लोग नष्ट हो जाते हैं। वह दिग्गजोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ङ्खला वाहनानाम्, अनुन्मोच्यनिगडबन्धोऽध्वगानाम्, अलङ्घ्यकान्तारलेखा प्रोषितानाम्, कालायसपञ्जरोपरोधो जीवलोकस्य, उद्गर्जन्नलिकुलवनमहिषमलिनघनघटाभोगभीषणो विषमविस्फूर्जितध्वनिर्विषमतरतडिद्गुणाकर्षी मण्डलितविकटशक्रकार्मुकोऽनवरतधारासारवर्षप्रहारी पुरोमार्गमुपरुन्धन्विरुद्ध इवान्धकारितमुखो निर्निशरातसहस्रसंपातदुष्प्रेक्ष्योऽक्षिणी प्रतिघ्नञ्शिवाशुगमनविघ्नकारी बभूव जलदकालः। तत्र च प्रथममस्य चेतनाहारिभिर्मूर्च्छावेगैरन्धकारतामनीयन्त दश दिशः, ततो जलधरैः। अग्रतः समुत्प्लुतेन चेतसा क्वाप्यगम्यत, पश्चात् हंसैः। पुरस्तात्परिमलिनोऽस्य निःश्वासमरुतः प्रावर्तन्त, पश्चात्कदम्बवाताः। पूर्वं तुलितनीलोत्पलवनकान्तिनयनयुगलमस्य सलिलं समुत्ससर्ज, चरमसम्भोमुचां वृन्दम्। आदावापूर्यमाणमुद्वेगेनोत्कलिकासहस्रपर्याकुलं

लिए अमेद्य लौहमय अर्गलादण्ड है। घोड़ोंके पैरोंके लिए वह अच्छेद्य शृंखला है। पथिकोंके लिए वह कभी भी न छूटनेवाली बेड़ी है। जिनके पति परदेश चले जाते हैं, ऐसी स्त्रियोंके लिए वह वर्षाकाल अलंघ्य वन है। जनसाधारणके लिए वह अवरोधक लोहेका पींजरा है। भौंरोंके समूह तथा वन्य महिषोंकी भाँति मलिन एवं गर्जन करती हुई घनघटाके विस्तारसे वह और भी भीषण दीखने लगता है। उसका गर्जन बड़ा भयानक होता है। उससे भी भयंकर इन्द्रधनुषपर बिजलीरूपी प्रत्यंचा खींचकर चढ़ाता हुआ वर्षाकाल निरन्तर जलधारारूपी बाणोंकी वर्षा करता हुआ प्रहार करता है। समाजविरुद्ध आचरण करनेवाले प्राणीके समान वह अपना मुँह काला करके रास्ता रोक लेता है और एक साथ सैकड़ों तथा हजारों वज्रपात सदृश दुष्प्रेक्ष्य होनेके कारण नेत्रोंमें चकाचौंध उत्पन्न कर देता है। उस मार्गमें पहले चन्द्रापीडको अचेत कर देनेवाली मूर्छाके वेगसे दसों दिशायें अन्धकाराच्छन्न हो गयीं, फिर मेघोंने वही काम किया। पहले उसका तड़फड़ाता हुआ चित्त निकल भागा, उसके बाद हंस उड़े। पहले उसका सुगन्धित उच्छ्वास निकला, उसके बाद सुगन्धित वायु चली। पहले युवराजकी नीलकमल सरीखी आँखोंने जलवर्षा की, उसके बाद बादलोंने वर्षा आरम्भ की। पहले हजारों तरहकी उत्कण्ठारूपिणी तरंगोंसे व्याप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मनोऽस्याभवत्, अवसाने स्रोतस्विनीनां पात्रम्। अपि च दुस्तरैर्नदीपूरैरेव सहावर्धन्त मन्मथोन्माथाः। वर्षाजलविलुलितैः कमलाकरैरेव सह ममज्ज कादम्बरीसमागमप्रत्याशा। धारायासहैः कन्दलैरेव सहाभिद्यत हृदयम्। अम्भोदवाताहतैर्धाराकदम्बकुड्मलैरेव सहाकम्पतोत्कण्टकिता तनुः। अनवरतजलपतनजर्जरितपक्ष्मभिः शिलीन्ध्रैरेव सह ताम्रतामधत्त नयनयुगलम्। उत्कूलसलिलोत्खन्यमानमूलैः सरित्तटैरेव सहापतन्प्राणाः। परिमलमयैर्मालतीमुकुलैरेव सहाजृम्भन्त रणरणकाः। तथातिगुरुनिर्घातैरेवाभज्यन्त मनोरथाः। तीक्ष्णतरकोटिभिः केतकीसूचिभिरेवात्रुट्यन्त मर्माणि। उच्छिखैः शिखिभिरेवादह्यन्त गात्राणि। अन्धकारितदिशा मेघतमसैवावर्धत मोहान्धकारम्। तिरस्कृतध्वान्तेन तडिदातपेनैवातन्यत संतापः। भरेणैव गम्भीरगर्जितैक-

---

उसका हृदय उद्वेगसे भरा, उसके बाद बरसातसे नदियोंका पेटा भरने लगा। दुस्तर नदियोंके प्रवाहके साथ-साथ उसके हृदयमें कामदेवका उपद्रव बढ़ने लगा। वर्षाके जलसे छिन्न-भिन्न कमलसमूहके साथ ही साथ कादम्बरीके समागमकी आशा भी छिन्न-भिन्न हो गयी। धाराके वेगको सहनेमें असमर्थ कन्दलियोंके साथ उसका हृदय भी विदीर्ण हो गया। बरसाती वायुके झोकोंसे आहत कदम्बकलिकाओंके साथ उसका शरीर भी रोमांचित होकर काँपने लग गया। अनवरत पानी बरसते रहनेके कारण जर्जर पलकों अथवा पंखुड़ियोंवाले शिलीन्ध्र (भुइँफोड़) के साथ उसकी दोनों आँखें लाल हो गयीं। तटके समीप पहुँचे हुए जलवेगके आघातसे टूटकर गिरनेवाले कगारोंके साथ ही उसके प्राण भी गिरने लगे। सुगन्धि भरे मालतीके फूलोंके साथ ही उसके हृदयमें नाना प्रकारकी आकांक्षायें बढ़ चलीं। प्रबल वेगसे चलनेवाली आँधीसे ही उसकी सारी अभिलाषायें भग्न हो गयीं। अतिशय तीखी नोकवाली केतकी (केवड़े) के काँटोंसे ही उसके मर्म बिंध गये। ऊँची शिखा (कलँगी अथवा लपट) वाले शिखियों (मयूरों अथवा अग्नि) से उसके अंग जल उठे। सभी दिशाओंमें अँधेरा फैलानेवाले मेघोंसे ही उसका मोहविकार बढ़ने लगा। अन्धकारको तिरस्कृत करनेवाली बिजलीकी चमकसे उसका संताप बढ़ गया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संतानोत्कम्पितधरापीठबन्धैर्नभसि नवघनैः, घनजलधारातिपातवाचालितचञ्चुभिरन्तराले चातकैः, उद्दानमहारावराविभिरवनिमूले दर्दुरैः, अनवरतझांकाररवजर्जरितधाराम्बुभिराशासु जलदानिलैः, उन्मत्तमदकलकेकाकोलाहलैः काननेषु कलापिभिः, असमशिखरोपलस्खलनकलकलमुखरैर्गिरिषु निर्झरैः, उल्लोलकल्लोलास्फालविस्फारितविषमनिर्घोषझांकारिभिः सरित्सु पूरैः, सर्वतश्च विततेन स्थलीषु, संहतेन कन्दरेषु, उच्चण्डेन शिखरिषु, कलकलेनाम्बुषु, पटुना पर्वततटेषु, मृदुना शाद्वलेषु, चारुणा कपोलेषु, सान्द्रेण शाखिषु, तनुना तृणोपलेषु, उल्बणेन तालीवनेषु, यथाधाराश्मपतनमाकर्ण्यमानेन सर्वप्रकारमधुरेण हृदयप्रवेशिना धारारवेणोत्कलिकाकलितो न रात्रौ न दिवा न ग्रामे नारण्ये नान्तर्न बहिर्न वने नोपवने न वर्त्मनि नावासे न वहन्न तिष्ठन्न वैशम्पायनस्मरणेन न कादम्बरीसमागमानुध्यानेन कथंचिदपि न क्वचिदपि

जलके बोझसे जैसे निरंतर गंभीर गर्जन करके धरातलके पृष्ठबन्धनको कम्पित करते हुए नये बादलोंसे नभमण्डलमें, प्रखर जलधारा गिरनेके कारण बोलते हुए चातकोंसे मध्यभागमें, मस्तीके साथ जोर-जोर बोलनेवाले मेढकोंसे धरतीमें, बराबर झंकारके शब्दसे जलधाराको जर्जर करनेवाली बरसाती वायुसे सब दिशाओंमें, मस्त होकर बोलनेवाले मोरोंसे वनोंमें, ऊबड़-खाबड़ शिखरोंसे चट्टानोंपर गिरकर हाहाकार करनेवाले झरनोंसे पर्वतोंमें और ऊँची-ऊँची तरंगोंके थपेड़से बढ़कर भयङ्कर निनाद करनेवाले प्रवाहोंसे नदियोंमें, जमीनपर चारों ओर फैलते, कंदराओंमें घनीभूत होते, पर्वतोंपर प्रचण्डता प्रकट करते, जलपर कलकल निनाद करते, पहाड़ोंकी तलैटियोंमें कौशल दिखाते, घासोंपर कोमलता बिखेरते, कपोलोंपर सौंदर्य लाते, वृक्षोंपर घनीभूत होते, तृणसमूहपर तुच्छता दिखाते, ताड़के वनोंमें उग्र रूप धारण करते, जैसे जलधाराके साथ-साथ पत्थर बरस रहे हों इस तरह सुनायी देते, सर्वथा मधुर और हृदयमें प्रविष्ट हो जानेवाले धारापातके निनादसे चन्द्रापीडकी उत्कण्ठा उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी। अतएव उसे न रात्रिमें, न दिनमें, न गाँवमें, न वनमें, न भीतर, न बाहर, न जंगलमें, न बगाचेमें, न राहमें, न डेरेपर, न चलनेमें, न रुकनेमें, न वैशम्पायनका स्मरण करनेमें और न कादम्बरीके समागमका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निर्वृतिमेवाध्यगच्छत्।

अनधिगतनिर्वृतिश्चातिकष्टतया वज्रानलस्येव जलदसमयेन्धनस्य मदनहुतभुजो भस्मसात्कर्तुमेवोद्यतस्य धीरस्वभावोऽपि प्रकृतिमेवोत्ससर्ज। प्लावितसकलधरातलैर्धाराजलैरप्यशोष्यत द्योतितदशदिशा शतह्रदालोकेनापि मूर्च्छान्धकारेऽक्षिप्यत। आह्लादितजीवलोकैर्जलदानिलैरप्यदह्यत। पयोभारमेदुरैरपि तनुतामनीयत। पाटलितशाद्वलैः शक्रगोपकैरपि पाण्डुतां प्रत्यपद्यत। कुसुमधवलैः कुटजैरपि रागपरवशोऽक्रियत। तथापि सकलजगज्जीवनहेतुनापि जीवितसंदेहदोलामारोपितो जलदकालेनोत्कूलगामिषु विधिविलसितेषु सरित्पूरेषु चोत्प्लवमानोऽनवरतवर्षाजलजनितेषु मूर्च्छागमेषु पङ्कपटलेषु च निमज्जन्, जलभरस्थगितवर्त्मनि विलोचने च स्खलन्, विकासिनीषु कादम्बरीप्राप्तिचिन्ता-

---

मनन करनेमें किसी भी तरह और कहीं भी उसे शांति नहीं मिली।

इस प्रकार उसे जब कहीं चैन नहीं मिली, तब बरसातरूपी ईंधनयुक्त बिजलीकी भाँति जैसे सर्वथा भस्म कर देनेको उद्यत कामाग्निके अत्यधिक असह्य हो जानेके कारण स्वभावतः धैर्यशाली होते हुए भी वह अपना साहस खो बैठा। सारी धरतीको जलमयी करके धारारूपमें बरसनेवाले जलसे भी वह सूखने लगा। दसों दिशाओंको आलोकित करनेवाली, बिजलीकी चमकसे भी वह मूर्छाके अन्धकारमें जा पड़ा। समस्त संसारको आनन्द देनेवाली बरसाती हवासे भी वह जलने लगा। जलके भारसे घनीभूत दीखनेवाले बादलोंसे भी वह जैसे घुलने लगा। हरी-हरी घासोंको लाल करती हुई बीरबहूटियोंसे वह पीला पड़ने लगा। फूलोंके फैलावसे उज्ज्वल दीखनेवाले कुटज वृक्षोंसे भी वह अनुरागके वशीभूत होने लगा। निखिल विश्वके जीवनाधार उस वर्षाकालसे भी चन्द्रापीडका जीवन संशयके झूलेपर झूला झूलने लगा। बरसातके कारण कगारको लाँघकर बहनेवाली नदीके प्रवाहोंकी भाँति वह विधाताके खेलवाड़रूपी प्रवाहमें बहता हुआ तैरने लगा। सतत वर्षाके जलसे जायमान मूर्छारूपी दलदलमें डूबने लगा। वह जलके रेलेसे अवरुद्ध मार्ग तथा नेत्रोंमें फिसलने लगा। उत्तरोत्तर बढ़ती हुई कादम्बरीके मिलनकी चिन्ताओं तथा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सु धाराकदम्बरजोवृष्टिषु चामीलयन्, अनुबन्धिषु गमनविघ्नेषु जलधरध्वनितेषु च मुह्यन्, सुदुर्लङ्घ्यवेगान्युत्कण्ठितानि सहस्रशः स्रोतांसि चोल्लङ्घयन्, घनोपाहितवृद्धिना कादम्बरीसमागमौत्सुक्येन पयःप्लवरयेण चोह्यमानो जीवितप्रत्याशामवहन्, तुरङ्गमांश्च परित्यजन्, तर्ज्यमान इव तडिद्भिः, अवष्टभ्यमान इव जलधरैः, निर्भर्त्स्यमान इव विस्फूर्जितैः शकलीक्रियमाण इव शतशो निस्त्रिंशवृत्तिभिर्धारासारैः, निरुद्धास्वपि जलदकालेनैवाशुगमनविघ्नभूतास्वाशासु कादम्बरीसमागमाशा सुतरां नानुरुध्यतास्य, यया तादृशेऽपि यथास्थाननिगडितसमस्तप्राणिनि प्रावृट्काले कलामप्यकृतपरिलम्बोऽनीयत तं पन्थानम्। धाराहतिविकूणिताक्षेण च मुहुर्मुहुर्वलितानमिताननेन श्च्योतदासक्तिसंपिण्डितकेसराग्रेणैकसंतानकर्दमानुलग्नखुरेणादृश्यनिम्नोन्नतस्खलद्गतिना विशीर्यमाणपर्याणसमायोगेनोपर्युपरिवाहिनीतीरोत्तारसंतानावानपृष्ठेना-

---

पुष्पित कदम्बकी रजवर्षामें डूबने लगा। एकपर एक करके आनेवाले विघ्नों तथा बादलोंके गर्जनसे मूर्छित होने लगा। अतिशय दुर्लंघ्य वेगवती नदियों तथा हजारों उत्कण्ठाओंको लाँघकर पार करने लगा। मेघोंके आगमनसे बढ़ते हुए कादम्बरीके समागमकी उत्सुकतासे एवं जलप्रवाहके प्रबल वेगसे खिंचने लगा। जीवनकी आशा तथा साथके घोड़ोंको छोड़ने लगा। बिजलियाँ जैसे उसे डराने लगीं। मेघगण जैसे उसे बरबस रोकने लगे। उनके गर्जन जैसे उसे धमकियाँ देने लगे। तलवारकी धारसरीखी गिरती हुई निर्दय जलधारायें जैसे उसके सैकड़ों टुकड़े करने लगीं। यद्यपि वर्षाकालने उसके जल्दी जानेमें रुकावट डालनेके लिए सब ओरका रास्ता रोक दिया था। तथापि कादम्बरीके मिलनकी आशा तनिक भी क्षीण न होनेके कारण जिस समय सब प्राणी अपनी जगहसे हिल भी नहीं सकते थे, ऐसी वर्षाऋतुमें भी कहीं विलम्ब किये बिना बराबर वह आगेकी ओर बढ़ता ही रहा। निरन्तर जलकी धार लगनेसे जिनके नेत्र अधमुँदे हो गये थे। जो अपना मुँह बार-बार मोड़कर नीचे झुका रहे थे। जिनकी गर्दनके बाल चिपककर भिण्ड बन गये थे। निरन्तर कीचड़में पड़ते रहनेके कारण जिनके खुर भरे हुए थे। नीची-ऊँची जमीन न दिखायी देनेके कारण जिनके पैर फिसल जाते थे। जिनकी जीनें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पचीयमानबलजवोत्साहेन वाजिसैन्येनानुगम्यमानो जीवितसंधारणाय यथा तथा निर्वर्तिताशनमात्रकोऽभ्यर्हितराजलोकवचसाप्यप्रतिपन्नशरीरसंस्कारो दिवसमेव केवलमवहत्।

वहंश्च त्रिभागमात्रावशिष्टेऽध्वनि निवर्तमानं मेघनादमद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च दूरत एव कृतनमस्कारं तमप्राक्षीत्—'तिष्ठतु तावत्पुरस्तात्पत्रलेखागमनवृत्तान्तप्रश्नः। वैशम्पायनवृत्तान्तमेव तावत्पृच्छामि। अयि, दृष्टस्त्वयाऽच्छोदसरसि वैशम्पायनः। पृष्टो वावस्थानकारणम्। पृष्टेन वा किंचित्कथितं न वा। पश्चात्तापी वास्मत्परित्यागेन। स्मरति वास्माकम्। पृष्टोऽसि वानेन किंचिन्मदीयम्। उपलब्धो वाभिप्रायः। उत्पन्नो वालापो युवयोः। मातापित्रोर्वा संदिष्टं किंचित्। प्रतिबोधितो वा त्वयाऽऽगमनाय। आवेदितं वास्य मदीयमागमनम्। नापयास्यति वा तस्मात्प्रदेशात्। दास्यति वा दर्शनम्। ग्रहीष्यति वास्मदनुनयम्।

भीगनेके कारण ढीली हो गयी थीं। एकके बाद एक नदियोंको पार करनेके कारण जिनकी पीठ भींग गयी थी। जिनका बल, वेग और उत्साह उत्तरोत्तर क्षीण होता जा रहा था, ऐसे घोड़ोंकी सेना उसके पीछे-पीछे चल रही थी। अनेक पूज्य राजाओंके आग्रह करनेपर भी वह स्नानादिके द्वारा शरीरका संस्कार न करके केवल जीवनकी रक्षाके लिए ज्यों-त्यों कुछ खाकर चलते-चलते ही उसने पूरा दिन बिताया।

इस प्रकार चलते-चलते जब मार्गका केवल एक तृतीयांश शेष रह गया, तब चन्द्रापीडने मेघनादको लौटते देखा। दूर ही से नमस्कार करते हुए मेघनादसे उसने कहा—'पत्रलेखाके जानेका वृत्तान्त छोड़कर पहले वैशंपायनका हाल बताओ। तुमने अच्छोद सरोवरपर वैशम्पायनको देखा था? उसके रुकनेका कारण पूछा था? पूछनेपर उसने कुछ जवाब दिया या नहीं? हमें छोड़कर वह पछताता है? हमारी याद करता है? मेरे विषयमें उसने कुछ पूछा था? तुमने उसका अभिप्राय जाना? तुम दोनोंमें कुछ बातें हुईं? अपने माता-पिताके लिए उसने कुछ सन्देश दिया? वहाँसे लौटनेके लिए तुमने उसे समझाया था? मेरे फिर यहाँ आनेकी बात उसे बतायी थी? वहाँसे वह कहीं चला तो न जायगा? वह हम लोगोंसे मिलेगा? हमारे अनुरोधको मानेगा?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आगमिष्यति वा पुनर्मया सह। किं कुर्वन्दिवसमास्ते। को वा विनोदोऽस्य तिष्ठतः' इति। स त्वेवं पृष्टो व्यज्ञपयत्—'देव, देवेन तु वैशम्पायनमालोक्यानुपदमेव तुरंगमैरागत एवाहम्' इत्यादिश्य विसर्जितोऽहम्। अच्छोदसरसः प्रतीपं वैशम्पायनो गत इत्येषान्तरा वार्तैव नोपयाता। चिरयति च देवे जलदसमयारम्भमालोक्य कदाचिदेतेषु दिवसेषु देवेन तारापीडेन देव्या विलासवत्यार्यशुकनासेन च कृतप्रयत्नोऽपि न मुच्यत एवागन्तुं देवश्चन्द्रापीडः। त्वया चैकाकिना न स्थातव्यमेवास्यां भूमौ। परागतप्रायाश्च वयम्। तन्निवर्तयास्मादेव प्रदेशादित्यभिधाय पत्रलेखया केयूरकेण च त्रिचतुरैः प्रयाणकैरप्राप्त एवाच्छोदं यावद्दूरान्निवर्तितोऽस्मि' इति। एवमावेद्य विरराम। विरतवचनं च तं पुनरपृच्छत्। किमाकलयस्यद्यतनेनाह्ना यावत्परापतिता पत्रलेखा नेति। स तु व्यज्ञपयत—'देव, यद्यन्तरा कश्चिदन्तरायो न भवति विलम्बकारी, तदा विना संदेहेन परापतितैवागच्छति मे हृदयम्।' इत्युक्तवति

वह मेरे साथ लौट आयेगा ? वह वहाँ दिनभर क्या करता है ? वहाँ उसके मनोविनोदका क्या साधन है ?' चन्द्रापीडके इस तरह पूछनेपर मेघनाद बोला—'देव ! 'वैशम्पायनसे मिलकर मैं तुरन्त आता हूँ।' यह कहकर आपने मुझे भेज दिया था। वैशम्पायनके तो अच्छोद सरोवरपर जानेकी उस समय कोई चर्चा ही नहीं चली थी। जब आपके पहुँचनेमें देर हो गयी, तब पत्रलेखा तथा केयूरकने कहा—'बरसातका मौसम देखकर हो सकता है कि महाराज तारापीड, महारानी विलासवती तथा आर्य शुकनासने युवराजको आनेका प्रयत्न करनेपर भी अनुमति न दी हो। तुम्हें अकेले इस भूमिपर रहना उचित नहीं है। हमलोग करीब-करीब अपनी सीमामें पहुँच गये हैं।' ऐसा कहकर पत्रलेखा और केयूरकने जहाँसे अच्छोद सरोवर तीन-चार पड़ाव दूर था, वहाँ ही से हठात् मुझे लौटा दिया।' ऐसा कहकर मेघनाद चुप हो गया। उसके खामोश हो जानेपर चन्द्रापीडने फिर पूछा—'तुम्हारा क्या ख्याल है, पत्रलेखा ठिकानेपर पहुँच गयी होगी ?' उसने उत्तर दिया—'देव ! यदि राहमें विलम्ब करनेवाला कोई विघ्न न पड़ा होगा तो वह अवश्य पहुँच गयी होगी। ऐसा मेरा मन कहता है।' मेघनादके यह कहनेके बाद कादम्बरीको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मेघनादे घनसमयवर्धिताभोगमकरध्वजार्णवमध्यपातिनीं स्वानुमानात्कादम्बरीमुत्प्रेक्ष्यात्प्रेक्ष्य विक्लवीभवतः पर्यावर्त्यन्त इवास्य जलधराः कालपुरुषैः, तडितो मदनानलशिखाभिः, अवस्फूर्जितं प्रेतपतिपटहध्वनैः, आसारधाराः स्मरेषुभिः, आमन्द्रगर्जितं मकरध्वजधनुर्ज्यागुञ्जिताभोगेन, कलापिकेकाः कालदूतालापैः, केतकामोदो विषपरिमलेन, खद्योताः प्रलयानलस्फुलिङ्गराशिभिः, अलिवलयानि कालपाशैः, बलाकाश्रेणयः प्रेतपतिपताकाभिः, आपगाः सर्वक्षयमहापूरप्लवैः, दुर्दिनानि कालरात्र्या, कुटजतरवः कृतान्तहासैः। अपि च शरीरेऽपि सत्त्वं कातरतया, बलं क्षामतया, कान्तिर्वैवर्ण्येन, मतिर्मोहेन, धैर्यं विषादेन, हसितं शुचा, नयनमश्रुणा, आलपनं मौनेन, अङ्गान्यसहतया, करणान्यपाटवेन, सर्वमेवारत्या । दिवसैश्चोल्लिख्यमानमिवानवरतवाहिनाश्रुपूरप्रवाहेणावभज्यमानमिव । सततैर्निश्वासप्रभञ्जनैरुत्खन्यमानमिव । संततैः सान्तर्मदनदुःखोत्कलिकासहस्रैरजस्रपातिभिरितस्ततो

बरसातके कारण विस्तृत होते हुए कामसमुद्रमें पड़ी समझकर दुखी चन्द्रापीडको बादल कालपुरुषोंके रूपमें, बिजलियाँ मदनानलकी लपटोंके रूपमें, बादलोंका गर्जन यमराजके नगाड़ोंके रूपमें, जलकी धारें कामबाणोंके रूपमें, गंभीर गर्जन कामदेवके धनुषकी प्रत्यंचाके टंकोररूपमें, मयूरोंकी बोली कालदूतके आलापरूपमें, केतकी (केवड़े) की सुगन्धि विषमयी सुगन्धिके रूपमें, जुगनू प्रलयाग्निकी चिनगारीके रूपमें, भौंरोंका झुण्ड कालपाशके रूपमें, बगुलियोंकी कतारें यमराजकी पताकाके रूपमें, नदियाँ सर्वसंहारकारी प्रलयकालीन प्रवाहके रूपमें, दुर्दिन कालरात्रिके रूपमें और कुटजके वृक्ष यमराजके अट्टहासके रूपमें परिणत होते दिखायी पड़े । उसके निजी शरीरमें भी सत्त्वके स्थानमें कातरता, बलकी जगह निर्बलता, कान्तिकी जगह विवर्णता, बुद्धिके स्थानमें मोह, धैर्यकी जगह विषाद, हँसीकी जगह शोक, नेत्रोंमें अश्रु, बातचीतकी जगह मौन, अंगोंमें असहनीयता, इन्द्रियोंमें अल्हड़पन और सर्वत्र दुःख दिखायी देने लगा । तदनन्तर बीतते हुए दिवसोंसे जैसे चित्रलिखित जैसा हो गया हो, निरन्तर बहनेवाले आँसुओंसे जैसे मर्दित हो गया हो, बराबर चलनेवाले उच्छ्वासोंसे जैसे उखड़ा जा रहा हो, सदा उत्पन्न होनेवाली कामसन्तापकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जर्जरीक्रियमाणमिव। अपि च सहस्रैर्मकरध्वजशरासारैर्वपुषैव च सह क्षीयमाणमिव स्वल्पावशेषं संकल्पलिखितेन निर्विशेषवृत्तिना कादम्बरीशरीरेणैव सह कण्ठलग्नं कथंकथमपि जीवितं धारयन्, धाराधरक्लिन्नतीरतरुतलमाप्लावितोपान्तहरितशाद्वलम्, असेव्यतटलतावनम्, अनवरतरोधोजलप्रवेशकलुषितप्रान्तम्, अवशीर्यमाणोद्दण्डकुमुददलगहनम्, आमग्नकमलखण्डम्, उत्प्लवमानाश्यानकिंजल्कदलकमलम्, आजर्जरितकह्लारकुवलयम्, उद्भ्रान्तभ्रमदलिवलयम्, उड्डीनहंससार्थत्यक्तम्, अनवस्थानसारसारसितकरुणम्, अवशिष्टदलतलनिलीयमानोच्चकितचक्रवाकयुगलम्, उत्कम्पितकादम्बकदम्बकाश्रियमाणोपकूलनड्वलम्, उत्कलविरुतकलापिवकबलाककलापाध्यासितोपान्तपादपम्, आहतं प्रावृषान्यदिव दृष्टपूर्वमप्यदृष्टपूर्वमिव, अदत्तदृष्टिसु-

---

हजारों वेदनाओंसे जैसे जर्जर होता जा रहा हो, अनवरत कामबाणकी वर्षासे जैसे शरीरके साथ-साथ घुला जा रहा हो। इस प्रकार बहुत थोड़े बाकी बचे सत्त्ववाला चन्द्रापीड अपने अनुरूप कादम्बरीके काल्पनिक शरीरके साथ कंठतक आये हुए प्राणोंको ज्यों त्यों बचाता-बचाता अच्छोद सरोवरके समीप पहुँच गया। सरोवरके तटवर्ती वृक्षोंका तलप्रदेश बरसातके पानीसे भीग गया था। घासोंसे हरी-भरी भूमिमें जल भर गया था। तटवर्तिनी लताओंका वन असेव्य हो गया था। किनारोंको फोड़कर जल बाहर निकलनेके कारण उस सरोवरके कगार टूट-फूट गये थे। टूटकर छितराये ऊँचे दण्डवाले कुमुदके पत्तोंसें वह सघन दीख रहा था। कमलसमूह पानीमें डूब गये थे। थोड़ीसी सूखी केसरोंवाले कमलोंकी पंखुड़ियाँ पानीके ऊपर तैर रही थीं। कुवलय तथा कह्लार जर्जर हो गये थे। भौंरोंकी टोली डर-डरकर चक्कर काट रही थी। हंसोंका झुंड उड़ गया था। स्थानके अभावमें सारस करुण क्रन्दन कर रहे थे। बाकी बचे हुए पत्तोंमें चौकन्ने चकवा-चकवीके जोड़े घुसे बैठे थे। कम्पितगात्र राजहंसोंके समुदाय तटवर्ती झाड़ियोंमें छिप गये थे और जोर-जोरसे बोलनेवाले मोरों, बगुलियों तथा बगुलोंके झुण्ड आस-पासके वृक्षोंपर बैठे हुए थे। इस प्रकार वर्षाऋतुके प्रहारसे वह सरोवर जैसे दूसरा ही हो गया था। यद्यपि वह उसे पहले देख चुका था, किन्तु अब अदृष्टपूर्व सरीखा लग रहा था। उसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

खम्, अनुत्पादितहृदयाह्लादम्, अनुपजनितमानसप्रीति, तदेवाच्छोदमुपाहितद्विगुणदुःखमाससाद।

आसाद्य चोपसर्पन्नेव सर्वानश्ववारानादिदेश। 'कदाचिदसौ वैलक्ष्यादस्मानालोक्यापसर्पत्येव तच्चतुर्ष्वपि पार्श्वेष्ववहिता भवन्तु भवन्त' इत्यात्मनापि तुरगगत एव खिन्नोऽप्यखिन्न इव विचिन्वंल्लतागहनानि वृक्षमूलानि शिलातलानि लसन्मण्डपांश्च समन्ताद्बभ्राम। भ्राम्यंश्च यदा न क्वचिदपि किंचिदवस्थानचिह्नमप्यद्राक्षीत्तदा चकार चेतसि— 'नियतमसौ पत्रलेखासकाशान्मदागमनमुपलभ्य प्रथममेवापक्रान्तो येनावस्थानचिह्नमात्रकमपि कथमपि नोपलक्ष्यते। निरुद्धोद्देशं गतश्च क्वाप्यस्माभिरसावेवान्विष्टोऽपि न दृष्टः। तत्कष्टतरमापतितम्। वैशम्पायनमदृष्ट्वास्मात्प्रदेशात्पदमपि गन्तुं पादावेव नोत्सहेते। मे मन्मथशरविक्षिप्ताश्च कादम्बरीदर्शनमात्रालम्बनाः क्षणमपि विलम्बमन्तरी-

---

देखनेसे नेत्रोंको सुख नहीं मिल पाता था। हृदयको प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती थी। मनमें प्रीति नहीं उपजती थी। अब उसे देखकर चन्द्रापीडका दुःख दूना हो गया।

उस स्थानपर पहुँचा, तैसे ही उसने सवारोंको आदेश दिया—'सम्भव है कि लज्जाके मारे वैशम्पायन हम लोगोंको देखकर भागने लगे। अतएव तुम सब चारों और पूरी सावधानीसे निगाह रखना।' यों कहकर स्वयं खिन्न होते हुए भी अखिन्न बना घोड़ेपर बैठा ही बैठा समस्त लता, वन, वृक्षतल, शिलातल एवं मनोहर लतामण्डपोंमें उसे खोजता हुआ चारों ओर चक्कर लगाने लगा। बड़ी देर तक घूमनेपर भी जब कहीं उसके रहनेका चिह्न दृष्टिगोचर नहीं हुआ, तब चन्द्रापीडने सोचा—'मालूम होता है कि पत्रलेखाके मुखसे मेरे आनेकी खबर पाकर वह पहले ही निकल भागा। इसीसे यहाँ उसके निवासका कोई चिह्न नहीं दीखता। संभवतः वह किसी गुप्त स्थानमें जा छिपा है। इसीसे इतना खोजनेपर भी नहीं मिलता। इस कारण अब बहुत बड़ा संकट आ पड़ा। वैशम्पायनके न मिलनेसे मेरे पैर एक पग भी आगे बढ़नेको राजी नहीं होते। इधर कामदेवके बाणोंसे आहत तथा एकमात्र कादम्बरीके दर्शनकी आशाके सहारे रुके हुए प्राण दुर्बलताके कारण क्षणभरकी भी देरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्तुमक्षमाः क्षामतया मा यासिषुः प्राणाः। सर्वथा विनष्टोऽस्मि, न दृष्टा देवी कादम्बरी, नापि वैशम्पायन' इति। एवमुत्पन्ननिश्चयोऽप्यपरिच्छेद्यस्वभावत्वात्प्रत्याशायाः कदाचिदस्य वृत्तान्तस्याभिज्ञा महाश्वेतापि भवत्येव। तत्तां तावत्पश्यामि। ततो यथायुक्तं प्रतिपत्स्य इत्यारोप्य हृदये तदाश्रमस्यैव नातिदूरे निवेशिततुरगसैन्यः सैन्यसमायोगमपनीय सर्पनिर्मोकपरिलघुनी घनोज्झितज्योत्स्नाभिरामे परिधाय वाससी तथास्थितपर्याणमेवेन्द्रायुधमारुह्य महाश्वेताश्रममुपाजगाम। तत्र च प्रविशन्नेवावतीर्य महाश्वेतावलोकनकुतूहलात्पश्चादाकृष्टेनेन्द्रायुधपरिजनेनानुगम्यमानो विवेश। प्रविश्य च गुहाद्वार एव धवलशिलातले समुपविष्टामधोमुखीमसह्यमन्युवेगोत्कम्पितसर्वावयवामनवरतनयनजलवर्षिणीमुच्चण्डवाताहतां लतामिवोद्बाष्पदीनदृष्ट्या कथंकथमपि तरलिकया विधृतशरीरां महाश्वेतामपश्यत्। दृष्ट्वा च तां

नहीं सह सकते। अब कहीं ऐसा न हो कि ये निकल ही जायँ। मैं तो सर्वथा नष्ट हो गया। न कादम्बरीके दर्शन मिले और न वैशम्पायन मिला।' ऐसा निश्चय हो जानेपर भी आशाकी सीमा असीम होनेके कारण उसने सोचा—'संभव है कि महाश्वेता इस वृत्तान्तसे अभिज्ञ हो। सो लाओ, चलकर उसीसे मिलूँ। उसके बाद जो उचित जँचेगा, सो किया जायगा।' मन ही मन ऐसा निश्चय करके उसने आश्रमके पास ही घोड़ोंकी सेनाका पड़ाव डाल दिया। इसके बाद उसने सैनिक वेष उतार डाला और साँपकी केंचुलकी भाँति बारीक तथा मेघविहीन चन्द्रमाकी चाँदनीके समान उजले कपड़ेका जोड़ा पहनकर ज्योंकी त्यों रक्खी हुई जीनवाले इन्द्रायुधकी पीठपर सवार हो गया और चलकर महाश्वेताके आश्रमपर जा पहुँचा। आश्रमके द्वारपर पहुँचकर वह घोड़ेसे उतर पड़ा और महाश्वेताके दर्शनोंकी उत्सुकतावश इन्द्रायुधके सेवकोंके साथ भीतर गया। भीतर घुसते ही चन्द्रापीडने देखा कि कन्दराके द्वारके किनारे ही एक उज्ज्वल पत्थरकी चट्टानपर माथा नीचा किये महाश्वेता बैठी है और आँखोंमें आँसू भरे दीन-हीन तरलिका उसे किसी-किसी तरह सम्हाले हुए है। असह्य शोकके वेगसे उसके समस्त अंग काँप रहे हैं। आँखोंसे अश्रुधारा बह रही है। इससे वह वर्षाकालीन प्रबल आँधी द्वारा कँपायी हुई वल्लरी सरीखी दीख रही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तादृशीमस्योदपादि हृदये—'मा नाम देव्याः कादम्बर्या एव किमप्यनिष्टमुत्पन्नं भवेत्। येनेयमीदृश्यवस्था हर्षहेतावपि मदागमनेऽनुभूयते महाश्वेतया।' इत्याशङ्काभिन्नहृदयोऽयमुड्डीनैरिव प्राणैः पदे पदे स्खलन्निव पतन्निव मुह्यन्निवोपसृत्योपविश्य च तस्यैव शिलातलस्यैकदेशे प्रोद्बाष्पविषण्णवदनः किमेतदिति तरलिकामपृच्छत्। सा तु तथावस्थाया अपि महाश्वेताया एव मुखमवलोकितवती।

अथानुपसंहृतमन्युवेगापि गद्गदिकावगृह्यमाणकण्ठा महाश्वेतैव प्रत्यवादीत्—'महाभाग, किमियमावेदयति वराकी। यथा दुःखाभिघातैककठिनहृदयया पुनरप्यदुःखश्रवणार्हेऽपि दुःखमात्मीयं श्रावितम्, सैवाहं मन्दभाग्या महाभाग, जीवितव्यसनिनी निर्लज्जा निर्घृणा च दुःश्रवणमपि श्रावयामि दुःखमिदम्। श्रूयताम्।' केयूरकाद्भवद्गमनमाकर्ण्य विदीर्यमाणमनसा न मया चित्ररथस्य मनोरथः पूरितः, न मदि-

---

थी। उसकी यह दशा देखकर चन्द्रापीडने सोचा—'कहीं देवी कादम्बरीका तो कोई अनिष्ट नहीं हो गया, जिससे मेरा हर्षदायी आगमन होनेपर भी महाश्वेता ऐसी भीषण दशाका अनुभव कर रही है।' इस आशंकासे जैसे उसका हृदय फट गया और निकलनेको उद्यत प्राणोंसे पग-पगपर लड़खड़ता, गिरता और अचेत होता हुआ वह उसी शिलातलपर एक तरफ बैठ गया। फिर बहते हुए आँसुओंसे दीनमुख होकर उसने तरलिकासे पूछा—'क्या बात है?' किन्तु वह कुछ भी उत्तर न देकर उस विकट अवस्थाको पहुँची हुई महाश्वेताका ही मुँह निहारने लगी।

यद्यपि अभी शोकका वेग शान्त नहीं हुआ था, तथापि गद्गद कंठसे महाश्वेताने ही उसे प्रत्युत्तर देते हुए कहा—'महानुभाव! यह बेचारी आपको क्या जवाब दे! निरन्तर दुःख सहते-सहते जिसका हृदय कठोर हो चुका है और दुःखकी बात सुननेके अयोग्य आप जैसे प्राणीको जिसने एक बार अपना दुःख सुनाया था। हे महाभाग! वही मन्दभाग्या मैं जीवनको संशयमें डालनेवाली, लज्जाशून्य, निर्दय एवं कठिनाईसे सुनने योग्य दुःख भी आपको सुना रही हूँ। सुनिये—केयूरकके मुखसे आपके चले जानेकी बात सुनकर मेरा दिल फट गया। उसके बाद न मैंने राजा चित्ररथकी आकांक्षा पूर्ण की, न महारानी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रायाः प्रार्थना कृता, नात्मनः समीहितं संपादितम्, न गृहाभ्यागतस्य चन्द्रापीडस्य प्रियमनुष्ठितम्, न चापि हृदयवल्लभसमागमनिवृत्ता प्रियसखी कादम्बरी वीक्षितेत्युत्पन्नानेकगुणवैराग्या गाढबन्धान्काद्म्बरीस्नेहपाशानपि छित्त्वा पुनः कष्टतरतपश्चरणायात्रैवायाता। तावदत्र महाभागस्यैव तुल्याकृतिमुन्मुक्तमिवान्तःकरणेन शून्यशरीरमुत्तरलमुखमुत्प्लुतावद्धलक्ष्यशून्यया दृष्ट्या प्रनष्टमिव किमपीतस्ततो विलोकयन्तं ब्राह्मणयुवानमपश्यम्। स तु मामुपसृत्यानन्यदृष्टिरदृष्टपूर्वोऽपि प्रत्यभिजानन्निव, असंस्तुतोऽपि चिरपरिचित इव, असंभावितोऽप्युपारूढप्रौढप्रणय इव, अस्निग्धोऽपि परवानिव, प्रेम्णा शून्योऽपि किमप्यनुस्मरन्निव, दुःखिताकारोऽपि सुखायमान इव, तूष्णीमपि स्थितः प्रार्थयमान इव, अपृष्टोऽप्यावेदयन्निवात्मीयामेवावस्थाम्, अभिनन्दन्निव, अनुशोचन्निव, हृष्यन्निव, कृष्यन्निव, विषीदन्निव, बिभ्यदिव, अभि-

---

मदिराकी प्रार्थना सुनी, न अपनी ही इच्छा सार्थक की, न घरपर आये अभ्यागत चन्द्रापीडका भला किया और न अपनी प्रियसखी कादम्बरीको अपने हृदयवल्लभके समागमके सुखसे सम्पन्न देखा। इस प्रकार सहसा अनेक गुणोंसे परिपूर्ण वैराग्यके उत्पन्न हो जानेपर बड़े ही परिपुष्ट कादम्बरीके स्नेहबंधनको तोड़कर मैं फिर कठोरसे कठोर तप करनेके लिए यहाँ लौट आयी। यहाँपर मैंने आपहीकी भाँति आकृतिके, जैसे हृदयहीन, उत्साहविहीन शरीर, कंपित मुख, सूनी-सूनी तथा आँसूभरी आँखोंवाले एक ब्राह्मणयुवकको देखा। वह इधर-उधर जैसे किसी खोयी हुई वस्तुको ढूँढ़ रहा था। वह मेरे पास आकर निर्निमेष दृष्टिसे मुझे इस प्रकार देखने लगा, जैसे पहले कभी न देखे रहनेपर भी मुझे पहचानता हो। अपरिचित होते हुए भी पुराना परिचित हो। असंभावित होते हुए भी जैसे दृढ़ अनुरागयुक्त हो। वात्सल्यहीन होते हुए भी जैसे प्रेमके अधीन हो। प्रेमशून्य होते हुए भी जैसे किसी भूली बातका स्मरण कर रहा हो। आकृतिसे दुःखी होते हुए भी जैसे सुखी हो। चुपचाप खड़ा रहनेपर भी जैसे कुछ माँग रहा हो। बिना पूछे भी जैसे अपनी दशाका वर्णन कर रहा हो। वह जैसे मेरी स्तुति कर रहा हो, शोक कर रहा हो, खुश होता हो, खिच रहा हो, खिन्न हो रहा हो, डर गया हो,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भवन्निव, हृत इव, आकांक्षन्निव, अनुस्मरन्निव विस्मृतम्। अनिमेषेण निश्चलस्तब्धपक्ष्मणाऽन्तर्बाष्पपूरार्द्रेण कर्णान्तचुम्बिना विकसितेनेवामुकुलिततारकेण चक्षुषा मत्त इवाविष्ट इव वियुक्त इव पिबन्निवाकर्षन्निवान्तर्विशन्निव च सुचिरमालोक्याब्रवीत्—वरतनु, सर्व एव हि जगति जन्मनो वयस आकृतेर्वा सदृशमाचरन्न वचनीयतामेति। तत्र पुनरेकान्तवामप्रकृतेर्विधेरिव विसदृशानुष्ठाने कोऽयं प्रयत्नः। यदियमक्लिष्टमालतीसुकुमारा मालेव कण्ठप्रणयैकयोग्या तनुरनुचितेनामुना कष्टतरतपश्चरणपरिक्लेशेन ग्लानिमुपनीयते। रूपवयसोरनुरूपेण सुमनोहारिणी लतेव रसाश्रयिणा फलेन कथं न संयोज्यते। जातस्य हि रूपगुणविहीनस्यापि जन्मोपनतानि जीवलोकसुखान्यनुभूय शोभते परत्रसम्बन्धी तपश्चरणपरिक्लेशः। किं पुनराकृतिमतो जनस्य। तद्दुःखयति मामयमस्यास्ते स्वभावसरसायास्तनोर्मृणालिन्या इव तुहिनपात-

---

पराजित हो रहा हो, हर गया हो, कुछ चाह रहा हो, भूली बातें याद कर रहा हो, अपलक, निश्चल, स्तब्ध, आँसुओंसे भरे, कानोंतक पहुँचे हुए तथा विकसित पुतलियोंवाले नयनोंसे, मस्तकी तरह, आविष्टकी भाँति, वियोगीकी नाईं, पीते हुएके समान, आकर्षण करते हुएकी भाँति और भीतर प्रविष्ट होते हुएकी तरह बड़ी देरतक मेरी ओर निहारकर बोला—'हे सुन्दरी! इस संसारमें सभी लोग यदि अपने जन्म, अवस्था तथा आकृतिके अनुरूप कार्य करते हैं तो उनकी निंदा नहीं होती। किन्तु तुम उलटी प्रकृतिवाले विधाताकी भाँति अपनेको इस अनुचित कार्यमें लगाकर क्या कर रही हो? मालतीके ताजे फूलकी भाँति कोमल तथा मालाकी तरह किसीके कण्ठमें पड़ने योग्य अपने शरीरको इस प्रकारकी कठोर तपश्चर्याके कष्ट देकर क्यों म्लान कर रही हो? सुन्दर फूलोंसे लदी लताके समान अपने शरीरका किसी रूप तथा अवस्थाके अनुरूप रसिक युवकके साथ संयोग क्यों नहीं कर देतीं? इस जगत्में जनमे रूप-गुणहीन प्राणी भी स्वभावतः प्राप्त सांसारिक सुखोंका उपभोग करनेके बाद यदि परलोक बनानेके लिए तप करते हैं तो अच्छा लगता है। तब जो रूप-गुणसंपन्न हों, उनके विषयमें क्या कहना है? अतएव स्वभावसे ही सरस मृणालिनीके समान तुम्हारी कोमल कायापर इस तपस्यारूपी तुषारपातका क्लेश पड़ते देख-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्तपःपरिक्लेशः। यदि च त्वादृशी जीवलोकसुखेभ्यः पराङ्मुखी तपसा क्लेशयत्यात्मानं तदा वृथा वहति धनुरधिज्यं कुसुमकार्मुकः। निष्कारणमुदयति चन्द्रमाः। वृथा वसन्तमासाभ्यागमः। निष्फलानि कुमुदकुवलयकह्लारकमलाकरविलसितानि। निष्फला जलदसमारम्भाडम्बराः। निरर्थकान्युपवनानि। किं ज्योत्स्नया। किं वा लीलासरित्पुलिनैर्मलयानिलेन वा' इति।

अहं तु देवस्य पुण्डरीकस्यैव वृत्तान्तादपेतकौतुका सर्वथा तं वदन्तम् 'अपि कस्त्वम्, कुतो वा समायातः, किमथ वा मामेवमभिदधासि' इत्यपृष्ट्वैवान्यतोऽगच्छम्। गत्वा च देवार्चनकुसुमान्याचिन्वती तरलिकामाहूयाब्रुवम्—'तरलिके, योऽयं युवा कोऽपि ब्राह्मणाकृतिरस्यावलोकयतो वदतश्चान्यादृश एवाभिप्रायो मयोपलक्षितः। तन्निवार्यतामयं यथा पुनरत्र नागच्छति। अथ निवारितोऽपि यद्यागमिष्यति तदावश्य-

---

कर मुझे बहुत कष्ट होता है। जब कि तुम्हारे सदृश सुंदरी सांसारिक सुखसे मुँह मोड़कर तपस्या द्वारा अपने आपको दुःख देती है तो कामदेवका प्रत्यंचा चढ़ा हुआ धनुष बेकार हो जाता है। चन्द्रमा व्यर्थ उदित होता है। वसंतऋतुका आगमन भी बेकार हो जाता है। कुमुद, कुवलय, कह्लार तथा कमलोंका खिलना निष्फल हो जाता है। वर्षाऋतुका आगमन भी किसी कामका नहीं रह जाता। उपवनोंका अस्तित्व व्यर्थ हो जाता है। चन्द्रमाकी धवल ज्योत्स्नाकी भी क्या आवश्यकता? विलासिनी नदियोंके तट तथा मलय वायुकी भी क्या उपयोगिता रह जाती है?'

मेरा तो पूर्वकालमें देव पुंडरीककी दशा देखकर ही सारा कौतूहल समाप्त हो चुका था। अतएव उसके यह सब कहनेपर भी 'तुम कौन हो? कहाँसे आये हो और मुझसे ऐसा क्यों कह रहे हो?' यह कुछ भी न पूछकर मैं दूसरी जगह चली गयी। वहाँ देवार्चनके निमित्त फूल चुनते-चुनते मैंने तरलिकाको बुलाकर कहा—'तरलिके! यह युवक आकृतिसे ब्राह्मण ज्ञात होता है। इसके निहारनेके ढंग तथा बातोंसे ऐसा लगता है कि इसका अभिप्राय कुछ और है। सो तू जाकर इसे मना कर दे। जिससे यह फिर यहाँ न आये। यदि इस प्रकार मेरे मना करनेपर भी वह यहाँ आयेगा तो उसका अवश्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मेवास्याभद्रकं भविष्यति' इति। स तु निवार्यमाणोऽपि दुर्निवारवृत्तेर्मदनहतकस्य दोषैर्भवितव्यतया वानर्थस्य नात्याक्षीदेवानुबन्धम्। अतीतेषु केषुचिद्दिवसेष्वेकदा गाढायां यामिन्यामुद्गिरत्स्विव भरेणोद्दीपितस्मरानलं ज्योत्स्नापूरमिन्दुमयूखेषु लब्धनिद्रायां तरलिकायामप्राप्तसुखा संतापान्निर्गत्यास्मिन्नेव शिलातले विमुक्ताङ्गी कह्लारसुरभिणा मन्दमन्देनाच्छोदानिलेनावीज्यमाना वर्णसुधाकूर्चकैरिव करैर्धवलितदशाशामुखे चन्द्रमसि निहितदृष्टिरपि नामायमेभिरमृतवर्षिभिरखिलजगदाह्लादकारिभिः करैश्चन्द्रमास्तमपि हृदयवल्लभं मे वर्षेदित्याशंसाप्रसङ्गेन देवस्य सुगृहीतनाम्नः पुण्डरीकस्य स्मरन्ती कथमभाग्यैर्मे मन्दपुण्यायास्तादृशस्यापि दिव्याकृतेर्महापुरुषस्य तस्य नभसोऽवतीर्णस्य भाषितमलीकमुपजातं जातानुकंपेन वा यथाकथंचिज्जीवितुमित्येव समाश्वासिता जीवितप्रिया तपस्विन्यपि येन पुनर्दर्शनमेव तेन मम न दत्तम्। किं करोतु

अनिष्ट होगा।' किन्तु मेरे मना करनेपर भी कठिनाईसे निवृत्त किये जाने योग्य मुए कामदेवके दोषसे अथवा होनेवाले अनर्थकी भवितव्यतावश उसने अपना हठ नहीं छोड़ा। कुछ दिनों बाद एक रोज जब रात बहुत ज्यादा बीत चुकी थी। जब कामाग्निको उद्दीप्त करनेवाली चन्द्रमाकी किरणें जैसे चाँदनीके प्रबल प्रवाहका वमन कर रही थीं। तरलिका सो गयी थी। तभी अन्तःसन्तापके कारण नींद न आनेसे मैं बाहर आकर इसी शिलातलपर लेट गयी। उस समय कह्लारके पुष्पोंकी मनोहर सुगन्धि लेकर अच्छोद सरोवरकी मन्द-मन्द वायु बह रही थी। चन्द्रमा चूनेके समान अपनी सफेद किरणरूपी कूँचोंसे दसों दिशाओंका मुख उज्ज्वल कर रहा था। तभी चन्द्रमाको ओर निहारकर उन अमृत बरसाने तथा सारे संसारको आनन्दित करनेवाली किरणोंसे 'चन्द्रमा कदाचित् ज्योत्स्नावर्षाके साथ ही मेरे हृदयवल्लभको भी बरसा दे।' इसी आशासे मैं सुगृहीतनामधेय देव पुण्डरीककी याद कर रही थी। साथ ही यह भी सोचती जाती थी कि 'क्या मुझ मन्दभागिनीके अभाग्यवश उस आकाशसे अवतीर्ण दिव्य आकारवाले महापुरुषका कथन भी झूठा हो जायगा? ऐसा तो नहीं हुआ कि जीवनको ही प्रिय समझनेवाली मुझ तपस्विनीको जिस किसी भी तरह जीवित रखनेके लिए कृपा करके उसने आश्वासन तो दे दिया,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवः सुगृहीतनामा पुण्डरीको यः परासुरेवोत्क्षिप्य नीतः। कपिञ्जलस्तु जीवन्गतः कथमियता कालेन गतेनापि निष्करुणेन वार्तापि मे न संपादिता' इत्येतानि चान्यानि चालजालानि दुर्जीवितगृहीता चिन्तयन्ती जाग्रत्येवातिष्ठम्।

अथ निभृतपदसंचरणमाचरणादुत्कण्टकमनवरतनिपतितमदनशरशल्यनिकरनिचितमिव शरीरमुद्वहन्तम्, उद्विकासिकेतकरजःपटलधवलं प्रथमतरमेव भस्मसात्कृतमिव मदनहुतभुजा भुजाग्रेण कुण्डलीकृतमृणालमुपर्युपितशासनवलयमिवावश्यमरणाय सकलजगदप्रतिहतशासनेन कुसुमधन्वना विसर्जितं दधानम्, उद्भूतसाध्वसोत्कम्पतरलितया केतकीगर्भसूच्या क्व परं गम्यते हतोऽसि मयेति मन्मथप्रथमसहायस्य चन्द्रमसः कलयेव कर्णान्तलग्नया तर्ज्यमानमद्वेगावर्जितेन नयनजलस्रो-

---

किन्तु फिर दर्शन देना उचित नहीं समझा। इस विषयमें सुगृहीतनामा देव पुंडरीक कर ही क्या सकते थे, जब कि मरते ही उन्हें वह दिव्य पुरुष उठा ले गया। किंतु कपिंजल तो जीवित दशामें उसके पीछे-पीछे गया था। इतना समय व्यतीत हो गया, लेकिन उस निष्ठुरने भी कुछ खबर नहीं दी।' ऐसी-ऐसी बहुतेरी व्यर्थकी बातें सोचती हुई मैं इस दुखदायी जीवनसे घिरकर जागती रही।

उसी समय मैंने उस युवकको अपनी ओर आते देखा। वह बहुत धीरे-धीरे पैर आगे बढ़ा रहा था। उसके पाँवसे लेकर समस्त शरीरमें रोमांच इस प्रकार दीख रहा था कि जैसे उसपर निरंतर बरसनेवाले कामदेवके बाण चुभे हुए हों। केतकीके खिले पुष्पसे निकले रजसमूहकी भाँति गौरवर्ण होनेके कारण वह ऐसा लग रहा था कि जैसे कामदेवने उसे पहले ही जलाकर भस्म कर दिया हो। सारे संसारमें जिसका निर्बाध शासन चलता है, उस कामदेवके द्वारा जैसे अवश्य मरनेके निमित्त प्रदत्त आज्ञावलयके समान मृणालका कंकण उसने अपने हाथोंमें पहन रक्खा था। भय एवं कम्पके कारण चञ्चल और कानकी लौमें चिपकी कामदेवके मुख्य साथी चन्द्रमाकी कलाके समान केतकीकी बाली हिलती हुई मानो कह रही थी कि 'अब तू कहाँ जायगा ? मेरे द्वारा तू मर चुका है।' यों कहकर वह उसे जैसे धमका रही थी। प्रबल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तस्मात्मने जलमिव प्रयच्छन्तम्, आत्मेच्छयैव मत्करग्रहणाय निर्वर्ति-तस्नानमिव स्वेदाम्भसा, न युक्तमेव ते परहृदयमविज्ञायोपगन्तुमिति पदे पदे निवार्यमाणमिव गुरुणोरुस्तम्भेन, दूरत एव मदालिङ्गनालीकाशया प्रसारितभुजयुगलम्, उत्कलिकासहस्रविषमं रागसागरमिव प्रतरन्तम्, अनवरतप्रवृत्तैराकृष्यमाणमिव पुरस्ताद्दीर्घैर्निःश्वासमरुद्भिरुह्यमानमिव दिङ्मुखप्लाविना ज्योत्स्नापूरेण, रणरणकशून्यमुच्छुष्काननं, प्रोन्मुक्तं सत्त्वेन, प्रतिपन्नं कृपणतया, अवधीरितं धैर्येण, संगृहीतं तरलतया, विसर्जितं लज्जया, अधिगतं धाष्टर्येन, दूरीकृतं परलोकभीत्या, विमुक्तं युक्तायुक्तविचारेण, संकल्पजन्मन एव केवलं वशे स्थितम्, आविष्टमिव मत्तमिवोन्मादादापदन्तम्, दूरतोऽपि दिवसनिर्विशेषेण चन्द्रातपेन विबोध्यमानं तमेव युवानमद्राक्षम्।

उद्वेगके कारण निकलनेवाले आँसुओंसे जैसे वह अपने लिए स्वयं जलाञ्जलि दे रहा था। जैसे अपने आप निकले पसीनेमें नहाकर मेरा पाणिग्रहण करनेके लिए आकुल था। 'बिना दूसरेके हृदयका हाल जाने इस प्रकार तेरा जाना उचित नहीं है' यों कहकर उसकी भरी हुई जाँघें जैसे उसे पग-पगपर रोक रही थीं। मेरा आलिंगन करनेकी व्यर्थ आशा करके दूर ही से दोनों हाथ फैलाये हुए वह ऐसा लग रहा था कि जैसे हजारों प्रकारकी भयंकर उत्कण्ठारूपिणी लह-रियोंवाले अनुरागके समुद्रमें तैर रहा हो। अनवरत चलनेवाले निःश्वासोंकी वायु जैसे उसे आगेकी ओर घसीट रही थी। दसों दिशाओंमें बहनेवाला चाँदनीका प्रवाह जैसे उठाकर लिये आ रहा था। उत्सुकताके प्राबल्यसे उसका मुख सूख गया था। साहसने उसका साथ छोड़ दिया था। दीनता उसके शरीरसे चिपकी हुई थी। धैर्यने उसको ठुकरा दिया था। चंचलताने उसे छोप रखा था। लज्जाने उसको त्याग दिया था। निर्लज्जताके कारण उसपर ढिठाई सवार हो गयी थी। परलोकका भय भाग गया था। उचित-अनुचितके विचारने उसे छोड़ दिया था। अब वह सर्वथा एकमात्र काम-देवके अधीन था। दिनकी भाँति जगमगाते चन्द्रमाके प्रकाशमें वह दूरसे ही पहचाना जा सकता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दृष्ट्वा च तं तादृशं निःस्पृहाप्यात्मनि परं भयमुपगतवती चेतस्यचिन्तयम्—'अहो, कष्टमापतितम्। यद्ययमुन्मादादागत्य पाणिनापि स्पृशति मां तदा मयेदमपुण्यहतकं शरीरमुत्स्रष्टव्यम्। तच्चिराद् देवस्य पुण्डरीकस्य पुनर्दर्शनप्रत्याशया दुःखोत्तरमप्यङ्गीकृतं व्यर्थतां मे यातं प्राणसंधारणम्' इति। स त्वेवं विचिन्तयन्तीमेव मामुपसृत्याब्रवीत्—'चंद्रमुखि, हन्तुमुद्यतो मामयं कुसुमशरसहायश्चन्द्रमाः। तच्छरणमागतोऽस्मि। रक्ष मामशरणमनाथमार्तमप्रतीकारक्षममात्मना त्वदायत्तजीवितम्। शरणागतपरित्राणं हि तपस्विनामपि धर्म एव। तद्यदि मामात्मप्रदानेन नात्र संभावयसि तदा हतोऽहमाभ्यां कुसुमशरशशिशरकराभ्याम्' इति। अहं तु तदाकर्ण्य धिगित्युत्तमाङ्गनिर्गतज्वालेव रोषानलेन निर्दहन्तीव तम्, उन्मिषद्बाष्पस्फुलिङ्गया दृष्ट्या तदा तर्जयतीव, आपादतलादुत्कम्पितगात्रयष्टिरुविष्टेव, आत्मानमप्यचेतयमाना क्रोधावेगरूक्षाक्षरमवदम्—

इस दशामें उसे देखकर मुझे बड़ा डर लगा और मन ही मन मैंने सोचा—'अहो! बहुत बड़ा संकट आ गया। उन्मादवश यदि यह हाथसे छू भी लेगा तो मुझे यह अभागा तन त्याग देना पड़ेगा। देव पुंडरीकके पुनः दर्शनकी आकांक्षासे नाना प्रकारके कष्ट सहकर चिरकालतक मेरा प्राण धारण करना व्यर्थ हो गया। मैं यह सोच ही रही थी कि इतनेमें वह युवक मेरे पास आ गया और कहने लगा—'चन्द्रमुखी! कामदेवका सहायक चन्द्रमा मुझे मार डालनेको उद्यत है। इसीसे मैं तुम्हारी शरणमें आया हूँ। मैं असहाय हूँ, अनाथ हूँ, दुखिया हूँ और किसी प्रकार भी इस दुःखका प्रतीकार करनेमें असमर्थ हूँ। अतएव जैसे भी हो वैसे तुम मेरी रक्षा करो। शरणागतकी रक्षा करना तपस्वियोंका भी धर्म है। अब यदि तुम आत्मदान करके मुझे न बचाओगी तो कामदेव तथा चन्द्रमा ये दोनों मिलकर मुझे मार डालेंगे।' उसकी यह बात सुनकर तो जैसे धिक्कारके साथ मेरे माथेसे क्रोधाग्निकी लपटें निकलने लगीं और उन्हीं लपटोंमें उसे झुलसती हुई मैं आँसूरूपी एवं चिनगारीयुक्त आँखोंसे तरेरने लगी। उस अवसरपर क्रोधके कारण पैरसे लेकर सिरतक मेरा सारा शरीर काँप रहा था। क्रोधके वशीभूत होनेके कारण पागल जैसी होकर मैं अपने आपको भी भूल गयी और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'आः पाप, कथमेवं वदतो मामुत्तमाङ्गे ते न निपतितं वज्रम्, अवशीर्णा वा न सहस्रधा जिह्वा, विह्वलतां न गता वा वाणी, नष्टानि वा नाक्षराणि। मन्ये च न सन्त्येव तेऽस्मिञ्शरीरे सकललोकशुभाशुभसाक्षिभूतानि पञ्चमहाभूतानि। येनैवं वदन्नाग्निना भस्मीकृतोऽसि, न वायुनाधूतोऽसि, नाम्भसा प्लावितोऽसि, न धरित्र्या रसातलं प्रवेशितोऽसि, नापि तत्क्षणमेवाकाशेनात्मनिर्विशेषतां नीतोऽसि, अव्यवस्थितो व्यवस्थितेऽस्मिंल्लोके कुतस्त्वमुत्पन्न एवंविधः। यस्तिर्यग्जातिरिव कामचारी न किंचिदपि वेत्सि। येनैवं खलु हतविधात्रा केनाप्युपदर्शितमुखरागः स्वपक्षपातमात्रप्रवृत्तिरनिरूपितस्थानास्थानवादी शुक इव वक्तुमेवं शिक्षितस्तेनैव किमुत तस्यामेव जातौ न निक्षिप्तोऽसि, तेनैकान्तहासहेतुरेवं वदन्नपि न क्रोधमुत्पादितवानसि। त्वदुक्तेर्दुःखिताहं ते संविभागमिमं करोमि, येनात्मवचनानुरूपां जातिमापन्नो नैवास्मद्विधाः कामयसे, इत्युक्त्वा चन्द्राभिमुखीभूत्वा कृताञ्जलिः पुनरवदम्—'भग-

---

बड़े ही रूखे शब्दोंमें मैंने उससे कहा—'अरे पापी! ऐसा कहते समय तेरे सिरपर वज्र नहीं गिर पड़ा? तेरी जीभके हजारों टुकड़े नहीं हो गये? तेरी वाणी विकल नहीं हो गयी? तेरी बोलनेकी शक्ति ही नष्ट नहीं हो गयी? मैं तो समझती हूँ कि तेरे इस शरीरमें सब लोकोंके साक्षीस्वरूप पंचमहाभूत नहीं रह गये हैं। तभी तो मुझसे ऐसा कहते समय तुझे अग्निने भस्म नहीं कर डाला, वायु उड़ा नहीं ले गयी, जलने नहीं डुबो दिया, पृथिवीने रसातलमें नहीं भेज दिया और आकाशने तत्काल अपनेमें विलीन नहीं कर लिया। शास्त्रीय मर्यादामें आबद्ध इस संसारमें मर्यादाकी चिन्ता न करनेवाला तू दुष्ट कैसे उत्पन्न हो गया? जिस मुए विधाताने तुझे किसी कारणवश तोतेके समान मुखराग अर्थात् बकवास अथवा चोंचकी लाली दी और केवल पक्षपात अर्थात् स्वार्थ अथवा परके सहारे उड़ना एवं योग्यायोग्य स्थानका विचार किये विना बोलना सिखाया। उसीने तुझे उसी पक्षीकी योनिमें जन्म क्यों नहीं दिया। तेरी इन बातोंको सुनकर मुझे तो हँसी आती है, क्रोध नहीं आता। तेरे वचनोंसे दुःखिनी होकर मैं तेरा यह दुःख अवश्य बाँटे लेती हूँ कि जिससे तू अपनी वाणी के अनुरूप योनिमें उत्पन्न होकर फिर कभी मुझ जैसी साध्वी नारियोंकी कामना न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वन्, परमेश्वर, सकलभुवनचूडामणे, लोकपाल, यदि मया देवस्य पुंड-रीकस्य दर्शनात्प्रभृति मनसाप्यपरः पुमान्न चिन्तितस्तदानेन मे सत्यवचनेनायमलीककामी मदुदीरितायामेव जातौ पततु' इति। मद्वचसोऽस्यानन्तरमेव च न वेद्मि किमसह्यवृत्तेर्मदनज्वरस्यावेगात्, उत सद्योविपाकस्यात्मनो दुष्कृतस्य गौरवात्, आहोस्विन्मद्वचसः सामर्थ्यादेव च्छिन्नमूलस्तरुरिवाचेतनः क्षितावपतत। अतिक्रान्तजीवितेऽस्मिन्कृताक्रन्दान्तर्जनाच्छ्रुतवती यथासौ महाभागस्यैव मित्रं भवति' इत्युक्त्वा च त्रपावनम्रमुखी महीं महायसाश्रुवेगेन तूष्णीमेव प्लावितवती। चंद्रापीडस्य तु तदाकर्ण्य कर्णान्तायतलोचनद्वयामीलनभग्नदृष्टेर्भ्रष्टवचनसौष्ठवस्य 'भगवति, कृतप्रयत्नायामपि भगवत्यामपुण्यभाजास्मिञ्जन्मनि मया न प्राप्तं देव्याः कादम्बर्याश्चरणपरिचर्यासुखम्, तज्जन्मान्तरेऽपि मे भगवती संपादयित्री भूयात्' इति गदत एव कादम्बरीसमागमाप्राप्तिदुःखेनेव भेदोन्मुखं मुकुलमिव शिलीमुखाघातात्स्वभावसरसं

कर सके।' ऐसा उससे कहनेके बाद मैंने दोनों हाथ जोड़कर चन्द्रमासे कहा—'हे भगवन्! हे परमेश्वर! हे समस्त भुवनके चूडामणि! हे लोकपाल! यदि मैंने पुण्डरीकको देखनेके बाद अपने मनमें किसी अन्य पुरुषका चिन्तन न किया हो तो मेरे इस सत्य वचनके अनुसार यह दुष्ट और कामी पुरुष मेरी कही हुई शुकयोनिमें जा पड़े।' मेरे यह कहते ही वह युवक न जाने असह्य कामज्वरके वेगसे, तुरन्त फल देनेवाले पापकी गुरुतासे अथवा मेरे उस वचनकी सामर्थ्यसे ही तत्काल अचेत होकर कटे हुए वृक्षकी भाँति धरतीपर गिर पड़ा। उसके मर जानेपर रुदन करनेवाले सेवकोंके मुखसे मैंने सुना कि 'वह आपका ही मित्र था।' ऐसा कह और लज्जासे माथा झुकाकर वह प्रबल अश्रुवर्षासे धरतीको भिगाने लगी। यह वृत्तान्त सुनकर कानोंतक फैले हुए नेत्र बन्द हो जानेके कारण चन्द्रापीडकी दृष्टि भंग हो गयी, वचनकी मिठास लुप्त हो गयी और कहा—'भगवति! आपके प्रयत्न करनेपर भी इस जन्ममें मुझ पुण्यहीनने कादम्बरीकी चरणसेवाका सुख नहीं पाया। अतएव जन्मान्तरमें आप यह काम सम्पन्न करिएगा।' यह कहते ही जैसे कादम्बरीका समागम न होनेके दुःखसे ही विदीर्ण हो जानेको उद्यत उसका स्वभावतः सरस हृदय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृदयमस्फुटत् ।

अथ महाश्वेतायाः शरीरमुत्सृज्य संभ्रमप्रतिपन्नचन्द्रापीडशरीरायां 'भर्तृदारिके, किं लज्जया । पश्य तावदन्यथैव कथमप्यास्ते देवश्चन्द्रापीडोऽयम् । भग्नेवास्य ग्रीवा न मूर्धानं धारयति । विचालितोऽपि न किंचिच्चेतयते । नान्तःप्रविष्टतारके समुन्मीलयति विलोचने । नायं यथावस्थितानां गात्राणामावरणं करोति । नोच्छ्वसिति हृदयेन । हा देव चन्द्रापीड, चन्द्राकृते, कादम्बरीप्रिय, क्वेदानीं तया विना गम्यते' इत्युक्त्वा मुक्तार्तवचसि तरलिकायां, तिर्यगाभुग्नचन्द्रापीडमुखनिहितनिश्चलस्तब्धदृष्टिनिश्चेष्टायां महाश्वेतायाम् 'आः पापे दुष्टतापसि, किमिदं त्वया कृतम् । अपकृताखिलजगत्पीडस्य तारापीडस्य कुलमुत्सारितम् । अनाथीकृताः प्रजाः सहास्माभिः । भग्नाः पन्थानो गुणानाम् । अर्गलिताः ककुभोऽर्थिलोकस्य । कस्य वदनमीक्षतां लक्ष्मीः । कोऽवलम्बनं भ-

---

भौंरोंके आघातसे तुरन्त खिलनेवाली कलीकी तरह विदीर्ण हो गया ।

इसके बाद महाश्वेताका शरीर छोड़कर घबराहटके साथ चन्द्रापीडके शरीरको सहारा देती हुई तरलिका बोली—'भर्तृदारिके ! अब लज्जा करनेसे क्या लाभ ? इधर देखिए, देव चन्द्रापीडकी दशा कुछ और ही हुई जा रही है । इनकी गर्दन जैसे टूट गयी है । इसी कारण वह कन्धेपर नहीं टिकती । हिलाने-डोलानेपर भी इन्हें होश नहीं आता । पुतलियाँ भीतर धँस जानेके कारण इनके नेत्र नहीं खुलते । इनके अङ्ग ज्योंके त्यों पड़े हैं, ये उन्हें ढाँकते नहीं । हृदयकी धड़कन बन्द हो गयी है । हा देव चन्द्रापीड ! हाय चन्द्राकृते ! हा कादम्बरीप्रिय ! उसे छोड़कर तुम कहाँ जा रहे हो ?' ऐसा कहती हुई तरलिका जब बड़े जोरसे चिचिया उठी । तब कुछ तिरछे होकर मुड़े चन्द्रापीडके मुखपर निश्चल तथा स्तब्ध दृष्टि डालकर महाश्वेता भी अचेत हो गयी । तभी चन्द्रापीडके परिजन धरतीपर लोटते हुए इस प्रकार विलाप करने लगे—'अरी पापिनी और दुष्ट तपस्विनी ! तूने यह क्या कर डाला ? सारे संसारकी पीडाका अन्त करनेवाले तारापीडके वंशका अन्त कर दिया ? हम लोगोंके साथ सारी प्रजाको तूने अनाथ कर दिया ? समस्त गुणोंकी राह रोक दी ? याचकोंके मार्गमें अर्गला डाल दी ? अब लक्ष्मी किसका मुँह निहारेगी ? इस धरतीका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वतु भूमेः । कं सेवन्तां सेवकाः । त्वया विना संप्रति व्यसनमेव सेवा संवृत्ता । वृत्तं समानशीलत्वम् । अस्तमिता च परिजनश्लाघा । लघूकृतो भृत्यादरः । दूरं गतानि प्रियालपितानि । समाप्ताः परित्यागकथाः । त्वं कथं कथावशेषीभूतोऽसि । भूतपूर्वाः कमुपयान्तु संप्रति प्रजाः। क्व संप्रति साधूनां समाधानम् । अधुना धूर्धरे त्वयि विपन्ने कः समुद्वहतु देवेन तारापीडेनोढां धुरम् । धीरस्यापि ते कथं कातरस्येव शुचा भिन्नं हृदयम् । दयालोरपि ते केयमद्येदृशी जाता निर्दयताऽस्मासु । देव, प्रसीद सकृदप्याज्ञापय । देहि भक्तजनस्याभ्यर्थनाम् । प्रतिपद्यस्व प्राणान् । न त्वया विना क्षणमपि प्राणिति पुत्रवत्सलो देवस्तारापीडः, न देवी विलासवती, नाप्यार्यः शुकनासः, न मनोरमा, न राजानः, नापि प्रजाः। परित्यज्य च सर्वानेकाकी क्व प्रस्थितोऽसि । कुतस्तवेयमेकपद एवेदृशी निष्ठुरता जाता । क्व सा गुरुजनस्योपरि भक्तिर्यदेवमनपेक्ष्य प्रयासि'

कौन सहारा होगा ? सेवक किसकी सेवा करेंगे ? हाय देव चन्द्रापीड ! आपके बिना सेवा व्यसन बन गयी । समानशीलता जाती रही । सेवकोंके प्रति होनेवाले आदरभावका अन्त हो गया । मीठी बातें समाप्त हो गयीं । त्यागकी भावना भाग गयी । आप अब कहानीमात्र शेष रह गये। आपकी पुरानी प्रजा अब किसके पास जायगी ? सज्जनोंका समाधान अब कौन करेगा ? आप सरीखे धुरन्धरके चले जानेपर महाराज तारापीडके वहन किये हुए धुरेके भारको कौन उठायेगा ? इतने धैर्यशाली होते हुए भी एक कायरकी भाँति आपका हृदय शोकसे क्यों विदीर्ण हो गया ? दयालु होते हुए भी आप आज हम सबपर इस तरह निर्दयी क्यों हो गये ? हे देव ! अब प्रसन्न होकर एक बार हमें कुछ आज्ञा दीजिए । हम भक्तजनोंकी प्रार्थना पूर्ण करके प्राणोंको पुनः धारण करिए । क्योंकि आपके बिना पुत्रवत्सल महाराज तारापीड, महारानी विलासवती, आर्य शुकनास, देवी मनोरमा, अन्यान्य राजे तथा प्रजाजन, इनमेंसे कोई एक क्षणके लिए भी न जीवित रह पायेगा । इन सबको त्यागकर आप अकेले कहाँ चले गये ? एकाएक आपमें ऐसी निष्ठुरता कहाँसे आ गयी ? आपकी वह गुरुजनोंके प्रति अटूट भक्ति कहाँ चली गयी, जो उनकी अपेक्षा किये बिना ही आप चले जा रहे हैं ?' परिजनोंका यह करुण क्रन्दन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्युक्तवत्यवनितलविमुक्तात्मन्यारटति परिजने, तदाकर्णनोत्कर्णे 'हाहा, किमेतत्' इत्युद्भ्रान्तमनसि समापतति राजपुत्रलोके, समुत्प्लुतोत्पक्ष्मनयनदर्शिनि चन्द्रापीडवदननिवेशितदृशि दीनतरहेषारवकृताक्रन्दे शुचेव पर्यायोत्क्षिप्तखुरचतुष्काहतक्ष्मातले मुहुर्मुहुरात्मोन्मोचनायेवाच्छोटितखरखलीनकनकशृङ्खलायोगे तुरंगमतां मुमुक्षतीवेन्द्रायुधे, पत्रलेखानिवेदितचन्द्रापीडगमना चन्द्रोदयोल्लासिनी वेलेव महोदधेः समकरध्वजा व्याजीकृत्य महाश्वेतादर्शनं मातापित्रोः पुरः प्रतिपन्नशृङ्गारवेषाभरणा रणन्नूपुरयुगेन मुखरमेखलादाम्ना रम्योज्ज्वलाकल्पेन कल्पितानङ्गबलविभ्रान्तिना गृहीतसुरभिमाल्यानुलेपनपटवासाद्युपकरणेन नातिबहुना परिजनेनानुगम्यमाना पुरः केयूरकेणोपदिश्यमानमार्गा पत्रलेखाहस्तावलम्बिनी मदलेखया सह कृतालापा 'मदलेखे, पत्रलेखा कथयति प्रत्य-

---

उन साथवाले राजपुत्रोंको सुनायी दिया तो वे भी 'हाय-हाय ! यह क्या हो गया !' ऐसा कहते और घबड़ाये हुए तुरन्त रोते-चिल्लाते वहाँ आ पहुँचे । उधर अपनी चंचल पुतलियोंवाले नेत्र खोल तथा चन्द्रापीडके मुखपर दृष्टि जमाकर इन्द्रायुध बड़ी दीनताके साथ हिनहिनाता हुआ रोने लगा । शोकाधिक्यके कारण बारी-बारीसे वह चारों पाँवोंको उठा-उठाकर पृथिवीपर इस तरह पटकने लगा, जैसे अश्वयोनिसे छुटकारा पानेके लिए ही वह तीखी लगाम तथा स्वर्णमयी शृंखलाको तोड़े डालता था । उसी समय पत्रलेखाके मुखसे चन्द्रापीडके आगमनकी खबर पाकर चन्द्रोदयसे उल्लसित समुद्रतटकी भाँति कामातुरा कादम्बरी माता-पिताके समक्ष महाश्वेतासे मिलनेका बहाना करके चन्द्रापीडके दर्शनार्थ बड़ी उतावली होकर वहाँ जा पहुँची । वह शृङ्गारोचित समस्त वेश-भूषा धारण किये थी । उसके नूपुर रुनझुनकी मधुर ध्वनि कर रहे थे । करधनी खनखना रही थी । उस समय उज्ज्वल वस्त्रधारिणी कादम्बरीको देखकर ऐसा भ्रम होता था कि जैसे वह कामदेवकी सेना हो । उसकी थोड़ी-सी दासियाँ सुगन्धित मालायें, अङ्गराग (उबटन) और पटवास (कपड़े सुगन्धित करनेका पाउडर) आदि सामग्रियें लिये उसके पीछे-पीछे चल रही थीं । आगे-आगे चलकर केयूरक रास्ता दिखा रहा था। कादम्बरी पत्रलेखाका हाथ थाम्हे थी और मदलेखासे बातें करती चलती थी। उसी सिलसिलेमें उसने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इमहं पुनस्तस्यैकान्तनिष्ठुरहृदयस्य शठमतेर्निर्घृणमनसो निस्पृहागमन-मेव न श्रद्दधे। किं न स्मरसि तत्तस्य मदवस्थामश्रद्दधानस्य हिमगृहके मद्धितविमर्शाय दुर्विदग्धबुद्धेर्वक्रभाषितं यत्र सस्मितमालोकितया त्वयैवास्मै सुतरामेवासंशयकारि प्रत्युत्तरं दत्तम्। तदसौ मरणेऽपि मे न श्रद्धधात्येवमामवस्थाम्। अन्यथा यदि मदर्थे दुःखमेवमियमनुभवतीत्येतदस्याभविष्यत्तदा तथा गमनमेव नाकरिष्यत्। तथागतोऽप्यसौ यत्किमपि वक्तव्यस्त्वयैव। मया पुनर्दृष्टोऽपि नालपितव्यो नोपालब्धव्यो न चरणपतितस्याप्यनुनयो ग्राह्यो नाहं प्रियसख्या प्रसादनीया' इत्यभिदधानैवाचेतितागमनखेदा कादम्बरी चन्द्रापीडदर्शनायोत्ताम्यन्ती तत्रैवाजगाम।

आगम्य चोद्धृतामृतमिव रत्नाकरम्, इन्दुविरहितमिव निशाप्रबन्धम्, अस्तमिततारागणमिव गगनम्, अपचितकुसुमशोभमिवोपवनम्,

---

कहा—'मदलेखे! पत्रलेखा कहती है कि मैं नित्य उन नितान्त निष्ठुर, शठमति तथा क्रूर हृदयवाले राजकुमारके आगमनकी प्रतीक्षा करती हूँ। किन्तु मुझे ऐसा विश्वास नहीं होता कि वे बेकार यहाँ आयेंगे। क्या तुम्हें स्मरण नहीं है कि उस दिन हिमगृहमें मेरी दशाको देखकर भी विश्वास न करते हुए उस दुर्विदग्ध बुद्धिने मेरा हाल जाननेके लिए कैसी पेंचीदी बातें कही थीं। उस समय मुसकानभरी निगाहोंसे मेरे निहारनेपर तुम्हींने तो उन्हें दोटूक जवाब दिया था। सो वे मेरे मर जानेपर भी ऐसी विकल दशापर विश्वास न करेंगे। अन्यथा यदि उन्हें यह ख्याल होता कि 'यह बेचारी मेरे ही कारण इस प्रकार कष्ट झेल रही है' तो मुझे छोड़कर जाते ही क्यों! अतएव वे यदि आये भी हों तो उनसे जो करना हो, वह तुम्हीं बात करना। यदि मैं उन्हें देखूँगी भी तो न उनसे बोलूँगी और न कोई उलाहना दूँगी। यदि वे मेरे पाँवोंपर गिरेंगे, तब भी मैं उनका अनुनय-विनय न सुनूँगी। हाँ, उस समय तुम भी मुझे मनानेका प्रयत्न न करना।' इस प्रकार बातें करती-करती वह आ पहुँची और उसे इतना चलनेपर भी कुछ खेद नहीं हुआ।

यहाँ पहुँचकर उसने अमृतविहीन समुद्रकी भाँति, चन्द्रविहीन रात्रिकी भाँति, अस्त हो गये नक्षत्रोंवाले आकाशकी भाँति, जिसके पुष्प तोड़ लिये

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत्खातकर्णिकमिव कमलम्, उत्खण्डिताङ्कुरमिव मृणालम्, अवलुप्ततरलमिव हारम्, उन्मुक्तजीवितं चन्द्रापीडमद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च तं सहसा 'हा, किमिदम्' इत्यधोमुखी धरातलमुपयान्ती कथंकथमपि मुक्ताक्रन्दया मदलेखयाऽधार्यत। पत्रलेखा पुनरुन्मुच्य कादम्बरीकरतलमचेतना क्षितिमुपागमत्। चिराच्च लब्धसंज्ञापि कादम्बरी तथैव मूढेव निश्चलस्तब्धदृष्टिराविष्टेव स्तम्भितेव निष्प्रयत्ना निःश्वसितुमपि विस्मृतान्तर्मन्युभारनिष्पन्देव चन्द्रापीडवदनसमर्पिताक्षी श्यामारुणानना ग्रहोपरक्तेन्दुबिम्बेव पौर्णमासीनिशा निशितपरशुपातोत्कम्पिनी लतेव वेपिताधरकिसलया लिखितेव स्त्रीस्वभावविरुद्धेन चेतसा तस्थौ। तथावस्थितां च तामुन्मुक्तार्तनादा सपादपतनं मदलेखाऽब्रवीत्—'प्रियसखि, प्रसीद। उत्सृजेमं मन्युसंभारमरटन्ती। वाष्पमोक्षेणामुच्यमानेऽस्मिन्निक्षतमतिभारोत्पीडितं तटाकमिव सरसमृदु नियतं सहस्रधा स्फुटति ते हृदयमि-

---

गये हों ऐसे उपवनकी तरह, जिसकी कर्णिका निकाल ली गयी हो ऐसे कमलकी भाँति, जिसका अंकुर खंडित कर दिया गया हो ऐसे मृणालकी भाँति और मध्यमणिसे हीन हारकी भाँति प्राणहीन चन्द्रापीडको कादम्बरीने देखा। उसे देखते ही 'हाय, यह क्या!' यह कहकर वह औंधे मुँह धरतीपर गिरने लगी, किन्तु रोती और जोर-जोरसे चिल्लाती हुई मदलेखाने उसे किसी-किसी तरह बीचमें ही सम्हाल लिया। किन्तु पत्रलेखा तो कादम्बरीका हाथ छोड़ और मूर्छित होकर गिर पड़ी। बड़ी देर बाद सचेत होनेपर भी कादम्बरी ज्योंकी त्यों मूढ़की नाईं निश्चल एवं स्तब्ध आँखों सहित जैसे आविष्ट हो, स्तम्भित हो, सर्वथा निश्चेष्ट हो, साँस तक लेना भूलकर, आन्तरिक शोकके बोझसे निश्चल-सी होकर, केवल चन्द्रापीडके मुखपर दृष्टि जमाये, अपने श्याम तथा अरुण मुखसे राहुग्रसित चन्द्रमावाली पूर्णिमाकी रातके सदृश, तीखे परशुके प्रहारसे काँपनेवाली लताकी भाँति कम्पित अधर पल्लवयुक्त, नारीजातिके स्वभावके विपरीत चित्तको शान्त करके चित्रलिखितके समान खड़ी रह गयी। उसे इस प्रकार चुपचाप खड़ी देखकर बड़े ही आर्तस्वरमें रोती हुई मदलेखा उसके पैरोंपर गिर पड़ी और कहने लगी—'प्रिय सखी! कृपया रुदन करके शोकके भारको दूर कर लीजिए। यदि आप आँसू गिराकर उसे दूर न करेंगी तो

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्यपेक्षस्व देवीं मदिरां देवं च चित्ररथम्। त्वया विना कुलद्वयमपि नास्ति' इत्युक्तवतीं मदलेखां कादम्बरी विहस्याब्रवीत्—'अयि उन्मत्तिके, कुतोऽस्य मे वज्रसारकठिनस्य हतहृदयस्य स्फुटनम्। यन्नालोक्यैव सहस्रधा स्फुटितम्। अपि च या जीवति तस्याः सर्वमिदं माता पिता बन्धुरात्मा सख्यः परिजन इति। मया पुनर्म्रियमाणया जीवितभूतं कथंकथमपि समासादितमिदं प्रियतमशरीरं यज्जीवदजीवद्वा संभोगेनानुमरणेन वा द्विधापि सर्वदुःखानामेवोपशान्तये। तत्किमिति देवेनागच्छता मदर्थं प्राणांश्चोत्सृजता सुदूरमारोपितं गुरुतां च नीतमात्मानमश्रुपातमात्रेण लघूकृत्य पातयामि। कथं स्वर्गगमनोन्मुखस्य देवस्य रुदितेनामङ्गलं करोमि। कथं वा पादधूलीरिव पादावनुगन्तुमुद्यता हर्षस्थानेऽपि रोदिमि। किं मे दुःखमेवंविधम्। अधुना तु मे सर्वदुःखान्येव दूरीभूतानि। किमद्यापि रुद्यते। यदर्थं कुलक्रमो न गणितः,

---

शोकके बड़े भारी बोझसे तड़ागके सदृश आपका सरस एवं कोमल हृदय फटकर हजारों टुकड़ोंमें विभक्त हो जायगा। अतएव आप शोक दूर करके महारानी मदिरा तथा महाराज चित्ररथका ख्याल करें। आपके बिना माता और पिता दोनोंके कुलका अन्त हो जायगा।' यों कहती हुई मदलेखासे कादम्बरीने हँसकर कहा—'अरी पगली! जब इन्हें इस दशामें देखते ही यह नहीं विदीर्ण हो गया तो अब यह वज्रसारके समान कठोर मुआ हृदय क्यों फटेगा? और फिर जो जीवित हो, उसके माता-पिता, बन्धु-बान्धव, आत्मीय तथा परिजन आदि होते हैं। परन्तु मैं तो वैसे ही मर रही थी, अब मुझे किसी-किसी प्रकार जीवनके कारणस्वरूप मेरे प्रियतमका शरीर प्राप्त हो गया है। जो कि जीवितदशामें संभोगसे और मृत अवस्थामें स्वयं भी मर जानेसे दोनों तरह मेरे समस्त दुःखोंका अन्त कर सकता है। अतएव मेरे लिए यहाँ आ तथा प्राण त्यागकर देव चन्द्रापीडने मुझे गौरवके उच्च शिखरपर चढ़ाया है। तब मैं आँसू बहाकर अपने आपको हल्की बनाती हुई नीचे क्यों गिराऊँ? रुदन करके स्वर्ग जाते हुए अपने प्रियतमका मैं अमङ्गल किस लिए करूँ? चरणधूलिकी भाँति उनके चरणोंका अनुगमन करनेको उद्यत होती हुई भी मैं इस हर्षके अवसरपर रोऊँ क्यों? और फिर मुझे दुःख ही क्या है? अब तो मेरे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुरवो नापेक्षिताः, धर्मो नानुरुद्धः, जनवादान्न भीतम्, लज्जा परित्यक्ता, मदनोपचारैः सखीजनः खेदितः, दुःखिता मे प्रियसखी महाश्वेता। तस्याः कृते प्रतिज्ञातमन्यथा जातं मयेत्येतदपि चेतसि न कृतम्। तस्मिन्मदर्थमेवोज्झितप्राणे प्राणेश्वरे प्राणान्प्रतिपालयन्ती त्वयैवं किमुक्ताहम्। अस्मिन्समये मरणमेव जीवितम्। जीवितं पुनर्मरणम्। तद्यदि ममोपरि स्नेहः, करोषि मत्प्रियं हितं वा, तन्ममोपरि स्नेहाबद्धयापि प्रियसख्या तथा कर्तव्यं यथा न तातोऽम्बा च मच्छोकादात्मानं परित्यजतः। यथा च मयि वाञ्छितं मनोरथं त्वयि पूरयतः। परलोकगताया अपि मे जलाञ्जलिदानाय पुत्रकस्त्वयि भवतु। यथा च मे सखीजनः परिजनो वा न स्मरति, शून्यं वा मद्भवनमालोक्य न दिशो गृह्णन्ति, तथा करिष्यसि। पुत्रकस्य मे भवनाङ्गणे सहकारपोतस्य त्वया मच्चिन्तयैव माधवीलतया सहोद्वाहमङ्गलं स्वयमेव निर्वर्तनीयम्। मच्च-

---

सारे संकट कट गये। तब क्या अब भी राऊँ? जिसके लिए मैंने कुलकी मर्यादा नहीं गिनी, गुरुजनोंकी परवाह नहीं की, धर्मका अनुरोध नहीं माना, लोकापवादसे भय नहीं किया, लज्जा त्याग दी, विविध मदनोपचार करके सखियोंको कष्ट दिया, अपनी परमप्रिय सखी महाश्वेताको दुःख पहुँचाया और उसके लिए मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, उसके टूट जानेपर भी ध्यान नहीं दिया। सो उन प्राणनाथने मेरे ही लिए प्राण त्याग दिया। अब उन्हींके साथ मरनेके लिए उद्यत मुझसे तूने यह क्या कह डाला! इस समय तो मेरा मरण ही जीवन है और जीवन ही मरण। अतएव यदि तेरा मुझपर स्नेह हो और तू मेरी भलाई चाहती हो तो स्नेहके बन्धनमें बँधी रहनेपर भी मेरी प्रिय सखी! तू ऐसा कुछ कर कि जिससे माता-पिता मेरे शोकमें अपने प्राण न त्यागें। इसके अतिरिक्त उनकी जो अभिलाषा मेरे द्वारा पूर्ण होनेवाली रही हो, वह तेरे द्वारा पूर्ण हो। जिससे कि मेरे मर जानेपर तेरी कोखसे उत्पन्न पुत्र उन्हें जलाञ्जलि दे सके। ऐसा प्रबन्ध करना कि जिससे मेरी सखियाँ और मेरे परिजन मेरा स्मरण न करें और महल सूना देखकर भाग न जायँ। मेरे महलके आँगनमें पुत्र सदृश पालित आमका जो छोटा-सा पौधा लगा है। उसके विषयमें जैसा मेरा विचार था, उसीके अनुसार तू स्वयं माधवी लताके साथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रणतललालितस्याशोकविटपस्य कर्णपूरार्थमपि न पल्लवः खण्डनीयः। मत्संवर्धिताया मालत्याः कुसुमानि देवतार्चनायैवोच्चेयानि। वासभवने मे शिरोभागनिहितः कामदेवपटः पाटनीयः। मया स्वयं रोपिताश्चूतवृक्षा यथा फलं गृह्णन्ति तथा संवर्धनीयाः। पञ्जरबन्धदुःखाद्वराकी कालिन्दी सारिका शुकश्च परिहासो द्वावपि मोक्तव्यौ। मदङ्कशायिनी नकुलिका स्वाङ्क एव शाययितव्या। पुत्रको मे वालहरिणस्तरलकः कस्मिंश्चित्तपोवने समर्पणीयः। पाणितलसंवर्धितं मे जीवंजीवमिथुनं क्रीडापर्वते यथा न विपद्यते तथा कर्तव्यम्। पादसहसंचारी हंसको यथा न हन्यते केनचित्तथा विधेयः। अपरिचितगृहवसतिः सा च बलाद्विधृता तपस्विनी वनमानुषी वन एवोत्स्रष्टव्या। क्रीडापर्वतकः कस्मैचिदुपशान्ताय तपस्विने प्रतिपादयितव्यः। शरीरोपकरणानि मे ब्राह्मणेभ्यः प्रतिपादनीयानि। वीणा पुनरात्मन एवाङ्कप्रणयिनी कार्या। अपरमपि यत्ते रोचते तदपि स्वीकर्तव्यम्। अहं पुनरिममममृतकिरणरश्मिभिर-

---

उसका विवाह कर देना। मेरे चरणतलसे लालित अशोक वृक्षके पत्ते कर्णपूर बनानेके लिए भी न तोड़ना। मेरी लगायी हुई मालतीके फूल केवल देवपूजाके लिए ही चुनना। मेरे कमरेमें पलङ्गके सिरहाने जो कामदेवका चित्र रक्खा हुआ है, उसे फाड़ डालना। मेरे हाथों लगाये आम्रवृक्षोंकी ऐसी सेवा करना कि जिससे वे भली भाँति फलें। पींजरेमें बन्द रहनेसे दुःखिनी बेचारी कालिन्दी मैना तथा परिहास नामके तोतेको उड़ा देना। सदा मेरी गोदमें सोनेवाली नकुलिकाको तुम अपनी गोदमें सुलाना। मेरे पुत्र हिरनके बच्चे तरलकको तपोवनमें भेज देना। मेरी हथेलीपर पले चकोरके जोड़े क्रीडापर्वतपर किसी प्रकारका कष्ट न पायें, ऐसा प्रबन्ध कर देना। मेरे पाँवोंके पीछे-पीछे चलनेवाले हंसोंको कोई मार न डाले, वह उपाय करना। गृहनिवाससे अनभिज्ञ और हठात् पकड़कर लायी गयी उस वनमानुषीको फिर जंगलमें छोड़वा देना। क्रीडापर्वत किसी शान्तचित्त तपस्वीको दे देना। मेरे वस्त्राभूषणादि सभी शारीरिक उपकरण ब्राह्मणोंको दे डालना। किन्तु मेरी वीणाको सदा अपनी गोदमें रखना। उसके अतिरिक्त भी जो वस्तु तुझे भाये, उसे ले लेना। मैं तो अब अमृतवर्षी चन्द्रमाकी किरणोंसे, सूखे चन्दनके लेपसे,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाश्यानचन्दनचर्चाभिरनवरतधारागृहासारसेकैरनेकसंतानतुहिनकर-किरणनिकरतारकिततारहारार्पणैर्मणिदर्पणप्रणयनेन मलयजजलार्द्र-पद्मिनीपत्रास्तरणेन सरसबिसकिसलयप्रस्तरैरकठोरमृणालतल्पकल्प-नयोगविकसितकमलकुमुदकुवलयशयनीयैश्च दग्धशेषमुज्ज्वलचिताज्वा-लामालिनी विभावसौ देवस्य कण्ठलग्ना निर्वापयाम्यात्मानम्' इत्यभिद-धानैव कृतावधारणानुबन्धां मदलेखामवक्षिप्योपसृत्य महाश्वेतां कण्ठे गृहीत्वा निर्विकारवदनैव पुनस्तामवादीत्—'प्रियसखि, तवास्ति कीदृश्यपि प्रत्याशा ययाऽनुरागपरवशा पुनः समागमाकाङ्क्षिणी क्षणे क्षणे मरणाभ्यधिकानि दुःखान्यनुभवन्ती जीवितमलज्जाकरमननुशो-च्यमनुपहसनीयमवाच्यं धारयसि। मम पुनः सर्वतो हताशायाः सापि नास्ति। तदामन्त्रये प्रियसखीं पुनर्जन्मान्तरसमागमाय' इत्यभिधायो-त्पद्यमानपुलककेसरोद्भासिन्यसमसाध्वसानिलाहतोत्कम्पोत्तरंग्यमाणान-न्दवाष्पवेगोर्मितरला संगलत्स्वेदमकरन्दविन्दुनिस्यन्दिनी मुकुलायमा-

---

निरन्तर छूटते फोहारेकी जलवर्षासे, चहुँ ओर फैलनेवाली चन्द्रकिरण सदृश चमकीले हारोंको धारण करनेसे, मणिदर्पणसे, चन्दनद्रवमें डुबाकर बिछाये गये कमलके पत्तोंसे, गीले मृणालोंकी सेजसे तथा प्रफुल्लित कमल-कुमुद-कुवलयपुष्पके बिछौनों द्वारा जलनेसे बाकी बची इस देहको देव चन्द्रापीडके गलेसे लिपटा तथा सुश्वेत चिताकी धधकती आगमें डालकर ठंढा करूँगी।' ऐसा कहती हुई कादम्बरी बलपूर्वक पकड़े मदलेखाको झटकारकर महाश्वेताके पास जा पहुँची और उसके गलेसे लिपट तथा निर्विकार मुख होकर कहने लगी—'प्रियसखी! तुम्हें तो अब भी किसी प्रकारकी आशा है, जिससे प्रेमके अधीन होकर पुनः प्रियमिलनकी अभिलाषावश प्रतिक्षण मरणसे भी अधिक दुखदायी कष्टोंको झेलती हुई अलज्जाकर, शोकशून्य, उपहासहीन और अनिन्द्य जीवनको बचा रही हो। किन्तु सर्वथा निराश होनेके कारण मेरे पास तो ऐसी कोई आशा भी नहीं है। अतएव प्रियसखी! अब जन्मान्तरमें पुनः मिलनेके लिए मैं तुमसे विदा ले रही हूँ।' ऐसा कहकर शरीरमें उमड़े रोमांचरूपी केसरसे सुशो-भित, असाधारण भयरूपी वायुके झोंकेसे आहत, उत्कम्पस्वरूपिणी तरंगोंमें लुढ़कती, आनन्दाश्रुओंके वेगरूपिणी लहरोंसे चंचल, टपकनेवाले स्वेदस्वरूप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ननयनकुमुदा कुमुदिनीव चन्द्रापीडचन्द्रास्तमयविधुरा तदवस्थेऽपि हृदयवल्लभे समागमसुखमिवानुभवन्ती सरभसमुपरिपर्यस्तचिकुरहस्तोद्वान्तकुसुमनिवहेन मूर्ध्नाऽर्चयित्वा चन्द्रापीडचरणौ स्रवत्स्वेदामृतार्द्राभ्यां कराभ्यामुत्क्षिप्याङ्केन धृतवती। अथ तत्करस्पर्शेनोच्छ्वसत इव चन्द्रापीडदेहाज्झटिति तुहिनमयमिव सकलमेव तं प्रदेशं कुर्वाणमव्यक्तरूपं किमपि चन्द्रधवलं ज्योतिरिवोज्जगाम। अनन्तरं चान्तरिक्षे क्षरन्तीवामृतमशरीरिणी वागश्रूयत—'वत्से महाश्वेते, पुनरपि त्वं मयैव समाश्वासितव्या वर्तसे। तत्ते पुण्डरीकशरीरं मल्लोके मत्तेजसाप्यायमानमविनाशि भूयस्त्वत्समागममाय तिष्ठत्येव। इदमपरं मत्तेजोमयं स्वत एवाविनाशि विशेषतोऽमुना कादम्बरीकरस्पर्शेनाप्यायमानं चन्द्रापीडशरीरं शापदोषाद्विमुक्तमप्यन्तरात्मना कृतशरीरसंक्रान्तेर्यो-

---

मकरन्दकी बूँदें चुआती, सम्पुटित होनेको उद्यत कुमुदसरीखी आँखोंवाली और चन्द्रापीडरूपी चन्द्रमाके अस्त हो जानेसे शोकाकुल कुमुदिनीकी नाईं कादम्बरी उस मृत दशामें भी जैसे हृदयवल्लभके समागमका आनन्द ले रही हो, इस तरह अपने केशकलापसे असंख्य पुष्प बरसानेवाले मस्तकसे चन्द्रापीडके दोनों चरणोंको नमन करके बहते हुए पसीनेके कारण गीले हाथोंसे उठाकर अपनी गोदमें रख लिया। इस प्रकार कादम्बरीके हाथोंका स्पर्श होते ही जैसे सजीव होकर साँस लेते हुए चन्द्रापीडकी देहसे समस्त प्रदेशको तुषारमय करती हुई अव्यक्त स्वरूप तथा चन्द्रमाके सदृश उज्ज्वल ज्योतिकी नाईं कोई वस्तु तुरन्त बाहर निकली। तदनन्तर अन्तरिक्षमें जैसे अमृतकी वर्षा करनेवाली यह अशरीरिणी आकाशवाणी सुनायी पड़ी—'वत्से महाश्वेते! मैं तुम्हें फिर आश्वासन देता हूँ। तुम्हारे प्रियतम पुंडरीकका शरीर मेरे तेजसे परिपुष्ट होता हुआ मेरे लोकमें इसलिए सुरक्षित रक्खा हुआ है कि जिससे उसके साथ फिर तुम्हारा समागम हो सके। दूसरा यह चन्द्रापीडका शरीर है, जो तेजोमय और स्वयं अविनाशी है। विशेष करके इस समय कादम्बरीके करस्पर्शसे यह और भी स्थायी हो गया है। शापदोषके कारण मृतक होता हुआ भी यह अपने आत्मबलसे दूसरेके शरीरमें प्रविष्ट हो जाने-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गिन इव शरीरमत्रैव भवत्योः प्रत्ययार्थमाशापत्तयादास्ताम्। नैतदग्निना संस्कर्तव्यम्। नोदके प्रक्षेप्तव्यम्। नापि वा समुत्स्रष्टव्यम्। यत्नतः परिपालनीयमासमागमप्राप्तेः' इति। तां तु श्रुत्वा किमेतदिति विस्मयाक्षिप्तहृदयः सर्व एव परिजनो गगनतलनिवेशितनिर्निमेषलोचनो लिखित इव पत्रलेखावर्जमतिष्ठत्। पत्रलेखा तु तेन तस्य ज्योतिषस्तुषारशीतलेनाह्लादहेतुना स्पर्शेन लब्धसंज्ञोत्थायाविष्टेव वेगाद्धावित्वा परिवर्द्धकहस्तादाच्छिद्येन्द्रायुधम् 'अस्मद्विधानां यथा तथा भवतु, त्वं पुनरेवमेकाकिनि विना वाहनं दूरं प्रस्थिते देवे क्षणमप्यवस्थातुं न शोभसे' इत्यभिदधाना तेनैवेन्द्रायुधेन सहात्मानमच्छोदसरस्यक्षिपत्।

अथ तयोर्निमज्जनसमयानन्तरमेव तस्मात्सरसः सलिलाच्छैवलोत्करमिव शिरसि लग्नं गलज्जलबिन्दुसंदोहमयथावलम्बिदीर्घशिखं मुखो-

---

वाले योगीकी भाँति इसी स्थानपर तुम दोनोंके विश्वासार्थ तबतक रहेगा, जबतक कि इसके शापका अन्त नहीं हो जायगा। अतएव न इसको आगमें जलाना, न पानीमें डालना और न फेंकना। बल्कि जबतक पुनर्मिलन न हो, तबतक बड़े यत्नसे इसकी रक्षा करना।' यह आकाशवाणी सुनकर 'यह क्या बात है ?' ऐसा सोचते हुए पत्रलेखाके सिवाय सभी परिजन चकितभावसे आकाशकी ओर निर्निमेष नयनोंसे निहारते हुए चित्रलिखित सरीखे अवाक् खड़े रह गये। किन्तु पत्रलेखा उस तुषारसदृश शीतल एवं आनन्ददायिनी ज्योतिके स्पर्शसे सचेत होकर उठी और पगलीकी भाँति दौड़कर साईसके पास जा पहुँची। वह उसके हाथसे रास छीनकर इन्द्रायुधसे बोली—'हम जैसे परिजनोंका जो होना सो हो, लेकिन बिना सवारी अकेले स्वामीके बहुत दूर चले जानेपर तुम्हारा क्षणभर भी यहाँ रुकना उचित नहीं हो सकता।' यों कहकर वह उसके साथ अच्छोद सरोवरमें कूद गयी।

इन्द्रायुध और पत्रलेखाके डूबते ही उस सरोवरके जलसे घबड़ायी हुई आकृतिका एक तपस्वी बालक सहसा बाहर निकल पड़ा। उसके मस्तकपर जैसे ढेरसा सेवार चिपक गया हो, इस प्रकारकी केशराशिसे जलकी बूँदें चू रही थीं। उसकी लम्बी शिखा अस्त-व्यस्त होकर छितरायी हुई थी। उसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिपरस्परासक्तेरसंस्कारमलिनतया चोपसूचितचिरोर्ध्वबन्धं जटाकला-पमुद्वहञ्जलार्द्रदेहासक्तेन बिसतन्तुमयेनेव ब्रह्मसूत्रेणोद्भासमानोऽम्लाना-रबिन्दनीलपलाशपृष्ठपाण्डुरेण जीर्णमन्दारवल्कलेनाबद्धपरिकरः करेणा-ननावरोधिनीर्जटाः समुत्सारयन्नश्रुजलच्छलेनाच्छोदसरःसलिलमिवा-न्तःप्रविष्टमाताम्राभ्यामुद्वहँल्लोचनाभ्यामुद्विग्नाकृतिस्तापसकुमारकः स-हसैवोदतिष्ठत्। उत्थाय च दूरत एवोद्दामबाष्पजलनिरोधपर्याकुलया-प्यलब्धलक्ष्यया दृष्ट्या विलोकयन्तीं महाश्वेतामुपसृत्य शोकगद्गदम-वादीत्—'गन्धर्वराजपुत्रि, जन्मान्तरादिवागतोऽपि प्रत्यभिज्ञायतेऽयं जनो न वा' इति। सा त्वेवं पृष्टा शोकानन्दमध्यवर्तिनी ससंभ्रममुत्था-य कृतपादवन्दना प्रत्यवादीत्—'भगवन्कपिञ्जल, अहमेवंविधाऽपुण्य-वती या भवन्तमपि न प्रत्यभिजानामि। अथ युक्तैवेदृशी मय्यनात्मज्ञा-यां संभावना याऽहमेकान्तत एव व्यामोहहता स्वर्गं गतेऽपि देवे पुण्ड-रीके जीवामि। तत्कथय केनासावुत्क्षिप्य नीतः, किमर्थं वा नीतः, किं

मुखपर फैली, बालोंके परस्पर सँटकर भिड बँध जाने तथा सफाई न करनेसे मलिन एवं बहुत समयसे सिरपर अनबँधी जटा सुशोभित हो रही थी। मृणालतन्तु-निर्मित जैसा शुभ्र जनेऊ उसके गीले शरीरपर चिपका था। ताजी कम-लिनीके उलटे पत्तेकी भाँति श्वेत एवं जीर्ण मन्दारवृक्षके छिलकेसे बने वस्त्रको वह कमरमें बाँधे हुए था। वह मुँहपर लटकी जटाके बालोंको हाथसे हटा रहा था और आँसुओंके बहाने लाल लाल नेत्रोंमें घुसे अच्छोद सरोवरके जलको धारण किये था। जलसे बाहर निकलकर वह मुनिकुमार नेत्रोंमें बड़े वेगसे आँसू उमड़ पड़नेके कारण व्याकुल होते हुए भी निर्निमेष नयनों द्वारा दूर ही से देखती हुई महाश्वेताके पास जाकर शोकसे विह्वल वाणीमें बोला—'हे गन्धर्वराजकी पुत्री! जैसे जन्मान्तरमें आये हुए मुझको आपने पहचाना?' यह प्रश्न सुनते ही शोक और आनन्दके बीच पड़ी महाश्वेता घबड़ाकर तत्काल उठ खड़ी हुई और चरणवन्दना करके बोली—'भगवन् कपिंजल! क्या मैं ऐसी पापिनी हूँ कि आपको भी न पहचानूँगी? अथवा मुझ आत्म-ज्ञानहीन नारीमें आपका अन्दाज ठीक ही है। क्योंकि देव पुंडरीकके स्वर्ग चले जानेपर भी मैं अज्ञानवश अपने शरीरको जिलाये बैठी हूँ। हाँ, अब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वास्य वृत्तम्, क्व वर्तते, किं वा तवोपजातम्, येनैतावतापि कालेन वार्तापि न दत्ता, कुतो वा त्वमेकाकी देवेन विना समागतः।' स त्वेवं पृष्टो महाश्वेतया विस्मयोन्मुखेन कादम्बरीपरिजनेन चन्द्रापीडानुगामिना च राजपुत्रलोकेनोपर्युपरि पातिना वीक्ष्यमाणः प्रत्यवादीत्—'गन्धर्वराजपुत्रि, श्रूयताम्। तथा कृतार्तप्रलापामपि त्वामेकाकिनीं समुत्सृज्य वयस्यस्नेहादाबद्धपरिकरः 'क्व मे प्रियसुहृदमपहृत्य गच्छसि' इत्यभिधाय तं पुरुषमनुबध्नञ्जवेनोदपतम्। स तु मे प्रतिवचनमदत्त्वैव गीर्वाणवर्त्मनि विस्मयोत्फुल्लनयनैरवलोक्यमानो वैमानिकैरवगुण्ठितमुखीभिरवमुच्यमानगमनमार्गो दिव्याङ्गनाभिरभिसारिकाभिरालोलतारकेक्षणाभिरितस्ततः प्रणम्यमानतारकाभिरम्बरसरःकुमुदाकरमतिक्रम्य तारागणं चन्द्रिकाभिरामसकललोकं चन्द्रलोकमगच्छत्। तत्र च महो-

---

यह बताइए कि उस समय उन्हें कौन उठाकर ले गया? क्यों ले गया? उनका क्या हाल है? वे कहाँ हैं? आपको क्या हो गया था कि जो इतना समय बीत जानेपर भी कोई समाचार नहीं भेजा और क्या कारण है कि आप देव पुंडरीकको छोड़कर यहाँ अकेले चले आये?' महाश्वेताके प्रश्न सुनकर आश्चर्यसे ऊपर मुँह करके कादम्बरीके सभी परिजन तथा चन्द्रापीडके साथवाले सब राजपुत्र कपिंजलकी ओर निहारने लगे और वह प्रश्नोंका उत्तर देता हुआ बोला—'गन्धर्वराजपुत्री! सुनिए, उस समय जब आप देव पुंडरीकके शरीरको ऊपर उठाये जाते देखकर जोर-जोरसे रोने लगीं। तब आपको अकेली छोड़ तथा कमर कसकर 'मेरे प्रिय मित्रको तू कहा ले जा रहा है' यह कहता हुआ मैं उस पुरुषके पीछे-पीछे बड़े वेगसे उड़ा, किन्तु उसने मुझे कुछ भी उत्तर नहीं दिया। वह गगनपथसे बराबर ऊपर उड़ता रहा। मार्गमें विमानपर बैठे देवता विस्मयसे आँखें फाड़-फाड़कर उसको देख रहे थे। घूँघटसे मुँह ढाँके देवलोककी अभिसारिका देवांगनायें आकाशमें उसे बराबर मार्ग दे रही थीं। चंचल पुतलियोंवाले नयनोंयुक्त तारिकायें चारों ओरसे उसको प्रणाम कर रही थीं। तभी आकाशसरोवरके विकसित कुमुदसमूहसदृश तारागणोंको लाँघकर वह पुरुष चन्द्रलोकमें जा पहुँचा। वहाँके सभी लोग चन्द्रमाकी चाँदनी सदृश शुभ्र दीख रहे थे। वहाँ महोदय नामके सभामंडपमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दयाख्यायां सभायामिन्दुकान्तमये महति पर्यङ्के तत्पुण्डरीकशरीरं स्थापयित्वा मामवादीत्—'कपिञ्जल, जानीहि मां चन्द्रमसम्। अहं खलूदयं गतो जगदनुग्रहाय स्वव्यापारमनुतिष्ठन् अनेन ते प्रियवयस्येन कामापराधाज्जीवितमुत्सृजता निरपराधः संशप्तः 'दुरात्मन्निन्दुहतक, यथाहं त्वया करैः संतापित उत्पन्नानुरागः सन्नसंप्राप्तहृदयवल्लभासमागमसुखः प्राणैर्वियोजितस्तथा त्वमपि कर्मभूमिभूतेऽस्मिन्भारते वर्षे जन्मनि जन्मन्यन्येवोत्पन्नानुरागोऽप्राप्तसमागमसुखस्तीव्रतरां हृदयवेदनामनुभूय जीवितमुत्स्रक्ष्यसि' इति। अहं तु तेनास्य शापहुतभुजा झटिति ज्वलित इव निरगम्। किमनेनात्मदापानुबन्धेन निर्विवेकबुद्धिना शप्तोऽस्मीत्युत्पन्नकोपः 'त्वमपि मत्तुल्यदुःखसुख एव भविष्यसी'ति प्रतिशापमस्मै प्रायच्छम्। अपगतामर्षश्च विवेकसागतया बुद्ध्या विमृशन्महाश्वेताव्यतिकरमस्याधिगतवानस्मि। वत्सा तु महाश्वेता मन्मयूखसंभवादप्सरसः कुलाल्लब्धजन्मनि गौर्यामुत्पन्ना। तथा चायं भर्ता

पुंडरीकको एक चन्द्रकान्तमणिके पलंगपर लेटाकर उस पुरुषने मुझसे कहा—'कपिंजल ! तुम यह जान लो कि मैं चन्द्रमा हूँ। जब मैं लोककल्याण लिए उदित होकर अपना काम कर रहा था, तब कामदेवके अपराधसे प्राण त्यागते हुए तुम्हारे इस प्रिय मित्रने मुझ निरपराधको शाप देकर कहा था—'अरे दुरात्मा और दुष्ट चन्द्रमा ! जिस प्रकार अपनी किरणोंसे सन्ताप दे तथा प्रेम उत्पन्न करके तू समागमका सुख प्राप्त किये बिना ही मेरी प्राणप्रियासे मेरा बिछोह करा रहा है, वैसे ही तू भी जहाँ कर्मोंके अनुसार फलकी प्राप्ति होती है, उस भारतभूमिमें बार-बार जन्म ले-लेकर मेरी ही तरह प्रेमी बनेगा और समागमका सुख पाये बिना अतिशय तीव्र हार्दिक वेदना भोगकर मरेगा।' उसके इस शापरूपी अग्निसे जलकर मैं तुरन्त वहाँसे निकल भागा। 'अपने किये अपराधका फल भोगनेवाले इस अज्ञानीने मुझ निरपराधको शाप क्यों दिया' इस विचारसे कुपित होकर मैंने भी इसे प्रतिशाप दे दिया। लेकिन जब कोप शान्त हुआ और विवेकमयी बुद्धिसे विचारा तो ज्ञात हुआ कि इसका प्रेम उस महाश्वेतापर था, जो मेरी किरणों द्वारा उत्पन्न अप्सराओंके कुलमें गौरीकी कोखसे जनमी है। महाश्वेताने स्वयं इसे पतिरूपमें स्वीकार किया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वयं वृतः। अनेन च स्वयंकृतादेवात्मदोषान्मया सह मर्त्यलोके वारद्वयमवश्यमुत्पत्तव्यम्। अन्यथा जन्मनि जन्मन्येषा वीप्सैव न चरितार्था भवति। तद्यावदयं शापदोषादपैति तावदस्यात्मना विरहितस्य शरीरस्य मा विनाशोऽभूदिति मयेदमुत्क्षिप्य समानीतम्। वत्सा च महाश्वेता समाश्वासिता। तदिदमत्र मत्तेजसाप्यायमानमाशापक्षयात्स्थितम्। अधुना त्वं गत्वैनं वृत्तान्तं श्वेतकेतवे निवेदय। महाप्रभावोऽसौ कदाचिदत्र प्रतिक्रियां कांचिदपि करोति' इत्युक्त्वा मां व्यसर्जयत्।

अहं तु विना वयस्येन शोकावेगान्धो गीर्वाणवर्त्मनि धावन्नन्यतममतिक्रोधनं वैमानिकमलङ्घयम्। स तु मां दहन्निव रोषहुतभुजा भ्रूकुटीविकरालेन चक्षुषा निरीक्ष्याब्रवीत्—'दुरात्मन्, मिथ्यातपोबलगर्वित, यदेवमतिविस्तीर्णे गगनमार्गे त्वयाहमुद्दामप्रचारिणा तुरंगमेणेवोपलङ्घितस्तस्मात्तुरंगम एव भूत्वा मर्त्यलोकेऽवतर' इति। अहं तु तमुद्वाष्प-

———————

है। अपने किये हुए अपराधोंके कारण इसे मेरे साथ धरतीपर दो बार तो अवश्य जन्म लेना ही पड़ेगा। ऐसा न होनेसे 'बार-बार या जन्म-जन्म' यह द्विरुक्ति अकारथ हो जायगी। इससे 'जबतक इसका शाप न निवृत्त हो, तबतक इसकी जीवहीन देहका नाश न होने पाये।' यही सोचकर मैं इसे यहाँ उठा लाया हूँ। चलते समय मैंने पुत्री महाश्वेताको ढाढ़स भी बँधा दिया है। अतएव शाप क्षीण होनेतक यह यहाँ मेरे तेजसे संरक्षित होता हुआ रहेगा। अब तुम जाकर महाराज श्वेतकेतुको सब हाल बता दो। वे बड़े ही प्रभावशाली पुरुष हैं। खबर न पाकर शायद वे कोई भीषण प्रतीकार करने लग जायँ।' ऐसा कहकर चन्द्रदेवने मुझे विदा कर दिया।

लौटते समय मैं मित्रके वियोगजनित शोकसे अन्धा हो रहा था। अतएव देवपथपर दौड़ते-दौड़ते मैं एक अत्यन्त क्रोधी वैमानिकको लाँघ आया। जिससे वह जैसे अपनी क्रोधाग्निमें मुझे भस्म कर देनेको उद्यत होता हुआ अपने विकराल भृकुटीयुक्त नेत्रोंसे निहारकर बोला—'अरे दुरात्मन्! आकाशके इतने विस्तृत मार्गमें अपने झूठे तपोबलके गर्ववश तू घोड़के समान मुझे लाँघा है। अतएव अब तू घोड़ा ही होकर मृत्युलोकमें जन्म लेगा।' यह शाप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पद्मा कृताञ्जलिरवदम्—'भगवन्, वयस्यशोकान्धेन त्वं मयोल्लङ्घितो नावज्ञया। तत्प्रसीद। उपसंहर शापमाशु त्वमिमम्' इति। स तु मां पुनरवादीत्—'यन्मयोक्तं तन्नान्यथा भवितुमर्हति। तदेतत्ते करोमि। कियन्तमपि कालं यस्यैव वाहनतामुपयास्यसि तस्यैवावसाने स्नात्वा विगतशापो भविष्यसि' इति। एवमुक्तस्तु पुनस्तमहमवदम्—'भगवन्, यद्येवं ततो विज्ञापयामि। तेनापि मत्प्रियवयस्येन पुण्डरीकेण चन्द्रमसा सह शापदोषान्मर्त्यलोक एवोत्पत्तव्यम्। तदेतावन्तमपि भगवान्प्रसादं करोतु मे दिव्येन चक्षुषाऽवलोक्य यथा तुरङ्गमत्वेऽपि मे तेनैव प्रियवयस्येन सहावियोगेन कालो यायात्' इति। स त्वेवमुक्तो मुहूर्तमिव ध्यात्वा पुनर्मामवादीत्—'अनया स्नेहलतया ते ममार्द्रीकृतं हृदयम्। तदालोकितं मया उज्जयिन्यामपत्यहेतोस्तपस्यतस्तारापीडनाम्नो राज्ञः सनिदर्शनं चन्द्रमसा तनयत्वमुपगन्तव्यं वयस्येनापि ते पुण्डरीकेण

सुना तो मैंने नेत्रोंमें आँसू भर और हाथ जोड़कर कहा—'भगवन्! मित्रवियोगके शोकसे अन्ध होकर ही मैंने आपका अतिक्रमण किया है, गर्वके कारण नहीं। अतएव आप कृपा करके इस शापका शीघ्र संवरण कर लीजिए।' वैमानिकने कहा—'मैं जो कह चुका, वह मिथ्या नहीं हो सकता। हाँ, इतनी सुविधा अवश्य कर देता हूँ कि घोड़ा बनकर तू कुछ समय जिसे सवारी देगा, उसकी मृत्यु हो जानेपर जब तू स्नान करेगा, उसी समय यह शाप समाप्त हो जायगा।' उसके यह कहनेपर मैं फिर बोला—'भगवन्! यदि ऐसा है तो मैं एक निवेदन और करना चाहता हूँ। वह यह कि मेरे प्रिय मित्र पुण्डरीक भी शापदोषसे भगवान् चन्द्रदेवके साथ मृत्युलोकमें जन्म लेनेवाले हैं। सो आप मेरे ऊपर इतनी कृपा और करें तथा अपनी दिव्य दृष्टिसे देखकर ऐसा कोई उपाय कर दें कि जिससे घोड़ा होकर भी मेरा उसी मित्रके साथ रहते हुए समय बीते। उससे वियोग न हो। मेरी बात सुनी तो क्षणभर ध्यान करके वह बोला—'तेरे स्नेहसे आर्द्रचित्त होकर मैंने दिव्य दृष्टि द्वारा देखा तो ज्ञात हुआ कि उज्जयिनी नगरीमें पुत्रप्राप्तिके लिए तप करते हुए राजा तारापीडको स्वप्नमें पहले ही सूचित करके चन्द्रदेव उसके पुत्ररूपमें जन्म लेंगे। तेरा मित्र पुण्डरीक भी उसी राजाके मंत्री शुकनासका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तन्मन्त्रिण एव शुकनासनाम्नः। त्वमपि तस्य महोपकारिणश्चन्द्रात्मनो राजपुत्रस्य वाहनतामुपयास्यसि' इति। अहं तु तद्वचनानन्तरमेवाधः स्थिते महोदधौ न्यपतम्। तस्माच्च तुरङ्गीभूयैवोदतिष्ठम्। संज्ञा तु मे तुरंगमत्वेऽपि न व्यपगता। येनायं मयाऽस्यैवार्थस्य कृते किंनरमिथुनानुसारी भूमिमेतामानीतो देवस्य चन्द्रमसोऽवतारश्चन्द्रापीडः। योऽप्यसौ प्राक्तनानुरागसंस्कारादभिलषन्नजानन्त्या त्वया शापाग्निना निर्दग्धः सोऽपि मे वयस्यपुण्डरीकस्यावतारः' इति। एतच्छ्रुत्वा 'हा देव पुण्डरीक, जन्मान्तरेऽप्यविस्मृतमदनुराग, मत्प्रतिबद्धजीवित, मच्छरण, मन्मुखावलोकिन्, मन्मयसकलजीवलोक, लोकान्तरगतस्यापि तेऽहमेव राक्षसी विनाशायोपजाता। दग्धप्रजापतेरियदेव मन्निर्माणे दीर्घजीवितप्रदाने च प्रयोजनं निष्पन्नं तत्पुनःपुनस्ते व्यापादनं स्वयं हत्वा च पापकारिणी कमुपालभे, किं ब्रवीमि, किमाक्रन्दामि,

---

पुत्र होगा। उनके साथ ही तू भी उस महान् उपकारी चन्द्रात्मक राजकुमारका वाहन बनेगा।' उसकी वाक्यसमाप्तिके साथ ही मैं नीचे महोदधिमें जा गिरा और उसी क्षण घोड़ा होकर उसमेंसे बाहर निकला। उस घोड़ेके जन्ममें भी मेरी चेतना लुप्त नहीं हुई थी। इसी कारण किन्नरदम्पतीका पीछा करते हुए साक्षात् चन्द्रमाके अवतार चन्द्रापीडको मैं यहाँ ले आया था। पुरातन प्रेमके संस्कारवश जो युवक आपपर आसक्त होकर यहाँ आया था और आपने अनजानमें जिसे अपनी शापाग्निमें जलाकर भस्म कर दिया, वह भी मेरे मित्र पुंडरीकका ही एक अवतार था।' यह सुनकर महाश्वेता बड़ी जोर-जोरसे चिल्लाती और छाती पीटती हुई विलाप करने लगी—'हाय देव पुंडरीक! जन्मान्तरमें भी मेरे प्रेमको न भूलनेवाले! मेरे ही ऊपर अपने जीवनका आधार रखनेवाले! मेरी शरणमें आनेवाले! मेरा मुँह निहारनेवाले! सब जीवोंमें एकमात्र मुझे ही देखनेवाले! लोकान्तरमें चले जानेपर भी मैं ही राक्षसी बनकर आपके विनाशका कारण बनी। उस मुँहजले विधाताका मुझे उत्पन्न करने और इतनी लम्बी आयु देनेका यही मतलब था कि पुनः पुनः मेरे ही कारण आपका मरण हो। आपको हत्या करनेवाली पापिनी मैं किससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कमुपयामि शरणम्, को वा करोतु मयि दयाम्, याचेऽहमात्मनैवाधुना। देव, प्रसीद। कुरु दयाम्। देहि मे प्रतिवचनम्। इत्येतान्यक्षराण्युच्चारयन्त्यपि लज्जे। मन्ये च तवाप्येवमुत्पन्नं मन्दभाग्यायां मयि वैराग्यं येनैवमपि विप्रलपन्त्यां न प्रतिवचनं ददासि। हा, हताऽस्म्यनेनैवात्मनो जीवितस्योपर्यनिर्वेदेन' इत्युन्मुक्तार्तनादा सोरस्ताडमवनावात्मानमपातयत्।

कपिञ्जलस्तु तथार्तकृतप्रलापां तां सानुकम्पमवादीत्—'गन्धर्वराजपुत्रि, कस्तवात्र दोषो येनैवमनिन्दनीयमात्मानं निन्दापदैर्योजयसि। को नाम वाधुना सुखपाकेऽनुभवनीये दुःखस्यावसरः, येनैवात्मानं शुचा व्यापादयसि। यदसह्यतरं तत्त्वया निर्व्यूढं हतहृदयस्यैव समागमप्रत्याशया। यथा च शापदोषादिदमुपगतं भवत्योर्द्वयोरपि दुःखं तथा मया कथितमेव। चन्द्रमसोऽपि भारती भवतीभ्यां श्रुतैव। तदुन्मुच्यताम-

---

गिला करूँ? क्या कहूँ? कैसे बिलखूँ? किसका शरणमें जाऊँ? मेरे ऊपर कौन दया करेगा? सब ओरसे निराश होकर मैं अपने आपसे विनती करती हूँ। हे देव! प्रसन्न होकर मुझपर दया करो। मुझे उत्तर दो। इन अक्षरोंको कहनेमें भी मुझे लाज लगती है। मैं समझती हूँ कि मुझ मन्दभाग्यापर आपको भी वैराग्य हो गया है। तभी तो मेरे इतना रोनेपर भी आप मुझे कुछ उत्तर नहीं देते। हाय! इस जीवनपर घृणा न होनेके कारण ही मैं मारी गयी।' ऐसा कहती और छाती पीटकर रोती हुई महाश्वेता पछाड़ खाकर धरतीपर गिर गयी।

इस प्रकार करुणापूर्वक विलाप करती-हुई महाश्वेतासे बड़े ही दयाभरे शब्दोंमें कपिंजल बोला—'गन्धर्वराजपुत्री! तुम्हारा अपराध ही क्या है कि जिससे निन्दाके अयोग्य अपनी आत्माकी इस प्रकार निन्दा कर रही हो? अब जब कि सुखमय परिणाम भोगनेका अवसर समीप आ गया है, तब ऐसा शोक करके तुम आत्महनन क्यों करती हो? जो असह्य सङ्कटका समय था, उसे तो तुमने पुनर्मिलनकी आशासे अपने मरे हृदयको वज्र बनाकर झेल लिया। जिस प्रकार शापके दोषसे तुम दोनोंको यह दुःख प्राप्त हुआ है, सो सब मैंने बता ही दिया और चन्द्रदेवकी वाणी भी अभी तुमने सुन ही ली है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यमात्मनो वयस्यस्य चाश्रेयस्करः शोकानुबन्धः। द्वयोरेव श्रेयसे यदेव भवत्याङ्गीकृतं तदेवानुबध्यतां व्रतपरिग्रहोचितं तपः। तपसो हि सम्यक्कृतस्य नास्त्यसाध्यं नाम किंचित्। देव्या हि गौर्या तपसः प्रभावादनिदुरासदं स्मरारेरपि यावदासादितं देहार्धपदम्। एवं त्वमपि नचिरात्तथैव मे वयस्यस्याङ्के निजतपःप्रभावात्पदमवाप्स्यसि' इति महाश्वेतां पर्यबोधयत्। उपशान्तमन्युवेगायां च महाश्वेतायां विषण्णदीनमुखी कादम्बरी कपिञ्जलमप्राक्षीत्—'भगवन्कपिञ्जल, पत्रलेखया त्वया चास्मिन्सरसि जलप्रवेशः कृतस्तत्किं तस्याः पत्रलेखायाः संवृत्तमित्यावेदनेन प्रसादं करोतु भगवन्' इति। स तु प्रत्यवादीत्—'राजपुत्रि, सलिलपातानन्तरं न कश्चिदपि तद्वृत्तान्तो मया ज्ञातः। तदधुना क्व चन्द्रात्मकस्य चन्द्रापीडस्य क्व पुण्डरीकात्मनो वैशम्पायनस्य जन्म किं वास्याः पत्रलेखाया वृत्तमिति सर्वथैवास्य वृत्तान्तस्यावगमनाय गतोऽहं प्रत्यक्षलोकत्रयस्य तातस्य श्वेतकेतोः पादमूलम्' इत्यभिदधान एव गगनमुदपतत्।

अतएव अपने तथा मेरे मित्रके लिए अकल्याणकारी शोकका आग्रह त्याग दो। दोनोंके कल्याणार्थ जो व्रतग्रहणपूर्वक तपस्या अंगीकार की है, उसे बराबर करती चलो। क्योंकि भली भाँति की हुई तपस्यासे संसारमें कोई भी वस्तु अलभ्य नहीं रह जाती। पार्वतीने तपके द्वारा ही कामदेवके शत्रु शङ्कर भगवान्का अति दुर्लभ देहार्धपद पाया था। उसी तरह तुम भी अपनी तपस्याके प्रभावसे कुछ दिनों बाद मेरे मित्रकी गोद प्राप्त कर लोगी।' यह कहकर कपिंजलने महाश्वेताको ढाढ़स बँधाया। जब महाश्वेताका शोक शान्त हो गया, तब विषादसे दीनमुखी कादम्बरीने कपिञ्जलसे पूछा—'भगवन्! आप और पत्रलेखा दोनों एक साथ इस सरोवरके जलमें कूदे थे। अतएव अब यह बतानेकी कृपा करिए कि पत्रलेखाका क्या हुआ?' कपिञ्जलने जवाब दिया—'राजपुत्रि! जलमें कूदनेके बाद मैं उसका कुछ भी हाल नहीं जान सका। अतएव अब यह जाननेके लिए त्रिलोकप्रत्यक्षदर्शी तात श्वेतके पास जा रहा हूँ कि चन्द्रात्मक चन्द्रापीड और पुण्डरीकात्मक वैशम्पायनका जन्म कहाँ हुआ है और पत्रलेखाकी क्या गति हुई?' यह कहता हुआ वह आकाशमण्डलमें उड़ गया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ गते तस्मिन्विस्मयान्तरितशोकवृत्तान्ता चन्द्रापीडमालोक्य गलितनयनपयसि यथास्थानमपसृत्य स्थितवति सपरिजने राजपुत्रलोके कादम्बरी महाश्वेतामवादीत्—'प्रियसखि, तुल्यदुःखितां त्वया सह नयता न खल्वसुखं स्थापितास्मि भगवता विधात्रा। अद्य मे शिरः समुद्घाटितम्। अद्य ते वदनं दर्शयन्ती प्रियसखीति चाभाषमाणा न लज्जे। तवाप्यहमद्यैव प्रियसखी संजाता। संप्रति मरणं जीवितं वा न दुःखाय मे। तत्कोऽपरः प्रष्टव्यो मया। केन वापरेणोपदेष्टव्यम्। तदेवं गते यत्करणीयं तदुपादिशतु मे प्रियसखी। नाहमात्मना किंचिदपि वेद्मि किं कृत्वा श्रेयः' इत्युक्तवतीं कादम्बरीं महाश्वेता प्रत्यवादीत्—'प्रियसखि, किमत्र प्रश्नेनोपदेशेन वा। यदेवेयमनतिक्रमणीया प्रियतमसमागमप्रत्याशा कारयति तदेव करणीयम्। पुण्डरीकवृत्तान्तोऽद्य कपिञ्जलाख्यानात्स्फुटीभूतः। तत्कालं तु वाङ्मात्रकेणैव समाश्वासितया मया न पारितमन्यत्किंचिदपि वक्तुम्। तत्त्वमन्यत्किं करोपि यस्याः

कपिञ्जलके चले जानेपर कादम्बरी विस्मयसे सारा शोक भूलकर चन्द्रापीडकी ओर निहारने लगी और उसके नेत्रोंसे आँसू बरसने लगे। जब परिजनोंके साथ चन्द्रापीडके साथ आनेवाले सब राजपुत्र वहाँसे हट गये, तब कादम्बरी महाश्वेतासे बोली—'प्रिय सखी! तुम्हारे समान ही दुःखिनी बनाकर विधाताने मुझको कष्ट नहीं दिया है। आज मेरा मस्तक ऊँचा हो गया। आज तुम्हें अपना मुख दिखाते हुए 'प्रिय सखी' यह सम्बोधन करके बुलानेमें मुझे लज्जा नहीं आती। सच्चे अर्थमें आज ही मैं तुम्हारी प्रिय सखी हुई हूँ। अब मैं मरूँ या जिऊँ, मुझे कुछ भी दुःख नहीं होगा। अब तुम्हारे सिवाय मैं और किससे कुछ पूछूँ? मुझे दूसरा कौन उपदेश देगा? ऐसी स्थितिमें मेरा जो कर्तव्य हो सो बताओ। मैं स्वयं यह कुछ भी नहीं जानती कि क्या करनेसे मेरा कल्याण होगा।' यह सुनकर महाश्वेता बोली—'प्रियसखी! इस विषयमें प्रश्न तथा उपदेशकी आवश्यकता ही क्या है? अब तो प्रियतमके मिलनकी अनुल्लंघनीय आशा जो कराये, वही करना उचित है। देव पुंडरीकका सही वृत्तान्त आज मैंने कपिञ्जलके मुखसे सुना है, किन्तु उस समय तो उस पुरुषकी वाणीमात्रसे आश्वस्त होकर मैं कुछ नहीं कह पायी थी। अतएव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रत्ययस्थानमिदं चन्द्रापीडशरीरमङ्क एवास्ते। तदन्यथात्वेऽस्य करणीयचिन्ता। यावत्पुनरिदमविनाशि तिष्ठति तावदेव तस्यानुवृत्तिं मुक्त्वा किमन्यत्करणीयम्। अप्रत्यक्षाणां हि देवतानां मृदश्मकाष्ठमय्यः प्रतिमाः श्रेयसे पूजासत्कारेणोपचर्यन्ते। किं पुनः प्रत्यक्षदेवस्य चन्द्रापीडनामान्तरितस्य चन्द्रमसो मूर्तिरनाराधितप्रसन्ना' इत्युक्तवत्यां महाश्वेतायां कादम्बरी तूष्णीमेवोत्थाय तरलिकया मदलेखया चोत्थाप्य तामखेदार्हां चन्द्रापीडतनुमन्यतरस्मिञ्छीतवातातपवर्षादिसर्वद्वन्द्वदोपरहिते शिलातले शनैःशनैरखेदयन्ती स्थापयित्वाऽपनीतशृङ्गारवेषाभरणा मङ्गलमात्रकावस्थापितैककररत्नवलया स्नानशुचिर्भूत्वा परिधाय धौतशुचिनी दुकूले प्रक्षाल्य पुनःपुनर्गाढलग्नमधरकिसलये ताम्बूलरागमुपर्यपरिनिमीलितागतबाष्पवेगोत्तरललोचनान्यदेव किमप्यचिन्तितमनुत्प्रेक्षितमशिक्षितमनभ्यस्तमनुचितमपूर्वं बाला बलाद्विलोमप्रकृतिनाऽकार्य-

---

अब तुम्हें और क्या करना है ? क्योंकि विश्वास दिलानेके लिए चन्द्रापीडका शरीर तुम्हारी गोदमें विद्यमान है। ऐसा न हुआ होता तो भले ही कुछ सोचा जाता। लेकिन जबतक यह शरीर अविनश्वर होकर यहाँ है, तबतक इसकी सम्हालके सिवाय और क्या करना-धरना है ? आत्मकल्याणके लिए अप्रत्यक्ष देवताओंकी तो मिट्टी, पत्थर अथवा काष्ठकी प्रतिमा बनाकर उसका पूजन तथा सत्कार किया जाता है। तब जब कि चन्द्रापीड नाम धारण करके साक्षात् चन्द्रदेवकी मूर्ति बिना आराधनाके ही प्रसन्न होकर तुम्हारे समक्ष उपस्थित है, तब क्या कहना है ?' महाश्वेताके यह कहनेपर कादम्बरी चुपचाप उठ खड़ी हुई और तरलिका तथा मदलेखाकी सहायतासे चन्द्रापीडका शरीर उठाकर शीत, आतप, वर्षा, वायु आदि द्वन्द्वोंसे रहित एक अन्य शिलातलपर इस तरह धीरेसे रख दिया कि जिससे उसे कष्ट न हो। तदनन्तर मङ्गलचिह्नके निमित्त केवल एक-एक रत्नजटित कङ्कण छोड़ बाकी समस्त आभूषण तथा श्रृंगारिक वेष उसने उतार डाले। फिर स्नान किया और शुद्ध होकर दो धुले तथा साफ कपड़े पहने। होठोंपर लगे पानके रंगको भली भाँति धो डाला। निरन्तर बहनेवाले आँसुओंके आवेगसे उसकी आँखें चंचल हो रही थीं और उलटे स्वभाव, अकार्य कार्य करनेमें कुशल तथा दग्धबुद्धि विधाताकी प्रेरणासे वह भोली-भाली बाला कुछ और ही ढंगके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पण्डितेन दग्धवेधसा कार्यमाणा यान्येव सुरभिकुसुमधूपानुलेपनानि सुरतोपभोगायानीतानि तैरेव देवतोचितामपचितिं संपाद्य चन्द्रापीड-मूर्तौ मूर्तिमतीव शोकवृत्तिरार्तरूपा रूपान्तरमिव क्षणेनेवागता विगत-जीवितेव शून्यमुखी मुखावलोकिनी चन्द्रापीडस्य पीडितो पीडितहृद-यापि रुन्धती बाष्पमोक्षमुद्दामवृत्तेः शोकादपि कष्टतमामवस्थामनुभ-वन्ती तथैवाङ्के समारोपितचन्द्रापीडचरणद्वया दूरागमनखिन्नेनापि बुभुक्षितेनाप्यप्रतिपन्नस्नानपानभोजनेनापि मुक्तात्मना राजपुत्रलोकेन स्वपरिजनेन च सह निराहारा तमशेषं दिवसमक्षिपत्।

तथैव च जीवसमशेषां तथैव तां गम्भीरमेघोपरोधभीमामनवरतग-र्जितध्वानकम्पितहृदयबन्धामाबद्धकलकलापिकुलकेकाकोलाहलाकुलित-चेतोवृत्तिमुद्दामदर्दुरारावटतबधिरितश्रोत्रेन्द्रियां दुर्दर्शतडित्संपातपीडित-

---

अचिन्तित, अनुत्प्रेक्षित, अशिक्षित, अनभ्यस्त, अनुचित तथा अपूर्व काम करने लग गयी। पहले जो सुगन्धित पुष्प, धूप तथा अंगराग सुरतके समय उपयोगके लिए लायी थी, उन्हीं सामग्रियोंसे उसने देवताकी भाँति चन्द्रापीडकी मूर्तिका पूजन किया। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे स्वयं शोक-वृत्ति आर्त होकर मूर्तरूपमें उपस्थित हो। तत्काल जैसे उसका रूप ही बदल गया। शून्यमुख होनेके कारण वह प्राणहीन सरीखी दीख रही थी। अब वह चन्द्रापीडका मुख देखती तो दुःखसे उसका हृदय भर आता था। तथापि आँसुओंकी बाढ़ रोक देती थी। इस तरह वह अतिशय प्रबल शोकके कारण मरणसे भी दारुण दुःखदायिनी दशाका अनुभव करने लगी। देव चन्द्रा-पीडके चरणोंको पहले ही के समान अपनी गोदमें रक्खे हुए उसने दूरसे आनेके कारण थके, भूखे तथा स्नान-पान-भोजनहीन और दुःखाधिक्यके कारण अपने आपको भी भूले हुए राजपुत्रोंके साथ वह सारा दिन निराहार रहकर ही बिता दिया।

जैसे उसने दिन बिताया था, वैसे ही बैठी ही बैठी उसने क्षणभरके समान रात भी व्यतीत कर दी। मेघोंकी गम्भीर घटा घिर आनेसे वह रात्रि बड़ी डरावनी लग रही थी। अनवरत गर्जनके कर्कश निनादसे जैसे वह हृदय कँपा देती थी। मयूरोंकी मधुर ध्वनिके कोलाहलसे वह रात चित्तको विकल कर रही थी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिशमतिनिर्ह्रादापादितभुवनज्वरां ज्वलत्खद्योतनिकरजर्जरिततरुगहन-तलतमःप्रसरभीषणतमां तमस्विनीमपि दूरीकृत्याबलासहभुवं भीतिमपरित्यक्तचन्द्रापीडचरणकमलाचेतितस्वशरीरखेदा जाग्रती समुपविष्टैव क्षणमिव क्षपां क्षपितवती। प्रातश्च तदुन्मीलितं चित्रमिव चन्द्रापीडशरीरमवलोक्य शनैः शनैः पाणिना स्पृशन्ती पार्श्वस्थितां मदलेखामवादीत्—'प्रियसखि मदलेखे, न वेद्मि किं रुचेर्वशादुत निर्विकारतयैवेति। अहं तु तादृशीमेवेमां तनुमवलोकयामि। त्वमपि तावदादरतो निरूपय' इति। एवमुक्ता मदलेखा तां प्रत्यवादीत्—'प्रियसखि, किमत्र निरूपणीयम्। अन्तरात्मनो विरहाद्व्यापारमात्रकमस्यामुपरतम्। अन्यत्तादृशमेवेदं व्याकोशशतपत्राकारं मनागप्यनुन्मुक्तं श्रिया वदनम्। तथा च संवेल्लिताग्रभागः स्निग्धः कुन्तलकलापः। तथैवेयमिन्दुशकलानुकारिणः कान्तिर्ललाटस्य। तादृशमेवेदमामुकुलितनीलोत्पलद्युतिहारि

दादुरोंके शब्दसे वह कानोंको बहरा बनाय दे रही थी। कठिनाईसे देखी जा सकनेवाली बिजलीकी चमकसे वह रात आँखोंको कष्ट दे रही थी। अपने विकराल गर्जनसे जायमान भयके द्वारा वह समस्त भुवनमें ज्वर उत्पन्न कर रही थी। जगमाते जुगुनुओंकी जगमगाहट तथा वृक्षोंके नीचे सिमटकर एकत्रित अन्धकारसे वह और भी भीषण हो रही थी। उस भयानक रात्रिमें कादम्बरी नारीजातिका स्वाभाविक भय दूर करके चन्द्रापीडके चरणोंको नहीं त्यागती हुई शारीरिक खेदको कुछ न गिनकर वैसे ही बैठी रह गयी। सवेरे चित्रकी भाँति निखरा चन्द्रापीडका शरीर देख तथा उसपर हाथ फेरती हुई कादम्बरीने मदलेखासे कहा—'प्रियसखी मदलेखा! मैं नहीं जनती कि मेरी रुचि होनेके कारण अथवा निर्विकारतासे मुझे तो यह शरीर ज्योंका त्यों दिखायी दे रहा है। अतएव तुम भी तनिक सावधानीसे इसे देखो।' यह सुनकर मदलेखा बोली—'प्रियसखी! देखना क्या है? अन्तरात्माके अभावमें केवल शरीरकी चेष्टायें ही लुप्त हुई हैं। बाकी तो विकसित कमलकी नाईं इनके मुखको लक्ष्मीने तनिक भी नहीं त्यागा है, अतएव वह जैसेका तैसा ही है। हिलते अग्रभागवाला सुचिक्कण केशकलाप भी पहले ही जैसा है। चाँदके टुकड़ेकी तरह इनके ललाटकी कान्ति भी वैसी ही है। तनिक मुँदे नील-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्णान्तायतं लोचनद्वयम्। तथैव चेमावहसतोऽपि विकसिताविवोद्भासितकपोलमूलौ सृक्कोपान्तौ। तादृश एवाभिनवकिसलयच्छविरधरः तथैव चेदं विद्रुमालोहितनखांगुलितलं पाणिपादम्। तदेवेदमविगलितसहजलावण्यसौकुमार्याणां सौष्ठवमङ्गानाम्। तत्सत्या सा भारती कपिञ्जलावेदितश्च शापवृत्तान्त इति संभावयामि' इत्युक्तवत्यां मदलेखायामानन्दनिर्भरा महाश्वेतायै दर्शयित्वा चन्द्रापीडचरणतलनिबद्धजीविताय राजपुत्रलोकायापि दर्शितवती।

स तु विस्मयोत्फुल्ललोचनः सर्व एवावनितलनिवेशितशिराः प्रणम्य चन्द्रापीडचरणौ रचिताञ्जलिर्जानुद्वयेनावनौ स्थित्वा कादम्बरीं व्यज्ञापयत्—'देवि, त्वत्प्रभावोऽयं यदेवास्मानपुण्यवतः परित्यज्य दूरं गतस्यापि देवस्य तादृशमेवेदं प्रसन्नेन्दुमण्डलद्युतिहारि वीक्ष्यते वदनम्। तथैव चेदं चरणयुगलमवभाति पुरेव प्रोत्फुल्लतामरसच्छायम्। तथैव

कमलकी भाँति तथा कानोंतक फैली इनकी आँखें भी यथावत् हैं। यद्यपि ये हँसते नहीं, फिर भी हँसते हुएके समान इनके कपोलोंको शोभित करते हुए प्रान्तभाग ज्योंके त्यों हैं। नवपल्लव सदृश लाल इनका अधर भी पहलेके ही समान है। मूँगेकी भाँति लाल नख, अंगुलियाँ तथा तलुओं युक्त हाथ-पैर भी ज्योंके त्यों हैं। स्वाभाविक सौन्दर्य एवं सौकुमार्यसम्पन्न सारे अंग भी वैसे ही सुघड़ बने हुए हैं। अतएव मेरा ख्याल तो ऐसा है कि हम लोगोंने जो आकाशवाणी सुनी थी और अभी कपिञ्जलने शापका जो वृत्तान्त बताया है, वह सब यथार्थ है।' मदलेखाके यों कहनेपर परमानन्दित होकर कादम्बरीने वह शरीर महाश्वेता तथा चन्द्रापीडके चरणोंमें जिन्होंने अपना जीवन अर्पण कर रक्खा था, उन सब राजपुत्रोंको भी दिखलाया।

यह देख आश्चर्यसे प्रफुल्लित नेत्रोंवाले राजपुत्रोंने पृथिवीपर मस्तक रख तथा घुटनोंके बल खड़े होकर चन्द्रापीडके चरणोंकी वन्दना की और कहा—'देवि! हम पापियोंको त्यागकर गये हुए देव चन्द्रापीडकी आकृति अभी जो ज्योंकी त्यों बनी हुई है और हमलोग जो प्रसन्न चन्द्रमा सदृश इनका मुखमण्डल यथावत् देख रहे हैं, यह सब एकमात्र आपका ही प्रभाव है। प्रफुल्लित लाल कमलके समान लाल इनके चरणयुगल जैसे पहले थे, वैसे ही अब भी हैं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च पुनः प्रसादानुभवप्रत्याशालालसं हृदयम्। अन्यच्चैतन्मनुष्यलोकेषु केन कदा वा दृष्टं श्रुतमनुभूतं वा यदस्माभिः पुण्यवद्भिः' इत्यभिहितवति राजलोके ससखीजना सपरिजना चोत्थाय स्वयमेवावचित्य देवतार्चनकुसुमानि स्नात्वा निर्वर्तितचन्द्रापीडशरीरपूजासंस्कारा शरीरस्थितिकरणायादिदेश सकलमेव राजलोकम्। निर्वर्तितस्नानाशने च तस्मिन्नात्मनापि महाश्वेतयोपनीतानि तथैव सह सपरिवारा फलान्युपभुक्तवती। कृताहारा च पुनस्तथैव चन्द्रापीडचरणावङ्केनोद्वहन्ती तमपि दिवसमनयत्। अन्येद्युश्च संजातदृढतरप्रत्यया चन्द्रापीडशरीराविनाशं प्रति मदलेखामवादीत्—'प्रियसखि, देवस्य शरीरमिदमुपचरन्तीभिरवश्याशया आशापक्षयादस्माभिरधुनाऽत्र स्थातव्यम्। तदिदमत्यद्भुतं वृत्तान्तं तातस्याम्बायाश्च गत्वा निवेदय। येन नान्यथा मां संभावयतो दुःखेन वा मदीयेन न तिष्ठतः। यथा मामेवंविधां दुःखभागिनीमागत्य न पश्यतस्तथा करिष्यसि। न शक्नोम्यहं तातमम्बां च दृष्ट्वा शोक-

---

और हम लोगोंके हृदय भी पहले ही जैसे इनकी कृपाके अनुभवकी आशासे लालायित हैं। हम पुण्यात्माओंने जो प्रत्यक्ष देखा है, उसे इस मानव-संसारमें अन्य किस व्यक्तिने देखा, सुना या अनुभव किया होगा?' उन राजकुमारोंके ऐसा कहनेपर कादम्बरी उठी और अपने परिजनों तथा सखियोंके साथ जाकर अपने हाथों देवार्चनके निमित्त फूल चुने, फिर स्नान किया और चंद्रापीडके शरीरकी विधिवत् पूजा करनेके बाद उन सब राजाओंको भोजन करनेका आदेश दिया। उन सबके स्नान तथा भोजन कर लेनेके पश्चात् सपरिवार कादम्बरीने स्वयं भी महाश्वेताके लाये फलोंको खाया और फिर उसी प्रकार चन्द्रापीडके चरणोंको गोदमें रखकर वह सारा दिन व्यतीत किया। अगले दिन चन्द्रापीडके शरीरको अविनाशिताका दृढ़ विश्वास हो जानेपर उसने मदलेखासे कहा—'प्रियसखी मदलेखा! शापक्षय हो जानेकी अवधि तक इनके शरीरकी रक्षाके लिए हमें यहाँ ही रहना होगा। सो तुम जाकर पिता तथा माताजीको भी यह अद्भुत वृत्तान्त अवश्य सुना दो। जिससे वे मेरे दुःखसे दुखी न हो और तुम ऐसा कुछ करना कि जिससे वे इस प्रकारके संकटमें पड़ी हुई मुझ दुखियाको देखने न आयें। क्योंकि माता-पिताको देखकर मैं शोकका वेग न रोक सकूँगी। उस समय देव चन्द्रापीडको सहसा मृत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेगं धारयितुम् । मया चोपरतमेव देवमालोक्य न रुदितम् । सा किम-परमधुना निःसंशयितजीविते देवे प्रतिपन्ननियमा रोदिमि' इत्यभिधाय तां व्यसर्जयत् ।

गत्वाऽऽगतया च तया 'प्रियसखि, सिद्धं तेऽभिवाञ्छितम् । एवं संदिष्टं तातेन चित्ररथेनाम्बया च मदिरया गाढं गाढं पुनः पुनरालिङ्ग्य शिरस्युपाघ्राय च वक्तव्याऽऽवयोर्वचनात् 'वत्से, कालमेतावन्तं मनस्येव नैतदावयोरासीद्यथा जामातृसहिता वत्सा द्रष्टव्येपि। तदयमेवावयोः पर-मानन्दो यद्वत्सया स्वयं जामाता वृतः । तत्राप्यपरं भगवतो लोकपाल-स्य चन्द्रमसोऽवतारः । तत्कल्याणैः शापावसाने जामात्रा सहैवानन्द-बाष्पनिर्भराननारविन्दं ते द्रक्ष्यावः' इत्यावेदिते निर्वृत्तेनान्तरात्मना दैवतवदुपचरन्ती तच्चन्द्रापीडशरीरमतिष्ठत् ।

अथापगतवति जलदसमये घननिरोधोद्बन्धादिवोन्मुक्ते जीवलोके

देखकर मैं नहीं रोयी थी तो अब जब कि उनका पुनरुज्जीवित होना निश्चित हो चुका है, तब व्रतका पालन करती हुई मैं क्यों रोऊँ ?' ऐसा कहकर उसे विदा कर दिया ।

वहाँ जाकर लौटी हुई मदलेखाने कहा—'प्रियसखी ! तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो गयी । पिता चित्ररथ और माता मदिराने यह सन्देश कहलाया है कि बार-बार दृढ़ आलिंगन करनेके बाद माथा सूँघकर पुत्री कादम्बरीसे हम दोनोंकी ओरसे कहना—'वत्से ! अबतक हमने तुम्हें जामाताके साथ देखनेकी बात भी नहीं सोची थी । अतएव आज यह सुनकर हमें अपार आनन्द हुआ कि तुमने अपना वर स्वयं खोज लिया है और वह भी कोई साधारण प्राणी नहीं, बल्कि लोकपाल भगवान् चन्द्रमाका साक्षात् अवतार है । सो सकुशल शापका अन्त हो जानेपर जामाताके साथ-साथ आनन्दके आँसू बरसाते हुए तुम्हारे मुखारविन्दको हम दोनों देखेंगे ।' माता-पिताका सन्देश सुनकर कादम्बरी बड़े शान्त चित्तसे देवतुल्य चन्द्रापीडके शरीरकी सेवा करती हुई वहाँ ही रहने लगी ।

ऐसा करते-करते जब वर्षाऋतु बीत गयी और घनघटाके बन्धनसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रसरन्तीष्विव्राशासु, फलभारावनम्रकलमवनपिञ्जरासु ग्रामसीमासु, काशकुसुमधवलास्वरण्यस्थलीषु, सेव्यतामुपगतेषु प्रासादतलेषु कह्लार-हारिषु पल्वलेषु, कुमुदामोदशीतलासु यामवतीषु, शेफालिकापरिमलग्राहिषु निशावसानमातरिश्वसु, चन्द्रप्रभाभिरामेषु प्रदोषेषु, उद्दामफुल्ले-न्दीवररजोवाससुरभिषु वासरेषु, सलिलापसरणक्रमतरङ्गयमाणासु सुकुमारतीरसैकतरेखासु सुखोत्तारतामापन्नास्वापगासु, पङ्कपरिहरणशुष्केष्वप्रहतरूढतृणोलपच्छन्नेषु मन्दाश्यानकर्दमोद्भिद्यमानाभिनवपदवीकेषु पुनरपि पार्थिवलोकेन प्रवर्तितेषु प्राञ्जलवर्त्मसु, जम्बालविगमात्सर्वतस्तुरगखुरसहासु भूमिष्वेकदा चन्द्रापीडचरणमूलोपविष्टां कादम्बरीमुपसृत्य मेघनादो व्यजिज्ञपत्—'देवो युवराजश्चिरयतास्युत्ताम्यता हृदयेन देवेन तारापीडेन देव्या विलासवत्यार्यशुकनासेन च वार्ताहराः प्रहिताः। ते च देव्या एव शोकशल्यघटनां परिहरद्भिर्यथावृत्तं सर्वमाख्यायास्मा

सब लोगोंको छुटकारा मिल गया। अबतक सिमटी हुई दिशायें विस्तृत होने लगीं। फलोंके भारसे झुके धानके पौधोंवाले खेतोंसे गाँवोंकी सीमायें पीली दीखने लगीं। वन्य भूमि कासके फूलोंसे उजली दिखायी देने लगी। प्रासादोंकी छतें उपयोगमें आने लगीं। कह्लारके फूलोंसे तालाब सुन्दर दीखने लगे। कुमुदोंकी सुगन्धिसे रात्रि ठण्ढी हो गयी। निर्गुण्डीके पुष्पोंकी सुगन्धि साथ लेकर प्रभाती वायु बहने लगी, चन्द्रमाकी चाँदनीसे रात्रि रमणीय लगने लगी और भलीभाँति खिले हुए कमलके रजकी सुगन्धिसे दिन सुरभित हो गये। पानी हट जानेपर सुखसे पार करने योग्य नदियोंके तटपर बिखरी कोमल बालुकायें तरंगसरीखी दीखने लगीं। कीचड़ हट जानेसे पगडंडियाँ सूख चलीं। पाँवोंका दबाव न पड़नेके कारण वे उगी हुई घासोंसे ढँक गयीं थीं। कुछ कुछ सूखे कीचड़में नये-नये पदचिह्न दीखनेके कारण धीरे-धीरे लोग अब उन पगडंडियोंका उपयोग करने लग गये। कीचड़ न रहनेके कारण धरती घोड़ोंका खुराघात सहने योग्य हो गयी। तब एक दिन जब कि कादम्बरी चन्द्रापीडके चरणोंके सन्निकट बैठी हुई थी, उसी समय मेघनादने आकर कहा—'देवि! युवराजके लौटनेमें विलम्ब होते देख अकुलाये हुए हृदयसे महाराज तारापीड, महारानी विलासवती और आर्य शुकनासने दूतोंको भेजा है। आपका शोकशल्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भिरभिहिताः 'भवतां हस्ते देवेन चन्द्रापीडेन न किंचित्प्रतिसंदेष्टव्यम्। नापि देव्या कादम्बर्या। तदकृतविलम्बा एव गत्वैवमखिलवृत्तान्तं लोकार्तिहरायावनितलपतये देवदेवाय तारापीडायावेदयत' इत्येवमभिहितास्तु तेऽस्मान्मन्युनिर्भराः प्रत्यवदन्—'यथा भवद्भिः कथितं तत्तथा। तिष्ठतु तावत्क्रमागतस्नेहो भक्तिरनुवृत्तिर्वा। कार्यगौरवकृतं कुतूहलमेव देवावलोकनं प्रति बलात्प्रेरयत्यस्माकं। भवद्भ्यः समुपालभ्य प्रतिगमलभ्य एवायमर्थः, ततो युज्यतेऽस्मान्। यदि भवतामपि वार्तामात्रकोपनम्। अथ नयनविषयगामी तदा वयमपि नेदृशा एवापुण्यकर्माणो ये न पश्यन्ति देवम्। अस्माभिरपि चिरतरं चरणपरिचर्यया देवस्य पवित्रित एवात्मा। अस्माकमपि सर्वदा दर्शनगोचरावस्थानेन प्रसादं कृतवानेव देवः। किमद्य जातं येन देवस्य पादारविन्दवन्दनाप्रसादेनासंविभज्य विसृज्यामहे। त एव वयं पादलग्नाश्चरणरेणवः। तद्विज्ञाप्य देवीं

दूर करनेके लिए मैंने सारा वृत्तान्त भली भाँति उन्हें बताकर कह दिया है कि 'तुम्हारे द्वारा कोई संदेश न देव चंद्रापीड और न देवी कादम्बरीको ही भेजना है। अतएव विलम्ब न करके तुम लोग शीघ्र लौट जाओ और प्रजाकी पीड़ा हरनेवाले देवदेव तारापीडको सारा वृत्तान्त कह सुनाओ।' मेरे यह कहनेपर वे सब क्रुद्ध हो उठे और कहने लगे—'आपने जो कहा सो ठीक है, किंतु यदि परम्परागत स्नेह, भक्ति तथा आज्ञाकारिताको छोड़ भी दिया जाय तो भी संदेश ले जाना ही बड़ा गुरुत्वपूर्ण कार्य है और उससे उत्पन्न कुतूहल ही हमलोगोंको युवराजका दर्शन करनेके लिए हठात् प्रेरित कर रहा है। यदि आपने भी यह वृत्तान्त सुना ही हो, तब तो हम लोगोंका लौटना ठीक है। किन्तु यदि आपने उनका दर्शन किया हो तो हमलोग ऐसे पापी नहीं हैं कि उनके दर्शनसे वंचित रह जायँ। हम लोगोंने भी बहुत समय तक उनके चरणोंकी सेवा करके अपनी आत्मा पवित्र की है। हम लोगोंको देव चंद्रापीड सदा अपने समक्ष रखकर प्रसन्नता प्रकट करते थे। तब आज क्या हो गया, जो युवराजके चरणारविन्दकी वंदनाका गौरव प्राप्त किये बिना ही लौट जायँ। हमलोग अब भी उनके वही चरणरज हैं। अतएव देवी कादम्बरीसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवस्य युवराजस्य पादप्रणामेनास्माकं सफलयतु भवानागमनपरिश्रमम्। अन्यथा भूमिमेतावतीमागत्य संभवे सत्यप्रत्यक्षीकृतयुवराजशरीरा गताः सन्तः किं देवदेवेन तारापीडेन वक्तव्या वयम्। किं वास्माभिर्देवो विज्ञापयितव्यः' इत्यावेदिते 'देवी प्रमाणम्' इति विज्ञाप्य पुनस्तूष्णीं स्थितवति मेघनादे तत्कालं समुत्प्रेक्षितानाश्वास्य श्वशुरकुलवैक्लव्याद्विलीयमानेव शुचाऽन्तःसंचितं बाष्पमाकुलिततरलतारकाभ्यामापिबन्ती लोचनाभ्यामुद्गद्गदिकयाऽवगृह्यमाणकण्ठी कथंकथमपि चिरात्कादम्बरी प्रत्युवाच—'स्थान एव हि तैरगमनमङ्गीकृतम्। अनवलोक्य देवमेवमेव याताः सन्तः किमुच्यन्ताम्। अपि च वृत्तान्त एवायमेवंविधो लोकातीतो यत्रावलोकनेनापि न संप्रत्ययः समुत्पद्यते। किं पुनरनालोकनेनापि कैतवमात्रकोपदर्शितप्रेमपल्लवा वल्लभतमजीविता वयमपि यावत्पश्यामस्तं तावदनपेक्षितप्राणवृत्तयः स्नेहसद्भावनया न पश्यन्तीत्यघटमान-

---

कहकर आप युवराजके चरणोंको प्रणाम करनेका अवसर दिला दें तो हमारे आनेका परिश्रम सफल हो जाय। नहीं तो इतनी दूर आकर संभव होते हुए भी युवराजका दर्शन किये बिना यदि लौट जायँगे तो देवदेव तारापीड हमें क्या कहेंगे ? और हमलोग भी उनको क्या बतायेंगे ?' यह सुनकर 'देवीकी जो इच्छा' यह कहकर मेघनाद चुप हो गया। उस समय अपनी ससुरालवालोंकी विकलताका अनुमान करके जैसे शोकसे गली जा रही हो, इस प्रकार अन्तःकरणसे उमड़नेवाले आँसुओंको चंचल पुतलियोंवाली आँखोंमें ही पीती तथा आयी हुई गद्गदतासे अवरुद्धकंठ होकर कादम्बरी किसी-किसी तरह बड़ी देर बाद बोली—'उनका इस प्रकार लौटनेसे इन्कार करना उचित ही है। यदि युवराजको देखे बिना लौटेंगे तो वे वहाँ जाकर क्या कहेंगे ? और फिर यह वृत्तान्त भी ऐसा लोकोत्तर है कि भलीभाँति देखनेपर भी जल्दी किसीको विश्वास न होगा। उसपर भी यदि देखा ही न जाय, तब भला कैसे विश्वास हो सकेगा ? जब कि केवल बनावटी प्रेम दिखानेवाली तथा अपने जीवनसे अत्यधिक प्रेम करनेवाली मैं इनका दर्शन कर रही हूँ, तब सदा स्नेहमयी सद्भावना रखकर अपने प्राणोंको भी कुछ न समझनेवाले उनके सेवक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिदम्। तदपरिलम्बितं प्रवेश्यताम्। पश्यन्तु देवम्। सफलयित्वागमनपरिश्रमेण साध लोचने ततो यास्यन्ति' इत्याज्ञानन्तरं च मेघनादेन प्रवेशितान्दूरत एव समं वाष्पपातेन पञ्चाङ्गालिङ्गितमहीतलांश्चन्द्रापीडचरणवन्दनसद्भावनिहितोत्पक्ष्मनिभृतदृष्टींस्ताननन्यदृष्टिश्चिरमिवालोक्य कादम्बरी स्वयमेवाभाषत—'भद्रमुखाः, परित्यज्यतामयं क्रमागतस्नेहसद्भावसुलभः शोकावेगः। यत्खल्वनालोचितावधि दुःखावसानमेव दुःखं तन्मरणभीरोर्भवतु नाम शोकावेगाय। यत्पुनः सुखोदर्कं तत्पुरःस्थितया सुखप्रत्याशयैवान्तरितं नापतति हृदये। तदेष वृत्तान्त एवंविधो येन न केवलमत्र निरवकाशता शोकस्य प्रत्युत सुदूरभिन्नवृत्तर्विस्मयस्यावसरः। किमत्र परिबोधनेन। अन्यत्रादृष्टपूर्वो मनुष्येषु प्रत्यक्षीकृत एवायं वृत्तान्तः। भवद्भिरपि दृष्टं च पुरेवाक्षततनोर्देवस्य वदनम्।

न देखें तो सर्वथा अनुचित है। अतएव तुम उन लोगोंको तुरन्त यहाँ ले आओ। वे आयें और देव चन्द्रापीडको देखे। वे अपने आगमनके परिश्रम तथा नेत्रोंको सफल करके ही लौटें।' यह आज्ञा पाते ही मेघनादने उन दूतोंको भीतर भेज दिया। दूरसे ही अश्रुपात करते हुए वे लोग अपने पाँचों अङ्गोंका भूतलसे स्पर्श कराके चन्द्रापीडके चरणोंकी वन्दना करनेके पश्चात् प्रेमपूर्वक पलकें खोलकर निर्निमेष नयनोंसे निहारने लगे। इस तरह सद्भावनाके साथ चन्द्रापीडका दर्शन करते हुए दूतोंको ध्यानसे बड़ी देरतक देखकर कादम्बरी स्वयं बोली—'हे भद्रपुरुषो! अब आप लोग परम्परागत स्नेह तथा सद्भावनासे जायमान शोक त्याग दें। जिसके लिए समयकी कोई अवधि निश्चित न हो और अन्तमें केवल दुःख ही मिले, ऐसी विपत्तिमें पड़कर मरनेसे डरनेवाले लोगोंको ही शोक होना चाहिए। किन्तु जिसका अन्त सुखदायक है, ऐसी विपत्तिको तो समक्ष दीखनेवाले सुखकी आशा ही रोककर हृदयके भीतर नहीं घुसने देती। यह घटना तो ऐसी है कि इसमें शोकके समावेशका अवसर ही नहीं है। प्रत्युत लोकोत्तर घटना होनेके कारण विस्मयका अवसर अलबत्ते मिलता है। इस विषयमें क्या समझाया जाय? मानव-समाजमें जो घटना घटित होती कभी भी नहीं देखी गयी, उसे देखते हुए आप लोगोंने पूर्ववत् निर्विकार शरीरयुक्त देव चन्द्रापीडका मुख प्रत्यक्ष देख लिया। इस समय जो देवका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संभाषणापि या देवेन विना न संभवति सापि संभावितैव। तद्गम्यतामधुना वार्तोत्सुकमतेर्देवस्य पादमूलम्। न चायं प्रत्यक्षदृष्टोऽप्युपरतशरीराविनाशवृत्तान्तः प्रकाशनीयः। दृष्टोऽस्माभिरच्छोदसरसि तिष्ठत्येतदेवावेदनीयम्। यतः कारणादुपरतिः खल्वश्यंभाविनी प्राणिनां कथंचित्प्रत्ययमुत्पादयति। शरीरविनाशः पुनः प्राणैर्विनाकृतानां दृश्यमानोऽप्यश्रद्धेय एव। तदस्यावेदनेन सुदूरस्थितमपि गुरुजनं मरणसंशये निक्षिप्य वर्तमाने प्रयोजनमेव नास्ति। प्रत्यागतजीविते जीवितेश्वरे स्वयमेवायमत्यद्भुतभूतोऽर्थो गुरुजने वा प्रकटीभविष्यति' इत्येवमादिष्टाश्च ते व्यज्ञापयन्—'देवि, किं विज्ञापयामः। द्वाभ्यामेवापरिज्ञानमस्य वस्तुनः संभवेद्गमनेनास्मदीयेनाकथनेन वा। तदस्माकं तु हस्ते द्वयमप्येतन्नास्ति। युवराजवैशम्पायनयोर्वार्तां विना दुःखं तिष्ठता देवेन तारापीडेन देव्या विलासवत्यार्यशुकनासेन संभाव्य प्रेषितानामप्रेषितजी-

---

संभाषण नहीं सुनायी देता, वह भी भविष्यमें सुनायी देनेकी आशा है। सो अब आप लोग वह वृत्तान्त सुननेके लिए लालायित महाराजाधिराजके चरणोंमें शीघ्र लौट जायँ। किन्तु वहाँ जाकर प्रत्यक्ष देखे हुए भी इस मृत शरीरके अविनाशी होनेकी बात मत कहिएगा। आप वहाँ केवल इतना ही कहें कि 'हमने अच्छोद सरोवरपर युवराजको देखा है।' क्योंकि संसारमें मरण तो प्रत्येक प्राणीका अवश्य होता है। अतएव उसपर किसी तरह विश्वास हो सकता है, किन्तु प्राणहीन हो जानेपर भी शरीरका विनाश न होना प्रत्यक्ष देखनेपर भी अविश्वसनीय ही होगा। सो यह हाल कहकर उन दूर बैठे हुए गुरुजनोंको मृत्युके द्वारतक पहुँचानेकी कोई आवश्यकता नहीं है।" जब मेरे प्राणवल्लभ पुनः जीवित हो जायँगे, तब यह अद्भुत वृत्तान्त उन गुरुजनोंको स्वतः ज्ञात हो जायगा।' देवी कादम्बरीके ऐसा कहनेपर उन दूतोंने कहा—'देवि! हमलोग क्या कहें? यह बात तो दो ही प्रकारसे छिप सकती है। या तो हमलोग लौटकर जायें ही नहीं अथवा जाकर भी न कहें। किन्तु ये दोनों ही बातें हमारे हाथमें नहीं हैं। युवराज चन्द्रापीड तथा वैशम्पायनका कोई समाचार न पानेसे बहुत दुखी होकर देव तारापीड, देवी विलासवती तथा आर्य शुकनासने बड़े आदरके साथ हमको यहाँ भेजा है। अतएव जबतक हमारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वितानामगमनं तु दूरापेतमेव। गत्वापि दयिततमतनयवार्ताश्रवणलालसस्य राज्ञो देव्या आर्यशुकनासस्य दुःखप्लुताक्षीण्युद्वीक्ष्य मुखानि निर्विकारवदनानामस्माकमवस्थानमशक्यमेव' इति विज्ञापिता तैरेवमेतदित्युक्त्वा कादम्बरी मेघनादमवादीत्—'मेघनाद, वेद्मि संस्तुतजनस्यैतदनुचितमिति। तथापि गुरूणां चेतःपीडामवेद्यमाणया मयैवमभिहितम्। इतरदपि दुःखमायाति। कीदृशं भवति किं पुनरिदं महावज्रपतनसदृशम्। तदेतदपि भवतु। एभिः सहापरः कश्चिच्छ्रद्धेयवचाः प्रत्यक्षदृष्टसकलवृत्तान्तः संप्रत्ययाय व्रजतु' इति।

एवमादिष्टस्तु मेघनादो व्यज्ञापयत्—'देवि, राजलोके तु का कथा। भृत्यवर्गोऽपि सकल एवायं कन्दमूलफलाशी निश्चयं कृत्वा स्थितो यथास्माकं मध्यादेकेनापि देवपादान्विना न प्रतीपं गन्तव्यमिति। भृत्या अपि त एव ये संपत्तेर्विपत्तौ सविशेषं सेवन्ते। तमुन्नम्यमानाः सुतराम-

---

शरीरमें प्राण हैं, तबतक लौटकर न जाना असम्भव है। यदि लौटकर पहुँचेंगे तो अपने अतिशय प्रिय पुत्रका वृत्तान्त सुननेको उत्कण्ठित महाराज, महारानी और आर्य शुकनासकी दुःखसे डबडबायी आँखें तथा म्लान मुख देखकर हमलोगोंका निर्विकार भावसे खड़े रहना संभव नहीं होगा।' उनके वचन सुनकर कादम्बरी बोली—'तुम्हारा कहना ठीक है।' फिर उसने मेघनादसे कहा—'मेघनाद! मुझे मालूम है कि परिचित जनोंके लिए यह बात अनुचित है। फिर भी मैंने ऐसा इसलिए कहा था कि जिससे गुरुजनोंके हृदयको पीडा न पहुँचे। साधारण दुःख भी प्राणीके हृदयको झकझोर देता है। फिर इस वज्रपात सरीखे महान् दुःखका तो कहना ही क्या है। अतएव इनके साथ कोई ऐसा विश्वस्त आदमी भेज दो, जिसकी बातपर उनकी आस्था हो और जिसने यहाँ घटित घटनाओंको अपनी आँखों देखा हो।'

यह आज्ञा पानेपर मेघनादने कहा—'देवि! राजपुत्रोंकी कौन कहे, सम्प्रति केवल कंद-मूल खाकर रहनेवाले सभी सेवकतक परस्पर सलाह करके यह निश्चय कर चुके हैं कि देव चंद्रापीडके बिना हममेंसे एक भी व्यक्ति लौटकर उज्जयिनी नहीं जायगा। सच्चे सेवक भी वे ही होते हैं, जो सम्पत्तिकालकी अपेक्षा विपत्तिकालमें अधिक सेवा करनेको संनद्ध हों। जो उच्च पद पाकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वनमन्ति। आलाप्यमाना न समालापाः संजायन्ते। स्तूयमाना नोत्सिच्यन्ते। क्षिप्यमाणा नापरागं गृह्णन्ति। उच्यमाना न प्रतीतं भाषन्ते। पृष्टा हितप्रियं विज्ञपयन्ति। अनादिष्टाः कुर्वन्ति। कृत्वा न जल्पन्ति। पराक्रम्य न विकत्थन्ते। विकथ्यमाना अपि लज्जामुद्वहन्ति। महाहवेष्वग्रतो ध्वजभूता इव लक्ष्यन्ते। दानकाले पलाय्य पृष्ठतो निलीयन्ते। धनात्स्नेहं बहु मन्यन्ते। जीवितात्पुरो मरणमभिवाञ्छन्ति। गृहादपि स्वामिपादमूले सुखं तिष्ठन्ति। येषां च तृष्णा चरणपरिचर्यायाम्, असंतोषो हृदयाराधने, व्यसनमाननावलोकने, वाचालता गुणग्रहणे, कार्पण्यमपरित्यागे भर्तुः। ये च विद्यमानेऽपि स्वात्मन्यस्वाधीनसकलेन्द्रियवृत्तयः पश्यन्तोऽप्यन्धा इव, शृण्वन्तोऽपि बधिरा इव, वाग्मिनोऽपि मूका इव, जानन्तोऽपि जडा इव, अनुपहतकरचरणा अपि पङ्गव इव,

---

भी भली भाँति विनम्र बने रहें। जो बात करते समय बराबरीका बर्ताव न करने लग जायँ। जो स्तुति किये जानेपर गर्वसे फूल न जायँ। जो दोष दिखलानेपर झुँझलायें नहीं। जो डाँटनेपर मुँह न लगें। कोई बात पूछनेपर प्रिय और हितकी बात कहें। बिना कहे सुचारुरूपसे अपना काम करते रहें। कोई अच्छा काम करके शेखी न बघारें। पराक्रमका काम करके आत्म-विज्ञापन न करें। लोगोंसे अपनी प्रशंसा सुनकर लज्जित हो जायँ। सच्चे भृत्य बड़े-बड़े युद्धोंमें ध्वजके समान सबसे आगे रहते हैं। दान लेनेके समय वे भागकर सबके पीछे छिप जाते हैं। धनपर उनका विशेष अनुराग नहीं रहता। सेवाकालमें वे जीवनकी अपेक्षा मृत्युको अधिक महत्त्व देते हैं। घरकी अपेक्षा वे स्वामीके चरणोंमें रहना ज्यादा अच्छा समझते हैं। उनकी तृष्णा स्वामीके चरणोंकी सेवामें रहती है। यदि सच्चे मनमे स्वामीका आराधन नहीं कर पाते तो उन्हें असन्तोष होता है। स्वामीका मुँह देखते रहनेका उन्हें व्यसन होता है। गुण ग्रहण करते समय वे वाचाल हो उठते हैं। स्वामीके चरणोंको त्यागनेमें कृपण होते हैं। आत्माके रहनेपर भी अपनी समस्त इन्द्रियवृत्तियाँ वे स्वामीको सौंप देते हैं। अतएव देखते हुए भी अन्धे, सुनते हुए भी बहरे, वाक्पटु होते हुए भी गूँगे, सब जानते समझते हुए भी जड, हाथों और पैरोंके रहनेपर भी पंगु और नपुंसकोंके समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्लीबा इवाकिंचित्कराः, स्वात्मनः स्वामिचिन्तादर्शे प्रतिबिम्बवद्वर्तन्ते। तत्सर्वमेवंस्थितो भृत्यलोकः। देवस्य च स्थाने देवी वर्तते। तदाज्ञापितं कृतमवधारयतु देवी' इत्युक्त्वा मेघनादस्त्वरितकनामानं कुमारबालसेवकमाहूय तैः सह व्यसजयत्।

अथ सुबहुदिवसापगमे वार्तां विनोत्ताम्यन्ती चन्द्रापीडस्यैवागमनायोपयाचितं कर्तुमवन्तीनामनगरीदेवतानामवन्तीमातृणामायतनं निर्गता विलासवती 'देवि, दिष्ट्या वधसे। प्रसन्नास्तेऽवान्तिमातरः। परागता युवराजवार्ताहराः' इति सहसैव संभ्रमप्रधावितात्परिजनादुपश्रुत्यानन्दवाष्पजललुलितया जलार्द्रेन्दीवरस्रजेव विक्षेपदीर्घया दृष्ट्याऽर्चयन्तीव चिरं दृष्ट्वा ककुभो मृगाङ्गनेव परिभ्रष्टबालपोता फूत्कृत्य प्राकृतेवार्ता 'केनेदममृतं मे वाक्छलाद्वृष्टम्, कस्यानुकम्पाऽस्मिञ्जने जाता,

---

कुछ करनेमें असमर्थ रहते हुए भी अपने चित्तरूपी दर्पणमें प्रतिबिम्बकी तरह सदा विद्यमान रहते हैं। उन भृत्योंकी तो यह दशा है। अब देव चंद्रापीडके स्थानमें आप ही उनकी स्वामिनी हैं। सो आप आज्ञा दीजिए। उसके पालनमें तनिक भी देर न लगेगी।' यह कहनेके बाद मेघनादने देव चंद्रापीडके बालसंगी त्वरितक नामके बालसेवकको बुलाया और उन दूतोंके साथ भेज दिया।

बहुत दिनोंसे कोई समाचार न पानेसे विकल महारानी विलासवती चंद्रापीडके वापस आनेकी मनौती माननेके लिए उज्जयिनी नगरीके देवमन्दिरमें गयी हुई थीं, तभी हड़बड़ीमें जल्दी-जल्दी दौड़कर बहुतसे परिजनोंने एक साथ उनके पास जाकर कहा—'महारानी! आप बड़ी भाग्यवती हैं। अवन्ती नगरीकी अधिष्ठात्री देवियाँ आपपर प्रसन्न हैं। युवराजका समाचार लानेको गये हुए दूत लौट आये।' यह सुनते ही महारानीके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू छलछला पड़े। जलमें भीगी नीलकमलकी माला सरीखी आँखोंको फैलाकर उन्होंने जैसे दिशाओंकी अर्चना करते हुए बड़ी देरतक चारों ओर देखा। तदनन्तर अपने नन्हें बच्चेसे बिछुड़ी मृगीकी भाँति साधारण स्त्री जैसी रोती-गाती पूछने लगी—'इस वचनके ब्याजसे किसने मेरे ऊपर अमृतकी वर्षा की है?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केन दृष्टाः, कियद्दूरे वर्तन्ते, किं वा तैः कथितं कुशलं मे वत्सस्य' इति पृच्छन्त्येवाद्राक्षीदितस्ततो यथादर्शनसम्बन्धशः प्रधावितेन नरपतिप्रतिबद्धेनाप्रतिबद्धेन चोज्जयिनीनिवासिना जनेनागता युवराजः, कियद्दूरे भवद्भिः परित्यक्तः, दिवसेष्वेतेषु क्व वर्तते, क्व वा भवद्भिर्यात्वा दृष्टः, क्व वातिकष्टस्तेनातिवाहितो वाहनमात्रसाधनेन धाराधरागमः। तुरगपृष्ठगतस्य मन्ये वहत एवास्यापक्रान्तस्त्वरितक एतद्वेति, किमनेन वेदितेनापि। एतत्कथयतु यदर्थमयं क्लेशः कृतो युवराजेन। स दृष्टो वैशम्पायनः प्रत्यानीतो वा। मिलितोऽस्य पत्रलेखासहितो मेघनादः। दत्तः कथं कश्चिदपि संदेशो देववधनेन। मे मित्रमेवासावद्यारभ्य राभसिकतयैव विनाशं बलाद्गतस्य बलधर्मणो वत्सस्य बिभेम्येव वार्तां पृच्छन्नपि। जीवत्यसावस्य वाजी यो युवराजेन प्रसादीकृतः। प्रसीदत। सादिनां प्रथमस्य पृथुवर्मणो मातुलस्य मे कथयत वार्ताम्। उत्प्रेक्षामहे

किसने मेरेपर कृपा की ! किसने उन दूतोंको देखा है ! वे अभी कितनी दूरीपर हैं ? क्या उन्होंने मेरे पुत्रका कुशल समाचार सुनाया है !' महारानी इस प्रकार पूछ ही रही थीं कि इतनेमें दूरसे त्वरितकके साथ दूतोंको आते देख राजसेवक तथा अन्यान्य नागरिकोंके झुंड चारों ओरसे दौड़कर आ पहुंचे और उनसे पूछने लगे—'युवराज आ गये ? आप लोगोंने कितनी दूरीपर उन्हें छोड़ा है ? इन दिनों वे कहाँ हैं ? आप लोगोंने जाकर उन्हें कहाँ देखा ? केवल वाहनमात्र साधनके साथ उन्होंने अति दुःखदायिनी वर्षाऋतु कहाँ बितायी ? युवराज यहाँसे घोड़ेपर चढ़कर गये थे, इससे अनुमान होता है कि बरसात रास्तेमें ही बीत गयी होगी। इस बातको त्वरितक जानता होगा। किन्तु यह जाननेसे भी क्या लाभ ? पहले यह बताओ कि जिसके लिए युवराजने इतना कष्ट सहा, उस वैशम्पायनको उन्होंने देखा ? क्या उसे लौटा लाये ? पत्रलेखा तथा मेघनादसे उनकी भेंट हुई ? देववर्धनने हमारे लिए कोई सन्देश भेजा है ? वह अब भी मेरा मित्र है। एकाएक जीवनको संशयमें डालकर बरबस गये हुए अपने पुत्र बालधर्माका तो कुशल-क्षेम पूछनेमें भी मुझे डर लगता है। युवराज चन्द्रापीडने प्रसन्न होकर जो घोड़ा उसे दिया था, वह जीवित है न ? घोड़सवारोंमें अग्रणी मेरे मामा पृथुवर्माका समाचार कृपा करके मुझे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महानश्ववारैरनुभूतः क्लेश इति। कुशलं महाश्वपतेरश्वसेनस्य। श्वशुरोऽसावस्माकम्। विस्मयः कृतोऽस्मत्पित्रापि, यच्चिह्नकमपि भवतां हस्ते न किंचित्प्राहितम्। आहितभर एवासौ युवराजभवने दृष्टो भवद्भिर्भ्राता मे भरतसेनः। सपरिजनस्य सेनापतेर्भद्रं भद्रसेनस्य। सेवाव्यसनी सूनुर्मे कुमारवर्मा। तत्र चलगतिबलाधिकृतस्य का वार्ताऽवन्तिसेनस्य। रोपितस्तेनासीन्नासीराथं युवराजः। राजकुले कः प्रसादवित्तो वर्धनो मान्यते वा। केन वा किं लब्धमेतावद्भिर्दिवसैः। राजनिका बहवः खल्वभिनवसेवका जाताः। यातु तावत्सर्वमेवान्यत्। येन दृष्टः स कथयतु सर्वसेनसूनोर्वीरसेनस्य वार्ताम्। पितर्युपरते प्रथममेव स प्रविष्टो यात्राम्। मात्रास्य दुःखान्तरितप्रत्यग्रपतिमरणशोकादशनक्रियेव परित्यक्ता। न विद्म एवं कथं सा जीवति' इत्येतानि चान्यानि च प्रतिपदं पृच्छ्यमानानप्यदत्तवचसो नासाग्रस्थितमन्युगर्भदृष्टीना-

---

सुना दो। मेरा तो ऐसा अनुमान है कि इस यात्रामें उन घोड़सवारोंको बड़ा दुःख उठाना पड़ा होगा। महान् अश्वपति राजा अश्वसेन तो सकुशल हैं ? वे मेरे ससुर हैं। सबसे आश्चर्यजनक कार्य तो मेरे पिताजीने किया है कि जो आप लोगोंके हाथों अपनी कोई निशानी भी नहीं भेजी। युवराजके महलमें नियुक्त मेरे भाई भरतसेनको आप लोगोंने देखा हैं ? वे बहुत ऊँचे पदपर हैं। सेनापति भद्रसेन अपने परिजनोंके साथ कुशलपूर्वक हैं ? सेवाव्यसनी मेरा पुत्र कुमारवर्मा वहाँ तुम्हें मिला था ? स्थलसेनाके सेनापति अवन्तिसेनका क्या हाल है ? आगे बढ़ जानेके कारण युवराज उसपर रुष्ट हो गये थे। राजाओंमेंसे किस राजापर युवराजकी ज्यादा कृपादृष्टि रहती है और इस समय किसकी धाक है ? इतने दिनोंमें किसे क्या मिला ? अब तक तो उन राजाओंके बहुतेरे सम्बन्धी नये राजसेवक बन चुके होंगे। अच्छा, और बातें छोड़ो। आपमेंसे जिसने देखा हो, वह यह बताये कि सर्वसेनके पुत्र वीरसेनका क्या हाल है ? पिताके मर जानेपर वह पहली बार यात्रापर गया है। उसकी माता पतिमरणसे तो दुःखिनी थी ही, उसके बाद पुत्रवियोगका दुःख आ पड़नेपर उसने भोजन ही त्याग दिया है। हमें नहीं मालूम कि वह कैसे जीती है।' ऐसे-ऐसे बहुतेरे प्रश्न करनेपर भी दूत उनका कुछ भी उत्तर न देते तथा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्टानिवाध्वश्रमनिःमहाङ्गानपि पदाकृष्टिसंभावितोद्यमायासितया गत्या गच्छतश्चातिमलिनपटच्चराच्छादितानसंस्कारमलिनकायाननेकोद्धद्धाध्वधूलिपरुषमूर्धजान्ध्वजानिवाध्वक्लेशस्याश्रयानिव श्रमस्य पदन्यासानिव दौर्मनस्यस्याश्वासानिव प्रवासस्य संदर्भानिव सर्वदुःखानां दूरत एव त्वरितक्रममेतांस्तौंल्लेखहारकान्। आलोक्य तस्मिन्नेव मातृगृहाङ्गणे स्थिता तेषामाह्वानायादिदेश। अनन्तरं चातर्कितापतितदर्शनद्विगुणितदुःखावेगान्मुषितानिवोन्मुक्तानिवेन्द्रियैर्दारुमयानिव शून्यशरीरान्निर्जीवानिवोपसर्पतः पुरस्तात्पतन्तीव बाष्पान्धा साध्वसस्खलितचरणकमला कतिचिद्दत्वा पदानि गद्गदतरमुच्चैरकृतप्रणामानेवावादीत्—'भद्राः, कथयताशु वत्सस्य मे वार्तामात्रम्। इदं त्वन्यथैव किमपि कथयति मे हृदयमप्रत्ययमेवाश्रयते। वत्सो दृष्टो वा न भवद्भिः'

शोकाकुल आँखोंको नासिकाके अग्रभागपर जमाये हुए आविष्टकी भाँति लम्बा रास्ता तै करनेकी थकावटसे खिन्न होते हुए भी उत्साहके साथ लम्बे पग बढ़ा-बढ़ाकर चल रहे थे। उनके कपड़े बड़े मैले थे और फट भी गये थे। नहाने-धोनेका अवसर न मिलनेसे उनके शरीर भी मलिन थे। बराबर धूल पड़नेके कारण उनके केश रूखे हो गये थे। मार्गजनित थकावटके तो वे जैसे मूर्तरूप हो रहे थे। श्रमके तो जैसे वे ही आधार थे। प्रवासके जैसे संदर्भसूत्र और समस्त दुःखोंके समुदाय थे। उन्हें देखकर महारानी विलासवती देवीके उसी आँगनमें बैठ गयीं और उनको बुलवा भेजा। सहसा महारानीके दर्शनकी संभावनासे उन दूतोंके दुःखका आवेग बढ़कर द्विगुणित हो गया। अब जैसे उनका उत्साह भग हो गया, इन्द्रियोंने जैसे उनका साथ ही छोड़ दिया और वे जैसे मनुष्य न होकर काठके पुतले हों, इस तरह वे दूत शून्यशरीर होते हुए उनके सम्मुख गये। वे उन्हें भली-भाँति प्रणाम भी नहीं कर पाये थे, उसी समय आँसुओंके बहावसे अन्धी और भयसे पग-पगपर लड़खड़ाते पाँवोंसे कुछ कदम आगे बढ़कर महारानी विलासवतीने भर्राये गलेसे चिल्लाकर कहा—'हे भद्रपुरुषो! मेरे बच्चेका हाल तुरन्त मुझे सुनाओ। क्योंकि मेरा हृदय कुछ और ही कह रहा है। मुझे उसके सकुशल होनेका विश्वास नहीं होता। तुम लोगोंने मेरे बच्चेको देखा या नहीं ?' उनके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्येवं पृष्टास्तु ते सहसागतबाष्पवेगमवनिनिवेशितोत्तमाङ्गाः प्रणामापदेशेनोत्सृज्य कृच्छ्रादिवाभिमुखमुन्नमितवदना व्यज्ञापयन्—'देवि, दृष्टोऽस्माभिरच्छोदसरस्तीरे युवराजः शेषमेष त्वरितको निवेदयिष्यति।' इत्यभिवदत एव तानुद्बाष्पमुखी प्रत्युवाच—'किमपरमयं तपस्वी निवेदयिष्यति। दूरतः प्रभृत्यपसृतप्रहर्षेणैवोपसर्पणेन प्रतिलेखमालिकाशून्यैः शिरोभिराविषण्णदीनैराननैः प्रयत्नसंरक्षिताश्रुमोक्षदुःखिताभ्यां लोचनाभ्यां सन्मुखसमक्षमधारणेन च दृष्टैर्यदावेदितव्यं तद्भवद्भिरेवावेदितम्। हा वत्स, जगदेकचन्द्र, चन्द्रापीड, चन्द्रानन, चन्द्रशीतलप्रकृते, चन्द्राभिरामगुण, लोचनानन्दभूत, किं भूतं ते येन नागतोऽसि तात चन्द्रापीड। पीडिता ब्रवीमि न कोपादुपालभमाना। न युक्तमेतत्तवाम्ब, न परिलम्बं मनागपि करोमीति तथा मे पुरः प्रतिज्ञायान्यत्र क्वाप्यवस्थातुम्। वत्स, गच्छत एव ते मयास्य हतऽदयस्य शङ्कयैव

इन प्रश्नोंको सुनकर सहसा आँसुओंका वेग बढ़ जानेके कारण प्रणाम करनेके बहाने मस्तक जमीनपर रखकर बड़े ही कष्टके साथ उठकर उन्होंने कहा—'महारानी! हम लोगोंने अच्छोद सरोवरपर युवराजका दर्शन किया है। बाकी ब्योरेकी बातें यह त्वरितक बतायेगा।' उनके यह कहते ही आँसू छाये हुए मुखसे महारानी बोलीं—'यह बेचारा अब और क्या कहेगा? दूर ही से अनमने होकर मेरे समीप आने, मालाविहीन मस्तक, विषाद भरे मुख, प्रयत्न करके रोके हुए आँसुओं, दुखभरी आँखों तथा मेरी ओर नेत्र न उठाकर ही तुम लोगोंने जो कहना था, सो कह दिया। हाय वत्स! हाय संसारभरके एकमात्र चन्द्रमा! हाय चन्द्रमासदृश मुखवाले चन्द्रापीड! हाय चन्द्रसदृश शीतल स्वभाव! हाय चन्द्रमासदृश सुन्दर गुणसम्पन्न! हाय नेत्रोंको आनन्द देनेवाले! हे तात चन्द्रापीड! तुम्हें क्या हो गया, जो अब तक नहीं आये? यह बात मैं दुःखसे कह रही हूँ, क्रोधसे उलाहना नहीं देती। 'माताजी! आप दुखी न हों, मैं कुछ भी बिलम्ब न करूँगा।' इस प्रकार मेरे समक्ष प्रतिज्ञा करके अब इस तरह तेरा अन्यत्र रुक जाना ठीक नहीं है। मरे वत्स! उस समय जब तू जाने लगा था, तभी अपने पापी हृदयकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ज्ञातं दुष्करं मे वत्सस्य पुनर्मुखावलोकनमिति । बलाद्गतोऽसि । किं करोमि । को वात्र दोषो वत्सस्य । मन्दभाग्याया ममैवैतान्यपुण्यानां विलसितानि । भवन्त्यपुण्यवंत्योऽपि लोके न पुनर्मया सदृशी पापकारिणी । यस्यास्त्वमेक एवमकाण्ड एवाच्छिद्य क्वापि नीतोऽसि । विप्रलब्धास्मि दग्धवेधसा । वत्स, सुदूरस्यापि पादयोः पतामि ते । निवर्तस्वैकवारम् । अम्बेत्यालपतस्ते वदनमवलोकयितुमुत्कण्ठितं मे हृदयम् । जात दुर्लभक, न जानाम्येव किमाजन्मनः प्रभृति शैशवं ते स्मृत्वात्मानमनुशोचामि । उत यौवनाभोगकारिणीं वर्तमानां रूपशोभाम् । आहोस्विदवष्टम्भधीरामुत्प्रेदयोत्प्रेदयगाम्मिनीं प्रभुताम्' इति । एवं विलपन्तीं मामवलोक्य 'हृदयस्थितो मैव कृथाश्चेतसि पुत्र, यथा विनापि मया जीवत्येव विलासवती । जात, त्वया विना जीवन्त्यापि पितुरेव ते कथं मया वदनं दर्शितम् । न वेद्मि किमपि । प्रियतया ते किमाकृतेः प्रत्ययादुत स्त्रीजनसहभुवो मूढभावादेवेत्यद्यापि न श्रद्धाति मे हृदयम-

---

शंकाओंसे ही मैंने समझ लिया था कि अब पुनः बच्चेका मुख देख पाना मेरे लिए दुर्लभ है । तू तो हठ करके गया था । मैं क्या करूँ ? अथवा बच्चेका क्या दोष है ? यह सब मुझ मन्दभागिनीके पापोंका खेल है । संसारमें बहुतेरी पापिनियाँ होती हैं, किन्तु मेरे जैसी पापिनी कोई न होगी कि जिसके एकमात्र पुत्रको छीनकर विधाता न जाने कहाँ ले गया । उस जले विधाताने व्यर्थ मेरे साथ छल किया है । वत्स ! यद्यपि तू दूर है, फिर भी मैं तेरे पैरों पड़ती हूँ । एक बार लौट आ । 'माँ' कहते हुए तेरे मुखको देखनेके लिए मेरा हृदय तरस रहा है । मेरे दुर्लभ बेटे ! यह समझमें नहीं आता कि मैं जन्मसे लेकर बाल्य काल तकके तेरे कामोंको सोचकर रोऊँ या यौवनको उभाड़नेवाली तेरे रूपकी शोभाको झंखूँ अथवा तेरे सहारे टिकनेवाली अपनी प्रभुतापर आँसू बहाऊँ । इस प्रकार मुझे बिलखती देखकर मेरे हृदयमें बसे हुए बेटे ! तुम ऐसा मत सोच लेना कि 'विलासवती अभी जीवित है ।' पुत्र ! तेरे बिना जीवित रहकर भी मैं तेरे पिताको अपना मुख कैसे दिखाऊँगी ? तेरी सुन्दर आकृतिपर प्रेम है, इसलिए या तेरे ऊपर विश्वास होनेके कारण अथवा स्त्रीजातिकी स्वाभाविक मूढ़तावश अब भी मेरा हृदय तेरे अनिष्टकी बात नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निष्ठुं ते। येन न न सहस्रधा स्फुटति। स्फुटीकर्तुं च वार्तां भीता ते त्वरितकोपनीतामेव नेच्छामि। वरमनाकर्ण्यैवाश्रवणीयमुपरतास्मीति। तात, किं ब्रवीषि यथा किममुना सुतस्नेहानुचितेन लोकलज्जाकरेण वैक्लव्येनेति। एषा स्थितास्मि वत्स, ते वचनात्तूष्णीम्। न रोदिमि।' इत्यभिदधानैवासन्नसखीजनावलम्बितशरीरा मोहमगमत्।

अथानेकसहस्रसंख्येन प्रधावता विलासवतीपरिजनेनावेदिते तस्मिन्वृत्तान्ते मन्दरास्फालनोद्वेल इव महाम्भोधिरुद्भ्रान्तचेताः ससंभ्रममुत्थायार्यशुकनासद्वितीयो याभावस्थितां प्रजविनीं करेणुकामारुह्य रयादापिबन्निव पुरो राजमार्गं किं किमेतदित्युन्मुक्तार्तनादकलकलेन सर्वतः प्रधावता जनपदौघेनाकर्षन्निवोद्वासयन्निव पृष्ठतः सगोपुराट्टालकप्राकारभवनतोरणामुज्जयिनीं निर्जगाम नरपतिः। उपेत्य चावन्तीमा-

---

सोचता। यदि सोचता तो यह फटकर हजारों टुकड़ोंमें विभक्त हो गया होता। मुझे डर लगता है, इसी कारण त्वरितकसे तेरा वृत्तान्त स्पष्ट नहीं कराती। अच्छा हो कि उस न सुनने योग्य वृत्तान्तका स्पष्टीकरण होनेके पहले ही मैं मर जाऊँ। मेरे लाल! तू क्या यह कह रहा है कि 'इस प्रकार अनुचित पुत्रस्नेहवश लोकलज्जाजनक विकलताका प्रदर्शन करनेसे क्या लाभ?' तो ले बेटे! तेरी बात मानकर चुप हो गयी। अब मैं नहीं रोऊँगी।' वह ऐसा कह ही रही थी कि इतनेमें उसे मूर्छा आ गयी और आस-पासकी सखियोंने सहारा देकर उसको सम्हाल लिया।

तदनन्तर विलासवतीके कई हजार परिजनोंने दौड़कर जब यह हाल सुनाया तो मंदरपर्वतके घूमनेसे उमड़े समुद्रकी भाँति महाराज तारापीड घबड़ाकर तुरन्त उठ खड़े हुए। उन्होंने शुकनासको साथ लिया और द्वारपर खड़ी एक तेज चलनेवाली हथिनीपर सवार होकर वेगसे जैसे राजमार्गको दूरीको पीते हुए महलसे बाहर निकले। उन्हें देखकर 'क्या हुआ-क्या हुआ' आर्त स्वरमें यह कहकर चिल्लाते और चारों ओरसे दौड़ते हुए नगरनिवासियोंके समूहको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे द्वारों, अट्टालिकाओं, चहारदीवारियों, मन्दिरों एवं तोरणोंसमेत सारी उज्जयिनी नगरी राजाके पीछे-पीछे खिंची चली जा रही हो अथवा खाली करायी जा रही हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वृगृहमवतीर्य तिर्यग्विषण्णोद्वाष्पवदनेन मलयजजलैश्च सिञ्चता, कदलीदलैश्च वीजयता, जलार्द्रैश्च पाणिपल्लवैः संवाहनं कुर्वता, कथंकथमपि चेतनामापद्यमानां परिजनेनार्धोन्मीलितलोचनयुगामुष्णकालकमलिनीमिव विलासवतीमपश्यत्। दृष्ट्वा च सहसा प्रवृत्तेन नेत्राम्भसा मूर्च्छावशेषापनयनायैव सिञ्चन्समुपविश्य पार्श्वं स्पर्शामृतवर्षिणा करेण ललाटे चक्षुषि कपालयोरुरसि बाह्वोश्च स्पृशञ्छनैः शनैर्बाष्पगद्गदमवादीत्—'देवि, यदि सत्यमेवान्यादृशं किमपि वत्सस्य चन्द्रापीडस्य ततो न जीव्यन्त एव। किमर्थमयमात्मा वत्सस्य कृते सकललोकसाधारणेनामुना वैक्लव्योपगमेन तुच्छतां नीयते। इयन्ति शुभान्युपात्तानि कर्माणि। किमपरं क्रियते। नाधिकस्य भाजनं सुखस्य वयम्। अनुपात्तं हि हृदयताडनमपि कुर्वद्भिर्न लभ्यत एवात्रात्मच्छया। विधिर्नामापरः कोऽप्यत्रास्ते। यत्तस्मै रोचते तत्करोति। नासौ कस्यचिद-

---

अवन्तीमाताके मन्दिरपर पहुँचकर उतरे तो उन्होंने देखा कि दासियाँ आँसू भरे और अपने शोकाकुल मुखोंको मोड़े ग्रीष्मकालकी कमलिनीके सदृश अर्धविकसित नयनोंवाली देवी विलासवतीपर चन्दनमिश्रित जलका छींटा दे रही हैं, केलेके पत्तेसे पखा हाँक रही हैं और पानीमें भीगे हाथोंसे दाब-दाबकर उसे होशमें लानेकी चेष्टा कर रही हैं। यह देखकर राजाके भी नेत्रोंमें आँसू छलक आये और उन्हींके जलसे जैसे बाकी मूर्छाको दूर करनेके लिए सिंचन करते हुए समीप बैठ गये। तदनन्तर स्पर्शस्वरूप अमृतकी वर्षा करनेवाले हाथोंको रानीके मस्तक, नेत्र, कपोल, छाती तथा हाथोंपर फेरते हुए आँसुओंके वेगसे अवरुद्ध कंठ होनेके कारण गद्गद वाणीमें कहा—'देवि! यदि सचमुच वत्स चन्द्रापीडका कुछ अनिष्ट हुआ होगा, तब तो हम सब जी ही न सकेंगे। अतएव पुत्रके लिए साधारण लोगोंकी भाँति विकलता दिखाकर आप अपनेको क्यों तुच्छ बना रही हैं? अपने शुभ कर्म इतने ही रहे होंगे। अब किया ही क्या जा सकता है? इससे अधिक सुखके पात्र हमलोग नहीं हैं। अप्राप्य वस्तु छाती कूटनेपर भी अपनी इच्छाके अनुसार नहीं मिल सकती। विधाता नामका कोई ऐसा तत्त्व यहाँ है, वह जो चाहे सो कर सकता है। वह किसीके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्यायत्तः। एवं च पराधीनवृत्तौ सर्वस्मिन्न किं नास्माभिर्लब्धम्। वत्सस्यातिदुर्लभो जन्मोत्सवः संभावितः। अङ्कगतस्य मुखमवलोकितम्। उत्तानशयस्योच्चुम्ब्य चरणवुत्तमाङ्गे कृतौ। जानुसंचारिणो रेणुधूसरशरीरस्याङ्के लुलतः स्पर्शसुखमनुभूतम्। अव्यक्तमनोहारीणि प्रथमजल्पितानि श्रोत्रे कृतानि विचेष्टमानस्य बालचाटवो दृष्टाः। गृहीतविद्यस्य गुणवत्तयानन्दितं हृदयम्। उपारूढयौवनस्यामानुषी रूपशोभा शक्तिश्च प्रत्यक्षीकृता। अभिषिक्तस्य यौवराज्ये शिरः समाघ्रातम्। दिग्विजयागतस्य प्रणमतः परिष्वक्तान्यङ्गानि। एतावदेव मनोरथशतवाञ्छितस्य वस्तुतो न संपन्नं यद्वधूसमेतस्य निजपदे प्रतिष्ठां कृत्वा तपोवने न गतम्। सर्वाभिवाञ्छितप्राप्तिस्तु महतः पुण्यराशेः फलम्। अपरमपि किं वृत्तं वत्सस्यैतदद्यापि न परिस्फुटं केनचिदेव न कथितम्। एतावत्तु मयाव्यक्तमेव तदैव परिजनात्कथयतः कर्णे कृतम्। यथास्मत्प्रहितैर्लेखहारिभिः सहापरो वत्सस्य मे बालसेवकस्त्वरितकनामायातः। स वेत्ति

वशमें नहीं है और उसके वशमें सब हैं। ऐसी पराधीनता रहते हुए भी हमने क्या नहीं पाया ? बेटेका अतिशय दुर्लभ जन्मोत्सव मनाया। गोदमें बिठाकर उसका मुँह निहारा। उतान लेटे हुए बेटेका मुख चूमकर उसका पैर माथेसे लगाया। घुटनोंके सहारे चलते-चलते धूलसे भरे शरीरको गोदमें लेकर स्पर्शसुख लूटा। बाल्यकालकी मीठी और तोतली बोली सुनी। खेलते समय उसकी मनोहारिणी बाललीला देखी। विद्याध्ययन कर लेनेके पश्चात् उसके गुण देखकर आत्माको आनन्दित किया। युवावस्थामें उसकी लोकोत्तर रूपछटा तथा असाधारण शक्ति देखी। युवराजपदपर अभिषेक करके उसका माथा सूँघा। दिग्विजय करके लौटनेपर हृदयसे लगाकर उसका आलिंगन किया। सैकड़ों कामनाओंमेंसे केवल एक कामना बाकी रह गयी, वह यह कि बहूके साथ उसे राजसिंहासनपर बिठाकर मैं तपोवन नहीं जा सका। सभी अभिलाषाओंकी पूर्ति तो बहुत बड़े पुण्यके फलसे ही होती है। और फिर वत्स चंद्रापीडको हुआ क्या है, यह बात स्पष्टरूपसे अभी किसीने नहीं बतायी। हाँ, संक्षेपमें परिजनोंके मुखसे आज इतना अवश्य सुना है कि यहाँसे पत्र लेकर गये हुए दूतोंके साथ पुत्र चंद्रापीडका एक बालसेवक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्ववृत्तान्तम्। सोऽपि त्वया न पृष्ट एवेति। तत्तं तु तावत्पृच्छामः। ततो जीवितमरणयोरन्यतरदङ्गीकरिष्यामः' इत्यभिवदत्येव राजनि परिजनान्तरितं त्वरितकमाहूय प्रतीहारस्त्वरितमारान्महीतलनिवेशितोत्तमाङ्गमालोकयतु देव इति दर्शितवान्।

राजा तु तथा तमालोक्य चन्द्रापीडस्नेहात् 'एह्येहि' इत्याहूय हस्तेनोत्तमाङ्गे स्पृष्ट्वादिष्टवान्—'भद्र, कथय किं वृत्तं वत्सस्य येनागमनाय मया तन्मात्रामात्येन च लिखितेऽपि नायातः। अनागमनकारणं वा किंचिन्न प्रतिलेखितवान्' इति। स त्वेवमादिष्टो राज्ञा गमनतः प्रभृति यथावृत्तं कथयितुमारेभे। राजा तु चन्द्रापीडहृदयस्फुटनवृत्तान्तं यावदाकर्ण्यातिक्षुभितशोकार्णवाक्रान्तिविक्लवः प्रसार्य करमातंस्वरस्त्वरितकमवादीत्—'भद्र, विरम संप्रति। कथितं त्वया कथनीयम्। मयापि श्रुतं यच्छ्रोतव्यम्। पूर्णो मे प्रश्नदोहदः। निवृत्तं श्रवणकौतुकम्। कृता-

---

त्वरितक आया हुआ है। उसे वत्सका सारा वृत्तान्त ज्ञात है। उससे भी तो आपने अभी नहीं पूछा है। अतएव अच्छा यह होगा कि उससे पूछ लिया जाय। उसके बाद एकसाथ हमलोग जीवित रहने या मर जानेका निर्णय करेंगे।' महाराज तारापीडके यह कहते ही परिजनोंके पीछे बैठे हुए त्वरितकको बुलाकर प्रतीहारने कहा—'देव! इधर देखिए, दूर ही से मस्तक धरतीपर रखकर त्वरितक श्रीमान्को प्रणाम कर रहा है।' यह कहकर उसे दिखाया।

त्वरितकको देखकर चन्द्रापीडके स्नेहवश महाराज तारापीडने 'आओ आओ' कहते हुए उसके मस्तकपर हाथ फेरकर कहा—'भद्र त्वरितक! बताओ तो सही, युवराजको क्या हुआ कि जिससे मेरे, अपनी माताके और मंत्रीके पत्र लिखनेपर भी वह नहीं आया? अपने न आनेका कोई कारण भी नहीं लिखा।' महाराजका आदेश पाकर त्वरितकने युवराजके प्रस्थानके बाद जो-जो घटनायें घटी थीं, उन्हें बतलाया। किन्तु चन्द्रापीडके हृदय फटनेका वृत्तान्त सुनते ही अतिशय क्षुब्ध शोकरूपी महासागरके आक्रमणसे विकल हो और हाथ फैलाकर राजाने कहा—'भद्र! बस रहने दो, जो कहना था सो तुम कह चुके। और जो सुनना था, वह मैंने सुन लिया। सुननेकी अभिलाषा पूर्ण हो गयी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

र्थीभूता श्रुतिः। आनन्दितं हृदयम्। उत्पन्ना प्रीतिः। सुखं स्थितोऽस्मि। हा वत्स, त्वयैकाकिना स्फुटतो हृदयस्यानुभूता वेदना। निर्व्यूढा त्वया वैशम्पायनस्योपरि प्रीतिः। वयं दुःखभागिना निस्त्रिंशाः कर्मचाण्डालाः। येषां तत्रापि हृदयस्फुटने निर्विकारमेव। देवि, वज्रसारतोऽपि कठिनतरमेवेदमावयोर्हृदयम्, यन्न स्वयं सहस्रधा स्फुटति। न चापि मरणदुःखभीरवोऽमी वत्समनुगच्छन्ति स्वयं प्राणाः। तदुत्तिष्ठ। यावदेवातदूरं न प्रयात्येकाकी वत्सस्तावदेवानुगमनाय प्रयतामहे। सशोकं शुकनास, किमद्यापि तिष्ठसि। अयं स कालः स्नेहस्य। महाकालायतनसमीपे समादिश सपदि परिचारकांश्चितारचनाय। उपनयत झटिति काष्ठानि काष्ठिकाः। किं तिष्ठतैवं संकुचिताः कञ्चुकिनः। गत्वा निष्क्रामयत हुताशनप्रवेशोपकरणानि। निष्कारणरुदितेन किमधुना। अवरोधपरिलम्बाद्विना दापयाशेषं देवि, द्विजेभ्यः कोषम्। कस्य

सुननेका कौतूहल जाता रहा। सुनकर कान कृतार्थ हो गये। हृदय आनन्दित हो उठा। प्रेम जायमान हो गया। अब मैं बड़े सुखमें हूँ। हा वत्स, वह हृदय फटनेकी दुःसह वेदना तुमने अकेले झेली! तुमने वैशम्पायनपर पूर्ण प्रेम प्रकट किया। हम दुखियारे तो बड़े क्रूर और कर्मणा चण्डाल हैं। इसीसे तुम्हारे हृदय फटनेका समाचार सुनकर भी निर्विकार भावसे ज्योंके त्यों बैठे हुए हैं। देवि! हम दोनोंका हृदय वज्रसारसे भी कठोर है। तभी तो फटकर उसके हजारों टुकड़े नहीं हो गये। मरणके दुःखसे डरकर ये प्राण स्वयं भी निकलकर वत्स चन्द्रापीडका अनुसरण नहीं करते। अतएव उठिए, पुत्र अकेला बहुत दूर न चला जाय। उसके पहले ही हम भी उसके पीछे-पीछे चल देनेका उपाय करें। स्नेह प्रदर्शित करनेका यही अवसर है। महामन्त्री शुकनास! अभी आप शोकाकुल होकर खड़े हैं? तुरन्त परिचारकोंको आज्ञा दीजिये कि महाकाल मन्दिरके पास चिता रचायें। लकड़हारो! शीघ्र लकड़ियाँ जुटाओ। कंचुकियो! तुम लोग ऐसे सिमटे क्यों खड़े हो? अति शीघ्र जाकर अग्निप्रवेशके लिए उपयोगी वस्तुयें एकत्र करो। अब व्यर्थ रोनेसे क्या लाभ? देवि! अब देर करनेसे बड़ी हानि होगी। अतएव राज्यका सारा धन ब्राह्मणों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृतेऽद्यापि पाल्यते। पालनादिकं करणीयमधुना क्षीणं क्षीणपुण्यस्य मे यातं यथा भूमिं भूमिपतयः। उत्सृष्टाः स्थ, यथा च नाद्यैवास्य दुःखं जानन्ति प्रजास्तथा करिष्यथ। कथात्रशेषीभूतो मे वत्सः कथमपरं संनिधाय यामि' एवमार्तप्रलापिनं तारापीडमचेतितात्मपीडया विलासवत्यैव धृतशरीरमार्ततरस्त्वरितको व्यज्ञापयत्--'देव, स्फुटितेऽपि हृदये ध्रियते शरीरेण युवराजः। शापदोषाद्वैशम्पायनस्य च यथा जन्म तथा निरवशेषं शृणोतु तावद्देवः' इति।

तारापीडस्तु तदद्भुतमाकर्ण्य कौतुकान्तरितशोकावेगो विगतनिमेषेण चक्षुषाविष्ट इव दत्तावधानस्तेन कथ्यमानं यथादृष्टं यथाश्रुतं यथानुभूतं च निरवशेषं तत्सर्वमश्रौषीत्। श्रुत्वा च तमनेकचिह्नोत्पादितप्रत्ययमश्रद्धेयं च निरतिशयशोककारणं च विस्मयास्पदभूतं च दुःश्रवं च कौतुककरं च युवराजवैशम्पायनयोर्वृत्तान्तमापदिव विवर्तिताननो विमर्शास्त-

---

को दिला दें। अब किसके लिए उसकी रक्षा की जाय? अब हमारे पुण्य नष्ट हो चुके। अतएव रक्षा आदि कार्य करनेका मेरा काम भी समाप्त हो गया। राजाओं! अब आपलोग जहाँ चाहें, वहाँ जा सकते हैं। अब आप सर्वथा स्वतंत्र हैं। हां, ऐसा अवश्य करिएगा कि प्रजा आज ही इस दुःखका अनुभव न करने पाये। मेरे पुत्र चन्द्रापीडकी तो कहानीमात्र शेष रह गयी। तब किसको राज्य देकर मैं परलोक जाऊँ?' इस प्रकार करुण क्रन्दन करते हुए महाराज तारापीड अपने कष्टकी कुछ भी चिन्ता न करके महारानी विलासवती-को ही सम्हाल रहे थे। उन्हें इस दशामें देखकर अत्यधिक दुखी त्वरितकने कहा—'महाराज! हृदय फट जानेपर भी युवराज चन्द्रापीडका शरीर ज्योंका त्यों है। शापदोषसे उनका तथा वैशम्पायनका जिस प्रकार जन्म हुआ था, अब वह सारा वृत्तान्त तो सुनिए।'

महाराज तारापीड यह अद्भुत बात सुनकर कौतूहलवश अपना शोक भूल गये। अब आविष्ट प्राणीके समान निर्निमेष नयनोंसे निहारते हुए उन्होंने बड़े ध्यानसे त्वरितक द्वारा देखी, सुनी तथा अनुभवकी हुई बातोंको सुना। अनेक चिह्नोंसे विश्वसनीय होते हुए भी अश्रद्धेय, अतिशय शोकदायक, विस्मयकारी, दुःखसे सुनने योग्य एवं कौतुकजनक युवराज चन्द्रापीड तथा वैशम्पायनका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मिततारकां दृष्टिं निर्विशेषावस्थे शुकनासमुखेऽभ्यपातयत्। सुहृदस्तु स्वयं दुःखिता अपि निधानीकृत्यात्मदुःखं सुहृद्दुःखापनोदायैव यतन्ते। अतः शुकनासस्तदवस्थोऽपि स्वस्थवदवनिपतिमुवाच—'देव, विचित्रेऽस्मिन्संसारे संचरत्सु, सुखदुःखमयेषु देवासुरतिर्यग्योनिमानुषेषु त्रिगुणात्मनः प्रधानस्यापि परिणामात्परमाण्वादेर्ब्रह्माण्डपर्यन्तस्योत्पत्तिस्थितिप्रलयकारणस्येश्वरस्येच्छया धर्माधर्मसाधनानामिष्टानिष्टफलसम्बन्धकारिणां कर्मणां वा शुभाशुभानां विपाकभावाद्वा स्वयमेवानेकप्रकारमुत्पद्यमानस्य तिष्ठतो विनश्यतो वानियतवृत्तेः स्थावरजङ्गमस्य न काचिदवस्था सा या न संभवति। तत्कुतोऽयं देवास्यात्र वस्तुनि विमर्शः। यदि युक्तेर्विचारात्कियन्त्यत्र युक्तिरहितान्यागमप्रामाण्यादेवाभ्युपगतान्यपि संवादीनि दृश्यन्ते। मुद्राबन्धाद्ध्यानाद्वा विषप्रसुप्तस्योत्थापने कीदृशी युक्तिः। अयस्कान्तस्य चायसः समाकर्षणे भ्रमणे

वृत्तान्त सुननेके बाद राजाने तनिक मुँह घुमाकर विचारनिमग्न पुतलियोंवाली दृष्टि अपने ही समान दुखी मंत्री शुकनासके मुखपर डाली। मित्रलोग स्वयं दुःखमें रहते हुए भी अपना दुख छुपाकर मित्रका कष्ट मिटानेकी चेष्टा करते हैं। अतएव ऐसी दशामें भी स्वस्थ जैसे बनकर शुकनासने कहा—'महाराज! इस विचित्र तथा सुख-दुःख भरे संसारमें अगणित देवता, मनुष्य तथा पशु-पक्षी भ्रमण करते रहते हैं। इसमें त्रिगुणात्मिका मूल प्रकृतिकी प्रधानता होनेपर भी उन्हींके रूपान्तरित होनेपर परमाणुसे लेकर समस्त ब्रह्माण्ड पर्यन्तकी उत्पत्ति, स्थिति तथा नाश करनेवाले ईश्वरकी इच्छासे, अथवा धर्म-अधर्मके साधनस्वरूप इष्ट, अनिष्ट तथा शुभाशुभ कर्मोंके फलदाता अथवा स्वतः विविध रूपोंमें उत्पन्न होने, जीवित रहने तथा नष्ट होनेकी निश्चित व्यवस्थासे व्यवस्थित स्थावर-जङ्गम प्राणियोंकी ऐसी कोई अवस्था नहीं है, जो हो न सके। तब आप इस विषयमें विशेष विचार-विमर्श क्यों करते हैं? यदि आप युक्तिकी खोज करते हों तो संसारमें बहुतेरी युक्तिहीन बातें हैं? किन्तु वे बिल्कुल ठीक हैं और शास्त्रोंके प्रमाणोंसे ही उन्हें समझा जा सकता है। मंत्रों द्वारा झाड़-फूँक अथवा ध्यान द्वारा सर्प आदिके विषसे मूर्छित मनुष्यका विष उतारनेमें कौनसी युक्ति काम करती है? इसी प्रकार चुम्बकसे लोहेके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वा, मन्त्राणां वैदिकानामवैदिकानां वानेकप्रकारेषु कर्मसु सिद्धौ नानाविधद्रव्यसंयोगानां मरणामरणमान्द्याद्युत्पादनापहरणवशीकरणविद्वेषणादिषु, शक्तेः समुत्पादनान्येषां बहुतराणामेवंविधानां च तत्र तत्र सर्वस्मिन्नेवागमः प्रमाणम्। आगमेषु सर्वेष्वेव पुराणरामायणभारतादिषु सम्यगनेकप्रकाराः शापवार्ताः। तद्यथा। महेन्द्रपदवर्तिनो नहुषस्य राजर्षेरगस्त्यशापादजगरता। सौदासस्य च वसिष्ठसुतशापान्मानुषादत्वम्। असुरगुरुशापाच्च ययातेस्तारुण्य एव जरसा भङ्गः। त्रिशङ्कोश्च पितृशापाच्चाण्डालभावः। श्रूयते च स्वर्गवासी महाभिषो नाम राजास्मिल्लोके शन्तनुरुत्पन्नः। तत्पत्नीत्वमुपगतायाः गङ्गायाः शापदोषादृष्टानामपि वसूनां मनुष्येषूत्पत्तिः। तिष्ठतु तावदन्य एव। अयमादिदेवो भगवानजः स एव जमदग्नेरात्मजतामुपगतः। श्रूयते च पुनश्चतुर्धात्मानं विभज्य राजर्षेर्दशरथस्य तथैव मथुरायां वसुदेवस्य। तन्मनुष्येषु देव-

---

आकर्षण तथा भ्रमणमें कौन युक्ति रहती है? वैदिक तथा तांत्रिक मंत्रों द्वारा विविध कार्योंकी सिद्धिमें क्या युक्ति है? विविध द्रव्योंके संयोगसे मरण, जीवन, अकुशलता आदिके उत्पादन, अपहरण, वशीकरण तथा उच्चाटनकी शक्ति उत्पन्न हो जाती है। ऐसी-ऐसी और भी बहुतेरी बातें हैं कि शास्त्र ही जिनका विवेचन कर सकते हैं। वेदों, पुराणों तथा रामायण-महाभारत आदि ग्रन्थोंमें शापके अनेक आख्यान भरे पड़े हैं। जैसे इन्द्रके पदपर विराजमान राजर्षि नहुष अगस्त्य मुनिके शापसे अजगर हो गया था। वसिष्ठपुत्रोंके शापसे राजा सौदास मानवमांसाहारी राक्षस बन गया था। राजा ययाति असुरगुरु शुक्राचार्यके शापसे भरी जवानीमें वृद्ध हो गया था। पिताके शापसे राजा त्रिशंकु चंडाल हो गया था। ऐसा सुना जाता है कि स्वर्गनिवासी महाभिष नामका राजा इस लोकमें शन्तनुके रूपमें उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नी बनी हुई गंगासे उत्पन्न वसु शापदोषसे मनुष्यके रूपमें उत्पन्न हुए थे। औरोंको छोड़िए। ये आदिदेव भगवान् अज (विष्णु) महर्षि जमदग्निके पुत्र होकर अवतरे थे। सुना जाता है कि वे ही अपनेको चार भागोंमें विभक्त करके महाराज दशरथके घर जनमे थे। इसी प्रकार उन्होंने मथुरामें वसुदेवके यहाँ भी कृष्णरूपसे जन्म लिया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तानामुत्पत्तिर्नैवासंभाविनी । न च पूर्वमनुष्येभ्यो गुणैः परिहीयते देवः । न चापि भगवतः कमलनाभादतिरिच्यते चन्द्रमाः । किमत्रासंभावनीयम् । अपि च गर्भारंभसंभवे देवेन देव्या वदने विशंश्चन्द्रमा एव दृष्टः । तथा ममापि स्वप्ने पुण्डरीकस्य दर्शनं समुपजातम् । तदुत्पत्तिं प्रति तयोर्नास्त्येव संदेहः । विनष्टयोः शरीरस्याविनाशः कथं कथं वा पुनर्जीवितप्रतिलम्भ इत्यत्राखिललोकप्रख्यातप्रभावममृतमेवैकं कारणमावेदितम् । तच्चन्द्रमसि विद्यत इत्येषास्त्येव वार्ता । तत्सर्वमेतदित्थमेवावगच्छतु देवः । अन्यच्च तादृशाकारकान्तेरखिललोकाह्लादकारिणोऽन्यत्र संभव एव नास्ति । तत्कल्याणैर्न चिराच्छापावसाने निवर्तितगन्धर्वसुतोद्वाहमङ्गलस्य गलन्नयनपयसो वध्वा सह पादयोः पततः पुत्रत्वमुपगतस्य चन्द्रापीडनाम्नान्तरितस्य लोकपालस्येव चन्द्रमसो दर्शनेनाजन्मकृतमेव संतापं परित्यक्ष्यति देवः । तयोरेवं शापोऽस्माकं पुनर्वर एव ।

था । अतएव मनुष्यके घरमें देवताओंका उत्पत्ति असंभव नहीं है । पूर्वोक्त मनुष्योंकी अपेक्षा गुणमें आप किसीसे कम नहीं हैं । चन्द्रमा भी भगवान् विष्णुसे श्रेष्ठ नहीं हैं । तब इसमें असंभव ही क्या है ? और फिर गर्भ धारणके अवसरपर आपने देवीके मुखमें चद्रमाको ही प्रविष्ट होते देखा था । मैंने भी इसी तरह स्वप्नमें पुंडरीकको देखा था । अतएव उन दोनोंकी उत्पत्तिके विषयमें कुछ भी संशय नहीं है । प्राण निकल जानेपर भी शरीर कैसे अविनाशी बना हुआ है और उनका जन्म फिर कैसे होगा ? इस प्रसंगमें समस्त जगत्में जिसका प्रभाव विख्यात है, उस अमृतको ही कारण समझना चाहिए। यह बात सब जानते हैं कि चन्द्रमामें अमृत रहता है । अतएव आपने जो कुछ सुना है, उसे सच मानिए । इसीसे तो युवराजका जैसा सबको आनन्ददायक रूप था और जैसी कान्ति थी, वैसी अन्यत्र कहीं देखनेमें नहीं आती । इससे शापका अन्त हो जानेके थोड़े ही समय बाद गन्धर्वराजकी पुत्री कादम्बरीके साथ विवाह करके बहूको साथ लिये आँखोंसे आनन्दके आँसू बरसाते एवं पैरों पड़ते हुए चन्द्रापीड़नामधारी लोकपाल साक्षात् चन्द्रदेवको देखकर आप जन्म भरका सन्ताप दूर कर देंगे । उनका यह शाप तो हमारे लिए वरदान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तदस्मिन्वस्तुनि मनागपि न देवेन देव्या वा शोकः कार्यः । मङ्गलान्यभिधार्यन्ताम । अभिमतदेवताराधनेन धनातिसर्जनेन चान्यजन्मार्जितं कुशलमभिधार्यन्ताम् । अकुशलमपि यमनियमकष्टव्रतोपवासादिना तपःक्लेशेन क्षयमुपनीयताम् । अपरमपि यद्यदेवंगतं श्रेयस्करं श्रूयते ज्ञायते वा तत्तदद्यैवारभ्य क्रियतां च कर्म । न खलु वैदिकानामवैदिकानां वा कर्मणामसाध्यं नाम किंचिदपि । उत्पत्तिरपि च तयोः कृच्छ्रलब्धयोरीदृशेनैव प्रकारेणोपजाता ।' इत्युक्तवति शुकनासे सशोक एव राजा प्रत्यवादीत्—'सर्वमेतद्यदार्येणाभिहितं कोऽन्योऽवबुध्यते । केन वापरेण वयं परिबोधनीयाः । कस्य वापरस्यास्माभिर्वचनं करणीयम् । किंतु तद्वत्सस्य मे वैशम्पायनदुःखात्स्फुटनं हृदयस्याग्रता दृष्टिलग्नं सर्वमेवान्यदन्तरयति । तदेव पश्यामि । तदेव शृणोमि । तदेवात्प्रेक्षे । तदेवमप्रत्यक्षिते वत्सस्य वदने संस्तम्भमेवात्मना न शक्नोमि कर्तुम् । यत्र

ही सिद्ध होगा । सो इस विषयमें आप तथा महारानी तनिक भी शोक न करें । प्रत्युत अब आप लोग मांगलिक कृत्य आरम्भ कर दें । अपने आराध्य देवोंकी आराधना तथा प्रचुर धनके दान द्वारा आप अन्यजन्मोपार्जित पुण्यको और भी अधिक बढ़ायें । अनजानमें जो पाप हो गये हों, उन्हें यम, नियम, कष्टसे करने योग्य व्रत, उपवास एवं तपका क्लेश सहकर नष्ट कर दें। इनके अतिरिक्त ऐसी परिस्थितिमें जो कार्य कल्याणजनक सुने या जाने जायँ, उन्हें आजसे ही स्वयं प्रारम्भ करें या अन्य लोगोंके द्वारा करायें। क्योंकि वैदिक कृत्यों अथवा उपासनाओंके करनेसे कोई भी कार्य असाध्य नहीं रह जाता। और फिर उन दोनोंका कृच्छ्रसाध्य उपासनाओंके द्वारा जन्म भी ऐसे ही कष्टकर अवसरपर हुआ था।' महामात्य शुकनासके ऐसा कहनेपर शोकाकुल राजाने कहा—'आपने जो बातें कही हैं, उन्हें आपके सिवाय और कौन जान सकता है और जानकर भी इस तरह कौन समझा सकता है ? और फिर हमलोग किसकी बात मानेंगे ? किन्तु वैशम्पायनके दुःखसे वत्स चन्द्रापीडके हृदय फटनेकी बात बराबर आँखोंके आगे नाचा करती है । इसके समक्ष अन्य सभी बातें मुझे तुच्छ दीखती हैं । मैं बराबर उसी हृदय फटनेवाली घटनाको ही देखता हूँ, वही सुनता हूँ, उसीकी कल्पना करता हूँ । अतएव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च ममायमीदृशः प्रकारस्तत्र देव्याः परिबोधनं दूरापेतमेव। तद्गमनादृतेऽन्य उपाय एव नास्ति जीवितसंधारणायेत्येवमवधारयत्वार्यः।' इत्युक्तवति तारापीडे चिरात्तनयपीडया तत्पुरः परित्याजितलज्जं विलासवती कृताञ्जलिरुच्चैर्जगाद—'आर्यपुत्र, यद्येवं तथापि किमपरं विलम्बितेन। निर्गता एव वयम्। दीयतां प्रयाणम्। उत्ताम्यति मे हृदयं वत्सस्य दर्शनाय। दुःखापनोदार्थं स्फुटनमङ्गीकृतमासीत्। तदपि संप्रति दर्शनकाङ्क्षया न रोचत एव। जानामि वरं दीर्घकालमपि दुःखान्यनुभवन्ती सकृदपि वत्सस्य दर्शनाय जीवितास्मि। न पुनरसह्यदुःखोपशान्तये संप्रत्येव मृतास्मीति। तदस्य पुनराशानिबन्धनस्य सर्वात्ययनिवारणोपायस्य वत्साननावलोकनोत्सुकस्य गमनमपि हृदयस्य तावद्विनोदतां व्रजतु।' इति वदन्तीमेव विलासवतीमासाद्यान्यतमः शुकनासस्यात्म-

---

जबतक मैं वत्स चन्द्रापीडका मुख अपनी आँखों न देख लूँगा, तबतक मेरा हृदय काबूमें नहीं आयेगा। जब मेरी यह दशा है, तब देवीको समझाना तो बड़ी दूरकी बात है। सो यदि हमें जीवित रहना हो तो चन्द्रापीडके पास चलनेके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। यह आप निश्चित समझिए।' राजा तारापीडके यह कहनेपर उनके समक्ष लाज त्याग और हाथ जोड़कर बड़ी जोरसे चिल्लाती हुई महारानी विलासती बोली—'राजपुत्र! यदि ऐसा है, तब विलम्ब क्यों कर रहे हैं? हमलोग महलसे बाहर तो निकल ही आये हैं। बस, अब यात्राकी आज्ञा दे दीजिए। पुत्रको देखनेके लिए मेरा हृदय बेचैन है। दुःख दूर करनेके लिए मैं तो चाहती थी कि मेरा भी हृदय फट जाता। किन्तु बच्चेको देखनेकी अभिलाषासे अब वह भी नहीं भाता। अब तो यह धारणा दृढ़ हो गयी है कि चिरकालतक दुःख झेल करके भी केवल एक बार पुत्रका मुख देखनेके लिए जीना कहीं अच्छा है, किन्तु असह्य वेदनाको शान्त करनेके लिए अभी ही मर जाना उचित नहीं है। अतएव पुनः चन्द्रापीडको देखनेकी आशाका मुझे जो एक सहारा मिला है, उसीके आधारपर सर्वनाशके निवारक पुत्रमुखका दर्शन करनेके लिए उतावले हृदयको इस यात्रासे कुछ विनोद प्राप्त करने दीजिए।' जब कि महारानी विलासवती ऐसा कह रही थीं, उसी समय शुकनासका एक आत्मीय मित्र एवं कर्मनिष्ठ वृद्ध ब्राह्मण आकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समः परिणतवयाः षट्कर्मा समुपसृत्य स्वस्तिपूर्वकं व्यज्ञापयत्—'देवि, सवत एवापरिस्फुटेन वार्ताकलकलेनाकुलीकृतहृदया मनोरमा स्वयमेव धावन्त्यागता। राज्ञो लज्जमाना नोपगता स्थानमिदम्। तदेषा मातृगृहस्य पृष्ठतस्तिष्ठति। पृच्छति च देवीम्। किमेभिः कथितम्। जीवति मे वत्सो वैशम्पायनः। स्वस्थशरीरो वा। ढौकितो वा पुनर्युवराजस्य। क्व वर्तते। तावागमिष्यतो वा कियद्भिर्दिवसैः' इति। राजा तु तदुपरतिवार्ताया अपि कष्टतममाकर्ण्य दीर्ण इव शुचा शतगुणीभूतशोकोत्प्लुताङ्गीं विलासवतीमवादीत्—'देवि, न श्रुतं किंचिदपि वत्सयोः प्रियसख्या ते। अन्यतश्च श्रुत्वा कदाचिज्जीवितेनैव वियुज्यते। तदुत्तिष्ठ स्वयमेव धैर्यमालब्य सर्ववृत्तान्तानुकथनेन संस्थापय प्रियसखीं तथा यथार्यशुकनासेन सह यातव्यम्' इत्येवमुत्थाप्य सपरिजनां विलासवतीं व्यसर्जयत्। आत्मनापि शुकनासेन सह गमनसंविधानमकारयत्।

आशीर्वाद देता हुआ कहने लगा—'देवि! सब ओरसे इस अस्पष्ट बातका कोलाहाल सुनकर विकल देवी मनोरमा स्वयं भागती हुई यहाँ आ पहुँची हैं। किन्तु महाराजकी लज्जावश वे सम्मुख नहीं आ सकीं। अतएव वे अवन्ती माताके मन्दिरके पिछवाड़े खड़ी हैं और पूछती हैं कि 'ये लोग क्या कह रहे हैं? क्या मेरा पुत्र वैशम्पायन जीवित है? वह स्वस्थ तथा प्रसन्न है? युवराजसे उसकी भेंट हुई थी? इस समय वह कहाँ है? वे दोनों कितने दिनमें लौटेंगे?' चन्द्रापीडकी मृत्युके समाचारसे भी ज्यादा दुखदायी देवी मनोरमाके प्रश्नोंको सुनकर राजा तारापीडका हृदय जैसे विदीर्ण हो गया। इसी प्रकार शतगुण बड़े शोकसे रुदन करनेवाली विलासवतीसे उन्होंने कहा—'देवी! तुम्हारी प्रियसखीने दोनों पुत्रोंके विषयमें कुछ भी नहीं सुना है। यदि वह सुनेगी तो शायद प्राण ही दे देगी। अतएव महारानी! तुम स्वयं उठकर जाओ और धैर्य धारणपूर्वक सब हाल बताकर अपनी सखीको आश्वस्त करके कहो कि वे भी आर्य शुकनासके साथ चलें।' ऐसा कहकर महाराजने परिजनोंके साथ रानी विलासवतीको मनोरमाके पास भेज दिया और स्वयं मंत्री शुकनासके साथ जाकर यात्राकी तैयारीके काममें लग गये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ तथा प्रस्थिते राजनि राजानुरागाच्चन्द्रापीडस्नेहेन चाश्चर्यदर्शनकुतूहलाय प्रथमगतपितृपुत्रभ्रातृमित्रस्वजनदर्शनाय च गृहरक्षकवर्जमुज्जयिन्याः सकल एव लोको गन्तुमुदचलत्। राजा तु शीघ्रगमनविघातहेतून्समस्तानेव निवर्त्य प्रलघुपरिकरः पिबन्निव पन्थानमेकदिवसेनैव परापतितुमीहमानः स्तोकत एवाध्वनः प्रभृत्युत्तास्यता हृदयेन कियत्यध्वन्यद्यापि वर्तामहे कतिपयैर्दिवसैः परापताम इति मुहुर्मुहुस्तुरंगमारोपितं त्वरितकमाहूय पृच्छन्नविच्छिन्नकैः प्रयाणकैर्वहन्बहुभिरेव दिवसैरासप्तादाच्छोदम्। आसाद्य च विकल्पशतदोलाधिरोहणदुःस्थितेनान्तरात्मना दूरस्थित एव प्रथममाहतमानश्ववारान्वार्तान्वेषणाय त्वरितकेन सार्धं प्रहितवान्।

अथ तैः सार्धमागच्छन्तमुज्झितात्मसंस्कारमलिनकृशशरीरमवनितलनिवेशितोत्तमाङ्गमुद्बाष्पदीनतरदृष्टिं जीवितलज्जया रसातलमिव प्रवे-

---

तदनन्तर जब राजाने प्रस्थान कर दिया, तब राजापर अनुराग, चंद्रापीडके स्नेह, आश्चर्यजनक दृश्य दर्शनके कौतूहल और पहले ही गये हुए पिता, पुत्र, भाई, मित्र तथा स्वजनोंसे मिलनेके लिए गृहरक्षकोंको छोड़कर बाकी सभी उज्जयिनीनिवासी उनके साथ चलनेको उद्यत हो गये। किन्तु उन सबको साथ ले चलनेसे शीघ्र पहुँचनेमें बाधाकी संभावना देखकर राजाने बाकी सब लोगोंको लौटा दिया और इने-गिने परिजनोंको साथ लेकर जैसे मार्गको पिये जा रहा हो, इस प्रकार एक ही दिनमें ही ठिकानेपर पहुँच जानेकी इच्छा करता तथा थोड़ी-थोड़ी दूर चलकर अपने पीछे घोड़ेपर सवार त्वरितकसे 'कितना रास्ता तै कर आये और अभी कितनी दूर चलना है।' इस तरह बड़े उत्कण्ठित हृदयसे बार-बार पूछता हुआ रात-दिन बराबर चलते रहनेके कारण बहुत थोड़े ही दिनोंमें राजा तारापीड अच्छोद सरोवरपर जा पहुँचा। पहुँच जानेके पश्चात् सैकड़ों तर्कनाओंसे संशयके झूलेपर हृदय स्थित होनेके कारण वह राजा उस आश्रमसे कुछ दूर इधर ही रुक गया और त्वरितकके साथ अपने कुछ विश्वसनीय घोड़सवारोंको हाल-चाल जाननेके लिए भेजा।

कुछ ही देर बाद स्नानादि न कर पानेके कारण मलिन एवं कृशशरीर राजकुमारोंके साथ उन्होंने मेघनाद तथा भेजे हुए घोड़सवा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च्छ्रसीहमानमहमहमिकया परस्परावरणेनैवात्मदर्शनमभिरक्षन्तमक्षतमपि हतमिव सपरिच्छदमपि मुषितमिव जीवन्तमपि मृतमिव ससंभ्रमकृतागमनमपि प्रतीपमाकृष्यमाणचरणमिवाङ्गैरेव सह गलितोत्साहं चापेनैव सह मुक्त्वात्मानं वैक्लव्येनैव सहोपसर्पन्तं मेघनादपुरःसरं सकलमेव चन्द्रापीडचरणतलनिबद्धजीवितं राजपुत्रलोकमालोक्योल्लसितनयनः शोकोर्मिवेगाक्रान्तोऽप्युच्छ्वसित इव दृढीभूतचन्द्रापीडदेहाविनाशप्रत्ययान्तरात्मना निवृत्य सावरणपर्याणवर्तिनीं विलासवतीमवादीत्—'देवि, दिष्ट्या वर्धसे। ध्रियते सत्यमेव शरीरेण वत्सः। येन सकल एवायं तच्चरणकमलानुजीवी राजपुत्रलोकस्तत्पादमूलादागतः' इति। सा तु तदाकर्ण्य किंचिदात्मपाणिनैवोत्सारितावरणसिचयाञ्चला निश्चलया दृष्ट्याचिरमिवालोक्य तनयनिर्विशेषं राजपुत्रलोकमविच्छि-

---

रोंको आते देखा। वे सब राजकुमार धरतीकी ओर माथा झुकाये हुए थे। आँसुओंके कारण उनकी आँखें दीन थीं। अब तक जीवित रहनेकी लज्जासे वे जैसे रसातलमें प्रविष्ट हो जाना चाहते थे। वे परस्पर एक दूसरेके पीछे छिपकर अपनेको महाराजके समक्ष पड़नेसे बचानेकी चेष्टा कर रहे थे। अक्षत शरीर होते हुए भी वे जैसे मर चुके थे। समस्त सामग्रियाँ पास रहते हुए भी वे जैसे लुट गये थे। वे जीवित रहते हुए भी मुर्दों जैसे दीख रहे थे। यद्यपि उतावलेपनके साथ वे पाँव आगे बढ़ाते थे, किन्तु जैसे पीछेकी ही ओर खिंचे जाते थे। जैसे अपने सब अंगोंके साथ-साथ वे उत्साह भी खो बैठे थे। आँसुओंके साथ जैसे उनकी आत्मा भी मुक्त हो गयी थी। वे बहुत व्याकुल होकर आगे बढ़ रहे थे। क्योंकि चन्द्रापीडके चरणोंमें ही उनका जीवन बसा था। उन्हें देखकर राजा तारापीड़के नेत्र उल्लसित हो उठे और शोककी तरंगोंके आवेगसे उनका दुःख बहुत बढ़ गया। फिर भी अपना हृदय दृढ़ करके चन्द्रापीडकी देहके अविनश्वर होनेका पक्का विश्वास हो जानेपर पीछे मुड़कर राजाने परदेदार घोड़ेकी जीनपर बैठी रानी विलासवतीसे कहा—'देवि! आप बड़ी भाग्यवती हैं। वास्तवमें पुत्रका शरीर यथावत् है। तभी तो युवराजके चरणकमलोंकी सेवा करके जीविकार्जन करनेवाले ये राजकुमार उसके पाससे आ रहे हैं।' यह सुना तो अपने हाथसे परदा हटाकर रानी पुत्र सदृश उन राजकुमारोंकी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्नाश्रुधारापि धैर्यमुन्मुच्योच्चैरारटितवती—'हा वत्स, कथं सहपांसुक्रीडितस्यैतावतो राजपुत्रलोकस्य मध्ये त्वमेवैको न दृश्यसे' इति। तथा रटन्तीं तु तां समाश्वास्य दूरत एव राजा समं सर्वलोकेनावनितलनिवेशितोत्तमाङ्गं मेघनादम् 'इतो ढौकस्व' इत्यादिश्योद्दिश्याप्राक्षीत्—'मेघनाद, कथय को वृत्तान्तो वत्सस्य' इति। स तु व्यज्ञापयन्—'देव, चेतनाविरहाच्चेष्टामात्रकमेवापगतं शरीरे पुनर्ज्ञायते दिवसे दिवसेऽप्यधिका कान्तिः समुपजायते' इति। राजा तु तच्छ्रुत्वा जीवितप्रतिलम्भे समुपजातप्रत्याशः 'श्रुतं देव्या मेघनादस्य वचनम्। तदेहि। चिरात्पुनः कृतार्थयामो दर्शनेनात्मानम्। पश्यामो वत्सस्य वदनम्' इत्यभिदधान एवाभिवर्धितगतिविशेषया करेण्वा महाश्वेताश्रममगमत्।

अथ सहसैव तच्चन्द्रापीडगुरुजनागमनमाकर्ण्य पुरः प्रकीर्णतारमुक्तानुकारिनयनबिन्दुसंदोहा 'हा, हतास्मि मन्दपुण्या दुःखैकभागिनी।

ओर निर्निमेष नयनोंसे कुछ देर तक देखती रही। इसके बाद अविरल अश्रुधारा बहाती तथा धैर्य त्यागकर बड़े जोरसे चिल्लाकर रोती हुई कहने लगी—'आ पुत्र! तेरे साथ धूलमें खेलनेवाले सब साथी तो मेरे समक्ष खड़े हैं, इनके बीचमें तू ही नहीं दिखायी देता।' इस प्रकार रोती हुई रानीको ढाढ़स बँधाकर राजाने दूर ही से सब लोगोंके साथ पृथिवीपर मस्तक रखकर प्रणाम करते हुए मेघनादसे कहा—'यहाँ आओ' ऐसा आदेश देकर पास आनेपर पूछा—'मेघनाद! वत्स चंद्रापीडका हाल कहो।' मेघनाद बोला—'देव! चेतना न रहनेके कारण वे कोई चेष्टा नहीं करते, किन्तु उनके शरीरकी दीप्ति तो दिन-दिन जैसे बढ़ती ही जा रही है।' यह सुनकर युवराजके पुनः जीवित हो जानेकी आशा दृढ़ हो गयी। तब रानीसे कहा—'देवि! मेघनादकी बात सुनी? तो चलो, बहुत दिनों बाद पुत्रका मुख देखकर अपनेको कृतार्थ करें।' ऐसा कहकर महाराज बड़े वेगसे हथिनीको चलाते हुए महाश्वेताके आश्रमकी ओर चले।

सहसा चंद्रापीडके गुरुजनोंके आगमनकी खबर सुनकर आँखोंसे मोतियों सदृश बड़े-बड़े अश्रुबिन्दुओंको गिराती हुई महाश्वेता—'हाय! मैं पापिन तथा एकमात्र दुःखभागिनी मारी गयी। पता नहीं कि वह केवल अपकार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न जानाम्येव विस्मृतमरणा कियद्यावदहमनेनानेकप्रकारं खलीकारदानैकपण्डितेन दग्धवेधसा परं दग्धव्या' इत्यभिदधानैव धावित्वा ह्रिया महाश्वेता गुहाभ्यन्तरमविशत्। चित्ररथतनयापि सत्वरोपसृतसखीकदम्बकावलम्बितशरीरा तूष्णीमेव मोहान्धकारे। तदवस्थयोश्च तयोः शुकनासावलम्बितशरीरो राजा विवेशाश्रमपदम्। तदनु मनोरमावलम्बिता पुरःप्रधावितोत्प्लुतायततरदृष्टिः 'क्व मे वत्सः' इति पृच्छन्ती विलासवती। प्रविश्य च सह तयैव कान्त्याऽविरहितमुपरतसर्वप्रयत्नं सुप्तमिव तं पुत्रवत्सला तनयमालोक्य यावन्न परापतत्येव तारापीडस्तावद्विलासवती विधारयन्तीं मनोरमामप्याक्षिप्य दूरत एव प्रसारितबाहुलताद्वया स्तयोन्मुक्तजर्जराभिर्नयनजलधाराभिः प्रस्रवेण च सिञ्चन्ती महीतलम् 'एह्येहि जात दुर्लभक, चिराद्दृष्टोऽसि। देहि मे प्रतिवचनम्। आलोकय सकृदपि मामनुचितं तात, तवैतदवस्थानम्। उत्थायाङ्को-

---

करनेमें निपुण और जला विधाता मरण भूली हुई मुझ॰ अबलाको कबतक तरह-तरहसे जलायेगा।' ऐसा कहती हुई वह लज्जाके मारे कंदरामें घुस गयी। राजा चित्ररथकी पुत्री कादम्बरी भी अपनी सखियोंका सहारा लेकर बड़ी तेजीसे दौड़ती हुई भागी, किन्तु कुछ ही दूर जाकर वह चुपचाप मूर्छाके अंधकारमें विलीन हो गयी। जब वे दोनों इस दशाको पहुँच गयीं, तब महाराज तारापीड मंत्री शुकनासके सहारे चलकर उस आश्रममें प्रविष्ट हुए। उनके पीछे-पीछे मनोरमाका सहारा लेकर चलती हुई रानी विलासवती आँसू भरी आँखोंको दूर तक दौड़ाती और 'मेरा वत्स चन्द्रापीड कहाँ है?' यह पूछती हुई पहुँची। मनोरमाके साथ भीतर पहुँचकर जैसे नींदमें सोये, अपनी स्वाभाविक दीप्तिसे युक्त और दैहिक चेष्टाओंसे रहित अपने पुत्रको देख पुत्रवत्सला रानी विलासवती महाराज तारापीडके पहुँचनेके पहले ही अपनेको सहारा देनेवाली मनोरमाको ढकेल तथा दूर ही से दोनों हाथ फैलाकर बड़े वेगसे गिरनेवाले आँसुओं तथा स्तनसे छलकनेवाले दूधसे पृथिवीको भिगोती हुई बोली—'आ मेरे दुर्लभ बेटे! बहुत दिनों बाद आज मैंने तुझे देखा है। मेरी बातोंका उत्तर दे। एक बार तो मेरी ओर निहार। पुत्र! तेरा इस तरह गुमसुम पड़ा रहना उचित नहीं है। उठ, आकर मेरी गोदमें बैठ जा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पगमनेन मे संपादय तनयोचितं स्नेहम्। न चानाकर्णितपूर्वं बाल्येऽपि त्वया मद्वचनमद्य किमेवं विलपन्त्या अपि न शृणोषि। जात, केन रोषितोऽसि। एषा तोषयामि वत्सं पादयोर्निपत्य। पुत्र चन्द्रापीड, प्रणम तावत्प्रत्युद्गम्य त्वत्स्नेहादेवातिदूरमागतस्यापि पितुः पादौ। क्व सा गता ते गुरुभक्तिः। क्व ते गुणाः। क्व स स्नेहः। क्व सा धर्मज्ञता। क्व सा बन्धुप्रीतिः। क्व सा परिजनवत्सलता। कथमभाग्यैर्मे सर्वमेकपद एवोत्सृज्यैवमौदासीन्यमवलम्ब्यावस्थितोऽसि। अथवा यथा ते सुखं तथा तिष्ठ। वयमुदासीनहृदयास्त्वयि' इति कृतार्तप्रलापा समुपसृत्य पुनः पुनर्गाढमालिङ्ग्याङ्गानि शिरः समाघ्राय कपोलौ चुम्बित्वा चन्द्रापीडस्य चरणावुत्तमाङ्गे कृत्वोन्मुक्तकण्ठमरोदीत्।

तथा रुदन्तीं तु तामन्तरितनिजपीडस्तारापीडश्चन्द्रापीडमपरिष्वज्यैव सर्वप्रजापीडापहरणक्षमाभ्यां भुजाभ्यामवलम्ब्याब्रवीत्—'देवि, यद्यप्यावयोः सुकृतैरपत्यतामपगतस्तथापि देवतामूर्तिरेवायमशोचनीयः।

और अपना बालोचित स्नेह दिखा। बचपनमें भी कभी तूने मेरी बात नहीं टाली थी। तब आज इस प्रकार मेरे रोने-चिल्लानेपर भी क्यों नहीं सुनता? मेरे लाल! तुझे किसने रुष्ट कर दिया है? अच्छा, मैं तेरे पैरों पड़कर मना रही हूँ। पुत्र चन्द्रपीड! तेरे स्नेहवश इतनी दूरसे आये हुए अपने पिताके चरणोंको प्रणाम कर। आज तेरी वह प्रबल गुरुभक्ति कहाँ चली गयी? तेरे गुण कहाँ गायब हो गये? तेरा स्नेह कहाँ चला गया? तेरी धर्मज्ञता कहाँ भाग गयी? तेरी वह पितृवत्सलता कहाँ गयी? तेरा बन्धुप्रेम कहाँ रहा? कहाँ गयी तेरी वह परिजनवत्सलता? क्या मेरे अभाग्यवश तू एकदम सब कुछ त्यागकर उदासीन बन बैठा है? अच्छा, जैसे तुझे सुख मिले वैसे ही रह। अब हम लोग तुझसे कुछ नहीं कहेंगे।' इस प्रकार आर्तभावसे विलाप करती हुई महारानी उसके पास पहुँच गयी। उसको बार-बार छातीसे लगाया, सिर सूँघा, गालोंको चूमा और उसके पाँवोंको माथेपर रखकर घिघियाने लगी।

महारानीको इस प्रकार रोती देखकर राजा तारापीड अपना दुःख भूल गये। उन्होंने चन्द्रापीडका आलिंगनतक नहीं किया, बल्कि समस्त प्रजाकी पीड़ा दूर करनेमें समर्थ हाथोंका सहारा देते हुए कहा—'देवि! यद्यपि हम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तन्मुच्यतामयमिदानीं मनुष्यलोकोचितः शोचितव्यवृत्तान्तः। अस्मिञ्छोके कृते न किंचिदपि भवति। केवलं गल एव स्फुटति रटतो न हृदयम्। निरर्थकं प्रलपितमेव निर्याति वदनान्न जीवितम्। निरासङ्गं नयनजलमेव पतति न शरीरम्। अपि च वत्सस्यादर्शनमात्रमेवावयोः पीडाकरम्। तच्चैवमालोक्यमाने मुखेऽस्य दूरापेतम्। अपरमस्यामवस्थायामावाभ्यामपि तावत्परमवष्टम्भं कृत्वा मनोरमा शुकनासश्च संधारणीयौ ययोर्लोकान्तरितो वैशम्पायनः। तिष्ठतां तावदेतावपि। यस्याः प्रभावात्पुनरनुभवनीयो वत्सस्य जीवितप्रतिलम्भाभ्युदयमहोत्सवः सैवेयं गन्धर्वराजतनया वधूस्तेऽस्मदागमनशोकोर्मिसंक्रान्तिमूढा सनामग्रहणमुन्मुक्ताक्रन्दाभिः प्रियसखीभिर्ग्राह्यमाणाद्यापि संज्ञां न प्रतिलभते। तदेनां तावदुत्थाप्याङ्के कृत्वा चेतनां लम्भय। ततो यथेच्छं रोदिष्यसि' इत्यभिहिता राज्ञा विलासवती 'क्व सा मे वत्सस्य जीवि-

---

दोनोंके पुण्यसे ये पुत्ररूपमें अवतरे हैं, यथापि वस्तुतः ये देवता हैं। अतएव हमें इनके विषयमें किसी प्रकारका शोक नहीं करना चाहिए। इसलिए अब आप मानवोचित शोकको त्याग दें। इस तरह शोक करनेसे कुछ लाभ न होगा। रोनेसे सिर्फ गला फटेगा, हृदय तो ज्योंका त्यों बना रहेगा। रोनेसे मुख द्वारा व्यर्थ प्रलाप ही निकलेंगे, प्राण नहीं निकलेगा। व्यर्थ नेत्रजल ही गिरेगा, शरीर नहीं गल जायगा। और फिर अबतक हमें पुत्रका अदर्शन दुःख दे रहा था, सो अब मुख देख लेनेसे वह भी दूर होगया। इस भीषण अवस्थामें तो हमें दृढ़ धैर्य धारण करके मनोरमा तथा आर्य शुकनासको ढाढ़स बँधाना चाहिए। क्योंकि उनका वैशम्पायन तो परलोक चला गया है। उन्हें भी जाने दें तो जिसके प्रतापसे पुत्र चन्द्रापीडके पुनः जीवन प्राप्तिके अभ्युदयका महोत्सव सम्पन्न करना है। वही गन्धर्वराजकी पुत्री और आपकी बहू हमलोगोंके आगमनसे शोककी लहरोंमें डूबकर अचेत पड़ी हुई है। जोर-जोर रोती हुई उसकी प्रिय सखियाँ नाम ले-लेकर पुकारतीं और उसको होशमें लानेकी चेष्टा कर रही हैं, तथापि उसे चेतना नहीं आती। सो उसे उठाकर गोदमें बैठा लो और होशमें लाओ। उसके बाद जितना जीमें आये, उतना रो लेना।' महाराजके यह कहनेपर रानी विलासवती कहने लगीं—'मेरे पुत्रको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तनिबन्धनवधूः' इत्यभिदधत्येव ससंभ्रममुपसृत्याप्रतिपन्नसंज्ञामेवाङ्केनादाय कादम्बरीं करेण मूर्च्छानिमीलनाहितद्विगुणतरनयनशोभं वदनमालोक्यानवरतनयनसलिलस्नानार्द्रमिन्दुशकलशीतलं स्वकपोलं कपोलयोर्ललाटे ललाटं लोचनयोश्च लोचने निवेशयन्ती चन्द्रापीडस्पर्शशिशिरेण च पाणिना हृदये स्पृशन्ती 'समाश्वसिहि मे मातः, त्वया विनाद्यैव प्रभृति केन संधारितं वत्सस्य मे चन्द्रापीडस्य शरीरम्। मातः, त्वममृतमयीव जातासि येन वत्सस्य पुनर्वदनमालोकितम्' इत्यवादीत्। कादम्बरी तु तेन चन्द्रापीडनामग्रहणेन तेन तन्निर्विशेषवृत्तिना विलासवतीशरीरस्पर्शेन लब्धसंज्ञापि लज्जावनम्रमुखी प्रतिपत्तिमूढा मदलेखयाऽङ्कादवतार्य परवत्येव यथाक्रममकार्यत वन्दनां गुरूणाम्। 'आयुष्मति, दीर्घकालमविधवा भव' इति कृताशीर्वादा च शनैरुत्थाप्यातिनिकटे विलासवत्याः पृष्ठतः ससपदेश्याधार्यत। अथ प्रत्यापन्नचेतनायां

पुनः जीवन देनेवाली मेरी पुत्रवधू कहाँ है ?' यों कहती हुई हड़बड़ीमें जल्दीसे मूर्छावस्थामें ही उसे उठाकर गोदमें बिठा लिया। मूर्छाके कारण उसके द्विगुणित शोभासम्पन्न और मुँदे नेत्रोंयुक्त मुख देखकर निरन्तर बहनेवाले अश्रुजल द्वारा स्नान करनेसे गीला और चन्द्रमाकी कलासदृश शीतल अपना कपोल कादम्बरीके कपोलोंपर, माथा माथेपर तथा नेत्र नेत्रोंपर रखकर चंद्रापीडके स्पर्शसे शीतल हाथ उसके हृदयपर फेरती हुई बोली—'पुत्री! धैर्य धरो। तुम्हारे सिवाय आजतक मेरे वत्स चन्द्रापीडके शरीरको और कौन सम्हाल सकता था ? तुम मेरे लिए अमृतमयी माँ होकर अवतरी हो। तुम्हारे ही प्रभावसे हमको पुनः पुत्रका मुख देखनेका सुयोग मिला है !' इस प्रकार चन्द्रापीडका नाम लेने तथा उसीके समान विलासवतीके संस्पर्शसे सचेत हो करके भी कादम्बरीने लज्जावश अपना मुख नीचा ही रक्खा। क्योंकि उस समयका क्या कर्तव्य है, यह निर्णय वह नहीं कर सकी थी। तब किसी पराधीन लड़कीके समान उसे मदलेखाने महारानीकी गोदसे उतारकर क्रमशः सभी गुरुजनोंको चरणवन्दना करायी। इसपर उन सबने आशीर्वाद दिया—'आयुष्मती! तुम्हारा सुहाग चिरकालतक अटल रहे।' इसके बाद उसे धीरेसे उतारकर मदलेखाने महारानीके अति निकट पीछेकी ओर बिठा दिया और देरतक सम्हाले रही। जब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चित्ररथतनयायां चन्द्रापीडमेवोज्जीवितं मन्यमानो राजा चिरमिवास्य गाढमङ्गमालिङ्ग्य चुम्बंश्च पश्यंश्च स्पृशंश्च स्थित्वा मदलेखामाहूयाहूयादिदेश—'दर्शनसुखमात्रकमस्माकं विधायमानम्, तच्चास्माभिरासादितम्। तद्यादृशेनैवोपचारेणैतावतो दिवसानुपचरितवती वधूर्वत्सस्य शरीरं स एवोपचारो नास्मदनुरोधाल्लज्जया वा मनागपि परिहरणीयः। वयं निष्प्रयोजना द्रष्टार एव केवलम्। किमस्माभिरिह स्थितैर्गतैर्वा। यस्याः करस्पर्शनाप्यायितमेतदविनाशि शरीरं सैव वधूः पार्श्वेऽस्य तिष्ठतु' इत्यादिश्य निर्जगाम।

निर्गत्य चोपकल्पितं निजावासमगत्वैव तपस्विवासोचितेऽन्यतमस्मिन्नासन्न एवाश्रमस्य शुचिशिलातलसनाथे तरुलतामाण्डपे समुपविश्य निर्विशेषदुःखं सकलमेव राजचक्रमाहूयाहूय सबहुमानमवादीत्—'न भवद्भिरवगन्तव्यं यथाऽद्य शोकावेगादेवैतदहमङ्गीकरोमि इति। पूर्वचिन्तित एवायमर्थो यथा वधूसमेतस्य चन्द्रापीडस्य वदनमालोक्य

कादम्बरी सचेत हो गयी, तब जैसे चन्द्रापीडको ही पुनर्जीवित मानकर महाराज तारापीड उसका गाढ आलिंगन करके बार बार चूमते, देखते और स्पर्श करते हुए बड़ी देरतक वहाँ रहे। तत्पश्चात् मदलेखाको बुलाकर कहा—'हमलोगोंको तो दर्शनका ही सुख प्राप्त करना था, वह प्राप्त हो गया। अतएव आज तक यह जिस तरह वत्स चन्द्रापीडके शरीरका उपचार करती थी, उसमें हमारे आनेसे लज्जाके कारण तनिक भी न्यूनता न आनी चाहिए। हम लोग तो केवल बेकार दर्शक हैं। हमारे रहने या जानेसे क्या होना है। जिसके हाथोंका स्पर्श पाकर वत्सका शरीर पुष्ट तथा अविनाशी बना हुआ है, वह हमारी पुत्रवधू बराबर उसके पास रहे।' ऐसा आदेश देकर महाराज बाहर चले आये।

वहाँसे चलकर वे अपने लिए तैयार किये गये खेमेमें नहीं गये, बल्कि उस आश्रमके पास ही तपस्वियोंके रहने लायक एक सुन्दर शिलातलसम्पन्न लतामण्डपमें जा पहुँचे। वहाँ अपने ही सदृश दुःखी समस्त राजाओंको बुलाकर बड़े सम्मानपूर्वक सम्बोधन करके कहा—'आप लोग यह न समझ लीजिएगा कि शोकके आवेशवश आज मैं यह आश्रमवास स्वीकार कर रहा हूँ। यह तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संक्रामितनिजभरेण मया क्वचिदाश्रमपदे गत्वा पश्चिमं वयः क्षपितव्यमिति। स चायं मे भगवता कृतान्तेन पुराकृतैः कर्मभिर्वा विरूपैरेवं समुपनमितः। किमपरं क्रियते। अनतिक्रमणीया नियतिः। अप्रापणीयं नानुभूतमात्मचेष्टाकृतं वत्सस्य सुखम्। प्रजापरिपालनफलं तु पुनर्भवद्भुजेष्वेवमक्षतेष्ववहितमस्त्येव। अन्यथापि हि चेष्टमानेष्वस्मासु सर्वमेतेष्वेवावस्थितम्। तदिच्छामि चिरकांक्षितं मनोरथं पूरयितुम्। धन्याश्च जरापीतसारतनवस्तनयेष्वात्मभरमासज्य लघुशरीराः परलोकगमनं साधयन्ति। यच्च बलाद्गले पादमाधाय यदा तदानिच्छतोऽप्याच्छिद्यत एव कृतान्तेन। तद्यदि पात्रे क्वचिदपि स्थापयित्वा निजपदं जरापरिमुक्तायुःशेषेण निष्प्रयोजनस्थितिना सर्वसुखबाह्येन मांसपिण्डेन परलोकसुखान्युपार्ज्यन्ते लाभ एवायम्। तदस्य वस्तुनः कृते भवन्तो मया प्रत्यर्थिताः' इत्युक्त्वा संनिहितान्यपि परित्यज्योचितानि

मैंने बहुत पहले ही सोच लिया था कि बहूके साथ चन्द्रापीडका मुख देख तथा राज्यका भार उसे सौंपकर किसी आश्रममें चला जाऊँगा और वहाँ ही रहते हुए वृद्धावस्थाके दिन काटूँगा। सो मेरे उस मन्तव्यको तो भगवान् विधाताने या कि अपने पुराकृत दुष्कर्मोंने विकृत कर दिया। अब क्या किया जाय। भाग्यका अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। पुत्र चन्द्रापीडका राज्यशासनजनित सुख मेरे लिए अप्राप्य था। इसी कारण उसका अनुभव नहीं कर सका। प्रजापालनका भार तो आप लोगोंकी सुरक्षित भुजाओंपर सदासे स्थित है। हम अपने पदपर थे, तब भी वह भार इन्हीं भुजाओंपर रहता था। अतएव मेरी इच्छा है कि अपनी चिरकालकी यह अभिलाषा पूर्ण कर लूँ। वे लोग धन्य हैं, जो बुढ़ापेमें शारीरिक क्षीणताके समय पुत्रपर अपना सारा भार डालकर हल्के शरीरसे परलोकगमनका मार्ग प्रशस्त करते हैं। क्योंकि इच्छा न रहते हुए भी यमराज किसी समय जबर्दस्ती गलेपर पाँवरखकर प्राणीको खींच ले जाता है। तब यदि किसी सुपात्रको अपना पद प्रदान करके बुढ़ापेके अधीन शेष आयु निष्काम भावसे सब सुख परित्यागपूर्वक इस मांसपिण्डसे पारलौकिक सुखका उपार्जन हो जाय तो यह लाभ ही है। इसी कारण मैंने आप लोगोंसे यह प्रार्थना की है।' यह कहकर राजाने सारे सुलभ एवं उचित सुखोंको त्याग-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वसुखान्यनुचितान्यङ्गीकृत्य वन्यानि। तथा हि। हर्म्यबुद्धिं वृक्षमूलेषु अन्तःपुरस्त्रीप्रीतिं लतासु, संस्तुतजनस्नेहं हरिणेषु, निवसनरुचिं चीरवल्कलेषु, कुन्तलरचनाभियोगं जटासु, आहारह्लादं कन्दमूलफलेषु, शस्त्रधारणव्यसनमक्षसूत्रेषु, प्रजापरिपालनशक्तिं समित्कुशकुसुमेषु, नर्मालापं धर्मसंकथासु, समररसमुपशमे जयेच्छां परत्र, कोशस्पृहां तपसि, आज्ञां मौने, सर्वोपभोगरागं वैराग्ये, तनयस्नेहं च तरुषु संक्रमय्य यास्तपस्विजनोचिताः क्रियास्ताः कुर्वन्गन्धर्वलोकोचितानहरहरुपचारान्कादम्बर्या कथमपि समुत्सृष्टलज्जया महाश्वेतया च क्रियमाणाननिच्छन्नविच्छेदारसायं प्रातश्चानुभूतचन्द्रापीडदर्शनसुखो दुःखान्यगणयन्नरपतिः सपरिवारः समं देव्या शुकनासेन च तत्रैवातिष्ठत्।

इत्येवं च कथयित्वा भगवाञ्जाबालिर्जराभिभवविच्छायं स्मितं कृत्वा हारीतप्रमुखान्सर्वानेव तापसाञ्छ्रावकानवादीत्—'दृष्टमायुष्म-

---

कर वनवासके अनुचित दुःखोंको अंगीकार कर लिया। जैसे—अब उन्होंने वृक्षोंकी छायाको महल समझा। रनिवासकी रानियोंपर रहनेवाला प्रेम लताओंपर स्थापित कर दिया। परिचित जनोंका स्नेह मृगोंपर तथा अच्छे अच्छे वस्त्रोंका प्रेम वल्कलवसनपर निहित कर दिया। भोजनका शौक कन्दमूल फलमें, शस्त्रधारण करनेका व्यसन मालाके मनकोंपर और केशरचनाका शौक जटामें लगा दिया। प्रजाके परिपालनकी शक्ति समिधा, कुशा तथा पुष्पचयनमें लगा दिया। हँसी-मजाककी बातोंको धर्मचर्चामें, युद्धका रस शान्तिमें, विजयकी कामना परलोकमें, खजाना जुटानेकी आकांक्षा तपमें, आज्ञाको मौनावलम्बनमें, सब प्रकारके उपभोगोंको वैराग्यमें और पुत्रस्नेहको वृक्षोंमें निहित करके तपस्वियोंके योग्य क्रियायें करते हुए धीरे-धीरे कादम्बरी तथा महाश्वेताकी लज्जा दूर हो जानेपर नित्यप्रति प्रातः गन्धर्वलोककी सुख-सुविधाओंका त्याग करते तथा रोज सायं-प्रातः चन्द्रापीडके मुख देखनेका सुख प्राप्त करके वनवासके दुःखोंको कुछ भी न गिनते हुए महाराज तारापीड महारानी विलासवती, मंत्री शुकनास तथा समस्त परिवार सहित उसी आश्रमपर रहने लगे।

इतनी कथा कहकर वृद्धावस्थाके कारण प्रकाशहीन मुसकानके साथ महर्षि जाबालि हारीत आदि श्रोताओंसे बोले-'आप लोगोंने अन्तःकरणको अपनी ओर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्भिरिदमन्तःकरणापहारिणः कथारसस्याक्षेपसामर्थ्यम् । यत्कथयितुं प्रवृत्तोऽस्मि तत्परित्यज्यैव कथारसात्कथयन्नतिदूरमतिक्रान्तोऽस्मि । तद्यः स कामोपहृचेताः स्वयंकृतादेवाविनयाद्दिव्यलोकतः परिभ्रश्यन्मर्त्यलोके वैशम्पायननामा शुकनाससूनुरभवत् । स एवैष पुनः स्वयंकृतेनाविनयेन कोपितस्य पितुराक्रोशान्महाश्वेताकृताच्च सत्याधिष्ठानादस्यां शुकजातौ पतितः' इत्येवं वदत्येवं भगवति जाबालौ बाल्येऽपि मे सुप्तप्रबुद्धस्येव पूर्वजन्मान्तरोपात्ताः समस्ता एव विद्या जिह्वाग्रेऽभवन् । सकलासु च कलासु कौशलमुपजातम् । उपदेशाय मनुजस्येव चेयं विस्पष्टवर्णाभिधाना भारती च संवृत्ता । विज्ञानं च सर्ववस्तुविषयं स्मरणं च संवृत्तम् । किं बहुना । मनुष्यशरीरादृते सर्वमन्यत्तत्क्षणमेव मे वैशम्पायनस्य स एव चन्द्रापीडस्योपरि स्नेहः, सैव कामपरवशता, स एव महाश्वेतायामनुरागः, सैव तदवाप्तिं प्रत्युत्सुकतेत्युपगतं सकलमेव । केवलमसंजातपक्षतया मे तस्मिन्समये पूर्वजन्मोपात्ता शरीरचेष्टा

आकर्षित करनेवाले इस कथारसकी सामर्थ्य देखी ! जो कहना आरम्भ किया था, उसे छोड़कर मैं कथारसके बहावमें बहता हुआ दूर निकल गया । पूर्वकालमें कामवेदनासे विकल होकर जो अपने ही द्वारा किये गये अशिष्ट आचरणसे देवलोकसे पतित होकर मर्त्यलोकमें आया और वैशम्पायन नामसे विख्यात होता हुआ महामंत्री शुकनासका पुत्र बना था । वही पुनः अपने अविनय द्वारा कुपित किये गये पिताके शाप तथा भगवती महाश्वेताकी सत्यनिष्ठासे अब तोतेकी योनिमें जनमा है !' भगवान् जाबालिके यह कहते ही मुझे बाल्यकालमें ही उसी प्रकार पूर्वजन्मकी सब विद्यायें जिह्वाग्र हो गयीं, जैसे मैं सोकर जागा होऊँ । मुझे समस्त कलाओंमें नैपुण्य प्राप्त हो गया । कथोपकथनके लिए मनुष्योंकी भाँति सुस्पष्ट अक्षरों तथा अर्थोंयुक्त वाणी मिली । सभी वस्तुओंका तात्त्विक ज्ञान प्राप्त हुआ और स्मरणशक्ति जाग्रत हो गयी । विशेष कहाँतक कहूँ । मानव तनके सिवाय मुझमें तत्काल वैशम्पायनके सब आचरण उत्पन्न हो गये । चन्द्रापीडपर उसी प्रकारका स्नेह, उसी प्रकारकी कामुकता, उसी प्रकार महाश्वेतापर अनुराग और उसी प्रकार उसे प्राप्त करनेकी उत्सुकता जायमान हो गयी । किन्तु पङ्ख नहीं उगे थे, इस लिए उस समय केवल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नासीत्। तथा चाविर्भूतसकलान्यजन्मवृत्तान्तः समुत्सुकान्तरात्मा किं मातापित्रोः, किं तातस्य तारापीडस्य, किमम्बाया विलासवत्याः, किं वयस्यस्य चन्द्रापीडस्य, उत प्रथमसुहृदः कपिञ्जलस्य, आहोस्विन्महाश्वेताया इति नाज्ञासिषमेवं कस्य कस्य कथं वा स्मृतवानस्मीति। तथा चोत्सुकान्तरात्मा महीतलनिवेशितशिराश्चिरमिव स्थित्वा भगवन्तं जाबालिं निजाविनयश्रवणलज्जया विलीयमान इव विशन्निव पातालतलं कथमपि शनैः शनैर्व्यज्ञपयम्—'भगवन्, त्वत्प्रसादाविर्भूतज्ञानोऽस्मि संवृत्तः। स्मृताः खलु मया सर्व एव पूर्वबान्धवाः। मूढतायां च यथैव तेषां स्मरणं नासीत्तथैव विरहपीडापि। अधुना पुनस्तान्स्मृत्वा स्फुटतीव मे हृदयम्। न च तान्स्मृत्वापि तथा यथा चन्द्रापीडं यस्य मदुपरतिश्रवणमात्रकात्स्फुटितं हृदयम्। तत्तस्यापि जन्माख्यानेन प्रसादं करोतु भगवान्। येनायं तिर्यग्योनिवासोऽपि मे तेन सहैकत्र

शारीरिक चेष्टायें मुझमें नहीं आ सकी थीं। इस प्रकार पूर्वजन्मका वृत्तान्त बुद्धिमें स्फुरित हो जानेपर मैं बड़ी उत्सुकताके साथ मन ही मन सोचने लगा—'मेरे माता-पिताका क्या हाल होगा, तात तारापीड, माता विलासवती, मित्र चन्द्रापीड, पुराने साथी कपिञ्जल तथा देवी महाश्वेता, ये सब किस स्थितिमें होंगे ?' इस प्रकार उस समय मुझे किस-किसका स्मरण आया, इसका कुछ पता नहीं। तदनंतर उत्सुकतापूर्वक पृथिवीपर माथा रखकर बड़ी देर बाद मर्यादाके विपरीत अपना आचरण सुननेके कारण जायमान लज्जासे जैसे गला जाता होऊँ या पातालमें प्रविष्ट हुआ जाता होऊँ, इस ढङ्गसे किसी-किसी तरह मैंने धीरे-धीरे उन भगवान् जाबालिसे प्रार्थना करते हुए कहा—'भगवन्! आपकी कृपासे मेरी अन्तरात्मामें ज्ञानका संचार हो गया है। मेरे पूर्वजन्मके सभी बन्धु-बान्धव याद हो आये हैं। अज्ञानवस्थामें न मुझे उनका स्मरण होता था और न विरहकी वेदना ही सताती थी। किन्तु अब उन सबका स्मरण आ जानेसे जैसे मेरा हृदय फटा जा रहा है। उनमें भी औरोंके लिए उतना क्लेश नहीं होता, जितना उस मित्र चन्द्रापीडके लिए पीड़ा होती है कि मेरी मृत्युकी खबर सुनते ही जिसका हृदय फट गया था। अतएव अब आप मेरे उस मित्रका जन्मवृत्तान्त भी कह सुनानेकी कृपा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वसतो न पीडाकरः संजायते' इति ।

एवं च विज्ञापितो मया सासूयमिव मामवलोक्य भगवाञ्जाबालिः सस्नेहकोपगर्भं प्रत्यवादीत्—'दुरात्मन्, ययैतावतीं दशामुपनीतोऽसि कथं तामेव तरलहृदयतामनुबध्नासि। अद्यापि पक्षावपि नोद्भिद्येते। संचरणक्षमस्तु तावद्भव। ततो मां प्रक्ष्यसि' इत्येवमुक्ते भगवता समुपजातकुतूहलो हारीतः पप्रच्छ—'तात, महानयं विस्मयो मे। कथय कथमस्य मुनिजातौ वर्तमानस्य तादृशी कामपरता जाता। यया जीवितमपि न संधारयितुं पारितम्। कथं च दिव्यलोकसंभूतस्य तथा स्वल्पमायुः संवृत्तम्'। इत्येवं च पृष्टः सूनुना भगवाञ्जाबालिरमलाभिः पापमलमिव प्रक्षालयन्दशनदीधितिसलिलधाराभिः प्रत्यवादीत्—'स्पष्टमेवात्र कारणम्। वत्स, अयं हि कामरागमोहमयादल्पसारात्स्त्रीवीर्यादेव केवलादुत्पन्नः। श्रुतौ च पठ्यत एतद्यादृशाद्वै जायते तादृगेव भवतीति।

करिए। जिससे उनके साथ रहकर मैं इस पक्षीयोनिके जन्मका दुःख न अनुभव कर सकूँ।

मेरे ऐसा कहनेपर जैसे कुछ ईर्ष्याभरी आँखोंसे देखकर भगवान् जाबालि स्नेह तथा कोपपूर्ण शब्दोंमें बोले—'अरे दुरात्मा! हृदयकी जिस चंचलतावश तू इस दशाको पहुँचा, अब भी उसीसे चिपका हुआ है? अभी तो तेरे दोनों पङ्ख भी भली भाँति नहीं निकले हैं। इस लिए पहले चलने-फिरनेकी शक्ति तो प्राप्त कर ले। इसके बाद मुझसे जो पूछना हो सो पूछना।' भगवान् जाबालिके ऐसा कहनेपर कौतूहल उत्पन्न हो जानेके कारण हारीतने पूछा—'पिताजी! आपकी बातें सुनकर मुझे यह बहुत बड़ा विस्मय हुआ कि मुनिवंशमें जन्म पा करके भी इसमें इतनी कामुकता कैसे आयी? जिससे यह जीवनको भी नहीं धारण कर सका। और फिर दिव्यलोकमें जन्म पानेपर भी इसकी इतनी अल्प आयु क्यों हुई? सो कृपा करके मुझे बता दीजिए।' पुत्र हारीतके प्रश्न सुनकर भगवान् जाबालि जैसे अपनी विमल दन्तकान्तिरूपिणी जलधारासे मेरे पापोंका मैल धोते हुए कहने लगे—'वत्स! इसका कारण स्पष्ट है। यह कामराग अर्थात् सुरतकी अभिलाषा और मूढताके कारण अल्पबलसम्पन्न स्त्रीके ही वीर्य उत्पन्न हुआ था। इस प्रसंगमें श्रुतिका कथन है कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोकेऽपि च प्रायः कारणगुणभाञ्ज्येव कार्याणि दृश्यन्ते। तथा चैतदायुर्वेदेऽपि श्रूयते। यः किलाल्पसारात्स्त्रीवीर्यादेव केवलाज्जन्तुर्भवति स खल्वभावात्सारभूतस्य स्थैर्यहेतोः पुरुषवीर्यस्य यथासारं गर्भे वा विलयमापद्यते मृतो वा जायते जातो वा न दीर्घकालं जीवतीति। तदयमुत्पन्न एवेदृशो येनास्य तादृशी कामपरता जाता। मरणं च मदनवेगसंज्वरासहिष्णोस्तथोपनतम्। अधुनापि तादृश एवाल्पायुरय। शापावसानानन्तरकालं यदस्याक्षयेणायुषा योगो भविष्यति' इति।

एतच्छ्रुत्वा पुनरवनितलनिवेशितशिराः प्रणम्य भगवन्तं व्यज्ञापयम्—'भगवन्, अहमपुण्यवानस्यां तिर्यग्योनौ वर्तमानः स्वयं सर्वस्यैवाक्षमः। वागपि मे भगवतः प्रसादात्संप्रत्येवानने संभूता भूतपूर्वं च ज्ञानमन्तरात्मनि। शरीरं पुनरायुःसंवर्धककर्मयोग्यं भगवतः प्रसादादन्यस्मिञ्जन्मनि यदि भवेत्, तत्केन प्रकारेणाक्षयं तन्मे महाकर्म-

---

'जो जिस प्रकारके वीर्यसे उत्पन्न होता है, उसकी प्रकृति वैसी ही होती है।' लोकमें भी प्रायशः लोग कार्य-कारणके गुणका ही अनुसरण करते हुए दीखते हैं। आयुर्वेदमें भी कहा गया है कि 'जो पुरुष अल्पबल स्त्रीके वीर्यसे जायमान होता है, वह सारस्वरूप एवं स्थैर्यदायी पुरुषवीर्यके अभावमें स्त्रीवीर्यके अल्पबली होनेके कारण या तो गर्भमें ही गायब हो जाता है या मरा हुआ पैदा होता है अथवा जन्म लेता भी है तो बहुत अधिक समयतक नहीं जीता।' अतएव इसका जन्म ही ऐसा हुआ था कि जिससे इसमें इतनी कामुकता आयी। इसका मरण तो कामके वेगसे उत्पन्न ज्वरको न सह सकनेके कारण हुआ था। अब भी यह पहले ही के समान अल्पायु है। किन्तु शापका अन्त हो जानेपर इसको अक्षय आयु प्राप्त होगी'।

महर्षि जाबालिके इन वचनोंको सुना तो मैंने फिर पृथिवीपर माथा रखकर उनसे विनती की—'भगवन्! इस पक्षीयोनिमें रहता हुआ मैं पुण्यहीन प्राणी स्वयं कुछ करनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ। मुझे वाणी भी अभी ही आपकी कृपासे प्राप्त हुई है और पूर्वजन्मका ज्ञान भी अभी ही हुआ है। अब आपकी कृपासे भविष्यमें जो आयुवर्धक कर्मोंको करने योग्य शरीर प्राप्त होनेवाला है, उसमें मुझे अक्षय आयु कैसे प्राप्त होगी? कृपा करके आप मुझे यह बता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साध्यमायुर्भविष्यतीत्येतदाज्ञापयतु भगवान्' इत्येवं विज्ञापितस्तु मया दिक्षु विक्षिप्य चक्षुर्भगवानज्ञापितवान् 'एतदपि यथा तथा ज्ञास्यस्येव। तावदियं कथाऽऽस्ताम्। रसाक्षेपादचेतितैवास्माभिः प्रभातप्राया रजनी। प्रभाविरहादनुन्मृष्टरजतकुम्भाभमिदमपरान्तावलम्बि वर्तते रजनीकरबिम्बम्। यथायथोद्गमविस्तारिणी जरत्तामरसपत्रारुणा पाण्डुच्छविरुल्लसति सीमन्तयन्ती तमःकेशसंघातमिव पूर्वस्याः ककुभोऽरुणाग्रकरालोकततिः। इमाः सशेषतिमिरतयाम्बराकाण्डकलुषं भास्वत्प्रभालोकमारब्धाः क्रमेण यथासूक्ष्मं तारकाः प्रवेष्टुम्। एष पम्पासरःशायिनां प्रबोधाशंसी समुच्चरति कोलाहलः श्रोत्रहारी विहंगमानाम्। एते च निशीथिनीपरिमलशीतलाश्चलितवनकुसुमपरिमलशीतलाश्च ग्राहिणो वातुं प्रवृत्ताः प्रभातपिशुना वायवः। प्रत्यासन्नाग्निविहारवेला' इत्यभिदधान एव गोष्ठीं भङ्क्त्वोदतिष्ठत्।

अथोत्थिते भगवति जाबालौ वीतरागापि निष्कौतुकापि मोक्ष-

दीजिए।' जब मैंने यह प्रार्थना की, तब सभी दिशाओंकी ओर निहारकर भगवन् जाबालिने कहा—'यह भी आगे चलकर तुझे ज्ञात हो जायगा। अब यह कथा यहीं छोड़ दो। कथाके रससे आकृष्ट हो जानेके कारण हमें मालूम ही नहीं हो सका कि रात बीत चली और अब सवेरा हो रहा है। प्रभाहीन होनेसे बिना मँजे हुए चाँदीके कलशकी भाँति चन्द्रमंडल पश्चिम दिशामें लटकता हुआ दीख रहा है। उदयानुसार धीरे-धीरे फैलनेवाली रक्तकमलके जीर्ण पत्रकी नाईं लाल तथा पीली यह प्रभातकालीन सूर्यकी किरणराशि पूर्वदिशारूपिणी सुन्दरीके अन्धकाररूपी केशपाशमें जैसे माँग काढ़ती हुई निकल रही है। गगनमंडलमें अन्धकारकी कमीसे मलिन दृष्टिगोचर होनेवाले नक्षत्र सूक्ष्मताके क्रमसे लुप्त हो रहे हैं। पम्पासरोवरपर शयन करनेवाले पक्षियोंके जागनेकी सूचना देनेवाला यह श्रुतिमधुर कोलाहल सुनायी दे रहा है। प्रभातके आगमनकी सूचक, रात्रिके सम्पर्कसे शीतल तथा वन्य पुष्पोंकी सुगन्धि लिये हुए वायु बह रही है और हवनकी वेला भी आ पहुँची है।' ऐसा कहते हुए वे सभा भङ्ग करके उठ खड़े हुए।

भगवान् जाबालिके उठ जानेपर वीतराग, कौतूहलविहीन तथा मोक्षके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मार्गावस्थानापि समस्तैव सा तपस्विपरिषत्कथारसाद्विस्मृतगुरूचितप्रतिपत्तिः शृण्वतीवोत्कण्ठिततया विस्मयोत्फुल्लमुखी युगपदागलितशोकानन्दजन्मनयनसलिला हाकष्टशब्दानुबन्धिनी स्तम्भितेव चिरमिव स्थित्वा यथास्थानं जगाम। हारीतस्तु मां संनिहितेऽपि मुनिकुमारकजने निजकरेणोत्क्षिप्यात्मपर्णशालां नीत्वा शनैः स्वशयनीयैकदेशे स्थापयित्वा प्राभातिकक्रियाकरणाय निर्ययौ। निर्गते च तस्मिंस्तेन सर्वकार्याक्षमेण तिर्यग्जातिपतनेन देहेन पीडितान्तरात्मा चिन्तां प्राविशम्। अत्र तावदनेकभवसुकृतसहस्राधिगम्यं मानुष्यमेव दुर्लभम्। तत्राप्यपरं सकलजातिविशिष्टं ब्राह्मण्यम्। ततोऽपि विशिष्टतरमासन्नामृतपदं मुनित्वम्। तस्यापि विशेषान्तरं किमपि दिव्यलोकनिवासित्वम्। तत्रैतावतः स्थानात्स्वदोषैरात्मा पातितस्तेन कथमधुना सर्व-

मार्गमें स्थित होती हुई भी वह तपस्वियोंकी टोली उस अद्भुत कथाके रससे विभोर होकर गुरुसेवा तक भूल गयी और जैसे अभी भी वह कथा ही सुन रही हो, इस प्रकार बड़ी देर तक वहाँ ही बैठी रही। उन सब लोगोंका शरीर रोमांचित था। आश्चर्यसे मुख प्रफुल्लित था। उनके नेत्रोंसे शोक तथा आनन्दके आँसू बरस रहे थे। 'हा कष्ट! हा कष्ट' का शब्द उनके मुखसे निकल रहा था। वे जैसे उसी जगह कील ठोंककर जड़ दिये गये थे। कुछ समय बाद वे उठ-उठकर अपने-अपने स्थानपर गये। तदनन्तर अन्य मुनिकुमारोंके रहनेपर भी स्वयं जाबालितनय हारीत अपने हाथसे मुझे उठाकर अपनी पर्णकुटीमें ले गया और बिछौनेके एक भागपर बिठाकर प्रभातकालीन कृत्य सम्पन्न करनेके लिए चला गया। उसके चले जानेपर सब काम करनेमें असमर्थ होनेके कारण उस पक्षीयोनिमें जन्म पानेका मुझे बड़ा दुःख हुआ और मैं मन ही मन सोचने लगा—'इस संसारमें पहले तो अनेक जन्मोंके हजारों पुण्योंसे प्राप्त होनेवाला मनुष्यतन पाना ही दुर्लभ है। उसमें भी सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मणत्व, ब्राह्मणत्वसे भी बढ़कर अमृत अर्थात् मोक्षपद तक प्राप्त करा देनेवाला मुनित्व, मुनित्वसे भी कुछ अधिक दुर्लभ दिव्यलोकमें निवास प्राप्त करना है। सो जिस प्राणीने अपने पापों द्वारा इतने ऊँचे स्थानसे अपने आपको नीचे गिरा दिया। वह समस्त क्रियाओंसे शून्य जीव अब इस पक्षीयोनिसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्रियाविहीनेनास्यास्तिर्यग्जातेः समुद्धृतः स्यात्। कथं वा पूर्वजन्माहितस्नेहैः सह समागमसुखमनुभूतम्। अननुभवतश्च तन्निष्प्रयोजनेनामुना जीवितेन किं मे परिरक्षितेन। पततु यत्र तत्र क्वापि यातनाशरीरम्। सुखं तु नानुभवितव्यममुना दुःखैकभाजनेन। तत्परित्यजाम्येनम्। पूर्यतामस्मद्व्यसनदानैकचिन्तादुःस्थितस्य विधेर्मनोरथः' इत्येवं च जीवितपरित्यागचिन्तानिमीलितं मां समुच्छ्वासयन्निव विकासहासिना मुखेन सहसा प्रविश्य हारीतोऽभ्यधात्—'भ्रातर्वैशम्पायन, दिष्ट्या वर्धसे। पितुस्ते भगवतः श्वेतकेतोः पादमूलात्कपिञ्जलस्त्वामेवान्विष्यन्नायातः' इति।

अहं तु तच्छ्रुत्वा तत्क्षणेनोत्पन्नपक्ष इवोत्पत्य तत्समीपमेव प्राप्तुमभिवाञ्छन्नुद्ग्रीवावलोकी 'क्वासौ' इति तमप्राक्षम्। स त्वकथयत्—'एष तातपादमूले वर्तते' इति। एवंवादिनं तु तमहं पुनरवदम्—'यद्येवं ततः प्रापयतु मां तत्रैव भगवान्। उत्ताम्यति मे हृदयं तद्दर्शनाय

अपना उद्धार कैसे कर पायेगा ? अथवा पूर्वजन्मके स्नेहियोंसे मिलनेका सुख कैसे अनुभव करेगा ? फिर उस सुखके अनुभव बिना व्यर्थ इस जीवनकी रक्षा करनेसे लाभ ही क्या है ? अब तो यह दुखिया शरीर जहाँ चाहे वहाँ गिर जाय। क्योंकि एकमात्र कष्ट झेलनेके लिए उत्पन्न इस शरीरसे कोई सुख तो मिलना नहीं है। अतएव अब मैं यह शरीर त्याग दूँ तो अच्छा हो। हमें नित्य नये-नये दुःख देनेकी चिन्तासे व्यग्र विधाताकी कामना पूर्ण हो जाय।' इस प्रकार जब जीवन त्यागनेकी चिन्तासे अधीर होकर मैंने अपनी आँखें मूँद लीं। उसी समय अपने हँसते मुखसे जैसे मुझे ढाढ़स बँधाता हुआ हारीत सहसा आ पहुँचा और कहने लगा—'भाई वैशम्पायन ! तुम्हारा भाग्य बड़ा अच्छा है। क्योंकि तुम्हारे पिता भगवान् श्वेतकेतुके चरणोंके समीपसे कपिंजल तुमको खोजता हुआ यहाँ आया है।'

यह वचन सुनते ही तत्काल जैसे मेरे पंख निकल आये हों, इस तरह तुरन्त उड़कर उसके पास पहुँच जानेकी अभिलाषासे ऊँची गर्दन करके देखते हुए मैंने हारीतसे पूछा—'वह कहाँ है ?' उसने बतलाया—'पिताजीके पास है।' उसके ऐसा कहनेपर मैं फिर बोला—'यदि ऐसी बात है तो मुझे भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्येवं वदन्नेवाग्रतो गमनागमनवेगादयथास्थितजटाकलापम्, अनिलपथसंचरणचलितैकाञ्चलोत्तरीयम्, तरुत्वचा दृढबद्धपरिकरम्, अर्धत्रुटितयज्ञोपवीतसनाथास्थिशेषोरस्कम्, निःशेषसुरपथावतरणश्रमोच्छ्वसितशरीर, समीरणापहृतमपि मरुत्पथोत्पतनखेदसंभृतम्, उदकप्रवेशाभिस्यन्दमानस्वेदमाननेन, मदवलोकनदुःखोद्गतं च बाष्पजललवविसरमीक्षणाभ्यां युगपदुत्सृजन्तम्, मुमुक्षुमपि मत्स्नेहेनामुक्तम्, वीतरागमपि मत्प्रियहितरतम्, निःसङ्गमपि मत्समागमोत्सुकम्, निःस्पृहमपि मदर्थसंपादनपर्याकुलम्, निर्ममस्प्युपारूढस्नेहम्, निरलंकारमप्यहमेवायमिति मां मन्यमानम्, समुज्झितक्लेशमपि मदर्थे क्लिश्यन्तम्, समलोष्टकाञ्चनतासुखितमपि मद्दुःखदुःखितम्, कृतज्ञमकृतज्ञः, स्नेह-

---

आप वहीं पहुँचा दीजिए। क्योंकि उसे देखनेके लिए मेरा मन मचेल रहा है।' मैं उससे यह कह ही रहा था कि इतनेमें गगनसे उतरनेके वेगवश जिसकी जटा छितरा गयी थी, उस अपने मित्र कपिञ्जलको अपने सम्मुख उपस्थित देखा। पवनमार्गसे चलनेके कारण उसके उत्तरीय वस्त्रका एक छोर सरक गया था। बल्कलवसनसे उसने दृढ़ परिकर बाँध रक्खा था। अस्थिमात्र अवशिष्ट उसकी दुर्बल छातीपर आधा टूटा हुआ यज्ञोपवीत विद्यमान था। देवमार्गसे यहाँतक उतरनेके परिश्रमसे वह हाँफने लग गया था। वायुके झोंकेसे आहत होनेपर भी पवनपथका अतिक्रमण करनेसे उत्पन्न थकावट उसमें स्पष्ट दीख रही थी। पसीनेसे तर उसके मुखको देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो अभी-अभी जलमें गोता लगाकर निकला हो। मुझे देखकर दुःखित होनेके कारण उसके नयनोंमें उमड़े हुए आँसू टपक रहे थे। मुमुक्षु होता हुआ भी वह मेरा स्नेह नहीं त्याग सका था। वीतराग होता हुआ भी वह मेरा प्रिय तथा हित करनेको सन्नद्ध था। सांसारिक झमेलेसे दूर होता हुआ भी वह मुझसे मिलनेके लिए उत्सुक था। कोई चाहना न रखता हुआ भी वह मेरा काम बनानेके लिए बेचैन था। ममताशून्य होता हुआ भी वह स्नेहसम्पन्न था। अहंकारहीन होता हुआ भी वह अपनेमें और मुझमें कोई अन्तर नहीं मानता था। यद्यपि वह सब क्लेशोंसे परे था, फिर भी मेरे लिए क्लेश सह रहा था। मिट्टीके ढेले और सुवर्णको समान समझकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लप्रकृतिं रूक्षचेताः, सुकृतिनमपुण्यवान्, अनुगतं वामस्वभावः, भावार्द्रहृदयमेकान्तनिष्ठुरः, मित्रं वैरी, वचनकरमनाश्रवः, महात्मानं दुरात्मा कपिञ्जलमहमद्राक्षम्। दृष्ट्वा च निर्भरगलितनयनपयास्तादृशोऽपि कृताभ्युद्गमनप्रयत्नः फूत्कृत्य तमवदम्—'सखे कपिञ्जल, एवं जन्मद्वयान्तरितदर्शनमपि त्वां दृष्ट्वा किं सरभसमुत्थाय दूरत एव प्रसारितभुजद्वयो गाढालिङ्गनेन सुखमनुभविष्यामि। किंकरं करेणावलम्ब्यासनपरिग्रहं कारयिष्यामि। किं सुखासीनस्य गात्रसंवाहनं कुर्वञ्छ्रममपनेष्यामि' इत्येवमात्मानमनुशोचन्तमेव मां कपिञ्जलः करेणोत्क्षिप्य मद्विरहदुर्बले वक्षसि निवेश्य चिरमिवान्तःप्रवेशयन्निवालिङ्गनसुखं किल तथा मेऽनुभूय भूयसा मन्युवेगेनोत्तमाङ्गं कृत्वा मच्चरणान्तिरवदरोदीत्।

सदा सुखमें विद्यमान रहता हुआ भी वह मेरे दुखसे दुखी था। इस प्रकारके उस कृतज्ञ कपिंजलको मुझ अकृतज्ञने उस प्रेमभरी प्रकृतिवालेको मुझ स्वभावतः रूखे हृदयवालेने, उस पुण्यात्माको मुझ अपुण्यवान्ने, सर्वथा मेरी इच्छाका आदर करनेवालेको मुझ क्रूरप्रकृतिने, उस प्रेमके कारण आर्द्र हृदयवालेको मुझ अतिशय निष्ठुरने, उस मित्रको मुझ बैरीने, उस अपने वचनका पालन करनेवालेको मुझ कृतघ्नने और उस महात्माको मुझ दुरात्माने देखा। उसको देखते ही मेरी आँखोंमें आँसू आ गये और तोतेका नन्हासा बच्चा होता हुआ भी मैं उसके पास जानेका प्रयत्न करने लगा, किन्तु उसमें असफल होनेपर फफक-फफककर रोता हुआ मैं बोला—'मित्र कपिंजल! लगातार दो जन्मोंसे बिछुड़े हुए तुमको देखते ही तुरन्त उठ तथा दूरसे ही दोनों भुजायें फैलाकर क्या मैं आलिंगन करनेका आनन्द लाभ कर सकूँगा? क्या मैं अपने हाथसे तुम्हारा हाथ पकड़कर आसनपर बिठाऊँगा? सुखपूर्वक बैठ जानेपर क्या मैं तुम्हारा शरीर दाबकर थकावट दूर कर सकूँगा?' इस प्रकार जब मैं अपने बारेमें विविध कल्पनायें कर रहा था, तभी कपिंजलने मुझे हाथसे उठा लिया और मेरे बिछोहके कारण दुर्बल अपनी छातीसे लगाकर जैसे मुझे अपने हृदयमें उतार लेना चाहता हो, इस प्रकार बड़ी देर तक वह मेरे आलिंगनका आनन्द लेता रहा। फिर शोक बढ़ जानेके कारण मेरे दोनों पाँवोंको अपने माथेपर रखकर एक साधारण मनुष्यके समान बिलबिलाकर रोने लगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा रुदन्तं च तं वाङ्मात्रप्रतीकारः पुनरवदम्—'सखे कपिञ्जल, सकलक्लेशपरिभूतस्य पापात्मनो ममेदं युज्यते यत्त्वया प्रारब्धम्। त्वं पुनर्बालोऽप्यस्पृष्ट एवामीभिः संसारबन्धात्मकैर्निर्वाणमार्गपरिपन्थिभिर्दोषैः। तत्किमधुना मूढजनगतेन वर्त्मना। समुपविश्य तावत्कथय यथावृत्तं तस्य वार्ताम्। अपि कुशलं तातस्य। स्मरति वा माम्। दुःखितो वा मदीयेन दुःखेन। मद्वृत्तान्तमाकर्ण्य किमुक्तवान्। कुपितो न वा' इति। स त्वेवमुक्तो मया हारीतशिष्योपनीते पल्लवासने समुपविश्याङ्के मां कृत्वा हारीतोपनीतेनाम्भसा प्रक्षाल्य मुखमाख्यातवान्—'सखे, कुशलं तातस्य। अयं चास्मद्वृत्तान्तः प्रथमतरमेव तातेन दिव्येन चक्षुषा दृष्टः। दृष्ट्वा च प्रतिक्रियार्थं कर्म प्रारब्धम। समारब्ध एव कर्मणि तुरगभावाद्विमुक्तो गतोऽस्मि तातस्य पादमूलम्। गतं च मां दूरत एवोद्वाष्पदृष्टिर्विषण्णदीनवदनं भयादनुपसर्पन्तमालोक्याहूयाज्ञा-

---

उसे रोते देखकर वाणीमात्रसे प्रतीकार करते हुए मैंने कहा—'सखे कपिञ्जल! सब प्रकारकी विपदाओंसे ग्रस्त मुझ पापीके लिए तुम्हारा रोना ही उचित है। अभी यद्यपि तुम बालक हो और सांसारिक बन्धनमें बाँधनेवाले तथा मोक्षमार्गके विपरीत दोषोंसे सर्वथा अछूते हो। तब तुम इस प्रकार रोकर मूढ़ोंकी राहपर क्यों चल रहे हो? अब शान्तिसे बैठो और जो-जो घटनायें घटी हों, उन्हें भली भाँति बताओ। पिताजी तो सकुशल हैं? वे कभी मेरी याद करते है? क्या वे भी मेरे दुःखसे दुखी हैं? उस समय मेरा हाल सुनकर उन्होंने क्या कहा था? वे मेरे ऊपर क्रुद्ध हो गये थे या नहीं?' मेरे ऐसा कहनेपर वह हारीतके शिष्य द्वारा लायी हुई पत्तोंकी बनी चटाईपर बैठ गया और स्वयं हारीतके द्वारा लाये जलसे मुँह धो और मुझे अपनी गोदमें बिठाकर बोला—'सखे वैशम्पायन! पिताजी सकुशल हैं। वे पहले ही अपनी दिव्य दृष्टिसे हमारा सम्पूर्ण कार्यकलाप देखकर उसके प्रतीकारार्थ अनुष्ठान भी करने लगे थे। वह कर्म आरम्भ करते ही मैं अश्वयोनिसे छुटकारा पाकर उनके पास जा पहुँचा। किन्तु उस समय मेरी आँखोंमें आँसू आ गये थे। मुख विषादके कारण दीन हो रहा था और भयवश मैं उनके समक्ष नहीं जा पाता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पितवान्—'वत्स कपिञ्जल, परित्यज्यतां स्वदोषशङ्का। ममैवायं खलु शठमतेः सर्व एव दोषः। येन जानताऽप्युत्पत्तिसमय एव वत्सस्य कृते नेदमायुष्करं कर्म निर्वर्तितम्। अधुना सिद्धप्रायमेवेदम्। न दुःखासिका भावनीया। मत्पादमूले तावत्स्थीयताम्' इत्येवमाज्ञापितस्तु तातेन विगतभीर्व्यज्ञापयम्—'तात, यदि प्रसादोऽस्ति ततो यत्रैवासावुत्पन्नस्तत्रैव गमनायाज्ञापयतु मां तातः' इत्येवं विज्ञापितस्तु मया पुनराज्ञापितवान्—'वत्स, शुकजातावसौ पतितः। तद्गत्वापि तमद्य नैव वेत्सि नाप्यसौ त्वां वेत्तीति तत्तिष्ठतु तावत्' इति। अद्य च प्रातरेवाहूय मामाज्ञापितवान्—'वत्स कपिञ्जल, महामुनेर्जाबालेराश्रमपदं मुहूर्ते प्राप्तः। जन्मान्तरस्मरणं चास्योपजातम्। तद्गच्छ संप्रति तं द्रष्टुम्। मदीयया चाशिषाऽनुगृह्य वक्तव्योऽसौ। वत्स, यावदिदं कर्म परिसमाप्यते तावत्त्वयाऽस्मिन्नेव जाबालेः पादमूले स्थातव्यमिति। अपि च त्वद्दुःखदुःखिताम्बा ते श्रीरपि तस्मिन्नेव कर्मणि परिचा-

---

था। ऐसी स्थितिमें उन्होंने दूर ही से मुझे बुलाकर कहा—'वत्स कपिंजल! तू अपने दोषकी शंका त्याग दे। सब दोष तो मुझ शठबुद्धिका है कि जिसने जान-बूझकर बच्चेके जन्म लेते ही दीर्घ आयुष्य प्रदान करनेवाला अनुष्ठान नहीं किया। अब वह प्रायः सिद्ध हो चुका है। अतएव तुझे किसी प्रकारका दुःख नहीं मानना चाहिए। अब तू मेरे ही पास रह। जब पिताजीने ऐसा कहा, तब निडर होकर मैंने उनसे प्रार्थना की—'पिताजी! यदि आप वास्तवमें मेरे ऊपर प्रसन्न हों तो जहाँ पुंडरीकका जन्म हुआ हो, वहाँ ही मुझे भी जानेकी अनुमति दे दीजिये।' मेरी प्रार्थना सुनकर उन्होंने कहा—'वत्स! इस समय तो वह तोतेकी योनिमें जनमा है। इसलिए उसके पास जाकर भी न तू उसे पहचानेगा और न वह तुझे जानेगा। अतएव अच्छा होगा कि तू यहीं रह।' आज सबेरे ही मुझे बुलाकर उन्होंने कहा—'वत्स कपिंजल! तेरा मित्र इस समय जाबालिके आश्रमपर पहुँचा हुआ है। अब उसे पूर्वजन्मकी बातोंका भी स्मरण हो आया है। इसलिए अब तू जाकर उससे मिल आ। मेरी ओरसे आशीष देकर कहना—'वत्स, जबतक मेरा अनुष्ठान नहीं समाप्त हो जाता तबतक तू वहीं जाबालिमुनिके चरणोंमें रह। तेरे दुःखसे दुःखिनी तेरी माता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रिका वर्तते। तथा तु शिरस्युपाघ्रायैतदेव पुनः पुनः संदिष्टम्। एवमुक्त्वाऽकठोरशिरीषकुसुमशिखासूक्ष्माग्रोद्भेदपक्ष्मलानि गात्राणि पुनः पुनः पाणिना परामृश्यान्तर्हृदयेनादूयत। तथा दूयमानहृदयं च तमवदम्—'सखे कपिञ्जल, किं दूयसे। त्वयाऽपि मन्दपुण्यस्य मम कृते तुरंगमतामापन्नेन पराधीनवृत्तिना बहुतराण्येव दुःखान्यनुभूतानि। कथं सोमपानोचितेनामुनाऽऽस्येन समुत्पादितसफेनरक्तस्रवाः खरखलीनक्षतयो विसोढाः। कथमयमकठोरकिसलयशयनीयैकसेवासुकुमारः सदा पर्याणितस्य न शीर्णः पृष्ठवंशः। कथमेषु कुसुमोच्चयापतितबालवनलतास्पर्शमात्राक्षमेषु गात्रेषु कशाभिघाता निपतिताः। कथं च ब्रह्मसूत्रोद्वाहिनि देहेऽस्मिन्वध्रोत्पीडनकृताः पीडाः समुपजाताः'। इत्येभिरन्यैश्च पूर्ववृत्तान्तालापैस्तत्कालविस्मृततिर्यग्जातिदुःखः सुखमतिष्ठम्।

उपारोहति च मध्याह्नं सवितरि हारीतः सह कपिञ्जलेन मां यथोचितमाहारमकारयत्। कृताहारश्च कपिञ्जलः क्षणमिव स्थित्वा मामव-

---

भी उसी अनुष्ठानमें परिचारिकाका काम कर रही है। तेरा मस्तक सूँघकर वह भी बार बार यही सन्देश दे रही है।' ऐसा कहकर कोमल सिरसके फूलके केसरकी भाँति सूक्ष्म रोयें युक्त मेरे शरीरका बारम्बार स्पर्श करके वह मन ही मन बहुत दुखी हुआ। इस प्रकार खिन्न होते हुए कपिंजलसे मैंने कहा—'मित्र! तुम इस तरह दुखी क्यों हो रहे हो? मुझ मन्दपुण्यके लिए तुमने भी तो घोड़ेकी योनिमें जन्म ले तथा पराधीन होकर बहुत कष्ट भोगा है। सोमरस पान करने योग्य इस सुन्दर मुखसे रुधिरमिश्रित फेन उगलते हुएं काँटेदार लगामकी रगड़ तुमने कैसे सही होगी? कोमल पत्तियोंके बिस्तरपर सोनेसे और सुकुमार पीठपर सदा जीन कसी रहनेसे क्या तुम्हारी रीढ़ न छिल गयी होगी! फूल चुनते समय नयी-नयी लताओंकी टहनियोंका स्पर्श भी सहनेमें असमर्थ तुम्हारे अंगोंने कोड़ोंकी मार किस तरह सही होगी? सदा यज्ञोपवीत धारण करनेवाले इस शरीरने चमड़ेकी बनी साज कसी जानेकी वेदना कैसे झेली होगी?' पूर्वजन्मसे सम्बन्ध रखनेवाली ऐसी-ऐसी बहुतेरी बातें करते-करते मुझे उस समय पक्षीयोनिका कष्ट भी भूल गया और मैं बड़े आनन्दसे रहने लगा।

जब सूर्यनारायण मध्य आकाशमें आये, तब हारीतने कपिंजलके साथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वीत्—'अहं हि तातेन त्वां समाश्वासयितुं जाबालिपादमूलादाकर्मप-रिसमाप्तेर्न त्वया चलितव्यम्' इत्येतच्चादेष्टुं विसर्जितः। अन्यदह-मपि तत्रैव कर्मणि व्यग्रतर एव। तद्व्रजामि संप्रति।' अहं तु तच्छ्रुत्वा विषण्णवदनस्तं प्रत्यवदम्—'सखे कपिञ्जल, एवंगते किं ब्रवीमि। किं च तातस्याम्बाया वा संदिशामि। सर्वं त्वमेव वेत्सि' इति। स त्वेव-मुक्तो मया पुनः पुनस्तत्रावस्थानाय मां संविधाय हारीतं चानुभूतास्म-दालिङ्गनसुखो विस्मयोन्मुखेन मुनिकुमारजनेनेक्ष्यमाणोऽन्तरिक्षमति-क्रम्य क्वाप्यदर्शनमगात्। गते च तस्मिन्हारीतः समाश्वास्य मां शरीर-स्थितिकरणायोदतिष्ठत्। उत्थाय चान्यं मुनिकुमारकं मत्पार्श्वे स्थाप-यित्वा निरगमत्। निर्वर्तितस्नानादिक्रियाकलापश्चात्मनैव सहापराह्ण-समये पुनर्मामाहारमकारयत्।

एवं चावहितचेतसा हारीतेन संवर्ध्यमानः कतिपयैरेव दिवसैः संजातपक्षोऽभवम्। उत्पन्नोत्पतनसामर्थ्यश्च चेचस्यकरवम्—'गमन-

---

मुझे यथोचित भोजन कराया। भोजनके बाद क्षणभर ठहरकर कपिंजलने मुझ-से कहा—'पिताजीने मुझको तुम्हें आश्वासन देने तथा जबतक अनुष्ठान समाप्त न हो जाय, तबतक महर्षि जाबालिके श्रीचरणोंमें ही रहनेका संदेश कहनेके लिए भेजा था। दूसरे मैं भी उसी अनुष्ठानके काममें अत्यन्त व्यस्त हूँ। इस कारण अब मैं जाता हूँ।' सो सुनकर मेरा मुँह विषण्ण हो उठा और मैंने कहा—'मित्र कपिंजल! जब ऐसी बात है तो मैं क्या कहूँ? पिता और माताजीके लिए कौनसा संदेश भेजूँ? तुम तो सब कुछ स्वयं जानते हो।' मेरे यह कहनेपर कपिंजलने मुझे वहीं रखनेके लिए बारम्बार हारीतको सहेज-कर मेरा आलिंगन किया और विस्मयके कारण ऊपर मुख करके निहारते हुए मुनिकुमारोंके समक्ष वह उड़कर अन्तरिक्षमें अलक्षित हो गया। उसके चले जानेपर हारीतने मुझे ढाढ़स बँधाया और भोजन करनेके लिए उठा। उठकर उसने एक अन्य मुनिकुमारको मेरे पास बैठा दिया और स्वयं कुटियासे बाहर चला गया। स्नानादि नित्यकर्म करनेके पश्चात् उसने सायंकालको भी अपने साथ मुझे भोजन कराया।

इस प्रकार पूरी सावधानीके साथ हारीतने मेरा पालन-पोषण किया, जिससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्षमस्तु संवृत्तोऽस्मि तत्र नाम चन्द्रापीडोत्पत्तिपरिज्ञानम्। महाश्वेता पुनः सर्वास्ते। तत्किमुत्पन्नज्ञानोऽपि तद्दर्शनेन विनात्मानं निमेषमपि दुःखे स्थापयामि। भवतु। तत्रैव गत्वा तिष्ठामि' इति निश्चित्यैकदा प्रातर्विहारनिर्गत एवोत्तरां ककुभं गृहीत्वाऽहम्। अबहुदिवसाभ्यस्तगमनतया स्तोकमेव गत्वाऽवशीर्यन्त इव मेऽङ्गानि श्रमेण। अशुष्यच्चञ्चुपुटं पिपासया। नाडिंधमेनाकम्पत कण्ठः श्वासेन। तदवस्थश्च शिथिलायमानपक्षतिरत्र पताम्यत्र पतामीति परवानेवान्यतमस्य तमस्विनीतिमिरसंघातस्येवार्ककरतिरस्कारिणो घनहरितपल्लवभरावनम्रस्यासन्नतरस्य सरस्तीरतरुनिकुञ्जस्योपर्यात्मानममुञ्चम्। चिरादिवोन्मुक्ताध्वश्रमक्लमोऽवतीर्य शीतलतरुतलच्छायास्थितो दलगहनसंरोधशिशिरमरविन्दकिंजल्करजोवाससुरभि बिसरसकाषायमापीयमानमेवोत्पादितपुनरुक्तपानस्पृहमातृप्तेः पयो निपीय यथाप्राप्तैरकठोर-

---

कुछ ही दिनों बाद मेरे पंख निकल आये। जब मुझमें उड़नेकी कुछ शक्ति आ गयी, तब अपने मनमें सोचा—'अब तो मैं चलने-फिरने लायक हो गया हूँ। अतएव अब यह पता लगाना चाहिए कि चन्द्रापीडका जन्म कहाँ हुआ है ? महाश्वेता ज्योंकी त्यों है ? अब जब कि मुझे पूर्वजन्मका ज्ञान प्राप्त हो गया है, तब निमेष भर भी मैं उसे देखे बिना दुःख क्यों सहूँ ? अच्छा तो यह हो कि मैं वहीं चलकर रहूँ। ऐसा निश्चय करके मैं एकदिन प्रातःकाल घूमनेके लिए निकला और उत्तर दिशाकी ओर उड़ा। किन्तु उड़नेका अभ्यास ज्यादा दिनोंका न होनेके कारण थोड़ी ही दूर जाते-जाते थकावटसे मेरे सारे अङ्ग शिथिल हो चले। प्यासके कारण मेरी चोंच सूखने लगी। धौंकनीके समान श्वास चलनेसे मेरा कण्ठ काँपने लगा। ऐसी स्थितिमें पंख ढीले हो जानेके कारण अब गिरा—अब गिरा ऐसा लगने लगा। तब पराधीन सदृश होकर पास ही एक सरोवरके निकट घने, हरे-हरे पत्तोंके भारसे झुके एवं रात्रिके समान अन्धकाराच्छन्न होनेके कारण सूर्यकी किरणोंको अपमानित करनेवाले वृक्षोंके कुजमें जाकर बैठ गया। बड़ी देर तक वहाँ बैठनेपर जब राहकी थकावट दूर हो गयी तो नीचे उतरा और एक वृक्षकी शीतल छायामें जा बैठा। तदनन्तर घने पत्तोंसे ढँके रहनेके कारण ठंढे, कमलकी केसरके सौर-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कमलकर्णिकाबीजैर्वीरतरुपर्णाङ्कुरफलैश्च कृत्वा क्षुधः प्रतीकारम्, अपराह्णसमये पुनः कियन्तमप्यध्वानं यास्यामीति मनसि कृत्वाऽध्वश्रमनिःसहान्यङ्गानि विश्रामयितुमन्यतमामविच्छिन्नच्छायां शाखामारुह्य तरोर्मूलभाग एवावतिष्ठम। तथास्थितश्चाध्वश्रमसुलभां निद्रामगच्छम। चिरादिव च लब्धप्रबोधो बद्धमात्मानमनुन्मोचनीयैस्तन्तुपाशैरपश्यम। अग्रतश्च पाशविरहितमिव कालपुरुषमतिकठिनतया कालिम्ना च वपुषः कालायसपरमाणुभिरिव केवलैर्निर्मितं प्रेतपतिमिवापरं प्रतिपक्षमिव पुण्यराशेराशयमिव पाप्मनो विनापि क्रोधकारणादाबद्धभीषणभृकुटिरौद्रतरेणाननेनारक्तकेकरतरकनीनिकेन च चक्षुषा सकलजनभयंकरस्य भगवतः कृतान्तस्यापि भयमिवोपजनयन्तमाशये केशेषु चास्निग्धमानने ज्ञाने चान्धकारितं वर्णे चरिते च कृष्णं निवसने कर्मणि च

भसे सुरभित, मृणालके रसका मिश्रण होनेसे कसैला और एक बार पीनेपर पुनः प्यास उत्पन्न करनेवाला जल पिया। तदनन्तर तत्काल प्राप्त कमलकी कोमल डंडी, उसके बीज, अर्जुन वृक्षके पत्ते, अंकुर तथा फलसे क्षुधा शान्त करके 'दोपहर बाद फिर कुछ रास्ता तै करूँगा।' ऐसा विचार करके मार्गकी थकावटसे दुर्बल अङ्गोंको कुछ आराम देनेके निमित्त एक घनी छायावाले वृक्षकी शाखापर चढ़कर वृक्षकी ओर ही मुँह करके बैठ गया। इस प्रकार आरामसे बैठनेपर थकावटके कारण मुझे तुरन्त नींद आ गयी। बड़ी देर बाद जागा तो देखा कि मैं कभी भी न छूटनेवाली डोरियोंके जालमें बँधा हुआ हूँ। मेरे समक्ष पाशविहीन कालपुरुषके समान भयानक एक अत्यन्त कठोरकाय मनुष्य खड़ा था। उसका बहुत ही कठिन और काला शरीर देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वह लौहके परमाणुओंसे निर्मित दूसरा यमराज हो। वह पुण्यके शत्रुका मूर्त रूप था। पापका तो जैसे भंडार था। क्रोधका कोई कारण न होनेपर भी भयानक रूपमें उसकी भृकुटी चढ़ी हुई थी। उसके अतिशय भीषण मुख और बहुत अधिक लाल एवं टेढ़ी पुतलियोंवाले नेत्रोंको देखकर ऐसा लगता था कि जैसे सबके हृदयमें भय उत्पन्न करनेवाले भगवान् यमराजको भी वह भयभीत कर रहा था। जैसे उसका अभिप्राय क्रूर था, वैसे ही तेल न लगनेके कारण उसके केश भी क्रूर एवं रूखे दीख रहे थे। जैसे उसका ज्ञान अज्ञानसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मलिनं वचसि वपुषि च परुषमदृष्टाश्रुतानुरूपमप्याकारप्रत्ययादेवानुमीयमानक्रौर्यदोषं पुरुषमद्राक्षम्। आलोक्य च तं तादृशमात्मन उपरि निष्प्रत्याश एवापृच्छम्—'भद्र, कस्त्वम्। किमर्थं वा त्वया बद्धोऽस्मि। यद्यामिषतृष्णया तत्किमिति सुप्त एव न व्यापादितोऽस्मि। किं मया निरागसा बन्धनदुःखमनुभावितेन। अथ केवलमेव कौतुकात्। ततः कृतं कौतुकम्। मुञ्च मामिदानीं त्वं भद्रमुखः। मया खलु वल्लभजनोत्कण्ठितेन दूरं गन्तव्यम्। अकालक्षेपक्षमं वर्तते मे हृदयम्। भवानपि प्राणिधर्मे वर्तते। एवमुक्तः स मामुक्तवान्—'महात्मन्, अहं खलु क्रूरकर्मा जात्या चाण्डालः। न च मया त्वमामिषलुब्धेन कुतूहलेन वा बद्धः। मम खलु स्वामी पक्कणाधिपतिरितो नातिदूरे मातङ्गप्रतिबद्धायां भूमौ कृतावस्थानः तस्य दुहिता कौतूकमये प्रथमे वयसि वर्तते। तस्यास्त्वं केनापि दुरात्मना कथितो यथा 'जाबालेराश्रम एवं-

---

अन्धकाराच्छन्न था, वैसे ही उसके मुखका रङ्ग, चरित्र तथा वस्त्र भी अन्धकार सरीखा काला था। जैसे उसका शरीर कठोर था, वैसे ही वाणी भी कठोर थी। पहले कभी देखे-सुने न रहनेपर भी केवल आकार देखकर उसकी क्रूरताका अनुमान किया जा सकता था। उसको देखते ही मेरी सारी आशाओंपर पानी फिर गया। फिर भी मैंने उससे पूछा—'भद्र! तुम कौन हो और मुझे तुमने क्यों फँसाया है! यदि मेरे मांसके लिए तुमने ऐसा किया हो तो सोतेमें ही मुझे क्यों नहीं मार डाला? मुझ निरपराधको इस तरह जालमें जकड़कर क्यों सता रहे हो! हे भद्रमुख! यदि कौतुकवश तुमने ऐसा किया हो तो कौतुक भी हो चुका। अब तुम मुझे छोड़ दो। अपने प्रियजनोंसे मिलनेके लिए अभी मुझे बड़ी दूर जाना है। इस समय मेरा हृदय तनिक भी देरी सहनेमें असमर्थ है। तुम भी प्राणियोंके धर्मको जानते ही हो।' यह सुनकर उसने कहा—'महात्मन्! मैं सदा निर्दय कर्म करनेवाला और जातिका चाण्डाल हूँ। मैंने आपको मांसके लोभसे या कि कौतुकवश नहीं पकड़ा है। मेरा स्वामी चाण्डालोंके जत्थेका सरदार है। यहाँसे थोड़ी ही दूरीपर चाण्डालोंकी बस्तीमें वह रहता है। उसकी पुत्री इस समय पहली और कौतुकमयी अवस्थामें है। उससे न जाने किस दुष्टने यह कह दिया कि 'जाबालिके आश्रममें एक बड़ा गुणी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुणविशिष्टो महाश्चर्यकारी शुकस्तिष्ठति।' तया च श्रुत्वोत्पन्नकौतुका-त्वद्ग्रहणाय बहव एवापरे मादृशाः समादिष्टाः। तदद्य पुण्यैर्मयाऽऽसा-दितोऽसि। तदहं तत्पादमूलं त्वां प्रापयामि। बन्धे मोक्षे चाधुना सा ते प्रभवति' इति।

अहं तच्छ्रुत्वा मुक्ताशनिनेव ताडितः शिरसि संविभ्रान्तरात्मा चेतस्यकरवम्—'अहो मे मन्दपुण्यस्य दारुणतरः कर्मणां विपाकः। येन मया सुरासुरशिरःशेखराभ्यर्चितचरणसरसिजायाः श्रियो जातेन जगत्त्रयनमस्यस्य महामुनेः श्वेतकेतोः स्वहस्तसंवर्धितेन दिव्यलोकाश्रम-निवासिना भूत्वा म्लेच्छजातिभिरपि दूरतः परिहृतप्रवेशमधुना पक्वणं प्रवेष्टव्यम्। चाण्डालैः सहैकत्र स्थातव्यम्। जरन्मातङ्गाङ्गनाकरो-पनीतैः कवलैरात्मा पोषणीयः। चण्डालबालकजनस्य क्रीडनीयेन भवितव्यम्। दुरात्मन् पुण्डरीकहतक, धिग्जन्मलाभं ते। यस्य कर्मणा-मयमीदृशः परिणामः। किमर्थं प्रथमगर्भ एव न सहस्रधा शीर्णोऽसि।

और आश्चर्यजनक तोता रहता है। यह सुनकर उसके मनमें कौतूहल जागा और इसने मेरे ही जैसे बहुतेरे लोगोंको पकड़नेके लिए नियुक्त कर दिया। सो पुण्यवश आज आप मेरे हाथमें आ गये। सो मैं आपको उसके चरणोंमें पहुँचा दूँगा। उसके बाद बन्धनमें रखने या छोड़ देनेका अधिकार उसीके अधीनहै।

उसकी यह बात सुनकर तो जैसे मेरे सिरपर वज्र गिर पड़ा और अत्यन्त उद्विग्न होकर मैं सोचने लगा—'अहो! मुझ मन्दभाग्यके कर्मोंका फल बड़ा ही भीषण है। सभी देव-दानव जिसके पावन चरणकमलोंपर अपना मुकुट रखकर प्रणाम करते हैं, उस लक्ष्मीकी कोखसे जिसका जन्म हुआ, निखिल त्रिलोकीके नमस्करणीय महामुनि श्वेतकेतुने जिसे अपने हाथों पाला-पोसा और जो दिव्य पुरुषोंके आश्रममें रहा, उसे अब ऐसे चाण्डालोंकी बस्तीमें रहना पड़ेगा कि म्लेच्छ भी जिन्हें दूरसे ही त्याग देते हैं। उन्हीं चाण्डालोंके बीच मेरा निवास होगा। वृद्ध चाण्डालिनियोंके हाथसे मिले ग्रासपर जीवन टेरना पड़ेगा। मुझे चाण्डालबालकोंका खिलौना बनना होगा। अरे दुरात्मा और पापी पुण्डरीक! तेरे जीवनको धिक्कार है। तेरे दुष्कर्मों कितना भीषण परिणाम सामने आ रहा है। पहले गर्भमें ही कटकर तेरे हजार टुकड़े क्यों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मातः श्रीरशरणजनशरणचरणपङ्कजेऽतिगहनभीषणाद्रक्ष मामस्मान्महानरकपातात्। तात भुवनत्रयत्राणक्षम, त्रायस्व कुलतन्तुमेकम्। त्वयैव संवर्धितोऽस्मि। वयस्य कपिञ्जल, यदि परापत्य त्वयाऽस्मात्पापान्न मोचितोऽस्मि तदा जन्मान्तरेऽपि पुनर्मा कृथा मत्समागमप्रत्याशाम्' इति। एतानि चान्यानि च चेतसा विलप्य पुनस्तमभ्यर्थनादीनमवदम्—'भद्रमुख, जातिस्मरो मुनिरस्मि जात्या। तत्त्वापि मामस्मान्महतः पापसंकटादुद्धृत्य धर्मो भवत्येवादृष्टसुखहेतुः। दृष्टेऽपि च केनचिदपरेणादृष्टस्य सन्मुक्तिकृतः प्रत्यवायो नास्त्येव। तन्मुञ्चतु मां भद्रमुखः' इत्यभिदधानश्च पादयोरपतम्। स तु विहस्य मामब्रवीत्—'रे मोहान्ध, यस्य शुभाशुभकर्मसाक्षीभूताः पञ्च लोकपालास्तथैवात्मशरीरस्थिता न पश्यन्ति सोऽन्यस्य भयादकार्यं नाचरति तन्नीतोऽसि मया स्वाम्याज्ञया' इत्येवमभिदधान एव मामादाय पक्वणाभिमुखमगच्छत्।

नहीं हो गये ? अशरण जनोंको शरण देनेवाले चरण कमलोंवाली हे माता लक्ष्मी ! इस अतिशय गहन तथा भीषण नरकपातसे तू मुझे बचा। तीनों भुवनोंकी रक्षा करनेमें समर्थ हे पिताजी ! अपने कुलकी इस सन्ततिकी रक्षा करिए। क्योंकि आपने ही मेरा पालन-पोषण किया था। सखे कपिंजल ! यदि इस समय यहाँ आकर तुम इस पापसे न छुड़ाओगे तो जन्मान्तरमें भी मुझसे मिलनेकी आशा न रखना।' मन ही मन ऐसे-ऐसे नाना प्रकारके विलाप करके फिर बड़े दीन स्वरमें मैंने उस चाण्डालसे कहा—'भद्रमुख ! मुझे पूर्वजन्मकी सब बातें स्मरण हैं और मैं जातिका मुनि हूँ। सो यदि तुम मुझे इस पापके संकटसे बचा लोगे तो बड़ा धर्म होगा। जिससे आगामी जन्ममें तुम्हें बड़ा सुख मिलेगा। और फिर मुझे पकड़ते समय तुम्हें किसीने देखा भी नहीं है। अतएव मुझे छोड़ देनेमें तुम्हें कोई दोष नहीं लगेगा। सो हे भद्रमुख ! तुम मुझे छोड़ दो।' यों कहता हुआ मैं उसके पैरोंपर गिर पड़ा। तब हँसकर उसने कहा—'हे मोहान्ध ! शुभ-अशुभ कर्मोंके साक्षी इन्द्र-वरुण-यम-सोम-कुबेर ये पाँचों लोकपाल शरीरमें विद्यमान रहते हुए भी जिसके शुभाशुभ कर्म नहीं देखते, वह किसीसे डरकर अकार्य कर्म नहीं करेगा। अतएव मैं आपको अपने स्वामीकी आज्ञासे ले ही चलूँगा।' ऐसा कहता हुआ वह चांडा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अहं तु तेन तद्वचसाऽभिहत इव मूर्ध्नि मूकतामापन्नः केषां पुनः कर्मणामिदं मे फलमित्यन्तरात्मनाऽभिध्यायन्प्राणपरित्यागं प्रति कृतनिश्चयोऽभवम् । नीयमानश्च तथा तेन तन्मोचनप्रत्याशयै-वाग्रतो दत्तदृष्टिराविष्टैरिव बीभंत्सविन्यासैर्व्यावृत्तैश्चावर्तकानायपरिभ्र-मणानिभृतैश्च मृगावपाटितजीर्णवागुरासंग्रथनव्यग्रैश्चोत्त्रुटितकूटपाशसं-ग्रथनायस्तैश्च हस्तस्थितसकाण्डकोदण्डैश्च प्रासप्रचण्डपाणिभिश्च सेलग्राहिभिश्च नानाविधाग्रहकविहङ्गवाचालनकुशलैः कौलेयकमु-क्तिसंचारणचतुरैश्चण्डालशिशुभिर्वृन्दशो दिशि दिशि मृगयां क्रीडद्भिर्दूरत एवावेष्ट्यमानम्, इतस्ततो विस्रगन्धिधूमोद्गमानुमीयमा-नसान्द्रवंशवनान्तरितवेश्मसंनिवेशाम्, सर्वतः करङ्कप्रायवृतिवाटम्,

---

लोंके पड़ावकी ओर चल पड़ा।

उस चाण्डालके इस वचनसे तो जैसे मेरे मस्तकपर वज्रकी चोट पड़ी हो, इस प्रकार तलमलाकर मैं चुप हो गया। तदनन्तर 'यह मेरे किन कर्मोंका फल मिल रहा है' ऐसा मन ही मन सोचते हुए मैंने प्राण त्याग देनेका निश्चय कर लिया। इस प्रकार जब वह मुझे लेकर चला, तब उससे छूटनेके विचारसे मैंने जो आगेकी ओर दृष्टि दौड़ायी तो दूर ही से चाण्डालोंकी बस्ती दिखायी पड़ी। दूरसे ही देखनेपर ज्ञात हो गया कि वह चाण्डालोंका बाड़ा है। क्योंकि वहाँके बालक पिशाचग्रस्तकी भाँति बीभत्स रूप बनाये विचर रहे थे। मृगयासे लौटे लोगोंके जालोंको उलटा-पलटा जा रहा था। मृगों द्वारा फाड़े हुए जालको लोग गूँथनेमें व्यस्त थे। वे चूहोंके द्वारा काटे हुए जालोंकी मरम्मत कर रहे थे। बहुतोंके हाथमें धनुष-बाण विद्यमान थे। उनके हाथमें बड़े भयंकर खञ्जर चमक रहे थे। वे वे भाले लिये हुए थे। बहुतेरे शबर अन्यान्य पक्षियोंको पकड़नेवाले तोते आदि पक्षियोंको भाषण करनेकी शिक्षा दे रहे थे। उनमें कितने ही कुत्तोंको छोड़ने तथा लौटानेमें निपुण थे। वे झुण्ड बनाकर सब ओर मृगया कर रहे थे। इधर-उधरसे आनेवाले कच्चे मांसकी दुर्गन्धिपूर्ण धुएँसे ऐसा अनुभव होता था कि वहाँ बहुतेरे घर हैं, जो बाँसोंके गहन वनमें पड़ जानेसे दीख नहीं रहे हैं। उस बस्तीके सभी रास्ते खोपड़ियोंसे ढँके थे। उसकी सभी गलियाँ हड्डियों-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्थिप्रायरथ्यावस्करकूटम्, उत्कृत्तमांसमेदोवसासृक्कर्दमप्रायकुटीराजिरम्, आखेटप्रायजीवम्, पिशितप्रायाशनम्, वसाप्रायस्नेहम्, कौशेयप्रायपरिधानम्, चर्मप्रायास्तरणम्, सारमेयप्रायपरिवारम्, धवलीप्रायवाहनम्, स्त्रीमद्यप्रायपुरुषार्थम्, असृक्प्रायदेवताबलिपूजम्, पशूपहारप्रायधर्मक्रियम्, आकारमिव सर्वनरकाणाम्, कारणमिव सर्वाकुशलानाम्, संनिवेशमिव सर्वश्मशानानाम्, पत्तनमिव सर्वपापानाम्, आयतनमिव सर्वयातनानाम्, स्मर्यमाणमपि भयंकरम्, श्रूयमाणमप्युद्वेगकरम्, दृश्यमानमपि पापजननम्, जन्मकर्मतो मलिनतरजनम्, जगतो निस्त्रिंशतरलोकहृदयम्, लोकहृदयेभ्योऽपि निर्घृणतरसर्वसंव्यवहारसमस्तपुरुषम्, अविशेषाचारबालयुवस्थविरम्, अव्यवस्थितगम्यागम्याङ्गनोपभोगम्, अपण्यकर्मैकापणं पक्वणमपश्यम्।

युक्त कूड़ेके ढेरसे भरी पड़ी थीं। उस बस्तीकी सभी झोपड़ियोंके आँगनमें कटे मांस, चर्बी, मज्जा और रुधिरका कीचड़ भरा हुआ था। शिकार करना ही उनकी जीविकाका साधन था। प्रायः मांस ही उनका भोजन था। तेलके स्थानमें वे प्रायः चर्बीका ही उपयोग करते थे। उनके वस्त्र प्रायः कच्चे रेशमके बने हुए थे। उनके बिछौने चमड़ेके थे। कुत्ते ही उनके परिवार थे। सफेद गायें ही उनकी सवारी थीं। स्त्रियों तथा मदिरापर ही उनका पुरुषार्थ दीखता था। प्रायः वे रुधिरसे ही देवताओंको बलि और पूजा देते थे। पशुओंका उपहार अर्पण करके ही वे प्रायः अपना धार्मिक कृत्य सम्पन्न करते थे। वह बाड़ा सभी नरकोंका नकशा था। सब विपत्तियोंका मूल कारण था। वह जैसे सभी श्मशानोंका निवासस्थल था। जैसे सब पापोंका बाजार था और सब प्रकारकी यातनाओंका भवन था। उसका स्मरण करनेसे भी भय लगता था। उस बस्तीका नाम सुन करके भी मनमें उद्वेग और देखनेसे ही पाप उत्पन्न हो जाता था। उस बस्तीके निवासी जन्म और कर्म दोनोंसे बड़े ही मलिन थे। मनुष्योंकी अपेक्षा उनके हृदय अधिक क्रूर थे। उनके हृदयसे भी क्रूर उन पुरुषोंके व्यवहार थे। बालकों, युवकों तथा वृद्धोंके आचरणमें कुछ भी अन्तर नहीं था। स्त्रीसम्भोगके लिए उनमें गम्य और अगम्यका विचार नहीं किया जाता था और वह बाड़ा पापकर्मोंका नगर था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दृष्ट्वा च तं तादृशं नरकवासिनोऽप्युद्वेगकरं समुत्पन्नघृणोऽन्तरात्मन्यकरवम्—'अपि नाम सा चाण्डालदारिका दूरत एव मामालोक्योत्पन्नकरुणा मोचयेन्न जातिसदृशमाचरिष्यति। भविष्यन्त्येवंविधानि मे पुण्यानि। न निमेषमप्यत्र पदं कुर्याम्' इत्येवं कृताशंसमेव मां नीत्वा स चण्डालस्तदा दुर्दर्शनाकारवेषायै दूरतः स्थितः प्रणम्य 'एष स मया प्राप्तः' इति तस्यै चण्डालदारिकायै दर्शितवान्। सा तु प्रहृष्टतरवदना 'शोभनं कृतम्' इति तमभिधाय तत्करात्स्वकरयुगेनादाय माम् 'आः पुत्रक, प्राप्तोऽसि। सांप्रतं क्वापरं गम्यते। व्यपनयामि ते सर्वमिदं कामचारित्वम्' इत्यभिदधात्येव धावमानचण्डालबालकोपनीतेऽर्धाश्यानलोमशदुर्गन्धिगोचर्मवध्रिकावनद्धे दृढबद्धदारुमयपानभोजनपात्रे मनागुद्घाटितद्वारे दारुपञ्जरे समं महाश्वेतावलोकनमनोरथैराक्षिप्यार्गलितद्वारा सा मामवदत्। 'यथात्र निर्वृतः संप्रति तिष्ठ' इत्यभिधाय

नरकनिवासियोंको भी उद्विग्न करनेवाले चाण्डालोंकी उस बस्तीको देखकर हृदयमें बड़ी घृणा उपजी और मैं सोचने लगा—'यदि वह चाण्डालकन्या मुझे दूर ही से देखकर दयावश छोड़ दे और अपनी जातिके स्वभावके अनुसार क्रूर आचरण न करे तो कैसा हो? क्या मेरे ऐसे पुण्य होंगे? यदि ऐसा हो तो मैं पलभर भी यहाँ न रुकूँ।' जब मैं ऐसी आकांक्षायें कर रहा था, उसी समय मुझे पकड़नेवाले चाण्डालने लेजाकर एक कुरूप आकार और घिनौने वेषमें बैठी चाण्डालकन्याके पास जा और दूर ही से प्रणाम करके 'यह मिल गया' ऐसा कहकर उसको मुझे दिखाया। मुझको देखते ही उसका मुख खिल उठा और 'तुमने बहुत अच्छा किया' यह कहकर उस कन्याने चाण्डालके हाथसे मुझे अपने दोनों हाथोंमें ले लिया और कहने लगी—'आः पुत्र! अब तुम मुझे मिले। अब कहाँ जाओगे? अब मैं तेरी सारी स्वेच्छाचारिता समाप्त कर दूँगी।' वह यह कह ही रही थी कि इतनेमें कुछ चाण्डालबालक एक ऐसा पींजरा ले आये, जिसमें अर्धशुष्क, बालसमन्वित तथा दुर्गन्धियुक्त गोचर्मके तसमे लटके हुए थे। काष्ठनिर्मित भोजनपात्र बँधे हुए थे। उस काठके पींजरेका द्वार तनिकसा खोलकर महाश्वेतासे मिलनेकी आशाओंके साथ-साथ मुझे उसके भीतर ठेलनेके बाद द्वार बन्द कर दिया। तदनन्तर उसने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तूष्णीमस्थात्। अहं तु तथा संरुद्धश्चेतस्यकरवम्—'महासंकटे पतितोऽस्मि। यदि तावदावेदितात्मावस्थः शिरसा प्रणिपत्य मुक्तये विज्ञापयाम्येनां तदा य एव मे गुणो दोषतामापद्य बन्धायोपजातः स एव संवर्धितो भवति। साधु जल्पतीत्येवाहमनया ग्राहितः। कास्या मदीयया बन्धपीडया पीडा। नाहमस्यास्तनयो न भ्राता न बन्धुः। अथ मौनमालम्ब्य तिष्ठामि, तत्रापि शाठ्यप्रकुपिता कदाचिदतोऽप्यधिकामवस्थां प्रापयति माम्। नृशंसतमा हि जातिरियम्। अथवा वरमितोऽप्यधिकमुपजातं न पुनश्चाण्डालैः सह वागपि विमिश्रिता। अपि च गृहीतमौनं निर्वेदात्कदाचिन्मुञ्चत्येव। वदंस्तु पुनर्न मोक्तव्य एवाहमनया। अपि च यद्दिव्यलोकभ्रंशो यन्मर्त्यलोके जन्म यत्तिर्यग्जातौ पतनं यच्चाण्डालहस्तागमनं यच्चेदमेवंविधं पञ्जरबन्धदुःखं सर्व एवायमनियतेन्द्रिय-

---

मुझसे कहा—'अब इसमें आरामके साथ रह।' यों कहकर वह चुप हो गयी। इस प्रकार पींजरेमें बन्द हो जानेपर मैंने अपने मनमें सोचा—मैं तो बहुत बड़े संकटमें पड़ गया। अब यदि मैं इसे अपनी आपबीती सुना तथा माथा झुकाकर प्रणाम करके छुटकारेके लिए बिनती करूँ तो मेरा जो गुण दोषके रूपमें परिणत होकर मेरे बन्धनका कारण बना है, उसीकी पुष्टि हो जायगी। यह तोता अच्छा बोलता है, यही सोचकर तो इसने मुझे पकड़वाया है। इस प्रकार बन्धनमें पड़कर मुझे जो कष्ट हो रहा है, इससे इसके हृदयको क्यों पीडा होगी? क्योंकि न मैं इसका पुत्र हूँ, न भाई हूँ और न बन्धु हूँ। यदि मौनावलम्बन करके चुपचाप बैठूँ तो मेरी इस शठतासे कुपित होकर संभव है कि यह मुझे इससे भी कष्टकर अवस्थामें पहुँचा दे। क्योंकि यह जाति बड़ी ही क्रूर होती है। अथवा इससे भी अधिक कष्ट भले ही मिले, पर मैं इन चाण्डालोंके साथ वार्तालाप नहीं ही करूँगा। यह भी हो सकता है कि मौन धारण करनेसे यह दुखी होकर मुझे छोड़ दे। किन्तु बोलूँगा तो यह कभी न छोड़ेगी। जो मेरा दिव्यलोकसे पतन हुआ, जो मुझे मृत्युलोकमें जन्म लेना पड़ा, जो पक्षीकी योनिमें उत्पन्न हुआ, जो उस चाण्डालके हाथों पकड़ा गया और जो इस समय पींजरेमें बन्द होकर साँसत सहनी पड़ रही है, इन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वस्यैव दोषः। तत्किमेकया वाचा सर्वेन्द्रियाण्येव नियमयामि' इति निश्चित्य मौनग्रहणमकरवम्। आलप्यमानोऽप्यातर्ज्यमानोऽप्याहन्यमानोऽपि त्रुट्यमानोऽपि च बलान्न किंचिदप्यवदम्। केवलमुच्चैश्चीत्कारमेवामुञ्चम्। उपनीतेऽपि च पानाशने तं दिवसमनशनेनैवात्यवाहयम्। अन्येद्युश्चातिक्रामत्यशनकाले मे दूयमाने हृदये च सा स्वपाणिनोपनीय नानाविधानि पक्वान्यपक्वानि च फलानि सुरभि शीतलं च पानीयमप्रतिपन्नतदुपभोगं मामारोपितलोचना स्निह्यन्तीवावोचत्- 'क्षुत्पिपासार्दितानां हि पशुपक्षिणां निर्विचारचित्तवृत्तीनामुपनतेष्वाहारेष्वनुपयोगो न संभवत्येव। तद्यद्येवंविधस्त्वं कोऽपि भोज्याभोज्यविवेककारी पूर्वजातिस्मरोऽस्मदीयमाहारं परिहरसि। तथापि तावद्भक्ष्याभक्ष्यविवेकरहितायां तिर्यग्जातौ वर्तमानस्य ते किं वाऽभक्ष्यम्। यन्न भक्षयसि। येन चोत्कृष्टतमां जातिं प्राप्यात्मनैवेदृशं कर्म कृतं येन तिर्य-

---

सब विपत्तियोंका एकमात्र कारण यह है कि मैंने अपनी बहकी हुई इन्द्रियोंको नियंत्रणमें नहीं रक्खा। तब केवल वचनेन्द्रिय ही क्यों, अब मैं सभी इन्द्रियों-पर नियंत्रण रक्खूँगा।' ऐसा निश्चय करके मैंने मौन धारण कर लिया। इसके बाद उसने मुझे बोलनेके लिए प्रेरित किया। नहीं बोलनेपर धमकाया, मारा और पंख नोच डाले। फिर भी मैं नहीं बोला। कभी-कभी बहुत ऊँचे स्वरसे चीत्कार अलबत्ते कर दिया करता था। यद्यपि मेरे लिए दाना-पानी लाकर रक्खा गया, फिर भी उस रोज मैंने उपवास ही किया। अगले दिन भी जब मेरे भोजनका समय बीत गया तो मनमें खिन्न होकर वह चाण्डालकन्या अपने हाथमें तरह-तरहके पक्के और कच्चे फल तथा सुगन्धित ठंढा जल लेकर मेरे पास आयी। किन्तु जब मैंने उन्हें भी अङ्गीकार नहीं किया, तब मेरी ओर निहारकर बड़े स्नेहपूर्वक वह बोली—'विचारशून्य चित्तवृत्तिवाले और भूखे-प्यासे पक्षियोंके लिए सामने आया हुआ दाना-पानी त्यागना असम्भव है। यदि तुम भोज्य-अभोज्यका विचार करनेवाले कोई प्राणी हो और तुम्हें पूर्वजन्मके वृत्तान्तका स्मरण है, इसी कारण हमारे दिये चारेको नहीं स्वीकार करते। तथापि भक्ष्य और अभक्ष्यके विचारसे शून्य पक्षीयोनिमें जन्म लेनेके कारण तुम्हारे लिए अभक्ष्य कोई वस्तु है ही नहीं। तब तुम भोजन क्यों नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्योनौ पतितः स किमपरं विचारयसि। प्रथममेवात्मा न विवेके स्थापितः। अधुना स्वकर्मोपात्तजातिसदृशमाचरतस्ते नास्त्येव दोषः। अपि च येषामपि भक्ष्याभक्ष्यनियमोऽस्ति तेषामप्यापत्काले प्राणानां संधारणमभक्ष्योपयोगेनापि तावद्विहितम्। किं पुनस्त्वादृशस्य। न चेदृशं किंचिदप्याहाराय मयोपनीतं यादृशेन चाण्डालाशनशङ्का समुत्पद्यते। फलानि तु ततोऽपि प्रतिगृह्यन्त एव। पानीयमपि चाण्डालभाण्डादपि भुवि पतितं पवित्रमेवेत्येवं जनः कथयति। तत्किमर्थमात्मानं क्षुधा पिपासया वा पातयसि। यन्न भक्षयस्यमूनि मुनिजनोचितानि वनफलानि न पिबसि वा पानीयम्' इति। अहं तु तेन तस्याश्चाण्डालजात्यनुचितेन वचसा विवेकेन च विस्मितान्तरात्मा तथेति प्रतिपद्य शापनिघ्नो घृणां परित्यज्य जीविततृष्णया क्षुत्पिपासोपशमायाशनक्रियामङ्गीकृतवानस्मि। मौनं तु पुनर्नात्याक्षम्।

करते ? तुमने सर्वश्रेष्ठ जातिमें जन्म पा करके भी ऐसा निकृष्ट कर्म किया कि पक्षीयोनिमें आना पड़ा, तब अब विचार-विमर्श करनेसे क्या लाभ ? पहले ही तुमने अपनी आत्माको विवेकमें क्यों नहीं लगाया ? अब अपने कर्मानुसार प्राप्त योनिके अनुरूप व्यवहार करनेसे तुम्हें कुछ भी दोष नहीं लगेगा । और फिर जिनके लिए भक्ष्य-अभक्ष्यका विधान बनाया गया है, उनको भी आपत्कालमें प्राणरक्षार्थ अभक्ष्य वस्तुके भी भक्षणकी आज्ञा दी गयी है । तब तुम जैसे जीवको वैसा करनेमें क्या हर्ज है ? और फिर मैं तुम्हारे भोजनार्थ कोई भी ऐसी वस्तु नहीं लायी हूँ, जिसमें चाण्डालके आहारकी शंका हो सके । फल तो उनके भी हाथका लिया ही जाता है । लोगोंका कहना है कि पानी भी चाण्डालके बर्तनसे धरतीपर गिरकर पवित्र हो जाता है । तब तुम भूख और प्याससे अपनी आत्माको क्यों कष्ट देते हो ? न तुम मुनियोंके योग्य फल खाते हो और न पानी पीते हो ।' मैं तो चाण्डालजातिके विपरीत उस कन्याके वचन और विचारसे भौंचक रह गया । अन्तमें मैंने उसकी बात मान ली और शापके वशमें होनेके कारण घृणा त्यागकर जीवनके लोभसे तथा भूख-प्यासकी शान्तिके लिए भोजन करना स्वीकार कर लिया । किन्तु मौनव्रत तब भी नहीं छोड़ा ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवमतिक्रामति काले क्रमेण तरुणतामापन्ने मय्येकदा प्रभातायां च यामिन्यामुन्मीलितलोचनोऽद्राक्षमस्मिन्कनकपञ्जरे स्थितमात्मानम्। चाण्डालदारिकामीदृशीं यादृशो देवेनापि दृष्टैव। सकलमेव तत्पक्वणममरपुरसदृशमालोक्य चापगतचाण्डालवसतिसंवेगो विस्मितान्तरात्मा किमेतदिति कुतूहलात्प्रष्टुकामो यावन्न परित्यजाम्येव मौनं तावदेपा मामादाय देवपादमूलमायाता। तत्केयम्। किमर्थमनया चाण्डालतात्मनः ख्यापिता किमर्थं वाहं बद्धः। बद्ध्वा वा किमर्थमिहानीत इत्यत्र वस्तुन्यहमपि देव इवानपगतकुतूहल एव' इति।

राजा तच्छ्रुत्वा समुपजाताभ्यधिककुतूहलस्तदाह्वानाय पुरःस्थितां प्रतीहारीमादिदेश। नचिरादेव तयोपदिश्यमानमार्गा प्रविश्य सा पुरस्तादूर्ध्वस्थितैव राजानमभिभवन्ती धाम्ना प्रागल्भ्येन बभाषे—'भुवनभूषण, रोहिणीपते, ताराण, कादम्बरीलोचनानन्दचन्द्र, सर्वस्त्वयास्य

इस प्रकार कुछ समय बीतनेके बाद जब मैं तरुण हुआ। तब एक दिन प्रभातोन्मुख रात्रिके अन्तिम प्रहरमें आँख खुली तो मैंने अपने आपको इस सोनेके पींजरेमें उपस्थित देखा। उस चाण्डालकन्याको भी मैंने इसी रूपमें देखा, जिस रूपमें आपने देखा है। उस समस्त चाण्डालबस्तीको देवपुरीके सदृश सुन्दर देखकर मेरा चाण्डालके बाड़ेमें रहनेका सारा दुःख दूर हो गया और मैं चकपकाकर सोचने लगा कि यह क्या हो गया? इस विषयमें कुछ पूछताछ करनेकी इच्छासे मैं मौनभंग करनेकी बात सोच ही रहा था कि इतनेमें यह मुझे लेकर श्रीमान्के श्रीचरणोंमें आ उपस्थित हुई। अतएव यह कौन है, इसने अपनेको चाण्डालके रूपमें क्यों प्रदर्शित किया, मुझे किस लिए इसने पकड़वाया और यहाँ क्यों ले आयी? इन रहस्यकी बातोंको जैसे आप नहीं जान सके हैं, वैसे ही मैं भी अनभिज्ञ हूँ।'

तोतेकी यह बात सुनकर राजा शूद्रककी उत्सुकता और भी बढ़ गयी। तदनुसार उसने अपने समक्ष खड़ी प्रतीहारीको उस चाण्डालकन्याको बुला लानेका आदेश दिया। थोड़ी ही देर बाद प्रतीहारीके बताये मार्गसे चलकर वह कन्या राजा शूद्रकके समक्ष आयी। उसके समक्ष कुछ ऊँचे चबूतरेपर खड़ी होकर अपने असाधारण तेजसे राजाके तेजको परास्त करती हुई बड़ी ढिठाईके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दुर्मतेरात्मनश्च पूर्वजन्मवृत्तान्तः श्रुत एव। अत्रापि जन्मनि यथायं निषिद्धोऽपि पित्रा कामरागान्धः पितुराज्ञामुल्लङ्घ्य वधूसमीपं प्रस्थितस्तथाप्यनेन स्वयमेव कथितम्। तदहमस्य दुरात्मनो जननी श्रीस्तथा प्रस्थितमेनं दिव्येन चक्षुषा दृष्ट्वास्य पित्राहं समादिष्टास्मि—'सर्व एव ह्यविनयप्रवृत्तोऽनुतापाद्विना न निवर्तते। तदयं ते तनयः कदाचिदस्या अपि तिर्यग्जातेरधस्तान्निपतति। तद्यावदिदं कर्म न परिसमाप्यते तावदेनं मर्त्यलोक एव बद्ध्वा धारय। यथा चानुतापोऽस्य भवति तथा प्रतिविधेयमस्य' इति। तदस्य विनयायेदं विनिर्मितं मया। सर्वमधुना तत्कर्म परिसमाप्तम्। शापावसानसमयो वर्तते। शापावसानेन च युवयोः सममेव सुखेन भवितव्यमिति त्वत्समीपमानीतो मयाऽयम्। अत्रापि यच्चाण्डालजातिः ख्यापिता तल्लोकसंपर्कपरिहाराय। तदनुभवतां संप्रति द्वावपि सममेव जन्मजराव्याधिमरणादिदुःखबहुले तनू

साथ बोली—'हे भुवनभूषण! हे रोहिणीपते! हे तारारमण! हे कादम्बरीलोचनचन्द्र! इस दुर्बुद्धिका तथा अपने पूर्वजन्मका सब वृत्तान्त आपने सुन ही लिया है। इस जन्ममें जिस प्रकार पिताके रोकनेपर भी उनकी आज्ञाका उल्लंघन करके यह कामान्ध हो अपनी बहूके पास जानेके लिए चल पड़ा था। सो सब बातें इसने स्वयं आपको कह सुनायी हैं। मैं इस दुरात्माकी माता लक्ष्मी हूँ। इसके पिताने दिव्यदृष्टिसे जब इसे उस ओर जाते देखा तो मुझे आदेश देते हुए कहा—'दुराचारके मार्गमें उतरा हुआ प्राणी बिना परितापके पीछे नहीं लौटता। अतः संभव है कि तुम्हारा पुत्र इस पक्षीयोनिसे भी नीचेकी किसी अधम योनिमें जा पड़े। सो तुम यह अनुष्ठानपूर्ण न हो जाय, तबतक इसे पकड़कर मृत्युलोकमें ही रक्खो और कोई ऐसा उपाय करो कि जिससे इसे अपनी करनीपर पछतावा हो।' तदनुसार इसको शिक्षा देनेके लिए मैंने ही यह सब प्रपंच रचा था। अब इसके पिताका वह अनुष्ठान समाप्त हो गया है। इसके शापकी अवधि भी अब समाप्तिपर है। शापका अन्त हो जानेपर आप और यह दोनों सुखपूर्वक एक साथ रह सकेंगे। यह जानकर ही मैं इसे यहाँ ले आयी हूँ। केवल जनसाधारणके सम्पर्कसे बचनेके लिए मैंने अपनी चाण्डालजाति प्रकट की थी। अब आप और यह दोनों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परित्यज्य यथेष्टजनसमागमसुखम्' इत्यभिदधानैव सा झटिति रणद्भूषणारवबधिरितान्तरिक्षमुत्फुल्ललोकलोचनोद्वीक्षिता क्षितेर्गगनमुदपतत्।

अथ राज्ञस्तद्वचनमाकर्ण्य संस्मृतजन्मान्तरस्य 'सखे वैशम्पायनाख्य पुण्डरीक, दिष्ट्या तुल्यकालक्षयसेवावयोः शापावसानं संजातम्' इत्यभिदधत एवाकर्णाकृष्टकार्मुको मकरकेतुरग्रतः परमास्त्रं कादम्बरीं कृत्वा जीवितापहरणाय प्रतिरोधक इव निरुद्धसर्वदिशोऽन्तरा पदं चकार। तत्पदाक्रान्तिनिर्वासितमिव कादम्बरीशरणमुपजगामान्तःकरणम्। तन्मार्गणाभिहतिभीता इव देहमुत्सृज्य निर्जग्मुरजस्रं श्वासमरुतः। तद्बाणपक्षवाताहतमिवाकम्पत तरलं शरीरम्। तच्छरशल्यभराल्लसोत्कण्टकिनी तनुरजायत। तद्विशिखरजोरूषितमिव नयनयुगलमश्रुजलमुत्ससर्ज। पाण्डुतां च वदनलावण्यमयासीत्। तद्धनुर्गुणध्वानाक-

---

साथ-साथ जन्म-जरा-व्याधि और मरण आदि विविध दुःखोंसे परिपूर्ण यह तन त्यागकर अपने-अपने प्रियजनके समागमका आनन्द भोगें।' ऐसा कहती-कहती वह अपने आभूषणोंकी झनकारसे समस्त गगनमण्डलको बधिर करती हुई तुरन्त धरतीपरसे अन्तरिक्षमें उड़ गयी। उस समय सब लोग आँखें फाड़कर बड़े विस्मयके साथ उसकी ओर निहारने लगे।

लक्ष्मीके वचन सुनते ही राजा शूद्रकको अपने पूर्वजन्मका स्मरण हो आया और वह चिल्ला उठा— 'सखे वैशम्पायननामा पुंडरीक! यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि हम दोनोंके शापका अन्त एक साथ हुआ।' जब कि राजा शूद्रक यह कह रहा था, तभी कानतक डोरी खींचकर धनुष चढ़ाये, कादम्बरीरूपी परम अस्त्रको आगे किये हुए प्राण लेनेके लिए उद्यत लुटेरेकी भाँति सभी दिशाओंको घेरता हुआ अपने सभी अंशोंसे कामदेवने उसके अन्तःकरणपर अधिकार कर लिया। उसके अधिकार जमाते ही शूद्रकका अन्तःकरण जैसे निर्वासित होकर एक शरणार्थीकी भाँति कादम्बरीकी शरणमें जा पहुँचा। कामदेवके बाणोंकी मारके डरसे ही जैसे शरीर त्यागकर श्वासकी उष्ण वायु बाहर निकलने लगी। उसके बाणोंमें लगे पंखकी वायुके आघातसे ही जैसे उसका तरल शरीर काँपने लगा। जैसे उन बाणोंमें लगे काँटोंके बिंध जानेसे ही उसका सारा शरीर रोमांचित हो उठा। उसके बाणोंमें गुंफित फूलोंकी रज पड़नेसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

र्णनोद्वेजितमिव हृदयवेदनाकूणितत्रिभागं नयनयुगलमभवत् । अन्तर्ज्व-लिष्यतो मदनदहनस्य धूमापहतमिव वेपमानमधरकिसलयं शोषमगात् । तत्तापविरसमाननान्निष्पीडितं सरागं हृदयमिव ताम्बूलमपतत् । आर्द्र-स्य दारुण इव दह्यमानस्याङ्गेभ्यो निरगमत्स्वेदः । मदनशरकीलितानीव तावतैव क्षणेनाङ्गानि परवशान्यजायन्त । तथा च कादम्बरीं पुरस्कृत्य कुसुमधन्वनायास्यमानस्य तदवयवरूपशोभाविनिर्जितानि तापापहरणक्ष-माण्यपि तस्याकिंचित्कराण्यभवन् । तथाहि । कमलकिसलयानि पाणि-पादेन, कुवलयदलस्रजो दृष्ट्या, मणिदर्पणाः कपोलेन, मृणालानि बाहु-लतिकया, शशाङ्करश्मयो नखमयूखैः, घनसारधूलिः स्मितप्रभया, मुक्ता-दामानि दशनकिरणैः, अमृतकरबिम्बं मुखेन, ज्योत्स्ना लावण्येन, मणि-वेदिकाकुट्टिमानि नितम्बेन । एवं च विहतसर्वबाह्यप्रक्रियस्य हृदयेऽप्य-

---

ही जैसे उसके नेत्रोंसे आँसू बहने लगे और उसका सुन्दर मुख सहसा पीला पड़ गया । जैसे कामदेवके धनुषका टंकोर सुनते ही उसका हृदय उद्विग्न हो उठा और वेदनासे उसके दोनों नेत्रोंका तृतीयांश मुँद गया । जैसे भीतर धधकती कामाग्निके धुएँसे ग्रस्त होकर उसका अधरपल्लव सूख गया । जैसे कामाग्निके तापसे नीरस, निष्पीडित एवं रंगीन पानका बीड़ा उसके हृदयकी भाँति मुँहसे बाहर निकल पड़ा । जलती हुई गीली लकड़ीके पसेवकी भाँति उसके सभी अंगोंसे पसीना बहने लगा । कुछ ही क्षणोंमें उसके सब अंग जैसे कामबाणसे कीलित होकर पराधीन हो गये । अब कादम्बरीकी ओटमें कामदेव उसको इस तरह सताने लगा कि तापनिवारणके लिए उपयोगमें लायी जानेवाली वस्तुयें भी उसे शान्ति प्रदान करनेमें समर्थ नहीं हुईं । क्योंकि कादम्बरीके अगोंके रूपकी शोभाने उन वस्तुओंको पहले ही जीत लिया था । जैसे कमलके पत्तोंको कादम्बरीके हाथों और पाँवोंने, कुवलय-दलकी मालाओंको उसकी आँखोंने, चंद्रकान्तमणिके दर्पणोंको उसके कपोलों-ने, मृणालोंको उसकी भुजलताओंने, चन्द्रकिरणोंको उसके नखोंकी दीप्तिने, कर्पूरचूर्णको उसकी मुसकानके तेजने, मोतियोंके हारोंको उसकी दंतकान्तिने, चंद्रबिम्बको उसके मुखने, चंद्रमाकी चाँदनीको उसके सौन्दर्यने और मणि-निर्मित चबूतरोंको कादम्बरीके नितम्बोंने परास्त कर दिया था । इस प्रकार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुखायमानसकलान्यविनोदस्य तामेवाभिध्यायतस्तामेवोत्प्रेक्षमाणस्य तामेवाभिलषतस्तामेव पश्यतस्तामेवालपतस्तामेवालिङ्गतस्तया सह तिष्ठतस्तां प्रकोपयतस्तामनुनयतस्तस्याः पादयोः पततस्तया सह केलिं कुर्वतस्तां रममाणस्य मुक्तसर्वान्यक्रियस्य दिवाप्यनुन्मीलितलोचनस्य रात्रावप्यनुपजातनिद्रस्य सुहृज्जनमप्यसंभाषयतः कार्योपगतानप्यजानतो गुरुजनमप्यनमस्यतो धर्मक्रियामप्यकुर्वाणस्य सुखादप्यनर्थिनो दुःखादप्यनुद्विजमानस्य मरणादप्यबिभ्यतो गुरुभ्योऽप्यपेतलज्जस्यात्मन्यपि विगलितस्नेहस्य किं बहुना कादम्बरीसमागमेऽप्यनुद्यमस्य केवलमस्य मुहुर्मुहुर्मूर्च्छोपगमच्छलेन जीवितोत्सर्गयोग्यामिव कुर्वतो विह्वलस्तेनापि प्रतिपन्नविविधोपकरणेन गलितनयनपयसाप्युच्छुष्काननेन

शांति प्रदान करनेवाले समस्त बाहरी उपकरण विफल हो गये और हृदयमें भी किसी तरहके विनोदसे शांति नहीं प्राप्त हो सकी। अब वह केवल कादम्बरीका ध्यान करता था। वह उसीकी उत्प्रेक्षा और उसीकी अभिलाषा करता था। उसीको सर्वत्र देखता था। उसीके साथ बात करता था। उसीका आलिंगन करता था। उसीके साथ रहता था। उसीको चिढ़ाता था। उसीकी मनुहार करता था। उसीके पैरों पड़ता था। उसीके साथ खेलता था। उसीके साथ रमण करता था। इस प्रकार उसने अन्य सब काम छोड़ दिये। दिनमें भी वह आँखें नहीं खोलता था। रातको भी उसे नींद नहीं आती थी। मित्रोंसे भी वह बात नहीं करता था। कार्यवश आये हुए लोगोंको भी वह नहीं पहचानता था। गुरुजनोंको भी वह नमस्कार नहीं करता था। धर्म-कर्म भी उसने त्याग दिया था। अब उसे सुखकी अभिलाषा नहीं रह गयी थी। दुःखसे वह उद्विग्न नहीं होता था। अब वह मरनेसे भी नहीं डरता था। गुरुजनोंसे भी नहीं लजाता था। अब उसे अपने आपपर भी स्नेह नहीं रह गया था। यहाँ तक कि अब वह कादम्बरीसे मिलनेका भी प्रयत्न नहीं करता था। बल्कि पुनः पुनः आनेवाली मूर्छाके बहाने केवल देह त्यागनेका अभ्यास कर रहा था। व्याकुल होता हुआ भी वह विविध उपकरण धारण किये हुए था। उसकी आँखोंमें आँसू उमड़े हुए थे, किन्तु मुख सूख गया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुषितवचनावकाशेनापि वैशम्पायनाक्रोशनपरेणानवरतमाचरणाद्विकीर्णचन्दनचर्चेण चरणतलनिवेशितार्द्रारविन्दिनीदलेन करार्पितकर्पूरक्षोददन्तुरतुषारखण्डेन हृदयविनिहितहिमार्द्रहारदण्डेन कपोलतलस्थापितस्फटिकमणिदर्पणेन ललाटतटघटितचन्द्रमणिनांसदेशावस्थापितमृणालनालेन कदलीदलव्यजनवाहिनानर्तिततालवृन्तेन जलार्द्रानिलसंचारिणा कुसुमतल्पकल्पनाकुलेन धारागृहजलयन्त्रप्रवर्तनाहृतार्तिना मणिकुट्टिमक्षालनाग्रहस्तेन च सजलकिञ्जल्कजलजोपचारप्रकरसंभ्रांतेन च शिशिरभूगृहाभ्यन्तरप्रत्यवेक्षणदक्षेण चोद्यानदीर्घिकातटलतागहनमण्डपसेकतापहारिणा च मलयजरसचन्द्रार्द्रजलचन्द्राश्रयावधानदानोद्यतेन चाप्तपरिजनेनोपचर्यमाणस्यापि काष्ठीभूतदेहस्य दाहक्षमो झटित्येवारुरोह परां कोटिं कामानलः। राज्ञ एव तुल्यावस्थस्य महाश्वेतोत्कण्ठया पुण्ड-

---

था। बोलनेका अवसर न पा करके भी वह वैशम्पायनकी निन्दा कर रहा था। उसके परिजन चरणसे लेकर मस्तकतक बराबर चन्दनका लेप करते रहते थे। पाँवके तलवोंपर कमलके गीले पत्ते रखते थे। हाथोंपर कर्पूरचूर्णमिश्रित बरफके टुकड़े रखते थे। उसके हृदयपर बरफकी तरह ठंढा मुक्ताहार रखते थे। उसके कपोलोंपर स्फटिकमणिके दर्पण रखते थे। माथेपर चंद्रकान्तमणिके दर्पण रखते थे। उसके कंधोंपर मृणालके डंठल रखते थे। केलेके पत्तोंसे हवा करते थे। पंखे झलते थे। जलसे ठंढी हवा करते थे। वे परिजन सदा फूलोंकी शय्या बिछानेमें व्यस्त रहते थे। धारागृहके फोहारोंको चलानेका कष्ट उठाते थे। बराबर मणिभूमिको धोया करते थे। आर्द्र केसरयुक्त कमलके फूलोंकी माला बनाते-बनाते थक जाते थे। वे ठंढे तहखानोंकी देख-भाल करनेमें निपुणता प्रगट करते थे। उद्यानोंकी बावलियोंके तटवर्ती गहन लतामण्डपोंमें छिड़काव करके उनकी गर्मी दूर करते थे। चन्दनरस और कर्पूरमिश्रित जल तथा कर्पूरचूर्ण बड़ी सावधानीसे छिड़कते थे। इस प्रकार राजा शूद्रकके आप्त परिजन उसकी भरपूर सेवा कर रहे थे। तथापि उसका शरीर काष्ठसरीखा हो गया और जला देनेको समर्थ कामाग्नि तुरन्त चरम सीमापर जा पहुँची। उधर महाश्वेताके लिए उत्कण्ठित पुंडरीकात्मा वैशम्पायनकी भी वही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रीकात्मनो वैशम्पायनस्य च।

तस्मिन्नेव चान्तरे तत्संधुक्षणायेव प्रवर्तयन्सरसकिसलयलतालास्योपदेशदक्षं दक्षिणानिलम्, आलोलरक्तपल्लवप्रालम्बान्कम्पयन्नशोकशाखिनः, वाञ्छितमुकुलमञ्जरीभरेण नम्रयन्बालसहकारान्, उत्कोरकयन्कुरुबकैः सह बकुलतिलकचम्पकनीपान्, आपीतयन्किंकिरातैः ककुभान्, विकिरन्नतिमुक्तकामोदम्, उद्दामयन्किंशुकवनानि, निरंकुशयन्कामिजनमनांसि, निर्मूलयन्मानम्, अपमार्जयँल्लज्जाम्, अपाकुर्वन्कोपम्, अपनयन्ननुनयव्यवस्थाम्, व्यवस्थापयन्हठचुम्बनालिङ्गनरतस्थितिम्, समुल्लासयन्मकरध्वजरक्तध्वजानिव किंशुकानि, सकलमेव महारजतमयमिव रागमयमिव मदनमयमिवोन्मादमयमिव प्रेममयमिवोत्सवमयमिवौत्सुक्यमयमिव जनयञ्जीवलोकम्, किसलयितसकलकान्तारकाननोपवनतरुरुत्फुल्लचूतद्रुमामोदवासितदशाशान्तरो मधुमद-

---

दशा हो गयी, जो राजा शूद्रककी थी।

उसी समय जैसे उसकी कामाग्निको धधकानेके लिए सरस पल्लवमयी लताओंको नृत्यकला सिखानेमें निपुण दक्षिणी वायु बहने लगी और सुरभिमास अर्थात् वसन्तऋतुका आगमन हो गया। वह वसन्त उस समय चपल पल्लवोंवाले अशोकवृक्षोंको हिलाने लगा। अभिलषित कलियों तथा बौरसे लदे आमके छोटे छोटे वृक्षोंको भारसे झुकाने लगा। कुरबकोंके सङ्ग बकुल, तिलक, चम्पक तथा कदम्बके वृक्षोंको नयी-नयी कलियोंसे लादने लगा। किंकिरातोंके साथ कुसुमवृक्षोंपर पीलापन लाने लगा। माधवी लताका सौरभ बिखरने लगा। पलाशके वनोंको विकसित करने लगा। कामियोंका मन निरंकुश करने लगा। मानियोंका मान भङ्ग करने लगा। लजालुओंका लाज छुड़ाने लगा। कुपितोंका कोप दूर करने लगा। प्रणयकोपसे कुपित नारियोंके लिए की जानेवाली अनुनय-विनयकी व्यवस्थाको भङ्ग करने लगा। बरियाई चुम्बन, आलिङ्गन एवं रतिकी कामनाको जगाने लगा। कामदेवकी लाल पताकाकी भाँति पुष्पित पलाश वृक्षोंको नचाने लगा। संसारके सभी प्राणियोंको वह वसन्त जैसे सुवर्णमय, अनुरागमय, मदनमय, उन्मादमय, प्रेममय, उत्सवमय तथा उत्सुकतामय करने लगा। सभी कान्तारों (शून्यवनों), काननों (मान-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मधुरकोकिलालापदुःखिताध्वगजनश्रुतिरनवरतमकरन्दसीकरासारदुर्दिनोन्मादितसकलजीवलोकहृदयो मदाकुलभ्रमद्भ्रमरझंकारकातरितविरहातुरमनोवृत्तिरात्मसंभवैकोल्लासकारी भरात्परावर्तत सुरभिमासः। येन च कुसुमधन्वनः परमास्त्रेण मधुना पर्याकुलितहृदया कादम्बरी संप्राप्ते भगवतः कामदेवस्य महे महता प्रयत्नेन कथंकथमप्यतिवाहितदिवसा श्यामायमानदशदिशि सायाह्ने स्नात्वा निर्वर्तितकामदेवपूजा तस्य पुरश्चन्द्रापीडमतिसुरभिशीतलैः स्नापयित्वाऽम्भोभिराचरणाद्विलिप्य मृगमदामोदिना हरिचन्दनेन सुरभिकुसुमस्रग्भिरुद्ग्रथितं कुन्तलकलापं कृत्वैककर्णार्पितसत्किसलयाशोकस्तबककर्णपूरं कर्पूरकुसुमप्रचुरैः प्रसाध्याभरणविशेषैर्विस्मृतनिमेषापिबन्तीव भावार्द्रया दृशा सुचिरमालोक्योत्कण्ठानिर्भरा पुनःपुनर्निश्वस्योत्कम्पमाना साध्वसेन स्विन्नसर्वाङ्गी

बहीन जङ्गलों) और उपवनों (नागरिक उद्यानों) के वृक्षोंमें नयी नयी कोपलें लाने लगा। प्रफुल्लित आम्रवृक्षोंकी सुगन्धिको दसों दिशाओंमें फैलाने लगा। नवीन मकरन्द पीकर मतवाले कोकिलोंकी मधुर ध्वनिसे पथिकोंके कान दुखाने लगा। निरंतर मकरन्दकी फूहियाँ बरसाता हुआ वसंत असमयमें दुर्दिन उपस्थित करके सब लोगोंको उन्मादग्रस्त बनाने लगा। मदमत्त होकर भ्रमण करनेवाले भ्रमरोंकी गुञ्जारसे विरहीजनोंकी मनोवृत्तिको कातर बनाने और एकमात्र कामदेवको भरपूर जागृत करने लगा। उधर कामदेवके परम अस्त्रस्वरूप वसन्तके आविर्भावसे मन ही मन अतिशय व्याकुल कादम्बरीने कामदेवका वह महोत्सवके उपस्थित हो जानेपर बड़ी कठिनाईसे जैसे तैसे करके दिन काटा। सायंकालके समय जब दसों दिशायें अन्धकारसे काली पड़ गयीं। तब उसने स्नान करके कामदेवकी पूजा की। तत्पश्चात् अपने समक्ष विद्यमान चन्द्रापीडको अत्यन्त सुगन्धित तथा ठंढे जलसे नहलाया। कस्तूरीमिश्रित चन्दन उसके पैरसे लेकर मस्तकतक सारे शरीरमें लगाया। सुगन्धित पुष्पोंकी मालासे उसका केश गूँथा। सुन्दर पल्लवमय अशोकपत्रके गुच्छोंका कर्णपूर उसके एक कानमें पहनाया। कपूर तथा फूलोंके बने आभूषण पहनाये और निर्निमेष एवं प्रेमभरे भावार्द्र नयनोंसे उसे पीती हुई बड़ी देरतक देखती रही। उत्कण्ठावश बार बार लम्बी साँसें लेनेके कारण वह काँप रही थी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समुत्कण्टकिततनूरुच्छुष्यदधरवदना महाश्वेतावलोकनभयान्मुहुर्मुहुर्दिक्षु विक्षिप्योच्चकितदृष्टिरतिचिरमितोपसृत्य पुनः पुनः स्थित्वाविष्टेव परवती परित्याजिता बलाल्लज्जया सहाबलाजनसहजां भीतिं भगवता भुवनत्रयोन्मादकारिणा मन्मथेनात्मानमपारयन्ती संधारयितुमेकान्ते निःसहा सहसा तमभिपद्य मुकुलितनयनपङ्कजा जीवन्तमिव निर्भरं कण्ठे जग्राह।

चन्द्रापीडस्य तु तेनामृतसेकाह्लादिना कादम्बरीकण्ठग्रहेण सद्यः सुदूरगतमपि कण्ठस्थानं पुनर्जीवितं प्रत्यपद्यत। दिवसक्लमामीलितं कुमुदमिव शरज्ज्योत्स्नानिपातादुच्छ्वसितमाबन्धनाद्धृदयम्। उषःपरामृष्टेन्दीवरमुकुललीलयोदमीलत्कर्णान्तायतं चक्षुः। अम्भोरुहविभ्रमेण वाजृम्भत वदनम्। एवं च सुप्तप्रतिबुद्ध इव प्रत्यापन्नसर्वाङ्गचेष्टश्चन्द्रा-

---

किसी अज्ञात भयवश उसके सब अङ्ग पसीना-पसीना हो गये थे और रोमाञ्च हो आया था। उसका अधर और मुँह सूख गया था। 'कहीं महाश्वेता न देख ले' इस भयके कारण वह चकित नयनोंसे बार-बार चारों ओर निहार लेती थी। उतने ही समयको बहुत देर समझकर वह बार-बार चन्द्रापीडके पास जाती और पगली तथा पराधीनकी नाईं देरतक खड़ी रहती थी। तभी समस्त त्रिलोकीको उन्मत्त बना देनेवाले कामदेवने बरबस उसकी लज्जा दूर कर दी और अबलाजनसुलभ भयको मार भगाया। अतएव अपने आपको नियन्त्रित करने तथा मनोभावोंको रोकनेमें असमर्थ हो और नेत्र मूँदकर कादम्बरी सहसा चन्द्रापीडके गलेसे इस तरह लिपट गयी, जैसे वह जीवित ही हो।

अमृतसिंचन सदृश कादम्बरीके उस कण्ठग्रहणपूर्वक आलिङ्गनसे चन्द्रापीडके दूर अर्थात् राजा शूद्रकके शरीरमें गये हुए प्राण पुनः कण्ठमें लौट आये, जिससे वह जीवित हो गया। जैसे दिनके समय म्लान तथा सम्पुटित कुमुदिनी रातमें चन्द्रमाकी चाँदनी पड़ते ही खिल जाती है, उसी प्रकार उस आलिङ्गनसे चन्द्रापीडके हृदयमें साँस चलने लग गयी। जैसे प्रभातकालमें कमलकी कली प्रफुल्लित हो जाती है। उसी प्रकार कानोंतक फैले हुए उसके नेत्र खुल गये और कमलपुष्पकी भाँति उसका मुख प्रफुल्लित हो उठा। इस प्रकार सोतेसे जागनेके समान वह उठ बैठा और सभी अङ्गोंकी चेष्टायें चालू

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पीडस्तथा कण्ठलग्नां कादम्बरीं चिरविरहदुर्बलाभ्यां दोर्भ्यां गाढतरं कण्ठे गृहीत्वा वाताहतां बालकदलीमिव भयोत्कम्पमानाङ्गयष्टिमुद्गाढतरामीलिताक्षीं वक्षस्येव प्रवेष्टुमीहमानां न मोक्तुं न ग्रहीतुमात्मनापारयन्तीं श्रोत्रहृदयग्राहिणानुभूतपूर्वेण स्वरेणानन्दयन्नवादीत्—'भीरु, परित्यज्यतां भयम्। प्रत्युज्जीवितोऽस्मि तवैवामुना कण्ठग्रहेण। त्वं खल्वमृतसंभवादप्सरसां कुलादुत्पन्ना। किं न स्मरसि तन्मे वचनमिदम्। तत्तेजोमयं वपुः स्वत एवाविनाशि विशेषतोऽमुना कादम्बरीकरस्पर्शेनाप्यायितमिति। तदेतावन्त्येव दिनानि पाणिना ते स्पृश्यमानोऽपि न यत्प्रत्युज्जीवितोऽस्मि तच्छापदोषात्। अद्य स तु मे द्वितीयवारं त्वदर्थमेवानुभूतदुःसहमदनज्वरदाहवेदनापरमदुःखस्य व्यपगतः शापः। परित्यक्ता सा मया त्वद्विरहदुःखदायिनी मानुषी शूद्रकाख्या तनुः। एषापि च तवास्यां रुचिरुत्पन्नेति त्वत्प्रीत्या प्रतिपन्ना प्रतिपालिता च।

हो गयीं। तदनन्तर उसने गलेसे लिपटी कादम्बरीको चिरकालके वियोगसे दुर्बल भुजाओंमें कसकर छातीसे चिपटा लिया। उस समय वायुके झोंकेसे काँपनेवाली कदलीकी भाँति कादम्बरीके समस्त अवयव भयसे काँपने लगे। उसके नेत्र मुँद गये। वह जैसे उसके हृदयमें समा जाना चाहती थी। किन्तु स्वतः वह न उसे छोड़ पाती थी और न पकड़े रहनेमें ही समर्थ हो रही थी। तभी उसके हृदयको आनन्ददायी पूर्वानुभूत स्वरमें पुलकित करता हुआ चंद्रापीड बोला—'भीरु! अब भय त्याग दो। इस तरह तुम्हारे कंठालिङ्गनसे ही मुझे पुनः जीवन मिला है। तुम तो अमृतसे जायमान अप्सराओंके कुलमें उत्पन्न हुई हो। मेरी यह बात तुम्हें स्मरण नहीं है कि 'तेजसे युक्त चन्द्रापीडका शरीर स्वयं अविनाशी है और विशेष करके कादम्बरीके हाथोंका संस्पर्श पाकर यह सदा निर्विकार बना रहेगा।' इतने समयसे निरन्तर तुम्हारे हाथोंका स्पर्श पाकर भी जो यह शरीर जीवित नहीं हुआ, उसमें एकमात्र कारण शाप था। किन्तु आज दुःसह कामज्वरकी पीडासे पीडित मेरा वह शाप दूसरी बार दूर हुआ है। अब मैंने तुम्हारे वियोगका दुःख देनेवाला शूद्रकनामधारी मानवतन त्याग दिया है। मेरे इस शरीरपर ही तुम्हारा प्रेम प्रकटा था। तुम्हारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तदयं लोकश्चन्द्रलोकश्च ते द्वावप्यधुना चरणतलप्रतिबद्धौ। अपि च प्रियसख्या अपि ते महाश्वेतायाः प्रियतमो मयैव सह विगतशापः सञ्जातः।' इत्यभिदधत्येव चन्द्रापीडशरीरान्तरितवपुषि चन्द्रमसि चन्द्रलोकावस्थानलग्नममृतपरिमलमेव केवलमधिकमुद्वहन्, अंगैरन्यतमस्तादृशेनैव वेषेण यादृशेनैव महाश्वेतौत्कण्ठ्योपरतस्तथैव कण्ठेनैकावलीं धारयन्, तथैवाकल्पनिःसहैरंगैस्तथैवापाण्डुक्षामकपोलवाहिना मुखेनाम्बरतलादवतरन्नदृश्यत कपिञ्जलकरावलम्बी पुण्डरीकः।

दृष्ट्वा च तं दूरत एवोन्मुक्तचन्द्रापीडवक्षःस्थला कादम्बरी स्वयमेव धावित्वा दत्तकण्ठग्रहमहाश्वेतां पुण्डरीकागमनमहोत्सवेन यावन्न वर्धयत्येव तावदवतीर्य पुण्डरीकः परमोपकारिणे चन्द्रापीडवपुषे शशाङ्कायाढौकत। चन्द्रापीडस्तु तं कण्ठे गृहीत्वाऽब्रवीत्—'सखे पुण्डरीक, यद्यपि प्राग्जन्मसम्बन्धाज्जामातासि तथाप्यनन्तरजन्माहृतसुहृत्स्नेह-

---

प्रेमवश ही मैंने इस तनको भलीभाँति रक्खा और सम्हाला था। अब यह लोक और चंद्रलोक दोनों तुम्हारे चरणोंके नीचे हैं। मेरे ही साथ तुम्हारी प्रियसखी महाश्वेताके प्रियतम पुण्डरीकके भी शापका अन्त हो गया है।' चंद्रापीडके रूपमें विद्यमान साक्षात् चन्द्रदेवके ऐसा कहते ही चिरकाल तक चन्द्रलोकमें रहनेके कारण अङ्गमें संलग्न अमृतकी सुगन्धि धारण किये, जिस वेशमें महाश्वेताके समक्ष मरा था, उसी वेशको धारण किये और पहलेकी ही तरह गलेमें एकलड़ी माला पहने, उसी प्रकार दुर्बल तथा शिथिल अङ्गों युक्त एवं वैसे ही पीले तथा मांसहीन कपोलसम्पन्न पुण्डरीक कपिञ्जलका हाथ थाम्हे गगनमण्डलसे उतरता दिखलायी पड़ा।

इस प्रकार दूरसे पुंडरीकको देखा, तैसे ही कादम्बरी चंद्रापीडका वक्षःस्थल त्यागकर दौड़ पड़ी। वह महाश्वेताको गले लगाकर पुंडरीकके आगमनमहोत्सवकी बधाई भी नहीं दे पायी थी, तभी पुंडरीक चंद्रापीडवपुधारी चंद्रमाके समीप पहुँच गया। चन्द्रापीड उसे गले लगाकर बोला—'मित्र पुण्डरीक! पूर्वजन्मके सम्बन्धसे यद्यपि तुम मेरे जामाता हो। तथापि इसके पहलेवाले जन्ममें हमारी-तुम्हारी मैत्रीका जो सम्बन्ध स्थापित हुआ था, उसीके अनुसार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सद्भावेनैव मया सह वर्तितव्यं भवता' इत्येवं च वदत्येव चन्द्रापीडे चित्ररथहंसौ दिष्ट्या वर्धयितुं केयूरको हेमकूटमगमत्। मदलेखापि धावमाना निर्गत्य मृत्युंजयजपव्यग्रस्य तारापीडस्य विलासवत्याश्च पादयोः पतित्वा 'देव, देव्या सह दिष्ट्या वर्धसे। प्रत्युज्जीवितो युवराजः समं वैशम्पायनेन, इत्यानन्दनिर्भरमुच्चैर्जगाद। राजा तु तच्छ्रुत्वा शरीरसंस्कारविरहोद्गताविरलदीर्घपरुषपलितलोमशप्रकोष्ठाभ्यां दोर्भ्यां परिष्वज्य तां तदनु हर्षपरवशो विलासवतीं कण्ठेऽवलम्ब्य जराऽङ्गवलिपरिशिथिलितमूलेन बाहुनोत्क्षिप्तोत्तरीयांशुकाञ्चलः स्वयमेवाशिक्षितलयविसंष्ठुलैः पदैर्नृत्यन्निवोत्फुल्लवदननरपतिसहस्रपरिवृतोऽम्भोजाकर इव मलयमारुतप्रेङ्खोलनाविवर्तितो मदलेखां 'क्वासौ

मित्रस्नेहके ही सद्भावको निभाते हुए सब व्यवहार करना।' चंद्रापीडके ऐसा कहते ही महाराज चित्ररथ तथा हंसको बधाई देनेके लिए केयूरक हेमकूटकी ओर चल पड़ा। उसी समय मदलेखा भी भागकर आश्रमके बाहर गयी और मृत्युञ्जयका जप करनेमें व्यस्त महाराज तारापीड तथा महारानी विलासवतीके चरणोंपर गिरकर अत्यधिक आनन्दके साथ चिल्लाती हुई कहने लगी—'महाराज! आपको तथा महारानीको बधाई है। युवराज चन्द्रापीड अपने मित्र वैशम्पायनके साथ पुनर्जीवित हो गये हैं।' यह समाचार सुनकर 'वह कहाँ है, वह कहाँ है?' यह बार बार कहते तथा मारे हर्षके आत्मविभोर होकर अपने ही समान हर्षित मंत्री शुकनासको गलेसे आलिङ्गन करके वे तुरन्त उधर ही चल पड़े। चिरकाल तक शरीरकी सेवा न होनेसे उनके बाल सफेद, घने, लम्बे और रूखे हो गये थे। वे लटककर प्रकोष्ठ तक आ गये थे। उन्हीं लोमयुक्त भुजाओंसे उन्होंने पहले वह शुभ समाचार लानेवाली मदलेखाका और उसके बाद महारानी विलासवतीका आलिंगन किया। वृद्धावस्थाकी झुर्रियोंके कारण शिथिलमूल भुजाओंसे उन्होंने दुपट्टेके अंचलको उठा लिया और जैसे लयकी शिक्षा न मिलनेके कारण अटपटे ढङ्गसे पड़ते पैरों द्वारा नाचते हुए महाराज तारापीड प्रफुल्लित मुखवाले सहस्रों राजाओंसे घिरकर कमलवनकी भाँति सुशोभित हो रहे थे। मलयपवनके झोंकेसे उल्लसित होते हुए राजा तारापीड मदलेखासे यह पूछते हुए कि 'चंद्रापीड कहाँ है—कहाँ है?' और हर्षातिरेकसे शुक-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्वासौ' इति पुनः पुनः पृच्छन्पुनः पुनर्निर्विशेषहर्षवृत्ति शुकनासं कण्ठे संभावयंस्तत्रैवागच्छत्। दृष्ट्वा च तथा पुण्डरीककण्ठे लग्नं चन्द्रापीडमानन्दनिर्भरः शुकनासमवादीत्—'दिष्ट्या मया नैकाकिना तनयप्रत्युज्जीवनोत्सवसुखमनुभूतम्' इति। चन्द्रापीडस्तु तथा हर्षपरवशं पितरमालोक्य ससंभ्रमोन्मुक्तपुण्डरीकः, पुर एव पृथ्वीतलनिवेशितशिराश्चरणयोरपतत्। अथ सत्वरोपसृतस्तं तथा प्रणतमुन्नमय्य तारापीडोऽभ्यधात्—'पुत्र, यद्यपि पिताहं तव शापदोषात्स्वपुण्यैर्वा संजातः, तथापि जगद्वन्दनीयो लोकपालस्त्वम्। अपि च मय्यपि नमस्यो योंऽशः सोऽपि मया त्वय्येव संक्रामितः। तदुभयथापि त्वमेव नमस्कार्यः' इत्यभिदधदेव ससं राजपुत्रलोकसहस्रैः प्रतीपमस्य पादयोरपतत्। विलासवती तु तथा पित्रा प्रणते तस्मिन्परितोषेण स्वाङ्गेष्विवासंमान्ती तं पुनः शिरसि पुनर्ललाटे पुनश्च कपोलयाश्चुम्बित्वा गाढतरं सुचिरमालिलिङ्ग। उन्मुक्तश्च मात्रोपसृत्य पुनः पुनः कृतनमस्कारः शुकनासं प्रण-

---

नासको गले लगाये वहाँ जा पहुँचे। कादम्बरीकी कुटियामें पहुँचकर उन्होंने चंद्रापीडको पुण्डरीकके गलेसे लिपटा हुआ देखा तो अत्यंत आनन्दित होकर उन्होंने शुकनाससे कहा—'आर्य! यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि पुत्रके पुनर्जीवित होनेके महामहोत्सवका आनंद मैंने अकेले नहीं लूटा।' इस प्रकार हर्षविभोर पिताजीको देखते ही चंद्रापीड हड़बड़ीमें पुण्डरीकको छोड़कर उठ खड़ा हुआ और पहले ही के समान धरतीपर माथा रखकर उनके चरणोंपर गिर पड़ा। तब तत्काल आगे बढ़ तथा प्रणाम करते हुए पुत्रको उठाकर राजातारापीड बोले- 'पुत्र! शापदोषसे या कि अपने पुण्यसे मैं तुम्हारा पिता हूँ। तथापि वास्तवमें तुम जगद्वन्द्य लोकपाल हो। अब तो मुझमे जो वन्दनीय अंश था, उसे भी मैंने तुम्हारे तनमें सक्रमित कर दिया है। अतएव अब सब तरहसे तुम्हीं सबके नमस्करणीय हो। ऐसा कहते हुए राजा तारापीडने सभी राजपुत्रोंके साथ चन्द्रापीडके पैरों पड़कर प्रणाम किया। महारानी विलासवती इस प्रकार पिता द्वारा पुत्रको प्रणम्यमान होते देख अतिशय हर्षके कारण अपने अङ्गमें नहीं समाती हुई चंद्रापीडके मस्तक, ललाट तथा कपोलोंको चूमकर बड़ी देरतक गाढ़ आलिङ्गन किये रही। मातासे छुटकारा पाया तो चंद्रापीडने मंत्री शुकनासके पास जाकर उससे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाम। आशीःसहस्राभिवर्धितश्च तेनात्मनोपसृत्य यथानुक्रमं पित्रोः शुकनासस्य मनोरमायाश्चैष वो वैशम्पायन इति पुण्डरीकं विनयविलक्षावनम्रवदनमदर्शयत्।

तस्मिन्नेव च प्रस्तावे समुपसृत्य कपिञ्जलः शुकनासमवादीत्—'एवं संदिष्टमार्यस्य भगवता श्वेतकेतुना। अयं खलु पुण्डरीकः संवर्धित एव केवलं मया। आत्मजः पुनस्तव। अस्यापि भवत्स्वेव लग्नः स्नेहः। तद्वैशम्पायन एवायमित्येवमवगत्याविनयेभ्यो निवारणीयः। परोऽयमिति कृत्वा नोपेक्षणीयः। यच्चापगतशापोऽप्यात्मसमीपं नानीतस्तत्तवैवायम्' इति। अन्यच्चात्मानमस्मिन्नाचन्द्रकालीनायुषि स्थापयित्वा कृतार्थः। संप्रत्यस्माद्दिव्यलोकादप्युपरिष्टाद्गन्तुमुद्यतं मे सत्त्वाख्यं ज्योतिः' इति। शुकनासस्तु विनयावनतं पुण्डरीकं पाणिनांसेऽवलम्ब्य कपिञ्जलं प्रत्यवादीत्—'कपिञ्जल, सकलजगदाशयज्ञेन सता भगवता किमित्यादिष्टम्। सर्वथा स्नेहस्यायमसंतोषः' इति। एवंविधैश्च पूर्व-

---

नमस्कृत होनेके बाद स्वयं भी प्रणाम किया। शुकनासने चन्द्रापीडको अनेक प्रकारका आशीर्वाद दिया। तदनतर पुण्डरीकके साथ आगे बढ़कर चन्द्रापीडने कहा—'यह आप लोगोंका वैशम्पायन है।' यह कहकर विनयके कारण लज्जायुक्त और विनम्र मुखमण्डलवाले पुण्डरीकको शुकनास तथा मनोरमाको दिखलाया।

उसी समय कपिंजलने आकर महामन्त्री शुकनाससे कहा—'भगवान् श्वेतकेतुने आपके लिए यह सन्देश भेजा है कि मैंने पुण्डरीकका केवल पालन-पोषण किया है, किन्तु पुत्र तो आपका ही है। उसका भी आप लोगोंपर स्नेह है। अतएव आप वैशम्पायन ही मानते हुए उसे कुपथपर जानेसे रोकिए। पराया समझकर कभी भी उसकी उपेक्षा न करिएगा। शाप निवृत्त हो जानेपर भी उसे जो मैं अपने यहाँ नहीं लाया, उसका एकमात्र कारण यही है कि वह आपका पुत्र है। और फिर चन्द्रमाकी भाँति लम्बी आयुवाले उस पुत्रमें अपनी आत्माको स्थापित करके मैं अपनेको कृतार्थ मानता हूँ। अब मेरी सत्त्व नामकी ज्योति इस दिव्यलोकसे भी ऊपर जानेके लिए कटिबद्ध है।' तब विनयावनत पुंडरीकके कन्धेपर हाथ रखकर शुकनासने कहा—'कपिञ्जल! समस्त जगत्के आशयको जानते हुए भी भगवान् श्वेतकेतुने ऐसा सन्देश क्यों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जन्मवृत्तान्तानुस्मरणालापैः परस्परावलोकनमुखोत्फुल्ललोचनानां सर्वेषामेव तेषामचेतितैव सा क्षणदा प्रयाता। प्रातरेव च सकलगन्धर्वलोकानुगतौ सहमदिरागौरीभ्यां चित्ररथहंसौ गन्धर्वराजावपि तत्रैवाजग्मतुः। आगतयोश्च तयोर्लज्जितात्मजापगमसमुदितहृदययोर्जामातृदर्शनसमुत्फुल्लनयनयोस्तारापीडशुकनासाभ्यां सहानुभूतसम्बन्धकोचितसंवादकयोः सहस्रगुण इव महोत्सवः प्रावर्तत।

अथ प्रवर्तमान एव तस्मिंश्चित्ररथस्तारापीडमवादीत्—'विद्यमाने स्वभवने किमर्थमयमरण्ये महोत्सवः क्रियते। अपि च यद्यप्यस्माकमयमेव परस्पराभिरुचिनिष्पन्नो धर्म्यो विवाहस्तथापि लोकसंव्यवहारोऽनुवर्तनीय एव। तद्गम्यतां तावदस्मदीयमवस्थानम्। ततः स्वभूमिं चन्द्रलोकं वा गमिष्यथ।' तारापीडस्तु तं प्रत्यवादीत्—'गन्धर्वराज, यत्रैव निरतिशयं संपत्सुखं तदेव वनमपि भवनम्। तदीदृशं क्वापरत्र

भेजा? पुण्डरीकपर सदा मेरा पूर्ण और स्थायी स्नेह रहेगा।' इस प्रकार पूर्वजन्मके संस्मरणमय वार्तालापके प्रसंगमें परस्पर एक-दूसरेके दर्शनका आनन्द प्राप्त होनेसे सभी लोगोंके नेत्र विकसित हो गये और उन्हें ज्ञात ही नहीं हो पाया कि रात्रि कब बीत गयी। सवेरा होते ही सब गंधर्वोंके साथ मदिरा और गौरीको लिये हुए राजा चित्ररथ तथा हंस भी वहीं आ पहुँचे। आते ही उन्होंने अपनी लज्जावती पुत्रियोंको देखकर अपूर्व हर्ष प्राप्त किया। तदनन्तर अपने-अपने जामाताओंको देखा तो प्रसन्नतासे उनका चेहरा तथा नेत्र खिल उठे। उसके बाद तारापीड तथा शुकनासके साथ दृढ़ सम्बन्धके अनुरूप वार्तालापसे उनका वह महोत्सव हजारोंगुना अधिक बढ़ गया।

जब कि महोत्सवका क्रम चालू ही था, उसी बीच राजा चित्ररथने महाराज तारापीडसे कहा—'अपना महल रहते हुए भी आप इस वनमें विवाहका महोत्सव क्यों कर रहे हैं? यद्यपि हमारे कुलमें विवाह धर्मसंगत आधार परस्परकी रुचिपर ही निर्भर करता है। फिर भी लौकिक व्यवहारका तो आदर होना ही चाहिए। अतएव अब आप लोग मेरे स्थानको चलिए। उसके बाद अपनी राजधानी अथवा चन्द्रलोक जहाँ जी चाहे, वहाँ चले जाइएगा। यह सुनकर तारापीडने कहा—'गंधर्वराज! जहाँ अधिकाधिक सम्पत्तिका सुख मिले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संपत्सुखं प्राप्तम्। अन्यच्च संप्रति सर्वगृहाण्येव मया जामातरि ते संक्रामितानि। तद्वयस्य, वधूसमेतं तमेवादाय गम्यतां गृहसुखानुभवनाय' इति। चित्ररथस्तु तथाभिहितः 'राजर्षे, यथा ते रोचते' इत्युक्त्वा चन्द्रापीडमादाय हेमकूटमगात्। गत्वा च चित्ररथः कादम्बर्या सह समग्रमत्र स्वं राज्यं चन्द्रापीडाय न्यवेदयत्। पुण्डरीकायापि समं महाश्वेतया निजपदं हंसः। तौ तु हृदयरुचितवधूलाभमात्रकेणैव कृतार्थौ न किंचिदप्यपरं प्रत्यपद्येताम्।

अन्यदा जन्माभिवाञ्छितहृदयवल्लभलाभमुदितसर्वस्वजनमध्योपगमननिर्वृतापि कादम्बरी बाष्पोत्तरललोचना विषण्णमुखी वासभवनागतं चन्द्रापीडमूर्तिं चन्द्रमसमप्राक्षीत्—'आर्यपुत्र, सर्वे खलु वयं मृताः सन्तः प्रत्युज्जीविताः परस्परं संघटिताश्च। सा पुनर्वराकी पत्रलेखास्माकं मध्ये न दृश्यते। न विद्मः किं तस्याः केवलाया वृत्तम्' इति।

तो वह स्थान वन होनेपर भी महल बन जाता है। तब ऐसा सम्पत्तिमय सुख मुझे अन्यत्र कहाँ मिलेगा? इसके अतिरिक्त एक बात और है। वह यह कि मैंने अब अपने सभी भवन आपके जामाता चन्द्रापीडको दे दिये हैं। सो हे मित्र! आप अब बहूके साथ उसको लेकर गार्हस्थ्य सुखका अनुभव करनेके लिए अपने महलोंको जाइए।' उनके ऐसा कहनेपर चित्ररथने कहा—'राजर्षे! जैसी आपकी इच्छा' यह कह और चंद्रापीडको लेकर वह हेमकूट चला गया। वहाँ पहुँचकर उसने पुत्री कादम्बरीके साथ अपना सारा राज्य चंद्रापीडको सौंप दिया। इसी प्रकार हंसने भी अपनी पुत्री महाश्वेताके साथ अपना सारा राज्य पुंडरीकको अर्पण कर दिया, किन्तु चन्द्रापीड तथा पुंडरीकने मनचाही पत्नियोंके लाभसे ही अपनेको कृतार्थ मानकर और कुछ भी नहीं अंगीकार किया।

जन्मसे अभिलषित हृदयवल्लभके लाभसे प्रमुदित तथा स्वजनोंके बीच पहुँचकर सर्वथा सुखिनी होती हुई भी कादम्बरीने एक दिन नेत्रोंमें आँसू भर और दीनमुखी होकर चंद्रापीडरूपधारी चंद्रदेवसे कहा—'आर्यपुत्र! हम सब लोग एक बार मरकर फिर जी उठे और परस्पर मिल भी गये। किंतु वह पत्रलेखा बेचारी हमलोगोंके बीचमें नहीं दिखायी देती। नहीं मालूम कि उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रापीडमूर्तिः प्रीतान्तरात्मा तां प्रत्यवादीत्—'प्रिये, कुतोऽत्र सा। सा हि खलु मद्दुःखदुःखिनी रोहिणी शप्तं मामुपश्रुत्य 'कथं त्वमेकाकी मर्त्यलोकनिवासदुःखमनुभवसि' इत्यभिधाय निवार्यमाणापि मया प्रथमतरमेव मच्चरणपरिचर्यायै मर्त्यलोके जन्माग्रहीत्। इतश्च जन्मान्तरं गच्छता मया मदुपरमसमुन्मुक्तशरीरा पुनरपि मर्त्यलोकमवतरन्ती बलादावर्ज्यात्मलोकं विसर्जिता तत्र पुनस्तां द्रक्ष्यसि' इति। कादम्बरी तु तच्छ्रुत्वा रोहिण्यास्तदोदारतया स्नेहशीलतया महानुभावतया सपतिव्रततया पेशलतया च विस्मितहृदया परं लज्जिता न किंचिदपि वक्तुं शशाक।

अत्रान्तरे जन्मद्वयाकांक्षितं कालं प्रभोश्चन्द्रमसः कादम्बरीसंभोगसुखमिवोपपादयितुमपससार वासरः। अनुरागपताकेवोल्लसदपरसंध्यावधूत्रपावरणायैव वितस्तार वा रजनी। चन्द्रोदयाभिरामं च समग्रमेव जगदभवत्। एवं च भरेणावतीर्णायां रजन्यां चन्द्रापीडश्चि-

---

अकेली कन्यापर क्या बीती।' यह सुना तो बहुत प्रसन्न होकर चंद्रापीडरूपी चंद्रमाने कहा—'प्रिये! वह यहाँ कहाँ है? वह तो मेरे दुःखसे दुःखिनी रोहिणी थी। जब उसने मेरे शापकी खबर सुनी तो मुझसे कहा—'आप अकेले मृत्युलोकमें रहनेका दुःख कैसे भोगिएगा?' यह कह और मेरे रोकनेपर भी मुझसे पहले ही उसने मेरी चरणसेवाके निमित्त मृत्युलोकमें जन्म ले लिया था। जब फिर मेरा जन्मान्तर हुआ तो पूर्वजन्ममें मेरी मृत्युके साथ ही उसने भी शरीर त्याग दिया और पुनः मृत्युलोकमें जन्म लेनेवाली थी। किंतु मैंने उसे ऐसा करनेसे रोककर सीधे चंद्रलोक भेज दिया। वहाँ पहुँचकर तुम उसे देखोगी।' यह सुनकर कादम्बरी रोहिणीकी उदारता, स्नेहशीलता, महानुभावता, पातिव्रत्य तथा हृद्यताको सोचकर मन ही मन बहुत विस्मित तथा लज्जित होकर कुछ भी नहीं कह सकी।

इसी समय जैसे दो जन्मोंसे अभिलषित प्रभु चंद्रमाको कादम्बरीके समागमका सुख देनेके लिए दिवस भाग गया। अब प्रकट होती हुई पश्चिमसंध्यारूपिणी वधूकी लज्जाको ढाँकनेके लिए अनुरागकी पताकाके सदृश रात्रि विस्तृत होने लगी। चंद्रमाके प्रकाशसे सारा संसार बड़ा सुन्दर हो गया। इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राभिलषितमुन्मीलितनयनकुवलयमुत्त्रस्ततनीवीप्रसृतकरनिवारणानुबन्ध-मनुभूतप्रत्यालिङ्गनसुखमभिप्रार्थितसुरतपरिसमाप्तित्रपासुभगं कादम्बरी-प्रथमसुरतसुखमनुभूयैकदिवसमिव दशरात्रं स्थित्वा परिपुष्टहृदयाभ्यां श्वशुराभ्यां विसर्जितः पितुः पादमूलमाजगाम । आगत्य च समकाल-मेवानुभूतक्लेशं राजलोकमात्मसमं कृत्वा समारोपितराज्यभारः पुण्ड-रीके परित्यक्तसर्वस्वकार्ययोः पित्रोः पादावनुचरन्, कदाचिदत्यद्भुतो-त्फुल्लनयननैगमजनावलोकितो जन्मभूमिस्नेहादुज्जयिन्याम्, कदाचि-द्गन्धर्वराजगौरवेणानुपमरमणीयतममहिम्नि हेमकूटे, कदाचिदमृतपरि-मलाधिवाससुरभिशिशिरसर्वप्रदेशहारिणि रोहिणीबहुमाननेन चन्द्र-लोके, कदाचिदहर्निशोत्फुल्लसहस्रपत्रनिवहोदकवाहिनि पुण्डरीकप्रीत्या लक्ष्मीनिवाससरसि, कादम्बरीरुच्या च सर्वत्रैवापरेष्वपि रम्यतरेषु

प्रकार जब काफी रात बीत गयी, तब चन्द्रापीडने चिराकांक्षित अभिलाषा पूर्ण करनेके लिए कादम्बरीकी साड़ीकी गाँठ ढीली करनेके लिए हाथ बढ़ाया और उस हाथको रोकती हुई कादम्बरीका चिरवांछित, विकसित नेत्रकमलयुक्त, 'प्रत्या-लिंगनजनित सुखसे सम्पन्न एवं रतिकी समाप्ति चाहनेकी लज्जासे रमणीक प्रथम रतिसुखका अनुभव किया। इस प्रकार दस दिनोंतक वहाँ रहकर उन्हें एक दिनकी भाँति समझता हुआ चन्द्रापीड हृदयसे सर्वथा संतुष्ट सास-ससुरसे विदा लेकर अपने पिताके पास लौट आया। वहाँ लौटकर उसने अपने साथ दुःख भोगने-वाले राजाओंको भी अपने ही समान सुखी किया। तदनन्तर राज्यका सारा भार पुंडरीकको सौंपकर चंद्रापीड कभी सर्वस्वत्यागी माता-पिताकी चरणसेवा करता था। कभी जन्मभूमिके स्नेहवश उज्जयिनीमें रहता था तो अतिशय प्रफुल्लित नयनोंवाले नागरिक उसका दर्शन करते थे। कभी गन्धर्वराज चित्ररथके आग्रहसे अनुपम तथा परम रम्य हेमकूट नगरमें रहता था। कभी रोहिणीके अत्यधिक आदरके कारण अमृतकी सुगन्धिसे सुगन्धित एवं शीतल प्रदेशोंसे मनोहारी चंद्रलोकमें रहता था। कभी पुंडरीकके प्रेमवश दिन-रात प्रफुल्लित कमलोंसे सम्पन्न जलयुक्त लक्ष्मीके निवासस्थानरूपी सरोवरमें रहता था। इस प्रकार कादम्बरीकी रुचिके अनुसार अन्यान्य बहुतेरे रमणीक स्थानोंमें उसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेषु तेषु स्थानेषु तया सह जन्मद्वयाकांक्षयैवापरिसमाप्तान्यपुनरुक्तानि च तानि तानि न केवलं चन्द्रमाः कादम्बर्या सह कादम्बरी महाश्वेतया सह महाश्वेता तु पुण्डरीकेण सह पुण्डरीकोऽपि चन्द्रमसा सह परस्परावियोगेन सर्व एव सर्वकालं सुखान्यनुभवन्तः परां कोटिमानन्दस्याध्यगच्छन्।

इति श्रीबाणभट्टतनयपुलिनभट्टकृतकादम्बर्या उत्तरो भागः समाप्तः।

साथ विहार करते हुए केवल दो जन्मोंकी आकांक्षा ही पूर्ण नहीं हो रही थी, बल्कि नये नये सुखभोग भी प्राप्त होते जाते थे। केवल चन्द्रमा ही कादम्बरीके साथ नहीं, अपितु कादम्बरी महाश्वेताके साथ, महाश्वेता पुण्डरीकके साथ पुण्डरीक चन्द्रमाके साथ ये सब सदा परस्पर अवियुक्त रहते और सब समय सभी प्रकारके सुखोंका भोग करते हुए आनन्दकी चरम सीमाको पार कर गये।

इति श्रीपाण्डेयरामतेजशास्त्रिकृतायां 'अर्चना'ऽभिधायां
हिन्दीटीकायां कादम्बर्या उत्तरो भागः समाप्तः।

समाप्तोऽयं ग्रन्थः।

श्रीकृष्णार्पणमस्तु

मुद्रक—सोमारूराम गौरीशंकर प्रेस मध्यमेश्वर काशी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हमारे कतिपय स्वच्छ, सुन्दर और सस्ते-

संस्कृत-महाग्रन्थ

963

श्रीमद्भागवत 'सामयिकी' भाषाटीका पत्राकार—इस महाग्रन्थकी विख्यात टीका, अच्छी छपाई-सफाई, उत्कृष्ट कोटिका ग्लेज कागज तथा संशोधन बेजोड़ है। इसीसे अल्प समयमें ही इसकी कई हजार प्रतियाँ तिक गयी हैं। मूल्य २४)

श्रीमद्भागवत 'सामयिकी' भाषा टीका सजिल्द—गृहस्थ पाठकों तथा वाचनालयोंके लिए यह संस्करण बहुत उपयोगी है। मूल्य १५)

श्रीमद्भागवत 'श्रीधरी' संस्कृत टीका पत्राकार—बहुत अच्छे कागजपर नये टाइपमें छपा यह बड़ा ही सुन्दर संस्करण है। मूल्य २४)

श्रीमद्भागवत 'चूर्णिका' संस्कृत टीका पत्राकार—भागवतका सप्ताह बाँचनेके लिए यह बहुत उपयोगी टीका है। मूल्य २४)

श्रीमद्भागवत 'दशम स्कन्ध' भाषा टीका पत्राकार—भगवान कृष्णका अनोखा चरित्र इसमें वर्णित है। मूल्य ८)

श्रीमद्देवीभागवत भाषा टीका पत्राकार—कागज, छपाई तथा टीका सभी दृष्टियोंसे यह सर्वोत्तम संस्करण है। मूल्य ३२)

श्रीमद्देवीभागवत मूल—बहुत ही बढ़िया सजिल्द संस्करण। मूल्य ८)

श्रीहरिवंशपुराण भाषा टीका पत्राकार—अभी हालमें यह दुर्लभ महाग्रंथ छपकर तैयार हुआ है। सभी सहृदय विद्वान् इसपर मुग्ध हैं। मूल्य २८)

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण 'रामाभिनन्दिनी' भाषा टीका—सरल और सरस टीका, बढ़िया ग्लेज कागज, अच्छी छपाई, सुन्दर तथा मजबूत जिल्द इसके प्रमुख आकर्षण हैं। मूल्य २४)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण 'सुन्दरकांड' भाषा टीका—संसारके अगणित मानव इसका पुरश्चरणात्मक पाठ करके अपनी कामनायें पूर्ण कर चुके हैं। मूल्य ३)

आनन्दरामायण 'ज्योत्स्ना' भाषा टीका—बहुत दिनोंसे अप्राप्य इस महाग्रन्थको हमने बहुत ही सुन्दर रूपमें तैयार किया है। मूल्य १६)

श्रीशिवमहापुराण मूल गुटका—बहुत ही अच्छे आकार-प्रकारमें यह सजिल्द संस्करण अभी हालमें छपकर तैयार हुआ है। मूल्य १०)

श्रीगरुड़महापुराण (बड़ा)—इधर बहुत वर्षोंसे यह ग्रन्थ नहीं मिलता था। किन्तु अब बहुत अच्छे स्वरूपमें छपकर तैयार है। मूल्य ४)

बृहत्स्तोत्ररत्नाकर बड़ा—(स्तोत्रसंख्या ४००) अब तक इससे अच्छा संस्करण कभी कहीं नहीं निकला। मूल्य ३)

भैषज्यरत्नावली 'सुचूर्णिका' मूल—अत्युत्तम संस्करण मूल्य ४)

शार्ङ्गधरसंहिता भा० टी०—आकर्षक छपाई-सफाई, उत्तम टीका ग्लेज कागज और पक्की जिल्द। मूल्य ४)

रसेन्द्रसारसंग्रह भा० टी०—यह ग्रन्थ अनेक विद्यालयोंमें पाठ्यपुस्तक-रूपमें नियत है। अपनी विशेषताके कारण इसकी हजारों प्रतियाँ बिक चुकी हैं मूल्य ३)

माधवनिदान भा० टी०—अल्पकालमें ही यह ग्रन्थ बहुत लोकप्रिय हो गया है। मूल्य २॥)

भावप्रकाशनिघण्टु—(सटिप्पण) मूल्य १॥)

नाड़ीज्ञानदर्पण भा० टी०—इसमें सभी रोगोंकी जानकारीके लिए नाड़ीपरीक्षाकी बहुतेरी विधियाँ बतायी गयी है। मूल्य ॥)

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी 'सुगन्धा'—'सुगन्धा' टिप्पणीके साथ यह ग्रंथ बड़े ही आकर्षक रूपमें निकाला गया है। मूल्य ३)

श्रीशुक्लयजुर्वेदमाध्यन्दिनीयमंत्रसंहिता—इसमें शुक्लयजुर्वेदके नित्योपयोगी मंत्रोंका संग्रह है। मूल्य १)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१६३

श्रीशुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायी (रुद्री) मूल्य ।=)

उपनयनमार्तण्ड (उपनयनपद्धति) भाषा टीका—सुन्दर शुद्ध पाठ, अच्छी टीका तथा आकर्षक रूप ही इसकी विशेषतायें हैं। मूल्य ।।।)

श्रीदुर्गासप्तशती 'हैमवती' भाषा टीका—इसकी टीका बड़ी ही सुन्दर है। मूल्य १।।)

पंचतन्त्र 'रामा' भाषा टीका—श्रीविष्णु शर्मा विरचित यह ग्रन्थ बहुत सरल हिन्दी टीकाके साथ अच्छे ग्लेज कागजपर छापा गया है। मूल्य ४)

हितोपदेश भाषा टीका—इसकी टीका, आकर्षक आवरण, सुन्दर छपाई और ग्लेज कागज ही इसके कई संस्करण होनेमें सहायक हुए हैं। मूल्य १।।)

गरुड़पुराण (प्रेतकल्प) भाषा टीका—गरुड़पुराणका प्रेतकल्प भाषा टीकाके साथ सुन्दर रूपमें प्रकाशित किया गया है। मूल्य १।।)

अमरकोष संक्षिप्त भाषा टीका—संस्कृत शब्दकोषका यह ग्रन्थ संक्षिप्त हिन्दी टीकाके साथ छापा गया है। मूल्य १)

रघुवंशमहाकाव्य—मल्लिनाथ कृत 'संजीवनी' टीका। मूल्य ३)

मेघदूत-काव्य—पाठकों तथा विद्यार्थियोंकी सुविधाके हेतु इसे 'संजीवनी' तथा 'रमा' हिन्दी टीकाके साथ छापा गया है। मूल्य ।।।)

रघुवंशमहाकाव्य हिन्दी टीका—बहुत प्राञ्जल भाषामें इस विश्वविख्यात ग्रन्थका अनुवाद करके बढ़िया ग्लेज कागजपर सुन्दर छपाई की गयी है। मूल्य ३)

कुमारसंभव हिन्दी टीका—यह ग्रन्थ बहुत दिनोंसे अप्राप्य था। अब सुवाच्य अक्षरोंमें बढ़िया ग्लेज कागजपर छपकर तैयार है। मूल्य २)

अभिज्ञानशाकुन्तल हिन्दी टीका—महाकवि कालिदासका यह विश्व-विश्रुत नाटक बहुत ही सुन्दर रूपरेखामें छपकर तैयार है। मूल्य २)

कालिदासग्रन्थावली—महाकवि कालिदासके चार प्रसिद्ध ग्रन्थोंका मूल पाठ सुन्दर हिन्दी टीकाके साथ छपकर तैयार है। मूल्य ८)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राजतरंगिणी हिन्दी टीका—(महाकवि कल्हणकृत) लगभग पचास सालसे यह ऐतिहासिक महाग्रन्थ आप्राप्य था और इसका हिन्दी अनुवाद तो अब तक हुआ ही नहीं था, किन्तु अब बहुत भव्य स्वरूपमें मृद्ध मूलपाठके साथ यह ग्रन्थ छपकर तैयार है। मूल्य २०)

कौटिलीय अर्थशास्त्र हिन्दी टीका—(अर्थशास्त्रके महापंडित आचार्य चाणक्य कृत) बहुत समयसे यह ग्रन्थ अप्राप्य था। अब शुद्ध मूलपाठ और सरल हिन्दी टीकाके साथ यह भव्य आकार-प्रकारमे छपकर तैयार है। मू० १०)

दृष्टान्तदीपक (दृष्टान्तसंख्या ४३२)—इस ग्रंथमें दृष्टान्तोंका अपूर्व संग्रह है। सभी प्रकारके दृष्टान्त इसमें दिये गये हैं। मूल्य २)

जन्मपत्रफार्म (राजसी कुण्डली)—बहुत मोटे और चिकने कागजपर रंगीन छपाई करके इसे तैयार किया गया है। मूल्य ६) सैकड़ा।

श्रीशुभविवाहलग्नपत्रिका—विवाहके अवसरपर कार्यक्रमके सूचनार्थ वर-कन्या दोनों पक्षके उपयोगके लिए बड़े आकारमें रंगीन छपाई करके इसको तैयार किया गया है। मूल्य १०) सै०

श्रीरामचरित मानस (गोस्वामी तुलसीदास कृत रामायण)—नवाहपाठ तथा नित्य अध्ययनके लिए यह संस्करण बहुत उपयोगी है। क्योंकि पुस्तक गुटका साइजमें है। किन्तु अक्षर बड़े बड़े हैं। मूल्य ३)

पुस्तक-प्राप्ति-स्थान—

पण्डित-पुस्तकालय, राजादरवाजा वाराणसी—१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.